महावीर-शासन-जैनागम-ग्रंथमाला

गणधर-सुधर्मा-प्रणीत-पंचम-अंग-आगम

भगवती सूत्र

(व्याख्याप्रज्ञप्ति)

(हिन्दी अनुवाद)

(भाग-२ : शतक १२ से ४१)

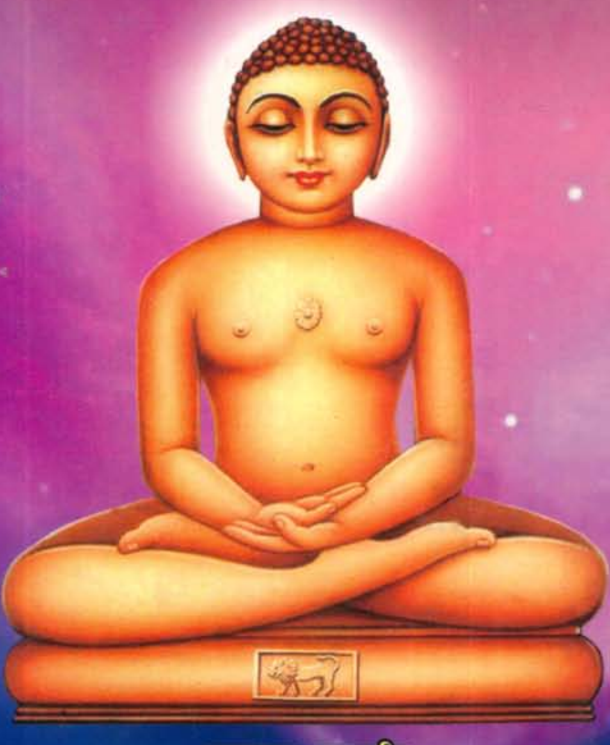

भगवान-महावीर

(ई.पू. ५९९-ई.पू. ५२७)

वाचना-प्रमुख

प्राचीन - देवर्द्धिगणी क्षमाश्रमण

अर्वाचीन - आचार्य तुलसी

प्रधान सम्पादक

आचार्य महाप्रज्ञ

आचार्य महाश्रमण

वाचना-प्रमुख : आचार्य तुलसी

संपादक-भाष्यकार : आचार्य महाप्रज्ञ

युगप्रधान आचार्यश्री तुलसी (१९१४-१९९७) के वाचना-प्रमुखत्व में सन् १९५५ में आगम-वाचना का कार्य प्रारंभ हुआ, जो सन् ४५३ में देवर्धिगणी क्षमाश्रमण के सान्निध्य में हुई संगति के पश्चात् होनेवाली प्रथम वाचना थी। सन् २००७ तक ३२ आगमों के अनुसंधानपूर्ण मूलपाठ संस्करण और ११ आगम संस्कृत छाया, हिन्दी अनुवाद एवं टिप्पण सहित प्रकाशित हो चुके हैं। आयारो (आचारांग का प्रथम श्रुतस्कंध) मूल पाठ, संस्कृत छाया, हिन्दी-संस्कृत भाष्य एवं भाष्य के हिन्दी अनुवाद से युक्त प्रकाशित हो चुका है। आचारांग-भाष्य तथा भगवई खंड-१,२ के अंग्रेजी संस्करण भी प्रकाशित हो गये हैं।

इस वाचना के मुख्य संपादक एवं विवेचक (भाष्यकार) हैं—आचार्यश्री महाप्रज्ञ (मुनि नथमल/युवाचार्य महाप्रज्ञ) (जन्म १९२०) जिन्होंने अपने सम्पादन-कौशल से जैन आगम-वाङ्मय को आधुनिक भाषा में समीक्षात्मक भाष्य के साथ प्रस्तुति देने का गुरुतर कार्य किया है। भाष्य में वैदिक, बौद्ध और जैन साहित्य, आयुर्वेद, पाश्चात्य दर्शन एवं आधुनिक विज्ञान के तुलनात्मक अध्ययन के आधार पर समीक्षात्मक टिप्पण लिखे गए हैं।

आचार्यश्री तुलसी ११ वर्ष की आयु में जैन श्वेताम्बर तेरापंथ के अष्टमाचार्य श्री कालूगणी के पास दीक्षित होकर २२ वर्ष की आयु में नवमाचार्य बने।

महावीर-शासन-जैनागम-ग्रंथमाला

वाचना-प्रमुख

प्राचीन - देवर्द्धिगणी क्षमाश्रमण

अर्वाचीन - आचार्य तुलसी

प्रधान सम्पादक

आचार्य महाप्रज्ञ

आचार्य महाश्रमण

गणधर-सुधर्मा-प्रणीत-पंचम-अंग-आगम

भगवती सूत्र

(व्याख्याप्रज्ञप्ति)

(हिन्दी अनुवाद)

भाग-२ : शतक १२ से ४१

अनुवाद-सहभागिता

संघ-महानिदेशिका साध्वीप्रमुखा कनकप्रभा

आगम-मनीषी प्रो. मुनि महेन्द्रकुमार

शासनगौरव मुनि धनञ्जयकुमार

सम्पादन :

आगम-मनीषी प्रो. मुनि महेन्द्रकुमार

जैन विश्व भारती लाडनूं (राज.)

प्रकाशक : जैन विश्व भारती
पोस्ट : लाडनूं-३४१३०६
जिला : नागौर (राज.)
फोन नं. : (०१५८१) २२६०८०/२२४६७१
ई-मेल : jainvishvabharati@yahoo.com

© जैन विश्व भारती, लाडनूं

ISBN - 81-7195-239-9

प्रथम संस्करण : २०१३

पृष्ठ संख्या : २२+५१२=५३४

मूल्य : ₹ ५०० (पांच सौ पचास रुपये मात्र)

मुद्रक : पायोराईट प्रिन्ट मीडिया प्रा. लि., उदयपुर फोन : ०२९४-२४१८४८२

अनुक्रम

बारहवां शतक (पृ. ४४३-४८८)

पहला उद्देशक ४४३
संग्रहणी गाथा ४४३
शंख-पुष्कली-पद ४४३
दूसरा उद्देशक ४४८
उदयन-आदि का धर्म-श्रवण-पद ४४८
जयन्ती-प्रश्न-पद ४५०
तीसरा उद्देशक ४५३
पृथ्वी-पद ४५३
चौथा उद्देशक ४५४
परमाणु-पुद्गलों का संघात-भेद-पद ४५४
पुद्गल-परिवर्त्त-पद ४६२
पांचवां उद्देशक ४६५
वर्णादि और अवर्णादि की अपेक्षा द्रव्य-
-विमर्श-पद ४६५
छठा उद्देशक ४६८
चंद्र-सूर्य-ग्रहण-पद ४६८
शशि-आदित्य-पद ४७०
चंद्र-सूर्य का काम-भोग-पद ४७०
सातवां उद्देशक ४७१
जीवों का सर्वत्र जन्म-मृत्यु-पद ४७१
अनेक अथवा अनंत बार उपपात-पद ४७२
आठवां उद्देशक ४७५
देवों का द्विशरीर-उपपात-पद ४७५
पंचेन्द्रिय-तिर्यक्योनिक-उपपात-पद ४७५
नौवां उद्देशक ४७६
पंचविध-देव-पद ४७६
पंचविध-देवों का उपपात-पद ४७७
पंचविध-देवों की स्थिति-पद ४७८
पंचविध-देवों का विक्रिया-पद ४७८
पंचविध-देवों का उद्वर्तन-पद ४७८
पंचविध-देवों का संस्थिति-पद ४७९
पंचविध-देवों का अन्तर-पद ४७९
पंचविध-देवों का अल्पबहुत्व-पद ४८०
दसवां उद्देशक ४८१
अष्टविध-आत्म-पद ४८१
अष्टविध-आत्मा का अल्पबहुत्व-पद ४८२
ज्ञान-दर्शन का आत्मा के साथ भेदाभेद-पद ४८२
स्याद्वाद-पद ४८३

तेरहवां शतक (पृ. ४८९-५२०)

पहला उद्देशक ४८९
संग्रहणी गाथा ४८९
संख्येय-विस्तृत नरकों में उपपात-पद ४८९
संख्येय-विस्तृत नरकों में उद्वर्तन-पद ४९०
संख्येय-विस्तृत नरकों में सत्ता-पद ४९१
दूसरा उद्देशक ४९४
तीसरा उद्देशक ४९७
चौथा उद्देशक ४९७
नरक और नैरयिकों में अल्प-महत्-पद ४९७
नैरयिकों का स्पर्शानुभव-पद ४९८
नरकों का बाहल्य-क्षुद्रत्व-पद ४९८
नरक-परिसामन्त-पद ४९८
लोक-मध्य-पद ४९८
धर्मास्तिकाय-आदि का परस्पर स्पर्श-पद ५०१
धर्मास्तिकाय-आदि का अवगाढ-पद ५०४

पांचवां उद्देशक ५०८
आहार-पद ५०८
छठा उद्देशक ५०८
सान्तर-निरन्तर-उपपन्नादि-पद ५०८
चमरचंच-आवास-पद ५०८
उद्रायण-कथा-पद ५०९
सातवां उद्देशक ५१४
भाषा-पद ५१४
मन-पद ५१४
काय-पद ५१५
मरण-पद ५१६
आठवां उद्देशक ५१८
कर्म-प्रकृति-पद ५१८
नौवां उद्देशक ५१८
भावितात्म-विक्रिया-पद ५१८
दसवां उद्देशक ५२०
छाद्मस्थिक-समुद्घात-पद ५२०

चौदहवां शतक (पृ. ५२१-५४६)

पहला उद्देशक ५२१
संग्रहणी गाथा ५२१
लेश्यानुसारी उपपात-पद ५२१
नैरयिक-आदि का गति-विषयक-पद ५२१
नैरयिक का अनंतर-उपपन्नक-आदि-पद ५२२
दूसरा उद्देशक ५२३
उन्माद-पद ५२३
वृष्टिकाय-करण-पद ५२४
तमस्काय-करण-पद ५२५
तीसरा उद्देशक ५२५
विनय-विधि-पद ५२५
नैरयिक-नैरयिकों का प्रत्यनुभव-पद ५२७
चौथा उद्देशक ५२७
पुद्गल-जीव-परिणाम-पद ५२७
पांचवां उद्देशक ५२८
अग्नि का अतिक्रमण-पद ५२८
प्रत्यनुभव-पद ५३०
देव का उल्लंघन-प्रलंघन-पद ५३०
छठा उद्देशक ५३१
नैरयिक का आहार-आदि-पद ५३१
देवेन्द्र का भोग-पद ५३१
सातवां उद्देशक ५३२
गौतम का आश्वासन-पद ५३२
तुल्य-पद ५३३
भक्त-प्रत्याख्यात का आहार-पद ५३४
लव-सप्तम-देव-पद ५३५
अनुत्तरोपपातिक-देव-पद ५३५
आठवां उद्देशक ५३६
अबाधा-अंतर-पद ५३६
वृक्ष का पुनर्भव-पद ५३७
अम्मड-अंतेवासी-पद ५३७
अम्मड-चर्या-पद ५३९
अव्याबाध-देव-शक्ति-पद ५४०
शक्र का शक्ति-पद ५४१
जृंभक-देव-पद ५४१
नौवां उद्देशक ५४२
सरूप-सकर्म-लेश्या-पद ५४२
आप्त-अनाप्त-पुद्गल-पद ५४२
देवों का सहस्र-भाषा-पद ५४२
सूर्य-पद ५४३
श्रमणों का तेजोलेश्या-पद ५४३
दसवां उद्देशक ५४४
केवलि-पद ५४४

पन्द्रहवां शतक (पृ. ५४७-५८९)

गोशालक-पद ५४७
भगवान का विहार-पद ५५०
पहला मासखमण-पद ५५०
दूसरा मासखमण-पद ५५१
तीसरा मासखमण-पद ५५२
चौथा मासखमण-पद ५५४
गोशाल का शिष्य-रूप में अंगीकरण-पद ५५५
तिल-स्तम्भ-पद ५५५

बाल-तपस्वी वैश्यायन-पद	५५६
तिल के पौधे की निष्पत्ति : गोशाल का अपक्रमण-पद	५५८
गोशाल के तेजोलेश्या का उत्पत्ति-पद	५५९
गोशाल की पूर्व-कथा का उपसंहार-पद	५५९
गोशाल का अमर्ष-पद	५५९
गोशाल का स्थविर आनंद के समक्ष आक्रोश का प्रदर्शन-पद	५६०
आनंद स्थविर का भगवान् से निवेदन-पद	५६३
आनन्द स्थविर द्वारा गौतम-आदि को अनुज्ञापन-पद	५६४
गोशाल का भगवान के प्रति आक्रोश-पूर्वक स्वसिद्धान्त-निरूपण-पद	५६४
भगवान् द्वारा गोशालक के वचन का प्रतिकार-पद	५६७
गोशाल का पुनः आक्रोश-पद	५६७
गोशाल द्वारा सर्वानुभूति का भस्म-राशि--करण-पद	५६८
गोशाल द्वारा सुनक्षत्र को परिताप-पद	५६८
गोशाल का भगवान के वध के लिए तेज-निसर्जन-पद	५६८
श्रावस्ती में जन-प्रवाद-पद	५७०
गोशाल से श्रमणों का प्रश्नव्याकरण-पद	५७०
गोशाल का संघभेद-पद	५७०
गोशाल का प्रतिक्रमण-पद	५७१
गोशाल के द्वारा नानासिद्धान्त-प्ररूपण-पद	५७१
अयम्पुल—आजीविकोपासक-पद	५७२
गोशाल द्वारा अपनी मरणोत्तर क्रिया का निर्देश-पद	५७४
गोशाल का परिणाम-परिवर्तनपूर्वक कालधर्म-पद	५७५
गोशाल का निर्हरण-पद	५७६
भगवान् के रोग-आतंक-प्रादुर्भवन-पद	५७७
सिंह का मानसिक-दुःख-पद	५७७
भगवान् द्वारा सिंह को आश्वासन-पद	५७७
भगवान का आरोग्य-पद	५८०
सर्वानुभूति का उपपात-पद	५८०
सुनक्षत्र का उपपात-पद	५८०
गोशाल का भवभ्रमण-पद	५८१

सोलहवां शतक (पृ. ५९०-६१२)

पहला उद्देशक	**५९०**
संग्रहणी गाथा	५९०
वायुकाय-पद	५९०
अग्निकाय-पद	५९०
क्रिया-पद	५९०
अधिकरणी-अधिकरण-पद	५९१
दूसरा उद्देशक	**५९३**
जीवों का जरा-शोक-पद	५९३
शक्र का अवग्रह-अनुज्ञापन-पद	५९३
शक्र-सम्बन्धी व्याकरण-पद	५९४
चैतन्य-अचैतन्य-कृत-कर्म-पद	५९५
तीसरा उद्देशक	**५९५**
कर्म-पद	५९५
अर्श-छेदन में वैद्य का क्रिया-पद	५९५
चौथा उद्देशक	**५९६**
नैरयिक का निर्जरा-पद	५९६
पांचवां उद्देशक	**५९८**
शक्र का उत्क्षिप्त प्रश्नव्याकरण-पद	५९८
गंगदत्त देव के संदर्भ में परिणममाण--परिणत-पद	५९९
गंगदत्त देव का आत्म-विषयक प्रश्न-पद	६००
गंगदत्त देव द्वारा नाट्य-उपदर्शन-पद	६००
गंगदत्त देव का पूर्व-भव-पद	६०१
छठा उद्देशक	**६०३**
स्वप्न-पद	६०३
भगवान् का महास्वप्न-दर्शन-पद	६०४
स्वप्न-फल-पद	६०६
गंध-पुद्गल-पद	६०८
सातवां उद्देशक	**६०८**
आठवां उद्देशक	**६०८**

लोक के चरमान्त म जीव-अजीव-
-आदि का मार्गणा-पद ६०८
परमाणु-पुद्गल का गति-पद ६०९
क्रिया-पद ६१०
अलोक-गति-निषेध-पद ६१०
नौवां उद्देशक ६१०
बलि का सभा-पद ६१०
दसवां उद्देशक ६११
अवधि-पद ६११
ग्यारहवां उद्देशक ६११
द्वीपकुमार-आदि-पद ६१२
बारहवां से चौदहवां उद्देशक ६१२

सतरहवां शतक (पृ. ६१३-६२६)

पहला उद्देशक ६१३
संग्रहणी गाथा ६१३
श्रुत-देवता भगवती को नमस्कार ६१३
हस्तिराज-पद ६१३
क्रिया-पद ६१३
भाव-पद ६१५
दूसरा उद्देशक ६१६
धर्माधर्म-स्थित-पद ६१६
बालपंडित-पद ६१६
जीव-जीवात्मा एकत्व-पद ६१७
रूपी-अरूपी-पद ६१८
तीसरा उद्देशक ६१९
एजना-पद ६१९
चलना-पद ६२०
संवेग-आदि-पद ६२१
चौथा उद्देशक ६२१
क्रिया-पद ६२१
दुःख-वेदना-पद ६२२
पांचवां उद्देशक ६२३
ईशान-पद ६२३
छठा उद्देशक ६२३
पृथ्वीकायिक-आदि का देश-सर्व-
-मारणान्तिक-समुद्घात-पद ६२३
सातवां उद्देशक ६२४
आठवां उद्देशक ६२४
नौवां उद्देशक ६२४
दसवां उद्देशक ६२४
ग्यारहवां उद्देशक ६२५
बारहवां उद्देशक ६२५
एकेन्द्रिय-पद ६२५
तेरहवां से सत्रहवां उद्देशक ६२५
नागकुमार-आदि-पद ६२५

अठारहवां शतक (पृ. ६२७-६५८)

पहला उद्देशक ६२७
संग्रहणी गाथा ६२७
प्रथम-अप्रथम-पद ६२७
चरम-अचरम-पद ६२९
दूसरा उद्देशक ६३१
शक्र का कार्तिक श्रेष्ठी नामक पूर्व-
-भव-पद ६३१
तीसरा उद्देशक ६३३
माकन्दिक-पुत्र-पद ६३३
निर्जरा-पुद्गल-जानना-आदि-पद ६३५
बंध-पद ६३६
कर्म-नानात्व-पद ६३७
चौथा उद्देशक ६३८
जीवों का परिभोग-अपरिभोग-पद ६३८
कषाय-पद ६३८
युग्म-पद ६३९
अंधकवृष्णि-जीवों का वर-पर-पद ६३९
पांचवां उद्देशक ६४०
वैक्रिय-अवैक्रिय-असुरकुमार-आदि-पद ६४०
नैरयिक-आदि का महाकर्म-आदि-पद ६४०
नैरयिक-आदि का आयु-पद ६४१
असुरकुमार-आदि का विक्रिया-पद ६४१
छठा उद्देशक ६४२
नैश्चयिक-व्यवहार-नय-पद ६४२
परमाणु-स्कन्ध के वर्ण-आदि का पद ६४२
सातवां उद्देशक ६४३

केवलि-भाषा-पद ६४३
उपधि-पद ६४३
परिग्रह-पद ६४४
प्रणिधान-पद ६४४
कालोदायी-प्रभृति का पंचास्तिकाय-
-संदेह-पद ६४५
श्रमणोपासक मद्दुक का समाधान-पद ६४६
भगवान् द्वारा मद्दुक का प्रशंसा-पद ६४७
विकुर्वणा में एक-जीव-संबंध-पद ६४७
देव-असुर-संग्राम-पद ६४८
देव का द्वीप-समुद्र-अनुपरिवर्तन-पद ६४८
देवों का कर्म-क्षपण-काल-पद ६४८
आठवां उद्देशक ६५०
ईर्या की अपेक्षा गौतम का संवाद-पद ६५०
अन्ययूथिक-आरोप-पद ६५०
परमाणु-पुद्गल-आदि का जानना-
-देखना-पद ६५१
नौवां उद्देशक ६५३
भव्य-द्रव्य-पद ६५३
दसवां उद्देशक ६५४
भावितात्मा का असि-धारा-आदि का
अवगाहन-आदि-पद ६५४
परमाणु-पुद्गल-आदि का वायुकाय-
-स्पर्श-पद ६५४
द्रव्यों का वर्ण-आदि-पद ६५५
सोमिल ब्राह्मण-पद ६५५

उन्नीसवां शतक (पृ. ६५९-६७२)

पहला उद्देशक ६५९
संग्रहणी गाथा ६५९
लेश्या-पद ६५९
दूसरा उद्देशक ६५९
तीसरा उद्देशक ६५९
पृथ्वीकायिक-पद ६५९
अप्कायिक-आदि-पद ६६१
स्थावर-जीवों की अवगाहना-अल्पबहुत्व-
-पद ६६१
स्थावर-जीवों का सर्व-सूक्ष्म-सर्व-बादर-पद ६६२
पृथ्वी-शरीर की विशालता-पद ६६३
पृथ्वीकायिक का शरीर-अवगाहना-पद ६६४
पृथ्वीकायिक का वेदना-पद ६६४
अप्कायिक-आदि का वेदना-पद ६६५
चौथा उद्देशक ६६५
महास्रव-आदि-पद ६६५
पांचवां उद्देशक ६६६
चरम-परम-पद ६६६
वेदना-पद ६६७
छठा उद्देशक ६६७
सातवां उद्देशक ६६७
असुरकुमार-आदि का भवन-आदि-पद ६६७
आठवां उद्देशक ६६८
जीव-आदि-निर्वृत्ति-पद ६६८
नौवां उद्देशक ६७१
करण-पद ६७१
दसवां उद्देशक ६७२

बीसवां शतक (पृ. ६७३-६९९)

पहला उद्देशक ६७३
संग्रहणी गाथा ६७३
द्वीन्द्रिय-आदि-पद ६७३
दूसरा उद्देशक ६७४
अस्तिकाय-पद ६७४
अस्तिकाय का अभिवचन-पद ६७५
तीसरा उद्देशक ६७६
प्राणातिपात-आदि का आत्मा में परिणति-
-पद ६७६
गर्भ-अवक्रममाण के वर्ण-आदि-पद ६७६
चौथा उद्देशक ६७६
इन्द्रिय-उपचय-पद ६७६
पांचवां उद्देशक ६७७
परमाणु-स्कंधों के वर्ण-आदि भंग-पद ६७७
परमाणु-पद ६८६
छठा उद्देशक ६८७
पृथ्वी-आदि का आहार-पद ६८७

सातवां उद्देशक ६८९

बंध-पद ६८९

आठवां उद्देशक ६९०

समय-क्षेत्र में अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी-पद ६९०

पांच-महाव्रत-चातुर्याम-धर्म-पद ६९०

तीर्थंकर-पद ६९०

जिनान्तरों में कालिक-श्रुत-पद ६९१

पूर्वगत-पद ६९१

तीर्थ-पद ६९१

उग्र-आदि का निर्ग्रंथ-धर्म-अनुगमन-पद ६९२

नौवां उद्देशक ६९२

करण-पद ६९२

दसवां उद्देशक ६९४

आयुष्य-पद ६९४

कति-संचित-आदि-पद ६९५

षट्क-समर्जित-आदि-पद ६९६

द्वादश-समर्जित-आदि-पद ६९७

चतुरशीति-समर्जित-आदि-पद ६९८

इक्कीसवां शतक (पृ. ७००-७०३)

पहला वर्ग ७००

पहला उद्देशक ७००

संग्रहणी गाथा ७००

शालि-आदि जीवों का उपपात आदि-पद ७००

दूसरा-दसवां उद्देशक ७०१

दूसरा वर्ग ७०१

तीसरा वर्ग ७०२

चौथा वर्ग ७०२

पांचवां वर्ग ७०२

छठा वर्ग ७०२

सातवां वर्ग ७०३

आठवां वर्ग ७०३

बाईसवां शतक (पृ. ७०४-७०६)

पहला वर्ग ७०४

पहला उद्देशक ७०४

संग्रहणी गाथा ७०४

ताल-आदि जीवों में उपपात-आदि-पद ७०४

दूसरा वर्ग ७०४

नीम-आदि एकास्थिक-वृक्षों में उपपात-
-आदि-पद ७०४

तीसरा वर्ग ७०५

हडसंधारी-आदि बहुबीजक-वृक्षों में
उपपात-आदि-पद ७०५

चौथा वर्ग ७०५

बैंगन-आदि गुच्छों में उपपात-आदि-पद ७०५

पांचवां वर्ग ७०५

श्वेतपुष्प-कटसरैया-आदि गुल्मों में उपपात-
-आदि-पद ७०५

छठा वर्ग ७०५

तेईसवां शतक (पृ. ७०७,७०८)

पहला वर्ग ७०७

संग्रहणी गाथा ७०७

आलुक-आदि जीवों में उपपात-आदि-पद ७०७

दूसरा वर्ग ७०७

तीसरा वर्ग ७०७

चौथा वर्ग ७०८

पांचवां वर्ग ७०८

चौबीसवां शतक (पृ. ७०९-७८०)

पहला उद्देशक ७०९

संग्रहणी गाथा ७०९

नैरयिक-आदि में उपपात-आदि के गमक
का पद ७०९

नरक-अधिकार ७०९

प्रथम आलापक : नैरयिक में असंज्ञी-तिर्यंच-
-पंचेन्द्रिय-जीवों का उपपात-आदि ७०९

प्रथम नरक में असंज्ञी-तिर्यंच-पंचेन्द्रिय-जीवों
का उपपात-आदि ७१०

(पहला गमक : औधिक और औधिक) ७१०

१. उपपात-द्वार ७१०

२. परिमाण-द्वार ७१०

३. संहनन-द्वार ७१०

४. अवगाहना-द्वार ७१०

५. संस्थान-द्वार ७१०

६. लेश्या-द्वार ७११

७. दृष्टि-द्वार ७११

८. ज्ञान-अज्ञान-द्वार ७११

९. योग-द्वार ७११

१०. उपयोग-द्वार ७११

११. संज्ञा-द्वार ७११

१२. कषाय-द्वार ७११

१३. इन्द्रिय-द्वार ७११

१४. समुद्घात-द्वार ७११

१५. वेदक-द्वार ७१२

१६. वेद-द्वार ७१२

१७. स्थिति-द्वार ७१२

१८. अध्यवसाय-द्वार ७१२

१९. अनुबन्ध-द्वार ७१२

२०. कायसंवेध-द्वार ७१२

(दूसरा गमक : औघिक और जघन्य) ७१३

(तीसरा गमक : औघिक और उत्कृष्ट) ७१३

(चौथा गमक : जघन्य और औघिक) ७१३

(पांचवां गमक : जघन्य और जघन्य) ७१४

(छट्ठा गमक : जघन्य और उत्कृष्ट) ७१५

(सातवां गमक : उत्कृष्ट और औघिक) ७१५

(आठवां गमक : उत्कृष्ट और जघन्य) ७१५

(नवां गमक : उत्कृष्ट और उत्कृष्ट) ७१६

दूसरा आलापक : नैरयिक में संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-तिर्यंच-पंचेन्द्रिय-जीवों का उपपात-आदि ७१६

प्रथम नरक में संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-तिर्यंच-पंचेन्द्रिय-जीवों का उपपात-आदि ७१७

(पहला गमक : औघिक और औघिक) ७१७

(दूसरा गमक : औघिक और जघन्य) ७१८

(तीसरा गमक : औघिक और उत्कृष्ट) ७१८

(चौथा गमक : जघन्य और औघिक) ७१८

(पांचवां गमक : जघन्य और जघन्य) ७१९

(छट्ठा गमक : जघन्य और उत्कृष्ट) ७१९

(सातवां गमक : उत्कृष्ट और औघिक) ७१९

(आठवां गमक : उत्कृष्ट और जघन्य) ७२०

(नवां गमक : उत्कृष्ट और उत्कृष्ट) ७२०

तीसरा आलापक : दूसरी नरक में संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-तिर्यंच-पंचेन्द्रिय-जीवों का उपपात-आदि ७२०

(पहला गमक : औघिक और औघिक) ७२०

(दूसरे से नवें गमक तक) ७२१

चौथा आलापक : तीसरी से छट्ठी नरक में संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-तिर्यंच-पंचेन्द्रिय-जीवों का उपपात-आदि ७२१

पांचवां आलापक : सातवीं नरक में संख्यात वर्ष की आयुवाले संज्ञी-तिर्यंच-पंचेन्द्रिय-जीवों का उपपात-आदि ७२१

(पहला गमक : औघिक और औघिक) ७२१

(दूसरा गमक : औघिक और जघन्य) ७२२

(तीसरा गमक : औघिक और उत्कृष्ट) ७२२

(चौथा गमक : जघन्य और औघिक) ७२२

(पांचवां गमक : जघन्य और जघन्य) ७२२

(छट्ठा गमक : जघन्य और उत्कृष्ट) ७२२

(सातवां गमक : उत्कृष्ट और औघिक) ७२३

(आठवां गमक : औघिक और जघन्य) ७२३

(नवां गमक : उत्कृष्ट और उत्कृष्ट) ७२३

छट्ठा आलापक : नरक में उत्पन्न होने वाले संज्ञी-मनुष्य ७२३

प्रथम नरक में संख्यात वर्ष की आयु वाले पर्याप्त-संज्ञी-मनुष्यों का उपपात-आदि ७२४

(पहला गमक : औघिक और औघिक) ७२४

(दूसरा गमक : औघिक और जघन्य) ७२४

(तीसरा गमक : औघिक और उत्कृष्ट) ७२४

(चौथा गमक : जघन्य और औघिक) ७२५

(पांचवां गमक : जघन्य और जघन्य) ७२५

(छट्ठा गमक : जघन्य और उत्कृष्ट) ७२५
(सातवां गमक : उत्कृष्ट और औघिक) ७२५
(आठवां गमक : उत्कृष्ट और जघन्य) ७२६
(नवां गमक : उत्कृष्ट और उत्कृष्ट) ७२६
सातवां आलापक : दूसरी नरक में संख्यात वर्ष की आयु वाले पर्याप्त-संज्ञी-मनुष्यों का उपपात-आदि ७२६
(पहला गमक : औघिक और औघिक) ७२६
(दूसरा और तीसरा गमक : औघिक और जघन्य, औघिक और उत्कृष्ट) ७२६
टिप्पण ७२६
(चौथे से छट्ठा गमक : जघन्य और औघिक, जघन्य और जघन्य, जघन्य और उत्कृष्ट) ७२७
टिप्पण ७२७
(सातवें से नवां गमक : उत्कृष्ट और औघिक, उत्कृष्ट और जघन्य, उत्कृष्ट, और उत्कृष्ट) ७२७
आठवां आलापक : तीसरी से छट्ठी नरक में संख्यात वर्ष की आयु वाले पर्याप्त-संज्ञी—मनुष्यों का उपपात-आदि ७२८
नवां आलापक : सातवीं नरक में संख्यात वर्ष की आयु वाले पर्याप्त-संज्ञी-मनुष्यों का उपपात-आदि ७२८
(पहला गमक : औघिक और औघिक) ७२८
(दूसरा गमक : औघिक और जघन्य) ७२८
टिप्पण ७२८
(तीसरा गमक : औघिक और उत्कृष्ट) ७२८
टिप्पण ७२९
(चौथा, पांचवां, छट्ठा गमक : जघन्य और औघिक, जघन्य और जघन्य, जघन्य और उत्कृष्ट) ७२९
टिप्पण ७२९
(सातवां, आठवां, नवां गमक : उत्कृष्ट और औघिक, उत्कृष्ट और जघन्य, उत्कृष्ट और उत्कृष्ट) ७२९
दूसरा उद्देशक ७३०
दसवां आलापक : असुरकुमार-देव के रूप में उत्पन्न तिर्यंच-पंचेन्द्रिय-जीवों का उपपात--आदि ७३०
असुरकुमार-देव के रूप में पर्याप्त-असंज्ञी--तिर्यंच-पंचेन्द्रिय-जीवों का उपपात-आदि ७३०
(पहला गमक : औघिक और औघिक) ७३०
ग्यारहवां आलापक : असुरकुमार-देव के रूप में असंख्यात वर्ष की आयु वाले (पर्याप्त)--संज्ञी-तिर्यंच-पंचेन्द्रिय (यौगलिकों) का उपपात-आदि ७३०
(पहला गमक : औघिक और औघिक) ७३०
(दूसरा गमक : औघिक और जघन्य) ७३१
टिप्पण ७३१
(तीसरा गमक : औघिक और उत्कृष्ट) ७३१
(चौथा गमक : जघन्य और औघिक) ७३२
(पांचवां गमक : जघन्य और जघन्य) ७३२
(छट्ठा गमक : जघन्य और उत्कृष्ट) ७३२
(सातवां गमक : उत्कृष्ट और औघिक) ७३२
(आठवां गमक : उत्कृष्ट और जघन्य) ७३२
(नवां गमक : उत्कृष्ट और उत्कृष्ट) ७३३
बारहवां आलापक : असुरकुमार-देव के रूप में संख्यात वर्ष की आयुष्य वाले संज्ञी--पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों का उपपात--आदि ७३३
तेरहवां आलापक : असुरकुमार-देव के रूप में संज्ञी-मनुष्यों का उपपात-आदि ७३३
असुरकुमार-देव के रूप में पर्याप्त-असंज्ञी--तिर्यंच-पंचेन्द्रिय का उपपात-आदि ७३४
(पहला, दूसरा और तीसरा गमक : औघिक और औघिक, औघिक और जघन्य, औघिक और उत्कृष्ट ७३४
(चौथा, पांचवां और छठा गमक : जघन्य और औघिक, जघन्य और जघन्य, जघन्य और उत्कृष्ट) ७३४

सातवां, आठवां और नवां गमकः उत्कृष्ट और औधिक, उत्कृष्ट और जघन्य, उत्कृष्ट और उत्कृष्ट) ७३४

चौदहवां आलापक : असुरकुमार-देव के रूप में संख्यात वर्ष की आयु वाले पर्याप्त-संज्ञी-मनुष्यों का उपपात-आदि ७३४

तीसरा उद्देशक **७३५**

नागकुमार-अधिकार ७३५

पन्द्रहवां आलापक : नागकुमार-देव के रूप में असंज्ञी-तिर्यंच-पंचेन्द्रिय-जीवों का उपपात-आदि ७३५

सोलहवां आलापक : नागकुमार-देव के रूप में असंख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-तिर्यंच-पंचेन्द्रिय-(यौगलिकों) का उपपात-आदि ७३५

(पहला गमक : औघिक और औघिक) ७३५

(दूसरा गमक : औघिक और जघन्य) ७३६

(तीसरा गमक : औघिक और उत्कृष्ट) ७३६

(चौथा, पांचवां और छट्ठा गमक : जघन्य और औघिक, जघन्य और जघन्य, जघन्य और उत्कृष्ट) ७३६

(सातवां, आठवां और नवां गमक : उत्कृष्ट और औघिक, उत्कृष्ट और जघन्य, उत्कृष्ट और उत्कृष्ट) ७३६

सत्रहवां आलापक : नागकुमार-देव के रूप में संख्यात वर्ष की आयु वाले पर्याप्त-संज्ञी-तिर्यंच-पंचेन्द्रिय-जीवों का उपपात-आदि ७३६

(पहला गमक : औघिक और औघिक) ७३७

(दूसरे से नवें गमक तक) ७३७

अठारहवां आलापक : नागकुमार-देव के रूप में असंख्यात वर्ष की आयु वाले (पर्याप्त-)-संज्ञी-मनुष्य-(यौगलिकों) का उपपात-आदि ७३७

(पहला, दूसरा और तीसरा गमक : औघिक और औघिक, औघिक और जघन्य, औघिक और उत्कृष्ट) ७३७

(चौथा, पांचवां और छट्ठा गमक : जघन्य और औघिक, जघन्य और जघन्य, जघन्य और उत्कृष्ट) ७३८

(सातवां, आठवां और नवां गमक : उत्कृष्ट और औघिक, उत्कृष्ट और जघन्य, उत्कृष्ट और उत्कृष्ट) ७३८

उन्नीसवां आलापक : नागकुमार-देव के रूप में संख्यात वर्ष की आयु वाले पर्याप्त-संज्ञी-मनुष्यों का उपपात-आदि ७३८

(पहले से नवें गमक तक) ७३८

चौथा-ग्यारहवां उद्देशक **७३८**

बीसवां आलापक : सुपर्णकुमार से स्तनित-कुमार का अधिकार ७३८

बारहवां उद्देशक **७३९**

पृथ्वीकाय का अधिकार ७३९

इक्कीसवां आलापक : ७३९

पृथ्वीकायिक-जीवों में पृथ्वीकायिक-जीवों का उपपात-आदि ७३९

(पहला गमक : औघिक और औघिक) ७३९

(दूसरा गमक : औघिक और जघन्य) ७४०

(तीसरा गमक : औघिक औश्र उत्कृष्ट) ७४०

(चौथा गमक : जघन्य और औघिक) ७४०

(पांचवां गमक : जघन्य और जघन्य) ७४०

(छट्ठा गमक : जघन्य और उत्कृष्ट) ७४०

(सातवां गमक : उत्कृष्ट और औघिक) ७४१

(आठवां गमक : उत्कृष्ट और जघन्य) ७४१

(नवां गमक : उत्कृष्ट और उत्कृष्ट) ७४१

बाईसवां आलापक : पृथ्वीकायिक-जीवों में अप्कायिक-जीवों का उपपात-आदि ७४१

(पहला गमक : औघिक और औघिक) ७४१

(दूसरे से नवें गमक तक) ७४१

तेईसवां आलापक : पृथ्वीकायिक-जीवों में तेजस्कायिक-जीवों का उपपात-आदि ७४२

चौबीसवां आलापक : पृथ्वीकायिक-जीवों में वायुकायिक-जीवों का उपपात-आदि ७४२

पच्चीसवां आलापक : पृथ्वीकायिक-जीवों में वनस्पतिकायिक-जीवों का उपपात-आदि ७४२

छब्बीसवां आलापक : पृथ्वीकायिक-जीवों में द्वीन्द्रिय-जीवों का उपपात-आदि ७४३

(पहला गमक) ७४३

(दूसरा गमक) ७४३

(तीसरा गमक) ७४३

(चौथा, पांचवां और छट्ठा गमक) ७४४

(सातवां, आठवां और नवां गमक) ७४४

सत्ताईसवां आलापक : पृथ्वीकायिक-जीवों में तेइन्द्रिय-जीवों का उपपात-आदि ७४४

अट्ठाइसवां आलापक : पृथ्वीकायिक-जीवों में चतुरिन्द्रिय-जीवों का उपपात-आदि ७४५

उनतीसवां आलापक : पृथ्वीकायिक-जीवों में असंज्ञी-तिर्यंच-पंचेन्द्रिय-जीवों का उपपात- आदि ७४५

(पहला गमक : औधिक और औधिक) ७४५

(दूसरे से नवें गमक तक) ७४५

तीसवां आलापक : पृथ्वीकायिक-जीवों में संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-तिर्यंच-पंचेन्द्रिय-जीवों का उपपात-आदि ७४६

(पहला गमक : औधिक और औधिक) ७४६

(पहले से नवें गमक तक) ७४६

इकतीसवां आलापक : पृथ्वीकायिक-जीवों में असंज्ञी-मनुष्यों का उपपात-आदि ७४७

(प्रथम तीन गमक) ७४७

बत्तीसवां आलापक : पृथ्वीकायिक-जीवों में संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-मनुष्यों का उपपात-आदि ७४७

(प्रथम तीन गमक) ७४७

(चौथे से छट्ठे गमक तक) ७४८

(सातवें से नवें गमक तक) ७४८

तेतीसवां आलापक : पृथ्वीकायिक-जीवों में भवनपति-देवों का उपपात-आदि ७४८

(पहला गमक : औधिक और औधिक) ७४८

(दूसरे से नवें गमक तक) ७४९

चौतीसवां आलापक : पृथ्वीकायिक-जीवों में वाणमन्तर-देवों का उपपात-आदि ७४९

पैंतीसवां आलापक : पृथ्वीकायिक-जीवों में ज्योतिष्क-देवों की उत्पत्ति ७५०

छत्तीसवां आलापक : पृथ्वीकायिक-जीवों में वैमानिक-देवों का उपपात-आदि ७५०

पृथ्वीकायिक-जीवों में सौधर्मवासी-देवों का उपपात-आदि ७५०

(औधिक और औधिक) ७५०

पृथ्वीकायिक-जीवों में ईशानवासी-देवों का उपपात-आदि ७५१

तेरहवां उद्देशक **७५१**

सैंतीसवां आलापक : अप्कायिक-जीवों में पृथ्वीकायिक-जीवों का उपपात-आदि ७५१

चौदहवां उद्देशक **७५१**

अड़तीसवां आलापक : तेजस्कायिक जीवों में जीवों का उपपात-आदि ७५१

पन्द्रहवां उद्देशक **७५१**

उनचालीसवां आलापक : वायुकायिक-जीवों में जीवों का उपपात-आदि ७५१

सोलहवां उद्देशक **७५२**

चालीसवां आलापक : वनस्पतिकायिक--जीवों में जीवों का उपपात-आदि ७५२

सत्रहवां उद्देशक **७५२**

इकतालीसवां आलापक : द्वीन्द्रिय-जीवों में जीवों का उपपात-आदि ७५२

अट्ठारहवां उद्देशक **७५२**

बयालीसवां आलापक : त्रीन्द्रिय-जीवों में जीवों का उपपात-आदि ७५२

उन्नीसवां उद्देशक **७५३**

तयालीसवां आलापक : चतुरिन्द्रिय-जीवों में जीवों का उपपात-आदि ७५३

बीसवां उद्देशक **७५३**

तिर्यंच-पंचेन्द्रिय-अधिकार ७५३

चमालीसवां आलापक : तिर्यंच-पंचेन्द्रिय--जीवों में प्रथम नरक के नैरयिकों का *उपपात-आदि* *७५३*

(पहला गमक : औधिक और औधिक) ७५३

(दूसरा गमक : जघन्य और औघिक) ७५४
(तीसरे से नवें गमक तक) ७५४
पैंतालीसवां आलापक : तिर्यंच-पंचेन्द्रिय-जीवों में दूसरी से छट्ठी नरक के नैरयिकों का उपपात-आदि ७५४
छियालीसवां आलापक : तिर्यंच-पंचेन्द्रिय--जीवों में सातवीं नरक के नैरयिकों का उपपात-आदि ७५५
सैंतालीसवां आलापक : तिर्यंच-पंचेन्द्रिय--जीवों में पृथ्वीकायिक-जीवों का उपपात--आदि ७५६
अड़तालीसवां आलापक : तिर्यंच-पंचेन्द्रिय--जीवों में अप्कायिक-जीवों से लेकर चतुरिन्द्रिय तक जीवों का उपपात-आदि ७५६
उनचासवां आलापक : तिर्यंच-पंचेन्द्रिय--जीवों में असंज्ञी-तिर्यंच-पंचेन्द्रिय-जीवों का उपपात-आदि ७५६
(पहला गमक) ७५६
(दूसरा गमक) ७५७
(तीसरा गमक) ७५७
(चौथे से छट्ठे गमक तक) ७५७
(सातवां गमक) ७५८
(आठवां गमक) ७५८
(नवां गमक) ७५८
पचासवां आलापक : तिर्यंच-पंचेन्द्रिय-जीवों में संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-पंचेन्द्रिय--तिर्यंच-जीवों का उपपात-आदि ७५८
(पहला गमक : औघिक और औघिक) ७५९
(दूसरा गमक : औघिक और जघन्य) ७५९
(तीसरा गमक : औघिक और उत्कृष्ट) ७५९
(चौथा, पांचवां और छट्ठा गमक : जघन्य और औघिक, जघन्य और जघन्य, जघन्य और उत्कृष्ट) ७५९
(सातवां गमक : उत्कृष्ट और औघिक) ७६०
(आठवां गमक : उत्कृष्ट और जघन्य) ७६०
(नवां गमक : उत्कृष्ट और उत्कृष्ट) ७६०
तिर्यंच-पंचेन्द्रिय में मनुष्यों का उपपात-आदि ७६०
इकावनवां आलापक : तिर्यंच-पंचेन्द्रिय में असंज्ञी-मनुष्यों का उपपात-आदि ७६०
बावनवां आलापक : तिर्यंच-पंचेन्द्रिय में संज्ञी-मनुष्यों का उपपात-आदि ७६१
पहला गमक (औघिक और औघिक) ७६१
(दूसरा गमक : औघिक और जघन्य) ७६१
(तीसरा गमक : औघिक और उत्कृष्ट) ७६१
(चौथा, पांचवां और छट्ठा गमक : जघन्य और औघिक, जघन्य और जघन्य, जघन्य और उत्कृष्ट) ७६२
(सातवां गमक : उत्कृष्ट और औघिक) ७६२
(आठवां गमक : उत्कृष्ट और जघन्य) ७६२
(नवां गमक : उत्कृष्ट और उत्कृष्ट) ७६२
तिरेपनवां आलापक : तिर्यंच-पंचेन्द्रिय-जीवों में भवनपति-देवों का उपपात-आदि ७६२
चौवनवां आलापक : तिर्यंच-पंचेन्द्रिय-जीवों में व्यन्तर-देवों का उपपात-आदि ७६३
पचपनवां आलापक : तिर्यंच-पंचेन्द्रिय-जीवों में ज्योतिष्क-देवों का उपपात-आदि ७६३
छप्पनवां आलापक : तिर्यंच-पंचेन्द्रिय-जीवों में वैमानिक-देवों का उपपात आदि ७६३
सत्तावनवां आलापक : तिर्यंच-पंचेन्द्रिय-जीवों में सौधर्म-आदि-देवों का उपपात-आदि ७६४
इक्कीसवां उद्देशक ७६४
मनुष्य-अधिकार ७६४
अट्ठावनवां आलापक : मनुष्यों में प्रथम नरक के नैरयिकों का उपपात-आदि ७६४
उनसठवां आलापक : मनुष्यों में दूसरी नरक से छट्ठी नरक के नैरयिकों का उपपात-आदि ७६५
साठवां आलापक : मनुष्यों में तिर्यंच-जीवों का उपपात-आदि ७६५
इकसठवां आलापक : मनुष्यों में पृथ्वी-कायिक-जीवों का उपपात-आदि ७६५

बासठवां आलापक : मनुष्यों में अप्कायिक आदि नौ स्थानों के जीवों का उपपात-आदि ७६५
तिरेसठवां आलापक : मनुष्यों में असुरकुमार-देवों का उपपात-आदि ७६६
चौसठवां आलापक : मनुष्यों में नवनिकाय-देवों से लेकर दूसरे देवलोक तक देवों का उपपात-आदि ७६६
पैंसठवां आलापक : मनुष्यों में तीसरे देवलोक से आठवें देवलोक तक के देवों का उपपात-आदि ७६६
छासठवां आलापक : मनुष्यों में नौवें देवलोक के देवों का उपपात-आदि ७६७
मनुष्यों में दसवें से बारहवें देवलोक के देवों का उपपात-आदि ७६७
सड़सठवां आलापक : मनुष्यों में ग्रैवेयक-कल्पातीत-देवों का उपपात-आदि ७६८
अड़सठवां आलापक : मनुष्यों में विजय आदि चार अनुत्तरविमान के देवों का उपपात-आदि ७६९
उनहत्तरवां आलापक : मनुष्यों में सर्वार्थसिद्ध-अनुत्तरविमान के देवों का उपपात-आदि ७७०
(तीसरा गमक : औघिक और उत्कृष्ट) ७७०
(छट्ठा गमक : जघन्य और उत्कृष्ट) ७७०
(नवां गमक : उत्कृष्ट और उत्कृष्ट) ७७०

बाईसवां उद्देशक **७७०**

सत्तरवां आलापक : वाणमंतर-देवों में असंख्यात वर्ष की आयु वाले असंज्ञी-तिर्यंच-पंचेन्द्रिय-जीवों का उपपात-आदि ७७०
(पहला गमक) ७७१
(दूसरा गमक) ७७१
(तीसरे से नवें गमक तक) ७७१
इकहत्तरवां आलापक : वाणमन्तर-देवों में *संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-तिर्यंच-*-जीवों का उपपात-आदि ७७१
बहत्तरवां आलापक : वाणमन्तर-देवों में मनुष्य-यौगलिकों का उपपात-आदि ७७२
तहत्तरवां आलापक : वाणमन्तर-देवों में संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-मनुष्यों का उपपात-आदि ७७२

तेईसवां उद्देशक **७७२**

चोहत्तरवां आलापक : ज्योतिष्क-देवों में असंख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-तिर्यंच-पंचेन्द्रिय-(यौगलिकों) का उपपात आदि ७७२
(पहला गमक) ७७२
(दूसरा गमक) ७७३
(तीसरा गमक) ७७३
(चौथा गमक) ७७३
(सातवें से नवां गमक) ७७३
पिचहत्तरवां आलापक : ज्योतिष्क-देवों में संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-तिर्यंच-पंचेन्द्रिय-जीवों का उपपात-आदि ७७४
छिहत्तरवां आलापक : ज्योतिष्क-देवों में असंख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-मनुष्य-(यौगलिकों) का उपपात-आदि ७७४
सितंतरवां आलापक : ज्योतिष्क-देवों में संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-मनुष्यों का उपपात-आदि ७७४

चौबीसवां उद्देशक **७७४**

अठहत्तरवां आलापक : सौधर्म-देवों (प्रथम देवलोक) में असंख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-तिर्यंच-पंचेन्द्रिय-(यौगलिकों) का उपपात-आदि ७७५
(पहला गमक) ७७५
(दूसरा गमक) ७७५
(तीसरा गमक) ७७५
(छट्ठा गमक) ७७५
(सातवें से नवें गमक तक) ७७६

उन्यासीवां आलापक : सौधर्म-देवों (प्रथम देवलोक) में संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-तिर्यंच-पंचेन्द्रिय-जीवों का उपपात--आदि ७७६
अस्सीवां आलापक : सौधर्म-देवों (प्रथम देवलोक) में असंख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-मनुष्य-(यौगलिकों) का उपपात--आदि ७७६
इक्कासीवां आलापक : सौधर्म-देवों (प्रथम देवलोक) में संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-मनुष्यों का उपपात-आदि ७७६
बयासीवां आलापक : ईशान-देवों (दूसरे देवलोक) में तिर्यंच-यौगलिकों का उपपात-आदि ७७७
तरासीवां आलापक : ईशान-देवों (दूसरे देवलोक) में मनुष्य-यौगलिकों का उपपात-आदि ७७७
चौरासीवां आलापक : ईशान-देवों (दूसरे देवलोक) में संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-तिर्यंच-पंचेन्द्रिय-जीवों एवं संज्ञी-मनुष्यों का उपपात-आदि ७७७
पचासीवां आलापक : सनत्कुमार-देवों (तीसरे देवलोक) में संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-तिर्यंच-पचेन्द्रिय-जीवों का उपपात--आदि ७७७
छ्यासीवां आलापक : सनत्कुमार-देवों (तीसरे देवलोक) में संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-मनुष्यों का उपपात-आदि ७७७
सत्तासीवां आलापक : चौथे देवलोक से आठवें देवलोक तक संज्ञी-तिर्यंच-पंचेन्द्रिय--जीवों और संज्ञी-मनुष्यों का उपपात--आदि ७७८
अट्ठासीवां आलापक : आनत-देवों (नौवें देवलोक) में संज्ञी-मनुष्यों का उपपात--आदि ७७८
नयासीवां आलापक : नव ग्रैवेयक-देवों में संज्ञी-मनुष्यों का उपपात-आदि ७७८
नव्वेवां आलापक : प्रथम चार अनुत्तरविमान के देवों में संज्ञी-मनुष्यों का उपपात-आदि ७७९
इक्यानवेवां आलापक : सर्वार्थसिद्ध-देवों में संज्ञी-मनुष्यों का उपपात-आदि ७७९
(पहला गमक) ७७९
(चौथा गमक) ७७९
(सातवां गमक) ७७९

पच्चीसवां शतक (पृ. ७८१-८६५)

पहला उद्देशक ७८१
संग्रहणी गाथा ७८१
लेश्या-पद ७८१
योग का अल्पबहुत्व-पद ७८१
समयोगी-विषमयोगी-पद ७८२
योग-पद ७८२
दूसरा उद्देशक ७८३
द्रव्य-पद ७८३
जीवों का अजीव-परिभोग-पद ७८४
अवगाह-पद ७८५
पुद्गलों का चयादि-पद ७८५
पुद्गल-ग्रहण-पद ७८५
तीसरा उद्देशक ७८६
संस्थान-पद ७८६
रत्नप्रभादि के संदर्भ में संस्थान-पद ७८७
प्रदेशावगाह की अपेक्षा संस्थान-निरूपण का पद ७८८
संस्थानों के युग्म आदि का पद ७९१
श्रेणी-पद ७९३
अनुश्रेणी-विश्रेणी-गति का पद ७९६
निरयावास-पद ७९६
गणिपिटक-पद ७९६
अल्पबहुत्व-पद ७९६
चौथा उद्देशक ७९७
युग्म-पद ७९७

शरीर-पद	८०१
सप्रकम्प-अप्रकम्प-पद	८०१
पुद्गल-पद	८०२
मध्य-प्रदेश-पद	८१५
पांचवां उद्देशक	**८१५**
पर्यव-पद	८१५
काल-पद	८१६
निगोद-पद	८१९
नाम-पद	८१९
छट्ठा उद्देशक	**८१९**
प्रज्ञापना-पद	८१९
संग्रहणी गाथा	८१९
वेद-पद	८२०
राग-पद	८२१
कल्प-पद	८२१
चारित्र-पद	८२२
प्रतिषेवणा-पद	८२२
ज्ञान-पद	८२३
तीर्थ-पद	८२३
लिंग-पद	८२४
शरीर-पद	८२४
क्षेत्र-पद	८२४
काल-पद	८२५
गति-पद	८२६
संयम-स्थान-पद	८२७
निकर्ष-पद	८२८
योग-पद	८३०
उपयोग-पद	८३०
कषाय-पद	८३०
लेश्या-पद	८३१
परिणाम-पद	८३२
बन्ध-पद	८३२
वेदन-पद	८३३
उदीरणा-पद	८३३
उपसंपद्-हान-पद	८३४
संज्ञा-पद	८३५
आहार-पद	८३५
भव-पद	८३५
आकर्ष-पद	८३६
काल-पद	८३६
अन्तर-पद	८३७
समुद्घात-पद	८३७
क्षेत्र-पद	८३८
स्पर्शना-पद	८३८
भाव-पद	८३८
परिमाण-पद	८३८
अल्पबहुत्व-पद	८३९
सातवां उद्देशक	**८३९**
प्रज्ञापना-पद	८३९
वेद-पद	८४०
राग-पद	८४१
कल्प-पद	८४१
निर्ग्रन्थ-पद	८४१
प्रतिषेवणा-पद	८४१
ज्ञान-पद	८४२
तीर्थ-पद	८४२
लिंग-पद	८४२
शरीर-पद	८४३
क्षेत्र-पद	८४३
काल-पद	८४३
गति-पद	८४३
संयमस्थान-पद	८४४
निकर्ष-पद	८४५
योग-पद	८४६
उपयोग-पद	८४६
कषाय-पद	८४७
लेश्या-पद	८४७
परिणाम-पद	८४७
बन्ध-पद	८४८
वेदन-पद	८४८

उदीरणा-पद	८४८
उपसंपद्-हान-पद	८४९
संज्ञा-पद	८४९
आहार-पद	८५०
भव-पद	८५०
आकर्ष-पद	८५०
काल-पद	८५१
अन्तर-पद	८५१
समुद्घात-पद	८५१
क्षेत्र-पद	८५२
स्पर्शना-पद	८५२
भाव-पद	८५२
परिमाण-पद	८५२
अल्पबहुत्व-पद	८५३
संग्रहणी गाथा	८५३
प्रतिषेवणा-पद	८५३
आलोचना-पद	८५३
सामाचारी-पद	८५४
प्रायश्चित्त-पद	८५४
तप-पद	८५५
आठवां उद्देशक	**८६३**
नैरयिक-आदि का पुनर्भव-पद	८६३
नवां-बारहवां उद्देशक	**८६४**
(नवां उद्देशक)	**८६४**
(दसवां उद्देशक)	**८६४**
(ग्यारहवां उद्देशक)	**८६५**
(बारहवां उद्देशक)	**८६५**

छब्बीसवां शतक (पृ. ८६६-८७५)

पहला उद्देशक	**८६६**
श्रुतदेवता भगवती को नमस्कार	८६६
संग्रहणी गाथा	८६६
जीवों और लेश्यादि से विशेषित- -जीवों का बन्धाबन्ध-पद	८६६
नैरयिक-आदि और लेश्यादि से विशेषित- -नैरयिक-आदि जीवों का बंधाबंध-पद	८६७
जीव-आदि का ज्ञानावरणीय-आदि-कर्म की अपेक्षा बंध-अबंध-पद	८६८
दूसरा उद्देशक	**८७०**
विशेषित-नैरयिक-आदि जीवों का बन्धाबन्ध-पद	८७०
तीसरा-दसवां उद्देशक	**८७१**
तीसरा उद्देशक	**८७१**
चौथा उद्देशक	**८७२**
(अनन्तरावगाढ का बन्धाबन्ध)	८७२
पांचवां उद्देशक	**८७२**
(परम्परावगाढ का बन्धाबन्ध)	८७२
छठा उद्देशक	**८७२**
(अनन्तराहारक का बन्धाबन्ध)	८७२
सातवां उद्देशक	**८७२**
(परम्पराहारक का बन्धाबन्ध)	८७२
आठवां उद्देशक	**८७३**
(अनन्तर-पर्याप्तक-बन्धाबन्ध)	८७३
नौवां उद्देशक	**८७३**
(परम्पर-पर्याप्तक का बन्धाबन्ध)	८७३
दसवां उद्देशक	**८७३**
(चरम का बन्धाबन्ध)	८७३
ग्यारहवां उद्देशक	**८७४**
(अचरम का बन्धाबन्ध)	८७४

सत्ताईसवां शतक (पृ. ८७६)

पहला-ग्यारहवां उद्देशक	**८७६**
जीवों का पाप-कर्म-करण-अकरण-पद	८७६

अट्ठाईसवां शतक (पृ. ८७७,८७८)

पहला उद्देशक	**८७७**
जीवों का पाप-कर्म-समर्जन-समाचरण-पद	८७७
दूसरा उद्देशक	**८७८**
तीसरा-ग्यारहवां उद्देशक	**८७८**

उनतीसवां शतक (पृ. ८७९,८८०)

पहला उद्देशक	**८७९**
जीवों के पाप-कर्म के प्रारंभ और अन्त का पद	८७९

दूसरा उद्देशक ८८०
तीसरा–ग्यारहवां उद्देशक ८८०

तीसवां शतक (पृ. ८८१-८८९)

पहला उद्देशक ८८१
समवसरण-पद ८८१
दूसरा उद्देशक ८८८
तीसरा उद्देशक ८८९
चौथा-ग्यारहवां उद्देशक ८८९

इक्कतीसवां शतक (पृ. ८९०-८९४)

पहला उद्देशक ८९०
दूसरा उद्देशक ८९१
तीसरा उद्देशक ८९२
चौथा उद्देशक ८९२
पांचवां उद्देशक ८९३
छट्ठा उद्देशक ८९३
सातवां से अट्ठाइसवां उद्देशक ८९३
(सातवां उद्देशक) ८९३
(आठवां उद्देशक) ८९४
(नवां-बारहवां उद्देशक) ८९४
(तेरहवां-सोलहवां) ८९४
(सतरहवां से बीसवां उद्देशक) ३९४
(इक्कीसवां-अट्ठाईसवां उद्देशक) ८९४

बत्तीसवां शतक (पृ. ८९५)

पहला उद्देशक ८९५
क्षुल्लक-युग्म-नैरयिक-आदि का उद्वर्त्तन-पद ८९५
दूसरा–अट्ठाईसवां उद्देशक ८९५

तेतीसवां शतक (पृ. ८९६-९०३)

प्रथम एकेन्द्रिय शतक ८९६
पहला उद्देशक ८९६
दूसरा उद्देशक ८९७
तीसरा उद्देशक ८९८
चौथा-ग्यारहवां उद्देशक ८९८
(चौथा उद्देशक) ८९८
(पांचवां उद्देशक) ८९८
(छट्ठा उद्देशक) ८९९
(सातवां उद्देशक) ८९९
(आठवां उद्देशक) ८९९
(नवां उद्देशक) ८९९
(दसवां उद्देशक) ८९९
(ग्यारहवां उद्देशक) ८९९
दूसरा शतक ८९९
पहला उद्देशक ८९९
दूसरा उद्देशक ९००
तीसरा–ग्यारहवां उद्देशक ९००
तीसरा, चौथा शतक ९०१
(तीसरा शतक) ९०१
(चौथा शतक) ९०१
पांचवां शतक ९०१
भवसिद्धिक-एकेन्द्रिय-जीवों के कर्म-प्रकृति-पद ९०१
छट्ठा शतक ९०१
सातवां, आठवां शतक ९०२
(सातवां शतक) ९०२
(आठवां शतक) ९०२
नवां–बारहवां शतक ९०२
(नवां शतक) ९०२
अभवसिद्धिक-एकेन्द्रिय-जीवों के कर्म-प्रकृति-पद ९०२
(दसवां शतक) ९०३
(ग्यारहवां शतक) ९०३
(बारहवां शतक) ९०३

चौतीसवां शतक (पृ. ९०४-९२०)

पहला एकेन्द्रिय-शतक ९०४
पहला उद्देशक ९०४
एकेन्द्रिय-जीवों के विग्रह-गति का पद ९०४
दूसरा उद्देशक ९१६
तीसरा उद्देशक ९१८
चौथा–ग्यारहवां उद्देशक ९१८
दूसरा शतक ९१८
पहला–ग्यारहवां उद्देशक ९१८
तीसरा–पांचवां शतक ९१९
छट्ठा शतक ९१९
सातवां–बारहवां शतक ९२०

पैंतीसवां शतक (पृ. ९२१-९३१)

पहला एकेन्द्रिय महायुग्म-शतक ९२१
पहला उद्देशक ९२१
महायुग्म-एकेन्द्रियों का उपपात-आदि-पद ९२१
दूसरा उद्देशक ९२६

तीसरा–ग्यारहवां उद्देशक ९२७
(तीसरा उद्देशक) ९२७
(चौथा उद्देशक) ९२७
(पांचवां उद्देशक) ९२७
(छट्ठा उद्देशक) ९२७
(सातवां उद्देशक) ९२८
(आठवां उद्देशक) ९२८
(नवां उद्देशक) ९२८
(दसवां उद्देशक) ९२८
(ग्यारहवां उद्देशक) ९२८
दूसरा एकेन्द्रिय महायुग्म शतक ९२९
पहला उद्देशक ९२९
दूसरा उद्देशक ९२९
तीसरा से ग्यारहवां उद्देशक ९२९
तीसरा-बारहवां शतक ९३०
पहला-ग्यारहवां उद्देशक ९३०
(तीसरा शतक) ९३०
(चौथा शतक) ९३०
पहला-ग्यारहवां उद्देशक ९३०
(पांचवां शतक) ९३०
पहला-ग्यारहवां उद्देशक ९३०
(छठा शतक) ९३०
पहला-ग्यारहवां उद्देशक ९३०
(सातवां शतक) ९३१
पहला-ग्यारहवां उद्देशक ९३१
(आठवां शतक) ९३१
पहला-ग्यारहवां उद्देशक ९३१
(नवां-बारहवां शतक) ९३१
प्रत्येक के पहला-ग्यारहवां उद्देशक ९३१

छत्तीसवां शतक (पृ. ९३२-९३४)

पहला द्वीन्द्रिय-महायुग्म-शतक ९३२
पहला उद्देशक ९३२
महायुग्म-द्वीन्द्रियों में उपपात-आदि-पद ९३२
दूसरा-ग्यारहवां उद्देशक ९३२
दूसरा-बारहवां द्वीन्द्रिय-महायुग्म-शतक ९३३
(दूसरा शतक) ९३३
(तीसरा शतक) ९३३
(चौथा शतक) ९३३
(पांचवां-आठवां शतक) ९३३
(नवां-बारहवां शतक) ९३४

सैंतीसवां शतक (पृ. ९३५)

पहला उद्देशक ९३५
महायुग्म-त्रीन्द्रियों में उपपात-आदि-पद ९३५

अड़तीसवां शतक (पृ. ९३६)

पहला उद्देशक ९३६
महायुग्म-चतुरिन्द्रियों में उपपात-आदि-पद ९३६

उनचालीसवां शतक (पृ. ९३७)

पहला उद्देशक ९३७
महायुग्म-असंज्ञी-पंचेन्द्रियों में उपपात-आदि-पद ९३७

चालीसवां शतक (९३८-९४५)

पहला संज्ञी-पंचेन्द्रिय-महायुग्म-शतक ९३८
पहला उद्देशक ९३८
महायुग्म-संज्ञी-पंचेन्द्रियों में उपपात-आदि-पद ९३८
दूसरा–ग्यारहवां उद्देशक ९३९
(दूसरा उद्देशक) ९३९
(तीसरा–ग्यारहवां उद्देशक) ९४०
दूसरा संज्ञी-पंचेन्द्रिय-महायुग्म-शतक ९४०
पहला उद्देशक ९४०
दूसरा उद्देशक ९४०
तीसरा-ग्यारहवां उद्देशक ९४१
तीसरा-चौदहवां संज्ञी-महायुग्म-शतक ९४१
(तीसरा शतक) ९४१
(चौथा शतक) ९४१
(पांचवां शतक) ९४१
(छठा शतक) ९४२
(सातवां शतक) ९४२
(आठवां शतक) ९४२
(नवां शतक) ९४२
(दसवां शतक) ९४२
(ग्यारहवां-चौदहवां शतक) ९४३

पन्द्रहवां–इक्कीसवां संज्ञी महायुग्म शतक	१४३
पन्द्रहवां शतक	१४३
पहला उद्देशक	१४३
दूसरा उद्देशक	१४३
तीसरा–ग्यारहवां उद्देशक	१४३
(सोलहवां शतक)	१४४
(सत्रहवां-इक्कीसवां शतक)	१४४

इकतालीसवां शतक
(पृ. १४६-१५४)

पहला उद्देशक	१४६
राशियुग्म-नैरयिक-आदि में उपपात- -आदि-पद	१४६
दूसरा उद्देशक	१४८
तीसरा उद्देशक	१४९
चौथा उद्देशक	१४९
पांचवां–अट्ठाईसवां उद्देशक	१५०
(पांचवां उद्देशक)	१५०
(छठा उद्देशक)	१५०
(सातवां उद्देशक)	१५०
(आठवां उद्देशक)	१५०
(नवां-बारहवां उद्देशक)	१५०
(तेरहवां-सोलहवां उद्देशक)	१५१
(सत्रहवां-बीसवां उद्देशक)	१५१
(इक्कीसवां-चौबीसवां उद्देशक)	१५१
(पच्चीसवां-अट्ठाईसवां उद्देशक)	१५१
उनतीसवां–छप्पनवां उद्देशक	१५२
(उनतीसवां-बत्तीसवां उद्देशक)	१५२
(तेतीसवां-छत्तीसवां उद्देशक)	१५२
(सैंतीसवां-चवालीसवां उद्देशक)	१५२
(पैंतालीसवां-बावनवां उद्देशक)	१५२
(तिरेपनवां-छप्पनवां उद्देशक)	१५२
सत्तावनवां–चौरासीवां उद्देशक	१५२
(सत्तावनवां-साठवां उद्देशक)	१५२
(इकसठवां-चौसठवां उद्देशक)	१५३
(पैंसठवां-बहत्तरवां उद्देशक)	१५३
(तिहत्तरवां-अस्सीवां उद्देशक)	१५३
(इक्कासीवां-चौरासीवां उद्देशक)	१५३
पच्चासीवां–एकसौ बारहवां उद्देशक	१५३
एकसौ तेरहवां–एकसौ चालीसवां उद्देशक	१५४
एकसौ इकतालीसवां–एकसौ अड़सठवां उद्देशक	१५४
एकसौ उनहत्तरवां–एकसौ छयानवेवां उद्देशक	१५४

बारहवां शतक

पहला उद्देशक

संग्रहणी गाथा

बारहवें शतक के दस उद्देशक हैं—१. शंख २. जयंति ३. पृथ्वी ४. पुद्गल ५. अतिपात ६. राहु ७. लोक ८. नाग ९. देव १०. आत्मा।

शंख-पुष्कली-पद

१. उस काल और उस समय में श्रावस्ती नाम की नगरी थी—वर्णक। कोष्ठक चैत्य—वर्णक। उस श्रावस्ती नगरी में शंख आदि अनेक श्रमणोपासक रहते थे। वे संपन्न यावत् बहुजन के द्वारा अपरिभवनीय, जीव-अजीव को जानने वाले यावत् यथा-परिग्रहीत तपःकर्म के द्वारा आत्मा को भावित करते हुए रह रहे थे। उस श्रमणोपासक शंख की उत्पला नाम की भार्या थी—सकुमाल हाथ पैर वाली यावत् सुरुपा। वह श्रमणोपासिका जीव-अजीव को जानने वाली यावत् यथा-परिगृहीत तपःकर्म के द्वारा आत्मा को भावित करती हुई रह रही थी। श्रावस्ती नगरी में पुष्कली नाम का श्रमणोपासक रहता था—वह संपन्न, जीव-अजीव को जानने वाला यावत् यथा-परिग्रहीत तपःकर्म के द्वारा आत्मा को भावित करता हुआ रह रहा था।

२. उस काल और उस समय में भगवान् महावीर आए, परिषद यावत् पर्युपासना की। वे श्रमणोपासक इस कथा को सुनकर हृष्ट-तुष्ट-चित्त वाले हो गए। आलभिका की भांति वक्तव्यता यावत् पर्युपासना की। श्रमण भगवान महावीर ने उन श्रमणोपासकों को उस विशालतम परिषद् में धर्म कहा, यावत् परिषद लौट गई।

३. वे श्रमणोपासक श्रमण भगवान् महावीर के पास धर्म सुनकर, अवधारण कर हृष्ट-तुष्ट हो गए। उन्होंने श्रमण भगवान् महावीर को वंदन-नमस्कार किया, वंदन-नमस्कार कर प्रश्न पूछे। पूछकर अर्थ को ग्रहण किया, ग्रहण कर, उठकर खड़े हुए। खड़े होकर श्रमण भगवान् महावीर के पास से, कोष्ठक चैत्य से प्रतिनिष्क्रमण किया। प्रतिनिष्क्रमण कर जहां श्रावस्ती नगरी थी, वहां जाने के लिए चिंतन किया।

४. वह श्रमणोपासक शंख उन श्रमणोपासकों से इस प्रकार बोला—देवानुप्रिय! तुम विपुल अशन, पान, खाद्य और स्वाद्य को तैयार करवाओ। हम उस विपुल अशन, पान, खाद्य और स्वाद्य को स्वाद लेते हुए, विशिष्ट स्वाद लेते हुए, परस्पर एक दूसरे को खिलाते हुए, भोजन करते हुए पाक्षिक पौषध की प्रतिजागरणा करते हुए विहरण करेंगे।

५. उन श्रमणोपासकों ने श्रमणोपासक शंख के इस अर्थ को विनयपूर्वक स्वीकार किया।

६. उस श्रमणोपासक शंख के मन में इस आकारवाला आध्यात्मिक, स्मृत्यात्मक, अभिलाषात्मक, मनोगत संकल्प उत्पन्न हुआ। यह मेरे लिए श्रेयस्कर नहीं है कि मैं उस विपुल अशन, पान, खाद्य और स्वाद्य को स्वाद लेता हुआ, विशिष्ट स्वाद लेता हुआ, परस्पर एक-दूसरे को खिलाता हुआ, भोजन करता हुआ, पाक्षिक पौषध की प्रतिजागरणा करता हुआ विहरण करूं, यह मेरे लिए श्रेयस्कर है कि मैं पौषधशाला में उपवास करूं। ब्रह्मचारी रहूं। सुवर्ण-मणि को छोड़कर, माला, सुगंधित चूर्ण और विलेपन से रहित, शस्त्र--मूसल आदि का वर्जन कर अकेला, दूसरों के सहाय्य से निरपेक्ष होकर, दर्भ-संस्तारक पर बैठ कर पाक्षिक पौषध की प्रतिजागरणा करूं। इस प्रकार संप्रेक्षा की, संप्रेक्षा कर जहां श्रावस्ती नगरी थी, जहां अपना घर था, जहां श्रमणोपासिका उत्पला थी, वहाँ आया, वहां आकर श्रमणोपासिका उत्पला से पूछा, पूछ कर जहां पौषधशाला थी, वहां आया वहां आकर पौषधशाला में अनुप्रवेश किया, अनुप्रवेश कर पौषधशाला को प्रमार्जित किया, प्रमार्जित कर उच्चार-प्रसवणभूमि का प्रतिलेखन किया, प्रतिलेखन कर दर्भ-संस्तारक को बिछाया, बिछाकर दर्भ-संस्तारक पर आरूढ़ हुआ, आरूढ़ होकर पौषधशाला में ब्रह्मचर्य--पूर्वक उपवास किया, सुवर्ण-मणि को छोड़कर, माला, सुगंधित चूर्ण और विलेपन से रहित, शस्त्र-मूसल आदि का वर्जन कर, अकेले, सहाय्य निरपेक्ष होकर दर्भ-संस्तारक पर बैठकर पाक्षिक पौषध की प्रतिजागरणा करने लगा।

७. वे श्रमणोपासक जहां श्रावस्ती नगरी थी, जहां अपना-अपना घर था, वहां आए। वहां आकर विपुल अशन, पान, खाद्य और स्वाद्य को तैयार करवाया, तैयार करवा कर एक-दूसरे को बुलाया, बुलाकर इस प्रकार बोले—देवानुप्रिय ! हमने वह विपुल अशन, पान, खाद्य और स्वाद्य तैयार करवाया है। देवानुप्रिय ! श्रमणोपासक शंख अभी तक नहीं आया, इसलिए यह श्रेयस्कर है कि हम श्रमणोपासक शंख को बुला लाए।

८. वह श्रमणोपासक पुष्कली उन श्रमणोपासकों से इस प्रकार बोला—देवानुप्रियो ! तुम अच्छी तरह बैठो, विश्वस्त रहो, मैं श्रमणोपासक शंख को बुला लाता हूं। ऐसा कहकर उसने श्रमणोपासकों के पास से प्रतिनिष्क्रमण किया। प्रतिनिष्क्रमण कर श्रावस्ती नगरी के बीचोंबीच जहां श्रमणोपासक शंख का घर था, वहां आया, वहां आकर श्रमणोपासक शंख के घर में अनुप्रविष्ट हुआ।

९. श्रमणोपासिका उत्पला ने श्रमणोपासक पुष्कली को आते हुए देखा, देखकर हृष्ट-तुष्ट हो गई, आसन से उठी, उठकर सात-आठ कदम सामने गई। सामने जाकर श्रमणोपासक पुष्कली को वंदन-नमस्कार किया। वंदन-नमस्कार कर आसन पर बैठने के लिए निमंत्रित किया। निमंत्रित कर इस प्रकार कहा—देवानुप्रिय ! कहिए, आपके आगमन का प्रयोजन क्या है?

१०. श्रमणोपासक पुष्कली ने श्रमणोपासिका उत्पला से इस प्रकार कहा—देवानुप्रिये! श्रमणोपासक शंख कहां है ?

११. *वह श्रमणोपासिका उत्पला श्रमणोपासक पुष्कली से इस प्रकार बोली—देवानुप्रिय! श्रमणोपासक शंख ने पौषधशाला में ब्रह्मचर्य-पूर्वक उपवास किया है, सुवर्ण-मणि को छोड़कर माला, सुगंधित चूर्ण और विलेपन से रहित, शस्त्र-मूसल आदि का वर्जन कर*

अकेले, सहाय्य-निरपेक्ष होकर, दर्भ-संस्तारक पर बैठ कर, पाक्षिक पौषध की प्रतिजागरणा करता हुआ। विहार कर रहा है।

१२. वह पुष्कली श्रमणोपासक जहां पौषधशाला थी, जहां श्रमणोपासक शंख था, वहां आया, वहां आकर गमनागमन का प्रतिक्रमण किया, प्रतिक्रमण कर श्रमणोपासक शंख को वन्दन-नमस्कार किया, वन्दन नमस्कार कर इस प्रकार बोला—देवानुप्रिय ! हमने वह विपुल अशन, पान, खाद्य और स्वाद्य तैयार करवाया है, देवानुप्रिय ! तुम चलो, हम विपुल आशन, पान, खाद्य और स्वाद्य का स्वाद लेते हुए, विशिष्ट स्वाद लेते हुए, परस्पर एक दूसरे को खिलाते हुए, भोजन करते हुए, पाक्षिक पौषध की प्रतिजागरणा करते हुए विहार करेंगे।

१३. वह श्रमणोपासक शंख श्रमणोपासक पुष्कली से इस प्रकार बोला— देवानुप्रिय ! मुझे यह नहीं कल्पता (मेरे लिए यह करणीय नहीं है) कि मैं उस विपुल अशन, पान, खाद्य और स्वाद्य का स्वाद लेता हुआ, विशिष्ट स्वाद लेता हुआ, परस्पर एक दूसरे को खिलाता हुआ, भोजन करता हुआ पाक्षिक पौषध की प्रतिजागरणा करता हुआ विहरण करूं। मुझे यह कल्पता है (मेरे लिए यह करणीय है) कि मैं पौषधशाला में ब्रह्मचर्य-पूर्वक उपवास करूं, सुवर्ण-मणि को छोड़कर, माला, सुगंधित चूर्ण और विलेपन से रहित होकर शस्त्र-मूसल आदि का वर्जन कर, अकेले, सहाय्य-निरपेक्ष होकर दर्भ-संस्तारक पर बैठकर पाक्षिक पौषध की प्रतिजागरणा करता हुआ विहरण करूं। देवानुप्रियो ! इसलिए तुम अपने छंद (अभिप्राय) के अनुसार उस विपुल अशन, पान, खाद्य और स्वाद्य का आस्वाद लेते हुए, विशिष्ट स्वाद लेते हुए, परस्पर एक दूसरे को खिलाते हुए, भोजन करते हुए पाक्षिक पौषध की प्रति जागरणा करते हुए विहार करो।

१४. श्रमणोपासक पुष्कली ने श्रमणोपासक शंख के पास से पौषधशाला से प्रतिनिष्क्रमण किया, प्रतिनिष्क्रमण कर श्रावस्ती नगरी के बीचोंबीच जहां वे श्रमणोपासक थे, वहां आया। वहां आकर उन श्रमणोपासकों से इस प्रकार कहा—देवानुप्रियो! श्रमणोपासक शंख पौषधशाला में ब्रह्मचर्यपूर्वक उपवास यावत् विहरण कर रहा है। देवानुप्रियो! यह तुम्हारा अभिप्राय है कि तुम उस विपुल अशन, पान, खाद्य और स्वाद्य का स्वाद लेते हुए, विशिष्ट स्वाद लेते हुए, परस्पर एक-दूसरे को खिलाते हुए, भोजन करते हुए पाक्षिक पौषध की प्रतिजागरणा करते हुए विहरण करो, श्रमणोपासक शंख अभी नहीं आएगा। उन श्रमणोपासकों ने उस विपुल अशन, पान, खाद्य और स्वाद्य को स्वाद लेते हुए यावत् पाक्षिक पौषध की प्रतिजागरणा करते हुए विहरण किया।

१५. मध्यरात्रि में धर्म-जागरिका करते हुए उस श्रमणोपासक शंख के मन में इस आकारवाला आध्यात्मिक, स्मृत्यात्मक, अभिलाषात्मक और मनोगत संकल्प समुत्पन्न हुआ—यह मेरे लिए श्रेय है कि मैं कल उषाकाल में पौ फटने पर यावत् सहस्ररश्मि दिनकर के उदित और तेज से देदीप्यमान होने पर श्रमण भगवान महावीर को वंदन-नमस्कार कर यावत् पर्युपासना कर, वहां से प्रतिनिवृत्त होकर पाक्षिक पौषध का पारणा करूं—ऐसी संप्रेक्षा की, संप्रेक्षा कर दूसरे दिन उषाकाल में पौ फटने पर यावत् सहस्ररश्मि दिनकर के उदित और तेज से देदीप्यमान होने

पर पौषधशाला से प्रतिनिष्क्रमण किया, प्रतिनिष्क्रमण कर शुद्ध प्रावेश्य मांगलिक वस्त्रों को विधिवत् पहना। पहनकर अपने घर से प्रतिनिष्क्रमण किया, प्रतिनिष्क्रमण कर पैदल चलकर श्रावस्ती नगरी के बीचोंबीच निर्गमन किया, निर्गमन कर जहां कोष्ठक चैत्य था—जहां श्रमण भगवान महावीर थे, वहां आया, आकर दांयी ओर से प्रारम्भ कर तीन बार प्रदक्षिण की। प्रदक्षिणा कर वन्दन-नमस्कार किया, वन्दन नमस्कार कर तीन प्रकार की पर्युपासना के द्वारा पर्युपासना करने लगा।

१६. उन श्रमणोपासकों ने दूसरे दिन उषाकाल में पौ फटने पर यावत् सहस्ररश्मि दिनकर के उदित और तेज से देदीप्यमान होने पर स्नान, बलिकर्म किया यावत् अल्पभार और बहुमूल्य वाले आभरणों से शरीर को अलंकृत किया। इस प्रकार सज्जित होकर अपने-अपने घरों से निकलकर एक साथ मिले। एक साथ मिलकर पैदल चलते हुए श्रावस्ती नगरी के बीचोंबीच निर्गमन किया, निर्गमन कर जहां कोष्ठक चैत्य था, जहां श्रमण भगवान महावीर थे, वहां आएं वहां आकर श्रमण भगवान महावीर यावत् तीन प्रकार की पर्युपासना के द्वारा पर्युपासना करने लगे।

१७. श्रमण भगवान महावीर ने उन श्रमणोपासकों को उस विशालतम परिषद में धर्म कहा यावत् आज्ञा के आराधक होते हैं।

१८. वे श्रमणोपासक श्रमण भगवान महावीर के समीप धर्म सुनकर, अवधारण कर हृष्ट-तुष्ट हुए, उठकर खड़े हुए, खड़े होकर श्रमण भगवान महावीर को वंदन-नमस्कार किया, वंदन-नमस्कार कर जहां श्रमणोपासक शंख था, वहां आए, वहां आकर श्रमणोपासक शंख से इस प्रकार बोले—देवानुप्रिय! गत-दिवस तुमने स्वयं ही हमें इस प्रकार कहा था— देवानुप्रिय ! तुम विपुल अशन, पान, खाद्य और स्वाद्य तैयार करवाओ। हम उस विपुल अशन, पान, खाद्य और स्वाद्य का स्वाद लेते हुए, विशिष्ट स्वाद लेते हुए, परस्पर एक-दूसरे को खिलाते हुए और भोजन करते हुए पाक्षिक पौषध की प्रतिजागरणा करते हुए विहार करेंगे। तुमने पौषधशाला में ब्रह्मचर्य-पूर्वक, सुवर्ण-मणि को छोड़कर, माला, सुगंधित चूर्ण और विलेपन से रहित होकर, शस्त्र-मूसल आदि का वर्जन कर, अकेले, सहाय्य-निरपेक्ष होकर दर्भ-संस्तारक पर पाक्षिक पौषध की प्रतिजागरणा करते हुए विहार किया। देवानुप्रिय ! तुमने हमारी बहुत अवहेलना की।

१९. आर्यो ! इस संबोधन से संबोधित कर श्रमण भगवान महावीर ने उन श्रमणोपासकों से इस प्रकार कहा—आर्यो ! तुम श्रमणोपासक शंख की अवहेलना, निंदा, भर्त्सना, गर्हा, और अवज्ञा मत करो। श्रमणोपासक शंख प्रियधर्मा है—दृढ़धर्मा है, उसने सुदृढ़ जागरिका की है।

२०. भंते ! इस सम्बोधन से संबोधन कर भगवान गौतम ने श्रमण भगवान महावीर को वंदन-नमस्कार किया, वंदन-नमस्कार कर इस प्रकार कहा—भंते ! जागरिका कितने प्रकार की प्रज्ञप्त है ?

गौतम! जागरिका तीन प्रकार की प्रज्ञप्त है, जैसे—बुद्ध-जागरिका, अबुद्ध-जागरिका और सुदृढ़-जागरिका।

२१. भंते ! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—जागरिका तीन प्रकार की प्रज्ञप्त है, जैसे—बुद्ध-जागरिका, अबुद्ध-जागरिका और सुदृढ़-जागरिका। गौतम ! जो अर्हत् भगवान उत्पन्न-ज्ञान-दर्शन के धारक, अर्हत्, जिन, केवली, अतीत, वर्तमान और भविष्य के विज्ञाता सर्वज्ञ और सर्वदर्शी हैं, वे बुद्ध बुद्ध-जागरिका करते हैं।

जो अणगार भगवान विवेक-पूर्वक चलते हैं, विवेक-पूर्वक बोलते हैं, विवेक-पूर्वक आहार की एषणा करते हैं, विवेक-पूर्वक वस्त्र पात्र आदि को लेते और रखते हैं, विवेक-पूर्वक मल, मूत्र, श्लेष्म, नाक के मैल, शरीर के गाढ़े मैल का, परिष्ठापन करते हैं, मन, वचन और काया की संगत प्रवृत्ति करते हैं, मन, वचन और काया का निरोध करते हैं, अपने आपको सुरक्षित रखते हैं, इन्द्रियों को सुरक्षित रखते हैं, ब्रह्मचर्य को सुरक्षित रखते हैं, वे अबुद्ध अबुद्ध-जागरिका करते हैं।

जो ये श्रमणोपासक जीव-अजीव को जानने वाले यावत् यथा-परिगृहीत तपः-कर्म के द्वारा आत्मा को भावित करते हुए रह रहे हैं, वे सुदृढ़-जागरिका करते हैं।

गौतम ! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—तीन प्रकार की जागरिका प्रज्ञप्त है—जैसे—बुद्ध--जागरिका, अबुद्ध-जागरिका, सुदृढ़-जागरिका।

२२. श्रमणोपासक शंख ने श्रमण भगवान महावीर को वंदन-नमस्कार किया, वंदन-नमस्कार कर, इस प्रकार कहा—भंते ! क्रोध के वश आर्त्त बना हुआ जीव क्या बंध करता है ? क्या प्रकर्ष करता है ? किसका चय करता है ? किसका उपचय करता है ?

शंख ! क्रोध के वश आर्त्त बना हुआ जीव आयुष्य-कर्म को छोड़कर शेष सात कर्मों की शिथिल-बन्धन-बद्ध प्रकृतियों को गाढ़-बन्धन-बद्ध करता है, अल्पकालिक स्थितिवाली प्रकृतियों को दीर्घकालिक स्थिति वाली करता है, मन्द-अनुभव वाली प्रकृत्तियों को तीव्र--अनुभव वाली करता है, अल्पप्रदेश-परिणाम वाली प्रकृत्तियों को बहुप्रदेश-परिणाम वाली करता है, आयुष्य-कर्म का बंध कदाचित् करता है और कदाचित् नहीं करता, वह असातवेदनीय-कर्म का बहुत-बहुत उपचय करता है और आदि-अन्त-हीन दीर्घपथ वाले चतुर्गत्यात्मक संसार-कान्तार में अनुपर्यटन करता है।

२३. भंते ! मान के वश आर्त्त बना हुआ जीव क्या बंध करता है ? क्या प्रकर्ष करता है ? किसका चय करता है ? किसका उपचय करता है ? इस प्रकार पूर्ववत् यावत् चतुर्गत्यात्मक संसार-कान्तार में अनुपर्यटन करता है।

२४. भंते ! माया के वश आर्त्त बना हुआ जीव क्या बंध करता है ? क्या प्रकर्ष करता है ? किसका चय करता है ? किसका उपचय करता है ? इस प्रकार पूर्ववत् यावत् चतुर्गत्यात्मक संसार-कान्तार में अनुपर्यटन करता है।

२५. भंते ! लोभ के वश आर्त्त बना हुआ जीव क्या बंध करता है ? क्या प्रकर्ष करता है ? किसका चय करता है ? किसका उपचय करता है ? इस प्रकार पूर्ववत यावत् चतुर्गत्यात्मक संसार-कान्तार में अनुपर्यटन करता है।

२६. वे श्रमणोपासक भगवान महावीर के पास इस अर्थ को सुनकर, अवधारण कर भीत, त्रस,

दुःखित और संसार-भय से उद्विग्न हो गए, उन्होंने श्रमण भगवान महावीर को वंदन-नमस्कार किया, वंदन-नमस्कार कर जहां श्रमणोपासक शंख था, वहां आए, वहां आकर श्रमणोपासक शंख को वंदन-नमस्कार किया, वंदन-नमस्कार कर इस अर्थ के लिए सम्यक् विनयपूर्वक बार-बार क्षमायाचना की। उस समय उन श्रमणोपासकों ने प्रश्न पूछे। प्रश्न पूछकर अर्थ को हृदय में धारण किया। हृदय में धारण कर श्रमण भगवान महावीर को वंदन--नमस्कार किया वंदन-नमस्कार कर जिस दिशा से आए थे, उसी दिशा में लौट गए।

२७. भगवान गौतम ने श्रमण भगवान महावीर को 'भंते' ऐसा कहकर वंदन-नमस्कार किया, वंदन-नमस्कार कर इस प्रकार कहा—भंते ! क्या श्रमणोपासक शंख देवानुप्रिय के पास मुंड होकर अगार से अनगारता में प्रव्रजित होने में समर्थ है ?

यह अर्थ संगत नहीं है। गौतम ! श्रमणोपासक शंख बहुत शीलव्रत, गुण, विरमण, प्रत्याख्यान और पौषधोपवास के द्वारा यथा-परिगृहीत तपःकर्म के द्वारा आत्मा को भावित करते हुए बहुत वर्ष तक श्रमणोपासक-पर्याय का पालन करेगा। पालन कर एक महीने की संलेखना के द्वारा अपने शरीर को कृश बनाएगा, कृश बनाकर साठ-भक्त का छेदन करेगा कर, आलोचना और प्रतिक्रमण कर, समाधिपूर्ण दशा में कालमास में काल को प्राप्त कर सौधर्म कल्प में अरुणाभ विमान में देवरूप में उपपन्न होगा। वहां कुछ देवों की स्थिति चार पल्योपम प्रज्ञप्त है। वहां शंख देव की स्थिति भी चार पल्योपम होगी।

२८. भंते ! वह शंख देव उस देवलोक से आयु-क्षय, भव-क्षय और स्थिति-क्षय के अनंतर उस देवलोक से च्यवन कर कहां जाएगा ? कहां उपपन्न होगा ?

गौतम! वह महाविदेह क्षेत्र में सिद्ध, प्रशांत, मुक्त और परिनिर्वृत होगा, सब दुःखों का अन्त करेगा।

२९. भंते ! वह ऐसा ही है। भंते ! वह ऐसा ही है। ऐसा कह कर यावत् भगवान गौतम संयम और तप से अपने आपको भावित करते हुए विहार करने लगे।

दूसरा उद्देशक

उदयन-आदि का धर्म-श्रवण-पद

३०. उस काल और उस समय में कौशाम्बी नाम की नगरी थी—वर्णक। चंद्रावतरण चैत्य—वर्णक। उस कौशाम्बी नगरी में सहस्रानीक राजा का पौत्र, शतानीक राजा का पुत्र, चेटक राजा का दौहित्र, मृगावती देवी का आत्मज, श्रमणोपासिका जयन्ती का भतीजा उदयन नामक राजा था—वर्णक। उस कौशाम्बी नगरी में सहस्रानीक राजा की पुत्रबधू, शतानीक राजा की भार्या, चेटक राजा की पुत्री, उदयन राजा की माता, श्रमणोपासिका जयन्ती की भाभी श्रमणोपासिका मृगावती नामक देवी थी—सकुमाल हाथ-पैर वाली, यावत् सुरूपा, जीव-अजीव को जानने वाली, यावत् यथा-परिगृहीत तपःकर्म के द्वारा आत्मा को *भावित करती हुई विहार कर रही थी। उस कौशाम्बी नगरी में सहस्रानीक राजा की पुत्री, शतानीक राजा की बहन, उदयन राजा की भुआ, मृगावती देवी की ननद, वशालिक*

श्रावकों, अर्हतों की पूर्व शय्यातर रहने वाली जयंती नामक श्रमणोपासिका थी—सुकुमाल हाथ पैर वाली यावत् सुरूपा, जीव-अजीव को जानने वाली यावत् यथा-परिगृहीत तपःकर्म के द्वारा अपने आप को भावित करती हुई रह रही थी।

३१. उस काल उस समय में भगवान महावीर आए यावत् परिषद पर्युपासना करने लगी।

३२. इस कथा को सुनकर राजा उदयन हृष्ट-तुष्ट हो गया। उसने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया, बुलाकर इस प्रकार कहा—देवानुप्रियो ! शीघ्र ही कौशांबी नगरी के भीतरी और बाहरी क्षेत्र को सुगंधित जल से सींचो, झाड़-बुहारकर गोबर का लेप करो, लेप कर मेरी आज्ञा मुझे प्रत्यर्पित करो। इस प्रकार जैसे कौणिक राजा की वक्तव्यता (**उववाई,** सू. ५६–६९) वैसे ही सम्पूर्ण वर्णन यावत् परिषद पर्युपासना करने लगी।

३३. वह श्रमणोपासिका जयन्ती इस कथा को सुनकर हृष्ट-तुष्ट हो गयी। वह जहां मृगावती देवी थी, वहां आई, वहां आकर मृगावती देवी से इस प्रकार बोली—देवानुप्रिये ! श्रमण भगवान् महावीर तीर्थंकर आदिकर यावत् सर्वज्ञ, सर्वदर्शी आकाशगत धर्मचक्र से शोभित यावत् सुखपूर्वक चंद्रवतरण चैत्य में प्रवास-योग्य स्थान की अनुमति लेकर संयम और तप से अपने आपको भावित करते हुए रह रहे हैं। देवानुप्रिय ! ऐसे अर्हत् भगवानों के नाम-गोत्र का श्रवण भी महान फलदायक है यावत् यह मेरे इहभव और परभव के लिए हित, शुभ, क्षय, निःश्रेयस और अनुगामिकता के लिए होगा।

३४. श्रमणोपासिका जयन्ती के इस प्रकार कहने पर वह मृगावती देवी हृष्ट-तुष्ट चित्तवाली, आनंदित, नंदित, प्रीतिपूर्ण मनवाली परम-सौमनस्य-युक्त, और हर्ष से विकस्वर हृदय वाली हो गयी। दोनों हथेलियों से निष्पन्न संपुट आकारवाली दसनखात्मक अंजलि को सिर के सम्मुख घुमाकर मस्तक पर टिकाकर श्रमणोपासिका जयंती के इस अर्थ को विनयपूर्वक स्वीकार किया।

३५. मृगावती देवी ने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया, बुलाकर इस प्रकार—देवानुप्रियो ! शीघ्र गति क्रिया की दक्षता से युक्त यावत् धार्मिक यानप्रवर को तैयर कर शीघ्र उपस्थित करो। उपस्थित कर मेरी इस आज्ञा को मुझे प्रत्यर्पित करो।

३६. मृगावती देवी के इस प्रकार कहने पर उन कौटुम्बिक पुरुषों ने धार्मिक यान-प्रवर को शीघ्र उपस्थित कर उस आज्ञा को प्रत्यर्पित किया।

३७. मृगावती देवी ने श्रमणोपासिका जयन्ती के साथ स्नान किया, बलि-कर्म किया यावत् अल्पभर बहुमूल्य वाले आभूषणों से शरीर को अलंकृत किया। बहुत कुब्जा यावत् चेटिका--समूह, वर्षधर (कृत-नपुंसक पुरुष), स्थविर, कंचुकी-जनों और महत्तरक-गण के वृंद से घिरी हुई अंतःपुर से निकली। निकल कर जहां बाहरी उपस्थान शाला, जहां धार्मिक यानप्रवर है, वहां आई। वहां आकर धार्मिक यानप्रवर पर आरूढ़ हो गई।

३८. वह मृगावती देवी श्रमणोपासिका जयन्ती के साथ धार्मिक यानप्रवर पर आरूढ़ होकर अपने परिवार से परिवृत होकर ऋषभदत्त की भांति वक्तव्यता (**भ.९/१४५**) यावत् धार्मिक यानप्रवर से नीचे उतरी।

३९. वह मृगावती देवी श्रमणोपासिका जयन्ती के साथ बहुत कुब्जा, जैसे—देवानंदा की वक्तव्यता यावत् श्रमण भगवान महावीर को वंदन-नमस्कार कर राजा उदयन को आगे कर स्थित हो, परिवार-सहित शुश्रुषा और नमस्कार करती हुई सम्मुख रहकर विनयपूर्वक बद्धांजलि पर्युपासना करने लगी।

४०. श्रमण भगवान महावीर ने राजा उदयन मृगावती देवी और श्रमणोपासिका जयन्ती को इस विशालतम परिषद में यावत् धर्म कहा यावत् परिषद लौट गई, उदयन और मृगावती भी लौट गई।

जयन्ती-प्रश्न-पद

४१. वह श्रमणोपासिका जयंती श्रमण भगवान् महावीर के पास धर्म को सुनकर, अवधारण कर हृष्ट-तुष्ट हो गई। उसने श्रमण भगवान महावीर को वंदन- नमस्कार किया, वंदन-नमस्कार कर इस प्रकार कहा—भंते ! जीव गुरुता को कैसे प्राप्त होते हैं ? भारी कैसे बनते हैं ?

जयन्ती! प्राणातिपात, मृषावाद, अदत्तादान, मैथुन, परिग्रह, क्रोध, मान, माया, लोभ, प्रेय, द्वेष, कलह, अभ्याख्यान, पैशुन्य, परपरिवाद, अरतिरति, मायामृषा और मिथ्यादर्शन-शल्य के द्वारा जीव गुरुता को प्राप्त होते हैं, भारी बनते हैं।

४२. भंते ! जीव लघुता को कैसे प्राप्त होते हैं ? हल्का कैसे बनते हैं ?

जयंती ! प्राणातिपात-विरमण, मृषावाद-विरमण, अदत्तादान-विरमण, मैथुन-विरमण, परिग्रह-विरमण, क्रोध, मान, माया, लोभ, प्रेय, द्वेष, कलह, अभ्याख्यान, पैशुन्य, परपरिवाद, अरतिरति, मायामृषा और मिथ्यादर्शन-शल्य के विरमण के द्वारा जीव लघुता को प्राप्त होते हैं, हल्का बनते हैं।

४३. भंते ! जीव संसार को अपरिमित कैसे करते हैं ?

जयंती ! प्राणातिपात यावत् मिथ्यादर्शन-शल्य के द्वारा जीव संसार को अपरिमित करते हैं।

४४. भंते ! जीव संसार को परिमित कैसे करते हैं?

जयंती! प्राणातिपात-विरमण यावत् मिथ्यादर्शन-शल्य-विरमण से जीव संसार को परिमित करते हैं।

४५. भंते ! जीव संसार को दीर्घकालिक कैसे करते हैं ?

जयंती ! प्राणातिपात यावत् मिथ्यादर्शन-शल्य के द्वारा जीव संसार को दीर्घकालिक करते हैं।

४६. भंते ! जीव संसार को अल्पकालिक कैसे करते है ?

जयंती ! प्राणातिपात-विरमण यावत् मिथ्यादर्शन-शल्य-विरमण के द्वारा जीव संसार को अल्पकालिक करते हैं।

४७. भंते ! जीव संसार में अनुपरिवर्तन कैसे करते हैं ?

जयन्ती! प्राणातिपात यावत् मिथ्यादर्शन-शल्य के द्वारा जीव संसार में अनुपरिवर्तन करते हैं।

४८. भंते ! जीव संसार को व्यतिक्रमण कैसे करते हैं ?

जयंती ! प्राणातिपात-विरमण यावत् मिथ्यादर्शन-शल्य के विरमण से जीव संसार का *व्यतिक्रमण करते हैं।*

४९. भंते ! क्या जीव भवसिद्धिक स्वभाव से होते हैं ? परिणाम से होते हैं ?

जयंती ! जीव भवसिद्धिक स्वभाव से होते हैं, परिणाम से नहीं होते।

५०. भंते ! क्या सब भवसिद्धिक जीव सिद्ध होंगे ?

हा, जयंति ! सब भवसिद्धिक जीव सिद्ध होंगे।

५१. भंते ! यदि सब भवसिद्धिक जीव सिद्ध हो जाएंगे क्या यह लोक भवसिद्धिक जीवों से रहित नहीं हो जायेगा?

यह अर्थ संगत नहीं है।

५२. भंते ! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—सब भवसिद्धिक-जीव सिद्ध हो जायेंगे तो यह लोक भवसिद्धिक-जीवों से रहित नहीं होगा?

जयंती ! जैसे कोई सर्व-आकाश श्रेणी है—अनादि, अंतहीन, परिमित, और अन्य श्रेणियों से परिवृत। उस श्रेणी से एक परमाणु-पुद्गल जितना खण्ड प्रति समय अपहृत करें तो भी अनंत उत्सर्पिणी और अवसर्पिणी काल में उनका अपहार नहीं होता। जयंती! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—सब भवसिद्धिक-जीव सिद्ध हो जायेंगे फिर भी यह लोक भवसिद्धिक--जीवों से विरहित नहीं होगा।

५३. भंते ! जीवों को सुप्त रहना अच्छा है ?

जयंती ! कुछ जीवों का सुप्त रहना अच्छा है। कुछ जीवों का जागृत रहना अच्छा है।

५४. भंते ! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है— कुछ जीवों का सुप्त रहना अच्छा है, कुछ जीवों का जागृत रहना अच्छा है ?

जयंती ! जो ये जीव अधार्मिक, (अधर्म का अनुगमन करने वाले) अधर्मिष्ठ, अधर्मवादी, अधर्म को देखने वाले, अधर्म में अनुरक्त, अधर्म का आचरण करने वाले, अधर्म के द्वारा आजीविका करने वाले हैं, उन जीवों का सुप्त रहना अच्छा है। उन जीवों के सुप्त रहने से वे अनेक प्राण, भूत, जीव और सत्त्वों को दुःखी करने के लिए, शोकाकुल करने के लिए, खिन्न करने के लिए, रुलाने के लिए, पीटने के लिए, परितप्त करने के लिए, प्रवृत्त नहीं होते। उन जीवों के सुप्त रहने से वे स्वयं को, अथवा दूसरे को अथवा स्व-पर-दोनों को अनेक अधार्मिक संयोजनाओं में संयोजित नहीं करते। अतः उन जीवों का सुप्त रहना अच्छा है।

जयंती ! जो ये जीव धार्मिक, धर्मानुग, धर्मिष्ठ, धर्म का आख्यान करने वाले, धर्म का प्रलोकन करने वाले, धर्म से रंजित, धर्म का आचरण करने वाले और धर्म के द्वारा ही आजीविका चलाते हुए विहरण करते हैं, उन जीवों का जाग्रत रहना अच्छा है। उन जीवों के जाग्रत रहने से वे अनेक प्राण, भूत, जीव और सत्त्वों को दुःखी न करने के लिए, शोकाकुल न करने के लिए, खिन्न न करने के लिए, न रुलाने के लिए, न पीटने के लिए और न परितप्त करने के लिए प्रवृत्त होते हैं। उन जीवों के जाग्रत रहने से वे स्वयं को, दूसरे को, दोनों को अनेक धार्मिक संयोजनाओं में संयोजित करते हैं। वे जीवों के जागृत होने पर धर्म-जागरिका के द्वारा अपनी आत्मा को जाग्रत करते हैं। इसलिए उन जीवों का जाग्रत रहना अच्छा है। जयंती। इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—कुछ जीवों का सुप्त रहना अच्छा है, कुछ जीवों का जागृत रहना अच्छा है।

५५.भंते ! जीवों का बलिष्ठ होना अच्छा है ? दुर्बल होना अच्छा है ?

जयंती ! कुछ जीवों का बलिष्ठ होना अच्छा है, कुछ जीवों का दुर्बल होना अच्छा है।

५६.भंते ! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है– कुछ जीवों का बलिष्ठ होना अच्छा है, कुछ जीवों का दुर्बल होना अच्छा है ?

जयंती ! जो ये जीव अधार्मिक यावत् जो ये जीव अधर्म के द्वारा आजीविका चलाते हुए विहरण कर रहे हैं, उन जीवों का दुर्बल होना अच्छा हैं। उन जीवों के दुर्बल होने से वे अनेक प्राण, भूत, जीव और सत्त्वों को दुःखी करने के लिए यावत् परितप्त करने के लिए प्रवृत नहीं होते। उन जीवों के दुर्बल होने से स्वयं को, दूसरे को, दोनों को अनेक अधार्मिक संयोजनाओं में संयोजित नहीं करते, इसलिए उन जीवों का दुर्बल होना अच्छा है।

जयंती ! जो ये जीव धार्मिक यावत् धर्म के द्वारा आजीविका चलाते हुए विहरण करते हैं, उन जीवों का बलवान होना अच्छा हैं। वे जीव बलवान होने पर अनेक प्राण, भूत, जीव और सत्त्वों को दुःखी न करने के लिए यावत् परितप्त न करने के लिए प्रवृत होते हैं। वे जीव बलवान होने पर स्वयं को, दूसरों को, दोनों को अनेक धार्मिक संयोजनाओं में संयोजित करते हैं। इसलिए उन जीवों का बलवान होना अच्छा है। जयंती इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है–कुछ जीवों का बलवान होना अच्छा है। कुछ जीवों का दुर्बल होना अच्छा है।

५७. भंते ! जीवों का दक्षत्व अच्छा है ? आलस्य अच्छा है ?

जयंती ! कुछ जीवों का दक्षत्व अच्छा है, कुछ जीवों का आलस्य अच्छा है।

५८. भंते ! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है–कुछ जीवों का दक्षत्व अच्छा है, कुछ जीवों का आलस्य अच्छा है?

जयंती ! जो ये जीव, अधार्मिक यावत् अधर्म के द्वारा आजीविका चलाते हुए विहरण करते हैं, उन जीवों का आलस्य अच्छा है। वे जीव आलसी होने पर अनेक प्राण, भूत, जीव और सत्त्वों को दुःखी करने के लिए यावत् परितप्त करने के लिए प्रवृत्त नहीं होते। वे जीव आलसी होने पर स्वयं को, दूसरों को, दोनों को अनेक अधार्मिक संयोजनाओं में संयोजित नहीं करते। इसलिए उन जीवों का आलस्य अच्छा है।

जयंती ! जो ये जीव धार्मिक यावत् धर्म के द्वारा आजीविका चलाते हुए विहरण करते हैं। उन जीवों का दक्षत्व अच्छा है। वे जीव दक्षता के कारण अनेक प्राण, भूत, जीव और सत्वों को दुःखी ने करने के लिए यावत् परितप्त न करने के लिए प्रवृत्त होते हैं। वे जीव दक्षता के कारण स्वयं को, दूसरे को, दोनों को अनेक धार्मिक संयोजनाओं में संयोजित करते हैं। वे जीव दक्षता के कारण अनेक आचार्यों के वैयावृत्य, उपाध्यायों के वैयावृत्य, स्थविरों के वैयावृत्य, तपस्वियों के वैयावृत्य, ग्लानों के वैयावृत्य, शैक्षों के वैयावृत्य, कुलों के वैयावृत्य, गणों के वैयावृत्य, संघों के वैयावृत्य और साधर्मिकों के वैयावृत्य द्वारा अपने आप को संयोजित करते हैं, इसलिए उन जीवों का दक्षत्व अच्छा है। जयंती ! यह इस अपेक्षा से कहा जा रहा है–कुछ जीवों का दक्षत्व अच्छा है, कुछ जीवों का आलस्य अच्छा है।

५९. भंते ! श्रोतेन्द्रिय के वश आर्त्त बना हुआ जीव क्या कर्म-बंध करता है ? क्या प्रकर्ष

करता है? किसका चय करता है? किसका उपचय करता है ?

जयंती ! श्रोत्रेन्द्रिय के वश आर्त्त बना हुआ जीव आयुष्य-कर्म को छोड़ कर शेष सात कर्मों की शिथिल-बंधन-बद्ध प्रकृतियों को गाढ-बन्धन-बद्ध करता है, अल्पकालिक स्थिति वाली प्रकृतियों को दीर्घकालिक स्थिति वाली करता है, मन्द-अनुभाव वाली प्रकृतियों को तीव्र- -अनुभाव वाली करता है, अल्पप्रदेश-परिमाण वाली प्रकृतियों को बहुप्रदेश-परिमाण वाली करता है, आयुष्य-कर्म का बंध कदाचित् करता है और कदाचित् नहीं करता, वह असातवेदनीय-कर्म का बहुत-बहुत उपचय करता है और आदि-अन्त-हीन दीर्घपथवाले चतुर्गत्यात्मक संसार-कान्तार में अनुपर्यटन करता है।

६०. भंते ! चक्षुरिन्द्रिय के वश आर्त्त बना हुआ जीव कर्म का बंध करता है ? क्या प्रकर्ष करता है? किसका चय करता है? किसका उपचय करता है? इस प्रकार पूर्ववत् यावत् चतुर्गत्यात्मक संसार-कान्तार में अनुपर्यटन करता है।

६१. भंते ! घ्राणेन्द्रिय के वश आर्त्त बना हुआ जीव क्या कर्म का बंध करता है ? क्या प्रकर्ष करता है ? किसका चय करता है ? किसका उपचय करता है ? इस प्रकार पूर्ववत् यावत् चतुर्गत्यात्मक संसार-कान्तार में अनुपर्यटन करता है।

६२. भंते ! रसेन्द्रिय के वश आर्त्त बना हुआ जीव क्या कर्म का बंध करता है ? क्या प्रकर्ष करता है ? किसका चय करता है ? किसका उपचय करता है ? इस प्रकार पूर्ववत् यावत् चतुर्गत्यात्मक संसार-कान्तार में अनुपर्यटन करता है।

६३. भंते ! स्पर्शेन्द्रिय के वश आर्त्त बना हुआ जीव क्या कर्म का बंध करता है ? क्या प्रकर्ष करता है ? किसका चय करता है ? किसका उपचय करता है ? इस प्रकार पूर्ववत् यावत् चतुर्गत्यात्मक संसार-कान्तार में अनुपर्यटन करता है।

६४. वह श्रमणोपासिका जयंती श्रमण भगवान महावीर से इस अर्थ को सुनकर, अवधारण कर हृष्ट-तुष्ट हो गई (भ.१/१५२-१५५) की वक्तव्यता, वैसे ही प्रवर्जित हो गई यावत् सब दुःखों को क्षीण कर दिया।

६५. भंते ! वह ऐसा ही है। भते ! वह ऐसा ही है।

तीसरा उद्देशक

पृथ्वी-पद

६६. राजगृह नाम का नगर था, यावत् गौतम स्वामी पर्युपासना करते हुए इस प्रकार बोले–भंते ! पृथ्वियां कितने प्रकार की प्रज्ञप्त हैं ?

गौतम ! पृथ्वियां सात प्रकार की प्रज्ञप्त हैं, जैसे–प्रथम, द्वितीय यावत् सातवीं।

६७. भंते ! प्रथम पृथ्वी का गोत्र क्या प्रज्ञप्त है ?

गौतम ! घम्मा नामक प्रथम पृथ्वी का गोत्र रत्नप्रभा है, इस प्रकार जैसे **जीवाजीवाभिगम** (३) के प्रथम नैरयिक उद्देशक है, वह निरवशेष वक्तव्य है यावत् अल्पबहुत्व।

६८. भंते ! वह ऐसा ही है। भंते ! वह ऐसा ही है।

चौथा उद्देशक

परमाणु-पुद्गलों का संघात-भेद-पद

६९. राजगृह नाम का नगर यावत् गौतम स्वामी पर्युपासना करते हुए इस प्रकार बोले—भंते ! दो परमाणु-पुद्गल एकत्र संहत होते हैं, उस संहति से क्या निष्पन्न होता है ?

गौतम! द्वि-प्रदेशी स्कन्ध निष्पन्न होता है। उसके दो भागो में विभक्त होने पर दो स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल हो जाते हैं।

७०. भंते ! तीन परमाणु-पुद्गल एकत्र संहत होते हैं, उस संहति से क्या निष्पन्न होता है ?

गौतम ! तीन-प्रदेशी स्कन्ध निष्पन्न होता है। वह टूटने पर दो या तीन भागों में विभक्त होता है—

दो भागों में विभक्त होने पर एक ओर एक परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर द्वि-प्रदेशी स्कन्ध होता है।

तीन भागों में विभक्त होने पर तीन स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल हो जाते हैं।

७१. भंते! चार परमाणु-पुद्गल एकत्र संहत होते हैं उस संहति से क्या निष्पन्न होता है ?

गौतम ! चार-प्रदेशी स्कन्ध निष्पन्न होता है। वह टूटने पर दो, तीन अथवा चार भागों में विभक्त होता है।

दो भागों में विभक्त होने पर एक ओर एक परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर तीन-प्रदेशी स्कन्ध होता है अथवा दो द्विप्रदेशी स्कन्ध होते हैं।

तीन भागों में विभक्त होने पर—एक ओर स्वतंत्र दो परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर द्वि-प्रदेशी स्कन्ध होता है।

चार भागों में विभक्त होने पर—चार स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल हो जाते हैं।

७२. भंते ! पांच परमाणु-पुद्गल एकत्र संहत होते हैं, उस संहति से क्या निष्पन्न होता है?

गौतम ! पांच-प्रदेशी स्कन्ध निष्पन्न होता है। वह टूटने पर दो, तीन, चार अथवा पांच भागों में विभक्त होता है—

दो भागों में विभक्त होने पर—एक ओर एक परमाणु-पुद्गल दूसरी ओर चतुष्प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर द्वि-प्रदेशी स्कंध, दूसरी ओर त्रि-प्रदेशी स्कंध होता है।

तीन भागों में विभक्त होने पर—एक ओर दो स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल दूसरी ओर त्रि-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर एक स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर दो द्वि-प्रदेशी स्कंध होते हैं।

चार भागों में विभक्त होने पर—एक ओर तीन स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर द्वि--प्रदेशी स्कंध होता है।

पांच भागों में विभक्त होने पर पांच स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल हो जाते हैं।

७३. *भंते ! छह परमाणु-पुद्गल एकत्र संहत होते हैं, उस संहति से क्या निष्पन्न होता है?*

गौतम ! छह-प्रदेशी स्कन्ध निष्पन्न होता है। वह टूटने पर दो अथवा तीन यावत् छः भागों में विभक्त होता है—

दो भागों में विभक्त होने पर—एक ओर एक स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर पांच-प्रदेशी स्कन्ध होता है अथवा एक ओर द्वि-प्रदेशी स्कन्ध, दूसरी ओर चार-प्रदेशी स्कन्ध होता है अथवा दो तीन-तीनप्रदेशी स्कन्ध होते हैं।

तीन भागों में विभक्त होने पर—एक ओर दो स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर चतुष्प्रदेशी स्कन्ध होता है अथवा एक ओर एक स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर द्वि-प्रदेशी स्कन्ध, तीसरी ओर तीन-प्रदेशी स्कन्ध होता है अथवा तीन द्वि-प्रदेशी स्कन्ध होते हैं।

चार भागों में विभक्त होने पर—एक ओर तीन स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर त्रि-प्रदेशी स्कन्ध होता है अथवा एक ओर दो स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर दो द्वि-प्रदेशी स्कन्ध होते हैं।

पांच भागों में विभक्त होने पर—एक ओर चार स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर एक द्वि-प्रदेशी स्कन्ध होता है।

छह भागों में विभक्त होने पर—छह स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल हो जाते हैं।

७४. भंते! सात परमाणु-पुद्गल एकत्र संहत होते हैं, उस संहति से क्या निष्पन्न होता है।

गौतम! सप्त-प्रदेशी स्कंध निष्पन्न होता है। वह टूटने पर दो अथवा यावत् सप्त भागों में विभक्त होता है।

दो भागों में विभक्त होने पर—एक ओर एक स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर छह-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर द्विप्रदेशी स्कंध, दूसरी ओर पांच-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर त्रि-प्रदेशी स्कंध, दूसरी ओर चतुष्प्रदेशी स्कंध होता है।

तीन भागों में विभक्त होने पर—एक ओर दो स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल दूसरी ओर पांचप्रदेशी स्कंध होता है, अथवा एक ओर एक स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर द्वि-प्रदेशी स्कंध, तीसरी ओर चतुष्प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर एक स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर दो त्रि-प्रदेशी स्कंध होते हैं अथवा एक ओर दो द्वि-प्रदेशी स्कंध, दूसरी ओर त्रि-प्रदेशी स्कंध होता है।

चार भागों में विभक्त होने पर—एक ओर तीन स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर चार-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर दो स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर द्वि-प्रदेशी स्कंध, तीसरी ओर त्रि-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर एक स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर तीन द्वि-प्रदेशी स्कन्ध होते हैं।

पांच भागों में विभक्त होने पर—एक ओर चार स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर त्रि-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर तीन स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर दो द्वि-प्रदेशी स्कंध होते हैं।

छह भागों में विभक्त होने पर—एक ओर पांच स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर द्वि-प्रदेशी स्कंध होता है।

सात भागों में विभक्त होने पर सात स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल हो जाते हैं।

७५. भंते ! आठ परमाणु-पुद्गल एकत्र संहत होते हैं, उस संहति से क्या निष्पन्न होता है?

गौतम ! अष्ट-प्रदेशी स्कन्ध निष्पन्न होता है। वह टूटने पर दो अथवा यावत् आठ भागों में विभक्त होता है–

दो भागों में विभक्त होने पर–एक ओर एक स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर सात-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर द्वि-प्रदेशी स्कंध, दूसरी ओर छह- प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर तीन-प्रदेशी स्कंध, दूसरी ओर पांच-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा दो चतुष्प्रदेशी स्कंध होते हैं।

तीन भागों में विभक्त होने पर–एक ओर दो स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर छह-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर एक स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर द्वि-प्रदेशी स्कन्ध, तीसरी ओर पांच-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर एक स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर त्रिप्रदेशी स्कन्ध, तीसरी ओर चतुष्प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर दो द्वि-प्रदेशी स्कन्ध, दूसरी ओर चतुष्प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर द्वि-प्रदेशी स्कंध, दूसरी ओर दो त्रि-प्रदेशी स्कंध होते हैं।

चार भागों में विभक्त होने पर–एक ओर तीन स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर पांच-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर दो स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर द्वि-प्रदेशी स्कंध, तीसरी ओर चतुष्प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर दो स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर दो त्रि-प्रदेशी स्कंध होते हैं अथवा एक ओर एक स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर दो द्वि--प्रदेशी स्कंध, तीसरी ओर त्रिप्रदेशी स्कंध होता है अथवा चार द्वि-प्रदेशी स्कंध होते हैं।

पांच भागों में विभक्त होने पर–एक ओर चार स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर चतुष्प्रदेशी स्कन्ध होता है अथवा एक ओर तीन स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर द्वि-प्रदेशी स्कंध, तीसरी ओर त्रि-प्रदेशी स्कन्ध होता है अथवा एक ओर दो स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर तीन द्वि-प्रदेशी स्कंध होते हैं।

छह भागों में विभक्त होने पर–एक ओर पांच स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर त्रि-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर चार स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर दो द्वि-प्रदेशी स्कन्ध होते हैं।

सात भागों में विभक्त होने पर–एक ओर छह परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर द्वि-प्रदेशी स्कंध होता है।

आठ भागों में विभक्त होने पर आठ स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल हो जाते हैं।

७६. भंते ! नौ परमाणु-पुद्गल एकत्र संहत होते हैं, उस संहति से क्या निष्पन्न होता है ?

गौतम ! नौ-प्रदेशी स्कंध निष्पन्न होता है। वह टूटने पर दो यावत् नौ भागों में विभक्त होता है–

दो भागों में विभक्त होने पर–एक ओर एक स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर आठ-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर द्वि-प्रदेशी स्कंध, दूसरी ओर सात-प्रदेशी स्कंध होता है

अथवा एक ओर त्रि-प्रदेशी स्कंध, दूसरी ओर छह-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर चतुष्प्रदेशी स्कंध, दूसरी ओर पांच-प्रदेशी स्कन्ध होता है।

तीन भागों में विभक्त होने पर—एक ओर दो स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर सात-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर एक स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर द्वि-प्रदेशी स्कंध, तीसरी ओर छह-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर एक स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर त्रि-प्रदेशी स्कंध, तीसरी ओर पांच-प्रदेशी स्कंध होता है, अथवा एक ओर एक स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर दो चतुष्प्रदेशी स्कंध होते हैं, अथवा एक ओर द्वि-प्रदेशी स्कंध, दूसरी ओर त्रि-प्रदेशी स्कंध, तीसरी ओर चतुष्प्रदेशी स्कंध होता है अथवा तीन त्रि-प्रदेशी स्कंध होते हैं।

चार भागों में विभक्त होने पर—एक ओर तीन स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर छह-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर दो स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर द्वि-प्रदेशी स्कंध, तीसरी ओर पांच-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर दो स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर त्रि-प्रदेशी स्कंध, तीसरी ओर चतुष्प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर एक स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर दो द्वि-प्रदेशी स्कंध, तीसरी ओर चतुष्प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर एक स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर द्वि-प्रदेशी स्कंध, तीसरी ओर दो त्रि-प्रदेशी स्कंध होते हैं अथवा एक ओर तीन द्वि-प्रदेशी स्कंध, दूसरी ओर तीन-प्रदेशी स्कंध होता है।

पांच भागों में विभक्त होने पर—एक ओर चार स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर पांच--प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर तीन स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर द्वि-प्रदेशी स्कंध, तीसरी ओर चतुष्प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर तीन स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर दो त्रि-प्रदेशी स्कंध होते हैं अथवा एक ओर दो स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर दो द्वि-प्रदेशी स्कंध, तीसरी ओर त्रि-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर एक स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर चार द्वि-प्रदेशी स्कंध होते हैं।

छह भागों में विभक्त होने पर—एक ओर पांच स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर चार-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर चार स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर द्वि-प्रदेशी स्कंध, तीसरी ओर त्रि-प्रदेशी स्कंध होता है, अथवा एक ओर तीन स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी *ओर तीन द्वि-प्रदेशी स्कंध होते हैं।*

सात भागों में विभक्त होने पर—एक ओर छह स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर त्रि-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर पांच स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर दो द्वि-प्रदेशी स्कंध होते हैं।

आठ भागों में विभक्त होने पर—एक ओर सात स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर द्वि--प्रदेशी स्कंध होता है।

नौ भागों विभक्त होने पर—नौ स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल हो जाते हैं ।

७७. भंते ! दस परमाणु-पुद्गल एकत्र संहत हाते हैं, उस संहति से क्या निष्पन्न होता है?

गौतम ! दस-प्रदेशी-स्कंध निष्पन्न होता है। वह टूटने पर दो यावत् दस भागों में विभक्त होता है।

दो भागों में विभक्त होने पर—एक ओर स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल दूसरी ओर नौ-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर द्वि-प्रदेशी स्कंध, दूसरी ओर अष्ट-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर त्रि-प्रदेशी स्कंध, दूसरी ओर सात-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर चतुष्प्रदेशी स्कंध, दूसरी ओर छह-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा दो पांच-प्रदेशी स्कंध होते हैं।

तीन भागों में विभक्त होने पर—एक ओर दो स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर अष्ट-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर एक स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर द्वि-प्रदेशी स्कंध, तीसरी ओर सप्त-प्रदेशी स्कन्ध होता है अथवा एक ओर स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर त्रि-प्रदेशी स्कंध, तीसरी ओर छह-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर एक स्वतंत्र परमाणु--पुद्गल, दूसरी ओर चतुष्प्रदेशी स्कंध, तीसरी ओर पंच-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर दो द्वि-प्रदेशी स्कंध, दूसरी ओर छह-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर द्वि-प्रदेशी स्कंध, दूसरी ओर त्रि-प्रदेशी स्कंध, तीसरी ओर पंच-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर द्वि-प्रदेशी स्कंध, दूसरी ओर दो चतुष्प्रदेशी स्कंध होते हैं अथवा एक ओर दो त्रि-प्रदेशी स्कंध, दूसरी ओर चतुष्प्रदेशी स्कंध होता है।

चार भागों में विभक्त होने पर—एक ओर तीन स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर सात-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर दो स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर द्वि-प्रदेशी स्कंध, तीसरी ओर छह-प्रदेशी स्कंध होता हैं अथवा एक ओर दो स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर एक त्रि-प्रदेशी स्कन्ध, तीसरी ओर एक पंच-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर दो स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर दो चतुष्प्रदेशी स्कंध होते हैं अथवा एक ओर एक स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर द्वि-प्रदेशी स्कंध, तीसरी ओर त्रि-प्रदेशी स्कंध, चौथी ओर चतुष्प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर एक स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर तीन त्रि--प्रदेशी स्कंध होते हैं अथवा एक ओर तीन द्वि-प्रदेशी स्कंध, दूसरी ओर चतुष्प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर दो द्वि-प्रदेशी स्कंध, दूसरी ओर दो त्रि-प्रदेशी स्कंध होते हैं ।

पांच भागों में विभक्त होने पर—एक ओर चार स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर छह-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर तीन स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर द्वि-प्रदेशी स्कंध, तीसरी ओर पंच-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर तीन स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर एक त्रि-प्रदेशी स्कंध, तीसरी ओर चतुष्प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर दो स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर दो द्वि-प्रदेशी स्कंध, तीसरी ओर चतुष्प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर दो स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर द्वि-प्रदेशी स्कंध, तीसरी ओर दो त्रि-प्रदेशी स्कंध होते हैं अथवा एक ओर एक स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर तीन द्वि--प्रदेशी स्कंध, तीसरी ओर त्रि-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा पांच द्वि-प्रदेशी स्कंध होते हैं।

छह भागों में विभक्त होने पर—एक ओर पांच स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर पांच-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर चार स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर दो द्वि-प्रदेशी स्कंध, तीसरी ओर चतुष्प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर चार परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर दो

त्रि-प्रदेशी स्कंध होते हैं अथवा एक ओर तीन स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर दो द्वि-प्रदेशी स्कंध, तीसरी ओर त्रि-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर दो स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल दूसरी ओर चार द्वि-प्रदेशी स्कंध होते हैं।

सात भागों में विभक्त होने पर—एक ओर छह स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर चतुष्प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर पांच स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर एक द्वि-प्रदेशी स्कंध, तीसरी ओर एक त्रि-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर चार स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर तीन द्वि-प्रदेशी स्कंध होते हैं।

आठ भागों में विभक्त होने पर—एक ओर सात स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर त्रि-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर छह स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर दो द्वि-प्रदेशी स्कंध होते हैं।

नौ भागों में विभक्त होने पर—एक ओर आठ स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर द्वि-प्रदेशी स्कंध होता है।

दस भागों में विभक्त होने पर—दस स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल हो जाते हैं।

७८. भंते ! संख्येय परमाणु पुद्गल एकत्र संहत होते हैं, उस संहति से क्या निष्पन्न होता है?

गौतम ! संख्येय-प्रदेशी स्कंध निष्पन्न होता है। वह टूटने पर दो अथवा यावत् दस अथवा संख्येय भागों में विभक्त होता है।

दो भागों में विभक्त होने पर—एक ओर एक स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर संख्येय-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर द्वि-प्रदेशी स्कंध, दूसरी ओर संख्येय-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर त्रि-प्रदेशी स्कंध, दूसरी ओर संख्येय-प्रदेशी स्कंध होता है। इसी प्रकार यावत् अथवा एक ओर दस-प्रदेशी स्कंध, दूसरी ओर संख्येय-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा दो संख्येय-प्रदेशी स्कंध होते हैं।

तीन भागों में विभक्त होने पर—एक ओर दो स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर संख्येय-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर एक स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर द्वि-प्रदेशी स्कंध, तीसरी ओर संख्येय-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर एक स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर त्रि-प्रदेशी स्कंध, तीसरी ओर संख्येय-प्रदेशी स्कंध होता है। इसी प्रकार यावत् अथवा एक ओर एक स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर दस-प्रदेशी स्कंध, तीसरी ओर संख्येय-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर एक स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर दो संख्येय-प्रदेशी स्कंध होते हैं अथवा एक ओर द्वि-प्रदेशी स्कंध, दूसरी ओर दो संख्येय-प्रदेशी स्कंध होते हैं। इसी प्रकार यावत् अथवा एक ओर दस-प्रदेशी स्कंध, दूसरी ओर दो संख्येय-प्रदेशी स्कंध होते हैं अथवा तीन संख्येय-प्रदेशी स्कंध होते हैं।

चार भागों में विभक्त होने पर—एक ओर तीन स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर संख्येय-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर दो स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर द्वि-प्रदेशी स्कंध, तीसरी ओर संख्येय-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर दो स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर त्रि-प्रदेशी स्कंध, तीसरी ओर संख्येय-प्रदेशी स्कंध होता है। इसी प्रकार यावत्

अथवा एक ओर दो स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर दस-प्रदेशी स्कंध, तीसरी ओर संख्येय-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर दो स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर दो संख्येय-प्रदेशी स्कंध होते हैं अथवा एक ओर एक स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर द्वि--प्रदेशी स्कंध, तीसरी ओर दो संख्येय-प्रदेशी स्कंध होते हैं, यावत् अथवा एक ओर एक स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर दसप्रदेशी स्कंध, तीसरी ओर दो संख्येय-प्रदेशी स्कंध होते हैं अथवा एक ओर स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर कदाचित् तीन संख्येय-प्रदेशी स्कंध होते हैं अथवा एक ओर द्वि-प्रदेशी स्कंध, दूसरी ओर तीन संख्येय-प्रदेशी स्कंध होते हैं अथवा चार संख्येय-प्रदेशी स्कंध होते हैं।

इसी प्रकार इनके क्रमशः पांच संयोग भी वक्तव्य है यावत् नौ संयोग तक।

दस भागों में विभक्त होने पर—एक ओर नौ स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर संख्येय-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर आठ स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर द्वि-प्रदेशी स्कंध, तीसरी ओर संख्येय-प्रदेशी स्कंध होता है। इनको क्रमशः एक-एक पूर्ण करना चाहिए यावत् अथवा एक ओर दस-प्रदेशी स्कंध, दूसरी ओर नौ संख्येय-प्रदेशी स्कंध होते हैं अथवा दस संख्येय-प्रदेशी स्कंध होते हैं।

संख्येय भागों में विभक्त होने पर—संख्येय स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल होते हैं।

७९. भंते ! असंख्येय परमाणु-पुद्गल एकत्र संहत होते हैं उस संहति से क्या निष्पन्न होता है ?

गौतम! असंख्येय-प्रदेशी स्कंध निष्पन्न होता है। वह टूटने पर दो अथवा यावत् दस अथवा संख्येय अथवा असंख्येय भागों में विभक्त होता है।

दो भागों में विभक्त होने पर—एक ओर स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर असंख्येय-प्रदेशी स्कंध होता है यावत् अथवा एक ओर दस-प्रदेशी स्कंध, दूसरी ओर असंख्येय-प्रदेशी स्कन्ध होता है अथवा एक ओर संख्येय-प्रदेशी स्कंध, दूसरी ओर असंख्येय-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा दो असंख्येय-प्रदेशी स्कन्ध होते हैं।

तीन भागों में विभक्त होने पर—एक ओर दो स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर असंख्येय--प्रदेशी स्कन्ध होता है अथवा एक ओर एक स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर द्वि-प्रदेशी स्कंध, तीसरी ओर असंख्येय-प्रदेशी स्कंध होता है यावत् अथवा एक ओर एक स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर दस-प्रदेशी स्कंध, तीसरी ओर असंख्येय-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर एक स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर संख्येय-प्रदेशी स्कंध, तीसरी ओर असंख्येय-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर एक स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर दो असंख्येय-प्रदेशी स्कंध होते हैं अथवा एक ओर द्वि-प्रदेशी स्कन्ध, दूसरी ओर दो असंख्येय-प्रदेशी स्कंध होते हैं। इसी प्रकार यावत् अथवा एक ओर संख्येय-प्रदेशी स्कन्ध, दूसरी ओर दो असंख्येय-प्रदेशी स्कंध होते हैं अथवा तीन असंख्येय-प्रदेशी स्कंध होते हैं।

चार भागों में विभक्त होने पर—एक ओर तीन स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल दूसरी ओर असंख्येय--प्रदेशी स्कंध होता है।

इसी प्रकार चार संयोग यावत् दस संयोग। ये संख्येय-प्रदेशी की भांति वक्तव्य है, इतना विशेष है—असंख्येय में एक अधिक वक्तव्य है यावत् अथवा दस असंख्येय-प्रदेशी स्कंध होते हैं।

संख्येय भागों में विभक्त होने पर—एक ओर संख्येय स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर असंख्येय-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर संख्येय द्वि-प्रदेशी स्कंध, दूसरी ओर असंख्येय-प्रदेशी स्कंध होता है। इसी प्रकार यावत् अथवा एक ओर संख्येय दस-प्रदेशी स्कंध, दूसरी ओर असंख्येय-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर संख्येय संख्येय-प्रदेशी स्कंध, दूसरी ओर असंख्येय-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा संख्येय असंख्येय-प्रदेशी स्कंध होते हैं।

असंख्येय भागों में विभक्त होने पर—असंख्येय स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल होते हैं।

८०. भंते ! अनन्त परमाणु-पुद्गल एकत्र संहत होते हैं, उस संहति से क्या निष्पन्न होता है ?

गौतम ! अनन्त-प्रदेशी स्कंध निष्पन्न होता है। वह टूटने पर दो, तीन यावत् दस, संख्येय, असंख्येय और अनन्त भागों में विभक्त होता है—

दो भागों में विभक्त होने पर—एक ओर एक स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर अनन्त-प्रदेशी स्कंध होता है यावत् दो अनन्त-प्रदेशी स्कंध होते हैं ।

तीन भागों में विभक्त होने पर—एक ओर दो स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर अनन्त-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर एक स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर द्वि-प्रदेशी स्कंध, तीसरी ओर अनन्त-प्रदेशी स्कंध होता है यावत् अथवा एक ओर एक स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर असंख्येय प्रदेशी स्कंध, तीसरी ओर अनन्त-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर दो अनन्त-प्रदेशी स्कंध होते हैं अथवा एक ओर द्वि--प्रदेशी स्कंध, दूसरी ओर दो अनन्त-प्रदेशी स्कंध होते हैं। इसी प्रकार यावत् अथवा एक ओर दस-प्रदेशी स्कंध, दूसरी ओर दो अनन्त-प्रदेशी स्कंध होते हैं अथवा एक ओर संख्येय--प्रदेशी स्कंध, दूसरी ओर दो अनन्त-प्रदेशी स्कंध होते हैं अथवा एक ओर एक असंख्येय--प्रदेशी स्कंध, दूसरी ओर दो अनन्त-प्रदेशी स्कंध होते हैं अथवा तीन अनन्त-प्रदेशी स्कंध होते हैं।

चार भागों में विभक्त होने पर—एक ओर तीन स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर अनन्त--प्रदेशी स्कंध होता है।

इसी प्रकार चतुष्क संयोग यावत् असंख्येय संयोग। जैसे असंख्येय-प्रदेशी स्कंध की वक्तव्यता वैसे ही अनन्त-प्रदेशी स्कंध की वक्तव्यता, इतना विशेष है अनन्त में एक अधिक वक्तव्य है यावत् अथवा एक ओर संख्येय संख्येय-प्रदेशी स्कंध, दूसरी ओर अनन्त-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर संख्येय असंख्येय-प्रदेशी स्कंध, दूसरी ओर अनन्त-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा संख्येय अनन्त-प्रदेशी स्कंध होते हैं।

असंख्येय भागों में विभक्त होने पर—एक ओर असंख्येय स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल, दूसरी ओर अनन्त-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर असंख्येय द्वि-प्रदेशी स्कंध, दूसरी ओर अनन्त-प्रदेशी स्कंध होता है यावत् अथवा एक ओर असंख्येय संख्येय-प्रदेशी स्कंध, दूसरी ओर अनन्त-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा एक ओर असंख्येय असंख्येय-प्रदेशी स्कंध, दूसरी ओर अनन्त-प्रदेशी स्कंध होता है अथवा असंख्येय अनंत-प्रदेशी स्कंध होते हैं।

अनन्त भागों में विभक्त होने पर—अनन्त स्वतंत्र परमाणु-पुद्गल होते हैं।

पुद्गल-परिवर्त्त-पद

८१. भंते ! इन परमाणु-पुद्गलों के संघात और भेद के अनुपात से अनंत-अनंत पुद्गल--परिवर्त्त सम्यक् प्रकार से अनुगमनीय होते हैं। क्या ऐसा कहा गया है?

गौतम ! हां, इन परमाणु-पुद्गलों के संघात और भेद के अनुपात से अनंत-अनंत पुद्गल--परिवर्त्त सम्यक् प्रकार से अनुगमनीय (एक के बाद एक) होते हैं, ऐसा कहा गया है।

८२. भंते ! पुद्गल-परिवर्त्त कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम ! पुद्गल-परिवर्त्त सात प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—औदारिक-पुद्गल-परिवर्त्त, वैक्रिय--पुद्गल-परिवर्त्त, तैजस-पुद्गल-परिवर्त्त, कर्म-पुद्गल-परिवर्त्त, मनः-पुद्गल-परिवर्त्त, वचन-पुद्गल-परिवर्त्त और आनापान-पुद्गल-परिवर्त्त।

८३. भंते ! नैरयिकों के कितने प्रकार के पुद्गल-परिवर्त्त प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! नैरयिकों के सात प्रकार के पुद्गल-परिवर्त्त प्रज्ञप्त हैं, जैसे—औदारिक-पुद्गल--परिवर्त्त, वैक्रिय-पुद्गल-परिवर्त्त यावत् आनापान-पुद्गल-परिवर्त्त। इसी प्रकार यावत् वैमानिक देवों के।

८४. भंते ! प्रत्येक नैरयिक के अतीत में कितने औदारिक पुद्गल-परिवर्त्त हुए हैं ?

अनंत।

भविष्य में (पुरस्कृत) कितने होंगे?

किसी के होंगे, किसी के नहीं होंगे। जिसके होंगे, उसके जघन्यतः एक, दो अथवा तीन, उत्कृष्टतः संख्येय, असंख्येय अथवा अनंत।

८५. भंते ! प्रत्येक असुरकुमार के अतीत में कितने औदारिक-पुद्गल-परिवर्त्त हुए हैं?

अनंत।

भविष्य में कितने होंगे ?

किसी के होंगे, किसी के नहीं होंगे। जिसके होंगे, उसके जघन्यतः एक, दो अथवा तीन, उत्कृष्टतः संख्येय, असंख्येय अथवा अनंत।

इसी प्रकार यावत् वैमानिक के।

८६. भंते ! प्रत्येक नैरयिक के अतीत में कितने वैक्रिय-पुद्गल-परिवर्त्त हुए हैं?

अनंत।

इसी प्रकार जैसे औदारिक-पुद्गल-परिवर्त्त की वक्तव्यता वैसे ही वैक्रिय-पुद्गल-परिवर्त्त की वक्तव्यता। इसी प्रकार यावत् वैमानिक के। इसी प्रकार यावत् आनापान-पुद्गल-परिवर्त्त की वक्तव्यता। यह परिवर्त्त चौबीस दंडकों में ही होता है। इनके प्रत्येक जीव की अपेक्षा सात-सात दंडक होते हैं।

८७. भंते ! नैरयिकों के अतीत में कितने औदारिक-पुद्गल-परिवर्त्त हुए हैं? भविष्य में कितने होंगे?

अनंत। इसी प्रकार यावत् वैमानिकों में परिवर्त्त की वक्तव्यता। इसी प्रकार वैक्रिय--पुद्‌गल-परिवर्त्त की भी वक्तव्यता। इसी प्रकार यावत् आनापान-पुद्‌गल-परिवर्त्त की वैमानिकों में वक्तव्यता। यह परिवर्त्त पृथक्-पृथक् अनेक जीवों की अपेक्षा चौबीस दंडकों में ही होता है।

८८. भंते ! प्रत्येक नैरयिक के नैरयिक के रूप में अतीत में कितने औदारिक-पुद्‌गल-परिवर्त्त हुए हैं ?

एक भी नहीं।

भविष्य में कितने होंगे ?

एक भी नहीं।

८९. भंते ! एक-एक नैरयिक के असुरकुमार के रूप में अतीत में कितने औदारिक-पुद्‌गल--परिवर्त्त हुए हैं ?

पूर्ववत्। इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमार के रूप में।

९०. भंते ! एक-एक नैरयिक के पृथ्वीकायिक के रूप में अतीत में कितने औदारिक-पुद्‌गल--परिवर्त्त हुए हैं ?

अनंत।

भविष्य में कितने होंगे ?

किसी के होंगे, किसी के नहीं होंगे। जिसके होंगे, उसके जघन्यतः एक, दो अथवा तीन, उत्कृष्टतः संख्येय,असंख्येय अथवा अनंत। इसी प्रकार यावत् मनुष्य के रूप में। वाणमंतर, ज्योतिष्क, और वैमानिक के रूप में असुरकुमार की भांति वक्तव्यता।

९१. भंते ! प्रत्येक असुरकुमार के नैरयिक के रूप में अतीत में कितने औदारिक-पुद्‌गल--परिवर्त्त हुए हैं?

इसी प्रकार जैसे नैरयिक की वक्तव्यता, वैसे ही असुरकुमार की वक्तव्यता यावत् वैमानिक के रूप में। इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमार की वक्तव्यता। इसी प्रकार पृथ्वीकायिक की भी वक्तव्यता। इसी प्रकार यावत् वैमानिक की भी वक्तव्यता।

सबका एक ही गमक—समान वक्तव्यता है।

९२. भंते ! प्रत्येक नैरयिक के नैरयिक के रूप में अतीत में कितने वैक्रिय-पुद्‌गल-परिवर्त्त हुए हैं?

अनंत।

भविष्य में कितने होंगे ?

एकोत्तरिक—किसी के होंगे, किसी के नहीं होंगे। जिसके होंगे उसके जघन्यतः एक, दो अथवा तीन, उत्कृष्टतः संख्येय, असंख्येय अथवा अनंत। इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमार के रूप में।

१३. पृथ्वीकायिक के रूप में–पृच्छा।

एक भी नहीं।

भविष्य में कितने होंगे?

एक भी नहीं। इसी प्रकार जहां वैक्रिय-शरीर हैं, वहां एकोत्तरिक (सूत्र १२ की भांति), जहां वैक्रिय-शरीर नहीं है वहां पृथ्वीकायिकत्व की भांति वक्तव्य है यावत् वैमानिक का वैमानिक के रूप में। तैजस-पुद्गल-परिवर्त्त और कर्म-पुद्गल-परिवर्त्त सर्वत्र (नैरयिक से वैमानिक तक) एकोत्तरिक वक्तव्य हैं। मनःपुद्गल-परिवर्त्त समस्त पंचेन्द्रियों में एकोत्तरिक–किसी के होंगे, किसी के नहीं होंगे। जिसके होंगे, उसके जघन्यतः एक, दो अथवा तीन, उत्कृष्टतः संख्येय, असंख्येय अथवा अनंत। विकलेन्द्रियों में नहीं होंगे। इसी प्रकार वचन-पुद्गल-परिवर्त्त की वक्तव्यता, इतना विशेष है–एकेन्द्रियों में वक्तव्य नहीं है। आनापान-पुद्गल-परिवर्त्त सर्वत्र (नैरियक से वैमानिक तक चौबीस दंडकों में) एकोत्तरिक यावत् वैमानिक के वैमानिक रूप में।

१४. भंते ! नैरयिकों के नैरयिक के रूप में अतीत में कितने औदारिक-पुद्गल-परिवर्त्त हुए हैं?

एक भी नहीं।

भविष्य में कितने होंगे?

एक भी नहीं। इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमार के रूप में।

१५. पृथ्वीकायिक के रूप में–पृच्छा।

अनंत।

भविष्य में कितने होंगे ?

अनंत। इसी प्रकार यावत् मनुष्यत्व में। वाणमंतर, ज्योतिष्क और वैमानिक के रूप में नैरयिकत्व की भांति वक्तव्यता। इसी प्रकार यावत् वैमानिकों के वैमानिक के रूप में। इसी प्रकार सात पुद्गल-परिवर्त्त वक्तव्य हैं–जहां हैं, वहां अतीत और भविष्य में अनंत वक्तव्य हैं। जहां नहीं हैं, वहां अतीत और भविष्य दोनों में वक्तव्य नहीं हैं यावत्–

१६. वैमानिकों के वैमानिक के रूप में अतीत में कितने आनापान-पुद्गल-परिवर्त्त हुए हैं?

अनंत।

भविष्य में कितने होंगे ?

अनंत।

१७. भंते ! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है–औदारिक-पुद्गल-परिवर्त्त औदारिक-पुद्गल-परिवर्त्त है?

गौतम ! औदारिक-शरीर में वर्तन करते हुए जीव के द्वारा औदारिक-शरीर के प्रायोग्य द्रव्य औदारिक-शरीर के रूप में गृहीत, बद्ध, स्पृष्ट, कृत, प्रस्थापित, निविष्ट, अभिनिविष्ट (तीव्र अनुभाव के रूप में प्रस्थापित), अभिसमन्वागत (उदय के अभिमुख), पर्याप्त, परिणामित, निर्जीर्ण, निःसृत और निःसृष्ट होते हैं।

गौतम ! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—औदारिक-पुद्गल-परिवर्त्त औदारिक-पुद्गल-परिवर्त्त है। इसी प्रकार वैक्रिय-पुद्गल-परिवर्त्त भी वक्तव्य है, इतना विशेष है—वैक्रिय-शरीर में वर्तन करते हुए जीव के द्वारा वैक्रिय-शरीर के प्रायोग्य द्रव्यों का वैक्रिय-शरीर के रूप में ग्रहण, शेष पूर्ववत्, इसी प्रकार यावत् आनापान-पुद्गल-परिवर्त्त, इतना विशेष है—आनापान के प्रायोग्य समस्त द्रव्यों का आनापान के रूप में ग्रहण, शेष पूर्ववत्।

९८. भंते ! औदारिक-पुद्गल-परिवर्त्त कितने काल में निर्वर्तित होता है?

गौतम ! अनंत-अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी काल में निर्वर्तित—निष्पन्न होता है। इसी प्रकार वैक्रिय-पुद्गल-परिवर्त भी।

इसी प्रकार यावत् आनापान-पुद्गल-परिवर्त्त भी।

९९. भंते ! औदारिक-पुद्गल-परिवर्त्त-निर्वर्तना-काल, वैक्रिय-पुद्गल-परिवर्त्त-निर्वर्तना-काल यावत् आनापान-पुद्गल-परिवर्त्त-निर्वर्तना-काल में कौन किनसे अल्प, बहु, तुल्य अथवा विशेषाधिक है?

गौतम ! सबसे अल्प कर्म-पुद्गल-परिवर्त्त-निर्वर्तना-काल है, तैजस-पुद्गल-परिवर्त्त-निर्वर्तना-काल कर्म-पुद्गल-परिवर्त्त से अनंत-गुणा है, औदारिक-पुद्गल-परिवर्त्त-निर्वर्तना-काल तैजस-पुद्गल-परिवर्त्त से अनंत-गुणा है, आनापान-पुद्गल-परिवर्त्त-निर्वर्तना-काल औदारिक-पुद्गल-परिवर्त्त से अनंत-गुणा है, मनःपुद्गल-परिवर्त्त-निर्वर्तना-काल आनापान-पुद्गल-परिवर्त्त से अनंत-गुणा है, वचन-पुद्गल-परिवर्त्त-निर्वर्तना-काल मनःपुद्गल-परिवर्त्त से अनंत-गुणा है, वैक्रिय-पुद्गल-परिवर्त्त-निर्वर्तना-काल वचन-पुद्गल-परिवर्त्त से अनंत-गुण है।

१००. भंते ! औदारिक-पुद्गल-परिवर्त्त यावत् आनापान-पुद्गल-परिवर्त्त में कौन किनसे अल्प, बहु, तुल्य अथवा विशेषाधिक है ?

गौतम ! सबसे अल्प वैक्रिय-पुद्गल-परिवर्त्त है, वचन-पुद्गल-परिवर्त्त वैक्रिय-पुद्गल-परिवर्त्त से अनंत-गुणा है, मनः-पुद्गल-परिवर्त्त वचन-पुद्गल-परिवर्त्त से अनंत-गुणा है, आनापान-पुद्गल-परिवर्त्त मनः-पुद्गल-परिवर्त्त से अनंत-गुणा है, औदारिक-पुद्गल-परिवर्त्त आनापान-पुद्गल-परिवर्त्त से अनंत-गुणा है, तैजस-पुद्गल-परिवर्त्त औदारिक-पुद्गल-परिवर्त्त से अनंत-गुणा है और कर्म-पुद्गल-परिवर्त्त तैजस-पुद्गल-परिवर्त्त से अनंत-गुणा है।

१०१. भंते ! वह ऐसा ही है। भंते ! वह ऐसा ही है। इस प्रकार भगवान् यावत् विहरण करने लगे।

पांचवां उद्देशक

वर्णादि और अवर्णादि की अपेक्षा द्रव्य-विमर्श-पद

१०२. राजगृह नाम का नगर यावत् गौतम स्वामी पर्युपासना करते हुए इस प्रकार बोले—भंते ! प्राणातिपात, मृषावाद, अदत्तादान, मैथुन और परिग्रह—ये कितने वर्ण, कितने गन्ध, कितने रस और कितने स्पर्श वाले प्रज्ञप्त हैं?

गौतम ! पांच वर्ण, दो गन्ध, पांच रस, और चार स्पर्श वाले प्रज्ञप्त हैं।

१०३. भंते ! क्रोध, कोप, रोष, दोष (द्वेष), अक्षमा, संज्वलन, कलह, चाण्डिक्य, भण्डन और विवाद—ये कितने वर्ण यावत् स्पर्श वाले प्रज्ञप्त हैं?

गौतम ! पांच वर्ण, दो गंध, पांच रस और चार स्पर्श वाले प्रज्ञप्त हैं।

१०४. भंते ! मान, मद, दर्प, स्तम्भ, गर्व, आत्मोत्कर्ष, परपरिवाद, उत्कर्ष, अपकर्ष (अवोत्कर्ष), उन्नत, उन्नाम और दुर्नाम—ये कितने वर्ण यावत् कितने स्पर्श वाले प्रज्ञप्त हैं?

गौतम ! पांच वर्ण, दो गंध, पांच रस और चार स्पर्श वाले प्रज्ञप्त हैं।

१०५. भंते ! माया, उपधि, निकृति, वलय, गहन, णूम, कल्क, कुरुए, जैम्ह, किल्विषक, आचरण, गूहन, वंचन, परिकुंचन और साचियोग—ये कितने वर्ण यावत् कितने स्पर्श वाले प्रज्ञप्त हैं?

गौतम ! ये पांच वर्ण, दो गंध, पांच रस और चार स्पर्श वाले प्रज्ञप्त हैं।

१०६. भंते ! लोभ, इच्छा, मूर्च्छा, कांक्षा, गृद्धि, तृष्णा, भिध्या, अभिध्या, आशीष, प्रार्थना, लालपनता, कामाशा, भोगाशा, जीविताशा, मरणाशा, नंदी और राग—ये कितने वर्ण यावत् कितने स्पर्श वाले प्रज्ञप्त हैं?

गौतम ! पांच वर्ण, दो गंध, पांच रस और चार स्पर्श वाले प्रज्ञप्त हैं।

१०७. भंते ! प्रेय, द्वेष, कलह, अभ्याख्यान, पैशुन्य, परपरिवाद, अरतिरति, मायामृषा और मिथ्यादर्शन-शल्य—ये कितने वर्ण यावत् कितने स्पर्श वाले प्रज्ञप्त हैं?

गौतम ! पांच वर्ण, दो गंध, पांच रस और चार स्पर्श वाले प्रज्ञप्त हैं।

१०८. भंते ! प्राणातिपात-विरमण यावत् परिग्रह-विरमण, क्रोध-विवेक यावत् मिथ्यादर्शनशल्य-विवेक—ये कितने वर्ण यावत् कितने स्पर्श वाले प्रज्ञप्त हैं?

गौतम ! ये वर्ण-रहित, गंध-रहित, रस-रहित और स्पर्श-रहित प्रज्ञप्त हैं।

१०९. भंते ! औत्पत्तिकी, वैनयिकी, कार्मिकी और पारिणामिकी—ये कितने वर्ण यावत् कितने स्पर्श वाली प्रज्ञप्त हैं?

गौतम ! ये वर्ण-रहित, गंध-रहित, रस-रहित और स्पर्श-रहित प्रज्ञप्त हैं।

११०. भंते ! अवग्रह, ईहा, अवाय और धारणा—ये कितने वर्ण यावत् कितने स्पर्श वाली प्रज्ञाप्त हैं ?

गौतम ! ये वर्ण-रहित, गंध-रहित, रस-रहित और स्पर्श-रहित प्रज्ञप्त हैं।

१११. भंते ! उत्थान, कर्म, बल, वीर्य और पुरुषकार-पराक्रम—ये कितने वर्ण यावत् कितने स्पर्श वाले प्रज्ञप्त हैं ?

गौतम ! ये वर्ण-रहित, गंध-रहित, रस-रहित और स्पर्श-रहित प्रज्ञप्त हैं।

११२. भंते ! सातवां अवकाशान्तर कितने वर्ण यावत् कितने स्पर्श वाला प्रज्ञप्त है?

गौतम ! वर्ण-रहित, गंध-रहित, रस-रहित और स्पर्श-रहित प्रज्ञप्त है।

११३. भंते ! सातवां तनुवात कितने वर्ण, यावत् कितने स्पर्श वाला प्रज्ञप्त है।

गौतम ! पांच वर्ण, दो गंध, पांच रस और आठ स्पर्श वाला प्रज्ञप्त है ।

इसी प्रकार जैसे सातवें तनुवात की वक्तव्यता, वैसे ही सातवें घनवात, घनोदधि और पृथ्वी की वक्तव्यता। छठा अवकाशान्तर वर्ण-रहित है। तनुवात यावत् छठी पृथ्वी—इनमें आठ स्पर्श हैं। इसी प्रकार जैसे सातवीं पृथ्वी की वक्तव्यता, वैसे ही यावत् प्रथम पृथ्वी की वक्तव्यता। जम्बूद्वीप द्वीप यावत् स्वयंभूरमण समुद्र, सौधर्म-कल्प यावत् ईषत्प्राग्भारा-पृथ्वी, नैरयिकावास यावत् वैमानिकावास—ये सभी आठ स्पर्श वाले प्रज्ञप्त हैं।

११४. भंते ! नैरयिकों के कितने वर्ण यावत् कितने स्पर्श प्रज्ञप्त हैं ?

गौतम ! वैक्रिय- और तैजस-शरीर की अपेक्षा पांच वर्ण, दो गंध, पांच रस और आठ स्पर्श वाले प्रज्ञप्त हैं। कर्म-शरीर की अपेक्षा पांच वर्ण, दो गंध, पांच रस और चार स्पर्श वाले प्रज्ञप्त हैं। जीव की अपेक्षा वर्ण-रहित यावत् स्पर्श-रहित प्रज्ञप्त हैं। इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमारों की वक्तव्यता।

११५. पृथ्वीकायिकों की पृच्छा।

गौतम ! औदारिक- और तैजस-शरीर की अपेक्षा पांच वर्ण यावत् आठ स्पर्श वाले प्रज्ञप्त हैं। कर्म-शरीर की अपेक्षा नैरयिकों की भांति वक्तव्यता। जीव की अपेक्षा नैरयिकों की भांति वक्तव्यता। इसी प्रकार यावत् चतुरिन्द्रिय की वक्तव्यता, इतना विशेष है—वायुकायिक औदारिक-, वैक्रिय- और तैजस-शरीर की अपेक्षा पांच वर्ण यावत् आठ स्पर्श वाले प्रज्ञप्त हैं, शेष नैरयिकों की भांति वक्तव्य हैं। पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक वायुकायिक की भांति वक्तव्य हैं।

११६. मनुष्यों की पृच्छा।

वे औदारिक-, वैक्रिय-, आहारक- और तैजस-शरीर की अपेक्षा पांच वर्ण, यावत् आठ स्पर्श वाले प्रज्ञप्त हैं। कर्म-शरीर और जीव की अपेक्षा वे नैरयिकों की भांति वक्तव्य हैं। वाणमन्तर-, ज्योतिष्क- और वैमानिक-देव नैरयिकों की भांति वक्तव्य हैं।

धर्मास्तिकाय यावत् पुद्गलास्तिकाय—ये सभी वर्ण-रहित हैं, इतना विशेष है—पुद्गलास्तिकाय पांच वर्ण, दो गंध, पांच रस और आठ स्पर्श वाला प्रज्ञप्त है।

ज्ञानावरणीय यावत् अन्तराय—ये चार स्पर्श वाले प्रज्ञप्त हैं।

११७. भंते ! कृष्ण-लेश्या कितने वर्ण यावत् कितने स्पर्श वाली प्रज्ञप्त है ?

द्रव्य-लेश्या की अपेक्षा पांच वर्ण यावत् आठ स्पर्श वाली प्रज्ञप्त है। भाव-लेश्या की अपेक्षा वर्ण-रहित, गन्ध-रहित, रस-रहित और स्पर्श-रहित प्रज्ञप्त हैं। इसी प्रकार यावत् शुक्ल-लेश्या की वक्तव्यता।

सम्यग्-दृष्टि, मिथ्या-दृष्टि, सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि, चक्षु-दर्शन, अचक्षु-दर्शन, अवधि-दर्शन, केवल-दर्शन, आभिनिबोधिक-ज्ञान यावत् (भ. २/१३७) विभंग-ज्ञान, आहार-संज्ञा यावत् परिग्रह-संज्ञा—ये सभी वर्ण-रहित, गन्ध-रहित, रस-रहित और स्पर्श-रहित हैं।

औदारिक-शरीर यावत् तैजस-शरीर—ये आठ स्पर्श वाले हैं। कर्म-शरीर चार स्पर्श वाला है। मन-योग और वचन-योग चार स्पर्श वाले हैं। काय-योग आठ स्पर्श वाला है।

साकारोपयोग और अनाकारोपयोग वर्ण रहित हैं।

११८. भंते ! सर्व-द्रव्य कितने वर्ण यावत् कितने स्पर्श वाले प्रज्ञप्त हैं ?

गौतम ! कुछ सर्व-द्रव्य पांच वर्ण यावत् आठ स्पर्श वाले प्रज्ञप्त हैं। कुछ सर्व-द्रव्य पांच वर्ण यावत् चार स्पर्श वाले प्रज्ञप्त हैं। कुछ सर्व-द्रव्य एक वर्ण, एक गन्ध, एक रस और दो स्पर्श वाले प्रज्ञप्त हैं।

कुछ सर्व-द्रव्य वर्ण-रहित यावत् स्पर्श-रहित प्रज्ञप्त हैं। इसी प्रकार सर्व-प्रदेश और सर्व-पर्याय की वक्तव्यता। अतीत-काल वर्ण-रहित यावत् स्पर्श-रहित होता है। इसी प्रकार अनागत-काल और सर्व-काल की वक्तव्यता।

११९. भंते ! गर्भ में उपपन्न होता हुआ जीव कितने वर्ण, कितने गन्ध, कितने रस और कितने स्पर्श के परिणाम से परिणत होता है।

गौतम ! पांच वर्ण, दो गन्ध, पांच रस और आठ स्पर्श के परिणाम से परिणत होता है।

१२०. भंते ! क्या जीव कर्म से विभक्ति-भाव (नरक, मनुष्य आदि भव) में परिणमन करता है, अकर्म से विभक्ति-भाव में परिणमन नहीं करता ? क्या जगत् कर्म से विभक्ति-भाव में परिणमन करता है ? अकर्म से विभक्ति-भाव में परिणमन नहीं करता ?

हां! गौतम ! जीव कर्म से विभक्ति-भाव में परिणमन करता है, अकर्म से नहीं, जगत् कर्म से विभक्ति-भाव में परिणमन करता है, अकर्म से नहीं।

१२१. भंते ! वह ऐसा ही है। भंते ! वह ऐसा ही है।

छठा उद्देशक

चंद्र-सूर्य-ग्रहण-पद

१२२. राजगृह नाम का नगर यावत् इस प्रकार बोले—भंते ! बहुजन परस्पर इस प्रकार आख्यान यावत् प्ररूपणा करते हैं—राहु चंद्र को ग्रहण करता है, राहु चंद्र को ग्रहण करता है।

१२३. भंते ! यह कैसे है? क्या ऐसा है?

गौतम ! जो बहुजन परस्पर इस प्रकार का आख्यान यावत् प्ररूपणा करते हैं, वे मिथ्या कहते हैं। गौतम ! मैं इस प्रकार का आख्यान यावत् प्ररूपणा करता हूं—इस प्रकार राहु-देव महान् ऋद्धिवाला यावत् महान् ऐश्वर्यशाली के रूप में प्रख्यात, प्रवर-वस्त्र-धारक, प्रवर-माल्य-धारक, प्रवर-गंध- और प्रवर-आभरण-धारी होता है।

राहु-देव के नौ नाम प्रज्ञप्त हैं, जैसे शृंगारक, जटिलक, क्षत्रक, खरक, दर्दुर, मकर, मत्स्य, कच्छप और कृष्णसर्प।

राहु-देव के विमानों के पांच वर्ण प्रज्ञप्त हैं, जैसे—कृष्ण, नील, रक्त, पीत और श्वेत।

कृष्ण-राहु-विमान का वर्ण खजन के समान आभा वाला प्रज्ञप्त है, नील-राहु-विमान का वर्ण अलाबुक (तुम्बी) के समान आभा वाला प्रज्ञप्त है, रक्त-राहु-विमान का वर्ण मंजिष्ठ के समान आभा वाला प्रज्ञप्त है, पीत-राहु-विमान का वर्ण हरिद्रा के समान आभा वाला प्रज्ञप्त है, शुक्ल (श्वेत)-राहु-विमान का वर्ण शंख के ढेर के समान आभा वाला प्रज्ञप्त है।

जब राहु आता हुआ, जाता हुआ विक्रिया करता हुआ अथवा परिचारणा करता हुआ चन्द्र--लेश्या को पूर्व की ओर से आवृत कर पश्चिम की ओर जाता है, तब पूर्व में चन्द्रमा दिखाई देता है और पश्चिम में राहु। जब राहु आता हुआ, जाता हुआ, विक्रिया करता हुआ अथवा परिचारणा करता हुआ चन्द्र-लेश्या को पश्चिम की ओर से आवृत कर पूर्व की ओर जाता है, तब पश्चिम में चन्द्रमा दिखाई देता है और पूर्व में राहु।

इस प्रकार जैसे पूर्व और पश्चिम के दो आलापक कहे गए हैं, इसी प्रकार दक्षिण व उत्तर के भी दो आलापक वक्तव्य हैं। इसी प्रकार उत्तर-पूर्व और दक्षिण-पश्चिम के भी दो आलापक वक्तव्य हैं। इसी प्रकार दक्षिण-पूर्व और उत्तर-पश्चिम के दो आलापक वक्तव्य हैं। इसी प्रकार पूर्ववत् यावत् तब उत्तर-पश्चिम में चन्द्रमा दिखाई देता है और दक्षिण-पूर्व में राहु।

जब राहु आता हुआ, जाता हुआ, विक्रिया करता हुआ अथवा परिचारणा करता हुआ चन्द्र--लेश्या को आवृत करता हुआ, आवृत करता हुआ स्थित होता है तब मनुष्य-लोक में मनुष्य कहते हैं—इस प्रकार निश्चित ही राहु चन्द्रमा का ग्रहण करता है, राहु चंद्रमा का ग्रहण करता है।

जब राहु आता हुआ, जाता हुआ, विक्रिया करता हुआ अथवा परिचारणा करता हुआ चन्द्र--लेश्या को आवृत कर पार्श्व से जाता है, तब मनुष्य-लोक में मनुष्य कहते हैं—चन्द्रमा के द्वारा राहु की कुक्षि का भेदन हुआ है, चन्द्रमा के द्वारा राहु की कुक्षि का भेदन हुआ है।

जब राहु आता हुआ, जाता हुआ, विक्रिया करता हुआ अथवा परिचारणा करता हुआ चन्द्र--लेश्या को आवृत कर पीछे हटता है, दूर जाता है तब मनुष्य-लोक में मनुष्य कहते हैं— राहु के द्वारा चन्द्रमा को छोड़ दिया गया है, राहु के द्वारा चन्द्रमा को छोड़ दिया गया है।

जब राहु आता हुआ, जाता हुआ, विक्रिया करता हुआ अथवा परिचारणा करता हुआ चन्द्र--लेश्या को आवृत कर नीचे सपक्ष, सप्रतिदिशि—समान दिशा और विदिशा को आवृत कर स्थित होता है, तब मनुष्य-लोक में मनुष्य कहते हैं—राहु के द्वारा चन्द्रमा का ग्रहण कर लिया गया है, राहु के द्वारा चंद्रमा का ग्रहण कर लिया गया है।

१२४. भंते ! राहु कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम ! राहु दो प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—ध्रुव राहु और पर्व राहु।

जो ध्रुव राहु है, वह कृष्णपक्ष की प्रतिपदा से प्रतिदिन चंद्रमा की लेश्या (मंडल) का पन्द्रहवां भाग आवृत करता हुआ, आवृत करता हुआ स्थित होता है, जैसे—

प्रतिपदा के दिन पहला भाग, द्वितीया के दिन दूसरा भाग यावत् पन्द्रहवें दिन (अमावस्या) पन्द्रहवां भाग (सम्पूर्ण-चन्द्रमंडल)। अंतिम समय (कृष्णपक्ष के अंतिम दिन) में चन्द्रमा रक्त

(सर्वथा आवृत) होता है, अवशेष समय में चन्द्रमा रक्त (अंशतः आच्छादित) अथवा विरक्त (अंशतः अनाच्छादित) होता है। वही (ध्रुव राहु) शुक्ल पक्ष में प्रतिदिन एक-एक पन्द्रहवें भाग को उद्घाटित करता है, जैसे– प्रतिपदा के दिन पहला भाग उद्घाटित करता है। यावत् पूर्णिमा के दिन पन्द्रहवां भाग उद्घाटित करता है अर्थात् संपूर्ण चंद्र-मंडल को उद्घाटित करता है। अंतिम-समय में चंद्रमा विरक्त (सर्वथा अनाच्छादित) होता है, अवशेष समय में चंद्रमा रक्त (आच्छादित) अथवा विरक्त (अनाच्छादित) होता है। जो पर्व राहु है वह जघन्यतः छह मास में चंद्र और सूर्य को तथा उत्कृष्टतः बयालीस मास में चंद्र और अड़तालीस वर्ष में सूर्य को आवृत करता है।

शशि-आदित्य-पद

१२५. भंते ! किस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है–चंद्रमा शशि है, चंद्रमा शशि है?

गौतम ! ज्योतिषेन्द्र ज्योतिषराज चन्द्र के मृगांक (मृग के चिह्न-वाला) विमान में कमनीय देव और देवियां हैं । कमनीय आसन, शयन, स्तंभ, भांड, अमत्र और उपकरण हैं, स्वयं ज्योतिषेन्द्र ज्योतिषराज चन्द्र भी सौम्य, कमनीय, सुभग, प्रियदर्शन और सुरूप हैं।

गौतम ! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है–चंद्रमा शशि है, चंद्रमा शशि है।

१२६. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है–सूर्य आदित्य है, सूर्य आदित्य है?

गौतम ! समय, आवलिका यावत् अवसर्पिणी, उत्सर्पिणी की आदि सूर्य से होती है।

गौतम ! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है–सूर्य आदित्य है, सूर्य आदित्य है।

चंद्र-सूर्य का काम-भोग-पद

१२७. भंते ! ज्योतिषेन्द्र ज्योतिषराज चंद्र की कितनी अग्रमहिषी देवियां प्रज्ञप्त हैं?

दशम शतक (१०/१०) की भांति यावत् परिवार की ऋद्धि का उपभोग करते हैं, मैथुन रूप भोग का नहीं। इसी प्रकार सूर्य की वक्तव्यता।

१२८. भंते ! ज्योतिषेन्द्र ज्योतिषराज चन्द्र-सूर्य किसके समान कामभोगों का प्रत्यनुभव करते हुए विहरण करते हैं?

गौतम ! जिस प्रकार प्रथम यौवन के उद्गम में बल में स्थित पुरुष ने प्रथम यौवन के उद्गम में बल में स्थित भार्या के साथ तत्काल विवाह किया। अर्थ-गवेषणा के लिए सोलह वर्ष प्रवासित (विदेश) रहा। वह वहां से धन प्राप्त कर कार्य संपन्न कर, निर्विघ्न रूप से शीघ्र अपने घर वापस आया, स्नान किया, बलिकर्म किया, कौतुक (तिलक आदि) मंगल (दधि, अक्षत आदि), प्रायश्चित्त और सर्व अलंकारों से विभूषित होकर मनोज्ञ अठारह प्रकार के स्थालीपाक शुद्ध व्यंजनों से युक्त भोजन किया, भोजनकर उस अनुपम वासगृह, जो भीतर से चित्र-कर्म से युक्त, बाहर से धवलित, कोमल पाषाण से घिसा होने के कारण चिकना था। उसका ऊपरी भाग विविध चित्रों से युक्त तथा अधोभाग प्रकाश से दीप्तिमान था। मणि और रत्न की प्रभा से अंधकार प्रणष्ट हो चुका था। उसका देश भाग बहुत सम और सुविभक्त था। पांच वर्ण के सरस और सुरभित मुक्त पुष्प पुञ्ज के उपचार से कलित कृष्ण अगर, प्रवर

कुन्दुरु और जलते हुए लोबान की धूप से उठती हुई सुगंध से अभिराम, प्रवर सुरभि वाले गंध चूर्णों से सुगंधित गंधवर्तिका के समान उस प्रासाद में एक विशिष्ट शयनीय था।

उस पर शरीर-प्रमाण उपधान (मसनद) रखा हुआ था, सिर और पैर—दोनों ओर से उभरा हुआ तथा मध्य में नत और गम्भीर था। गंगातट की बालुका की भांति पांव रखते ही नीचे धंस जाता था। वह परिकर्मित क्षौम-दुकूल-पट्ट से ढका हुआ था। उसका रजस्त्राण (चादरा) सुनिर्मित था, वह लाल रंग की मसहरी से सुरम्य था, उसका स्पर्श चर्म-वस्त्र, कपास, बूर--वनस्पति और नवनीत के समान मृदु था। प्रवर सुगंधित कुसुम-चूर्ण के शयन-उपचार से कलित था। उसकी भार्या मूर्तिमान शृंगार और सुन्दर वेश वाली, चलने, हंसने, बोलने और चेष्टा करने में निपुण तथा विलास और लालित्य-पूर्ण संलाप में निपुण, समुचित उपचार में कुशल, सुन्दर स्तन, कटि, मुख, हाथ, पैर, नयन, लावण्य, रूप, यौवन और विलास से कलित, अनुरक्त, अत्यधिक प्रिय और मनोनुकूल भार्या के साथ इष्ट शब्द, स्पर्श, रस, रूप और गन्ध इन पांच प्रकार के मनुष्य-सम्बन्धी कामभोगों का प्रत्यनुभव करता हुआ विहरण करता है।

गौतम ! वह पुरुष व्यवशमन-काल (रति के अवसान के समय) में कैसा सात-सौख्य का प्रत्यनुभव करता हुआ विहरण करता है?

आयुष्मन् श्रमण ! प्रधान।

गौतम ! उस पुरुष के कामभोगों से वाणमन्तर-देवों के कामभोग अनन्त-गुणा विशिष्टतर होते हैं। वाणमन्तर-देवों के कामभोगों से (असुरेन्द्र को छोड़कर) भवनवासी-देवों के कामभोग अनन्त-गुणा विशिष्टतर होते हैं, असुरेन्द्र को छोड़कर भवनवासी-देवों के कामभोगों से असुरकुमार-देवों के कामभोग अनन्त-गुणा विशिष्टतर होते हैं। असुरकुमार-देवों के कामभोगों से ग्रह-गण-, नक्षत्र- और तारा-रूप ज्योतिष-देवों के कामभोग अनन्त-गुणा विशिष्टतर होते हैं। ग्रह-गण-, नक्षत्र- और तारा-रूप ज्योतिष-देवों के कामभोगों से ज्योतिषेन्द्र, ज्योतिषराज चन्द्र-सूर्य के कामभोग अनन्त-गुणा विशिष्टतर होते हैं।

गौतम! ज्योतिषेन्द्र ज्योतिषराज चन्द्र-सूर्य इस प्रकार के कामभोगों का प्रत्यनुभव करते हुए विहरण करते हैं।

१२९. भंते ! वह ऐसा ही है। भंते ! वह ऐसा ही है। इस प्रकार कहकर भगवान् गौतम ने श्रमण भगवान् महावीर को वन्दन-नमस्कार किया। वन्दन-नमस्कार कर संयम और तपस्या के द्वारा आत्मा को भावित करते हुए विहरण करने लगे।

सातवां उद्देशक

जीवों का सर्वत्र जन्म-मृत्यु-पद

१३०. उस काल और उस समय में यावत् गौतम स्वामी पर्युपासना करते हुए इस प्रकार बोले—भंते ! लोक कितना बड़ा प्रज्ञप्त है?

गौतम! लोक विशालतम प्रज्ञप्त है—पूर्वदिशा में असंख्येय क्रोड़ाक्रोड़ योजन, दक्षिण दिशा में

असंख्येय क्रोड़ाक्रोड़ योजन, इसी प्रकार पश्चिम दिशा में भी, इसी प्रकार उत्तर दिशा में भी, इसी प्रकार ऊर्ध्व एवं अधो दिशा में भी असंख्येय क्रोड़ाक्रोड़ योजन लम्बा-चौड़ा है।

१३१. भंते ! इस विशालतम लोक में कोई परमाणु-पुद्गल (मात्र) प्रदेश भी ऐसा है, जहां पर इस जीव ने जन्म अथवा मरण न किया हो?

गौतम ! यह अर्थ संगत नहीं है।

१३२. भंते ! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—इस विशालतम लोक में परमाणु-पुद्गल मात्र प्रदेश भी ऐसा नहीं है, जहां पर इस जीव ने जन्म अथवा मरण न किया हो?

गौतम ! जिस प्रकार कोई पुरुष सौ बकरियों के लिए एक बड़ा अजाव्रज (बकरी बाड़ा) तैयार करवाता है। वह वहां जघन्यतः एक, दो अथवा तीन उत्कृष्टतः हजार बकरियों का प्रक्षेप करता है। यदि उन बकरियों के लिए वहां प्रचुर घास और पानी हो तथा वे बकरियां जघन्यतः एक दिन अथवा तीन दिन, उत्कृष्टतः छह मास तक रहे।

गौतम! क्या उस अजाव्रज का कोई परमाणु-पुद्गल मात्र प्रदेश भी ऐसा रहता है, जो उन बकरियों के उच्चार, प्रस्रवण, श्लेष्म, नाक का मैल, वमन, पित्त, पीव (रस्सी), शुक्र, शोणित, चर्म, रोम, सींग, खुर अथवा नखों से आक्रांत न हुआ हो ?

यह अर्थ संगत नहीं है।

गौतम ! उस अजाव्रज का कोई परमाणु-पुद्गल मात्र प्रदेश भी ऐसा नहीं है जो उन बकरियों के उच्चार यावत् अथवा नखों से आक्रांत नहीं होता। वैसे ही इस विशालतम लोक में लोक का शाश्वत भाव, संसार—जन्म-मरण का अनादि भाव, जीव का नित्य भाव, कर्म-बहुत्व और जन्म-मरण के बाहुल्य की अपेक्षा परमाणु-पुद्गल मात्र प्रदेश भी ऐसा नहीं है, जहां पर इस जीव ने जन्म अथवा मरण न किया हो।

गौतम ! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—इस विशालतम लोक में कोई परमाणु-पुद्गल मात्र प्रदेश भी ऐसा नहीं है, जहां इस जीव ने जन्म अथवा मरण न किया हो।

अनेक अथवा अनंत बार उपपात-पद

१३३. भंते ! पृथ्वियां कितने प्रकार की प्रज्ञप्त हैं ?

गौतम ! पृथ्वियां सात प्रकार की प्रज्ञप्त हैं, जैसे प्रथम शतक के पांचवें उद्देशक (**भ. १/२११-२५५**) की वक्तव्यता है वैसे ही आवासों की वक्तव्यता यावत् अनुत्तर-विमान यावत् अपराजित-सर्वार्थसिद्ध की वक्तव्यता।

१३४. भंते ! क्या यह जीव इस रत्नप्रभा-पृथ्वी के तीस लाख नरकावासों में से प्रत्येक नरकावास में रहने वाले पृथ्वीकायिक के रूप में यावत् वनस्पतिकायिक के रूप में नरकावास के जीव के रूप में और नैरयिक के रूप में उपपन्न-पूर्व है?

हां गौतम ! अनेक अथवा अनन्त बार।

१३५. भंते ! क्या सब जीव इस रत्नप्रभा-पृथ्वी के तीस लाख नरकावासों में से प्रत्येक नरकावास में रहने वाले पृथ्वीकायिक के रूप में यावत् वनस्पतिकायिक के रूप में,

नरकावास के जीव के रूप में और नैरयिक के रूप में उपपन्न-पूर्व हैं ?

हां गौतम ! अनेक अथवा अनन्त बार ।

१३६. भंते ! क्या यह जीव शर्कराप्रभा-पृथ्वी के पच्चीस लाख नरकावासों में से प्रत्येक नरकावास में रहने वाले....?

इसी प्रकार जैसे—रत्नप्रभा-पृथ्वी की वक्तव्यता है वैसे ही दो आलापक वक्तव्य हैं। इसी प्रकार यावत् धूमप्रभा की वक्तव्यता।

१३७. भंते ! क्या यह जीव तमःप्रभा-पृथ्वी के निन्यानवें हजार नौ सौ पिचानवें नरकावासों में से प्रत्येक नरकावास में रहने वाले पृथ्वीकायिक के रूप में यावत् उपपन्न-पूर्व है?

शेष वर्णन पूर्ववत्।

१३८. भंते ! क्या यह जीव अधःसप्तमी-पृथ्वी के पांच अनुत्तर विशालतम महानरकावासों में से प्रत्येक नरकावास में रहने वाले.....?

शेष वर्णन रत्नप्रभा की भांति वक्तव्य है।

१३९. भंते ! क्या यह जीव चौसठ लाख असुरकुमारावासों में से प्रत्येक असुरकुमारावास में रहने वाले पृथ्वीकायिक के रूप में यावत् वनस्पतिकायिक के रूप में, देव के रूप में, देवी के रूप में, आसन, शयन, भांड, अमत्र और उपकरण के रूप में उपपन्न-पूर्व है?

हां गौतम ! अनेक अथवा अनन्त बार।

भंते! सब जीवों के लिए भी। पूर्ववत् वक्तव्यता। इसी प्रकार यावत् स्तनित-कुमारों तक। उनके आवासों में नानात्व है, आवास पहले शतक (भ. १/२११-२१५) में कहे जा चुके हैं।

१४०. भंते ! क्या यह जीव असंख्येय लाख पृथ्वीकायिकावासों में से प्रत्येक पृथ्वीकायिक आवास में रहने वाले पृथ्वीकायिक के रूप में यावत् वनस्पतिकायिक के रूप में उपपन्न-पूर्व है?

हां गौतम ! अनेक अथवा अनंत बार। इसी प्रकार सब जीव भी वक्तव्य हैं। इसी प्रकार यावत् वनस्पतिकायिकों में।

१४१. भंते ! क्या यह जीव असंख्येय लाख द्वीन्द्रियावासों में से प्रत्येक द्वीन्द्रियावास में रहने वाले पृथ्वीकायिक के रूप में यावत् वनस्पतिकायिक के रूप में और द्वीन्द्रियकायिक के रूप में उपपन्न-पूर्व है?

हां गौतम ! अनेक अथवा अनंत बार। इसी प्रकार सब जीव भी वक्तव्य हैं। इसी प्रकार यावत् मनुष्यों में, इतना विशेष है—त्रीन्द्रियों में यावत् वनस्पतिकायिक और त्रीन्द्रिय के रूप में, चतुरिन्द्रियों में चतुरिन्द्रिय के रूप में, पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों में पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक के रूप में, मनुष्यों में मनुष्य के रूप में, शेष द्वीन्द्रियों की भांति वक्तव्य है। वानमंतर, ज्योतिष्क, सौधर्म और ईशानों में असुरकुमारों की भांति वक्तव्यता।

१४२. भंते ! क्या यह जीव सनत्कुमार-कल्प के बारह लाख विमानावासों में से प्रत्येक विमानावास में रहने वाले पृथ्वीकायिक के रूप में यावत् वनस्पतिकायिक के रूप में, देव के

रूप में, आसन, शयन, भांड, अमत्र और उपकरण के रूप में उपपन्न-पूर्व है?

हां गौतम ! अनेक अथवा अनंत बार। इसी प्रकार समस्त जीव भी वक्तव्य हैं। इसी प्रकार यावत् आनत-प्राणत-कल्पों में, इसी प्रकार आरण-अच्युत-कल्पों में भी वक्तव्य हैं।

१४३. भंते ! क्या यह जीव तीन सौ अठारह ग्रैवेयक-विमानावासों में.....?

इसी प्रकार पूर्ववत्।

१४४. भंते ! क्या यह जीव पांच अनुत्तरविमानों में से प्रत्येक अनुत्तरविमान में रहने वाले पृथ्वीकायिक के रूप में..... ?

वैसे ही यावत् अनेक अथवा अनंत बार। देव के रूप में अथवा देवी के रूप में नहीं। इसी प्रकार सब जीवों की वक्तव्यता।

१४५. भंते ! क्या यह जीव सब जीवों के माता, पिता, भाई, भगिनी, भार्या, पुत्र, पुत्री और पुत्रवधू के रूप में उपपन्न-पूर्व है ?

हां गौतम ! अनेक अथवा अनन्त बार।

१४६. भंते ! क्या सब जीव भी इस जीव के माता, पिता, भ्राता, भगिनी, भार्या, पुत्र, पुत्री और पुत्रवधू के रूप में उपपन्न-पूर्व हैं?

हां गौतम ! अनेक अथवा अनन्त बार।

१४७. भंते ! क्या यह जीव सब जीवों के शत्रु, वैरी, घातक, वधक, प्रत्यनीक और प्रत्यमित्र के रूप में उपपन्न-पूर्व है ?

हां गौतम ! अनेक अथवा अनन्त बार।

१४८. भंते ! क्या सब जीव भी इस जीव के शत्रु, वैरी, घातक, वधक, प्रत्यनीक और प्रत्यमित्र के रूप में उपपन्न-पूर्व हैं ?

हां गौतम ! अनेक अथवा अनन्त बार।

१४९. भंते ! क्या यह जीव सब जीवों के राजा, युवराज, तलवर (कोटवाल), मडम्ब-पति, कुटुम्ब-पति, इभ्य, श्रेष्ठी, सेनापति और सार्थवाह के रूप में उपपन्न-पूर्व है ?

हां, गौतम! अनेक अथवा अनंत बार।

१५०. भंते! क्या सब जीव भी इस जीव के राजा, युवराज, तलवर, मडम्ब-पति, कुटुम्ब--पति, इभ्य, श्रेष्ठी, सेनापति और सार्थवाह के रूप में उपपन्न-पूर्व हैं ?

हां गौतम! अनेक अथवा अनन्त बार।

१५१. भंते! क्या यह जीव सब जीवों के दास, प्रेष्य, भृतक, भागीदार, भोगपुरुष, शिष्य और वैश्य के रूप में उपपन्न-पूर्व है?

हां गौतम! अनेक अथवा अनन्त बार।

१५२. भंते! क्या सब जीव भी इस जीव के दास, प्रेष्य, भृतक, भागीदार, भोगपुरुष, शिष्य और वैश्य के रूप में उपपन्न-पूव हैं?

हां गौतम! अनेक अथवा अनन्त बार।

१५३. भंते ! वह ऐसा ही है। भंते ! वह ऐसा ही है। ऐसा कहकर यावत् विहरण करने लगे।

आठवां उद्देशक

देवों का द्विशरीर-उपपात-पद

१५४. उस काल और उस समय में यावत् इस प्रकार बोले—भंते ! क्या महान् ऋद्धि वाला यावत् महान् ऐश्वर्यशाली के रूप में प्रख्यात देव अनन्तर उस देवलोक से च्यवन कर द्विशरीर वाले नागों में उपपन्न होता है ?

हां, उपपन्न होता है।

१५५. क्या वह वहां अर्चित, वंदित, पूजित, सत्कारित, सम्मानित, दिव्य (प्रधान), सत्य, सत्यावपात और सन्निहित-प्रातिहार्य होता है ?

हां, होता है।

१५६. भंते ! क्या वह वहां से अनन्तर निकलकर सिद्ध यावत् सब दुःखों का अन्त करता है ?

हां, सिद्ध यावत् सब दुःखों का अन्त करता है।

१५७. भंते ! क्या महान् ऋद्धि यावत् महान् ऐश्वर्यशाली के रूप में प्रख्यात देव उस देवलोक से अनन्तर च्यवन कर द्विशरीर वाले मणियों में उपपन्न होता है ?

हां, उपपन्न होता है। इस प्रकार नाग की भांति वक्तव्यता।

१५८. भंते ! क्या महान् ऋद्धि यावत् महान् ऐश्वर्यशाली के रूप में प्रख्यात देव अनन्तर उस देवलोक से च्यवन कर द्विशरीर वाले वृक्षों में उपपन्न होता है?

हां, उपपन्न होता है। इसी प्रकार पूर्ववत् वक्तव्यता, इतना विशेष है—क्या इसमें नानात्व यावत् सन्निहित-प्रातिहार्य और **'लाउल्लोइयमहित'** होगा—वृक्ष का भूमिभाग गोबर आदि से लिपा हुआ और भींत खड़िया मिट्टी से पुती हुई होती है ?

हां, होती है। शेष वर्णन पूर्ववत् यावत् सब दुःखों का अन्त करता है।

पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-उपपात-पद

१५९. भंते ! क्या वानरों में प्रधान, कुक्कुट में प्रधान, मेंढ़क में प्रधान—ये शील-रहित, व्रत--रहित, गुण-रहित, मर्यादा-रहित, प्रत्याख्यान और पौषधोपवास से रहित, काल-मास में काल करके इस रत्नप्रभा-पृथ्वी में उत्कृष्टतः सागरोपम की स्थिति वाले नरक में नैरयिक के रूप में उपपन्न होते हैं?

श्रमण भगवान् महावीर व्याकरण करते हैं—उपपद्यमान उपपन्न होते हैं, यह वक्तव्य है।

१६०. भंते ! क्या सिंह, व्याघ्र, भेड़िया, चित्तीदार तेंदुआ, रींछ, लकड़बग्घा और पराशर (वाम्बेट) ये शील-रहित, व्रत-रहित, गुण-रहित, मर्यादा-रहित, प्रत्याख्यान और

पौषधोपवास से रहित कालमास में काल करके इस रत्नप्रभा-पृथ्वी में उत्कृष्टतः सागरोपम की स्थिति वाले नरक में नैरयिक के रूप में उपपन्न होते हैं ?

श्रमण भगवान् महावीर व्याकरण करते हैं—उपपद्यमान उपपन्न होते हैं, यह वक्तव्य है।

१६१. भंते ! ढंक (द्रोण काक); कंक (सफेद चील), विलक (पीलक), मद्गुक (जल-काक) और मोर—ये शील-रहित, व्रत-रहित, गुण-रहित, मर्यादा-रहित, प्रत्याख्यान और पौषधोपावास से रहित कालमास में काल करके इस रत्नप्रभा-पृथ्वी में उत्कृष्ट सागरोपम की स्थिति वाले नरक में नैरयिक के रूप में उपपन्न होते हैं ?

श्रमण भगवान् महावीर व्याकरण करते हैं—उपपद्यमान उपपन्न होते हैं, यह वक्तव्य है।

१६२. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है, ऐसा कहकर यावत् विहरण करने लगे।

नौवां उद्देशक

पंचविध-देव-पद

१६३. भंते ! देव कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं ?

गौतम ! देव पांच प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—भव्य-द्रव्य-देव, नर-देव, धर्म-देव, देवातिदेव और भाव-देव ।

१६४. भंते ! भव्य-द्रव्य-देव भव्य-द्रव्य-देव—यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है?

गौतम ! जो भव्य पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक अथवा मनुष्य मृत्यु के पश्चात् देवों में उपपन्न होने वाले हैं, गौतम! इस अपेक्षा से उन्हें कहा जाता है—भव्य-द्रव्य-देव भव्य-द्रव्य-देव।

१६५. भंते ! नर-देव नर-देव—यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है ?

गौतम ! जो ये चातुरन्त चक्रवर्ती राजा उपपन्न समस्त रत्नों में प्रधान चक्र वाले, नौ निधि के अधिपति, समृद्ध कोश वाले हैं, बत्तीस हजार श्रेष्ठ राजा उनके मार्ग का अनुसरण करते हैं, समुद्र की प्रवर मेखला के अधिपति और मनुष्यों के इन्द्र हैं, गौतम! इस अपेक्षा से उन्हें कहा जाता है—नर-देव नर-देव।

१६६. भंते ! धर्म-देव धर्म-देव—यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है?

गौतम ! जो ये अनगार भगवन्त विवेकपूर्वक चलते हैं यावत् ब्रह्मचर्य को सुरक्षित रखते हैं, गौतम ! इस अपेक्षा से उन्हें कहा जाता है—धर्म-देव धर्म-देव।

१६७. भंते ! देवातिदेव देवातिदेव—यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है ?

गौतम ! जो ये अर्हत् भगवान् उत्पन्न-ज्ञान-दर्शन के धारक, अर्हत्, जिन, केवली, अतीत, वर्तमान और भविष्य के विज्ञाता सर्वज्ञ और सर्वदर्शी होते हैं, गौतम ! इस अपेक्षा से उन्हें कहा जाता है—देवातिदेव देवातिदेव।

१६८. भंते ! भाव-देव भाव-देव—यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है ?

गौतम ! जो ये भवनपति-, वाणमंतर-, ज्योतिष्क-, वैमानिक-देव देव-गति-नाम-गोत्र कर्मों

का वेदन करते हैं, गौतम ! इस अपेक्षा से उन्हें कहा जाता है—भाव-देव भाव-देव।

पंचविध-देवों का उपपात-पद

१६९. भंते ! भव्य-द्रव्य-देव कहां से उपपन्न होते हैं—क्या नैरयिकों से उपपन्न होते हैं ? क्या तिर्यंच-, मनुष्य- और देव-गति से उपपन्न होते हैं?

गौतम ! नैरयिकों से उपपन्न होते हैं, तिर्यंच-, मनुष्य- और देव-गति से भी उपपन्न होते हैं। जैसे **पण्णवणा** अवक्रांति-पद (६/८८-९२) के अनुसार सब गतियों से उपपन्न होने के भेद वक्तव्य हैं यावत् अनुत्तरोपपातिक, इतना विशेष है—असंख्येय-वर्ष-आयु वाले अकर्मभूमिज, अन्तर्द्वीपज और सर्वार्थसिद्ध को छोड़कर यावत् अपराजित-देवों से भी उपपन्न होते हैं।

१७०. भंते ! नर-देव कहां से उपपन्न होते हैं—क्या नैरयिकों से ? पृच्छा ।

गौतम! नैरयिकों से उपपन्न होते हैं। तिर्यग्योनिक और मनुष्यों से उपपन्न नहीं होते। देवों से भी उपपन्न होते हैं।

१७१. यदि नैरयिकों से उपपन्न होते हैं तो क्या रत्नप्रभा-पृथ्वी के नैरयिकों से उपपन्न होते हैं यावत् अधःसप्तमी-पृथ्वी के नैरयिकों से उपपन्न होते हैं ?

गौतम ! रत्नप्रभा-पृथ्वी के नैरयिकों से उपपन्न होते हैं। शर्कराप्रभा-पृथ्वी के नैरयिकों से उपपन्न नहीं होते यावत् अधःसप्तमी-पृथ्वी के नैरयिकों से उपपन्न नहीं होते।

१७२. यदि देवों से उपपन्न होते हैं तो क्या भवनवासी-देवों से उपपन्न होते हैं ? वाणमंतर-, ज्योतिष्क- और वैमानिक-देवों से उपपन्न होते हैं ?

गौतम! भवनवासी-देवों से भी उपपन्न होते हैं, वाणमंतर-देवों से उपपन्न होते हैं, इसी प्रकार समस्त देवों के विषय में **पण्णवणा** अवक्रांति-पद (६/२२) की भांति समस्त उपपात वक्तव्य है यावत् सर्वार्थसिद्ध-देवों से।

१७३. भंते ! धर्म-देव कहां से उपपन्न होते हैं—क्या नैरयिकों से उपपन्न होते हैं ?—पृच्छा।

इसी प्रकार अवक्रांति-भेद से सर्व-देवों का उपपात वक्तव्य है यावत् सर्वार्थसिद्ध देवों से, इतना विशेष है—तमःप्रभा, अधः-सप्तमी, तेजस्काय, वायुकाय, असंख्येय-वर्ष-आयु वाले अकर्मभूमिज और अन्तर्द्वीपज को छोड़कर।

१७४. भंते ! देवातिदेव कहां से उपपन्न होते हैं ? क्या नैरयिकों से उपपन्न होते हैं—पृच्छा।

गौतम! नैरयिकों से उपपन्न होते हैं। तिर्यग्योनिकों और मनुष्यों से उपपन्न नहीं होते। देवों से भी उपपन्न होते हैं।

१७५. यदि नैरयिकों से उपपन्न होते हैं?

इसी प्रकार प्रथम तीन पृथ्वियों से उपपन्न होते हैं, शेष चार पृथ्वियों से उपपन्न नहीं होते।

१७६. यदि देवों से?

सर्व वैमानिक-देवों से उपपन्न होते हैं, यावत् सर्वार्थसिद्ध-देवों से उपपन्न होते हैं, शेष देवों का निषेध करना चाहिए।

१७७. भंते ! भाव-देव कहां से उपपन्न होते हैं?

इसी प्रकार जैसे **पण्णवणा** अवक्रांति-पद (६/९२) की भांति भवनवासी- देवों का उपपात वक्तव्य है।

पंचविध-देवों की स्थिति-पद

१७८. भंते ! भव्य-द्रव्य-देवों की स्थिति कितने काल की प्रज्ञप्त है?

गौतम ! जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त, उत्कृष्टतः तीन पल्योपम।

१७९. नर-देवों की पृच्छा।

गौतम ! जघन्यतः सात सौ वर्ष, उत्कृष्टतः चौरासी लाख पूर्व।

१८०. धर्म-देवों की पृच्छा।

गौतम ! जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त, उत्कृष्टतः कुछ कम पूर्व-कोटि।

१८१. देवातिदेवों की पृच्छा।

गौतम ! जघन्यतः बहत्तर वर्ष, उत्कृष्टतः चौरासी लाख पूर्व।

१८२. भाव-देवों की पृच्छा।

गौतम! जघन्यतः दस हजार वर्ष, उत्कृष्टतः तेतीस सागरोपम।

पंचविध देवों का विक्रिया-पद

१८३. भंते ! क्या भव्य-द्रव्य-देव एक रूप विक्रिया करने में समर्थ हैं? अनेक रूप विक्रिया करने में समर्थ हैं?

गौतम! एक-रूप-विक्रिया करने में भी समर्थ हैं, अनेक-रूप-विक्रिया करने में भी समर्थ हैं। एक-रूप-विक्रिया करता हुआ एकेन्द्रिय-रूप यावत् अथवा पंचेन्द्रिय-रूप, अनेक-रूप--विक्रिया करता हुआ एकेन्द्रिय-रूपों यावत् अथवा पंचेन्द्रिय-रूपों की विक्रिया करता है। वे रूप संख्येय अथवा असंख्येय, संबद्ध अथवा असंबद्ध, सदृश अथवा असदृश होते हैं, विक्रिया करने के पश्चात् इच्छानुसार कार्य करते हैं। इसी प्रकार नर-देव की भी वक्तव्यता, इसी प्रकार धर्म-देव की भी वक्तव्यता।

१८४. देवातिदेवों की—पृच्छा।

गौतम ! एक-रूप-विक्रिया करने में भी समर्थ हैं, अनेक-रूप-विक्रिया करने में भी समर्थ हैं। यह विषय विक्रिया करने की शक्ति की दृष्टि से बताया गया है किंतु क्रियात्मक रूप में उन्होंने कभी अतीत में विक्रिया नहीं की, वर्तमान में नहीं करते और भविष्य में नहीं करेंगे।

भाव-देव भव्य-द्रव्य-देव की भांति वक्तव्य हैं।

पंचविध-देवों का उद्वर्तन-पद

१८५. भंते ! भव्य-द्रव्य-देव अनंतर उद्वर्तन कर कहां जाते हैं? कहां उपपन्न होते हैं—क्या नैरयिकों में उपपन्न होते हैं यावत् देवों में उपपन्न होते हैं?

गौतम ! नैरयिकों में उपपन्न नहीं होते, तिर्यग्योनिकों में उपपन्न नहीं होते, मनुष्यों में उपपन्न नहीं होते, देवों में उपपन्न होते हैं।

यदि देवों में उपपन्न होते हैं?

सब देवों में उपपन्न होते हैं यावत् सर्वार्थसिद्ध-देवों में उपपन्न होते हैं ।

१८६. भंते! नर-देव अनंतर उद्वर्तन कर—पृच्छा।

गौतम! नैरयिकों में उपपन्न होते हैं। तिर्यग्योनिकों, मनुष्यों और देवों में उपपन्न नहीं होते।

यदि नैरयिकों में उपपन्न होते हैं तो ?

सातों पृथ्वियों में उपपन्न होते हैं।

१८७. भंते! धर्म-देव अनंतर उद्वर्तन कर—पृच्छा।

गौतम! नैरयिकों में उपपन्न नहीं होते, तिर्यग्योनिकों और मनुष्यों में उपपन्न नहीं होते। देवों में उपपन्न होते हैं।

१८८. यदि देवों में उपपन्न होते हैं तो क्या भवनवासी-देवों में उपपन्न होते हैं ?— पृच्छा।

गौतम ! भवनवासी-देवों में उपपन्न नहीं होते, वाणमन्तर-देवों में उपपन्न नहीं होते, ज्योतिष्क-देवों में उपपन्न नहीं होते, वैमानिक-देवों में उपपन्न होते हैं।

सर्व वैमानिक-देवों में उपपन्न होते हैं यावत् सर्वार्थसिद्ध-अनुत्तरोपपातिक वैमानिक-देवों में उपपन्न होते हैं ।

उनमें कुछ धर्म-देव सिद्ध होते हैं यावत् सर्व दुःखों का अन्त करते हैं।

१८९. देवातिदेव अनन्तर उद्वर्तन कर कहां जाते हैं? कहां उपपन्न होते हैं?

गौतम! सिद्ध हो जाते हैं यावत् सर्व दुःखों का अंत करते हैं।

१९०. भंते ! भाव-देव अनन्तर उद्वर्तन कर—पृच्छा ।

जैसे—**पण्णवणा** के अवक्रांति पद (६/१०१-१०२) में असुरकुमार-देवों का उद्वर्तन वक्तव्य है वैसे ही यहां वक्तव्य है।

पंचविध-देवों का संस्थिति-पद

१९१. भंते ! भव्य-द्रव्य-देव भव्य-द्रव्य-देव के रूप में कितने काल तक रहता है।

गौतम ! जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त उत्कृष्टतः तीन पल्योपम।

इसी प्रकार जो भव-स्थिति बतलाई गई है, वही उनका संस्थान-काल है। यह नियम नर-देव, देवातिदेव और भाव-देव—सबके लिए समान है। केवल धर्म-देव इसका अपवाद है। उसका संस्थान-काल जघन्यतः एक समय उत्कृष्टतः कुछ कम पूर्व-कोटि है।

पंचविध-देवों का अन्तर-पद

१९२. भंते ! भव्य-द्रव्य-देव का अन्तर-काल कितना होता है?

गौतम ! जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त से कुछ अधिक दस हजार वर्ष, उत्कृष्टतः अनंत काल—वनस्पति-काल।

१९३. नर-देवों की पृच्छा।

गौतम ! जघन्यतः कुछ अधिक सागरोपम, उत्कृष्टतः अनंत-काल—कुछ कम अर्ध पुद्गल-परिवर्त्त।

१९४. धर्म-देव की—पृच्छा।

गौतम ! जघन्यतः पृथक्त्व-पल्योपम, उत्कृष्टतः अनंत-काल यावत् कुछ कम अर्ध-पुद्गल-परिवर्त्त।

१९५. देवातिदेवों की पृच्छा ।

गौतम ! अंतरकाल नहीं।

१९६. भाव-देव की पृच्छा।

गौतम ! जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त, उत्कृष्टतः अनंत काल—वनस्पति काल।

पंचविध-देवों का अल्पबहुत्व-पद

१९७. भंते ! इन भव्य-द्रव्य-देवों, नर-देवों, धर्म-देवों, देवातिदेवों और भाव-देवों में कौन किनसे अल्प, बहु, तुल्य अथवा विशेषाधिक हैं?

गौतम ! सबसे अल्प नर-देव, देवातिदेव उससे संख्येय-गुणा अधिक, धर्म-देव उससे संख्येय-गुणा अधिक, भव्य-द्रव्य-देव उससे असंख्येय-गुणा अधिक और भाव-देव उससे असंख्येय-गुणा अधिक हैं।

१९८. भंते ! इन भाव-देवों—भवनवासी-देवों, वाणमंतर-देवों, ज्योतिष्क-देवों और वैमानिक-देवों—सौधर्म यावत् अच्युत-, कल्प-, ग्रैवेयक- और अनुत्तरोपपातिक-देवों में कौन किनसे अल्प, बहु, तुल्य अथवा विशेषाधिक हैं?

गौतम ! सबसे अल्प अनुत्तरोपपातिक-भाव-देव, उपरि ग्रैवेयक-भाव-देव उससे संख्येय-गुणा अधिक, मध्यम-ग्रैवेयक उससे संख्येय-गुणा अधिक, अधस्तन-ग्रैवेयक उससे संख्येय-गुणा अधिक, अच्युत-कल्पवासी-देव उससे संख्येय-गुणा अधिक यावत् आनत-कल्पवासी देव उससे संख्येय-गुणा अधिक, महाशुक्र-कल्पवासी-देव उससे असंख्येय-गुणा अधिक, लान्तक-कल्पवासी-देव उससे असंख्येय-गुणा अधिक, माहेन्द्र-कल्पवासी-देव उससे असंख्येय-गुणा अधिक, सनत्कुमार-कल्पवासी-देव उससे असंख्येय-गुणा अधिक, ईशान-कल्पवासी देव उससे असंख्येय-गुणा अधिक, सौधर्म-कल्पवासी देव उससे असंख्येय-गुणा अधिक, भवनवासी-देव उससे असंख्येय-गुणा अधिक, वाणमंतर-देव उससे असंख्येय-गुणा अधिक, ज्योतिष्क-भाव-देव उससे असंख्येय-गुणा अधिक हैं।

१९९. भंते ! वह ऐसा ही है। भंते ! वह ऐसा ही है ।

दसवां उद्देशक

अष्टविध-आत्म-पद

२००. भंते! आत्मा कितने प्रकार की प्रज्ञप्त है?

गौतम ! आत्मा आठ प्रकार की प्रज्ञप्त है, जैसे—द्रव्य-आत्मा, कषाय-आत्मा, योग-आत्मा, उपयोग-आत्मा, ज्ञान-आत्मा, दर्शन-आत्मा, चरित्र-आत्मा और वीर्य-आत्मा।

२०१. भंते ! जिसके द्रव्य-आत्मा है क्या उसके कषाय-आत्मा है? जिसके कषाय-आत्मा है, क्या उसके द्रव्य-आत्मा है ?

गौतम ! जिसके द्रव्य-आत्मा है उसके कषाय-आत्मा स्यात् है, स्यात् नहीं है। जिसके कषाय-आत्मा है उसके द्रव्य-आत्मा नियमतः है।

२०२. भंते ! जिसके द्रव्य-आत्मा है क्या उसके योग-आत्मा है ? जिसके योग-आत्मा है, क्या उसके द्रव्य-आत्मा है ?

गौतम! जिसके द्रव्य-आत्मा है उसके योग-आत्मा स्यात् है, स्यात् नहीं है। जिसके योग--आत्मा है उसके द्रव्य-आत्मा नियमतः है।

२०३. भंते ! जिसके द्रव्य-आत्मा है, क्या उसके उपयोग-आत्मा है ? जिसके उपयोग--आत्मा है, क्या उसके द्रव्य-आत्मा है ? इसी प्रकार सर्वत्र पृच्छा करणीय है ।

गौतम ! जिसके द्रव्य-आत्मा है उसके उपयोग-आत्मा नियमतः है। जिसके उपयोग-आत्मा है उसके द्रव्य आत्मा-नियमतः है।

जिसके द्रव्य-आत्मा है, उसके ज्ञान-आत्मा की भजना है। जिसके ज्ञान-आत्मा है उसके द्रव्य-आत्मा नियमतः है।

जिसके द्रव्य-आत्मा है, उसके दर्शन-आत्मा नियमतः है। जिसके दर्शन-आत्मा है, उसके द्रव्य-आत्मा नियमतः है।

जिसके द्रव्य-आत्मा है, उसके चरित्र-आत्मा की भजना है। जिसके चरित्र-आत्मा है, उसके द्रव्य-आत्मा नियमतः है।

जिसके द्रव्य-आत्मा है, उसके वीर्य-आत्मा की भजना है। जिसके वीर्य-आत्मा है, उसके द्रव्य-आत्मा नियमतः है।

२०४. भंते ! जिसके कषाय-आत्मा है उसके योग-आत्मा होती है? पृच्छा।

गौतम ! जिसके कषाय-आत्मा है उसके योग-आत्मा नियमतः है। जिसके योग-आत्मा है उसके कषाय-आत्मा स्यात् है, स्यात् नहीं है। इसी प्रकार उपयोग-आत्मा भी कषाय-आत्मा के समान ज्ञातव्य है। कषाय-आत्मा और ज्ञान-आत्मा—ये दोनों परस्पर भजनीय है। जैसे कषाय-आत्मा और उपयोग-आत्मा की वक्तव्यता है वैसे ही कषाय-आत्मा और दर्शन-आत्मा, कषाय-आत्मा और चरित्र-आत्मा—ये दोनों परस्पर भजनीय है। जैसे कषाय-आत्मा और योग-आत्मा की वक्तव्यता है वैसे ही कषाय-आत्मा और वीर्य-आत्मा भी वक्तव्य है।

इसी प्रकार जैसे कषाय-आत्मा की वक्तव्यता कही गई है वैसे ही योग-आत्मा की वक्तव्यता ऊपरवर्ती आत्माओं के साथ वक्तव्य है।

जैसे द्रव्य-आत्मा की वक्तव्यता कही गई है वैसे ही उपयोग-आत्मा की वक्तव्यता ऊपरवर्ती आत्माओं के साथ वक्तव्य है।

जिसके ज्ञान-आत्मा है उसके दर्शन-आत्मा नियमतः है। जिसके दर्शन-आत्मा है उसके ज्ञान-आत्मा की भजना है।

जिसके ज्ञान-आत्मा है उसके चरित्र-आत्मा स्यात् है, स्यात् नहीं है। जिसके चरित्र-आत्मा है, उसके ज्ञान-आत्मा नियमतः है। ज्ञान-आत्मा और वीर्य-आत्मा—ये दोनों परस्पर भजनीय है। जिसके दर्शन-आत्मा है उसके उपरिवर्ती दो आत्मा—चरित्र आत्मा और वीर्य-आत्मा की भजना है। जिसके चरित्र- और वीर्य-आत्मा हैं, उसके दर्शन-आत्मा नियमतः है। जिसके चरित्र-आत्मा है, उसके वीर्य-आत्मा नियमतः है। जिसके वीर्य-आत्मा है उसके चरित्र-आत्मा स्यात् है, स्यात् नहीं है।

अष्टविध-आत्मा का अल्पबहुत्व-पद

२०५. भंते! द्रव्य-आत्मा, कषाय-आत्मा यावत् वीर्य-आत्मा—इनमें कौन किनसे अल्प, बहु, तुल्य अथवा विशेषाधिक है?

गौतम! सबसे अल्प चरित्र-आत्मा, ज्ञान-आत्मा उससे अनंत-गुणा अधिक, कषाय-आत्मा उससे अनंत-गुणा अधिक, योग-आत्मा उससे विशेषाधिक, वीर्य-आत्मा उससे विशेषाधिक, उपयोग-आत्मा, द्रव्य-आत्मा और दर्शन-आत्मा—ये तीनों वीर्य-आत्मा से विशेषाधिक और परस्पर तुल्य हैं।

ज्ञान-दर्शन का आत्मा के साथ भेदाभेद-पद

२०६. भंते ! आत्मा ज्ञान है ? अथवा आत्मा से भिन्न कोई ज्ञान है ?

गौतम ! आत्मा स्यात् ज्ञान है, स्यात् अज्ञान है। ज्ञान नियमतः आत्मा है।

२०७. भंते ! क्या नैरयिकों की आत्मा ज्ञान है ? अथवा नैरयिकों की आत्मा से भिन्न कोई ज्ञान है ?

गौतम ! नैरयिकों की आत्मा स्यात् ज्ञान है, स्यात् अज्ञान है। उनका ज्ञान नियमतः आत्मा है। इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमार देवों की वक्तव्यता।

२०८. भंते ! पृथ्वीकायिक-जीवों की आत्मा अज्ञान है? पृथ्वीकायिक जीवों की आत्मा से भिन्न कोई अज्ञान है ?

गौतम ! पृथ्वीकायिक जीवों की आत्मा नियमतः अज्ञान है, उनका अज्ञान भी नियमतः आत्मा है।

इसी प्रकार यावत् वनस्पतिकायिक जीवों की वक्तव्यता। द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय यावत् वैमानिक देवों की नैरयिकों की भांति वक्तव्यता।

२०९. भंते ! क्या आत्मा दर्शन है ? क्या आत्मा से भिन्न कोई दर्शन है ?

गौतम ! आत्मा नियमतः दर्शन है, दर्शन भी नियमतः आत्मा है।

२१०. भंते ! क्या नैरयिकों की आत्मा दर्शन है ? क्या नैरयिकों की आत्मा से भिन्न कोई दर्शन है ?

गौतम ! नैरयिकों की आत्मा नियमतः दर्शन है, उनका दर्शन भी नियमतः आत्मा है। इसी प्रकार यावत् वैमानिक-देवों तक, निरन्तर दंडक वक्तव्य है।

स्याद्वाद-पद

२११. भंते! रत्नप्रभा-पृथ्वी आत्मा है ? रत्नप्रभा-पृथ्वी से भिन्न कोई आत्मा है?

गौतम ! रत्नप्रभा-पृथ्वी स्यात् आत्मा है, स्यात् नो-आत्मा है—आत्मा नहीं है, स्यात् अवक्तव्य—आत्मा और नो-आत्मा—दोनों को एक साथ कहना शक्य नहीं है।

२१२. भंते ! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—रत्नप्रभा-पृथ्वी स्यात् आत्मा है, स्यात् नो-आत्मा है, स्यात् अवक्तव्य—आत्मा और नो-आत्मा—दोनों को एक साथ कहना शक्य नहीं है?

गौतम ! स्व-पर्याय की अपेक्षा आत्मा है, पर-पर्याय की अपेक्षा आत्मा नहीं है, स्व-पर्याय और पर-पर्याय की अपेक्षा अवक्तव्य है—रत्नप्रभा-पृथ्वी—आत्मा और नो-आत्मा—दोनों को एक साथ कहना शक्य नहीं है।

गौतम ! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—रत्नप्रभा-पृथ्वी स्यात् आत्मा है, स्यात् नो-आत्मा है, स्यात् अवक्तव्य—आत्मा और नो-आत्मा दोनों को एक साथ कहना शक्य नहीं है ।

२१३. भंते ! शर्करा-प्रभा पृथ्वी आत्मा है ?

रत्नप्रभा-पृथ्वी की भांति शर्करा-प्रभा पृथ्वी की वक्तव्यता। इसी प्रकार यावत् अधःसप्तमी-पृथ्वी की वक्तव्यता।

२१४. भंते ! सौधर्म-कल्प आत्मा है?—पृच्छा।

गौतम ! सौधर्म-कल्प स्यात् आत्मा है, स्यात् नो-आत्मा है, स्यात् अवक्तव्य—आत्मा और नो-आत्मा दोनों को एक साथ कहना शक्य नहीं है।

२१५. भंते ! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है, यावत् आत्मा और नो- आत्मा दोनों को एक साथ कहना शक्य नहीं है ?

गौतम ! स्व-पर्याय की अपेक्षा आत्मा है, पर-पर्याय की अपेक्षा नो-आत्मा है, दोनों की अपेक्षा अवक्तव्य—आत्मा और नो-आत्मा दोनों एक साथ कहना शक्य नहीं है। इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है यावत् आत्मा और नो-आत्मा दोनों को एक साथ कहना शक्य नहीं हैं। इसी प्रकार यावत् अच्युत-कल्प की वक्तव्यता।

२१६. भंते ! ग्रैवेयक-विमान आत्मा है? ग्रैवेयक-विमान से भिन्न कोई आत्मा है?

इसी प्रकार रत्न-प्रभा की भांति वक्तव्यता। इसी प्रकार अनुत्तरविमान की भी, इसी प्रकार ईषत्प्राग्भारा-पृथ्वी की भी वक्तव्यता।

२१७. भंते! परमाणु-पुद्गल आत्मा है ? परमाणु-पुद्गल से भिन्न कोई आत्मा है ?

जैसे सौधर्म-कल्प की वक्तव्यता, वैसे परमाणु-पुद्गल की वक्तव्यता।

२१८. भंते ! द्विप्रदेशिक स्कंध आत्मा है ? द्विप्रदेशिक स्कंध से भिन्न कोई आत्मा है ?

गौतम ! द्विप्रदेशिक स्कंध १. स्यात् आत्मा है।

२. स्यात् नो-आत्मा है।

३. स्यात् अवक्तव्य है—आत्मा और नो-आत्मा दोनों को एक साथ कहना शक्य नहीं है।

४. स्यात् आत्मा और नो-आत्मा है।

५. स्यात् आत्मा और अवक्तव्य है—आत्मा और नो-आत्मा दोनों को एक साथ कहना शक्य नहीं है।

६. स्यात् नो-आत्मा और अवक्तव्य है—आत्मा और नो-आत्मा दोनों को एक साथ कहना शक्य नहीं है।

२१९. भंते ! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—इसी प्रकार पूर्ववत् यावत् नो-आत्मा और अवक्तव्य—आत्मा और नो-आत्मा दोनों को एक साथ कहना शक्य नहीं है?

गौतम ! १. स्व-पर्याय की अपेक्षा आत्मा है।

२. पर-पर्याय की अपेक्षा से नो-आत्मा है।

३. दोनों की अपेक्षा द्विप्रदेशी स्कंध अवक्तव्य है—आत्मा और नो-आत्मा—दोनों को एक साथ कहना शक्य नहीं है।

४. द्विप्रदेशी स्कंध का देश सद्भाव-पर्याय के रूप में आदिष्ट है, उसका देश असद्भाव--पर्याय के रूप में आदिष्ट है, इस प्रकार द्विप्रदेशी स्कंध आत्मा भी है, नो-आत्मा भी है।

५. उसका देश सद्भाव-पर्याय के रूप में आदिष्ट है और उसका देश तदुभय-पर्याय के रूप में आदिष्ट है, इस प्रकार द्विप्रदेशी स्कंध आत्मा है और अवक्तव्य है—आत्मा और नो-आत्मा दोनों को एक साथ कहना शक्य नहीं है।

६. उसका देश असद्भाव-पर्याय के रूप में आदिष्ट है, उसका देश तदुभय-पर्याय के रूप में आदिष्ट है, इसलिए द्विप्रदेशी स्कंध नो-आत्मा और अवक्तव्य है—आत्मा और नो-आत्मा दोनों को एक साथ कहना शक्य नहीं है।

इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है। यावत् नो-आत्मा है और अवक्तव्य है—आत्मा और नो-आत्मा दोनों को एक साथ कहना शक्य नहीं है।

२२०. भंते ! त्रिप्रदेशिक स्कंध आत्मा है ? त्रिप्रदेशिक स्कंध से भिन्न कोई आत्मा है ?

गौतम ! त्रिप्रदेशिक स्कंध १. स्यात् आत्मा है।

२. स्यात् नो-आत्मा है।

३. स्यात् अवक्तव्य है—आत्मा और नो-आत्मा—दोनों को एक साथ कहना शक्य नहीं है।

४. स्यात् आत्मा है, और नो-आत्मा है।

५. स्यात् आत्मा है, और नो-आत्मा हैं।

६. स्यात् आत्मा हैं, और नो-आत्मा है।

७. स्यात् आत्मा है और अवक्तव्य है—आत्मा और नो-आत्मा—दोनों को एक साथ कहना शक्य नहीं है।

८. स्यात् आत्मा है और अवक्तव्य हैं—आत्मा हैं और नो-आत्मा हैं—दोनों को एक साथ कहना शक्य नहीं है।

९. स्यात् आत्मा हैं और अवक्तव्य है—आत्मा और नो-आत्मा—दोनों को एक साथ कहना शक्य नहीं है।

१०. स्यात् नो-आत्मा है और अवक्तव्य है—आत्मा और नो-आत्मा—दोनों को एक साथ कहना शक्य नहीं है।

११. स्यात् नो-आत्मा है और अवक्तव्य हैं—आत्मा हैं और नो आत्मा हैं—इन दोनों को एक साथ कहना शक्य नहीं है।

१२. स्यात् नो-आत्मा हैं और अवक्तव्य है—आत्मा और नो-आत्मा—दोनों को एक साथ कहना शक्य नहीं है।

१३. स्यात् आत्मा है, नो-आत्मा है और अवक्तव्य है—आत्मा और नो आत्मा— दोनों को एक साथ कहना शक्य नहीं है।

२२१. भंते ! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—त्रिप्रदेशिक स्कंध स्यात् आत्मा है इस प्रकार उच्चारितव्य है यावत् स्यात् आत्मा है, नो-आत्मा है और अवक्तव्य है—आत्मा और नो आत्मा—दोनों को एक साथ कहना शक्य नहीं है ?

गौतम ! १. स्व-पर्याय की अपेक्षा आत्मा है।

२. पर-पर्याय की अपेक्षा आत्मा नहीं है।

३. दोनों की अपेक्षा अवक्तव्य है—आत्मा और नो आत्मा—दोनों को एक साथ कहना शक्य नहीं है।

४. त्रिप्रदेशिक स्कंध का देश सद्भाव-पर्याय के रूप में आदिष्ट है, उसका देश असद्भाव--पर्याय के रूप में आदिष्ट है, इसलिए त्रि-प्रदेशी स्कंध आत्मा भी है, नो-आत्मा भी है।

५. त्रिप्रदेशिक स्कंध के देश सद्भाव-पर्याय के रूप में आदिष्ट हैं, उसके देश असद्भाव--पर्याय के रूप में आदिष्ट हैं, इसलिए त्रिप्रदेशी स्कंध आत्मा भी है, नो-आत्मा भी हैं।

६. त्रिप्रदेशिक स्कंध के देश सद्भाव-पर्याय के रूप में आदिष्ट हैं, उसका देश असद्भाव--पर्याय के रूप में आदिष्ट है, इसलिए त्रिप्रदेशिक स्कंध आत्मा भी है, नो-आत्मा भी है।

७. त्रिप्रदेशिक स्कंध का देश सद्भाव-पर्याय के रूप में आदिष्ट है, उसका देश तदुभय--पर्याय के रूप में आदिष्ट है, इसलिए त्रिप्रदेशिक स्कंध आत्मा है और अवक्तव्य है—आत्मा और नो-आत्मा—दोनों को एक साथ कहना शक्य नहीं है।

८. त्रिप्रदेशिक स्कंध का देश सद्भाव-पर्याय के रूप में आदिष्ट है, उसके देश तदुभय-पर्याय के रूप में आदिष्ट हैं, इसलिए त्रिप्रदेशिक स्कंध आत्मा है और अवक्तव्य हैं—आत्मा और नो-आत्मा दोनों को एक साथ कहना शक्य नहीं है।

९. त्रिप्रदेशिक स्कंध के देश सद्भाव-पर्याय के रूप में आदिष्ट हैं, उसका देश तदुभय-पर्याय के रूप में आदिष्ट है, इसलिए त्रिप्रदेशिक स्कंध आत्मा है और अवक्तव्य है—आत्मा और नो-आत्मा—दोनों को एक साथ कहना शक्य नहीं है।

१०. त्रिप्रदेशिक स्कंध का देश असद्भाव-पर्याय के रूप में आदिष्ट है, उसका देश तदुभय-पर्याय के रूप में आदिष्ट है, इसलिए त्रिप्रदेशिक स्कंध नो-आत्मा है और अवक्तव्य है—आत्मा और नो आत्मा—दोनों को एक साथ कहना शक्य नहीं है।

११. त्रिप्रदेशिक स्कंध का देश असद्भाव-पर्याय के रूप में आदिष्ट है, उसके देश तदुभय-पर्याय के रूप में आदिष्ट हैं, इसलिए त्रिप्रदेशिक स्कंध नो-आत्मा है और अवक्तव्य हैं—आत्मा और नो आत्मा दोनों को एक साथ कहना शक्य नहीं है।

१२. त्रिप्रदेशिक स्कंध के देश असद्भाव-पर्याय के रूप में आदिष्ट हैं, उसका देश तदुभय-पर्याय के रूप में आदिष्ट है, इसलिए त्रिप्रदेशिक स्कंध नो-आत्मा हैं और अवक्तव्य है—आत्मा और नो-आत्मा—दोनों को एक साथ कहना शक्य नहीं है।

१३. त्रिप्रदेशिक स्कंध का देश सद्भाव-पर्याय के रूप में आदिष्ट है, उसका देश असद्भाव-पर्याय के रूप में आदिष्ट है, उसका देश तदुभय-पर्याय के रूप में आदिष्ट है, इसलिए त्रिप्रदेशिक स्कंध आत्मा है, नो-आत्मा है और अवक्तव्य है—आत्मा और नो-आत्मा दोनों को एक साथ कहना शक्य नहीं है।

गौतम ! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है–त्रिप्रदेशिक स्कंध स्यात् आत्मा है पूर्ववत् यावत् (आत्मा) नो-आत्मा दोनों को एक साथ कहना शक्य नहीं है।

२२२. भंते ! चतुष्प्रदेशिक स्कंध आत्मा है ? चतुष्प्रदेशिक स्कंध से भिन्न कोई आत्मा है ?

गौतम! चतुष्प्रदेशिक स्कंध—

१. स्यात् आत्मा है।

२. स्यात् नो-आत्मा है।

३. स्यात् अवक्तव्य है—आत्मा और नो-आत्मा दोनों को एक साथ कहना शक्य नहीं है।

४-७. स्यात् आत्मा है और नो-आत्मा है।

८-११. स्यात् आत्मा और अवक्तव्य है।

१२-१५. स्यात् नो-आत्मा है और अवक्तव्य है।

१६. स्यात् आत्मा है, नो-आत्मा है और अवक्तव्य है—आत्मा और नो-आत्मा दोनों को एक साथ कहना शक्य नहीं है ।

१७. स्यात् आत्मा है, नो-आत्मा है और अवक्तव्य है—आत्मा और नो-आत्मा—दोनों को एक साथ कहना शक्य नहीं है।

१८. स्यात् आत्मा है, नो-आत्मा हैं और अवक्तव्य है—आत्मा और नो-आत्मा—दोनों को एक साथ कहना शक्य नहीं है।

१९. स्यात् आत्मा हैं, नो-आत्मा है और अवक्तव्य है—आत्मा और नो- आत्मा—दोनों को एक साथ कहना शक्य नहीं है।

२२३. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—चतुष्प्रदेशिक स्कंध स्यात् आत्मा, नो--आत्मा और अवक्तव्य—आत्मा और नो-आत्मा—दोनों को एक साथ कहना शक्य नहीं है—पूर्ववत् वही अर्थ प्रत्युच्चारित है?

गौतम! १. स्व-पर्याय की अपेक्षा आत्मा है।

२. पर-पर्याय की अपेक्षा नो-आत्मा (आत्मा नहीं) है।

३. दोनों की अपेक्षा अवक्तव्य है—आत्मा और नो-आत्मा—दोनों को एक साथ कहना शक्य नहीं है।

४-७. चतुष्प्रदेशी स्कंध का देश सद्भाव-पर्याय के रूप में आदिष्ट है, उसका देश असद्भाव-पर्याय के रूप में आदिष्ट है—इस प्रकार चार भंग होते हैं।

८-११. सद्भाव-पर्याय और तदुभय-पर्याय की अपेक्षा चार भंग।

१२-१५. असद्भाव-पर्याय और तदुभय-पर्याय की अपेक्षा चार भंग।

१६. चतुष्प्रदेशिक स्कंध का देश सद्भाव-पर्याय के रूप में आदिष्ट है, उसका देश असद्भाव-पर्याय के रूप में आदिष्ट है, उसका देश तदुभय-पर्याय के रूप में आदिष्ट है, इसलिए चतुष्प्रदेशिक स्कंध आत्मा है, नो-आत्मा है और अवक्तव्य है—आत्मा और नो--आत्मा—दोनों को एक साथ कहना शक्य नहीं है।

१७. चतुष्प्रदेशिक स्कंध का देश सद्भाव-पर्याय के रूप में आदिष्ट है, उसका देश असद्भाव-पर्याय के रूप में आदिष्ट है, उसके देश तदुभय पर्याय के रूप में आदिष्ट हैं, इसलिए चतुष्प्रदेशिक स्कंध आत्मा है, नो-आत्मा है और अवक्तव्य हैं—आत्मा और नो--आत्मा—दोनों को एक साथ कहना शक्य नहीं है।

१८. चतुष्प्रदेशिक स्कंध का देश सद्भाव-पर्याय के रूप में आदिष्ट है, उसके देश असद्भाव-पर्याय के रूप में आदिष्ट हैं, उसका देश तदुभय-पर्यव के रूप में आदिष्ट है, इसलिए चतुष्प्रदेशी स्कंध आत्मा है, नो-आत्मा हैं और अवक्तव्य है—आत्मा और नो--आत्मा—दोनों को एक साथ कहना शक्य नहीं है।

१९. चतुष्प्रदेशिक स्कंध के देश सद्भाव-पर्याय के रूप में आदिष्ट हैं, उसका देश असद्भाव-पर्याय के रूप में आदिष्ट है, उसका देश तदुभय-पर्याय के रूप में आदिष्ट है, इसलिए चतुष्प्रदेशिक स्कंध आत्मा हैं, नो-आत्मा है और अवक्तव्य है—आत्मा और नो--आत्मा—दोनों को एक साथ कहना शक्य नहीं है।

गौतम! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—चतुष्प्रदेशिक स्कंध स्यात् आत्मा है, स्यात् नो--आत्मा है, स्यात् अवक्तव्य है—निक्षेप में वे ही भंग उच्चारणीय हैं यावत् आत्मा और नो-

-आत्मा—दोनों को एक साथ कहना शक्य नहीं है।

२२४. भंते! पांच-प्रदेशी स्कंध आत्मा है? पांच-प्रदेशी स्कंध से भिन्न कोई आत्मा है?

गौतम! पांच-प्रदेशी स्कंध—

१. स्यात् आत्मा है।

२. स्यात् नो-आत्मा है।

३. स्यात् अवक्तव्य है—आत्मा और नो आत्मा—दोनों को एक साथ कहना शक्य नहीं है।

४-७. स्यात् आत्मा है और नो-आत्मा है।

८-११. स्यात् आत्मा है और अवक्तव्य है।

१२-१५. स्यात् नो-आत्मा है और अवक्तव्य है।

१६. स्यात् आत्मा है, नो-आत्मा है और अवक्तव्य है।

१७. स्यात् आत्मा है, नो-आत्मा है और अवक्तव्य हैं।

१८. स्यात् आत्मा है, नो-आत्मा हैं और अवक्तव्य है।

१९. स्यात् आत्मा है, नो-आत्मा हैं और अवक्तव्य हैं।

२०. स्यात् आत्मा हैं, नो-आत्मा है और अवक्तव्य है।

२१. स्यात् आत्मा हैं, नो-आत्मा है और अवक्तव्य हैं।

२२. स्यात् आत्मा हैं, नो-आत्मा हैं और अवक्तव्य है।

२२५. भंते! किस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—पांच-प्रदेशी स्कंध स्यात् आत्मा है यावत् स्यात् आत्मा हैं, नो आत्मा हैं और अवक्तव्य है?

गौतम! १. स्व-पर्याय की अपेक्षा आत्मा है।

२. पर-पर्याय की अपेक्षा नो-आत्मा है।

३. तदुभय-पर्याय की अपेक्षा अवक्तव्य है।

४. पंच-प्रदेशी स्कंध का एक देश सद्भाव-पर्याय के रूप में आदिष्ट है, एक देश असद्भाव पर्याय के रूप में आदिष्ट है।

इस प्रकार द्विक्-संयोग में सर्व-भंग आते हैं। त्रिक-संयोग में एक—आठवां भंग नहीं आता।

षट्-प्रदेशी स्कंध में सर्व-भंग आते हैं। जैसे— षट्-प्रदेशी स्कंध की वक्तव्यता, इसी प्रकार यावत् अनंत-प्रदेशी स्कंध की वक्तव्यता।

२२६. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है, यावत् विहरण करने लगे।

• • •

तेरहवां शतक

पहला उद्देशक

संग्रहणी गाथा

१. पृथ्वी २. देव ३. अनंतर ४. पृथ्वी ५. आहार ६. उपपात ७. भाषा ८-९. कर्म, अनगार, केआघड़िया १०. समुद्घात।

संख्येय-विस्तृत नरकों में उपपात-पद

१. राजगृह नगर यावत् गौतम ने इस प्रकार कहा—भंते! पृथ्वियां कितनी प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! पृथ्वियां सात प्रज्ञप्त हैं, जैसे—रत्नप्रभा यावत् अधःसप्तमी।

२. भंते! इस रत्नप्रभा-पृथ्वी के कितने लाख नरकावास प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! तीस लाख नरकावास प्रज्ञप्त हैं।

भंते! क्या वे संख्येय योजन विस्तार वाले हैं? असंख्येय योजन विस्तार वाले हैं?

गौतम! संख्येय योजन विस्तार वाले भी हैं, असंख्येय योजन विस्तार वाले भी हैं।

३. भंते ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी के तीस लाख नरकावासों में से, संख्येय विस्तार वाले नरकों में एक समय में—१. कितने नैरयिक उपपन्न होते हैं? २. कितने कापोत-लेश्या वाले उपपन्न होते हैं? ३. कितने कृष्णपाक्षिक उपपन्न होते हैं? ४. कितने शुक्लपाक्षिक उपपन्न होते हैं? ५. कितने संज्ञी उपपन्न होते हैं? ६. कितने असंज्ञी उपपन्न होते हैं? ७. कितने भवसिद्धिक उपपन्न होते हैं ८. कितने अभवसिद्धिक उपपन्न होते हैं? ९. कितने आभिनिबोधिक-ज्ञानी उपपन्न होते हैं? १०. कितने श्रुत-ज्ञानी उपपन्न होते हैं? ११. कितने अवधि-ज्ञानी उपपन्न होते हैं? १२. कितने मति-अज्ञानी उपपन्न होते हैं? १३. कितने श्रुत-अज्ञानी उपपन्न होते हैं? १४. कितने विभंग-ज्ञानी उपपन्न होते हैं? १५. कितने चक्षु-दर्शनी उपपन्न होते हैं?१६. कितने अचक्षु-दर्शनी उपपन्न होते हैं? १७. कितने अवधि-दर्शनी उपपन्न होते हैं? १८. कितने आहार-संज्ञा-उपयुक्त उपपन्न होते हैं? १९. कितने भय-संज्ञा-उपयुक्त उपपन्न होते हैं? २०. कितने मैथुन-संज्ञा-उपयुक्त उपपन्न होते हैं? २१. कितने परिग्रह-संज्ञा-उपयुक्त उपपन्न होते हैं? २२. कितने स्त्री-वेदक उपपन्न होते हैं? २३. कितने पुरुष-वेदक उपपन्न होते हैं? २४. कितने नपुंसक-वेदक उपपन्न होते हैं? २५-२८. कितने क्रोध-कषाय वाले उपपन्न होते हैं? यावत् कितने लोभ-कषाय वाले उपपन्न होते हैं? २९-३३. कितने श्रोत्रेन्द्रिय--उपयुक्त उपपन्न होते ह? यावत् कितने स्पर्शनेन्द्रिय-उपयुक्त उपपन्न होते हैं? ३४. कितने

नो-इन्द्रिय-उपयुक्त उपपन्न होते हैं? ३५. कितने मन-योग वाले उपपन्न होते हैं? ३६. कितने वचन-योग वाले उपपन्न होते हैं? ३७. कितने काय-योग वाले उपपन्न होते हैं? ३८. कितने साकार-उपयोग वाले उपपन्न होते हैं? ३९. कितने अनाकार-उपयोग वाले उपपन्न होते हैं?

गौतम! इस रत्नप्रभा-पृथ्वी के तीस लाख नरकावासों में से संख्येय विस्तार वाले नरकों में १. जघन्यतः एक, दो अथवा तीन, उत्कृष्टतः संख्येय नैरयिक उपपन्न होते हैं। २. जघन्यतः एक, दो अथवा तीन, उत्कृष्टतः संख्येय कापोत-लेश्या वाले उपपन्न होते हैं। ३. जघन्यतः एक, दो अथवा तीन उत्कृष्टतः संख्येय कृष्णपाक्षिक उपपन्न होते हैं। ४-१४. इसी प्रकार शुक्लपाक्षिक भी, इसी प्रकार संज्ञी, असंज्ञी, भव-सिद्धिक, अभव-सिद्धिक, आभिनिबोधिक-ज्ञानी, श्रुत-ज्ञानी, अवधि-ज्ञानी, मति-अज्ञानी, श्रुत-अज्ञानी, विभंग-ज्ञानी की वक्तव्यता। १५. चक्षु-दर्शनी उपपन्न नहीं होते १६. जघन्यतः एक, दो अथवा तीन, उत्कृष्टतः संख्येय अचक्षु-दर्शनी उपपन्न होते हैं। १७. इसी प्रकार अवधि-दर्शनी भी। १८-२१. इसी प्रकार आहार-संज्ञा-उपयुक्त यावत् परिग्रह-संज्ञा-उपयुक्त भी। २३. स्त्री--वेदक उपपन्न नहीं होते २३. पुरुष-वेदक उपपन्न नहीं होते। २४. जघन्यतः एक, दो अथवा तीन, उत्कृष्टतः संख्येय नपुंसक-वेदक उपपन्न होते हैं। २५-२८. इसी प्रकार क्रोध-कषाय वाले यावत् लोभ-कषाय वाले उपपन्न होते हैं। २९-३३. श्रोत्रेन्द्रिय-उपयुक्त उपपन्न नहीं होते यावत् स्पर्शनेन्द्रिय-उपयुक्त उपपन्न नहीं होते। ३४. जघन्यतः एक, दो अथवा तीन उत्कृष्टतः संख्येय नोइन्द्रिय-उपयुक्त उपपन्न होते हैं। ३५-३६ मन-योग वाले उपपन्न नहीं होते। इसी प्रकार वचन-योग वाले भी। ३७. जघन्यतः एक, दो अथवा तीन, उत्कृष्टतः संख्येय काय-योग वाले उपपन्न होते हैं। ३८-३९. इसी प्रकार साकार-उपयोग वाले भी, अनाकार-उपयोग वाले भी।

संख्येय-विस्तृत नरकों में उद्वर्तन-पद

४. भंते! इस रत्नप्रभा-पृथ्वी के तीस लाख नरकावासों में से संख्येय-विस्तृत नरकों में कितने नैरयिक उद्वर्तन करते हैं? कितने कापोत-लेश्या वाले उद्वर्तन करते हैं यावत् कितने अनाकार-उपयोग वाले उद्वर्तन करते हैं?

गौतम! इस रत्नप्रभा-पृथ्वी के तीस लाख नरकावासों में से संख्येय-विस्तृत नरकों में एक समय में जघन्यतः एक, दो अथवा तीन, उत्कृष्टतः संख्येय नैरयिक उद्वर्तन करते हैं। जघन्यतः एक, दो अथवा तीन, उत्कृष्टतः संख्येय कापोत-लेश्या वाले उद्वर्तन करते हैं। इसी प्रकार यावत् संज्ञी। असंज्ञी उद्वर्तन नहीं करते। जघन्यतः एक, दो अथवा तीन, उत्कृष्टतः संख्येय भवसिद्धिक उद्वर्तन करते हैं।

इसी प्रकार यावत् श्रुत-अज्ञानी की वक्तव्यता। विभंग-ज्ञानी उद्वर्तन नहीं करते, चक्षुदर्शनी उद्वर्तन नहीं करते। जघन्यतः एक, दो अथवा तीन, उत्कृष्टतः संख्येय अचक्षु-दर्शनी उद्वर्तन करते हैं। इसी प्रकार यावत् लोभ-कषाय वाले। श्रोत्रेन्द्रिय-उपयुक्त उद्वर्तन नहीं करते, इसी प्रकार यावत् स्पर्शनेन्द्रिय-उपयुक्त उद्वर्तन नहीं करते। जघन्यतः एक, दो अथवा तीन, उत्कृष्टतः नो-इन्द्रिय-उपयुक्त उद्वर्तन करते हैं। मन-योग वाले उद्वर्तन नहीं करते,

इसी प्रकार वचन-योग वाले भी। जघन्यतः एक, दो अथवा तीन, उत्कृष्टतः संख्येय काय-योग वाल उद्वर्तन करते हैं। इसी प्रकार साकार-उपयोग वाले, अनाकार-उपयोग वाले की वक्तव्यता।

संख्येय-विस्तृत नरकों में सत्ता-पद

५. भंते! इस रत्नप्रभा-पृथ्वी के तीस लाख नरकावासों में से संख्येय-विस्तृत नरकों में कितने नैरयिक प्रज्ञप्त हैं? कितने कापोत-लेश्या वाले यावत् कितने अनाकार-उपयोग वाले प्रज्ञप्त हैं ? कितने अनन्तर-उपपन्नक—प्रथम समय में उपपन्न होने वाले प्रज्ञप्त है ? कितने परंपर-उपपन्नक—द्वितीय आदि समय में उपपन्न होने वाले प्रज्ञप्त हैं ? कितने अनंतर अवगाढ—अवगाहन करने वाले प्रज्ञप्त हैं? कितने परंपर-अवगाढ प्रज्ञप्त हैं? कितने अनंतर-आहार वाले प्रज्ञप्त हैं? कितने परंपर-आहार वाले प्रज्ञप्त हैं? कितने अनंतर-पर्याप्तक प्रज्ञप्त हैं? कितने परंपर-पर्याप्तक प्रज्ञप्त हैं? कितने चरम-भव वाले प्रज्ञप्त हैं? कितने अचरम-भव वाले प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! इस रत्नप्रभा-पृथ्वी के तीस लाख नरकावासों में से संख्येय-विस्तृत नरकों में संख्येय नैरयिक प्रज्ञप्त हैं, संख्येय कापोत-लेश्या वाले प्रज्ञप्त हैं, इसी प्रकार यावत् संख्येय संज्ञी प्रज्ञप्त हैं। असंज्ञी स्यात् है, स्यात् नहीं है। यदि है तो जघन्यतः एक, दो अथवा तीन उत्कृष्टतः संख्येय प्रज्ञप्त हैं। संख्येय भव-सिद्धिक प्रज्ञप्त हैं। इसी प्रकार यावत् संख्येय परिग्रह-संज्ञा-उपयुक्त प्रज्ञप्त हैं। स्त्री-वेदक नहीं हैं, पुरुष-वेदक नहीं हैं, संख्येय नपुंसक-वेदक प्रज्ञप्त हैं। इसी प्रकार क्रोध-कषाय वाले, मान-कषाय वाले असंज्ञी की भांति प्रज्ञप्त हैं, इसी प्रकार यावत् लोभ-कषाय वाले। संख्येय श्रोत्रेन्द्रिय-उपयुक्त प्रज्ञप्त हैं, इसी प्रकार यावत् स्पर्शनेन्द्रिय-उपयुक्त प्रज्ञप्त हैं। नोइंद्रिय-उपयुक्त असंज्ञी की भांति प्रज्ञप्त हैं। संख्येय मन-योग वाले प्रज्ञप्त हैं। इसी प्रकार यावत् अनाकार- उपयोग वाले प्रज्ञप्त हैं। अनंतर-उपपन्नक स्यात् हैं, स्यात् नहीं हैं। यदि हैं तो असंज्ञी की भांति प्रज्ञप्त हैं। संख्येय परंपर-उपपन्नक प्रज्ञप्त हैं। इसी प्रकार अनंतर-उपपन्नक की भांति अनंतर-अवगाढक अनंतर-आहार वाले, अनंतर-पर्याप्तक प्रज्ञप्त हैं। परंपर-अवगाढक यावत् अचरम भव वाले परंपर-उपपन्नक की भांति प्रज्ञप्त हैं।

६. भंते! इस रत्नप्रभा-पृथ्वी के तीस लाख नरकावासों में से असंख्येय-विस्तृत नरकों में एक समय में कितने नैरयिक उपपन्न होते हैं यावत् कितने अनाकार- उपयोग वाले उपपन्न होते हैं?

गौतम! इस रत्नप्रभा-पृथ्वी के तीस लाख नरकावासों में से असंख्येय-विस्तृत नरकों में एक समय में जघन्यतः एक, दो अथवा तीन, उत्कृष्टतः असंख्येय नैरयिक उपपन्न होते हैं। इसी प्रकार संख्येय-विस्तृत नरकों के तीन गमक की भांति असंख्येय-विस्तृत नरकों के तीन गमक वक्तव्य हैं, इतना विशेष है—संख्येय के स्थान पर असंख्येय वक्तव्य है। शेष पूर्ववत् यावत् असंख्येय अचरम भव वाले प्रज्ञप्त हैं, इतना विशेष है—संख्येय-विस्तृत और असंख्येय-विस्तृत नरकों में भी अवधि-ज्ञानी और अवधि-दर्शनी संख्येय उद्वर्तन करते हैं।

७. भंते! शर्कराप्रभा-पृथ्वी के कितन लाख नरकावास प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! पच्चीस लाख नरकावास प्रज्ञप्त हैं।

भंते! क्या वे संख्येय-विस्तृत हैं? असंख्येय विस्तृत हैं?

इस प्रकार जैसे रत्नप्रभा-पृथ्वी की वैसे ही शर्कराप्रभा-पृथ्वी की वक्तव्यता, इतना विशेष है—असंज्ञी के तीनों गमक वक्तव्य नहीं हैं, शेष पूर्ववत्।

८. वालुका प्रभा की पृच्छा।

गौतम! पंद्रह लाख नरकावास प्रज्ञप्त हैं। शेष शर्कराप्रभा की भांति वक्तव्य है, लेश्या में नानात्व है। लेश्या प्रथम शतक (भ. १/२४४) की भांति वक्तव्य है।

९. पंकप्रभा की पृच्छा।

गौतम! दस लाख नरकावास प्रज्ञप्त हैं। इसी प्रकार शर्कराप्रभा की भांति वक्तव्यता, इतना विशेष है—अवधि-ज्ञानी और अवधि-दर्शनी उद्वर्तन नहीं करते। शेष पूर्ववत्।

१०. धूमप्रभा की पृच्छा।

गौतम! तीन लाख नरकावास प्रज्ञप्त हैं। इसी प्रकार पंक-प्रभा की भांति वक्तव्यता।

११. भंते! तमा-पृथ्वी के कितने लाख नरकावास प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! पांच कम एक लाख (निन्यानवें हजार नौ सौ पिचानवें) नरकावास प्रज्ञप्त हैं। शेष पंक-प्रभा की भांति वक्तव्यता।

१२. भंते! अधःसप्तमी-पृथ्वी के कितने अनुत्तर, विशालतम महानरक प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! पांच अनुत्तर विशालतम महानरक प्रज्ञप्त हैं, जैसे—काल, महाकाल, रोरुक, महारोरुक और अप्रतिष्ठान।

भंते! क्या वे संख्येय-विस्तृत हैं? असंख्येय-विस्तृत हैं?

गौतम! संख्येय विस्तृत और असंख्येय विस्तृत हैं।

१३. भंते! अधःसप्तमी-पृथ्वी के पांच अनुत्तर विशालतम महानरकों में से संख्येय-विस्तृत नरकों में एक समय में कितने नैरयिक उपपन्न होते हैं?

इस प्रकार पंकप्रभा की भांति वक्तव्यता, इतना विशेष है—मति-, श्रुत- और अवधि-ज्ञानी उपपन्न नहीं होते, उद्वर्तन नहीं करते किन्तु वहां मति-, श्रुत- तथा अवधि-ज्ञान की सत्ता है। इसी प्रकार असंख्येय-विस्तृत महानरकों की वक्तव्यता, इतना विशेष है—संख्येय के स्थान पर असंख्येय वक्तव्य है।

१४. भंते! इस रत्नप्रभा-पृथ्वी के तीस लाख नरकावासों में से संख्येय-विस्तृत नरकों में क्या सम्यग्-दृष्टि नैरयिक उपपन्न होते हैं? मिथ्या-दृष्टि नैरयिक उपपन्न होते हैं? सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि नैरयिक उपपन्न होते हैं?

गौतम! सम्यग्-दृष्टि नैरयिक भी उपपन्न होते हैं, मिथ्या-दृष्टि नैरयिक भी उपपन्न होते हैं, सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि नैरयिक उपपन्न नहीं होते।

१५. भंते! इस रत्नप्रभा-पृथ्वी के तीस लाख नरकावासों में से संख्येय-विस्तृत नरकों में क्या

सम्यग्-दृष्टि नैरयिक उद्वर्तन करते हैं?

पूर्ववत्।

१६. भंते! इस रत्नप्रभा-पृथ्वी के तीस लाख नरकावासों में से संख्येय-विस्तृत नरकों में क्या सम्यग्-दृष्टि नैरयिकों का विरह होता है? मिथ्या-दृष्टि नैरयिकों का विरह होता है? सम्यग्--मिथ्या-दृष्टि नैरयिकों का विरह होता है?

गौतम! सम्यग्-दृष्टि नैरयिकों का विरह नहीं होता, मिथ्या-दृष्टि नैरयिकों का विरह नहीं होता, सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि नैरयिकों का अविरह अथवा विरह दोनों होते हैं।

इसी प्रकार असंख्येय-विस्तृत नरकों में तीन गमक वक्तव्य हैं। इसी प्रकार शर्करा-प्रभा की वक्तव्यता, इसी प्रकार यावत् तमा की वक्तव्यता।

१७. भंते! अधःसप्तमी के पांच अनुत्तर यावत् संख्येय-विस्तृत नरकों में सम्यग्-दृष्टि नैरयिकों की पृच्छा।

गौतम! सम्यग्-दृष्टि नैरयिक उपपन्न नहीं होते, मिथ्या-दृष्टि नैरयिक उपपन्न होते हैं, सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि नैरयिक उपपन्न नहीं होते। इसी प्रकार उद्वर्तन की वक्तव्यता। अविरह की रत्न-प्रभा की भांति वक्तव्यता। इसी प्रकार असंख्येय-विस्तृत नरकों में भी तीन गमक वक्तव्य हैं।

१८. भंते! वे कृष्ण-लेश्या, नील-लेश्या यावत् शुक्ल-लेश्या वाले होकर कृष्ण-लेश्या वाले नैरयिकों में उपपन्न होते हैं?

हां गौतम! कृष्ण-लेश्या में यावत् उपपन्न होते हैं।

१९. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—कृष्ण-लेश्या में यावत् उपपन्न होते हैं?

गौतम! लेश्या-स्थानों में संक्लेश होते-होते वे कृष्ण-लेश्या में परिणत होते हैं, परिणत होकर कृष्ण-लेश्या वाले नैरयिकों में उपपन्न होते हैं। इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—कृष्ण--लेश्या में यावत् उपपन्न होते हैं।

२०. भंते! वे कृष्ण-लेश्या यावत् शुक्ल-लेश्या वाले होकर नील-लेश्या वाले नैरयिकों में उपपन्न होते हैं?

हां गौतम! नील-लेश्या में यावत् उपपन्न होते हैं।

२१. यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—नील-लेश्या में यावत् उपपन्न होते हैं?

गौतम! लेश्या-स्थान में संक्लेश होते-होते अथवा विशुद्धि होते होते नील-लेश्या में परिणत होते हैं। परिणत होकर नील-लेश्या वाले नैरयिकों में उपपन्न होते हैं। गौतम! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—नील-लेश्या में यावत् उपपन्न होते हैं।

२२. भंते! वे कृष्ण-लेश्या, नील-लेश्या यावत् शुक्ल-लेश्या वाले होकर कापोत-लेश्या वाले नैरयिकों में उपपन्न होते हैं?

गौतम! इस प्रकार नील-लेश्या वाले नैरयिकों की भांति कापोत-लेश्या वाले नैरयिक भी

वक्तव्य हैं यावत् इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—कापोत-लेश्या में यावत् उपपन्न होते हैं।

२३. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

दूसरा उद्देशक

२४. भंते! देव के कितने प्रकार प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! देव के चार प्रकार प्रज्ञप्त हैं, जैसे—भवनवासी, वाणमंतर, ज्योतिष्क, वैमानिक।

२५. भंते! भवनवासी-देव के कितने प्रकार प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! दस प्रकार प्रज्ञप्त हैं, जैसे असुरकुमार—इसी प्रकार भेद द्वितीय शतक के देव उद्देशक (**भ.** २/११७) की भांति यावत् अपराजित, सर्वार्थसिद्धक।

२६. भंते! असुरकुमारों के कितने लाख आवास प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! असुरकुमारों के आवास चौसठ लाख प्रज्ञप्त हैं।

भंते! क्या वे संख्येय-विस्तृत हैं? असंख्येय विस्तृत हैं?

गौतम! संख्येय-विस्तृत भी हैं, असंख्येय विस्तृत भी हैं।

२७. भंते! असुरकुमार के चौसठ लाख आवासों में से संख्येय-विस्तृत असुरकुमारों के आवासों में एक समय में कितने असुरकुमार उपपन्न होते हैं? यावत् कितने तेजोलेश्या वाले उपपन्न होते हैं? कितने कृष्णपाक्षिक उपपन्न होते हैं? इस प्रकार रत्नप्रभा की भांति वही पृच्छा और वही व्याकरण, इतना विशेष है—दो वेद वाले उपपन्न होते हैं, नपुंसक-वेदक उपपन्न नहीं होते। शेष पूर्ववत्।

उद्वर्तना भी रत्नप्रभा की भांति वक्तव्य है, इतना विशेष है—असंज्ञी के रूप में उद्वर्तन करते हैं। अवधि-ज्ञानी, अवधि-दर्शनी उद्वर्तन नहीं करते। शेष पूर्ववत् किन्तु वहां अवधि-ज्ञान और अवधि-दर्शन की सत्ता है, इतना विशेष है—संख्येय स्त्री-वेदक प्रज्ञप्त हैं, इसी प्रकार पुरुष-वेदक भी। नपुंसक-वेदक नहीं हैं। क्रोध-कषाय वाले स्यात् हैं, स्यात् नहीं हैं। यदि हैं तो जघन्यतः एक, दो अथवा तीन, उत्कृष्टतः संख्येय प्रज्ञप्त हैं। इसी प्रकार मान-कषाय वाले, माया-कषाय वाले। लोभ-कषाय वाले संख्येय प्रज्ञप्त हैं, शेष पूर्ववत्। उपपत्ति, उद्वर्तन, सत्ता—इन तीन गमकों में चार लेश्याएं वक्तव्य हैं। इसी प्रकार असंख्येय-विस्तृत असुरकुमार के आवासों की वक्तव्यता, इतना विशेष है—तीन गमकों में असंख्येय वक्तव्य हैं यावत् असंख्येय अचरम भव वाले प्रज्ञप्त हैं।

२८. भंते! नागकुमारों के आवास कितने लाख प्रज्ञप्त हैं?

इस प्रकार यावत् स्तनितकुमार की वक्तव्यता, इतना विशेष है—जहां जितने भवन (द्रष्टव्य **भगवती** १/२१३) प्रज्ञप्त हैं।

२९. *भंते! वाणमंतरों के आवास कितने लाख प्रज्ञप्त हैं?*

गौतम! वाणमंतरों के असंख्येय लाख आवास प्रज्ञप्त हैं।

भंते! क्या वे संख्येय-विस्तृत हैं? असंख्येय-विस्तृत हैं?

गौतम! संख्येय-विस्तृत हैं। असंख्येय-विस्तृत नहीं हैं।

३०. भंते! वाणमंतरों के संख्येय लाख आवासों में एक समय में कितने वाणमंतर उपपन्न होते हैं?

इस प्रकार जैसे संख्येय-विस्तृत असुरकुमारों के तीन गमक वक्तव्य हैं वैसे ही वाणमंतरों के तीन गमक वक्तव्य हैं।

३१. भंते! ज्योतिष्क-देवों के कितने लाख विमानावास प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! असंख्येय लाख विमानावास प्रज्ञप्त हैं।

भंते! क्या वे संख्येय-विस्तृत हैं?

इस प्रकार वाणमंतरों की भांति ज्योतिष्क-देवों के तीनों गमक वक्तव्य हैं, इतना विशेष है—केवल एक तेजो-लेश्या होती है। असंज्ञी का उपपात और सत्ता नहीं होती, शेष पूर्ववत्।

३२. भंते! सौधर्म-कल्प में कितने लाख विमानावास प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! बत्तीस लाख विमानावास प्रज्ञप्त हैं।

भंते! वे क्या संख्येय-विस्तृत हैं? असंख्येय-विस्तृत हैं?

गौतम! संख्येय-विस्तृत भी हैं, असंख्येय-विस्तृत भी हैं।

३३. भंते! सौधर्म-कल्प के बत्तीस लाख विमानावासों में से संख्येय-विस्तृत विमानों में एक समय में कितने सौधर्म-देव उपपन्न होते हैं? कितने तेजो-लेश्या वाले उपपन्न होते हैं?

इसी प्रकार जैसे ज्योतिष्क-देवों के तीन गमक होते हैं, वैसे ही सौधर्म-कल्प के तीन गमक वक्तव्य हैं, इतना विशेष है—तीनों में संख्येय वक्तव्य हैं, अवधि-ज्ञानी, अवधि-दर्शनी च्यवन करते हैं, शेष पूर्ववत्। असंख्येय विस्तृत में भी पूर्ववत् तीन गमक वक्तव्य हैं, इतना विशेष है—तीनों गमकों में असंख्येय की वक्तव्यता। संख्येय अवधि-ज्ञानी, अवधि-दर्शनी च्यवन करते हैं। शेष पूर्ववत्। इसी प्रकार जैसे सौधर्म की वक्तव्यता है, वैसे ही ईशान के छह गमकों की वक्तव्यता। सनत्कुमार की वक्तव्यता पूर्ववत्, इतना विशेष है—स्त्रीवेदक उपपन्न नहीं होते और उनकी सत्ता भी नहीं हैं। असंज्ञी में तीनों गमक वक्तव्य नहीं हैं, शेष पूर्ववत्। इसी प्रकार यावत् सहस्रार-कल्प की वक्तव्यता, उनके विमानों और लेश्याओं में नानात्व है, शेष पूर्ववत्।

३४. भंते! आनत-प्राणत-कल्प में कितने सौ विमानावास प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! चार सौ विमानावास प्रज्ञप्त हैं।

भंते! क्या वे संख्येय-विस्तृत हैं? असंख्येय-विस्तृत हैं?

गौतम! संख्येय-विस्तृत भी हैं, असंख्येय-विस्तृत भी हैं। इसी प्रकार संख्येय-विस्तृत तीनों गमक सहस्रार-कल्प की भांति वक्तव्य हैं। असंख्येय विस्तृत विमानावासों में संख्येय उपपन्न होते हैं और च्यवन करते हैं, किंतु वहां असंख्येय की सत्ता है, इतना विशेष है—नोइन्द्रिय-

-उपयुक्त, अनंतर-उपपन्नक, अनंतर-अवगाढक, अनंतर-आहारक और अनंतर-पर्याप्तक—ये जघन्यतः एक, दो अथवा तीन, उत्कृष्टतः संख्येय प्रज्ञप्त हैं, शेष में असंख्येय की वक्तव्यता। आरण-अच्युत पूर्ववत् आनत-प्राणत की भांति वक्तव्य हैं, विमानों में नानात्व की वक्तव्यता। इसी प्रकार ग्रैवेयक की भी वक्तव्यता।

३५. भंते! अनुत्तरविमान कितने प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! पांच अनुत्तरविमान प्रज्ञप्त हैं।

भंते! क्या वे संख्येय-विस्तृत हैं? असंख्येय-विस्तृत हैं?

गौतम! संख्येय-विस्तृत भी है, असंख्येय विस्तृत भी हैं।

३६. भंते! पांच अनुत्तरविमानों में से संख्येय-विस्तृत विमानों में एक समय में कितने अनुत्तरोपपातिक उपपन्न होते हैं? कितने शुक्ललेश्या वाले उपपन्न होते हैं—पृच्छा पूर्ववत्।

गौतम! पांच अनुत्तरविमानों में से संख्येय-विस्तृत अनुत्तरविमान में एक समय में जघन्यतः एक, दो अथवा तीन, उत्कृष्टतः संख्येय अनुत्तरोपपातिक उपपन्न होते हैं, इसी प्रकार—संख्येय-विस्तृत ग्रैवेयक विमानों की भांति वक्तव्यता, इतना विशेष है—कृष्ण-पाक्षिक, अभवसिद्धिक, तीन अज्ञान वाले न उपपन्न होते हैं, न च्यवन करते हैं, न ही वहां सत्ता की वक्तव्यता है, अचरम को छोड़कर यावत् संख्येय चरम प्रज्ञप्त हैं, शेष पूर्ववत्। असंख्येय-विस्तृत में भी इनकी वक्तव्यता नहीं है। इतना विशेष है—अचरम-भव वाले होते हैं, शेष असंख्येय-विस्तृत ग्रैवेयक-विमानों में यावत् असंख्येय अचरम-भव वाले प्रज्ञप्त हैं।

३७. भंते! असुरकुमारों के चौसठ लाख आवासों में से संख्येय-विस्तृत असुरकुमारावासों में क्या सम्यग्-दृष्टि असुरकुमार उपपन्न होते हैं? क्या मिथ्या-दृष्टि असुरकुमार उपपन्न होते हैं?

इस प्रकार जैसे रत्नप्रभा में तीन आलापक कहे गये हैं, वैसे ही वक्तव्य हैं।

इसी प्रकार असंख्येय-विस्तृत असुरकुमारावासों में तीनो गमक वक्तव्य हैं, इसी प्रकार यावत् ग्रैवेयक-विमानों की वक्तव्यता। इसी प्रकार अनुत्तर-विमानों की वक्तव्यता, इतना विशेष है—तीनों आलापकों में मिथ्या-दृष्टि, सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि वक्तव्य नहीं हैं, शेष पूर्ववत्।

३८. भंते! वे कृष्ण-लेश्या, नील-लेश्या यावत् शुक्ल-लेश्या वाले होकर कृष्ण-लेश्या वाले देवों में उपपन्न होते हैं?

हां गौतम! इसी प्रकार प्रथम उद्देशक (भ. १३/१८-२२) नैरयिकों की भांति वक्तव्य है। नील-लेश्या वाले भी नैरयिकों की भांति वक्तव्य हैं। जैसे नील-लेश्या वाले, उसी प्रकार यावत् पद्म-लेश्या वाले, शुक्ल-लेश्या वाले की वक्तव्यता। इतना विशेष है—लेश्या-स्थान की विशुद्धि होते-होते शुक्ल-लेश्या में परिणत होते हैं, परिणत होकर शुक्ल-लेश्या वाले देवों में उपपन्न होते हैं। इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—यावत् उपपन्न होते हैं।

३९. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

तीसरा उद्देशक

४०. भंते! नैरयिक अनन्तर-आहारक, उसके पश्चात् शरीर की निष्पत्ति, इसी प्रकार परिचारणा-पद (**पण्णवणा** पद ३४) निरवशेष वक्तव्य है।

४१. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

चौथा उद्देशक

नरक और नैरयिकों में अल्प-महत्-पद

४२. भंते! पृथ्वियां कितनी प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! पृथ्वियां सात प्रज्ञप्त हैं, जैसे रत्नप्रभा यावत् अधःसप्तमी।

४३. भंते! अधःसप्तमी-पृथ्वी के पांच अनुत्तर विशालतम महानरक प्रज्ञप्त हैं, जैसे—काल, महाकाल, रोरुक, महारोरुक, अप्रतिष्ठान। वे नरक षष्ठी तमा-पृथ्वी के नरकों से महत्तर—अधिक लम्बाई वाले हैं, महा-विस्तीर्णतर—अधिक चौड़ाई वाले हैं, महा-अवकाशतर हैं, महाप्रतिरिक्ततर—अधिक एकान्त वाले हैं, तमा की भांति महाप्रवेशनतर नहीं हैं, आकीर्णतर नहीं हैं, आकुलतर नहीं हैं, अनवमानतर नहीं हैं—अतिशयरूप से भरे हुए नहीं हैं।

अधःसप्तमी के नरकावासों के नैरयिक छठी तमा-पृथ्वी के नैरयिकों से महाकर्मतर हैं, महाक्रियातर हैं, महाआश्रवतर हैं, महावेदनतर हैं, वैसे अल्पकर्मतर नहीं हैं, अल्पक्रियातर नहीं हैं, अल्पआश्रवतर नहीं हैं, अल्पवेदनतर नहीं हैं, अल्पर्द्धिकतर हैं, अल्पद्युतिकतर हैं, वैसे महर्द्धिकतर नहीं हैं, महाद्युतिकतर नहीं हैं।

षष्ठी तमा-पृथ्वी के पांच कम एक लाख नौ सौ पिचानवें नरकावास प्रज्ञप्त हैं। वे नरक अधःसप्तमी पृथ्वी के नरक जैसे महत्तर नहीं हैं, महाविस्तीर्णतर नहीं हैं, महाअवकाशतर नहीं हैं, महाप्रतिरिक्ततर नहीं हैं, महाप्रवेशनतर हैं, आकीर्णतर हैं, आकुलतर हैं, अनवमानतर हैं।

उन नरकों के नैरयिक अधःसप्तमी-पृथ्वी के नैरयिकों से अल्पकर्मतर हैं, अल्पक्रियातर हैं, अल्पआश्रवतर हैं, अल्पवेदनतर हैं, वैसे महाकर्मतर नहीं हैं, महाक्रियातर नहीं हैं, महाआश्रवतर नहीं हैं, महावेदनतर नहीं हैं, महर्द्धिकतर हैं, महाद्युतिकतर हैं वैसे अल्पर्द्धिकतर नहीं हैं, अल्पद्युतिकतर नहीं हैं।

छट्ठी तमा-पृथ्वी के नरक पांचवीं धूमप्रभा-पृथ्वी के नरकों से महत्तर हैं, महा-विस्तीर्णतर हैं, महाअवकाशतर हैं, महाप्रतिरिक्ततर हैं, वैसे महाप्रवेशनतर नहीं हैं, आकीर्णतर नहीं हैं, आकुलतर नहीं हैं, अनवमानतर नहीं हैं—अतिशय-रूप से भरे हुए नहीं हैं। उन नरकों के नैरयिक पांचवीं धूमप्रभा-पृथ्वी के नैरयिकों से महाकर्मतर हैं, महाक्रियातर हैं, महाआश्रवतर हैं, महावेदनतर हैं, वैसे अल्पकर्मतर नहीं हैं, अल्पक्रियातर नहीं हैं, अल्पआश्रवतर नहीं हैं, अल्पवेदनतर नहीं हैं, अल्पर्द्धिकतर हैं, अल्पद्युतिकतर हैं, वैसे महर्द्धिकतर नहीं हैं, महाद्युतिकतर नहीं हैं।

पांचवीं धूमप्रभा-पृथ्वी के तीन लाख नरकावास प्रज्ञप्त हैं। इस प्रकार जैसे छठी नरक की

वक्तव्यता वैसे ही सात पृथ्वियां परस्पर वक्तव्य हैं यावत् रत्नप्रभा तक यावत् वैसे महर्द्धिकतर नहीं हैं, अल्प द्युतिकतर हैं।

नैरयिकों का स्पर्शानुभव-पद

४४. भंते ! रत्नप्रभा-पृथ्वी के नैरयिक किस प्रकार के पृथ्वी-स्पर्श का प्रत्यनुभव करते हुए विहरण करते हैं?

गौतम! अनिष्ट यावत् अमनोहर। इसी प्रकार यावत् अधःसप्तमी-पृथ्वी के नैरयिकों की वक्तव्यता। इसी प्रकार जल-स्पर्श, इसी प्रकार यावत् वनस्पति का स्पर्श।

नरकों का बाहल्य-क्षुद्रत्व-पद

४५. भंते ! यह रत्नप्रभा-पृथ्वी दूसरी शर्कराप्रभा-पृथ्वी की अपेक्षा विस्तार में सर्वथा महती है ? सब प्रान्त-भागों में सर्वथा छोटी है?

हां गौतम ! रत्नप्रभा-पृथ्वी दूसरी शर्कराप्रभा-पृथ्वी की अपेक्षा विस्तार में सर्वथा महती है, सर्व प्रान्त-भागों में सर्वथा छोटी है।

भंते ! दूसरी पृथ्वी तीसरी पृथ्वी की अपेक्षा विस्तार में सर्वथा महती है ? पृच्छा।

हां गौतम ! दूसरी पृथ्वी यावत् सर्व प्रान्त-भागों में सर्वथा छोटी है। इस अभिलाप के द्वारा यावत् छठी पृथ्वी अधःसप्तमी-पृथ्वी की अपेक्षा यावत् सर्व प्रान्त-भागों में सर्वथा छोटी है।

नरक-परिसामन्त-पद

४६. भंते! इस रत्नप्रभा पृथ्वी नरक के पार्श्वभागों में जो पृथ्वीकायिक यावत् वनस्पतिकायिक जीव हैं, वे जीव महाकर्मतर हैं? महाक्रियातर हैं ? महाआश्रवतर हैं ? महावेदनतर हैं ?

हां गौतम ! इस रत्नप्रभा-पृथ्वी नरक के पार्श्वभागों में जो पृथ्वीकायिक यावत् वनस्पतिकायिक जीव हैं, वे महाकर्मतर यावत् महावेदनतर हैं। इस प्रकार यावत् अधःसप्तमी की वक्तव्यता।

लोक-मध्य-पद

४७. भंते ! लोक का आयाम-मध्य कहां प्रज्ञप्त है ?

गौतम! इस रत्नप्रभा-पृथ्वी के अवकाशान्तर के असंख्येय भाग का अवगाहन करने पर, वहां लोक का आयाम-मध्य प्रज्ञप्त है।

४८. भंते ! अधो-लोक का आयाम-मध्य कहां प्रज्ञप्त है?

गौतम ! चतुर्थ पंकप्रभा-पृथ्वी के अवकाशान्तर के कुछ अधिक अर्द्धभाग का अवगाहन करने पर, वहां अधो-लोक का आयाम-मध्य प्रज्ञप्त हैं।

४९. *भंते ! ऊर्ध्व-लोक का आयाम-मध्य कहां प्रज्ञप्त है?*

गौतम ! सनत्कुमार-माहेन्द्र-कल्प के ऊपर ब्रह्म-लोक-कल्प अरिष्ट-विमान-प्रस्तर के नीचे वहां ऊर्ध्व-लोक का आयाम-मध्य प्रज्ञप्त है।

५०. भंते ! तिर्यग्-लोक का आयाम-मध्य कहां प्रज्ञप्त है?

गौतम ! जंबूद्वीप-द्वीप के मंदर-पवत के बहुमध्य-देश-भाग में इस रत्नप्रभा-पृथ्वी के उपरितन और अधस्तन इन दोनों क्षुल्लक प्रतरों में, तिर्यग्-लोक का मध्य है वहां आठ रुचक-प्रदेश प्रज्ञप्त हैं, जहां से ये दस दिशाएं निकलती हैं, जैसे—

१. पूर्व २. पूर्व-दक्षिण ३. दक्षिण ४. दक्षिण-पश्चिम ५. पश्चिम ६. पश्चिम-उत्तर ७. उत्तर ८. उत्तर-पूर्व ९. ऊर्ध्व १०. अधः।

५१. भंते ! इन दस दिशाओं के कितने नाम प्रज्ञप्त हैं ?

गौतम ! दस नाम प्रज्ञप्त हैं जैसे—

इन्द्रा, आग्नेयी, याम्या, नैर्ऋति, वारुणी, वायव्या, सोमा, ईशानी, विमला और तमा ज्ञातव्य है।

५२. भंते ! *इंद्रा-दिशा का आदि स्रोत क्या है ? वह कहां से प्रवाहित है? आदि में उसके* कितने प्रदेश हैं? उत्तरोत्तर कितने प्रदेशों की वृद्धि होती हैं? उसके कितने प्रदेश हैं? क्या वह पर्यवसित है? उसका संस्थान क्या है?

गौतम! इंद्रा-दिशा का आदि स्रोत रुचक है।

वह रुचक से प्रवाहित है, आदि में दो-प्रदेश वाली है, उत्तरोत्तर दो-दो प्रदेश की वृद्धि वाली है। लोक की अपेक्षा असंख्येय प्रदेश हैं, अलोक की अपेक्षा अनन्त प्रदेश हैं। लोक की अपेक्षा सादि-सपर्यवसित है। अलोक की अपेक्षा सादि-अपर्यवसित है। लोक की अपेक्षा मुरज-संस्थान वाली, अलोक की अपेक्षा शकट-उद्धि संस्थान वाली प्रज्ञप्त है।

५३. भंते! आग्नेयी-दिशा का आदि स्रोत क्या है? वह कहां से प्रवाहित है? आदि में कितने प्रदेश हैं? कितने प्रदेश का विस्तार है? उसके कितने प्रदेश हैं? क्या वह पर्यवसित है? संस्थान क्या है?

गौतम! आग्नेयी-दिशा का आदि स्रोत रुचक है। वह रुचक से प्रवाहित है। आदि में एक प्रदेश है। एक प्रदेश का विस्तार है। उसके उत्तरोत्तर प्रदेश की वृद्धि नहीं होती। लोक की अपेक्षा असंख्येय प्रदेश हैं। अलोक की अपेक्षा अनंत प्रदेश हैं। लोक की अपेक्षा सादि--सपर्यवसित है। अलोक की अपेक्षा सादि-अपर्यवसित है। वह छिन्न मुक्तावलि-संस्थान वाली प्रज्ञप्त है।

याम्या इन्द्रा की भांति नैर्ऋति आग्नेयी की भांति वक्तव्य है। इस प्रकार इन्द्रा की भांति चार दिशाएं वक्तव्य हैं। आग्नेयी की भांति चार विदिशाएं वक्तव्य हैं।

५४. भंते ! विमला-दिशा का आदि स्रोत क्या है ? वह कहां से प्रवाहित है ? आदि में कितने प्रदेश हैं ? कितने प्रदेश का विस्तार है ? उसके कितने प्रदेश वाली हैं? क्या पर्यवसित है ? संस्थान क्या है ?

गौतम ! विमला-दिशा का आदि स्रोत रुचक है। वह रुचक से प्रवाहित है। उसके आदि में प्रदेश चार हैं। दो प्रदेश का विस्तार है। उसके उत्तरोत्तर प्रदेश की वृद्धि नहीं होती लोक की अपेक्षा असंख्येय प्रदेश हैं। अलोक की अपेक्षा अनंत प्रदेश हैं। लोक की अपेक्षा सादि-

-सपर्यवसित है। अलोक की अपेक्षा सादि-अपर्यवसित है। वह रुचक-संस्थान वाली प्रज्ञप्त है। इसी प्रकार तमा-दिशा की वक्तव्यता।

५५. भंते ! लोक किसे कहा जाता है ?

गौतम ! पांच अस्तिकाय हैं, जैसे—धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय। यह पंचास्तिकाय जितने आकाश-खंड में व्याप्त है, वह लोक कहलाता है।

५६. भंते ! धर्मास्तिकाय की सत्ता में जीवों का क्या प्रवर्तन होता है ?

गौतम! धर्मास्तिकाय की सत्ता में जीवों का आगमन, गमन, भाषा, उन्मेष, मन-योग, वचन-योग, काय-योग—ये तथा इस प्रकार के जितने चल (गत्यात्मक) भाव हैं, धर्मास्तिकाय की सत्ता में उन सबका प्रवर्तन होता है।

गति धर्मास्तिकाय का लक्षण है।

५७. भंते ! अधर्मास्तिकाय की सत्ता में जीवों का क्या प्रवर्तन होता है ?

गौतम ! अधर्मास्तिकाय की सत्ता में जीवों की स्थिति, निषीदन, शयन, मन का एकत्वीभावकरण—ये तथा इस प्रकार के जितने भी स्थिर (अगत्यात्मक) भाव हैं, अधर्मास्तिकाय की सत्ता में उन सबका प्रवर्तन होता है।

स्थिति अधर्मास्तिकाय का लक्षण है।

५८. भंते ! आकाशास्तिकाय की सत्ता में जीवों और अजीवों का क्या प्रवर्तन होता है ?

गौतम! आकाशास्तिकाय जीव-द्रव्यों और अजीव-द्रव्यों का भाजन-भूत (आधारभूत) है। आकाश का एक प्रदेश एक परमाणु से भर जाता है, दो परमाणु से भी भर जाता है, उसमें सौ भी समा जाते हैं। वह सौ-करोड़ से भी भर जाता है, उसमें हजार-करोड़ भी समा जाते हैं। अवगाहना आकाशास्तिकाय का लक्षण है।

५९. भंते ! जीवास्तिकाय की सत्ता में जीवों का क्या प्रवर्तन होता है ?

गौतम ! जीवास्तिकाय की सत्ता में जीव अनंत आभिनिबोधिक-ज्ञान-पर्यव, अनंत श्रुत-ज्ञान-पर्यव, अनंत अवधि-ज्ञान-पर्यव, अनंत मनःपर्यव-ज्ञान-पर्यव, अनंत केवल-ज्ञान-पर्यव, अनंत मति-अज्ञान-पर्यव, अनंत श्रुत-अज्ञान-पर्यव, अनंत विभंग-ज्ञान-पर्यव, अनंत चक्षु-दर्शन-पर्यव, अनंत अचक्षु-दर्शन-पर्यव, अनंत अवधि-दर्शन-पर्यव और अनंत केवल-दर्शन-पर्यव के उपयोग को प्राप्त होता है। उपयोग जीव का लक्षण है।

६०. भंते ! पुद्गलास्तिकाय की सत्ता में जीवों का क्या प्रवर्तन होता है ?

गौतम ! पुद्गलास्तिकाय की सत्ता में जीव औदारिक, वैक्रिय, आहारक, तैजस, कार्मण, श्रोत्रेन्द्रिय, चक्षुरिन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, जिह्वेन्द्रिय, स्पर्शनेन्द्रिय, मन-योग, वचन-योग, काय-योग और आनापान के ग्रहण का प्रवर्तन करता है।

ग्रहण पुद्गलास्तिकाय का लक्षण है।

धर्मास्तिकाय आदि का परस्पर स्पर्श-पद

६१. भंते ! धर्मास्तिकाय का एक प्रदेश धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट है ?

गौतम ! जघन्य-पद में तीन से, उत्कृष्ट-पद में छह से स्पृष्ट है।

अधर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट है?

जघन्य-पद में चार से, उत्कृष्ट-पद में सात से।

आकाशास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट है ?

सात से।

जीवास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट है ?

अनंत से।

पुद्गलास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट है?

अनन्त से।

कितने अद्धा-समय से स्पृष्ट है ?

स्यात् स्पृष्ट है, स्यात् स्पृष्ट नहीं है। यदि स्पृष्ट है तो नियमतः अनंत से।

६२. भंते ! अधर्मास्तिकाय का एक प्रदेश धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट है ?

गौतम! जघन्य-पद में चार से, उत्कृष्ट-पद में सात से।

अधर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट है?

जघन्य-पद में तीन से, उत्कृष्ट-पद में छह से।

शेष धर्मास्तिकाय की भांति वक्तव्य है।

६३. भंते ! आकाशास्तिकाय का एक प्रदेश धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट है ?

गौतम! स्यात् स्पृष्ट है, स्यात् स्पृष्ट नहीं है। यदि स्पृष्ट है तो जघन्य-पद में एक, दो अथवा तीन से, उत्कृष्ट-पद में सात से। इसी प्रकार अधर्मास्तिकाय के प्रदेशों की वक्तव्यता।

आकाशास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट है ?

छह से।

जीवास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट है?

स्यात् स्पृष्ट है, स्यात् स्पृष्ट नहीं है। यदि स्पृष्ट है तो नियमतः अनंत से। इसी प्रकार पुद्गलास्तिकाय के प्रदेशों की वक्तव्यता। इसी प्रकार अद्धा-समय की भी वक्तव्यता।

६४. भंते ! जीवास्तिकाय का एक प्रदेश धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट है ?

जघन्य-पद में चार से, उत्कृष्ट-पद में सात से। इसी प्रकार अधर्मास्तिकाय के प्रदेशों की वक्तव्यता।

आकाशास्तिकाय के कितने प्रदेशों स स्पृष्ट है ?

सात से।

जीवास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट है? अनंत से।

शेष धर्मास्तिकाय की भांति वक्तव्यता।

६५. भंते ! पुद्गलास्तिकाय का एक प्रदेश धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट है?

इसी प्रकार जीवास्तिकाय की भांति वक्तव्यता।

६६. भंते ! पुद्गलास्तिकाय के दो प्रदेश धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट हैं?

गौतम ! जघन्य-पद में छह से, उत्कृष्ट-पद में बारह से। इसी प्रकार अधर्मास्तिकाय के प्रदेशों की वक्तव्यता।

आकाशास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पष्ट हैं ?

बारह से। शेष धर्मास्तिकाय की भांति वक्तव्यता।

६७. भंते! पुद्गलास्तिकाय के तीन प्रदेश धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट हैं?

जघन्य-पद में आठ से, उत्कृष्ट-पद में सतरह से। इसी प्रकार अधर्मास्तिकाय के प्रदेशों की वक्तव्यता।

आकाशास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट हैं ?

सतरह से। शेष धर्मास्तिकाय की भांति वक्तव्यता। इस गमक के अनुसार यावत् दस तक की वक्तव्यता, इतना विशेष है— जघन्य-पद में दो का प्रक्षेप करणीय हैं, उत्कृष्ट-पद में पांच का। पुद्गलास्तिकाय के चार प्रदेश जघन्य-पद में दस से, उत्कृष्ट-पद में बाईस से। पुद्गलास्तिकाय के पांच प्रदेश जघन्य पद में बारह से, उत्कृष्ट-पद में सत्ताईस से। पुद्गलास्तिकाय के छह प्रदेश जघन्य-पद मे चौदह से, उत्कृष्ट-पद में बत्तीस से। पद्गलास्तिकाय के सात प्रदेश जघन्य-पद में सोलह से, उत्कृष्ट-पद में सैंतीस से। पुद्गलास्तिकाय के आठ प्रदेश जघन्य-पद में अठारह से, उत्कृष्ट-पद में बयांलीस से।

पुद्गलास्तिकाय के नौ प्रदेश जघन्य-पद में बीस से, उत्कृष्ट-पद में सैंतालीस में। पुद्गलास्तिकाय के दस प्रदेश जघन्य-पद में बाईस से, उत्कृष्ट-पद में बावन से। आकाशास्तिकाय सर्वत्र उत्कृष्टतः वक्तव्य है।

६८. भंते ! पुद्गलास्तिकाय के संख्येय प्रदेश धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट हैं?

जघन्य-पद में उसी संख्येय से। दो अधिक द्विगुण संख्येय से। उत्कृष्ट-पद मे उसी संख्येय से दो अधिक पंच गुणित संख्येय से।

कितने अधर्मास्तिकाय के प्रदेशों से स्पृष्ट हैं ?

पूर्ववत्।

आकाशास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट हैं ?

उसी संख्येय से दो अधिक पंच गुणित संख्येय से।

जीवास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट होते हैं ?

अनंत स।

पुद्गलास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट हैं?

अनंत से।

कितने अद्धा-समय से स्पृष्ट हैं ?

स्यात् स्पृष्ट है, स्यात् स्पृष्ट नहीं है। यदि स्पृष्ट हैं तो नियमतः अनंत से।

६९. भंते ! पुद्गलास्तिकाय के असंख्येय प्रदेश धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट हैं?

जघन्य-पद में उसी असंख्येय से दो-अधिक-द्वि-गुणित असंख्येय से, उत्कृष्ट-पद में उसी असंख्येय से दो-अधिक-पंच-गुणित असंख्येय से। शेष संख्येय की भांति वक्तव्यता यावत् नियमतः अनंत से।

७०. भंते! पुद्गलास्तिकाय के अनंत प्रदेश धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट हैं ?

इस प्रकार जैसे असंख्येय की वक्तव्यता वैसे ही अनंत की निरवशेष वक्तव्यता।

७१. भंते ! एक अद्धा-समय धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट है?

सात से।

अधर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट है ?

पूर्ववत्। इसी प्रकार आकाशास्तिकाय के प्रदेशों की वक्तव्यता।

जीवास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट है?

अनंत से। इसी प्रकार यावत् अद्धा-समय से।

७२. भंते ! धर्मास्तिकाय धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट है?

एक से भी नहीं। अधर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट हैं ?

असंख्येय से।

आकाशास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट हैं ?

असंख्येय से।

जीवास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट हैं?

अनंत से।

पुद्गलास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट हैं?

अनंत से।

कितने अद्धा-समय से स्पृष्ट है?

स्यात् स्पृष्ट है, स्यात् स्पृष्ट नहीं है। यदि स्पृष्ट है तो नियमतः अनंत से।

७३. भंते ! अधर्मास्तिकाय धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट है?

असंख्येय से।

अधर्मास्तिकाय के कितने प्रदेशों से स्पृष्ट है?

एक से भी नहीं। शेष की धर्मास्तिकाय की भांति वक्तव्यता। इस प्रकार इस गमक के द्वारा सभी स्व-स्थान की अपेक्षा एक प्रदेश से भी स्पृष्ट नहीं हैं, पर-स्थान की अपेक्षा आदि तीन (धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय) में असंख्येय वक्तव्य है। अंतिम तीन में अनंत वक्तव्य है यावत् अद्धा-समय यावत् कितने अद्धासमयों से स्पृष्ट है?

एक से भी नहीं।

धर्मास्तिकाय-आदि का अवगाढ-पद

७४. भंते ! जहां धर्मास्तिकाय का एक प्रदेश अवगाढ है, वहां धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ हैं ?

एक भी नहीं।

अधर्मास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ हैं ?

एक।

आकाशास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ हैं ?

एक।

जीवास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ हैं ?

अनंत।

पुद्गलास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ हैं ?

अनंत।

अद्धा-समय के कितने प्रदेश अवगाढ हैं?

स्यात् अवगाढ हैं, स्यात् अवगाढ नहीं हैं। यदि हैं तो अनंत।

७५. भंते ! जहां अधर्मास्तिकाय का एक प्रदेश अवगाढ है वहां धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ हैं ?

एक।

अधर्मास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ हैं ?

एक भी नहीं। शेष धर्मास्तिकाय की भांति वक्तव्यता।

७६. भंते! जहां आकाशास्तिकाय का एक प्रदेश अवगाढ है, वहां धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ हैं ?

स्यात् अवगाढ हैं, स्यात् अवगाढ नहीं हैं, यदि अवगाढ हैं तो एक अवगाढ है। इसी प्रकार अधर्मास्तिकाय के प्रदेश भी।

आकाशास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ हैं ?

एक भी नहीं।

जीवास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ हैं ?

स्यात् अवगाढ हैं, स्यात् अवगाढ नही हैं। यदि हैं तो अनंत प्रदेश अवगाढ हैं। इसी प्रकार यावत् अद्धा-समय की वक्तव्यता।

७७. भंते ! जहां जीवास्तिकाय का एक प्रदेश अवगाढ है, वहां धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ हैं ?

एक, इसी प्रकार अधर्मास्तिकाय के प्रदेश भी, इसी प्रकार आकाशास्तिकाय के प्रदेश भी वक्तव्य हैं।

जीवास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ हैं?

अनंत। शेष धर्मास्तिकाय की भांति वक्तव्यता।

७८. भंते ! जहां पुद्गलास्तिकाय का एक प्रदेश अवगाढ है, वहां धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ हैं?

इस प्रकार जैसे जीवास्तिकाय के प्रदेश की वक्तव्यता, वैसे ही निरवशेष वक्तव्यता।

७९. भंते ! जहां पुद्गलास्तिकाय के दो प्रदेश अवगाढ हैं वहां धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ हैं ?

स्यात् एक, स्यात् दो। इसी प्रकार अधर्मास्तिकाय की भी, इसी प्रकार आकाशास्तिकाय की भी वक्तव्यता। शेष धर्मास्तिकाय की भांति वक्तव्य है।

८०. भंते ! जहां पुद्गलास्तिकाय के तीन प्रदेश अवगाढ हैं, वहां धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ हैं?

स्यात् एक, स्यात् दो, स्यात् तीन। इसी प्रकार अधर्मास्तिकाय की भी, इसी प्रकार आकाशास्तिकाय की भी वक्तव्यता। शेष की दो प्रदेश की भांति वक्तव्यता। इसी प्रकार प्रथम तीन अस्तिकायों में एक-एक प्रदेश बढ़ाना चाहिए। शेष की दो की भांति वक्तव्यता यावत् दश प्रदेश में स्यात् एक, स्यात् दो, स्यात् तीन यावत् स्यात् दश। संख्येय प्रदेश में स्यात् एक, स्यात् दो यावत् स्यात् दस, स्यात् संख्येय। असंख्येय में स्यात् एक यावत् स्यात् संख्येय, स्यात् असंख्येय। इसी प्रकार असंख्येय की भांति अनंत की वक्तव्यता।

८१. भंते ! जहां एक अद्धा-समय अवगाढ है वहां धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ हैं?

एक।

अधर्मास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ हैं ?

एक।

आकाशास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ हैं ?

एक।

जीवास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ हैं?

अनंत। इस प्रकार यावत् अद्धा-समय।

८२. भंते ! जहां धर्मास्तिकाय अवगाढ है, वहां धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ हैं ?

एक भी नहीं।

अधर्मास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ हैं ?

असंख्येय।

आकाशास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ हैं ?

असंख्येय।

जीवास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ हैं ?

अनंत, इस प्रकार यावत् अद्धा-समय।

८३. भंते ! जहां अधर्मास्तिकाय अवगाढ है, वहां धर्मास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ हैं?

असंख्येय।

अधर्मास्तिकाय के कितने प्रदेश अवगाढ हैं ?

एक भी नहीं।

शेष धर्मास्तिकाय की भांति वक्तव्य है। इस प्रकार सब स्व-स्थान की अपेक्षा 'एक भी नहीं' यह वक्तव्य है, पर-स्थान की अपेक्षा प्रथम तीन असंख्येय वक्तव्य हैं, उत्तरवर्ती तीन अनंत वक्तव्य हैं यावत् अद्धासमय। यावत् कितने अद्धासमय अवगाढ हैं ?

एक भी नहीं।

८४. भंते ! जहां एक पृथ्वीकायिक जीव अवगाढ है, वहां कितने पृथ्वीकायिक जीव अवगाढ हैं ?

असंख्येय।

कितने अप्कायिक जीव अवगाढ हैं ?

असंख्येय।

कितने तैजसकायिक जीव अवगाढ हैं ?

असंख्येय।

कितने वायुकायिक जीव अवगाढ हैं ?

असंख्येय।

कितने वनस्पतिकायिक जीव अवगाढ हैं ?

अनंत।

८५. भंते ! जहां एक अप्कायिक जीव अवगाढ है, वहां कितने पृथ्वीकायिक जीव अवगाढ हैं?

असंख्येय।

कितने अप्कायिक जीव अवगाढ हैं?

असंख्येय।

इस प्रकार जैसे पृथ्वीकायिक जीवों की वक्तव्यता वैसे ही सबकी निरवशेष वक्तव्यता, यावत् वनस्पतिकायिक यावत् कितने वनस्पतिकायिक जीव अवगाढ हैं ?

अनंत।

८६. भंते ! धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय—इनमें कोई जीव रहने, सोने, ठहरने, बैठने और करवट बदलने में समर्थ है?

यह अर्थ संगत नहीं है। वहां अनंत जीव अवगाढ हैं।

८७. भंते ! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय—इनमें कोई जीव रहने, सोने, ठहरने, बैठने और करवट लेने में समर्थ नहीं है? वहां अनंत जीव अवगाढ हैं?

गौतम ! एक यथानाम कूटागारशाला है। भीतर और बाहर दोनों ओर से पुती हुई, गुप्त, गुप्त द्वार वाली, पवन-रहित, निवात-गंभीर है । किसी पुरुष ने हजार दीपक लेकर कूटागारशाला के भीतर-भीतर अनुप्रवेश किया, अनुप्रवेश कर उस कूटागार शाला के सर्वतः समन्तात्—चारों ओर सघन, निचित, अन्तर-रहित निश्छिद्र दरवाजों के कपाटों को ढक दिया, ढककर उस कूटागारशाला के बहु मध्य देश-भाग में जघन्यतः एक, दो अथवा तीन, उत्कृष्टतः हजार दीप प्रज्वलित किए।

गौतम ! क्या वे प्रदीप-लेश्याएं अन्योन्य-संबद्ध, अन्योन्य-स्पृष्ट, अन्योन्य-संबद्ध-स्पृष्ट, अन्योन्य-एकीभूत बनी हुई हैं ?

हां, बनी हुई हैं।

गौतम ! क्या कोई उन प्रदीप-लेश्याओं में बैठने यावत् करवट बदलने में समर्थ है?

भगवन् ! यह अर्थ संगत नहीं है। वहां अनंत जीव अवगाढ हैं।

गौतम ! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—यावत् वहां अनंत जीव अवगाढ हैं।

८८. भंते ! लोक कहां बहु सम है? भंते! लोक कहां सर्व लघु प्रज्ञप्त है?

गौतम ! इस रत्नप्रभा-पृथ्वी के उपरितन-अधस्तन—इन दो क्षुल्लक प्रतरों में यह लोक बहुसम तथा इसी स्थान पर सर्व लघु प्रज्ञप्त है।

८९. भंते ! यह लोक कहां वक्र शरीर वाला प्रज्ञप्त है?

गौतम ! जहां विग्रह-कण्डक है—प्रदेश की हानि-वृद्धि के कारण वक्र है, वहां लोक वक्र शरीर वाला प्रज्ञप्त है।

९०. भंते ! लोक किस संस्थान वाला प्रज्ञप्त है?

गौतम ! लोक सुप्रतिष्ठक संस्थान वाला प्रज्ञप्त है—निम्न भाग में विस्तीर्ण, मध्य में संक्षिप्त और ऊपर में विशाल है। वह निम्न भाग में पर्यंक के आकार वाला, मध्य में श्रेष्ठ वज्र के आकार वाला और ऊपर ऊर्ध्वमुख मृदंग के आकार वाला है। इस शाश्वत निम्न भाग में

विस्तीर्ण यावत् ऊपर ऊर्ध्वमुख मृदंग के आकार वाले लोक में उत्पन्न-ज्ञान-दर्शन का धारक, अर्हत्, जिन, केवली, जीवों को भी जानता-देखता है, अजीवों को भी जानता-देखता है, उसके पश्चात् वह सिद्ध, प्रशांत, मुक्त, परिनिर्वृत होता है और सब दुःखों का अंत करता है।

९१. भंते ! इस अधो-लोक, तिर्यग्-लोक और ऊर्ध्व-लोक में कौन किससे अल्प, बहु, तुल्य अथवा विशेषाधिक है?

गौतम! तिर्यग्-लोक सबसे अल्प है। ऊर्ध्व-लोक उससे असंख्येय गुण अधिक है। अधो-लोक उससे विशेषाधिक है।

९२. भंते ! वह ऐसा ही है। भंते ! वह ऐसा ही है।

पांचवां उद्देशक

आहार-पद

९३. भंते ! क्या नैरयिक सचित्त आहार वाले हैं ? क्या अचित्त आहार वाले हैं ? क्या मिश्र आहार वाले हैं?

गौतम ! सचित्त आहार वाले नहीं हैं, अचित्त आहार वाले हैं, मिश्र आहार वाले नहीं हैं। इसी प्रकार असुरकुमारों की वक्तव्यता। प्रथम नैरयिक उद्देशक (**पण्णवणा,** २८/१) निरवशेष वक्तव्य है।

९४. भंते ! वह ऐसा ही है। भंते ! वह ऐसा ही है।

छठा उद्देशक

सान्तर-निरन्तर-उपपन्नादि-पद

९५. राजगृह नगर यावत् गौतम स्वामी इस प्रकार बोले—भंते ! नैरयिक सांतर उपपन्न होते हैं ? निरंतर उपपन्न होते हैं?

गौतम ! नैरयिक सांतर उपपन्न होते हैं, निरंतर भी उपपन्न होते हैं। इसी प्रकार असुरकुमारों की वक्तव्यता। इस प्रकार जैसे गांगेय (**भगवती,** ९/८०-८५) की वक्तव्यता वैसे ही दो दण्डक यावत् वैमानिक सांतर भी च्यवन करते हैं, निरन्तर भी च्यवन करते हैं।

चमरचंच-आवास-पद

९६. भंते ! असुरकुमारराज असुरेन्द्र चमर का चमरचंच नामक आवास कहां प्रज्ञप्त है?

गौतम ! जंबूद्वीप द्वीप में मेरूपर्वत से दक्षिण भाग में तिरछे असंख्य द्वीप-समुद्रों के पार चले जाने पर—इस प्रकार जैसे द्वितीय शतक (भ. २/११८-१२१) में चमर-सभा-उद्देशक की वक्तव्यता वही अपरिशेष ज्ञातव्य है। उस चमरचंचा राजधानी में दक्षिण-पश्चिम में अरुणोदय समुद्र में छह अरब पचपन करोड़ पैंतीस लाख पचास हजार योजन तिरछा चले जाने पर वहां असुरकुमारराज असुरेन्द्र चमर का चमरचंच नामक आवास प्रज्ञप्त है—उसकी पीठिका लंबाई-चौड़ाई में चौरासी हजार योजन और परिधि में दो लाख पैंसठ हजार छह सौ

बत्तीस योजन से कुछ विशेषाधिक है।

वह एक प्राकार से चारों ओर से घिरा हुआ है। वह प्राकार ऊंचाई में डेढ-सौ योजन ऊर्ध्व है। इस प्रकार चमरचंचा राजधानी की वक्तव्यता, वहां सभा नहीं है यावत् चार प्रासाद-पंक्ति हैं।

९७. भंते ! क्या असुरकुमारराज असुरेन्द्र चमर चमरचंच आवास में निवास करते हैं ?

यह अर्थ संगत नहीं है।

९८. भंते ! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—चमरचंच आवास चमरचंच आवास है ?

गौतम ! यथानाम इस मनुष्य लोक में औपकारिक लयन, औद्यानिक लयन, निर्यानिक लयन, प्रपात लयन, वहां बहुत पुरुष और स्त्रियां रहते हैं, सोते हैं, ठहरते हैं, बैठते हैं, करवट बदलते हैं , परिहास करते हैं, रमण करते हैं, मनोवांछित क्रियाएं करते हैं, क्रीड़ा करते हैं, दूसरों को क्रीडा करवाते हैं, मोहित करते हैं। पूर्वकृत, पुरातन सुआचरित, सुपराक्रांत, शुभ और कल्याणकारी कर्मों के कल्याण-फल-वृत्ति-विशेष का प्रत्यनुभव करते हुए विहरण करते हैं, निवास वहां नहीं करते हैं, दूसरे स्थान पर करते हैं। गौतम ! इसी प्रकार असुरकुमारराज असुरेन्द्र चमर चमरचंच आवास में केवल क्रीडा-रति के लिए आते हैं, निवास वहां नहीं करते हैं, दूसरे स्थान पर करते हैं। गौतम ! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—चमरचंच आवास चमरचंच आवास है।

९९. भंते ! वह ऐसा ही है। भंते ! वह ऐसा ही है। यावत् आत्मा को भावित करते हुए विहरण करते हैं।

१००. श्रमण भगवान् महावीर ने किसी दिन राजगृह नगर से, गुणशीलक चैत्य से प्रतिनिष्क्रमण किया, प्रतिनिष्क्रमण कर वे वहां से बाहर जनपद विहार करने लगे।

उद्रायण-कथा-पद

१०१. उस काल और उस समय में चंपा नामक नगरी थी—वर्णक। पूर्णभद्र चैत्य—वर्णक। श्रमण भगवान् महावीर किसी दिन क्रमानुसार विचरण, ग्रामानुग्राम में परिव्रजन और सुखपूर्वक विहार करते हुए जहां चंपा नगरी और पूर्णभद्र चैत्य था, वहां आए। वहां आकर प्रवास-योग्य स्थान की अनुमति ली, अनुमति लेकर संयम और तप से अपने आपको भावित करते हुए रह रहे थे।

१०२. उस काल और उस समय में सिंधु-सौवीर जनपद में वीतीभय नाम का नगर था—वर्णक। उस वीतीभय नगर के बाहर उत्तर पश्चिम दिशि भाग में मृगवन नामक उद्यान था—सर्व ऋतु में पुष्प और फल से समृद्ध—वर्णक। उस वीतीभय नगर में उद्रायण नाम का राजा था—वह महान् हिमालय, महान् मलय, मेरु और महेन्द्र की भांति—वर्णक। उस उद्रायण राजा के पद्मावती नाम की देवी थी—सुकुमाल हाथ-पैर वाली—वर्णक। उस उद्रायण राजा के प्रभावती नाम की देवी थी—वर्णक। यावत् विहरण करने लगे।

उस उद्रायण राजा का पुत्र और प्रभावती देवी का आत्मज अभीची नाम का कुमार था—सुकुमाल हाथ-पैर वाला, अक्षीण और प्रतिपूर्ण-पंचेन्द्रिय-शरीर वाला, लक्षण और

व्यंजन गुणों से उपपेत, मान, उन्मान और प्रमाण से प्रतिपूर्ण, सुजात, सर्वांग सुंदर, चन्द्रमा के समान सौम्य आकार वाला, कांत, प्रिय-दर्शन, सुरूप और प्रतिरूप था।

वह अभीची कुमार युवराज भी था—उद्रायण राजा के राज्य, राष्ट्र, बल, वाहन, कोश, कोष्ठागार, पुर और अन्तःपुर की स्वयं प्रत्युपेक्षणा (निरीक्षण) करता हुआ विहरण कर रहा था। उस उद्रायण राजा का अपना भागिनेय केशी नाम का कुमार था—सुकुमाल हाथ-पैर वाला यावत् सुरूप। वह उद्रायण राजा सिन्धु सौवीर आदि सोलह जनपद, वीतीभय नगर आदि तीन सौ तेसठ नगर-आकर का, छत्र, चामर, बाल-वीजन आदि प्रदत्त करने वाले महासेन आदि दस मुकुटबद्ध राजों का, अन्य बहुत राजे, युवराज, कोटवाल, मडंब-पति, कुटुम्ब-पति, इभ्य, सेठ, सेनापति, सार्थवाह आदि का आधिपत्य, पौरपत्य, स्वामित्व, भर्तृत्व (पोषण) तथा आज्ञा देने में समर्थ और सेनापतित्व करता हुआ, अन्य से आज्ञा का पालन करवाता हुआ वह श्रमणोपासक जीव-अजीव को जानने वाला यावत् (भ. ३/९४) यथापरिगृहीत तपःकर्म के द्वारा आत्मा को भावित करता हुआ रह रहा था।

१०३. वह उद्रायण राजा किसी दिन जहां पौषधशाला थी, वहां आया। शंख श्रावक की भांति यावत् (भ. १२/६) मैं उपवास करूं, ब्रह्मचारी रहूं, सुवर्ण-मणि को छोड़कर, माला, सुगंधित चूर्ण और विलेपन से रहित, शस्त्र, मूसल आदि का वर्जन कर, अकेला, दूसरों के साहाय्य से निरपेक्ष, दर्भ-संस्तारक पर बैठ कर पाक्षिक पौषध की प्रतिजागरणा करूं।

१०४. उस उद्रायण राजा के पूर्वरात्र-अपररात्र काल में धर्मजागरणा करते हुए इस प्रकार का आध्यात्मिक, स्मृत्यात्मक, अभिलाषात्मक, मनोगत संकल्प उत्पन्न हुआ—धन्य हैं वे ग्राम, आकर, नगर, निगम, राजधानी, खेट, कर्बट, मडम्ब, द्रोणमुख, पत्तन, आश्रम, संबाध, सन्निवेश, जहां श्रमण भगवान् महावीर विहरण कर रहे हैं। धन्य हैं वे राजे, युवराज, कोटवाल, मडम्ब-पति, कुटुम्ब-पति, इभ्य, सेठ, सेनापति, सार्थवाह आदि, जो श्रमण भगवान् महावीर को वंदन-नमस्कार करते हैं यावत् पर्युपासना करते हैं। यदि श्रमण भगवान् महावीर क्रमानुसार विचरण, ग्रामानुग्राम में परिव्रजन और सुखपूर्वक विहार करते हुए इस नगर में आएं, इस नगर में समवसृत हों, इसी वीतीभय नगर के बाहर मृगवन उद्यान में प्रवास-योग्य स्थान की अनुमति लेकर संयम और तप से अपने आपको भावित करते हुए विहरण करें तो मैं श्रमण भगवान् महावीर को वंदन-नमस्कार करूं यावत् पर्युपासना करूं।

१०५. श्रमण भगवान् महावीर ने—उद्रायण राजा के इस प्रकार का आध्यात्मिक, स्मृत्यात्मक, अभिलाषात्मक एवं मनोगत संकल्प समुत्पन्न हुआ—ऐसा जानकर चंपा नगरी और पूर्णभद्र चैत्य से प्रतिनिष्क्रमण किया, प्रतिनिष्क्रमण कर क्रमानुसार विचरण, ग्रामानुग्राम में परिव्रजन और सुखपूर्वक विहार करते हुए जहां सिंधु-सौवीर जनपद है, जहां वीतीभय नगर है, जहां मृगवन उद्यान है, वहां आए, वहां आकर यावत् संयम और तप से अपने आपको भावित करते हुए विहरण करने लगे।

१०६. उस वीतीभय नगर के शृंगाटकों, तिराहों, चौराहों, चौहटों, चार द्वार वाले स्थानों, राजमार्गों और मार्गों पर यावत् परिषद् पर्युपासना करने लगी।

१०७. उद्रायण राजा इस कथा को सुनकर हृष्ट-तुष्ट हो गया। उसने कौटुम्बिक पुरुषों को

बुलाया, बुलाकर इस प्रकार कहा— देवानुप्रियो ! वीतीभय नगर को आभ्यंतर और बाहर जैसे **उववाई** (सू. ५५-६९) में कूणिक की वक्तव्यता यावत् पर्युपासना की। पद्मावती-प्रमुख देवियों ने वैसे ही यावत् पर्युपासना की। भगवान ने धर्म कहा।

१०८. उद्रायण राजा श्रमण भगवान् महावीर के पास धर्म सुनकर, अवधारण कर हृष्ट-तुष्ट हो गया। वह उठने की मुद्रा में उठा, उठकर श्रमण भगवान् महावीर को तीन बार यावत् नमस्कार कर इस प्रकार बोला—भंते ! यह ऐसा ही है। भंते ! यह तथा (संवादिता-पूर्ण) है। भंते ! यह अवितथ है। भंते ! यह असंदिग्ध है। भंते ! यह इष्ट है। भंते ! यह प्रतीप्सित (प्राप्त करने के लिए इष्ट) है। भंते ! यह इष्ट-प्रतीप्सित है—जैसा आप कह रहे हैं, ऐसा भाव प्रदर्शित कर, इतना विशेष है—देवानुप्रिय ! अभीची कुमार को राज्य में स्थापित करता हूं। मैं देवानुप्रिय के पास मुंड होकर अगार से अनगारिता में प्रव्रजित होता हूं।

देवानुप्रिय ! जैसा सुख हो, प्रतिबंध मत करो।

१०९. वह उद्रायण राजा श्रमण भगवान् महावीर के इस कथन को सुनकर हृष्ट-तुष्ट हो गया। उसने श्रमण भगवान् महावीर को वंदन-नमस्कार किया, वंदन-नमस्कार कर अभिषिक्त हाथी पर चढा। चढकर श्रमण भगवान् महावीर के पास से मृगवन उद्यान से प्रतिनिष्क्रमण किया, प्रतिनिष्क्रमण कर जहां वीतीभय नगर था वहां जाने का संकल्प किया।

११०. उस उद्रायण राजा के इस प्रकार का आध्यात्मिक, स्मृत्यात्मक, अभिलाषात्मक और मनोगत संकल्प समुत्पन्न हुआ—अभीचीकुमार मेरा एकाकी पुत्र है, इष्ट, कांत, प्रिय, मनोज्ञ, मनोहर, स्थिरतर, विश्वसनीय, सम्मत, बहुमत, अनुमत और आभरण-करण्डक के समान है। रत्न, रत्नभूत (चिन्तामणि आदि रत्न के समान) जीवन-उत्सव और हृदय को आनंदित करने वाला है। वह उदुम्बर पुष्प के समान श्रवण-दुर्लभ है फिर दर्शन का तो कहना ही क्या? यदि मैं अभीचीकुमार को राज्य में स्थापित कर श्रमण भगवान् महावीर के पास मुंड होकर अगार से अनगारिता में प्रव्रजित होता हूं तो अभीचीकुमार राज्य, राष्ट्र, बल, वाहन, कोश, कोष्ठागार, पुर, अंतःपुर, जनपद और मनुष्य-संबंधी काम-भोगों में मूर्च्छित, गृद्ध, ग्रथित और आसक्त होकर आदि-अंतहीन दीर्घ-पथ वाले चतुर्गत्यात्मक संसार में अनुपर्यटन करेगा। मेरे लिए यह श्रेय नहीं है कि मैं अभीचीकुमार को राज्य में स्थापित कर श्रमण भगवान् महावीर के पास मुंड होकर अगार से अनगारिता में प्रव्रजित होऊं, मेरे लिए यह श्रेय है कि मैं अपने भागिनेय केशीकुमार को राज्य में स्थापित कर श्रमण भगवान् महावीर के पास मुंड होकर अगार से अनगारिता में प्रव्रजित होऊं—इस प्रकार संप्रेक्षा की, संप्रेक्षा कर जहां वीतीभय नगर था, वहां आया, आकर वीतीभय नगर के बीचोंबीच जहां अपना घर है, जहां बाहरी उपस्थान-शाला है, वहां आया, आकर अभिषिक्त हस्ती को स्थापित किया, स्थापित कर अभिषिक्त हाथी से उतरा, उतरकर जहां सिंहासन था, वहां आया, आकर प्रवर सिंहासन पर पूर्वाभिमुख होकर बैठा, बैठकर कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया, बुलाकर इस प्रकार कहा—देवानुप्रियो! शीघ्र ही वीतीभय नगर के भीतर और बाहर पानी का छिड़काव करो, झाड़-बुहार जमीन की सफाई करो, गोबर की लिपाई करो यावत् प्रवर सुरभि वाले गंध-चूर्णों से सुगंधित-गंधवर्ती तुल्य करो, कराओ, ऐसा कर और करवाकर इस आज्ञा को मुझे प्रत्यर्पित

करो। कौटुम्बिक पुरुषों ने वैसा कर आज्ञा को प्रत्यर्पित किया।

१११. उस उद्रायण राजा ने दूसरी बार कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया, बुला कर इस प्रकार कहा—देवानुप्रियो! केशीकुमार के लिए शीघ्र ही महान् अर्थ वाला, महान् मूल्यवाला, महान् अर्हता वाला, विपुल इस प्रकार राज्याभिषेक जैसे शिवभद्रकुमार की वक्तव्यता वैसे ही वक्तव्य है यावत् परम आयुष्य का पालन करो। इष्ट जनों से संपरिवृत होकर सिन्धु-सौवीर आदि सोलह जनपद, वीतीभय आदि तीन सौ तेसठ नगर-आकर, महासेन आदि दस राजा, अन्य बहुत राजे, युवराज, कोटवाल, मडम्ब-पति, कुटुम्ब-पति, इभ्य, सेठ, सेनापति, सार्थवाह आदि का आधिपत्य, पौरपत्य, स्वामित्व, भर्तृत्व तथा आज्ञा देने में समर्थ और सेनापतित्व करते हुए तथा अन्य से आज्ञा का पालन करवाते हुए विहार करो, इस प्रकार 'जय-जय' शब्द का प्रयोग किया।

११२. वह केशी कुमार राजा हो गया—महान् हिमालय, महान् मलय, मेरू और महेन्द्र की भांति यावत् राज्य का प्रशासन करता हुआ विहरण करने लगा।

११३. उस उद्रायण राजा ने केशी राजा से पूछा।

११४. केशी राजा ने कौटुम्बिक पुरुषों को बुलाया—इस प्रकार जैसे जमालि की वक्तव्यता, वैसे ही वक्तव्य है यावत् भीतर और बाहर उसी प्रकार यावत् अभिनिष्क्रमण—अभिषेक उपस्थित किया।

११५. अनेक गणनायक, दंडनायक, राजे, ईश्वर, कोटवाल, माडम्बिक, कौटुम्बिक, इभ्य, श्रेष्ठी, सेनापति, सार्थवाह, दूत और संधिपालों के साथ, उनसे घिरे हुए केशी राजा ने उद्रायण राजा को प्रवर सिंहासन पर पूर्वाभिमुख बिठाया, बिठाकर एक सौ आठ स्वर्ण-कलश इस प्रकार जैसे जमालि (भ. ९/१८२) की वक्तव्यता यावत् महान् महान् निष्क्रमण अभिषेक से अभिषिक्त किया। अभिषिक्त कर दोनों हथेलियों से संपुट आकार वाली दसनखात्मक अंजलि को सिर के सम्मुख घुमा कर 'जय हो विजय हो' के द्वारा वर्धापित किया, वर्धापित कर इस प्रकार बोला—स्वामी! बताओ हम क्या दें? क्या वितरण करें? तुम्हें किस वस्तु का प्रयोजन है?

११६. उद्रायण राजा ने केशी राजा से इस प्रकार कहा—देवानुप्रिय! मैं कुत्रिकापण से रजोहरण और पात्र को लाना तथा नापित को बुलाना चाहता हूं—इस प्रकार जैसे जमालि की वक्तव्यता, इतना विशेष है—प्रिय का विप्रयोग दुःसह है, इस प्रकार कहती हुई पद्मावती ने अग्रकेशों को ग्रहण किया।

११७. केशी राजा ने दूसरी बार उत्तराभिमुख सिंहासन की रचना कराई। रचना करा कर राजा उद्रायण को श्वेत-पीत कलशों से स्नान कराया, करा कर शेष जमालि की भांति वक्तव्यता *यावत् चतुर्विध अलंकारों से अलंकृत किया। वह प्रतिपूर्ण अलंकृत होकर सिंहासन से उठा,* उठकर शिविका की अनुप्रदक्षिणा करता हुआ शिविका पर आरूढ हो गया। आरूढ होकर प्रवर सिंहासन पर पूर्वाभिमुख आसीन हुआ। वैसे ही धाय-मां भद्रासन पर आसीन हुई। इतना विशेष है—पद्मावती हंस लक्षण वाला पटशाटक ग्रहण कर शिविका की अनुप्रदक्षिणा

करती हुई शिविका पर आरूढ हो गई, आरूढ होकर वह उद्रायण राजा के दक्षिण पार्श्व में प्रवर भद्रासन पर आसीन हुई। शेष पूर्ववत् यावत् छत्र आदि तीर्थंकर के अतिशयों को देखा, देखकर हजार पुरुषों द्वारा वहन की जाने वाली शिविका को ठहराया। हजार पुरुषों द्वारा वहन की जाने वाली शिविका से नीचे उतरा, उतर कर जहां श्रमण भगवान् महावीर थे, वहां आया, वहां आकर श्रमण भगवान् महावीर को तीन बार वंदन-नमस्कार किया, वंदन-नमस्कार कर उत्तर पूर्व दिशा (ईशान कोण) में गया। जाकर स्वयं आभरण, माल्य और अलंकार उतारे।

११८. पद्मावती देवी ने हंसलक्षण-युक्त पटशाटक में आभरण, माल्य और अलंकार ग्रहण किए। ग्रहण कर हार, जल-धारा, सिन्दुवार (निर्गुण्डी) के फूल और टूटी हुई मोतियों की लड़ी के समान बार बार आंसू बहाती हुई उद्रायण राजा से इस प्रकार बोली—स्वामी! संयम में प्रयत्न करना। स्वामी! संयम में चेष्टा करना, स्वामी! संयम में पराक्रम करना, स्वामी! इस अर्थ में प्रमाद मत करना—यह कह कर केशीराजा और पद्मावती ने श्रमण भगवान महावीर को वंदन-नमस्कार किया, वंदन-नमस्कार कर जिस दिशा से आए थे, उसी दिशा में लौट गए।

११९. उद्रायण राजा ने स्वयं ही पंचमुष्टि लोच किया। शेष ऋषभदत्त की भांति वक्तव्यता यावत् सब दुःखों को क्षीण कर दिया।

१२०. अभीचीकुमार ने किसी दिन पूर्वरात्र और अपररात्र काल समय में कुटुम्ब-जागरिका की। जागरणा करते हुए इस प्रकार का आध्यात्मिक, स्मृत्यात्मक, अभिलाषात्मक एवं मनोगत संकल्प उत्पन्न हुआ—मैं उद्रायण का पुत्र प्रभावती देवी का आत्मज हूं। उद्रायण राजा मुझे छोड़कर अपने भानजे केशीकुमार को राज्य में स्थापित कर श्रमण भगवान् महावीर के पास मुंड होकर अगार से अनगारिता में प्रव्रजित हो गए हैं—इस प्रकार के महान् अप्रीतिकर मनोमानसिक दुःख से अभिभूत होकर अपने अंतःपुर परिवार से संपरिवृत होकर, अपने भांड और उपकरण लेकर वीतीभय नगर से निकल गया, निकलकर क्रमानुसार विचरण और ग्रामानुग्राम घूमते हुए जहां चंपा नगरी थी, जहां कूणिक राजा था वहां आया, आकर कूणिक राजा की शरण में रहने लगा। वह वहां विपुल भोग-समिति से समन्वागत था। वह अभीचीकुमार श्रमणोपासक भी था—जीव-अजीव को जानने वाला यावत् यथापरिगृहीत तपःकर्म के द्वारा अपने आपको भावित करते हुए विहार करने लगा। उसके मन में उद्रायण राजर्षि के साथ वैर का अनुबंध हो गया।

१२१. इस रत्नप्रभा-पृथ्वी नरक के परिपार्श्व में चौसठ लाख असुरकुमार आवास प्रज्ञप्त हैं। इस अभीचीकुमार ने बहुत वर्षों तक श्रमणोपासक-पर्याय का पालन किया। पालन कर अर्द्धमासिकी अनशन/संलेखना के द्वारा तीस भक्त का छेदन किया, छेदन कर उस स्थान की आलोचना-प्रतिक्रमण किए बिना कालमास में मृत्यु को प्राप्त कर इस रत्नप्रभा-पृथ्वी नरक के परिसामंत में चौसठ लाख असुरकुमारावासों में से किसी एक आतापक असुरकुमारावास में आतापक असुरकुमार-देव के रूप में उपपन्न हुआ। वहां कुछ आतापक असुरकुमार-देवों की स्थिति एक पल्योपम प्रज्ञप्त है। वहां अभीचीकुमार देव की एक पल्योपम स्थिति प्रज्ञप्त है।

१२२. भंते! वह अभीचीदेव उस देवलोक से आयु-क्षय, भव-क्षय और स्थिति-क्षय के अनंतर उद्वर्तन कर कहां जायेगा? कहां उपपन्न होगा?

गौतम! महाविदेह वास में सिद्ध होगा यावत् सब दुःखों का अंत करेगा।

१२३. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

सातवां उद्देशक

भाषा-पद

१२४. राजगृह नगर यावत् गौतम ने इस प्रकार कहा—भंते! भाषा आत्मा है? भाषा आत्मा से अन्य है?

गौतम! भाषा आत्मा नहीं है, भाषा आत्मा से अन्य है।

भंते! भाषा रूपी है? भाषा अरूपी है?

गौतम! भाषा रूपी है। भाषा अरूपी नहीं है।

भंते! भाषा सचित्त है? भाषा अचित्त है?

गौतम! भाषा सचित्त नहीं है, भाषा अचित्त है।

भंते! भाषा जीव है? भाषा अजीव है?

गौतम! भाषा जीव नहीं है, भाषा अजीव है।

भंते! जीवों के भाषा होती है? अजीवों के भाषा होती है?

गौतम! जीवों के भाषा होती है, अजीवों के भाषा नहीं होती।

भंते! बोलने से पहले भाषा होती है? बोलते समय भाषा होती है? बोलने का समय व्यतिक्रांत होने पर भाषा होती है?

गौतम! बोलने से पहले भाषा नहीं होती, बोलते समय भाषा होती है, बोलने का समय व्यतिक्रांत होने पर भाषा नहीं होती।

भंते! बोलने से पहले भाषा का भेदन होता है? बोलते समय भाषा का भेदन होता है? बोलने का समय व्यतिक्रांत होने पर भाषा का भेदन होता है?

गौतम! बोलने से पहले भाषा का भेदन नहीं होता, बोलते समय भाषा का भेदन होता है, बोलने का समय व्यतिक्रांत होने पर भाषा का भेदन नहीं होता।

१२५. भंते ! भाषा के कितने प्रकार प्रज्ञप्त हैं ?

गौतम ! भाषा के चार प्रकार प्रज्ञप्त हैं, जैसे—सत्या, मृषा, सत्यामृषा, असत्यामृषा।

मन-पद

१२६. भंते! मन आत्मा है? मन आत्मा से अन्य है?

गौतम! मन आत्मा नहीं है। मन आत्मा से अन्य है।

भंते! मन रूपी है? मन अरूपी है ?

गौतम! मन रूपी ह, मन अरूपी नहीं है।

भंते! मन सचित्त है? मन अचित्त है?

गौतम! मन सचित्त नहीं है, मन अचित्त है।

भंते! मन जीव है? मन अजीव है?

गौतम! मन जीव नहीं है, मन अजीव है।

भंते! मन जीवों के होता है? मन अजीवों के होता है?

गौतम! जीवों के मन होता है, अजीवों के मन नही होता।

भंते! पहले मन होता है? मनन के समय मन होता है? मनन का समय व्यतिक्रांत होने पर मन होता है?

गौतम! पहले मन नहीं होता, मनन के समय मन होता है , मनन का समय व्यतिक्रांत होने पर मन नहीं होता।

भंते! पहले मन का भेदन होता है? मनन के समय मन का भेदन होता है? मनन का समय व्यतिक्रांत होने पर मन का भेदन होता है?

गौतम! पहले मन का भेदन नहीं होता, मनन के समय मन का भेदन होता है, मनन का समय व्यतिक्रांत होने पर मन का भेदन नहीं होता।

१२७. भंते! मन के कितने प्रकार प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! मन के चार प्रकार प्रज्ञप्त हैं, जैसे—सत्य,मृष, सत्यामृष,असत्यामृष।

काय-पद

१२८. भंते! काय आत्मा है? काय आत्मा से अन्य है?

गौतम! काय आत्मा भी है, काय आत्मा से अन्य भी है।

भंते! काय रूपी है? काय अरूपी है?

गौतम! काय रूपी भी है, काय अरूपी भी है।

भंते! काय सचित्त है? काय अचित्त है?

गौतम! काय सचित्त भी है, काय अचित्त भी है।

भंते! काय जीव है? काय अजीव है?

गौतम! काय जीव भी है, काय अजीव भी है।

भंते! काय जीवों के होता है? काय अजीवों के होता है?

गौतम! काय जीवों के भी होता है, काय अजीवों के भी होता है ।

भंते! पहले काय होता है? चीयमान अवस्था में काय होता है? काय का समय व्यतिक्रांत होने पर काय होता है?

गौतम! पहले भी काय होता है, चीयमान अवस्था में भी काय होता है, काय का समय

व्यतिक्रांत होने पर भी काय होता है।

भंते! पहले काय का भेदन होता है? चीयमान अवस्था में काय का भेदन होता है? काय का समय व्यतिक्रांत होने पर काय का भेदन होता है?

गौतम! पहले भी काय का भेदन होता है, चीयमान अवस्था में भी काय का भेदन होता है, काय का समय व्यतिक्रांत होने पर भी काय का भेदन होता है।

१२९. भंते! काय के कितने प्रकार प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! काय के सात प्रकार प्रज्ञप्त हैं, जैसे—औदारिक, औदारिक-मिश्र, वैक्रिय, वैक्रिय-मिश्र, आहारक, आहारक-मिश्र, कार्मण।

मरण-पद

१३०. भंते! मरण के कितने प्रकार प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! मरण के पांच प्रकार प्रज्ञप्त है, जैसे—आवीचि-मरण, अवधि-मरण, आत्यंतिक-मरण, बाल-मरण, पंडित-मरण।

१३१. भंते! आवीचि-मरण कितने प्रकार का प्रज्ञप्त है?

गौतम! पांच प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे द्रव्य-आवीचि-मरण, क्षेत्र-आवीचि-मरण, काल-आवीचि-मरण, भव-आवीचि-मरण, भाव-आवीचि-मरण।

१३२. भंते! द्रव्य-आवीचि-मरण कितने प्रकार का प्रज्ञप्त है?

गौतम! चार प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—नैरयिक-द्रव्य-आवीचि-मरण, तिर्यग्योनिक-द्रव्य-आवीचि-मरण, मनुष्य-द्रव्य-आवीचि-मरण, देव-द्रव्य-आवीचि-मरण।

१३३. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—नैरयिक-द्रव्य-आवीचि-मरण नैरयिक-द्रव्य-आवीचि-मरण है?

गौतम! क्योंकि नैरयिक नैरयिक-द्रव्य में वर्तमान जो द्रव्य नैरयिक-आयुष्य के रूप में गृहीत, बद्ध, स्पृष्ट, कृत, प्रस्थापित, निविष्ट, अभिनिविष्ट और अभिसमन्वागत होते हैं, वे द्रव्य-तरंग की भांति प्रतिक्षण निरंतर विच्युत होते रहते हैं । इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—गौतम! नैरयिक-द्रव्य-आवीचि-मरण, इस प्रकार यावत् देव-द्रव्य-आवीचि-मरण है।

१३४. *भंते! क्षेत्र-आवीचि-मरण कितने प्रकार का प्रज्ञप्त है?*

गौतम! चार प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—नैरयिक-क्षेत्र-आवीचि-मरण यावत् देव-क्षेत्र-आवीचि-मरण।

१३५. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—नैरयिक-क्षेत्र-आवीचि-मरण नैरयिक-क्षेत्र-आवीचि-मरण है?

गौतम! जो नैरयिक नैरयिक-क्षेत्र में वर्तमान जो द्रव्य नैरयिक-आयुष्य के रूप में गृहीत होते हैं, इस प्रकार जैसे द्रव्य-आवीचि-मरण की वक्तव्यता वैसे ही क्षेत्र-आवीचि-मरण भी वक्तव्य है। इसी प्रकार यावत् भव-आवीचि-मरण।

१३६. भंते! अवधि-मरण कितने प्रकार का प्रज्ञप्त है?

गौतम! पांच प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—द्रव्य-अवधि-मरण, क्षेत्र-अवधि-मरण, काल-अवधि-मरण, भव-अवधि-मरण, भाव-अवधि-मरण।

१३७. भंते! द्रव्य-अवधि-मरण कितने प्रकार का प्रज्ञप्त है?

गौतम! चार प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—नैरयिक-द्रव्य-अवधि-मरण यावत् देव-द्रव्य-अवधि-मरण।

१३८. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—नैरयिक-द्रव्य-अवधि-मरण नैरयिक-द्रव्य-अवधि-मरण है?

गौतम! जो नैरयिक नैरयिक-द्रव्य में वर्तमान जिन द्रव्यों से संप्रति मरते हैं, वे नैरयिक उन्हीं द्रव्यों से अनागत-काल में पुनरपि मरेंगे। गौतम! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—यावत् द्रव्य-अवधि-मरण है। इसी प्रकार तिर्यग्योनिक-, मनुष्य- और देव-द्रव्य-अवधि-मरण की वक्तव्यता। इसी प्रकार इस गमक से क्षेत्र-अवधि-मरण, काल-अवधि-मरण, भव-अवधि-मरण और भाव-अवधि-मरण की वक्तव्यता।

१३९. भंते! आत्यंतिक-मरण की पृच्छा।

गौतम! पांच प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—द्रव्य-आत्यंतिक-मरण, क्षेत्र- आत्यंतिक-मरण यावत् भाव-आत्यंतिक-मरण।

१४०. भंते! द्रव्य-आत्यंतिक-मरण कितने प्रकार का प्रज्ञप्त है?

गौतम! चार प्रकार प्रज्ञप्त हैं, जैसे—नैरयिक-द्रव्य-आत्यंतिक-मरण यावत् देव-द्रव्य-आत्यंतिक-मरण।

१४१. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—नैरयिक-द्रव्य-आत्यंतिक-मरण नैरयिक-द्रव्य-आत्यंतिक-मरण है?

गौतम! जो नैरयिक नैरयिक-द्रव्य में वर्तमान जिन द्रव्यों से संप्रति मरते हैं, वे नैरयिक उन्हीं द्रव्यों से अनागत-काल में पुनरपि नहीं मरेंगे। इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—यावत् नैरयिक-द्रव्य-आत्यंतिक-मरण है। इसी प्रकार तिर्यग्योनिक-, मनुष्य- और देव-द्रव्य-आत्यंतिक-मरण की वक्तव्यता। इसी प्रकार क्षेत्र-आत्यंतिक-मरण तथा इसी प्रकार यावत् भाव-आत्यंतिक-मरण की वक्तव्यता।

१४२. भंते! बाल-मरण कितने प्रकार का प्रज्ञप्त है?

गौतम! बारह प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—वलय-मरण, वशार्त्त-मरण, अंतः-शल्य-मरण, तद्भव-मरण, गिरि-पतन, तरु-पतन, जल-प्रवेश, ज्वलन-प्रवेश, विष-भक्षण, शस्त्रावपाटन, वैहायस, गृद्ध-पृष्ठ।

१४३. भंते! पंडित-मरण कितने प्रकार का प्रज्ञप्त है?

गौतम! दो प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—प्रायोपगमन, भक्त-प्रत्याख्यान।

१४४. भंते! प्रायोपगमन कितने प्रकार का प्रज्ञप्त है?

गौतम! दो प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—निर्हारि, अनिर्हारि। यह नियमतः अप्रतिकर्म होता है।

१४५. भंते! भक्त-प्रत्याख्यान कितने प्रकार का प्रज्ञप्त है?

गौतम! दो प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—निर्हारि, अनिर्हारि। यह नियमतः सप्रतिकर्म होता है।

१४६. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

आठवां उद्देशक

कर्म-प्रकृति-पद

१४७. भंते! कर्म-प्रकृतियां कितनी प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! कर्म-प्रकृतियां आठ प्रज्ञप्त हैं। इस प्रकार बंध-स्थिति-उद्देशक **पण्णवणा** (पद २३) की भांति निरवशेष वक्तव्य है।

१४८. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

नौवां उद्देशक

भावितात्म-विक्रिया-पद

१४९. राजगृह नगर यावत् गौतम ने इस प्रकार कहा—भंते! जैसे कोई पुरुष रज्जु से बंधी घटिका लेकर जाए, इसी प्रकार भावितात्मा अनगार भी क्या हाथ में रज्जु से बंधी घटिका ले स्वयं कृत्यागत होकर (माया या विद्या का प्रयोग कर) ऊपर आकाश में उड़ता है?

हां, उड़ता है।

१५०. भंते! भावितात्मा अनगार हाथ में रज्जु से बंधी घटिका ले, स्वयं कृत्यागत होकर कितने रूपों का निर्माण करने में समर्थ है?

गौतम! जैसे कोई युवक युवती का हाथ प्रगाढता से पकड़ता है तथा गाड़ी के चक्के की नाभि आरों से युक्त होती है, उसी प्रकार भावितात्मा अनगार वैक्रिय-समुद्घात से समवहत होता है यावत् गौतम! वह भावितात्मा अनगार संपूर्ण जंबूद्वीप-द्वीप को अनेक स्त्री-रूपों से आकीर्ण, व्यतिकीर्ण, उपस्तृत (बिछौना सा बिछाया हुआ), संस्तृत (भली भांति बिछौना सा बिछाया हुआ), स्पृष्ट और अवगाढावगाढ (अत्यन्त सघन रूप से व्याप्त) करने में समर्थ है। *गौतम! भावितात्मा अनगार की विक्रिया-शक्ति का यह इतना विषय केवल विषय की दृष्टि* से प्रतिपादित है। भावितात्मा अनगार ने क्रियात्मक रूप में न तो कभी ऐसी विक्रिया की, न करता है और न करेगा।

१५१. जैसे कोई पुरुष हिरण्य-पेटी को लेकर जाए, इसी प्रकार भावितात्मा अनगार हाथ में हिरण्य-पेटी को ले, कृत्यागत होकर ऊपर आकाश में उड़ता है?

शेष पूर्ववत्। इसी प्रकार स्वर्ण-पेटी, इसी प्रकार रत्न-पेटी, वज्र-पेटी, वस्त्र-पेटी, आभरण--पेटी, इसी प्रकार बांस की खपाचियों से बनी हुई चटाई अथवा टाटी, खस से बनी हुई टाटी,

चमड़े से गुंथी हुई खाट, ऊनी कंबल, इसी प्रकार लोह-भार, ताम्र-भार, पीतल-भार, शीशक-भार, हिरण्य-भार, स्वर्ण-भार, वज्र-भार।

१५२. जैसे कोई वल्गुलिका (चमगादड़) होती है, वह दोनों पैरों को लटका कर ऊर्ध्व पैर और अधःशिर स्थित होती है, इसी प्रकार भावितात्मा अनगार भी स्वयं वल्गुलिका-कृत्यागत होकर ऊपर आकाश में उड़ता है?

इस प्रकार यज्ञोपवीत (**भगवई,** ३/२०३) की वक्तव्यता कथनीय है यावत् विक्रिया करेगा।

१५३. जैसे कोई जोंक होती है, वह पानी में शरीर को उछाल-उछाल कर चलती है, इसी प्रकार अनगार भी। शेष वल्गुलिका की भांति वक्तव्यता।

१५४. जैसे कोई बबीला पक्षी होता है, वह दोनों पैरों को एक साथ तुल्य रेखा में उठाता हुआ, उठाता हुआ चलता है, इसी प्रकार भावितात्मा अनगार भी, शेष पूर्ववत्।

१५५. जैसे कोई विराल पक्षी (बड़ी चमगादड़) होता है, वह एक वृक्ष से दूसरे वृक्ष पर कूदता हुआ चलता है, इसी प्रकार भावितात्मा अनगार भी। शेष पूर्ववत्।

१५६. जैसे कोई चकोर पक्षी होता है, वह दोनों पैरों को एक साथ तुल्य रेखा में उठाता हुआ, उठाता हुआ चलता है, इसी प्रकार भावितात्मा अनगार भी। शेष पूर्ववत्।

१५७. जैसे कोई हंस होता है, वह एक तट से दूसरे तट पर क्रीड़ा करता हुआ, क्रीड़ा करता हुआ चलता है, इसी प्रकार भावितात्मा अनगार स्वयं हंस-कृत्यागत होकर क्रीड़ा करता है, पूर्ववत्।

१५८. जैसे कोई समुद्र-काक होता है, वह एक तरंग से दूसरी तरंग पर कूदता हुआ, कूदता हुआ चलता है, इसी प्रकार भावितात्मा अनगार भी, तथावत्।

१५९. जैसे कोई पुरुष चक्र को ग्रहण कर चलता है, इसी प्रकार भावितात्मा अनगार स्वयं चक्र हाथ में ले, कृत्यागत होकर चलता है। शेष रज्जु से बंधी घटिका की भांति वक्तव्यता। इसी प्रकार छत्र, इसी प्रकार चर्म की वक्तव्यता।

१६०. जैसे कोई पुरुष रत्न को ग्रहण कर चलता है, इसी प्रकार भावितात्मा अनगार भी। इसी प्रकार वज्र, वैडूर्य यावत् अरिष्ट। इसी प्रकार उत्पल-हस्तक, इसी प्रकार पद्म-हस्तक, कुमुद--हस्तक, नलिन-हस्तक, सुभग-हस्तक, सौगंधिक-हस्तक, पौण्डरिक-हस्तक, महापोण्डरिक-हस्तक, शतपत्र-हस्तक। जैसे कोई पुरुष सहस्र-पत्रक ग्रहण कर चलता है, इसी प्रकार भावितात्मा अनगार भी।

१६१. जैसे कोई पुरुष नाल-तंतु को विदीर्ण कर, विदीर्ण कर चलता है, इसी प्रकार भावितात्मा अनगार भी स्वयं नाल-तंतु-कृत्यागत होकर चलता है। पूर्ववत्।

१६२. जैसे कोई कमलिनी होती है वह पानी में उन्मज्जन कर (डुबकी लगा कर) उन्मज्जन कर ठहरती है, इसी प्रकार भावितात्मा अनगार भी। शेष वल्गुलिका की भांति वक्तव्यता।

१६३. जैसे कोई वनषंड होता है—कृष्ण, कृष्ण अवभास वाला यावत् काली कजरारी घटा के समान चित्त को प्रसन्न करने वाला, दर्शनीय, कमनीय और रमणीय, इसी प्रकार भावितात्मा

अनगार भी स्वयं वनषंड-कृत्यागत होकर ऊपर आकाश में उड़ता है?

शेष पूर्ववत्।

१६४. जैसे कोई पुष्करिणी होती है—चतुष्कोण वाली, समतीर वाली, क्रमशः सुन्दर तट वाली, गंभीर और शीतल जल वाली यावत् जिसमें उन्नत शब्द और मधुर स्वर का नाद हो रहा है, वह चित्त को प्रसन्न करने वाली, दर्शनीय, कमनीय और रमणीय है, इसी प्रकार भावितात्मा अनगार भी स्वयं पुष्पकरिणी-कृत्यागत होकर ऊपर आकाश में उड़ता है?

हां, उड़ता है।

१६५. भंते! भावितात्मा अनगार कितने पुष्पकरिणी-कृत्यागत रूपों का निर्माण करने में समर्थ है?

शेष पूर्ववत् यावत् विक्रिया करेगा।

१६६. भंते! क्या मायी विक्रिया करता है? अमायी विक्रिया करता है?

गौतम! मायी विक्रिया करता है, अमायी विक्रिया नहीं करता। मायी इस स्थान की आलोचना-प्रतिक्रमण किए बिना काल को प्राप्त होता है, उसके आराधना नहीं होती। अमायी उस स्थान की आलोचना-प्रतिक्रमण कर काल को प्राप्त होता है, उसके आराधना होती है।

१६७. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है। इस प्रकार यावत् विहरण करने लगे।

दसवां उद्देशक

छाद्मस्थिक-समुद्घात-पद

१६८. भंते! छाद्मस्थिक समुद्घात कितने प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! छाद्मस्थिक समुद्घात के छह प्रकार प्रज्ञप्त हैं, जैसे—वेदना-समुद्घात, इस प्रकार छाद्मस्थिक समुद्घात **पण्णवणा** (३६/५३-५८) की भांति ज्ञातव्य है यावत् आहारक-समुद्घात।

१६९. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है। इस प्रकार यावत् विहरण करने लगे।

● ● ●

चौदहवां शतक

पहला उद्देशक

संग्रहणी गाथा

१. चर २. उन्माद ३. शरीर ४. पुद्‌गल ५. अग्नि ६. आहार कैसा हो? ७.८. संसृष्ट, अन्तर ९. अनगार १०. केवली।

लेश्यानुसारी उपपात-पद

१. राजगृह नगर यावत् गौतम ने इस प्रकार कहा—भंते! भावितात्मा अनगार ने चरम देवावास का व्यतिक्रमण किया, परम देवावास को संप्राप्त नहीं किया, इस मध्य वह काल करे तो भंते! उसकी गति और उसका उपपात कहां प्रज्ञप्त है?

गौतम! वहां जो परिपार्श्व है—मध्यवर्ती देवलोक हैं, जिस लेश्या में वर्तमान भावितात्मा अनगार ने काल किया, उस लेश्या के अनुरूप जो देवावास हैं वहां उसकी गति और उपपात प्रज्ञप्त है। वह वहां जाकर उत्पत्ति-कालीन लेश्या के परिणाम की विराधना करता है तो कर्म-लेश्या से उसका प्रतिपतन हो जाता है, अशुभतर लेश्या में चला जाता है। वह वहां जाकर विराधना नहीं करता है तो उसी लेश्या की उपसंपदा में रहता है।

२. भंते! भावितात्मा अनगार ने चरम असुरकुमारावास का व्यतिक्रमण किया, परम असुरकुमारावास को प्राप्त नहीं किया, इस मध्य वह काल करे तो उसकी गति और उसका उपपात कहां प्रज्ञप्त है?

गौतम! वहां जो परिपार्श्व है, मध्यवर्ती असुरकुमारावास हैं, जिस लेश्या में वर्तमान भावितात्मा अनगार ने काल किया, उस लेश्या के अनुरूप जो असुरकुमारावास हैं, वहां उसकी गति और उसका उपपात प्रज्ञप्त है। वह वहां जाकर उत्पत्तिकालीन लेश्या के परिणाम की विराधना करता है तो कर्म-लेश्या से उसका प्रतिपतन हो जाता है, अशुभतर लेश्या में चला जाता है। वह वहां जाकर विराधना नहीं करता है तो उसी लेश्या की उपसंपदा में रहता है।

इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमारावास, ज्योतिष्कावास, वैमानिकावास यावत् विहरण करता है।

नैरयिक-आदि का गति-विषयक-पद

३. भंते! नैरयिकों के कैसी शीघ्र गति होती है? किस प्रकार का शीघ्र गति-काल प्रज्ञप्त है?

गौतम! जैसे कोई पुरुष तरुण, बलवान्, युगवान्, युवा, स्वस्थ और सधे हुए हाथों वाला है, उसके हाथ, पांव, पार्श्व, पृष्ठान्तर और उरु दृढ तथा विकसित हैं। सम श्रेणी में स्थित दो ताल वृक्ष और परिघा के समान जिसकी भुजाएं हैं। चर्मेष्टक, पाषाण, मुद्गर और मुट्ठी के प्रयोगों से जिसके शरीर के पुट्ठे आदि सुदृढ हैं। जो आंतरिक उत्साह बल से युक्त है। लंघन, प्लवन, धावन और व्यायाम करने में समर्थ है। छेक, दक्ष, प्राप्तार्थ, कुशल, मेधावी, निपुण और सूक्ष्म शिल्प से समन्वित है। वह पुरुष संकुचित भुजा को फैलाता है, फैलाई हुई भुजा को संकुचित करता है। खुली मुट्ठी को बंद करता है, बंद मुट्ठी को खोलता है। खुली आंखों को बंद करता है, बंद आंखों को खोलता है। क्या नैरयिकों का गति-काल इतनी शीघ्रता से होता है?

यह अर्थ संगत नहीं है। नैरयिक एक समय, दो समय अथवा तीन समय वाली विग्रह-गति से उपपन्न हो जाते हैं। गौतम! नैरयिकों के वैसी शीघ्र गति, वैसा शीघ्र गति-काल प्रज्ञप्त है। इस प्रकार यावत् वैमानिक, इतना विशेष है—एकेन्द्रियों के चार समय वाली विग्रह-गति वक्तव्य है, शेष पूर्ववत्।

नैरयिक का अनंतर-उपपन्नक-आदि-पद

४. भंते! क्या नैरयिक अनंतर-उपपन्नक हैं? परंपर-उपपन्नक हैं? अनंतर-परंपर-अनुपपन्नक हैं?

गौतम! नैरथिक अनंतर-उपपन्नक भी हैं, परंपर-उपपन्नक भी हैं, अनंतर-परंपर-अनुपपन्नक भी हैं।

५. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—नैरयिक अनंतर-उपपन्नक भी हैं, परंपर-उपपन्नक भी हैं, अनंतर-परंपर-अनुपपन्नक भी हैं?

गौतम! जो नैरयिक प्रथम-समय-उपपन्नक हैं, वे नैरयिक अनंतर-उपपन्नक हैं। जो नैरयिक अप्रथमसमय उपपन्नक हैं, वे नैरयिक परंपर-उपपन्नक हैं। जो नैरयिक विग्रह-गति—अंतराल--गति में समापन्नक हैं, वे नैरयिक अनंतर-परंपर-अनुपपन्नक हैं। इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—यावत् अनंतर-परंपर-अनुपपन्नक भी हैं। इसी प्रकार निरंतर यावत् वैमानिक।

६. भंते! अनंतर-उपपन्नक नैरयिक क्या नैरयिक आयुष्य का बंध करते हैं? क्या तिर्यंच-, -मनुष्य- और देव-आयुष्य का बंध करते हैं?

गौतम! न नैरयिक-आयुष्य का बंध करते हैं, यावत् न देव-आयुष्य का बंध करते हैं।

७. भंते! परंपर-उपपन्नक-नैरयिक क्या नैरयिक-आयुष्य का बंध करते हैं यावत् देव-आयुष्य का बंध करते हैं?

गौतम! नैरयिक-आयुष्य का बंध नहीं करते, तिर्यग्योनिक-आयुष्य का बंध करते हैं, मनुष्य--आयुष्य का भी बंध करते हैं, देव-आयुष्य का बंध नहीं करते।

८. भंते! अनन्तर-परंपर-अनुपन्नक क्या नैरयिक-आयुष्य का बंध करते हैं—पृच्छा।

गौतम! नैरयिक-आयुष्य का बंध नहीं करते यावत् देव-आयुष्य का बंध नहीं करते। इसी प्रकार यावत् वैमानिक की वक्तव्यता। इतना विशेष है—परंपर-उपपन्नक-पंचेन्द्रिय-

-तिर्यग्-योनिक और परंपर-उपपन्न-मनुष्य चारों गतियों के आयुष्य का बंध करते हैं, शेष पूर्ववत्।

९. भंते! क्या नैरयिक अनंतर-निर्गत हैं? क्या परंपर-निर्गत हैं? क्या अनंतर-परंपर-अनिर्गत हैं?

गौतम! नैरयिक अनंतर-निर्गत भी हैं, परंपर-निर्गत भी हैं, अनंतर-परंपर-अनिर्गत भी हैं—न अनंतर-निर्गत हैं, न परंपर-निर्गत हैं।

१०. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—यावत् अनंतर-परंपर-अनिर्गत भी हैं?

गौतम! जो नैरयिक प्रथम-समय निर्गत हैं, वे नैरयिक अनंतर समय निर्गत हैं। जो नैरयिक अप्रथम-समय-निर्गत हैं, वे नैरयिक परंपर-निर्गत हैं। जो नैरयिक विग्रहगति-समापन्नक हैं, वे नैरयिक अनंतर-परंपर-अनिर्गत हैं। गौतम! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—यावत् अनंतर-परंपर-अनिर्गत भी हैं। इसी प्रकार यावत् वैमानिक की वक्तव्यता।

११. भंते! अनंतर-निर्गत-नैरयिक क्या नैरयिक-आयुष्य का बंध करते हैं यावत् देव-आयुष्य का बंध करते हैं?

गौतम! नैरयिक-आयुष्य का बंध नहीं करते यावत् देव-*आयुष्य* का बंध नहीं करते।

१२. भंते! परंपर-निर्गत-नैरयिक क्या नैरयिक-आयुष्य का बंध करते हैं? पृच्छा।

गौतम! नैरयिक-आयुष्य का भी बंध करते हैं यावत् देव-आयुष्य का भी बंध करते हैं।

१३. भंते! अनंतर-परंपर-अनिर्गत नैरयिक की पृच्छा।

गौतम! नैरयिक-आयुष्य का बंध नहीं करते यावत् देव-आयुष्य का बंध नहीं करते। निरवशेष यावत् वैमानिक की वक्तव्यता।

१४. भंते! क्या नैरयिक अनंतर-खेद के साथ उपपन्नक हैं? परंपर-खेद के साथ उपपन्नक हैं? अनंतर-परंपर-खेद के साथ अनुपपन्नक हैं?

गौतम! नैरयिक अनंतर-खेद के साथ उपपन्नक भी हैं, परंपर-खेद के साथ उपपन्नक भी हैं, अनंतर-परंपर-खेद के साथ अनुपपन्नक भी हैं। इसी प्रकार इस अभिलाप की भांति चारों दंडक वक्तव्य हैं।

१५. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है। यावत् विहरण करने लगे।

दूसरा उद्देशक

उन्माद-पद

१६. भंते! उन्माद कितने प्रकार का प्रज्ञप्त है?

गौतम! उन्माद दो प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—यक्षावेश और मोहनीय-कर्म के उदय से होने वाला। जो यक्षावेश का उन्माद है वह सुख-वेदनतर है, उसका वेदन अतिशय क्लेश--रहित होता है और सुख-विमोचनतर है, उससे अतिशय क्लेश के बिना मुक्ति होती है।

जो मोहनीय-कर्म के उदय से होने वाला उन्माद है, उसका वेदन यक्षावेश के उन्माद की अपेक्षा अतिशय क्लेशपूर्वक होता है और वह दुःख-विमोचनतर है, उससे यक्षावेश उन्माद

की अपेक्षा अतिशय क्लेशपूर्वक मुक्ति होती है।

१७. भंते! नैरयिकों के कितने प्रकार का उन्माद प्रज्ञप्त है?

गौतम! दो प्रकार का उन्माद प्रज्ञप्त है, जैसे—यक्षावेश और मोहनीय-कर्म के उदय से होने वाला।

१८. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—नैरयिकों के दो प्रकार का उन्माद प्रज्ञप्त है, जैसे—यक्षावेश और मोहनीय-कर्म के उदय से होने वाला?

गौतम! देव अशुभ पुद्गलों का प्रक्षेप करते हैं, उन अशुभ पुद्गलों के प्रक्षेप से नैरयिक यक्षावेश के उन्माद को प्राप्त होते हैं। मोहनीय-कर्म के उदय से नैरयिक मोहनीय के उन्माद को प्राप्त होते हैं।

गौतम! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—नैरयिकों के दो प्रकार का उन्माद प्रज्ञप्त है, जैसे—यक्षावेश और मोहनीय-कर्म के उदय से होने वाला।

१९. भंते! असुरकुमारों के कितने प्रकार का उन्माद प्रज्ञप्त है?

गौतम! दो प्रकार का उन्माद प्रज्ञप्त है, जैसे—यक्षावेश और मोहनीय-कर्म के उदय से होने वाला।

२०. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—असुरकुमारों के दो प्रकार का उन्माद प्रज्ञप्त है, जैसे—यक्षावेश और मोहनीय कर्म के उदय से होने वाला?

गौतम! महर्द्धिकतर देव अशुभ पुद्गलों का प्रक्षेप करते हैं, उन अशुभ पुद्गलों के प्रक्षेप से असुरकुमार यक्षावेश के उन्माद को प्राप्त होते हैं। मोहनीय-कर्म के उदय से वे मोहनीय के उन्माद को प्राप्त होते हैं। इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—यावत् कर्म के उदय से होने वाला। पृथ्वीकायिक यावत् मनुष्य—इनमें उन्माद नैरयिक की भांति वक्तव्य है। वाणमंतर, ज्योतिष्क, वैमानिक में उन्माद असुरकुमारों की भांति वक्तव्य है।

वृष्टिकाय-करण-पद

२१. भंते! वर्षा-काल में बरसने वाला पर्जन्य क्या वर्षा करता है?

हां, करता है।

२२. भंते! जब देवराज देवेन्द्र शक्र वर्षा करना चाहता है तब वह कैसे करता है?

गौतम! तब देवराज देवेन्द्र शक्र आभ्यंतर-परिषद् के देवों को आमंत्रित करता है। आभ्यंतर-परिषद् के देव शक्र का निर्देश प्राप्त कर मध्यम परिषद् के देवों को बुलाते हैं। मध्यम-परिषद् के देव आभ्यंतर-परिषद् का निर्देश प्राप्त कर बाह्य परिषद् के देवों को बुलाते हैं। बाह्य-परिषद् के देव मध्यम-परिषद् का निर्देश प्राप्त कर बाह्यबाह्यक-परिषद् के देवों को बुलाते हैं। बाह्यबाह्यक-परिषद् के देव बाह्य परिषद् के निर्देश पर आभियोगिक-देवों को बुलाते हैं। आभियोगिक-परिषद् के देव बाह्यबाह्यक-परिषद् के निर्देश पर वृष्टिकायिक-देवों को बुलाते हैं। वे वृष्टिकायिक-देव आभियोगिक-देवों के निर्देश पर वर्षा करते हैं। गौतम! इस प्रकार देवराज देवेन्द्र शक्र वर्षा करता है।

२३. भंते! क्या असुरकुमार-देव वर्षा करते हैं?

हां, करते हैं।

२४. भंते! असुरकुमार-देव किस कारण से वर्षा करते हैं?

गौतम! जो ये अरहंत भगवान हैं, इनके जन्म-महिमा में, निष्क्रमण-महिमा में, केवलज्ञान--उत्पत्ति-महिमा में, परिनिर्वाण-महिमा में। गौतम! इस प्रकार ये असुरकुमार-देव वर्षा करते हैं। इस प्रकार नागकुमार भी, इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमार। इसी प्रकार वाणमंतर, ज्योतिष्क, वैमानिक की वक्तव्यता।

तमस्काय-करण-पद

२५. भंते! जब देवराज देवेन्द्र ईशान तमस्काय (सघन अंधकार) करना चाहता है, तब वह कैसे करता है?

गौतम! देवराज देवेन्द्र ईशान आभ्यंतर-परिषद् के देवों को बुलाता है। वे आभ्यंतर-परिषद् के देव देवराज देवेन्द्र ईशान के निर्देश पर मध्यम-परिषद् के देवों को बुलाते हैं। मध्यम-परिषद् के देव आभ्यंतर-परिषद् के देवों के निर्देश पर बाह्य-परिषद् के देवों को बुलाते हैं। बाह्य--परिषद् के देव मध्यम-परिषद् के निर्देश पर बाह्यबाह्यक-देवों को बुलाते हैं। वे बाह्यबाह्यक--देव बाह्य-परिषद् के देवों के निर्देश पर आभियोगिक-देवों को बुलाते हैं। वे आभियोगिक--देव बाह्यबाह्यक-परिषद् के निर्देश पर तमस्कायिक-देवों को बुलाते हैं। वे तमस्कायिक-देव आभियोगिक-देवों के निर्देश पर तमस्काय करते हैं। गौतम! इस प्रकार देवराज देवेन्द्र ईशान तमस्काय करता है।

२६. भंते! क्या असुरकुमार-देव भी तमस्काय करते हैं?

हां, करते हैं।

२७. भंते! असुरकुमार देव किस कारण से तमस्काय करते हैं?

गौतम! क्रीड़ा-रति के लिए, प्रत्यनीक—शत्रु को विमूढ बनाने के लिए, गोपनीय द्रव्य के संरक्षण के लिए, अपने शरीर को प्रच्छन्न करने के लिए। गौतम! इस प्रकार असुरकुमार-देव तमस्काय करते हैं। इसी प्रकार यावत् वैमानिक की वक्तव्यता।

२८. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है। यावत् विहरण करने लगे।

तीसरा उद्देशक

विनय-विधि-पद

२९. भंते! महाकाय-महाशरीर-देव भावितात्मा अनगार के बीचोंबीच होकर जाता है?

गौतम! कोई जाता है, कोई नहीं जाता।

३०. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—कोई जाता है, कोई नहीं जाता?

गौतम! दो प्रकार के देव प्रज्ञप्त हैं, जैसे—मायी-मिथ्यादृष्टि-उपपन्नक, अमायी-सम्यग्दृष्टि-

-उपपन्नक। जो मायी-मिथ्यादृष्टि-उपपन्नक देव हैं, वे भावितात्मा अनगार को देखते हैं, देख कर वंदन-नमस्कार नहीं करते, सत्कार सम्मान नहीं करते, कल्याणकारी, मंगल, देव और प्रशस्त चित्त वाले भावितात्मा अनगार की पर्युपासना नहीं करते। वे भावितात्मा अनगार के बीचोंबीच से होकर जाते हैं। जो अमायी-सम्यग्दृष्टि-उपपन्नक देव हैं, वे भावितात्मा अनगार को देखते हैं, देखकर वंदन-नमस्कार करते हैं, सत्कार-सम्मान करते हैं, कल्याणकारी, मंगल, देव और प्रशस्त चित्त वाले भावितात्मा अनगार की पर्युपासना करते हैं। वे भावितात्मा अनगार के बीचोंबीच होकर नहीं जाते। गौतम! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—कोई जाता है, कोई नहीं जाता।

३१. भंते! महाकाय-महाशरीर-असुरकुमार भावितात्मा अनगार के बीचोंबीच होकर जाता है?

पूर्ववत्। इसी प्रकार देव-दण्डक वक्तव्य है यावत् वैमानिक की वक्तव्यता।

३२. भंते! नैरयिकों में सत्कार-सम्मान, कृति-कर्म, अभ्युत्थान, अंजलि-प्रग्रह, आसन--अभिग्रह, आसन-अनुप्रदान, आते हुए के सामने जाना, स्थित की पर्युपासना करना, जाते हुए को पहुंचाना आदि होता है?

यह अर्थ संगत नहीं है।

३३. भंते! असुरकुमारों में सत्कार, सम्मान यावत् जाते हुए को पहुंचाना आदि होता है?

हां, होता है। इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमार की वक्तव्यता। पृथ्वीकायिक यावत् चतुरिन्द्रिय—ये नैरयिक की भांति वक्तव्य हैं।

३४. भंते! पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों में सत्कार यावत् जाते हुए को पहुंचाना आदि होता है?

हां, होता है। आसन-अभिग्रह और आसन-अनुप्रदान नहीं होता।

३५. भंते! मनुष्यों में सत्कार, सम्मान, कृतिकर्म, अभ्युत्थान, अंजलि-प्रग्रह, आसन-अभिग्रह, आसन-अनुप्रदान, आते हुए के सामने जाना, स्थित की पर्युपासना करना, जाते हुए को पहुंचाना आदि होता है?

हां, होता है। वाणमंतर, ज्योतिष्क और वैमानिकों की असुरकुमारों की भांति वक्तव्यता।

३६. भंते! अल्पर्धिक-देव महर्द्धिक-देवों के बीचोंबीच होकर जाते हैं?

यह अर्थ संगत नहीं है।

३७. सम-ऋद्धि वाला देव सम-ऋद्धि वाले देव के बीचोंबीच होकर जाता है?

यह अर्थ संगत नहीं है। यदि प्रमत्त हो तो जा सकता है।

३८.भंते! क्या वह शस्त्र से प्रहार कर जाने में समर्थ है? प्रहार किए बिना जाने में समर्थ है?

गौतम! प्रहार कर जाने में समर्थ है। प्रहार किए बिना जाने में समर्थ नहीं है।

३९. भंते! क्या वह पहले शस्त्र से प्रहार करता है, पश्चात् बीचोंबीच होकर जाता है? क्या पहले बीचोंबीच होकर जाता है, पश्चात् शस्त्र से प्रहार करता है?

गौतम! पहले शस्त्र से प्रहार करता है, पश्चात् बीचोंबीच होकर जाता है। पहले बीचोंबीच

होकर जाकर पश्चात् शस्त्र से प्रहार नहीं करता। इस प्रकार इस अभिलाप के अनुसार जैसे दसवें शतक (भ. १०/२४-३०) में आत्म-ऋद्धि उद्देशक, वैसे चारों दण्डक निरवशेष वक्तव्य हैं, यावत् महान्-ऋद्धि वाली वैमानिक-देवी अल्प-ऋद्धि वाली वैमानिक-देवी का शस्त्र से प्रहार कर जाने में भी समर्थ है।

नैरयिक-नैरयिकों का प्रत्यनुभव-पद

४०. भंते! रत्नप्रभा-पृथ्वी के नैरयिक किस प्रकार के पुद्गल-परिणाम का प्रत्यनुभव करते हुए विहरण करते हैं?

गौतम! अकांत, अप्रिय, अशुभ, अमनोज्ञ और अमनोहर। इसी प्रकार यावत् अधःसप्तमी-पृथ्वी के नैरयिकों की वक्तव्यता।

४१. भंते! रत्नप्रभा-पृथ्वी के नैरयिक किस प्रकार के वेदना-परिणाम का प्रत्यनुभव करते हुए विहरण करते हैं?

गौतम! अनिष्ट यावत् अमनोहर। इस प्रकार जैसे **जीवाजीवाभिगम** के द्वितीय नैरयिक उद्देशक (३/१२८) में यावत्—

४२. भंते! अधःसप्तमी-पृथ्वी के नैरयिक किस प्रकार के परिग्रह-संज्ञा-परिणाम का प्रत्यनुभव करते हुए विहरण करते हैं?

गौतम! अनिष्ट यावत् अमनोहर।

४३. भंते! वह ऐसा ही है। भते! वह ऐसा ही है।

चौथा उद्देशक

पुद्गल-जीव-परिणाम-पद

४४. भंते! यह पुद्गल अनंत और शाश्वत अतीत में किसी एक समय रूक्ष होता है? किसी एक समय अरूक्ष (स्निग्ध) होता है? किसी एक समय रूक्ष अथवा अरूक्ष होता है? पूर्व में जो एक-वर्ण आदि परिणाम वाला है, वह करण के द्वारा अनेक-वर्ण, अनेक-रूप-परिणाम का परिणमन करता है? वह परिणाम निर्जीर्ण होता है, उसके पश्चात् वह एक-वर्ण, एक-रूप हो जाता है?

हां गौतम! यह पुद्गल अनंत और शाश्वत अतीत में किसी एक समय रूक्ष होता है, किसी एक समय अरूक्ष (स्निग्ध) होता है। किसी एक समय रूक्ष अथवा अरूक्ष होता है। पूर्व में जो एक-वर्ण आदि परिणाम वाला है, वह करण के द्वारा अनेक-वर्ण, अनेक-रूप आदि परिणाम का परिणमन करता है। वह परिणाम निर्जीर्ण होता है, उसके पश्चात् एक-वर्ण, एक-रूप हो जाता है।

४५. भंते! पुद्गल शाश्वत वर्तमान में किसी एक समय रूक्ष होता है?

पूर्ववत्।

४६. भंते! यह पुद्गल अनंत और शाश्वत अनागत में किसी एक समय रूक्ष होता है?

पूर्ववत्।

४७. भंते! यह स्कन्ध अनंत और शाश्वत अतीत में किसी एक समय रूक्ष होता है?

इसी प्रकार स्कन्ध भी पुद्गल की भांति वक्तव्य है।

४८. भंते! यह जीव अनंत और शाश्वत अतीत में किसी एक समय दुःखी होता है? किसी एक समय अदुःखी होता है? किसी एक समय दुःखी अथवा अदुःखी होता है? पूर्व में जो एक-भाव आदि परिणाम वाला है, वह करण के द्वारा अनेक-भाव, अनेक-भूत आदि परिणाम वाला हो जाता है? वह वेदनीय निर्जीर्ण होता है, उसके पश्चात् वह एक-भाव, एक-भूत-परिणाम वाला हो जाता है?

हां गौतम! यह जीव अनंत और शाश्वत अतीत में किसी एक समय यावत् एक-भूत परिणाम वाला हो जाता है। इसी प्रकार शाश्वत वर्तमान में किसी एक समय में, इसी प्रकार अनंत और शाश्वत अनागत में किसी एक समय में।

४९. भंते! परमाणु-पुद्गल क्या शाश्वत है? क्या अशाश्वत है?

गौतम! स्यात् शाश्वत है, स्यात् अशाश्वत है।

५०. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—स्यात् शाश्वत है? स्यात् अशाश्वत है?

गौतम! द्रव्य की दृष्टि से शाश्वत है। वर्ण-पर्यवों, गंध-पर्यवों, रस-पर्यवों और स्पर्श-पर्यवों की दृष्टि से अशाश्वत है।

गौतम! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—परमाणु-पुद्गल स्यात् शाश्वत है, स्यात् अशाश्वत है।

५१. भंते! परमाणु-पुद्गल क्या चरम है? क्या अचरम है?

गौतम! द्रव्य की अपेक्षा चरम नहीं है, अचरम है। क्षेत्र की अपेक्षा स्यात् चरम है, स्यात् अचरम है। काल की अपेक्षा स्यात् चरम है, स्यात् अचरम है। भाव की अपेक्षा स्यात् चरम है, स्यात् अचरम है।

५२. भंते! परिणाम कितने प्रकार का प्रज्ञप्त है?

गौतम! परिणाम दो प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—जीव-परिणाम और अजीव- परिणाम। इस प्रकार परिणाम-पद (**पण्णवणा,** पद १३) निरवशेष वक्तव्य है।

५३. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है। यावत् विहरण करने लगे।

पांचवां उद्देशक

अग्नि का अतिक्रमण-पद

५४. भंते! क्या नैरयिक अग्निकाय के बीचोंबीच होकर जाता है?

गौतम! कोई जाता है, कोई नहीं जाता।

५५. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—कोई जाता है, कोई नहीं जाता?

गौतम! नैरयिक दो प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—विग्रह-गति-समापन्नक और अविग्रह-गति-समापन्नक—नरक में अवस्थित। उनमें जो विग्रह-गति-समापन्नक नैरयिक हैं, वे अग्निकाय के बीचोंबीच होकर जाते हैं।

क्या वह अग्निकाय में जलता है?

यह अर्थ संगत नहीं है। वह शस्त्र से आक्रांत नहीं होता।

जो अविग्रह-गति-समापन्नक नैरयिक हैं, वे अग्निकाय के बीचोंबीच होकर नहीं जाते। इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—यावत् कोई नैरयिक अग्निकाय के बीचोंबीच होकर नहीं जाता।

५६. भंते! क्या असुरकुमार अग्निकाय के बीचोंबीच होकर जाता है?

गौतम! कोई जाता है, कोई नहीं जाता।

५७. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—यावत् कोई असुरकुमार अग्निकाय के बीचोंबीच होकर नहीं जाता?

गौतम! असुरकुमार दो प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—विग्रह-गति-समापन्नक और अविग्रह-गति-समापन्नक।

जो विग्रह-गति-समापन्नक असुरकुमार हैं, वे नैरयिक की भांति वक्तव्य हैं, यावत् वह शस्त्र से आक्रांत नहीं होता।

जो अविग्रह-गति-समापन्नक हैं, उनमें कोई अग्निकाय के बीचोंबीच होकर जाता है, कोई नहीं जाता।

जो बीचोंबीच होकर जाता है, क्या वह जलता है?

यह अर्थ संगत नहीं है। वह शस्त्र से आक्रांत नहीं होता। इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—यावत् कोई असुरकुमार अग्निकाय के बीचोंबीच होकर नहीं जाता। इसी प्रकार यावत् स्तनित कुमार की वक्तव्यता। एकेन्द्रिय नैरयिक की भांति वक्तव्य हैं।

५८. भंते! क्या द्वीन्द्रिय अग्निकाय के बीचोंबीच होकर जाता है?

जैसे—असुरकुमार वैसे द्वीन्द्रिय की वक्तव्यता, इतना विशेष है—जो जाता है, क्या वह जलता है?

हां, जलता है। शेष पूर्ववत्। इसी प्रकार यावत् चतुरिन्द्रिय की वक्तव्यता।

५९. भंते! पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक अग्निकाय के बीचोंबीच होकर जाता है?

गौतम! कोई जाता है, कोई नहीं जाता।

६०. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है?

गौतम! पंचेन्द्रिय तिर्यक्योनिक दो प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—विग्रह-गति-समापन्नक और

अविग्रह-गति-समापन्नक। विग्रह-गति-समापन्नक नैरयिक की भांति वक्तव्य हैं। यावत् वह शस्त्र से आक्रान्त नहीं होता। अविग्रह-गति-समापन्नक पंचेन्द्रिय-तिर्यक्योनिक दो प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—ऋद्धिप्राप्त, अऋद्धिप्राप्त। जो ऋद्धिप्राप्त पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक हैं, उनमें कोई अग्निकाय के बीचोंबीच होकर जाता है, कोई नहीं जाता।

जो बीचोंबीच होकर जाता है क्या वह जलता है?

यह अर्थ संगत नहीं है। वह शस्त्र से आक्रान्त नहीं होता।

जो पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक ऋद्धि-प्राप्त नहीं है, उनमें कोई अग्निकाय के बीचोंबीच होकर जाता है, कोई नहीं जाता।

जो बीचोंबीच होकर जाता है, क्या वह जलता है?

हां, जलता है। इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—यावत् कोई नहीं जाता।

इसी प्रकार मनुष्य की वक्तव्यता। वाणमंतर, ज्योतिष्क और वैमानिक असुरकुमार की भांति वक्तव्य हैं।

प्रत्यनुभव-पद

६१. नैरयिक दस स्थानों का प्रत्यनुभव करते हुए विहार करते हैं, जैसे—अनिष्ट शब्द, अनिष्ट रूप, अनिष्ट गंध, अनिष्ट रस, अनिष्ट स्पर्श, अनिष्ट गति, अनिष्ट स्थिति, अनिष्ट लावण्य, अनिष्ट यशोकीर्ति और अनिष्ट उत्थान, कर्म, बल, वीर्य, पुरुषकार, पराक्रम।

६२. असुरकुमार दस स्थानों का प्रत्यनुभव करते हुए विहार करते हैं, जैसे—इष्ट शब्द, इष्ट रूप यावत् इष्ट उत्थान, कर्म, बल, वीर्य पुरुषकार, पराक्रम। इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमार की वक्तव्यता।

६३. पृथ्वीकायिक छह स्थानों का प्रत्यनुभव करते हुए विहार करते हैं, जैसे—इष्ट-अनिष्ट स्पर्श, इष्ट-अनिष्ट गति, इसी प्रकार यावत् पुरुषकार, पराक्रम। इसी प्रकार यावत् वनस्पतिकायिक की वक्तव्यता।

६४. द्वीन्द्रिय सात स्थानों का प्रत्यनुभव करते हुए विहार करते हैं, जैसे—इष्ट-अनिष्ट रूप, शेष एकेन्द्रिय की भांति वक्तव्य है।

६५. त्रीन्द्रिय जीव आठ स्थानों का प्रत्यनुभव करते हुए विहार करते हैं, जैसे—इष्ट-अनिष्ट गंध, शेष द्वीन्द्रिय की भांति वक्तव्य है।

६६. चतुरिन्द्रिय जीव नव स्थानों का प्रत्यनुभव करते हुए विहार करते हैं, जैसे-इष्ट-अनिष्ट रूप, शेष त्रीन्द्रिय की भांति वक्तव्य है।

६७. पंचेन्द्रिय-तिर्यक्योनिक जीव दस स्थानों का प्रत्यनुभव करते हुए विहार करते हैं, जैसे—इष्ट-अनिष्ट शब्द यावत् पुरुषकार, पराक्रम। इसी प्रकार मुनष्य की वक्तव्यता। वाणमंतर, ज्योतिष्क और वैमानिक असुरकुमार की भांति वक्तव्य हैं।

देव का उल्लंघन-प्रलंघन-पद

६८. भंते! महान् ऋद्धि यावत् महान् ऐश्वर्यशाली के रूप में प्रख्यात देव क्या बाहरी पुद्गलों

को ग्रहण किए बिना तिर्यक् पर्वत अथवा तिर्यक् भित्ति का एक बार उल्लंघन करने में अथवा बार-बार उल्लंघन करने में समर्थ है?

यह अर्थ संगत नहीं है।

६९. भंते! महान् ऋद्धि यावत् महान् ऐश्वर्यशाली के रूप में प्रख्यात देव क्या बाहरी पुद्गलों को ग्रहण कर तिर्यक् पर्वत अथवा तिर्यक् भित्ति का एक बार उल्लंघन करने में अथवा बार-बार उल्लंघन करने में समर्थ है?

हां, समर्थ है।

७०. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

छठा उद्देशक

नैरयिक का आहार-आदि-पद

७१. राजगृह नगर यावत् गौतम ने इस प्रकार कहा—भंते! नैरयिक किन द्रव्यों का आहार करते हैं? उनका परिणमन किस रूप में होता है? उनकी योनि क्या है? उनकी स्थिति का आधार क्या है?

गौतम! नैरयिक पुद्गल-द्रव्यों का आहार करते हैं। शरीर-पोषक पुद्गल के रूप में उनका परिणमन होता है। योनि पौद्गलिक है। स्थिति का आधार आयुष्य-कर्म के पुद्गल हैं। नैरयिक जीव कर्म का बंधन करने वाले हैं। उनके नारक होने का हेतु कर्म है। कर्म-पुद्गल के कारण उनकी नारक के रूप में अवस्थिति है और कर्म के कारण ही वे विपर्यास—पर्यायान्तर को प्राप्त होते हैं। इस प्रकार यावत् वैमानिक की वक्तव्यता।

७२. भंते! क्या नैरयिक वीचि-द्रव्यों का आहार करते हैं? अवीचि द्रव्यों का आहार करते हैं?

गौतम! नैरयिक वीचि-द्रव्यों का भी आहार करते हैं, अवीचि-द्रव्यों का भी आहार करते हैं।

७३. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—नैरयिक वीचि द्रव्यों का भी आहार करते हैं, अवीचि द्रव्यों का भी आहार करते हैं?

गौतम! जो नैरयिक एक-प्रदेश-न्यून द्रव्य का भी आहार करते हैं, वे वीचि द्रव्यों का आहार करते हैं। जो नैरयिक प्रतिपूर्ण द्रव्यों का आहार करते हैं, वे अवीचि द्रव्यों का आहार करते हैं। गौतम! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है— नैरयिक वीचि द्रव्यों का भी आहार करते हैं, अवीचि द्रव्यों का भी आहार करते हैं। इसी प्रकार यावत् वैमानिक की वक्तव्यता।

देवेन्द्र का भोग-पद

७४. भंते! जब देवराज देवेन्द्र शक्र दिव्य भोगार्ह भोगों को भोगना चाहते हैं, वह यह कैसे करते हैं?

गौतम! तब वे देवराज देवेन्द्र शक्र एक महान् चक्र—नाभि के प्रतिरूप का निर्माण करते हैं—एक लाख योजन लंबा-चौड़ा और उसका परिक्षेप तीन लाख यावत् साढे तेरह अंगुल से

कुछ अधिक प्रज्ञप्त है। उस चक्र नाभि प्रतिरूप के ऊपर बहुसम रमणीय भूमि भाग प्रज्ञप्त है यावत् मणि का स्पर्श। उस चक्र प्रतिरूप के बहुमध्य-देश-भाग है, वहां एक महान् प्रासादावतंसक का निर्माण करता है--ऊंचाई में पांच सौ योजन, उसका विस्तार ढाई सौ योजन। वह प्रासादावतंसक अपनी ऊंचाई से आकाश को छूने वाला मानो श्वेतप्रभा पटल से हंसता हुआ प्रतीत हो रहा है। इस प्रासादावतंसक के चंदोवा में पद्मलता की भांति खचित चित्र चित्रित हैं यावत् प्रतिरूप।

उस प्रासादावतंसक के भीतर बहुसम रमणीय भूमि है यावत् मणि का स्पर्श। मणिपीठिका वैमानिक की भांति आठ योजन की है। उस मणिपीठिका के ऊपर एक महान् देव-शयनीय का निर्माण करता है, शयनीय का वर्णन यावत् प्रतिरूप। वहां देवराज देवेन्द्र शक्र सपरिवार आठ अग्रमहिषियों तथा दो अनीकों—नाट्यानीक और गंधर्वानीक के साथ आहत नाट्यों, गीतों तथा कुशल वादक के द्वारा बनाए गए वादित्र, तंत्री, तल, ताल, त्रुटित, घन और मृदंग की महान् ध्वनि से दिव्य भोगार्ह भोगों को भोगता हुआ विहरण करता है।

७५. जब देवराज देवेन्द्र ईशान दिव्य भोगार्ह भोगों को भोगना चाहते हैं, वह यह कैसे करते हैं?

जैसे शक्र वैसे ईशान की निरवशेष वक्तव्यता। इसी प्रकार सनत्कुमार की वक्तव्यता, इतना विशेष है—प्रासादावतंसक ऊंचाई में छह सौ योजन, उसका विस्तार तीन सौ योजन, उसी प्रकार मणिपीठिका आठ योजन की। उस मणिपीठिका के ऊपर एक महान् सिंहासन का निर्माण करता है, परिवार-सहित वक्तव्य है। देवराज देवेन्द्र सनत्कुमार बहत्तर हजार सामानिक-देव यावत् दो लाख इठ्यासी हजार आत्मरक्षक-देव और सनत्कुमार-कल्पवासी बहुत वैमानिक देवता, देवियों के साथ संपरिवृत होकर आहत नाट्यों यावत् विहरण करता है। इस प्रकार जैसे सनत्कुमार उसी प्रकार यावत् प्राणत, अच्युत की वक्तव्यता, इतना विशेष है—जो जिसका परिवार है, वह उसका वक्तव्य है। प्रासाद की ऊंचाई—अपने-अपने कल्प के विमानों की ऊंचाई, विस्तार उससे आधा यावत् अच्युत के प्रासादावतंसक की ऊंचाई नौ सौ योजन, उसका विस्तार साढ़े चार सौ योजन है। वहां देवराज देवेन्द्र अच्युत दस हजार सामानिकों के साथ यावत् विहरण करता है। शेष पूर्ववत्।

७६. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

सातवां उद्देशक

गौतम का आश्वासन-पद

७७. राजगृह नगर यावत् परिषद् वापस नगर में चली गई।

अयि गौतम! श्रमण भगवान् महावीर ने गौतम को आमंत्रित कर इस प्रकार कहा—गौतम! तुम चिर काल से मेरे संसर्ग में रहे हो।

गौतम! तुम मुझसे चिर संस्तुत रहे हो।

गौतम! तुम चिर काल से मुझसे परिचित रहे हो।

गौतम! तुम मुझसे चिर काल से प्रीति-परायण रहे हो।

गौतम! चिरकाल से तुम मेरा अनुगमन करते रहे हो।

गौतम! तुम चिर काल से मेरा अनुवर्तन करते रहे हो।

अनंतर (व्यवधान-रहित) देवलोक में, अनंतर मनुष्य-जन्म में भी। और क्या मृत्यु के होने पर—शरीर के छूट जाने पर यहां से च्युत होकर हम दोनों तुल्य, एकार्थक, अभिन्न और नानात्व से रहित होंगे।

७८. भंते! जैसे हम इस अर्थ को जानते-देखते हैं, वैसे अनुत्तरोपपातिक-देव भी इस अर्थ को जानते-देखते हैं?

हां, गौतम! जैसे हम इस अर्थ को जानते-देखते हैं, वैसे अनुत्तरोपपातिक-देव भी इस अर्थ को जानते-देखते हैं।

७९. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—जैसे हम इस अर्थ को जानते-देखते हैं वैसे अनुत्तरोपपातिक-देव भी इस अर्थ को जानते-देखते हैं?

गौतम! अनुत्तरोपपातिक-देवों को अनंत मनो-द्रव्य-वर्गणाएं लब्ध, प्राप्त और अभिसमन्वागत हो जाती हैं। गौतम! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—जैसे हम इस अर्थ को जानते-देखते हैं, वैसे अनुत्तरोपपातिक-देव भी इस अर्थ को जानते-देखते हैं।

तुल्य-पद

८०. भंते! कितने प्रकार के तुल्य प्रज्ञप्त है?

गौतम! छह प्रकार के तुल्य प्रज्ञप्त है, जैसे—द्रव्य-तुल्य, क्षेत्र-तुल्य, काल-तुल्य, भव-तुल्य, भाव-तुल्य, संस्थान-तुल्य।

८१. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—द्रव्य-तुल्य द्रव्य-तुल्य है?

गौतम! परमाणु-पुद्गल परमाणु-पुद्गल से द्रव्यतः तुल्य है। परमाणु-पुद्गल परमाणु--पुद्गल-व्यतिरिक्त से द्रव्यतः तुल्य नहीं है। द्विप्रदेशिक-स्कंध द्विप्रदेशिक-स्कंध से द्रव्यतः तुल्य है। द्विप्रदेशिक-स्कंध द्विप्रदेशिक-व्यतिरिक्त स्कंध से द्रव्यतः तुल्य नहीं है। इसी प्रकार यावत् दस-प्रदेशी की वक्तव्यता। समान संख्येय-प्रदेशी स्कंध समान संख्येय-प्रदेशी स्कंध से द्रव्यतः तुल्य है। समान संख्येय-प्रदेशी स्कंध समान संख्येय-प्रदेशी-व्यतिरिक्त स्कंध से तुल्य नहीं है। इसी प्रकार समान असंख्येय-प्रदेशी स्कंध की भी वक्तव्यता। इसी प्रकार समान अनंत-प्रदेशी स्कंध की भी वक्तव्यता।

गौतम! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—द्रव्य-तुल्य द्रव्य-तुल्य है।

भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—क्षेत्र-तुल्य क्षेत्र-तुल्य है?

गौतम! एक प्रदेशावगाढ पुद्गल एक प्रदेशावगाढ पुद्गल से क्षेत्रतः तुल्य है। एक प्रदेशावगाढ पुद्गल एक प्रदेशावगाढ-व्यतिरिक्त पुद्गल से क्षेत्रतः तुल्य नहीं है। इसी प्रकार यावत् दस--प्रदेशावगाढ की वक्तव्यता। समान संख्येय-प्रदेशावगाढ पुद्गल समान संख्येय-प्रदेशावगाढ पुद्गल से क्षेत्रतः तुल्य है। समान संख्येय-प्रदेशावगाढ पुद्गल समान संख्येय-प्रदेशावगाढ़-

-व्यतिरिक्त पुद्गल से क्षेत्रतः तुल्य नहीं है। इसी प्रकार समान असंख्येय-प्रदेशावगाढ की वक्तव्यता। गौतम! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—क्षेत्र-तुल्य क्षेत्र-तुल्य है।

भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—काल-तुल्य काल-तुल्य है?

गौतम! एक समय की स्थिति वाला पुद्गल एक समय की स्थिति वाले पुद्गल से कालतः तुल्य है। एक समय की स्थिति वाला पुद्गल एक समय की स्थिति से व्यतिरिक्त पुद्गल से कालतः तुल्य नहीं है। इसी प्रकार यावत् दस समय की स्थिति वाले, इसी प्रकार समान संख्येय समय की स्थिति वाले, इसी प्रकार समान असंख्येय समय की स्थिति वाले पुद्गल की वक्तव्यता। गौतम! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—काल-तुल्य काल-तुल्य है।

भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है भव-तुल्य भव-तुल्य है।

गौतम! नैरयिक नैरयिक से भव की अपेक्षा तुल्य है, नैरयिक-व्यतिरिक्त से भव की अपेक्षा तुल्य नहीं है। इसी प्रकार तिर्यग्योनिक की, इसी प्रकार मनुष्य की, इसी प्रकार देव की वक्तव्यता। गौतम! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—भव-तुल्य भव-तुल्य है।

भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है भाव-तुल्य भाव-तुल्य है?

गौतम! एक-गुण-कृष्ण पुद्गल एक-गुण-कृष्ण पुद्गल से भावतः तुल्य है। एक-गुण-कृष्ण पुद्गल एक-गुण-कृष्ण-व्यतिरिक्त पुद्गल से भावतः तुल्य नहीं है। इसी प्रकार यावत् दस-गुण-कृष्ण की, इसी प्रकार समान संख्येय-गुण-कृष्ण की, इसी प्रकार समान असंख्येय-गुण-कृष्ण की वक्तव्यता, इसी प्रकार समान अनंत-गुण-कृष्ण की वक्तव्यता।

कृष्ण की भांति नील, लोहित, हारिद्र और शुक्ल की वक्तव्यता। इसी प्रकार सुगंध और दुर्गन्ध की वक्तव्यता। इसी प्रकार तिक्त- यावत् मधुर-रस की वक्तव्यता। इसी प्रकार कर्कश- यावत् रूक्ष-स्पर्श की वक्तव्यता। औदयिक भाव औदयिक भाव से भावतः तुल्य है। औदयिक भाव औदयिक-व्यतिरिक्त भाव से भावतः तुल्य नहीं है। इसी प्रकार औपशमिक, क्षायिक, क्षायोपशमिक और पारिणामिक भाव की वक्तव्यता। सांनिपातिक भाव सांनिपातिक भाव से भावतः तुल्य है, सांनिपातिक भाव सांनिपातिक-व्यतिरिक्त भाव से भावतः तुल्य नहीं है।

गौतम! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है भाव-तुल्य भाव-तुल्य है।

भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—संस्थान-तुल्य संस्थान-तुल्य है।

गौतम! परिमंडल-संस्थान परिमंडल-संस्थान से संस्थानतः तुल्य है। परिमंडल-संस्थान परिमंडल-संस्थान-व्यतिरिक्त संस्थान से संस्थानतः तुल्य नहीं है। इसी प्रकार वृत्त, चतुरस्र, आयत की वक्तव्यता। समचतुरस्र-संस्थान समचतुरस्र-संस्थान से संस्थानतः तुल्य है। समचतुरस्र-संस्थान समचतुरस्र-व्यतिरिक्त संस्थान से संस्थानतः तुल्य नहीं है। इसी प्रकार परिमंडल संस्थान की वक्तव्यता। इसी प्रकार सादि-, कुब्ज-, वामन- और हुंड-संस्थान की वक्तव्यता। गौतम! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—संस्थान-तुल्य संस्थान-तुल्य है।

भक्त-प्रत्याख्यात का आहार-पद

८२. भंते! भक्त-प्रत्याख्यान करने वाला अनगार मूर्च्छित, गृद्ध, ग्रथित और आसक्त होकर आहार करता है। उसके पश्चात् वह स्वभाव से काल करता है—मारणान्तिक-समुद्घात करता है। उसके पश्चात् वह अमूर्च्छित, अगृद्ध, अग्रथित और अनासक्त होकर आहार करता है?

हां गौतम! भक्त-प्रत्याख्यान करने वाला अनगार मूर्च्छित, गृद्ध, ग्रथित और आसक्त होकर आहार करता है। उसके पश्चात् वह स्वभाव से काल करता है, उसके पश्चात् अमूर्च्छित, अगृद्ध, अग्रथित, अनासक्त होकर आहार करता है।

८३. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—भक्त-प्रत्याख्यान करने वाला अनगार मूर्च्छित, गृद्ध, ग्रथित और आसक्त होकर आहार करता है। उसके पश्चात् वह स्वभाव से काल करता है। उसके पश्चात् वह अमूर्च्छित, अगृद्ध, अग्रथित और अनासक्त होकर आहार करता है?

गौतम! भक्त-प्रत्याख्यान करने वाला अनगार मूर्च्छित, गृद्ध, ग्रथित और आसक्त होकर आहार करता है। उसके पश्चात् वह स्वभाव से काल करता है, उसके पश्चात् वह अमूर्च्छित, अगृद्ध, अग्रथित और अनासक्त होकर आहार करता है।

गौतम! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—यावत् आहार करता है।

लव-सप्तम-देव-पद

८४. भंते! लवसप्तम देव लवसप्तम देव हैं?

हां, हैं।

८५. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—लवसप्तम देव लवसप्तम देव हैं?

गौतम! जैसे कोई पुरुष तरुण यावत् सूक्ष्म शिल्प से समन्वित है। पक्व करने योग्य अवस्था को प्राप्त, परिजात, हरित, हरित कांड वाले, तीक्ष्ण की हुई दांती से विकीर्ण नाल वाले, शाली, व्रीही, गेहूं, यव अथवा यवयव को इकट्ठा कर, मुट्ठी में पकड़कर यावत् अभी अभी ऐसा प्रदर्शित कर चिमुटी बजाने जितने समय में सात लवों को काट देता है, सात लवों को काटने में जितना समय लगता है यदि गौतम! उतने समय तक यदि साधु का जीवन और रह जाता तो वे देव उसी जन्म में सिद्ध, प्रशान्त, मुक्त, परिनिर्वृत हो जाते, सब दुःखों का अन्त कर देते। गौतम! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—लवसप्तम देव लवसप्तम देव हैं।

अनुत्तरोपपातिक-देव-पद

८६. भंते! अनुत्तरोपपातिक-देव अनुत्तरोपपातिक-देव हैं?

हां, हैं।

८७. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—अनुत्तरोपपातिक-देव अनुत्तरोपपातिक-देव हैं?

गौतम! अनुत्तरोपपातिक-देव अनुत्तर शब्द, अनुत्तर रूप, अनुत्तर गंध, अनुत्तर रस और अनुत्तर स्पर्श वाले होते हैं। गौतम! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—अनुत्तरोपपातिक-देव अनुत्तरोपपातिक-देव हैं।

८८. भंते! अनुत्तरोपपातिक-देव कितने कर्म अवशेष रहने पर अनुत्तरोपपातिक-देव के रूप में उपपन्न हुए?

गौतम! श्रमण-निर्ग्रंथ एक बेले (दो दिन के तप) में जितने कर्मों की निर्जरा करता है, इतने कर्मों के अवशेष रहने पर यदि आयुष्य पूरा हो जाए तो वे श्रमण निर्ग्रंथ अनुत्तरोपपातिक-देव के रूप में उपपन्न होते हैं।

८९. भंते! वह ऐसा ही ह। भंते! वह ऐसा ही है।

आठवां उद्देशक

अबाधा-अतर-पद

९०. भंते! इस रत्नप्रभा-पृथ्वी और शर्कराप्रभा-पृथ्वी के मध्य कितना अबाधा-अंतर प्रज्ञप्त है?

गौतम! असंख्येय हजार योजन अबाधा-अंतर प्रज्ञप्त है।

९१. भंते! शर्कराप्रभा-पृथ्वी और वालुकाप्रभा-पृथ्वी के मध्य कितना अबाधा-अंतर प्रज्ञप्त है?

पूर्ववत्। इस प्रकार यावत् तमा और अधःसप्तमी के मध्य अबाधा-अंतर की वक्तव्यता।

९२. भंते! अधःसप्तमी-पृथ्वी और अलोक के मध्य कितना अबाधा-अंतर प्रज्ञप्त है?

गौतम! असंख्येय हजार योजन अबाधा-अंतर प्रज्ञप्त है।

९३. भंते! रत्नप्रभा-पृथ्वी और ज्योतिष्क के मध्य कितना अबाधा-अंतर प्रज्ञप्त है?

गौतम! सात सौ नब्बे योजन का अबाधा-अंतर प्रज्ञप्त है।

९४. भंते! ज्योतिष्क और सौधर्म-ईशान कल्प के मध्य कितना अबाधा-अंतर प्रज्ञप्त है?

गौतम! असंख्येय हजार योजन का अबाधा-अंतर प्रज्ञप्त है।

९५. भंते! सौधर्म-ईशान और सनत्कुमार-माहेन्द्र के मध्य कितना अबाधा-अंतर प्रज्ञप्त है?

पूर्ववत्।

९६. भंते! सनत्कुमार-माहेन्द्र और ब्रह्मलोक-कल्प के मध्य कितना अबाधा-अंतर प्रज्ञप्त है?

पूर्ववत्।

९७. भंते! ब्रह्मलोक और लांतक-कल्प के मध्य कितना अबाधा-अंतर प्रज्ञप्त है?

पूर्ववत्।

९८. भंते! लांतक और महाशुक्र-कल्प के मध्य कितना अबाधा-अंतर प्रज्ञप्त है?

पूर्ववत्। इसी प्रकार महाशुक्र-कल्प और सहस्रार के मध्य, इसी प्रकार सहस्रार और आनत-प्राणत-कल्प के मध्य, इसी प्रकार आनत-प्राणत और आरण-अच्युत-कल्प के मध्य, इसी प्रकार आरण-अच्युत और ग्रैवेयक-विमान के मध्य, इसी प्रकार ग्रैवेयक-विमान और अनुत्तर-विमान के मध्य अबाधा-अंतर को वक्तव्यता।

९९. भंते! अनुत्तर-विमान और ईषत्-प्राग्भारा-पृथ्वी के मध्य कितना अबाधा-अंतर प्रज्ञप्त है?

गौतम! बारह योजन अबाधा-अंतर प्रज्ञप्त है।

१००. भंते! ईषत्-प्राग्भारा-पृथ्वी और अलोक के मध्य कितना अबाधा-अंतर प्रज्ञप्त है?

गौतम! एक योजन से कुछ न्यून अबाधा-अंतर प्रज्ञप्त है।

वृक्ष का पुनर्भव-पद

१०१. भंते! यह शाल-वृक्ष गर्मी से अभिहत, तृष्णा से अभिहत, दवाग्नि-ज्वाला से अभिहत होकर कालमास में काल को प्राप्त कर कहां जाएगा? कहां उपपन्न होगा?

गौतम! इस राजगृह नगर में शालवृक्ष के रूप में पुनः उपपन्न होगा। वह वहां अर्चित, वंदित, पूजित, सत्कारित, सम्मानित, दिव्य (प्रधान), सत्य, सत्यावपात, सन्निहित-प्रातिहार्य और **'लाउल्लोइयमहित'** होगा—वृक्ष का भूमिभाग गोबर आदि से लिपा हुआ और भींत खड़िया से पुती हुई होगी।

१०२. भंते! वह शाल-वृक्ष वहां से अनंतर उद्वर्तन कर कहां जाएगा? कहां उपपन्न होगा?

गौतम! महाविदेह क्षेत्र में सिद्ध होगा यावत् सब दुःखों का अंत करेगा।

१०३. भंते! यह शालयष्टिक-वृक्ष गर्मी से अभिहत, तृष्णा से अभिहत, दवाग्नि ज्वाला से अभिहत होकर कालमास में काल को प्राप्त कर कहां जाएगा? कहां उपपन्न होगा?

गौतम! इस जंबूद्वीप द्वीप में, भारतवर्ष में विंध्यगिरि की तलहटी में महेश्वरी नगरी में शाल्मली वृक्ष के रूप में उपपन्न होगा। वह वहां अर्चित, वंदित, पूजित, सत्कारित, सम्मानित, दिव्य, सत्य, सत्यावपात, सन्निहित-प्रातिहार्य और **'लाउल्लोइयमहित'** होगा—वृक्ष का भूमिभाग गोबर आदि से लिपा हुआ और भींत खड़िया से पुती हुई होगी।

१०४. भंते! वह वहां से अनंतर उद्वर्तन कर कहां जाएगा? कहां उपपन्न होगा?

गौतम! महाविदेह क्षेत्र में सिद्ध होगा यावत् सब दुःखों का अंत करेगा।

१०५. भंते! यह उदुम्बरयष्टिका-वृक्ष गर्मी से अभिहत, तृष्णा से अभिहत और दवाग्नि ज्वाला से अभिहत होकर कालमास में काल को प्राप्त कर कहां जाएगा? कहां उपपन्न होगा?

गौतम! इसी जंबूद्वीप द्वीप में भारतवर्ष में पाटलिपुत्र नगर में पाटली वृक्ष के रूप में पुनः उपपन्न होगा। वह वहां अर्चित, वंदित, पूजित, सत्कारित, सम्मानित, दिव्य, सत्य, सत्यावपात, सन्निहित-प्रातिहार्य तथा **लाउल्लोइयमहित** होगा।

१०६. भंते! वह वहां से अनंतर उद्वर्तन कर कहां जाएगा? कहां उपपन्न होगा?

गौतम! महाविदेह क्षेत्र में सिद्ध होगा यावत् सब दुःखों का अंत करेगा।

अम्मड-अंतेवासी-पद

१०७. उस काल और उस समय में अम्मड परिव्राजक के सात सौ अंतेवासी ग्रीष्मकाल समय में ज्येष्ठ मास में गंगा महानदी के दोनों तटों पर होते हुए कंपिलपुर नगर से पुरिमताल नगर की ओर विहार के लिए प्रस्थित हुए।

१०८. वे परिव्राजक उस विशाल, वस्ती-शून्य, आवागमन-रहित तथा प्रलंब मार्ग वाली अटवी में कुछ दूरवर्ती प्रदेश में चले गए। पहले जो जल था, उसे पीते गए, पीते गए, आखिर वह समाप्त हो गया।

१०९. जल के समाप्त हो जाने पर प्यास से अभिभूत हो गए। उन्हें कोई जल को देने वाला दिखाई नहीं दिया। परिव्राजकों ने एक दूसरे को बुलाया, बुलाकर इस प्रकार कहा—देवानुप्रियो! इस विशाल, वस्ती-शून्य, आवागमन-रहित तथा प्रलंब मार्ग वाली अटवी में कुछ दूरवर्ती प्रदेश में आ गए हैं। पहले लिया हुआ जो जल था, वह पीते गए, पीते गए। आखिर वह समाप्त हो गया है।

देवानुप्रिय! यह श्रेय है कि हम इस विशाल, वस्ती-शून्य, आवागमन-रहित प्रलंब मार्ग वाली अटवी में किसी जल लेने की अनुमति देने वाले की चारों ओर मार्गणा-गवेषणा करें। इस प्रकार एक-दूसरे के पास इस अर्थ को सुना, सुनकर उस विशाल, वस्ती-शून्य, आवागमन-रहित प्रलंब मार्ग वाली अटवी में जल लेने की अनुमति देने वाले व्यक्ति की चारों ओर मार्गणा-गवेषणा की। मार्गणा-गवेषणा करने पर, जल देने वाले व्यक्ति के न मिलने पर दूसरी बार पुनः एक-दूसरे को बुलाया, बुलाकर इस प्रकार कहा—देवानुप्रियो! यहां कोई जल लेने की अनुमति देने वाला नहीं है। हमें अदत्त ग्रहण करना नहीं कल्पता, अदत्त का अनुमोदन करना नहीं कल्पता, इसलिए हम इस आपत्-काल में भी अदत्त जल का ग्रहण न करें, अदत्त जल का अनुमोदन न करें, जिससे कि हमारे तप का लोप न हो।

देवानुप्रियो! हमारे लिए यह श्रेय है कि हम त्रिदंड, कमण्डलु, रूद्राक्ष-माला, मृत्पात्र, आसन, केसरिका (पात्र-प्रमार्जन का वस्त्र-खण्ड), टिकठी, अंकुश, छलनी, कलाई पर पहना जाने वाला रुद्राक्ष-आभरण, छत्र, पदत्राण और गेरुएं वस्त्र को एकान्त में डाल दें, गंगा महानदी का अवगाहन कर, बालुका-संस्तारक बिछाकर संलेखना की आराधना में स्थित हो, भक्त-पान का प्रत्याख्यान कर प्रायोपगमन-अनशन की अवस्था में मृत्यु की आकांक्षा न करते हुए रहें—इस प्रकार एक दूसरे के पास इस अर्थ को सुना, सुनकर त्रिदंड, कमण्डलु, रूद्राक्ष-माला, मृत्पात्र, आसन, केसरिका, टिकठी, अंकुश, छलनी, कलाई पर पहना जाने वाला रुद्राक्ष आभरण, छत्र, पदत्राण और गेरुएं वस्त्र को एकान्त में डालते हैं, गंगा महानदी का अवगाहन कर बालुका का बिछौना बिछाते हैं, बिछाकर बालुका के बिछौने पर आरूढ होते हैं, आरूढ होकर पूर्व की ओर मुंह कर पर्यंकासन में बैठकर, हथेलियों से संपुट आकार वाली अंजलि को सिर के सम्मुख घुमा कर इस प्रकार बोले—

नमस्कार हो अर्हत् यावत् सिद्धि-गति नाम वाले स्थान को संप्राप्त जिनवरों को।

नमस्कार हो भगवान् महावीर यावत् सिद्धि-गति प्राप्त करने वाले जिनवर को।

नमस्कार हो हमारे धर्माचार्य धर्मोपदेशक अम्मड़ परिव्राजक को।

पहले हमने अम्मड़ परिव्राजक के पास स्थूल-प्राणातिपात का यावज्जीवन के लिए प्रत्याख्यान किया, मृषावाद और अदत्तादान का यावज्जीवन के लिए प्रत्याख्यान किया, सर्व-मैथुन का यावज्जीवन के लिए प्रत्याख्यान किया, स्थूल-परिग्रह का यावज्जीवन के लिए

प्रत्याख्यान किया। संप्रति हम श्रमण भगवान् महावीर की साक्ष्य से सर्व-प्राणातिपात का यावज्जीवन के लिए प्रत्याख्यान करते हैं, सर्व-मृषावाद का यावज्जीवन के लिए प्रत्याख्यान करते हैं, सर्व-अदत्तादान का यावज्जीवन के लिए प्रत्याख्यान करते हैं, सर्व-मैथुन का यावज्जीवन के लिए प्रत्याख्यान करते हैं, सर्व-परिग्रह का यावज्जीवन के लिए प्रत्याख्यान करते हैं। सर्व क्रोध, मान, माया, लोभ, प्रेय, द्वेष, कलह, अभ्याख्यान, पैशुन्य, परपरिवाद, अरतिरति, मायामृषा, मिथ्या-दर्शन-शल्य और अकरणीय योग का यावज्जीवन के लिए प्रत्याख्यान करते हैं। सर्व अशन, पान, खाद्य, स्वाद्य—चारों प्रकार के आहार का यावज्जीवन के लिए प्रत्याख्यान करते हैं।

यह शरीर इष्ट, कांत, प्रिय, मनोज्ञ, मनोहर, स्थिरतर, विश्वसनीय, सम्मत, बहुमत, अनुमत और आभरण-करण्डक के समान है। इसे सर्दी न लगे, गर्मी न लगे, भूख न सताए, प्यास न सताए, चोर पीड़ा न पहुंचाए, हिंस्र पशु इस पर आक्रमण न करे, दंश और मशक इसे न काटे, वात, पित्त, श्लेष्म और संनिपात-जनित विविध प्रकार के रोग और आतंक तथा परीषह और उपसर्ग इसका स्पर्श न करें, इसलिए इसको भी हम अंतिम उच्छ्वास-निःश्वास तक छोड़ते हैं। ऐसा कर संलेखना की आराधना में स्थित हो भक्त-पान का प्रत्याख्यान कर प्रायोपगमन की अवस्था में मृत्यु की आकांक्षा नहीं करते हुए रहते हैं। उन परिव्राजकों ने अनशन के द्वारा बहु भक्त का छेदन किया, छेदन कर आलोचना और प्रतिक्रमण कर समाधिपूर्ण दशा में कालमास में काल को प्राप्त कर ब्रह्मलोक-कल्प में देव के रूप में उपपन्न हुए। वहीं उनकी गति, वहीं उनकी स्थिति और वहीं उनका उपपात प्रज्ञप्त है।

भंते! उन देवों की कितने काल की स्थिति प्रज्ञप्त है?

गौतम! दस सागरोपम की स्थिति प्रज्ञप्त है।

भंते! उन देवों के ऋद्धि, द्युति, यश, बल, वीर्य और पुरुषकार-पराक्रम है?

हां, है।

भंते! वे देव परलोक के आराधक हैं?

हां, है।

अम्मड-चर्या-पद

११०. भंते! बहुत लोग परस्पर इस प्रकार का आख्यान, भाषण, प्रज्ञापन और प्ररूपण करते हैं—अम्मड परिव्राजक कंपिलपुर नगर के सौ घरों में आहार करता है, सौ घरों में निवास करता है। भंते! यह कैसे है?

गौतम! जो बहुत लोग परस्पर इस प्रकार आख्यान, भाषण, प्रज्ञापन और प्ररूपण करते हैं—अम्मड परिव्राजक कंपिलपुर नगर में सौ घरों में आहार करता है, सौ घरों में निवास करता है। यह अर्थ सत्य है। गौतम! मैं भी इस प्रकार आख्यान, भाषण, प्रज्ञापन और प्ररूपण करता हूं—अम्मड परिव्राजक कंपिलपुर नगर के सौ घरों में आहार करता है, सौ घरों में निवास करता है।

१११. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—अम्मड परिव्राजक कंपिलपुर नगर में सौ घरों

में आहार करता है, सौ घरों में निवास करता है?

गौतम! अम्मड परिव्राजक प्रकृति से भद्र और उपशान्त है। उसके क्रोध, मान, माया और लोभ प्रकृति से प्रतनु हैं। वह मृदु-मार्दव-संपन्न, आलीन (संयतेन्द्रिय) और विनीत है। वह निरंतर बेले-बेले (दो-दो दिन का उपवास) के तप की साधना करता है। दोनों भुजाओं को ऊपर उठाकर सूर्य के सामने आतापन-भूमि में आतापना लेता है। उसके शुभ परिणाम, प्रशस्त अध्यवसाय और लेश्या की उत्तरोत्तर होने वाली विशुद्धि से किसी समय तदावरणीय कर्म का क्षयोपशम हुआ। उसके होने पर ईहा, ऊहापोह, मार्गणा, गवेषणा करते हुए वीर्य--लब्धि, वैक्रिय-लब्धि और अवधि-ज्ञान-लब्धि उत्पन्न हुई।

वह अम्मड़ परिव्राजक उस वीर्य-लब्धि, वैक्रिय-लब्धि और अवधि-ज्ञान-लब्धि के होने पर जनसमूह को विस्मय में डालने के लिए कंपिलपुर नगर में सौ घरों में आहार करता है, सौ घरों में निवास करता है। गौतम! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—अम्मड़ परिव्राजक कंपिलपुर नगर में सौ घरों में आहार करता है, सौ घरों में निवास करता है।

११२. भंते! क्या अम्मड परिव्राजक देवानुप्रिय के पास मुंड हो, अगार से अनगारिता में प्रव्रजित होने में समर्थ है?

यह अर्थ संगत नहीं है।

गौतम! श्रमणोपासक अम्मड परिव्राजक जीव-अजीव को जानने वाला, पुण्य-पाप के मर्म को समझने वाला, आस्रव, संवर, निर्जरा, क्रिया, अधिकरण, बंध और मोक्ष के विषय में कुशल, सत्य के प्रति स्वयं निश्चल, देव, असुर, नाग, सुपर्ण, यक्ष, राक्षस, किन्नर, किंपुरुष, गरुड, गंधर्व, महोरग आदि देव-गणों के द्वारा निर्ग्रंथ-प्रवचन से अविचलनीय, इस निर्ग्रंथ-प्रवचन में शंका-रहित, कांक्षा-रहित, विचिकित्सा-रहित, यथार्थ को सुनने वाला, ग्रहण करने वाला, उस विषय में प्रश्न करने वाला, उसे जानने वाला, उसका विनिश्चय करने वाला, प्रेमानुराग से अनुरक्त अस्थि-मज्जा वाला, आयुष्मन्! यह निर्ग्रंथ-प्रवचन यथार्थ है, यह परमार्थ है, शेष अनर्थ है (ऐसा मानने वाला) चतुर्दशी, अष्टमी, अमावस्या और पूर्णिमा को प्रतिपूर्ण पौषध का सम्यक् अनुपालन करने वाला, श्रमण-निर्ग्रंथों को प्रासुक और एषणीय अशन, पान, खाद्य, स्वाद्य, वस्त्र, पात्र, कंबल, पादप्रोञ्छन, औषध-भैषज्य, प्रातिहार्य पीठ--फलक, शय्या और संस्तारक का दान देने वाला, बहुत शीलव्रत, गुण, विरमण, प्रत्याख्यान और पौषधोपवास के द्वारा यथापरिगृहीत तपःकर्म के द्वारा आत्मा को भावित करते हुए रह रहा है यावत् दृढप्रतिज्ञ (**उववाई,** सू. १२१-१५४) की भांति अंत करेगा।

अव्याबाध-देव-शक्ति-पद

११३. भंते! अव्याबाध-देव अव्याबाध-देव हैं?

हां, हैं।

११४. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—अव्याबाध-देव अव्याबाध-देव हैं?

गौतम! प्रत्येक अव्याबाध-देव प्रत्येक मनुष्य के प्रत्येक अक्षि-पत्र पर दिव्य देवर्द्धि, दिव्य देव-द्युति, दिव्य देवानुभाग, दिव्य बत्तीस प्रकार की नाट्य-विधि का उपदर्शन करने में समर्थ

है। वह उस पुरुष को किञ्चित् आबाध अथवा व्याबाध उत्पन्न नहीं करता, छविच्छेद भी नहीं करता, इस कौशल के साथ उपदर्शन करता है।

गौतम! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—अव्याबाध-देव अव्याबाध-देव हैं।

शक्र का शक्ति-पद

११५. भंते! देवराज देवेन्द्र शक्र हाथ में तलवार ले पुरुष के सिर का छेदन कर उसका कमंडलु में प्रक्षेप करने में समर्थ है?

हां, समर्थ है।

११६. वह यह कैसे करता है?

गौतम! वह पुरुष के सिर को छिन्न-छिन्न कर उसका कमंडलु में प्रक्षेप करता है। भिन्न-भिन्न कर उसका कमंडलु में प्रक्षेप करता है। कूट-पीस कर उसका कमंडलु में प्रक्षेप करता है। उसे चूर्ण-चूर्ण कर उसका कमंडलु में प्रक्षेप करता है। उसके पश्चात् क्षण भर में ही सिर का प्रतिसंधान कर देता है। उस पुरुष के किञ्चित् आबाध अथवा व्याबाध उत्पन्न नहीं करता, छविच्छेद भी नहीं करता। वह इस कौशल के साथ सिर का कमण्डलु में प्रक्षेप करता है।

जृंभक-देव-पद

११७. भंते! जृंभक-देव जृंभक-देव हैं?

हां, हैं।

११८. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—जृंभक-देव जृंभक-देव हैं?

गौतम! जृंभक-देव नित्य प्रमुदित, बहुत क्रीडाशील, कंदर्प में रमण करने वाले और कामवासना-प्रिय होते हैं। वे देव जिसे क्रुद्ध होकर देखते हैं, वह पुरुष महान् अयश को प्राप्त होता है। वे देव जिसे तुष्ट होकर देखते हैं, वह पुरुष महान् यश को प्राप्त होता है। गौतम! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—जृंभक-देव जृंभक-देव हैं।

११९. भंते! जृंभक देव कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! दस प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—अन्न-जृंभक, पान-जृंभक, वस्त्र-जृंभक, लयन--जृंभक, शयन-जृंभक, पुष्प-जृंभक, फल-जृंभक, पुष्प-फल-जृंभक, विद्या-जृंभक, अव्यक्त-जृंभक।

१२०. भंते! जृंभक-देव कहां निवास करते हैं?

गौतम! सब दीर्घ वैताढ्य पर्वतों पर चित्रकूट, विचित्रकूट, यमक पर्वतों पर और कांचन पर्वतों पर—इन स्थानों पर जृंभक-देव निवास करते हैं।

१२१. भंते! जृंभक-देवों की स्थिति कितने काल की प्रज्ञप्त है?

गौतम! एक पल्योपम की स्थिति प्रज्ञप्त है।

१२२. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है यावत् विहरण करने लगे।

नौवां उद्देशक

सरूप-सकर्म-लेश्या-पद

१२३. भंते! भावितात्मा अनगार अपनी कर्म-लेश्या को नहीं जानता, नहीं देखता और सरूप तथा सकर्म-लेश्या वाले उस जीव को जानता-देखता है?

हां गौतम! भावितात्मा अनगार अपनी कर्म-लेश्या को नहीं जानता, नहीं देखता और सरूप तथा सकर्म-लेश्या वाले उस जीव को जानता-देखता है।

१२४. भंते! क्या सरूप और सकर्म-लेश्या वाले पुद्गल अवभासित, उद्द्योतित, तप्त और प्रभासित करते हैं?

हां, करते हैं।

१२५. भंते! कौनसे सरूप और सकर्म-लेश्या वाले पुद्गल अवभासित यावत् प्रभासित करते हैं?

गौतम! जैसे इन चंद्र-सूर्य देवों के विमानों से बाहर निकलने वाली प्रकाश रश्मियां प्रभासित करती हैं। इसी प्रकार गौतम! सरूप और सकर्म-लेश्या के पुद्गल अवभासित, उद्द्योतित, तप्त और प्रभासित करते हैं।

आप्त-अनाप्त-पुद्गल-पद

१२६. भंते! क्या नैरयिकों के पुद्गल आप्त—रमणीय हैं?

गौतम! नैरयिकों के पुद्गल आप्त नहीं हैं, उनके पुद्गल अनाप्त हैं।

१२७. भंते! क्या असुरकुमारों के पुद्गल आप्त हैं? पुद्गल अनाप्त हैं?

गौतम! असुरकुमारों के पुद्गल आप्त हैं, उनके पुद्गल अनाप्त नहीं हैं। इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमार की वक्तव्यता।

१२८. भंते! क्या पृथ्वीकायिक जीवों के पुद्गल आप्त हैं? पुद्गल अनाप्त हैं?

गौतम! पृथ्वीकायिक जीवों के पुद्गल आप्त भी हैं और अनाप्त भी हैं। इसी प्रकार यावत् मनुष्यों की वक्तव्यता। वाणमंतरों, ज्योतिष्कों और वैमानिकों की असुरकुमार की भांति वक्तव्यता।

१२९. भंते! क्या नैरयिकों के पुद्गल इष्ट हैं? पुद्गल अनिष्ट हैं?

गौतम! नैरयिकों के पुद्गल इष्ट नहीं हैं, उनके पुद्गल अनिष्ट हैं। जैसे आप्त की भणिति है, वैसे ही इष्ट, कांत, प्रिय और मनोज्ञ पुद्गलों की वक्तव्यता। ये पांच दंडक हैं।

देवों का सहस्र-भाषा-पद

१३०. भंते! महर्द्धिक यावत् महान् ऐश्वर्यशाली के रूप में प्रख्यात देव हजार-रूपों का निर्माण कर सहस्र भाषाएं बोलने में समर्थ हैं?

हां, समर्थ हैं।

१३१. भंते! क्या वह एक भाषा है? सहस्र भाषा है?

गौतम! वह एक भाषा है, वह सहस्र भाषा नहीं है।

सूर्य-पद

१३२. उस काल और उस समय में भगवान् गौतम ने सद्यः-उदित हुए जवाकुसुम पुञ्ज के प्रकाश के समान रक्तिम बाल सूर्य को देखा। देखकर एक श्रद्धा यावत् कुतूहल प्रबलतम बना। जहां श्रमण भगवान् महावीर हैं, वहां आते हैं, वहां आकर श्रमण भगवान् महावीर को दांई ओर से प्रारंभ कर तीन बार प्रदक्षिणा करते हैं, वंदन-नमस्कार करते हैं। वंदन-नमस्कार कर न अति निकट न अति दूर, शुश्रूषा और नमस्कार की मुद्रा में उनके सम्मुख सविनय बद्धांजलि होकर पर्युपासना करते हुए इस प्रकार बोले—

भंते! यह सूर्य क्या है? भंते! सूर्य का अर्थ क्या है?

गौतम! सूर्य शुभ है, सूर्य का अर्थ शुभ है।

१३३. भंते! यह सूर्य क्या है? भंते! सूर्य की प्रभा क्या है?

गौतम! सूर्य शुभ है, सूर्य की प्रभा शुभ है।

१३४. भंते! यह सूर्य क्या है? भंते! सूर्य की छाया क्या है?

गौतम! सूर्य शुभ है, सूर्य की छाया शुभ है।

१३५. भंते! यह सूर्य क्या है? भंते! सूर्य की लेश्या क्या है?

गौतम! सूर्य शुभ है, सूर्य की लेश्या शुभ है।

श्रमणों का तेजोलेश्या-पद

१३६. भंते! जो ये श्रमण-निर्ग्रंथ आर्य-रूप में विहार करते हैं, वे किसकी तेजो-लेश्या का व्यतिक्रमण करते हैं?

गौतम! एक मास-पर्याय वाला श्रमण-निर्ग्रंथ वाणमंतर देवों की तेजो-लेश्या का व्यतिक्रमण करता है।

दो मास-पर्याय वाला श्रमण-निर्ग्रंथ असुरकुमार को छोड़कर शेष भवनवासी देवों की तेजोलेश्या का व्यतिक्रमण करता है।

इस प्रकार इस अभिलाप के अनुसार तीन मास-पर्याय वाला श्रमण-निर्ग्रंथ असुरकुमार देवों की तेजो-लेश्या का व्यतिक्रमण करता है।

चार मास-पर्याय वाला श्रमण-निर्ग्रंथ ग्रह-गण, नक्षत्र, तारा-रूप ज्योतिष्क-देवों की तेजो--लेश्या का व्यतिक्रमण करता है।

पांच मास-पर्याय वाला श्रमण-निर्ग्रंथ ज्योतिषेन्द्र जयोतिषराज चंद्र-सूर्य की तेजो-लेश्या का व्यतिक्रमण करता है।

छह मास-पर्याय वाला श्रमण-निर्ग्रंथ सौधर्म-ईशान-देवों की तेजो-लेश्या का व्यतिक्रमण करता है।

सात मास-पर्याय वाला श्रमण-निर्ग्रंथ सनत्कुमार-माहेन्द्र-देवों की तेजो-लेश्या का व्यतिक्रमण करता है।

आठ मास-पर्याय वाला श्रमण-निर्ग्रंथ ब्रह्मलोक-लांतक-देवों की तेजो-लेश्या का व्यतिक्रमण करता है।

नौ मास-पर्याय वाला श्रमण-निर्ग्रंथ महाशुक्र-सहस्रार-देवों की तेजो-लेश्या का व्यतिक्रमण करता है।

दस मास-पर्याय वाला श्रमण-निर्ग्रंथ आनत, प्राणत, आरण और अच्युत-देवों की तेजो-लेश्या का व्यतिक्रमण करता है।

ग्यारह मास-पर्याय वाला श्रमण-निर्ग्रंथ ग्रैवेयक-देवों की तेजो-लेश्या का व्यतिक्रमण करता है।

बारह मास-पर्याय वाला श्रमण-निर्ग्रंथ अनुत्तरोपपातिक-देवों की तेजो-लेश्या का व्यतिक्रमण करता है।

उससे आगे शुक्ल, शुक्लाभिजात होकर उसके पश्चात् सिद्ध, प्रशान्त, मुक्त और परिनिर्वृत होता है, सब दुःखों का अंत करता है।

१३७. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है। यावत् विहरण करने लगे।

दसवां उद्देशक

केवलि-पद

१३८. भंते! क्या केवली छद्मस्थ को जानता-देखता है?

हां, जानता-देखता है।

१३९. भंते! जैसे केवली छद्मस्थ को जानता-देखता है, वैसे सिद्ध भी छद्मस्थ को जानता--देखता है?

हां, जानता-देखता है।

१४०. भंते! केवली आधोवधिक को जानता-देखता है?

पूर्ववत्। इसी प्रकार केवली परमाधोवधिक को जानता-देखता है। इसी प्रकार केवली को जानता-देखता है। इसी प्रकार सिद्ध को जानता-देखता है यावत्।

१४१. भंते! जैसे केवली सिद्ध को जानता-देखता है, वैसे सिद्ध भी सिद्ध को जानता-देखता है।

हां, जानता-देखता है।

१४२. भंते! क्या केवली बोलते हैं? व्याकरण करते हैं?

हां, बोलते हैं, व्याकरण करते हैं।

१४३. भंते! जैसे केवली बालते हैं, व्याकरण करते हैं, वैसे सिद्ध भी बोलते हैं? व्याकरण करते हैं?

यह अर्थ संगत नहीं है।

१४४. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—जैसे केवली बोलते हैं, व्याकरण करते हैं, वैसे सिद्ध नहीं बोलते, व्याकरण नहीं करते?

गौतम! केवली सउत्थान, सकर्म, सबल, सवीर्य, सपुरुषकार और सपराक्रम होता है। सिद्ध अनुत्थान, अकर्म, अबल, अवीर्य, अपुरुषकार और अपराक्रम होता है। गौतम! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—जैसे केवली बोलते हैं, व्याकरण करते हैं वैसे सिद्ध नहीं बोलते, व्याकरण नहीं करते।

१४५. भंते! केवली उन्मेष करते हैं? निमेष करते हैं?

हां, उन्मेष करते हैं, निमेष करते हैं।

१४६. भंते! जैसे केवली उन्मेष-निमेष करते हैं, वैसे सिद्ध भी उन्मेष-निमेष करते हैं?

यह अर्थ संगत नहीं है। पूर्ववत्। इसी प्रकार सिद्ध आकुंचन, प्रसारण, इसी प्रकार स्थान, शय्या, निषद्या नहीं करते हैं।

१४७. भंते! केवली 'इस रत्नप्रभा-पृथ्वी को यह रत्नप्रभा-पृथ्वी है'—ऐसा जानता-देखता है?

हां, जानता-देखता है।

१४८. भंते! जैसे केवली 'इस रत्नप्रभा-पृथ्वी को यह रत्नप्रभा-पृथ्वी है'—ऐसा जानता देखता है वैसे सिद्ध भी 'इस रत्नप्रभा-पृथ्वी को यह रत्नप्रभा-पृथ्वी है'—यह जानता-देखता है?

हां, जानता-देखता है।

१४९. भंते! केवली 'शर्कराप्रभा-पृथ्वी को यह शर्कराप्रभा-पृथ्वी है'—ऐसा जानता-देखता है?

पूर्ववत्। इसी प्रकार यावत् केवली अधःसप्तमी-पृथ्वी को जानता-देखता है।

१५०. भंते! केवली 'सौधर्म-कल्प को सौधर्म-कल्प है'—ऐसा जानता-देखता है?

हां, जानता-देखता है। पूर्ववत्। इसी प्रकार केवली ईशान को, इसी प्रकार यावत् अच्युत को जानता-देखता है।

१५१. भंते! केवली 'ग्रैवेयक-विमान को यह ग्रैवेयक-विमान है' ऐसा जानता-देखता है?

पूर्ववत्। इसी प्रकार केवली अनुत्तर-विमान को जानता-देखता है।

१५२. भंते! केवली 'ईषत् प्राग्भारा पृथ्वी को यह ईषत्-प्राग्भारा-पृथ्वी है'—ऐसा जानता-देखता है?

पूर्ववत्।

१५३. भंते! केवली 'परमाणु-पुद्गल को यह परमाणु-पुद्गल है' ऐसा जानता-देखता है?

पूर्ववत्। इसी प्रकार केवली द्विप्रदेशिक स्कंध को जानता-देखता है, इसी प्रकार यावत्—

१५४. भंते! जैसे केवली 'अनंत-प्रदेशी स्कंध को यह अनंत-प्रदेशी स्कंध है' ऐसा जानता-देखता है वैसे सिद्ध भी 'अनंत-प्रदेशी स्कंध को यह अनंत-प्रदेशी स्कंध है'—ऐसा जानता-देखता है?

हां, जानता-देखता है।

१५५. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

• • •

पन्द्रहवां शतक

गोशालक-पद

१. उस काल और उस समय में श्रावस्ती नाम की नगरी थी—वर्णक। उस श्रावस्ती नगरी के बाहर उत्तर-पूर्व दिशा में कोष्ठक नाम का चैत्य था—वर्णक। उस श्रावस्ती नगरी में आजीवक-उपासिका हालाहला नाम की कुंभकारी रहती थी—आढ्य यावत् बहुजन के द्वारा अपरिभवनीय। आजीवक-सिद्धान्त में यथार्थ को सुनने वाली, ग्रहण करने वाली, (आजीवक-सिद्धान्त के) प्रेमानुराग से अनुरक्त अस्थि-मज्जा वाली, 'आयुष्मन्'! यह आजीवक-सिद्धांत यथार्थ है, यह परमार्थ है, शेष अनर्थ है। (ऐसा मानने वाली वह) इस प्रकार आजीवक-सिद्धान्त के द्वारा अपने आपको भावित करते हुए रह रही थी।

२. उस काल और उस समय में चौबीस वर्ष-पर्याय वाला मंखलिपुत्र गोशाल उस हालाहला कुंभकारी के कुंभकारापण में आजीवक-समुदाय से संपरिवृत होकर आजीवक-सिद्धान्त के द्वारा अपने आपको भावित करते हुए रह रहा था।

३. एक समय मंखलिपुत्र गोशाल के पास ये छह दिशाचर अकस्मात् आए, जैसे—शान, कलन्द, कर्णिकार, अच्छिद्र, अग्निवैश्यायन और अर्जुन गोमायुपुत्र।

४. इन छह दिशाचरों ने अष्टविध महानिमित्त का पूर्वगत के दसवें अंग से अपने-अपने मतिदर्शन से निर्यूहण किया। निर्यूहण कर मंखलिपुत्र गोशाल के सामने उपस्थित किया।

५. उस अष्टांग महानिमित्त के किसी सामान्य अध्ययन मात्र से सब प्राणी, सब भूत, सब जीव और सब सत्त्वों के लिए इन छह अनतिक्रमणीय व्याकरणों का व्याकरण किया, जैसे—लाभ, अलाभ, सुख, दुःख, जीवित तथा मरण।

६. वह मंखलिपुत्र गोशाल महानिमित्त के किसी सामान्य अध्ययन मात्र से श्रावस्ती नगरी में अजिन होकर जिन-प्रलापी, अर्हत् न होकर अर्हत्-प्रलापी, केवली न होकर केवली-प्रलापी, सर्वज्ञ न होकर सर्वज्ञ-प्रलापी, जिन न होकर जिन शब्द से प्रकाशित करता हुआ विहरण करने लगा।

७. उस श्रावस्ती नगरी के शृंगाटकों, तिराहों, चोराहों, चोहटों, चार द्वार वाले स्थानों, जनमार्गों और मार्गों पर बहुजन परस्पर इस प्रकार आख्यान, भाषण, प्रज्ञापन एवं प्ररूपण करते हैं—देवानुप्रिय! मंखलिपुत्र गोशालक जिन होकर जिन-प्रलापी, अर्हत् होकर अर्हत्-प्रलापी, केवली होकर केवली-प्रलापी, सर्वज्ञ होकर सर्वज्ञ-प्रलापी, जिन होकर अपने आपको जिन शब्द से प्रकाशित करता हुआ विहार कर रहा है। तो क्या यह ऐसा ही है?

८. उस काल और उस समय में स्वामी समवसृत हुए यावत् परिषद् वापस नगर में चली गई।

९. उस काल और उस समय में श्रमण भगवान् महावीर के ज्येष्ठ अंतेवासी इन्द्रभूति नामक अणगार गौतम सगोत्र सात हाथ की ऊंचाई वाले, समचतुरस्र-संस्थान से संस्थित, वज्रऋषभनाराच-संहनन-युक्त, कसौटी पर खचित स्वर्णरेखा तथा पद्मकेसर की भांति पीताभ गौर वर्ण वाले, उग्रतपस्वी, दीप्ततपस्वी, तप्ततपस्वी, महातपस्वी, महान, घोर, घोर गुणों से युक्त, घोर तपस्वी, घोर ब्रह्मचर्यवासी, लघिमा-ऋद्धि-सम्पन्न, विपुल तेजो-लेश्या को अन्तर्लीन रखने वाले, बिना विराम षष्ठ-भक्त तपःकर्म तथा संयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए रह रहे हैं।

१०. भगवान् गौतम षष्ठ-भक्त के पारणा में प्रथम प्रहर में स्वाध्याय करते हैं, द्वितीय प्रहर में ध्यान करते हैं, तृतीय प्रहर में त्वरता-, चपलता- और संभ्रम- रहित होकर मुखवस्त्रिका का प्रतिलेखन करते हैं, प्रतिलेखन कर पात्र-वस्त्र का प्रतिलेखन करते हैं, प्रतिलेखन कर पात्रों का प्रमार्जन करते हैं, प्रमार्जन कर पात्रों को हाथ में लेते हैं, लेकर जहां श्रमण भगवान् महावीर हैं, वहां आते हैं, आकर श्रमण भगवान् महावीर को वंदन-नमस्कार करते हैं, वंदन-नमस्कार कर वे इस प्रकार बोले--भंते! मैं आपकी अनुज्ञा पाकर षष्ठ-भक्त के पारणा में श्रावस्ती नगर के उच्च, नीच और मध्यम कुलों की सामुदायिक भिक्षाचर्या के लिए घूमना चाहता हूं।

देवानुप्रिय! जैसा तुम्हें सुख हो, प्रतिबंध मत करो।

११. भगवान् गौतम श्रमण भगवान् महावीर की अनुज्ञा प्राप्त कर श्रमण भगवान् महावीर के पास से कोष्ठक चैत्य से बाहर आते हैं, बाहर आकर त्वरता-, चपलता- और संभ्रम-रहित होकर युग-प्रमाण भूमि को देखने वाली दृष्टि से ईर्या का शोधन करते हुए, शोधन करते हुए जहां श्रावस्ती नगर है, वहां आते हैं, आकर श्रावस्ती नगर के उच्च, नीच और मध्यम कुलों की सामुदानिक भिक्षाचर्या के लिए घूमते हैं।

१२. भगवान् गौतम श्रावस्ती नगर के उच्च, नीच और मध्यम कुलों की सामुदानिक भिक्षाचर्या के लिए घूमते हुए अनेक व्यक्तियों से ये शब्द सुनते हैं, अनेक व्यक्ति परस्पर इस प्रकार का आख्यान, भाषण, प्रज्ञापन एवं प्ररूपण करते हैं--देवानुप्रिय! मंखलिपुत्र गोशाल जिन होकर जिन-प्रलापी यावत् जिन होकर अपने आपको जिन शब्द से प्रकाशित करता हुआ विहार कर रहा है। तो क्या यह ऐसा ही है?

१३. अनेक व्यक्तियों के पास इस अर्थ को सुनकर अवधारण कर भगवान् गौतम के मन में एक श्रद्धा यावत् कुतूहल उत्पन्न हुआ। वे यथापर्याप्त भिक्षा लेते हैं, लेकर श्रावस्ती नगर से बाहर आते हैं, त्वरा-, चपलता- और संभ्रम-रहित होकर युग-प्रमाण भूमि को देखने वाली दृष्टि से ईर्या का शोधन करते हुए, शोधन करते हुए जहां कोष्ठक चैत्य है, जहां श्रमण भगवान् महावीर हैं, वहा आते हैं, आकर श्रमण भगवान् महावीर के न अति दूर और न अति निकट रहकर गमनागमन का प्रतिक्रमण करते हैं, प्रतिक्रमण कर एषणा और अनैषणा की आलोचना करते हैं, आलोचना कर भक्त-पान दिखलाते हैं, दिखलाकर श्रमण भगवान् महावीर को वंदन-नमस्कार करते हैं, वंदन-नमस्कार कर इस प्रकार बोले--भंते! मैं षष्ठ-भक्त के पारणे में आपकी अनुज्ञा पाकर श्रावस्ती नगर के उच्च, नीच और मध्यम कुलों में सामुदायिक भिक्षा के लिए घूमते हुए अनेक व्यक्तियों के ये शब्द सुनता हूं, अनेक व्यक्ति परस्पर इस

प्रकार का आख्यान, भाषण, प्रज्ञापन और प्ररूपण करते हैं—देवानुप्रिय! मंखलिपुत्र गोशाल जिन होकर जिन-प्रलापी यावत् जिन होकर अपने आपको जिन शब्द से प्रकाशित करता हुआ विहार कर रहा है। भंते! क्या यह ऐसा ही है? भंते! मैं चाहता हूं आप मंखलिपुत्र गोशाल के जन्म से लेकर अब तक का चारित्र कहें।

१४. अयि गौतम! श्रमण भगवान् महावीर ने भगवान् गौतम को इस प्रकार कहा—गौतम! जो ये अनेक व्यक्ति परस्पर इस प्रकार आख्यान, भाषण, प्रज्ञापन और प्ररूपण करते हैं—मंखलिपुत्र गोशाल, जिन होकर जिन-प्रलापी यावत् जिन होकर अपने आपको जिन शब्द से प्रकाशित करता हुआ विहार कर रहा है—वह मिथ्या है। गौतम! मैं इस प्रकार आख्यान यावत् प्ररूपण करता हूं—इस मंखलिपुत्र गोशाल के पिता का नाम मंखलि था। उसकी जाति मंख थी। उस मंखलि मंख के भद्रा नाम की भार्या थी—सुकुमार हाथ-पैर वाली यावत् प्रतिरूपा। वह भद्रा भार्या किसी दिन गर्भवती हुई।

१५. उस काल और उस समय में 'सरवण' नाम का सन्निवेश था—ऐश्वर्यशाली, शान्त और समृद्ध यावत् नंदनवन के समान प्रभा वाला, चित्त को प्रसन्न करने वाला, दर्शनीय, कमनीय और रमणीय। उस सरवण सन्निवेश में गोबहुल नाम का ब्राह्मण[1] रहता था—वह समृद्ध यावत् बहुजनों के द्वारा अपरिभूत था, ऋग्वेद यावत् अनेक ब्राह्मण और परिव्राजक-संबंधी नयों में निष्णात था। उस गोबहुल ब्राह्मण के गौशाला भी थी।

१६. मंखली मंख ने एक दिन गर्भवती भार्या भद्रा के साथ प्रस्थान किया। वह चित्रफलक हाथ में लेकर मंखत्व (भिक्षुत्व वृत्ति) के द्वारा अपना जीवन-यापन करता हुआ, क्रमानुसार विचरण तथा ग्रामानुग्राम परिव्रजन करता हुआ, जहां सरवण सन्निवेश था, जहां गोबहुल ब्राह्मण की गौशाला थी वहां आया, आकर गोबहुल ब्राह्मण का गौशाला के एक भाग में भांड का निक्षेप किया, निक्षेप कर सरवण सन्निवेश के उच्च, नीच तथा मध्यम कुलों में सामुदानिक भिक्षा के लिए घूमते हुए चारों ओर आवास-योग्य स्थान की मार्गणा-गवेषणा करते हुए, आवास-योग्य स्थान के न मिलने पर उसी गोबहुल ब्राह्मण की गौशाला के एक भाग में वर्षावास किया।

१७. भद्रा भार्या ने बहु प्रतिपूर्ण नव मास साढे सात दिन-रात बीत जाने पर सुकुमार हाथ-पैर वाले यावत् प्रतिरूप पुत्र को जन्म दिया।

१८. उस पुत्र के माता-पिता ग्यारह दिन बीत जाने पर अशुचिजात कर्म से निवृत्त हुए। बारहवें दिन इस प्रकार का गुण-युक्त गुण-निष्पन्न नामकरण किया—क्योंकि हमारा यह बालक गोबहुल ब्राह्मण की गौशाला में उत्पन्न हुआ है इसलिए इस बालक का नाम 'गोशाल--गोशाल' ऐसा हो। तब उसके माता-पिता ने उस बालक का नाम गोशाल किया।

१९. उस बालक गोशाल ने बाल-अवस्था को पारकर, विज्ञ और कला का पारगामी बन कर यौवन को प्राप्त किया। स्वयं स्वतंत्र रूप से चित्रफलक का निर्माण किया, निर्माण कर वह चित्रफलक को हाथों में लेकर मंखत्व-वृत्ति के द्वारा अपना जीवन-यापन करता हुआ विचरण करने लगा।

भगवान का विहार-पद

२०. गौतम! उस काल और उस समय में मैं तीस वर्ष घर में रह कर माता-पिता के दिवंगत होने पर मेरी प्रतिज्ञा सम्पन्न हो गई, इस प्रकार भावना अध्ययन की वक्तव्यता (**आयारचूला**, १५/२६-२९) यावत् एक देवदूष्य को लेकर मुंड होकर अगारता से अनगारता में प्रव्रजित हो गया।

२१. गौतम! मैंने प्रथम वर्ष में अर्द्धमास-अर्द्धमास तप करते हुए अस्थिग्राम की निश्रा में प्रथम अंतरवास में वर्षावास किया। दूसरे वर्ष में मास-मास का तप करते हुए क्रमशः विचरण तथा ग्रामानुग्राम परिव्रजन करते हुए जहां राजगृह नगर था, जहां बाहिरिका नालन्दा थी, जहां तंतुवायशाला थी, वहां आया, आकर प्रवास योग्य स्थान की अनुमति ली, अनुमति लेकर तंतुवायशाला के एक भाग में वर्षावास किया।

पहला मासखमण-पद

२२. गौतम! मैं प्रथम मासखमण तप को स्वीकार कर विहार करने लगा।

२३. वह मंखलिपुत्र गोशाल चित्रफलक को हाथ में लेकर मंखत्व वृत्ति से अपना जीवन-यापन करता हुआ, क्रमानुसार विचरण तथा ग्रामानुग्राम परिव्रजन करता हुआ, जहां राजगृह नगर, जहां बाहिरिका नालंदा, जहां तंतुवायशाला थी, वहां आया, आकर तंतुवायशाला के एक देश में भांड का निक्षेप किया, निक्षेप कर राजगृह नगर के उच्च, नीच तथा मध्यम कुलों में सामुदानिक भिक्षा के लिए घूमते हुए चारों ओर आवास-योग्य स्थान की गवेषणा की, चारों ओर मार्गणा-गवेषणा करते हुए कहीं भी आवास-योग्य स्थान के प्राप्त न होने पर उसी तंतुवायशाला के एक भाग में वर्षावास किया, गौतम! जहां मैं था।

२४. गौतम! मैंने प्रथम मासखमण के पारणे में तंतुवायशाला से प्रतिनिष्क्रमण किया, प्रतिनिष्क्रमण कर बाहिरिका नालंदा के बीचोंबीच निर्गमन किया, निर्गमन कर जहां राजगृह नगर था, वहां आया, वहां आकर राजगृह नगर के उच्च, नीच और मध्यम कुलों में सामुदानिक भिक्षा के लिए घूमते हुए मैंने गृहपति विजय के घर में अनुप्रवेश किया।

२५. गृहपति विजय ने मुझे आते हुए देखा, देखकर हृष्ट-तुष्ट-चित्त वाला, आनंदित, नंदित, प्रतिपूर्णमन वाला, परम सौमनस्य-युक्त और हर्ष से विकस्वर हृदय वाला हो गया। शीघ्र ही आसन से उठा, उठकर पाद-पीठ से नीचे उतरा। नीचे उतर कर पादुका को खोला, खोलकर एक पट वाले वस्त्र का उत्तरासंग किया। उत्तरासंग कर दोनों हाथ जोड़े हुए सात-आठ कदम मेरे सामने आया, सामने आकर मुझे दायीं ओर से प्रारम्भ कर तीन बार प्रदक्षिणा की, प्रदक्षिणा कर मुझे वंदन-नमस्कार किया, वन्दन-नमस्कार कर—मैं महावीर को विपुल अशन, पान, खाद्य, स्वाद्य से प्रतिलाभित करूंगा यह सोचकर तुष्ट हुआ, प्रतिलाभित करता हुआ भी तुष्ट हुआ, प्रतिलाभित करके भी तुष्ट हुआ।

२६. गृहपति विजय ने द्रव्य शुद्ध, दाता शुद्ध, प्रतिग्राहक शुद्ध—इस प्रकार त्रिविध,त्रिकरण से शुद्ध दान के द्वारा मुझे प्रतिलाभित कर देवायुष्य का निबंध किया, संसार को परीत किया। उस समय उसके घर में ये पांच दिव्य प्रकट हुए, जैसे—रत्नों की धारा निपातवृष्टि, पांच वर्ण

वाले फूलों की वृष्टि, ध्वजा फहराने लगी, देवदुन्दुभियां बजी, आकाश के अन्तराल में 'अहो! दानम् अहो! दानम्' की उद्घोषणा हुई।

२७. राजगृह नगर के शृंगाटकों, तिराहों, चौराहों, चौहटों, चार द्वार वाले स्थानों, राजमार्गों और मार्गों पर बहुजन परस्पर इस प्रकार आख्यान, भाषण, प्रज्ञापना एवं प्ररूपण करते हैं—देवानुप्रिय! गृहपति विजय धन्य है। देवानुप्रिय! गृहपति विजय कृतार्थ है! देवानुप्रिय! गृहपति विजय कृतपुण्य (भाग्यशाली) है। देवानुप्रिय! गृहपति विजय कृतलक्षण (लक्षण--संपन्न) है। देवानुप्रिय! गृहपति विजय ने इहलोक ओर परलोक दोनों को सुधार लिया, देवानुप्रिय! गृहपति विजय ने मनुष्य जन्म और जीवन का फल अच्छी तरह से प्राप्त किया है, जिस गृहपति विजय के घर में तथारूप साधु के साधुरूप में प्रतिलाभित होने पर ये पांच दिव्य प्रकट हुए, जैसे—रत्नों की धारा निपात वृष्टि यावत् आकाश के अंतराल में 'अहो! दानम् अहो! दानम्' की उद्घोषणा। इसलिए वह धन्य, कृतार्थ, कृतपुण्य, कृतलक्षण है, उसने इहलोक और परलोक दोनों को सुधारा है, विजय गृहपति ने, विजय गृहपति ने मनुष्य जन्म और जीवन का अच्छा फल प्राप्त किया है।

२८. बहुजन के पास इस अर्थ को सुनकर, अवधारण कर मंखलिपुत्र गोशाल के मन में संशय और कुतूहल उत्पन्न हुआ। जहां गृहपति विजय का घर था, वहां आया, आकर गृहपति विजय के घर रत्नों की धारा निपात वृष्टि तथा पांच वर्ण वाले फूलों की वृष्टि को देखा। गृहपति विजय के घर से मुझे प्रतिनिष्क्रमण करते हुए देखा, देखकर हृष्ट-तुष्ट हुआ। जहां मैं था, वहां आया, आकर मुझे दांयी ओर से प्रारम्भ कर तीन बार प्रदक्षिणा की, प्रदक्षिणा कर मुझे वंदन-नमस्कार किया, वंदन-नमस्कार कर मुझे इस प्रकार बोला—भंते! आप मेरे धर्माचार्य हैं, मैं आपका धर्मान्तेवासी हूं।

२९. गौतम! मंखलिपुत्र गोशाल के इस अर्थ को मैंने आदर नहीं दिया, स्वीकार नहीं किया, मैं मौन रहा।

दूसरा मासखमण-पद

३०. गौतम! मैंने राजगृह नगर से प्रतिनिष्क्रमण किया, प्रतिनिष्क्रमण कर बाहिरिका नालन्दा के बीचोंबीच निर्गमन किया, निर्गमन कर जहां तंतुवायशाला थी, वहां आया, आकर दूसरा मासखमण स्वीकार कर विहार करने लगा।

३१. गौतम! मैंने दूसरे मासखमण के पारण में तंतुवायशाला से प्रतिनिष्क्रमण किया, प्रतिनिष्क्रमण कर बाहिरिका नालंदा के बीचोंबीच निर्गमन किया, निर्गमन कर जहां राजगृह नगर था, वहां आया, आकर राजगृह नगर के उच्च, नीच तथा मध्यम कुलों में सामुदानिक भिक्षा के लिए घूमते हुए गृहपति आनन्द के घर में मैंने अनुप्रवेश किया।

३२. गृहपति आनन्द ने मुझे आते हुए देखा, देखकर हृष्ट-तुष्ट-चित्त वाला, आनंदित, नंदित, प्रीतिपूर्ण-मन वाला, परम सौमनस्य-युक्त और हर्ष से विकस्वर-हृदय वाला हो गया। वह शीघ्र ही आसन से उठा, उठकर पादपीठ से नीचे उतरा, उतर कर पादुका को खोला, खोलकर एक पट वाले वस्त्र से उत्तरासंग किया, उत्तरासंग कर दोनों हाथ जोड़े हुए सात-

-आठ कदम मेरे सामने आया, आकर मुझे दायीं ओर से प्रारम्भ कर तीन बार प्रदक्षिणा की, प्रदक्षिणा कर मुझे वंदन-नमस्कार किया। वंदन-नमस्कार कर—मैं महावीर को विपुल खाद्यविधि से प्रतिलाभित करूंगा, यह सोच कर तुष्ट हुआ, प्रतिलाभित करता हुआ भी तुष्ट हुआ, प्रतिलाभित करके भी तुष्ट हुआ।

३३. उस गृहपति आनन्द ने द्रव्यशुद्ध, दाताशुद्ध, प्रतिग्राहक शुद्ध, त्रिविध, त्रिकरण से शुद्ध दान के द्वारा मुझे प्रतिलाभित कर देव-आयुष्य का निबंध किया, संसार को परीत किया, उस समय उसके घर में ये पांच दिव्य प्रकट हुए, जैसे—रत्नों की धारा निपात वृष्टि, पांच वर्ण वाले फूलों की वृष्टि, ध्वजा फहराने लगी, देवदुन्दुभियां बजीं, आकाश के अन्तराल में 'अहो! दानम् अहो! दानम्' की उद्घोषणा हुई।

३४. राजगृह नगर के शृंगाटकों, तिराहों, चौराहों, चौहटों, चार द्वार वाले स्थानों, राजमार्गों और मार्गों पर बहुजन परस्पर इस प्रकार आख्यान, भाषण, प्रज्ञापना एवं प्ररूपणा करते हैं—देवानुप्रिय! गृहपति आनंद धन्य है। देवानुप्रिय! गृहपति आनन्द कृतार्थ है। देवानुप्रिय! गृहपति आनन्द कृतपुण्य है। देवानुप्रिय! गृहपति आनन्द कृतलक्षण है। देवानुप्रिय! गृहपति आनंद ने इहलोक और परलोक दोनों को सुधार लिया, देवानुप्रिय! गृहपति आनंद ने मनुष्य जन्म और जीवन का अच्छी तरह से फल प्राप्त किया है, जिस गृहपति आनन्द के घर में तथारूप साधु ने साधुरूप में प्रतिलाभित होने पर ये पांच दिव्य प्रकट हुए, जैसे—रत्नों की धारा निपात-वृष्टि यावत् 'अहो! दानम् अहो! दानम्' की उद्घोषणा, इसलिए वह धन्य, कृतार्थ, कृतपुण्य, कृतलक्षण है, उसने इहलोक और परलोक दोनों को सुधारा है। गृहपति आनन्द ने, गृहपति आनन्द ने मनुष्य जन्म और जीवन का अच्छा फल प्राप्त किया है।

३५. बहुजन के पास इस अर्थ को सुनकर, अवधारण कर मंखलिपुत्र गोशाल के मन में संशय और कुतूहल उत्पन्न हुआ। जहां गृहपति आनन्द का घर था, वहां आया, आकर गृहपति आनन्द के घर रत्नों की धारा निपात वृष्टि तथा पांच वर्णवाले फूलों की वृष्टि को देखा। गृहपति आनन्द के घर से प्रतिनिष्क्रमण करते हुए मुझे देखा, देखकर हृष्ट-तुष्ट हुआ, जहां मैं था, वहां आया, आकर मुझे दायीं ओर से प्रारम्भ कर तीन बार प्रदक्षिणा कर वंदन-नमस्कार किया, वंदन-नमस्कार कर मुझे इस प्रकार बोला—भंते! आप मेरे धर्माचार्य हैं, मैं आपका धर्मान्तेवासी हूं।

३६. गौतम! मंखलिपुत्र गोशाल के इस अर्थ को मैंने आदर नहीं दिया, स्वीकार नहीं किया, मैं मौन रहा।

तीसरा मासखमण-पद

३७. गौतम! मैंने राजगृह नगर से प्रतिनिष्क्रमण किया, प्रतिनिष्क्रमण कर बाहिरिका नालंदा के बीचोंबीच निर्गमन किया, निर्गमन कर जहां तंतुवायशाला थी, वहां आया, आकर तीसरा मासखमण स्वीकार कर विहार करने लगा।

३८. *गौतम! मैंने तीसरे मासखमण के पारण में तंतुवायशाला से प्रतिनिष्क्रमण किया,* प्रतिनिष्क्रमण कर बाहिरिका नालंदा के बीचोंबीच निर्गमन किया, निर्गमन कर जहां राजगृह

नगर था, वहां आया, आकर राजगृह नगर के उच्च, नीच तथा मध्यम कुलों में सामुदानिक भिक्षाचर्या के लिए घूमते हुए गृहपति सुनंद के घर में मैंने अनुप्रवेश किया।

३९. गृहपति सुनंद ने मुझे आते हुए देखा, देखकर हृष्ट-तुष्ट-चित्त वाला, आनंदित, नंदित, प्रीतिपूर्ण-मन वाला, परम सौमनस्य-युक्त और हर्ष से विकस्वर-हृदय वाला हो गया। वह शीघ्र आसन से उठा, उठकर पादपीठ से नीचे उतरा, उतरकर पादुका को खोला, खोलकर एक पट वाले वस्त्र से उत्तरासंग किया, उत्तरासंग कर दोनों हाथ जोड़े हुए सात-आठ कदम मेरे सामने आया, सामने आकर मुझे दायीं ओर से प्रारम्भ कर तीन बार प्रदक्षिणा की, प्रदक्षिणा कर वंदन-नमस्कार किया, वंदन-नमस्कार कर मैं महावीर को विपुल सर्व-रस-युक्त भोजन से प्रतिलाभित करूंगा, यह सोचकर तुष्ट हुआ, प्रतिलाभित करता हुआ भी तुष्ट हुआ, प्रतिलाभित करके भी तुष्ट हुआ।

४०. उस गृहपति सुनंद ने द्रव्य शुद्ध,दाता शुद्ध, प्रतिग्राहक शुद्ध—इस प्रकार त्रिविध, त्रिकरण से शुद्धदान के द्वारा मुझे प्रतिलाभित कर देवायुष्य का निबंध किया, संसार को परीत किया, उस समय उसके घर में ये पांच दिव्य प्रकट हुए, जैसे—रत्नों की धारा निपात-वृष्टि, पांच वर्ण वाले फूलों की वृष्टि, ध्वजा फहराने लगी, देवदुन्दुभियां बजीं, आकाश के अंतराल में 'अहो! दानम् अहो! दानम्' की उद्घोषणा हुई।

४१. राजगृह नगर के शृंगाटकों, तिराहों, चौराहो, चौहटों, चार द्वार वाले स्थानों, राजमार्गों और मार्गों पर बहुजन परस्पर इस प्रकार आख्यान, भाषण, प्रज्ञापना, एवं प्ररूपण करते हैं—देवानुप्रिय! गृहपति सुनंद धन्य है, देवानुप्रिय! गृहपति सुनंद कृतार्थ है, देवानुप्रिय! गृहपति सुनंद कृतपुण्य है, देवानुप्रिय! गृहपति सुनंद कृतलक्षण है, देवानुप्रिय! गृहपति सुनंद ने इहलोक और परलोक दोनों को सुधार लिया है, देवानुप्रिय! गृहपति सुनंद ने मनुष्य जन्म और जीवन का फल अच्छी तरह से प्राप्त किया है, जिस गृहपति सुनंद के घर में तथारूप साधु के साधुरूप में प्रतिलाभित होने पर ये पांच दिव्य प्रकट हुए, जैसे—रत्नों की धारा निपात-वृष्टि यावत् आकाश के अंतराल में 'अहो! दानम् अहो! दानम्' की उद्घोषणा। इसलिए वह धन्य, कृतार्थ, कृतपुण्य, कृतलक्षण है, उसने इहलोक और परलोक दोनों को सुधारा है, गृहपति सुनंद ने, गृहपति सुनन्द ने मनुष्य जन्म और जीवन का अच्छा फल प्राप्त किया है।

४२. बहुजन के पास इस अर्थ को सुन कर, अवधारण कर, मंखलिपुत्र गोशाल के मन में संशय एवं कुतूहल उत्पन्न हुआ, जहां गृहपति सुनंद का घर था, वहां आया, आ कर गृहपति सुनंद के घर रत्नों की धारा निपात वृष्टि तथा पांच वर्ण वाले फूलों की वृष्टि को देखा। गृहपति सुनंद के घर से मुझे प्रतिनिष्क्रमण करते हुए देखा, देखकर हृष्ट-तुष्ट हुआ, जहां मैं था, वहां आया, आ कर मुझे दायीं ओर से प्रारम्भ कर तीन बार प्रदक्षिणा की, प्रदक्षिणा कर वंदन--नमस्कार किया, वंदन-नमस्कार कर मुझसे इस प्रकार बोला—भंते! आप मेरे धर्माचार्य हैं। मैं आपका धर्मान्तेवासी हूं।

४३. गौतम! मंखलिपुत्र गोशाल के इस अर्थ को मैंने आदर नहीं दिया, स्वीकार नहीं किया, मैं मौन रहा।

चौथा मासखमण-पद

४४. गौतम! मैंने राजगृह नगर से प्रतिनिष्क्रमण किया, प्रतिनिष्क्रमण कर बाहिरिका नालंदा के बीचोंबीच निर्गमन किया, निर्गमन कर जहां तंतुवायशाला थी, वहां आया, आकर चतुर्थ मासखमण स्वीकार कर विहार करने लगा।

४५. उस बाहिरिका नालंदा के न अति दूर और न अति निकट कोल्लाक नाम का सन्निवेश था—सन्निवेश वर्णक। उस कोल्लाक सन्निवेश में बहुल नाम का ब्राह्मण रहता था—आढ्य यावत् बहुजन के द्वारा अपरिमित, ऋग्वेद यावत् अनेक ब्राह्मण और परिव्राजक-संबंधी नयों में निष्णात था।

४६. बहुल ब्राह्मण ने कार्तिक चातुर्मासिक प्रतिपदा के दिन को मधु-घृत-संयुक्त परमान्न से ब्राह्मणों को आचमन कराया—भोजन कराया।

४७. गौतम! मैंने चतुर्थ मासखमण के पारण में तंतुवायशाला से प्रतिनिष्क्रमण किया। प्रतिनिष्क्रमण कर बाहिरिका नालंदा के बीचोंबीच निर्गमन किया, निर्गमन कर जहां कोल्लाक सन्निवेश था, वहां आया, आकर कोल्लाक सन्निवेश के उच्च, नीच तथा मध्यम कुलों में सामुदानिक भिक्षाचर्या के लिए घूमते हुए बहुल ब्राह्मण के घर में मैंने अनुप्रवेश किया।

४८. बहुल ब्राह्मण ने मुझे आते हुए देखा, देखकर हृष्ट-तुष्ट-चित्त वाला, आनंदित, नंदित, प्रीतिपूर्ण-मन वाला, परम सौमनस्य-युक्त तथा हर्ष से विकस्वर-हृदय वाला हो गया। वह शीघ्र ही आसन से उठा, उठकर पादपीठ से नीचे उतरा, उतरकर पादुका को खोला, खोल कर एक पट वाले वस्त्र से उत्तरासंग किया, उत्तरासंग कर दोनों हाथ जोड़े हुए सात-आठ कदम मेरे सामने आया, आकर मुझे दायीं ओर से प्रारम्भ कर तीन बार प्रदक्षिणा की, प्रदक्षिणा कर वंदन-नमस्कार किया, वंदन-नमस्कार कर—मैं महावीर को विपुल मधु-घृत--संयुक्त परमान्न से प्रतिलाभित करूंगा, यह सोच कर तुष्ट हुआ, प्रतिलाभित करता हुआ भी तुष्ट हुआ, प्रतिलाभित करके भी तुष्ट हुआ।

४९. बहुल ब्राह्मण ने द्रव्य शुद्ध, दाता शुद्ध, प्रतिग्राहक शुद्ध, त्रिविध त्रिकरण से शुद्धदान के द्वारा मुझे प्रतिलाभित कर देवायुष्य का निबंध किया, संसार को परीत किया, उसके घर पांच दिव्य प्रकट हुए, जैसे—रत्नों की धारा निपात वृष्टि, पांच वर्णवाले फूलों की वृष्टि, ध्वजा फहराने लगी, देवदुन्दुभियां बजीं, आकाश के अंतराल में 'अहो! दानम् अहो! दानम्' की उद्घोषणा हुई।

५०. राजगृह नगर के शृंगाटकों, तिराहों, चौराहों, चौहटों, चार द्वार वाले स्थानों, राजमार्गों और मार्गों पर बहुजन परस्पर इस प्रकार आख्यान, भाषण, प्रज्ञापन एवं प्ररूपण करते हैं—देवानुप्रिय! बहुल ब्राह्मण धन्य है, देवानुप्रिय! बहुल ब्राह्मण कृतार्थ है, देवानुप्रिय! बहुल ब्राह्मण कृतपुण्य है, देवानुप्रिय! बहुल ब्राह्मण कृतलक्षण है, देवानुप्रिय! बहुल ब्राह्मण ने इहलोक और परलोक दोनों को सुधार लिया है, देवानुप्रिय! बहुल ब्राह्मण ने मनुष्य जन्म और जीवन का फल अच्छी तरह से प्राप्त किया है, जिस बहुल ब्राह्मण के घर में तथारूप साधुके साधु रूप में प्रतिलाभित होने पर ये पांच दिव्य प्रकट हुए, जैसे—रत्नों की धारा

निपात-वृष्टि यावत् 'अहोदानम्-अहोदानम्' की उद्घोषणा। इसलिए वह धन्य, कृतार्थ, कृतपुण्य, कृतलक्षण है। उसने इहलोक और परलोक दोनों को सुधारा है। बहुल ब्राह्मण ने, बहुल ब्राह्मण ने मनुष्य जन्म और जीवन का अच्छा फल प्राप्त किया है।

५१. तंतुवायशाला में मुझे न देखकर मंखलिपुत्र गोशाल ने राजगृह नगर के भीतर, बाहर चारों ओर मार्गणा-गवेषणा की। कहीं भी न मेरा शब्द सुनाई दिया, न छींक सुनाई दी और न कोई वार्ता। (मुझे कहीं भी न पाकर, वह वापिस) जहां तंतुवायशाला थी वहां आया, आकर शाटिका, उत्तरीय वस्त्र, भोजन आदि के बर्तन, पदत्राण, चित्रफलक आदि ब्राह्मण को दे दिए, देकर मस्तक तथा दाढी-मूंछ का मुंडन कराया, कराकर तंतुवायशाला से प्रतिनिष्क्रमण *किया, प्रतिनिष्क्रमण कर बाहिरिका* नालंदा के बीचोंबीच निर्गमन किया, निर्गमन कर जहां कोल्लाक सन्निवेश था, वहां आया।

५२. उस कोल्लाक सन्निवेश के बाहर बहुजन परस्पर इस प्रकार का आख्यान यावत् प्ररूपण करते हैं—देवानुप्रिय! बहुल ब्राह्मण धन्य है, देवानुप्रिय! बहुल ब्राह्मण कृतार्थ है, देवानुप्रिय! बहुल ब्राह्मण कृतपुण्य है, देवानुप्रिय! बहुल ब्राह्मण कृतलक्षण है, देवानुप्रिय! बहुल ब्राह्मण ने इहलोक और परलोक—दोनों को सुधारा है, देवानुप्रिय! बहुल ब्राह्मण ने, बहुल ब्राह्मण ने मनुष्य जन्म और जीवन का अच्छा फल प्राप्त किया है।

गोशाल का शिष्य रूप में अंगीकरण-पद

५३. बहुजन के पास इस अर्थ को सुनकर, अवधारण कर मंखलिपुत्र गोशाल के मन में इस प्रकार का आध्यात्मिक, स्मृत्यात्मक, अभिलाषात्मक मनोगत संकल्प उत्पन्न हुआ—मेरे धर्माचार्य, धर्मोपदेशक श्रमण भगवान् महावीर की जैसी ऋद्धि, द्युति, यश, बल, वीर्य और पुरुषकार-पराक्रम, लब्ध, प्राप्त और अभिसमन्वागत है, अन्य किसी तथारूप श्रमण अथवा ब्राह्मण को वैसी ऋद्धि, द्युति, यश, बल, वीर्य, पुरुषकार-पराक्रम लब्ध, प्राप्त और अभिसमन्वागत नहीं है, इसलिए निस्संदेह मेरे धर्माचार्य धर्मोपदेशक श्रमण भगवान् महावीर होंगे, यह सोचकर उसने कोल्लाक सन्निवेश के भीतर-बाहर चारों ओर मेरी मार्गणा-गवेषणा की, चारों ओर मार्गणा-गवेषणा करते हुए कोल्लाक सन्निवेश के बाहर प्रणीतभूमि में वह मेरे साथ हो गया।

५४. मंखलिपुत्र गोशाल ने हृष्ट-तुष्ट होकर मुझे दायीं ओर से प्रारम्भ कर तीन बार प्रदक्षिणा की, प्रदक्षिणा कर मुझे वंदन नमस्कार किया, वंदन-नमस्कार कर इस प्रकार बोला—भंते! आप मेरे धर्माचार्य हैं, मैं आपका अंतेवासी हूं।

५५. गौतम! मैंने मंखलिपुत्र गोशाल के इस अर्थ को स्वीकार कर लिया।

५६. गौतम! मैंने मंखलिपुत्र गोशाल के साथ प्रणीतभूमि में छह वर्ष तक लाभ-अलाभ, सुख-दुःख, सत्कार-असत्कार का प्रत्यनुभव करते हुए अनित्य जागरिका का प्रयोग किया।

तिल-स्तम्भ-पद

५७. गौतम! मैं एक दिन प्रथम शरद् काल समय में अल्प-वृष्टि-काल में मंखलिपुत्र गोशाल के साथ सिद्धार्थ-ग्राम नगर से कूर्म-ग्राम नगर की ओर विहार के लिए संप्रस्थित हुआ। उस

सिद्धार्थ-ग्राम नगर और कूर्म-ग्राम नगर के बीच में एक बड़ा तिल का पौधा पत्र-पुष्प-युक्त, हरा-भरा और विशिष्ट आभा से बहुत-बहुत उपशोभायमान खड़ा था।

५८. मंखलिपुत्र गोशाल ने उस तिल के पौधे को देखा, देख कर मुझे वंदन-नमस्कार किया, वंदन-नमस्कार कर इस प्रकार बोला--भंते! यह तिल का पौधा निष्पन्न होगा या नहीं होगा? इस पौधे पर लगे सात फूलों के जीव मर कर कहां जाएंगे? कहां उपपन्न होंगे?

गौतम! मैंने मंखलिपुत्र गोशाल से इस प्रकार कहा—गोशाल! यह तिल का पौधा निष्पन्न होगा; निष्पन्न नहीं होगा, ऐसा नहीं है। इस पौधे पर लगे सात फूलों के जीव मर कर इसी पौधे की एक तिल फली में पुनः उपपन्न होंगे।

५९. मंखलिपुत्र गोशाल ने जो मैंने कहा, उस अर्थ पर श्रद्धा नहीं की, प्रतीति नहीं की, रुचि नहीं की, इस अर्थ पर अश्रद्धा करता हुआ,अप्रतीति करता हुआ, अरुचि करता हुआ, मुझे संकल्पित कर 'यह मिथ्यावादी हो' यह सोचकर मेरे पास से शनैः-शनैः पीछे सरक गया, पीछे सरक कर जहां तिल का पौधा था, वहां आया, आकर उस तिल के पौधे को जड़ की मिट्टी-सहित उखाड़ा, उखाड़कर एकांत में फैंक दिया। गौतम! उसी क्षण आकाश में दिव्य बादल घुमड़ने लगा। वह दिव्य बादल शीघ्र ही जोर-जोर से गरजने लगा, शीघ्र ही बिजली चमकने लगी, शीघ्र वर्षा शुरू हो गई। न अधिक पानी बहा, न अधिक कीचड़ हुआ। रजों और धूलिकणों को जमाने वाली दिव्य बूंदाबांदी हुई। उससे तिल के पौधे का रोपण हुआ। वह अंकुरित हुआ, बद्धमूल हुआ और वहीं पर प्रतिष्ठित हो गया। तिल पुष्प के वे सात जीव मर कर उसी तिल के पौधे की एक फली में सात तिलों के रूप में पुनः उपपन्न हो गए।

बाल-तपस्वी-वैश्यायन-पद

६०. गौतम! मैं मंखलिपुत्र गोशाल के साथ जहां कूर्म-ग्राम नगर था, वहां आया। उस कूर्म--ग्राम नगर के बाहर वैश्यायन नाम का बाल-तपस्वी निरंतर षष्ठ-षष्ठ-भक्त (दो-दो दिन का उपवास) तपःकर्म में आतापन-भूमि में दोनों भुजाएं ऊपर उठाकर सूर्य के सामने आतापना लेते हुए विहार कर रहा था। सूर्य के ताप से तप्त होकर जूंएं उसकी जटाओं से निकल कर नीचे गिर रही थी, प्राण, भूत, जीव और सत्त्व की दया के लिए वह उन जूंओं को पुनः-पुनः सिर में डाल रहा था।

६१. मंखलिपुत्र गोशाल ने बाल-तपस्वी वैश्यायन को देखा, देखकर मेरे पास से शनैः-शनैः पीछे सरक गया, पीछे सरक कर जहां वैश्यायन बाल-तपस्वी था, वहां आया, आकर वैश्यायन बाल-तपस्वी को इस प्रकार बोला—क्या तुम मुनि हो, पिशाच हो अथवा जूओं के शय्यातर—जूंओं को आश्रय देने वाले?

६२. बाल-तपस्वी वैश्यायन ने मंखलिपुत्र गोशाल के इस अर्थ को आदर नहीं दिया, स्वीकार नहीं किया, वह मौन रहा।

६३. मंखलिपुत्र गोशाल ने बाल-तपस्वी वैश्यायन को दूसरी बार भी, तीसरी बार भी इस प्रकार कहा--क्या तुम मुनि हो, पिशाच हो अथवा जूओं के शय्यातर?

६४. मंखलिपुत्र गोशाल के दूसरी बार भी, तीसरी बार भी इस प्रकार कहने पर बाल-तपस्वी

वैश्यायन तत्काल आवेश में आ गया, रुष्ट हो गया, कुपित हो गया, उसका रूप रौद्र हो गया, क्रोध की अग्नि में प्रदीप्त होकर आतापन-भूमि से नीचे उतरा, नीचे उतर कर तैजस--समुद्घात से समवहत हुआ, समवहत होकर सात-आठ पैर पीछे सरका, पीछे सरक कर मंखलिपुत्र गोशाल के वध के लिए अपने शरीर से तेज को निकाला।

६५. गौतम! मैंने मंखलिपुत्र गोशाल की अनुकंपा के लिए बाल-तपस्वी वैश्यायन की उष्ण तेजो-लेश्या को प्रतिसंहृत करने के लिए गोशाल तक तेजो-लेश्या पहुंचे, उससे पूर्व शीतल तेजो-लेश्या को निकाला। मेरी शीतल तेजो-लेश्या से बाल-तपस्वी वैश्यायन की उष्ण तेजो-लेश्या प्रतिहत हो गई।

६६. बाल-तपस्वी वैश्यायन ने मेरी शीतल तेजो-लेश्या से अपनी उष्ण तेजो-लेश्या को प्रतिहत जानकर, मंखलिपुत्र गोशाल के शरीर का किञ्चित् आबाध, व्याबाध, अथवा छविच्छेद न करते हुए देखकर अपनी उष्ण तेजोलेश्या का प्रतिसंहरण किया, प्रतिसंहरण कर इस प्रकार बोला—भगवन्! मैंने जान लिया, भगवन्! मैंने जान लिया, जान लिया!

६७. मंखलिपुत्र गोशाल ने इस प्रकार कहा—भंते! इस जूओं के शय्यातर ने आपको इस प्रकार कैसे कहा—भगवन्! मैंने जान लिया, भगवन्! मैंने जान लिया? जान लिया?

६८. गौतम! मैंने मंखलिपुत्र गोशाल से इस प्रकार कहा—गोशाल! तुमने बाल-तपस्वी वैश्यायन को देखा, देखकर मेरे पास से धीरे-धीरे पीछे सरक गए, जहां बाल-तपस्वी वैश्यायन था, वहां आए, आकर बाल-तपस्वी वैश्यायन को इस प्रकार कहा—क्या तुम मुनि हो, पिशाच हो अथवा जूओं के शय्यातर? बाल-तपस्वी वैश्यायन ने तुम्हारे इस अर्थ को आदर नहीं दिया, स्वीकार नहीं किया, वह मौन रहा। गोशाल! तुमने बाल-तपस्वी वैश्यायन को दूसरी बार भी, तीसरी बार भी इस प्रकार कहा—क्या तुम मुनि हो? पिशाच हो? अथवा जूओं के शय्यातर? तुम्हारे दूसरी बार, तीसरी बार इस प्रकार कहने पर बाल-तपस्वी वैश्यायन तत्काल आवेश में आ गया यावत् पीछे सरका, सरक कर तुम्हारे वध के लिए शरीर से तेजो-लेश्या को निकाला। गोशाल! मैंने तुम्हारी अनुकंपा के लिए बाल-तपस्वी वैश्यायन की उष्ण तेजो-लेश्या का प्रतिसंहरण करने के लिए, वह तुम्हारे शरीर तक पहुंचे, उससे पूर्व शीतल तेजो-लेश्या को निकाला। मेरी शीतल तेजो-लेश्या से बाल-तपस्वी वैश्यायन की उष्ण तेजो-लेश्या प्रतिहत हो गई। बाल-तपस्वी वैश्यायन ने मेरी शीतल तेजो-लेश्या के द्वारा अपनी उष्ण तेजो-लेश्या को प्रतिहत जानकर, तुम्हारे शरीर में किञ्चित् आबाध, व्याबाध अथवा छविच्छेद न करते हुए देखकर अपनी उष्ण तेजोलेश्या का प्रतिसंहरण किया, प्रतिसंहरण कर मुझे इस प्रकार कहा—भगवन्! मैंने जान लिया, भगवन्! मैंने जान लिया, जान लिया।

६९. मंखलिपुत्र गोशाल मेरे पास इस अर्थ को सुनकर, अवधारण कर भीत और प्रकम्पित हो गया, उसके कंठ प्यास से सूख गये। वह उद्विग्न और भय से व्याकुल हो गया। उसने मुझे वंदन-नमस्कार किया, वंदन-नमस्कार कर इस प्रकार कहा—भगवन्! संक्षिप्त विपुल तेजो--लेश्या वाला कैसे होता है?

७०. गौतम! मैंने मंखलिपुत्र गोशाल से इस प्रकार कहा—गोशाल! एक मुट्ठीभर कुल्माष--पिण्डिका खाता है, एक चुल्लु पानी पीता है, निरंतर बेले-बेले की तपस्या करता है,

आतापन-भूमि में सूर्य के सामने दोनों भुजाएं ऊपर उठाकर आतापना लेता है, वह छह मास के अंतराल में संक्षिप्त विपुल तेजो-लेश्या वाला हो जाता है।

७१. मंखलिपुत्र गोशाल ने मेरे इस अर्थ को विनयपूर्वक स्वीकार किया।

तिल के पौधे की निष्पत्ति : गोशाल का अपक्रमण-पद

७२. गौतम! मैं एक दिन मंखलिपुत्र गोशाल के साथ कूर्म-ग्राम नगर से सिद्धार्थ-ग्राम नगर की ओर विहार के लिए प्रस्थित हुआ। हम उस भू-भाग के निकट आये, जहां वह तिल का पौधा था। मंखलिपुत्र गोशाल ने मुझे इस प्रकार कहा—भंते! आपने तब मुझे ऐसा कहा था यावत् प्ररूपणा की थी—गोशाल! यह तिल का पौधा निष्पन्न होगा; निष्पन्न नहीं होगा, ऐसा नहीं है। ये सात तिल फूलों के जीव मर कर इसी तिल के पौधे की एक तिलफली में सात तिल के रूप में उपपन्न होंगे, वह मिथ्या है। यह प्रत्यक्ष दिखाई देता है—वह तिल का पौधा निष्पन्न नहीं हुआ, अनिष्पन्न ही है। वे सात तिल फूलों के जीव मरकर इस तिल के पौधे की एक तिलफली में सात तिल के रूप में उपपन्न नहीं हुए हैं।

७३. गौतम! मैंने मंखलिपुत्र गोशाल से इस प्रकार कहा—गोशाल! उस समय तुमने मेरे आख्यान एवं प्ररूपण करने पर इस अर्थ पर श्रद्धा नहीं की, प्रतीति नहीं की, रुचि नहीं की। इस अर्थ पर अश्रद्धा करते हुए, अप्रतीति करते हुए, अरुचि करते हुए मुझे संकल्पित कर 'यह मिथ्यावादी हो'—ऐसा सोच कर तुम मेरे पास से शनैः-शनैः पीछे सरक गए, सरक कर जहां तिल का पौधा था, वहां गए, जाकर तिल के पौधे को जड़ की मिट्टी सहित उखाड़ा, उखाड़ कर एकांत में फैंक दिया। गोशाल! उसी समय आकाश में दिव्य बादल घुमड़ने लगा। वह दिव्य बादल शीघ्र ही जोर-जोर से गरजने लगा, शीघ्र ही बिजली चमकने लगी। शीघ्र ही वर्षा शुरू हो गई। न अधिक पानी बहा, न अधिक कीचड़ हुआ। रजों और धूलिकणों को जमाने वाली दिव्य बूंदाबांदी हुई। उससे तिल के पौधे का रोपण हुआ। वह अंकुरित हुआ, बद्धमूल हुआ और वहीं पर प्रतिष्ठित हो गया। वे सात तिल फूलों के जीव मर कर उसी तिल के पौधे की एक तिलफली में सात तिलों के रूप में उपपन्न हुए। इसलिए गोशाल! यह तिल का पौधा निष्पन्न हुआ है, अनिष्पन्न नहीं हुआ। ये सात तिल फूलों के जीव मर कर इस तिल के पौधे की एक तिलफली में सात तिलों के रूप में उपपन्न हुए हैं। गोशाल! इस प्रकार वनस्पतिकायिक जीवों का **'पउट्ट-परिहार'** (पोट्ट-परिहार) होता है—वनस्पतिकायिक जीव मरकर पुनः उसी शरीर में उपपन्न हो जाते हैं।

७४. मंखलिपुत्र गोशाल ने मेरे इस प्रकार आख्यान यावत् प्ररूपण करने पर इस अर्थ पर श्रद्धा नहीं की, प्रतीति नहीं की, रुचि नहीं की, इस अर्थ पर अश्रद्धा, अप्रतीति और अरुचि करता हुआ जहां तिल का पौधा था, वहां आया, आकर उस तिल के पौधे से तिल की फली को तोड़ा, तोड़ कर हाथ में सात तिलों का प्रस्फोटन किया।

७५. उन सात तिलों की गणना करते हुए मंखलिपुत्र गोशाल के मन में इस प्रकार का आध्यात्मिक, स्मृत्यात्मक, अभिलाषात्मक, मनोगत संकल्प उत्पन्न हुआ—इसी प्रकार सब जीवों के पोट्ट-परिहार होता है—गौतम! यह मंखलिपुत्र गोशाल का 'पउट्ट' का सिद्धान्त है। गौतम! यह मंखलिपुत्र गोशाल का मेरे पास से स्वयं अपक्रमण हो गया।

गोशाल के तेजोलेश्या का उत्पत्ति-पद

७६. मंखलिपुत्र गोशाल एक मुट्ठी भर कुल्माष पिण्डिका और एक चुल्लु भर पानी पीता है, निरन्तर बेले बेले की तपस्या करता है, आतापन भूमि में सूर्य के सामने दोनों भुजाएं ऊपर उठाकर आतापना लेता है। मंखलिपुत्र गोशाल छह माह के अंतराल में संक्षिप्त विपुल तेजो--लेश्या वाला हो गया।

गोशाल की पूर्व-कथा का उपसंहार-पद

७७. मंखलिपुत्र गोशाल के पास एक दिन ये छह दिशाचर प्रकट हुए, जैसे—शान, कलंद, कर्णिकार, अच्छिद, अग्नि-वैश्यायन और अर्जुन गोमायुपुत्र। उन दिशाचरों ने अष्टविध महानिमित्त का पूर्वगत के दसवें अंग से अपने-अपने मति दर्शन से निर्यूहण किया। निर्यूहण कर मंखलिपुत्र गोशाल के सामने उपस्थित किया। उस अष्टांग महानिमित्त के सामान्य अध्ययनमात्र से सब प्राणी, सब भूत, सब जीव और सब सत्त्वों के लिए इन छह अनतिक्रमणीय व्याकरणों का व्याकरण किया, जैसे—लाभ, अलाभ, सुख, दुःख, जीवन तथा मरण।

मंखलिपुत्र गोशाल अष्टांग महानिमित्त के सामान्य अध्ययनमात्र से श्रावस्ती नगर में अजिन होकर जिन-प्रलापी, अर्हत् न होकर अर्हत्-प्रलापी, केवली न होकर केवली-प्रलापी, सर्वज्ञ न होकर सर्वज्ञ-प्रलापी, जिन न होकर जिन शब्द से अपने आपको प्रकाशित करता हुआ विहरण करने लगा। इसलिए गौतम! मंखलिपुत्र गोशाल जिन होकर जिन-प्रलापी नहीं है, अर्हत् होकर अर्हत्-प्रलापी नहीं है, केवली होकर केवली-प्रलापी नहीं है, सर्वज्ञ होकर सर्वज्ञ-प्रलापी नहीं है। अजिन होकर जिन शब्द से अपने आपको प्रकाशित करता हुआ विहार कर रहा है। मंखलिपुत्र गोशाल अजिन होकर जिन-प्रलापी है, अर्हत् न होकर अर्हत्--प्रलापी है, केवली न होकर केवली-प्रलापी है, सर्वज्ञ न होकर सर्वज्ञ-प्रलापी है, जिन न होकर जिन शब्द से अपने आपको प्रकाशित करता हुआ विहार कर रहा है।

७८. वह विशालतम परिषद् श्रमण भगवान् महावीर के पास इस अर्थ को सुनकर, अवधारण कर हृष्ट-तुष्ट हो गई। श्रमण भगवान् महावीर को वंदन-नमस्कार किया, वंदन-नमस्कार कर जिस दिशा से आई थी उसी दिशा में लौट गई।

गोशाल का अमर्ष-पद

७९. श्रावस्ती नगर के शृंगाटकों, तिराहों, चौराहों, चार द्वार वाले स्थानों, राजमार्गों और मार्गों पर बहुजन परस्पर इस प्रकार आख्यान यावत् प्ररूपण करते हैं—देवानुप्रिय! मंखलिपुत्र गोशाल जिन होकर जिन-प्रलापी, यावत् जिन होकर जिन शब्द से अपने आपको प्रकाशित करता हुआ विहार कर रहा है, वह मिथ्या है। श्रमण भगवान् महावीर इस प्रकार आख्यान यावत् प्ररूपण करते हैं—मंखलिपुत्र गोशाल के पिता का नाम मंखली था। उसकी जाति मंख थी। मंख की पूर्ववत् सर्ववक्तव्यता यावत् जिन न होकर जिन शब्द से प्रकाशित करता हुआ विहार कर रहा है। इसलिए मंखलिपुत्र गोशाल जिन न होकर जिन-प्रलापी है यावत् विहार कर रहा है। मंखलिपुत्र गोशाल अजिन होकर जिन-प्रलापी है, यावत् विहार कर रहा है।

श्रमण भगवान् महावीर जिन होकर जिन-प्रलापी हैं, यावत् जिन शब्द से अपने आपको प्रकाशित करते हुए विहार कर रहे हैं।

८०. मंखलिपुत्र गोशाल बहुजन के पास इस अर्थ को सुन कर, अवधारण कर तत्काल आवेश में आ गया, रुष्ट हो गया, कुपित हो गया, उसका रूप रौद्र हो गया, क्रोध की अग्नि में प्रदीप्त होकर आतापन-भूमि से नीचे उतरा, नीचे उतर कर श्रावस्ती नगर के बीचोंबीच जहां हालाहला कुंभकारी का कुंभकारापण था, वहां आया, आकर हालाहला कुंभकारी के कुंभकारापण में आजीविक-संघ से संपरिवृत होकर महान् अमर्ष का भार ढोता हुआ विहरण करने लगा।

गोशाल का स्थविर आनंद के समक्ष आक्रोश का प्रदर्शन-पद

८१. उस काल और उस समय में श्रमण भगवान् महावीर का अंतेवासी आनन्द नाम का स्थविर प्रकृति से भद्र यावत् विनीत था। वह निरंतर बेले-बेले तपःकर्म के द्वारा संयम और तपस्या से अपने आपको भावित करता हुआ विहार कर रहा है।

८२. आनंद स्थविर ने बेले के पारण में प्रथम पोरिसी में इस प्रकार जैसे गौतम स्वामी ने श्रमण भगवान् महावीर से पूछा, वैसे ही यावत् उच्च, नीच तथा मध्यम कुलों सामुदानिक भिक्षाचर्या के लिए घूमता हुआ हालाहला कुंभकारी के कुंभकारापण से न अति दूर और न अति निकट जा रहा था।

८३. मंखलिपुत्र गोशाल ने आनंद स्थविर को हालाहला कुंभकारी के कुंभकारापण से न अति दूर और न अति निकट जाते हुए देखा, देखकर इस प्रकार कहा—आनंद! तुम इधर आओ, एक बड़ी उपमा को सुनो।

८४. स्थविर आनन्द मंखलिपुत्र गोशाल के इस प्रकार कहने पर जहां हालाहला कुंभकारी के कुंभकारापण था, जहां मंखलिपुत्र गोशाल था, वहां आया।

८५. मंखलिपुत्र गोशाल ने आनन्द स्थविर से इस प्रकार कहा—आनन्द! चिर अतीत काल में कुछ उच्च तथा निम्न, धनार्थी, अर्थ-लुब्ध, अर्थ-गवेषी, अर्थ-कांक्षी, अर्थ-पिपासु वणिक अर्थ की गवेषणा के लिए नाना प्रकार के विपुल पण्य के भांड लेकर गाड़ी-गाड़ों में बहुत पथ्य भक्त-पान लेकर एक विशाल बस्ती-शून्य, जल-रहित, आवागमन-रहित प्रलंब मार्ग वाली अटवी में अनुप्रविष्ट हो गए।

८६. उन वणिकों के उस विशाल बस्ती-शून्य, जल-रहित, आवागमन-रहित प्रलंब-मार्गवाली अटवी में कुछ दूर जाने पर पहले लिया हुआ जो जल था, वह बार-बार पीते-पीते समाप्त हो गया।

८७. जल के समाप्त होने पर, प्यास के प्रारम्भ होने पर वणिकों ने एक-दूसरे को बुलाया, बुलाकर इस प्रकार कहा—देवानुप्रिय! हम इस विशाल बस्ती-शून्य, जल-रहित, आवागमन--रहित प्रलंब मार्ग वाली अटवी में हैं। कुछ दूर जाने पर पहले लिया हुआ जो जल था, वह बार-बार पीते पीते समाप्त हो गया। देवानुप्रियो! हमारे लिए यह श्रेय है कि हम इस विशाल बस्ती-शून्य यावत् अटवी में चारों ओर जल की मार्गणा-गवेषणा करें। इस प्रकार एक दूसरों

के पास इस अर्थ को स्वीकार किया, स्वीकार कर उस विशाल बस्ती-शून्य यावत् अटवी में चारों ओर जल की मार्गणा-गवेषणा करते हुए एक विशाल वनषंड को प्राप्त किया—कृष्ण, कृष्ण अवभास वाला, यावत् काली कजरारी घटा से समान चित्त को प्रसन्न करने वाला, दर्शनीय, कमनीय और रमणीय।

उस वनषंड के बहु मध्य देश भाग में एक बड़ा वल्मीक (बांबी) मिला। उस वल्मीक (बांबी) के चार ऊंचे और जटा-शटा वाले शिखर थे; वे मध्य भाग में स्वल्प विस्तार वाले थे, निम्न भाग में वे सर्प के अर्द्ध रूप वाले, अर्द्ध सर्पाकार संस्थान से संस्थित, चित्त को प्रसन्न करने वाले, दर्शनीय, कमनीय और रमणीय थे।

८८. वणिकों ने हृष्ट-तुष्ट होकर एक दूसरे को बुलाया, बुलाकर इस प्रकार कहा—देवानुप्रियो! हमने इस विशाल बस्ती-शून्य, जल-रहित, आवागमन-रहित प्रलंब मार्ग वाली अटवी में जल के चारों ओर मार्गणा-गवेषणा करते हुए इस वनषंड को प्राप्त किया—कृष्ण, कृष्ण अवभास वाला। इस वनषंड के बहुमध्यदेश भाग में इस वल्मीक को प्राप्त किया। इस वल्मीक के चार ऊंचे और जटा-शटा वाले शिखर हैं, वे मध्य भाग में स्वल्प विस्तार वाले, निम्न भाग में सर्प के अर्द्ध रूप वाले, अर्द्ध सर्पाकार संस्थान से संस्थित, चित्त को प्रसन्न करने वाले, दर्शनीय, कमनीय और रमणीय हैं, इसलिए देवानुप्रिय! हमारे लिए यह श्रेय है कि हम इस वल्मीक के प्रथम शिखर का भेदन करें। इससे हम प्रधान जल-रत्न को प्राप्त करेंगे।

८९. वणिकों ने एक दूसरे के पास इस अर्थ को स्वीकार किया, स्वीकार कर उस वल्मीक के प्रथम शिखर का भेदन किया। उन्होंने वहां स्वच्छ, पथ्य, जात्य, हल्का और स्फटिक वर्ण की आभा वाले प्रधान जल-रत्न को प्राप्त किया। उन वणिकों ने हृष्ट-तुष्ट होकर जल को पीया, पीकर बैलों को पिलाया, पिलाकर जल-पात्रों को जल से भरा, भर कर दूसरी बार एक दूसरे से इस प्रकार कहा—देवानुप्रियो! हमने इस वल्मीक के प्रथम शिखर को भेदकर प्रधान जल-रत्न प्राप्त किया, इसलिए देवानुप्रियो! हमारे लिये यह श्रेय है कि हम इस वल्मीक के दूसरे शिखर का भेदन कर वहां प्रधान स्वर्ण-रत्न प्राप्त करेंगे।

९०. वणिकों ने एक दूसरे के पास इस अर्थ को स्वीकार किया, स्वीकार कर उस वल्मीक के दूसरे शिखर का भेदन किया। वहां स्वच्छ, जात्य, ताप को सहन करने वाला, महान् अर्थ वाला, महान मूल्य वाला, महान अर्हता वाला और प्रधान स्वर्ण-रत्न प्राप्त किया। वणिकों ने हृष्ट-तुष्ट होकर पात्रों को भरा, भरकर वाहनों को भरा, भरकर तीसरी बार भी एक दूसरे से इस प्रकार कहा— देवानुप्रियो! हमने इस वल्मीक के पहले शिखर का भेदन कर प्रधान जल-रत्न को प्राप्त किया। दूसरे शिखर का भेदन कर प्रधान स्वर्ण-रत्न को प्राप्त किया। इसलिए देवानुप्रियो! हमारे लिए श्रेय है कि हम इस वल्मीक के तीसरे शिखर का भी भेदन करें। यहां हम प्रधान मणि-रत्न प्राप्त करेंगे।

९१. वणिकों ने एक दूसरे के पास इस अर्थ को स्वीकार किया, स्वीकार कर उस वल्मीक के तीसरे शिखर का भेदन किया, वहां विमल, निर्मल, निस्तल (गोलाकर), दूषण-रहित, महान् अर्थ वाला, महान् मूल्य वाला, महान् अर्हता वाला और प्रधान मणि-रत्न प्राप्त किया।

वणिकों ने हृष्ट-तुष्ट होकर भाजनों को भरा, वाहनों को भरा, भर कर चौथी बार भी एक दूसरे से इस प्रकार कहा—देवानुप्रियो! हमने इस वल्मीक के पहले शिखर का भेदन कर प्रधान जल-रत्न को प्राप्त किया। दूसरे शिखर का भेदन कर प्रधान स्वर्ण-रत्न को प्राप्त किया, तीसरे शिखर का भेदन कर प्रधान मणि-रत्न को प्राप्त किया। इसलिए देवानुप्रियो! हमारे लिए श्रेय है कि हम इस वल्मीक के चौथे शिखर का भी भेदन करें, उत्तम महान् मूल्य वाला, महान् अर्हता वाला और प्रधान वज्र-रत्न प्राप्त होगा।

९२. उन वणिकों में एक वणिक हित की कामना करने वाला, शुभ की कामना करने वाला,पथ्य की कामना करने वाला अनुकंपा करने वाला, निःश्रेयस करने वाला, हित, शुभ, और निःश्रेयस की कामना करने वाला था। उस वणिक ने इस प्रकार कहा—देवानुप्रियो! हमने इस वल्मीक के पहले शिखर का भेदन कर प्रधान जल-रत्न प्राप्त किया, दूसरे शिखर का भेदन कर प्रधान स्वर्ण-रत्न प्राप्त किया, तीसरे शिखर का भेदन कर प्रधान मणि-रत्न प्राप्त किया, बस हमारे लिए पर्याप्त है, इस चौथे शिखर का भेदन मत करो। चौथा शिखर उपसर्ग-सहित है।

९३. हित की कामना करने वाले, शुभ की कामना करने वाले, पथ्य की कामना करने वाले, अनुकंपा करने वाले, निःश्रेयस करने वाले, हित, शुभ और निःश्रेयस की कामना करने वाले उस वणिक के इस प्रकार आख्यान करने पर यावत् प्ररूपण करने पर उन वणिकों ने इस अर्थ पर श्रद्धा नहीं की, प्रतीति नहीं की, रुचि नहीं की। इस अर्थ पर अश्रद्धा करते हुए, अप्रतीति करते हुए, अरुचि करते हुए, उस वल्मीक के चौथे शिखर का भेदन किया। वहां उग्र विष, प्रचण्ड विष, घोर विष और महाविष वाले, स्थूल काय, महाकाय, स्याही और मूषा के समान काले, चपल एवं चलती हुई द्विजिह्वा वाले, पृथ्वी-तल पर वेणी के सदृश, उत्कट, स्फुट, कुटिल, जटिल, कर्कश एवं विकट फटाटोप करने में दक्ष, लुहार की धौंकनी के सदृश धमधम (सूं सूं) घोष करने वाले, अनाकलित प्रचण्ड तीव्र रोष वाले, श्वान की भांति मुंह वाले त्वरित, चपल, दृष्टिविष सर्प का स्पर्श हुआ।

९४. वह दृष्टिविष सर्प उन वणिकों का स्पर्श होते ही तत्काल आवेश में आ गया। वह रुष्ट हो गया, कुपित हो गया, उसका रूप रौद्र, क्रोध की अग्नि में प्रदीप्त होकर वह धीरे-धीरे उठा, उठ कर सर-सर करता हुआ वल्मीक के शिखर-तल पर चढा, चढकर सूर्य को एकटक देखा, देख कर अनिमेष दृष्टि से चारों ओर उन वणिकों को देखा।

९५. उस दृष्टिविष सर्प द्वारा अनिमेष दृष्टि से चारों ओर देखे जाने पर वे वणिक शीघ्र ही अपने भांड-अमत्र-उपकरण-सहित एक ही प्रहार में कूटाघात की भांति राख के ढेर जैसे हो गए। उन वणिकों की हित की कामना करने वाले, शुभ की कामना करने वाले, पथ्य की कामना करने वाले, अनुकंपा करने वाले, निःश्रेयस करने वाले, हित, शुभ और निःश्रेयस की कामना करने वाले उस वणिक को अनुकंपा करने वाले देव ने अपने भांड-अमत्र-उपकरण-सहित अपने नगर में पहुंचा दिया।

९६. आनन्द! इसी प्रकार तुम्हारे धर्माचार्य धर्मोपदेशक ज्ञातपुत्र श्रमण ने प्रधान पर्याय प्राप्त किया, प्रधान कीर्ति, वर्ण, शब्द, श्लोक प्रसारित हो रहे हैं, गूंज रहे हैं, स्तुति का विषय बने

हुए हैं—ये श्रमण भगवान् महावीर! श्रमण भगवान् महावीर! इसलिए यदि आज से वे मुझे कुछ कहते हैं तो उन्हें तपः-तेज से एक ही प्रहार में कूटाघात की भांति मैं उसी प्रकार राख का ढेर कर दूंगा, जैसे उस सर्प के द्वारा ये वणिक। आनंद! मैं तुम्हारा संरक्षण और संगोपन करूंगा, जैसे उन वणिकों की हित कामना करने वाला यावत् निःश्रेयस की कामना करने वाले उस वणिक को अनुकंपा करने वाले ने भांड़-अमत्र-उपकरण-सहित अपने नगर में पहुंचा दिया। इसलिए आनंद! तुम जाओ, तुम्हारे धर्माचार्य धर्मोपदेशक श्रमण ज्ञातपुत्र को यह अर्थ कहो।

आनंद स्थविर का भगवान् से निवेदन-पद

९७. आनन्द स्थविर मंखलिपुत्र गोशाल के इस प्रकार कहने पर भीत यावत् भय से व्याकुल हो गया। उसने मंखलिपुत्र गोशाल के पास से हालाहला कुंभकारी के कुंभकारापण से प्रतिनिष्क्रमण किया, प्रतिनिष्क्रमण कर शीघ्र त्वरित गति से श्रावस्ती नगरी के बीचोंबीच निर्गमन किया, निर्गमन कर जहां कोष्ठक चैत्य था, जहां श्रमण भगवान् महावीर थे, वहां आया, आकर श्रमण भगवान् को दांयी ओर से प्रारम्भ कर तीन बार प्रदक्षिणा की, प्रदक्षिणा कर वंदन-नमस्कार किया, वंदन-नमस्कार कर इस प्रकार कहा—भंते! मैं बेले के पारण में आपकी अनुज्ञा से श्रावस्ती नगरी के उच्च, नीच तथा मध्यम कुलों में सामुदानिक भिक्षाचर्या के लिए घूमते हुए हालाहला कुंभकारी के कुंभकारापण से न अति दूर और न अति निकट जा रहा था। मंखलिपुत्र गोशाल ने हालाहला कुंभकारी के कुंभकारापण से न अति दूर और न अति निकट मुझे जाते हुए देख कर इस प्रकार कहा—आनंद! तुम यहां आओ, एक बड़ी उपमा को सुनो।

मंखिलपुत्र गोशाल के इस प्रकार कहने पर मैं जहां हालाहाल कुंभकारी का कुंभकारापण था जहां मंखलिपुत्र गोशाल था, वहां आया।

मंखलिपुत्र गोशाल ने इस प्रकार कहा—चिर अतीत काल में कुछ उच्च तथा निम्न वणिक इस प्रकार पूर्ववत् सर्व निरवशेष वक्तव्य है यावत् अपने नगर पहुंचा दिया। इसलिए आनन्द! तुम जाओ तुम्हारे धर्माचार्य धर्मोपदेशक श्रमण ज्ञातपुत्र को यह अर्थ कहो।

९८. भंते! क्या मंखलिपुत्र गोशाल अपने तपःतेज से एक प्रहार में कूटाघात की भांति राख का ढेर करने में प्रभु है? भंते! क्या तपः-तेज से एक प्रहार में कूटाघात की भांति राख का ढेर करना मंखलिपुत्र गोशाल का विषय है? क्या मंखलिपुत्र गोशाल तपः-तेज से एक प्रहार में कूटाघात की भांति राख का ढेर करने में समर्थ है?

आनन्द! मंखलिपुत्र गोशाल अपने तपः-तेज में एक प्रहार में कूटाघात की भांति राख का ढेर करने में प्रभु है। आनन्द! अपने तपः-तेज से एक प्रहार में कूटाघात की भांति राख का ढेर करना मंखलिपुत्र गोशाल का विषय है। आनन्द! मंखलिपुत्र गोशाल अपने तपः-तेज से एक प्रहार में कूटाघात की भांति राख का ढेर करने में समर्थ है। किन्तु वह अर्हत् भगवान् को एक प्रहार में कूटाघात की भांति राख का ढेर नहीं कर सकता, वह उन्हें परितापित कर सकता है। आनन्द! मंखलिपुत्र गोशाल का जितना तपः-तेज है, उससे अनन्त-गुण विशिष्टतर तपः-तेज अनगार भगवान् का है, अनगार भगवान् क्षांतिक्षम होते हैं। आनन्द! अनगार भगवान् का

जितना तपःतेज है उससे अनंत-गुण विशिष्टतर तपःतेज स्थविर भगवान् का है, स्थविर भगवान् क्षांतिक्षम होते हैं। आनन्द! स्थविर भगवान् का जितना तपः-तेज है, उससे अनन्त--गुण विशिष्टतर तपः-तेज अर्हत् भगवान् का है, अर्हत् भगवान् क्षांतिक्षम होते हैं। इसलिए आनन्द! मंखलिपुत्र गोशाल अपने तपःतेज से एक प्रहार में कूटाघात की भांति राख का ढेर करने में प्रभु है, आनन्द! अपने तपःतेज से एक प्रहार में कूटाघात की भांति राख का ढेर करना मंखलिपुत्र गोशाल का विषय है, आनन्द! मंखलिपुत्र गोशाल अपने तपःतेज से एक प्रहार में कूटाघात की भांति राख का ढेर करने में समर्थ है। किन्तु वह अर्हत् भगवान् को (ऐसा) नहीं कर सकता, (केवल) उन्हें परितापित कर सकता है।

आनन्द स्थविर द्वारा गौतम-आदि को अनुज्ञापन-पद

९९.आनंद! इसलिए तुम जाओ,गौतम आदि श्रमण निग्रन्थों को यह अर्थ कहो—आर्यो! तुम मंखलिपुत्र गोशाल को धार्मिक प्रति-प्रेरणा से प्रतिप्रेरित मत करो, धार्मिक प्रतिस्मरण से प्रतिस्मारित मत करो, धार्मिक प्रत्युपचार-तिरस्कार से प्रत्युपचारित मत करो। मंखलिपुत्र गोशाल श्रमण-निर्ग्रन्थों के प्रति मिथ्यात्व-विप्रतिपन्न है।

१००. श्रमण भगवान् महावीर के इस प्रकार कहने पर आनन्द स्थविर ने श्रमण भगवान् महावीर को वंदन-नमस्कार किया, वंदन-नमस्कार कर जहां गौतम आदि श्रमण-निर्ग्रन्थ थे, वहां आया, आकर गौतम आदि श्रमण-निर्ग्रन्थों को आमन्त्रित किया, आमंत्रित कर इस प्रकार कहा—आर्यो! मैं बेले के पारण में श्रमण भगवान् महावीर की अनुज्ञा से श्रावस्ती नगर के उच्च, नीच तथा मध्यम कुलों में यावत् गौतम आदि श्रमण-निर्ग्रन्थों को यह अर्थ कहो—आर्यो! तुम मंखलिपुत्र गोशाल को धार्मिक प्रति प्रेरणा से प्रतिप्रेरित मत करो, धार्मिक प्रतिस्मारणा से प्रतिस्मारित मत करो, धार्मिक प्रत्युपचार तिरस्कार से प्रत्युपचारित मत करो। मंखलिपुत्र श्रमण-निर्ग्रन्थों के प्रति मिथ्यात्व-विप्रतिपन्न है।

गोशाल का भगवान के प्रति आक्रोश-पूर्वक स्वसिद्धान्त-निरूपण-पद

१०१. जब आनंद स्थविर ने गौतम आदि श्रमण-निर्ग्रन्थों को यह अर्थ कहा, तो मंखलिपुत्र गोशाल ने हालाहला कुंभकारी के कुंभकारापण से प्रतिनिष्क्रमण किया, प्रतिनिष्क्रमण कर आजीवक-संघ से संपरिवृत होकर महान् अमर्ष का भार ढोता हुआ शीघ्र त्वरित गति से श्रावस्ती नगरी के बीचोंबीच निर्गमन किया, निर्गमन कर जहां कोष्ठक चैत्य था, जहां श्रमण भगवान् महावीर थे, वहां आकर श्रमण भगवान् महावीर के न अति दूर और न अति निकट स्थित होकर श्रमण भगवान् महावीर से इस प्रकार कहा—आयुष्मन् काश्यप! तुमने मेरे विषय में अच्छा कहा, आयुष्मन् काश्यप! तुमने मेरे विषय में इस प्रकार साधु कहा—मंखलिपुत्र गोशाल मेरा धर्मान्तेवासी है, मंखलिपुत्र गोशाल मेरा धर्मान्तेवासी है।

जो मंखलिपुत्र गोशाल तुम्हारा धर्मान्तेवासी था, वह शुक्ल शुक्लाभिजात होकर काल-मास में मृत्यु को प्राप्त कर किसी देवलोक में देव-रूप में उपपन्न हुआ है। मैं कोण्डिकायन गौत्रीय हूं, मेरा नाम उदायी है। मैंने गौतम-पुत्र अर्जुन के शरीर को छोड़ा, छोड़कर मंखलिपुत्र गोशाल के शरीर में अनुप्रवेश किया, अनुप्रवेश कर यह सातवां 'पोट्ट-परिहार' किया है।

आयुष्मन् काश्यप! हमारे सिद्धान्त के अनुसार जो सिद्ध हुए हैं, जो सिद्ध हो रहे हैं, जो सिद्ध होंगे, वे सब चौरासी लाख महाकल्प, सात दिव्य, सात संयूथ, सात संज्ञी गर्भ, सात पोट्ट परिहार, पांच लाख साठ हजार छह सौ तीन कर्मों को क्रमशः क्षय कर उसके पश्चात् सिद्ध, प्रशान्त, मुक्त और परिनिर्वृत हुए हैं, सब दुःखों को अंत किया है, करते हैं, अथवा करेंगे।

जैसे महानदी गंगा जहां से प्रवृत्त हुई है, और जहां पर्यवसित हुई है, वह मार्ग लंबाई में पांच सौ योजन, चौड़ाई में आधा योजन और गहराई में पांच सौ धनुष है। इस गंगा के प्रमाण वाली सात गंगा से एक महागंगा, सात महागंगा से एक सादीन गंगा, सात सादीन गंगा से एक मृत गंगा, सात मृत गंगा से एक लोहित गंगा, सात लोहित गंगा से एक आवती गंगा, सात आवती गंगा से एक परमावती गंगा। इस प्रकार पूर्वापर के योग से एक लाख सत्रह हजार छह सौ उन्चास गंगा नदी हैं, ऐसा कहा गया है।

उनका दो प्रकार से उद्धार प्रज्ञप्त है, जैसे—१. सूक्ष्म बोन्दि कलेवर २. बादर बोन्दि कलेवर।

जो सूक्ष्म बोन्दि कलेवर है, वह स्थाप्य है। जो बादर बोन्दि कलेवर है, उसमें से सौ-सौ वर्षों के बीत जाने पर गंगा की बालुका का एक-एक कण निकाला जाए, जितने काल से वह कोष्ठक क्षीण, रज-रहित, निर्लेप और समाप्त हो जाए, वह है शर, शर-प्रमाण। ऐसे तीन लाख शर-प्रमाण काल से एक महाकल्प होता है। चौरासी लाख महाकल्प से महामानस होता है।

१. अनंत संयूथ में जीव च्यवन कर उपरितन मानस में संयूथ देव के रूप में उपपन्न होता है। वहां वह दिव्य भोग भोगता है। भोगों को भोगता हुआ विहरण करता है। विहरण कर उस देवलोक से आयु-क्षय, भव-क्षय और स्थिति-क्षय के अनंतर प्रथम संज्ञी गर्भ में जीव के रूप में पुनः उत्पन्न हुआ।

२. वहां से अनन्तर उद्‌वर्तन कर मध्यम मानस में संयूथ देव के रूप में उपपन्न हुआ। वह दिव्य भोगार्ह भोगों को भोगता हुआ विहरण करता है, विहरण कर उस देवलोक से आयु-क्षय, भव-क्षय और स्थिति-क्षय के अनंतर च्यवन कर दूसरी बार संज्ञी गर्भ में जीव के रूप में पुनः उत्पन्न हुआ।

३. वहां से अनंतर उद्‌वर्तन कर निम्नवर्ती मानस में संयूथ देव के रूप में उपपन्न हुआ। वहां दिव्य भोगार्ह भोगों को यावत् च्यवन कर तीसरी बार संज्ञी गर्भ में जीव के रूप में उत्पन्न हुआ।

४. वहां से अनंतर उद्‌वर्तन कर उपरितन मानस में संयूथ देव के रूप में उपपन्न हुआ। वहां दिव्य भोगार्ह भोगों को यावत् च्यवन कर चौथी बार संज्ञी गर्भ में जीव के रूप में उत्पन्न हुआ।

५. वहां से अनंतर उद्‌वर्तन कर मध्यम मानुषोत्तर संयूथ देव में उपपन्न हुआ। वहां दिव्य भोगार्ह भोगों को यावत् च्यवन कर पांचवीं बार संज्ञी गर्भ में जीव के रूप में उत्पन्न हुआ।

६. वहां से अनंतर उद्‌वर्तन कर निम्नवर्ती मानुषोत्तर में संयूथ देव के रूप में उपपन्न हुआ। वहां दिव्य भोगार्ह भोगों को यावत् च्यवन कर छठी बार संज्ञी गर्भ में जीव के रूप में उत्पन्न हुआ।

७. वहां से अनंतर उद्वर्तन कर—ब्रह्मलोक नाम का कल्प प्रज्ञप्त है—वह पूर्व-पश्चिम में आयत और दक्षिण में विस्तीर्ण है, **पण्णवणा** के स्थान-पद (२/५४) की भांति यावत् पांच अवतंसक प्रज्ञप्त हैं, जैसे—अशोकावतंसक यावत् प्रतिरूप—वहां देव-रूप में उपपन्न हुआ। वहां दस सागरोपम तक दिव्य भोगार्ह भोगों को यावत् च्यवन कर सातवीं बार संज्ञी गर्भ में जीव के रूप में उत्पन्न हुआ।

वहां बहुप्रतिपूर्ण नौ मास तथा साढे-सात रात दिन के बीत जाने पर सुकुमाल, भद्र, मृदुकुंडल के समान घुंघराले केश वाले कान के आभूषणों के समान चमकते हुए कपोल तथा देवकुमार सदृश प्रभा वाले पुत्र के रूप में जन्म लिया। काश्यप! वह मैं हूं। आयुष्मन् काश्यप! मैंने कौमारिक-प्रव्रज्या व कौमारिक ब्रह्मचर्यवास के साथ अविद्धकर्ण के रूप में ही संख्यान (गणित) को प्राप्त किया। प्राप्त कर मैंने ये सात 'पोट्ट-परिहार' किए, जैसे—

१. एणेयक २. मल्लराम ३. मंडित ४. रोह ५. भारद्वाज ६. गौतमपुत्र अर्जुनक ७. मंखलिपुत्र गोशाल।

प्रथम पोट्ट परिहार में मैंने राजगृह नगर के बाहर मंडिककुक्षि चैत्य में कोण्डिकायन गौत्रीय उदायी के शरीर को छोड़ा, छोड़कर एणेयक के शरीर में अनुप्रवेश किया, अनुप्रवेश कर बाईस वर्ष तक प्रथम 'पोट्ट-परिहार' में रहा।

दूसरे पोट्ट परिहार में मैंने उद्दण्डपुर नगर के बाहर चंद्रावतरण चैत्य में एणेयक के शरीर को छोड़ा, छोड़कर मल्लराम के शरीर में अनुप्रवेश किया, अनुप्रवेश कर इक्कीस वर्ष तक दूसरे 'पोट्ट-परिहार' में रहा।

तीसरे पोट्ट परिहार में मैंने चंपा नगरी के बाहर अंगमंदिर चैत्य में मल्लराम के शरीर को छोड़ा, छोड़कर मंडित के शरीर में अनुप्रवेश किया, अनुप्रवेश कर बीस वर्ष तक तीसरे 'पोट्ट--परिहार' में रहा।

चौथे पोट्ट परिहार में मैंने वाराणसी नगरी के बाहर काममहावन चैत्य में मंडित के शरीर को छोड़ा, छोड़कर रोह के शरीर में अनुप्रवेश किया, अनुप्रवेश कर उन्नीस वर्ष तक चौथे 'पोट्ट--परिहार' में रहा।

पांचवे पोट्ट परिहार में मैंने आलभिका नगरी के बाहर प्राप्तकालक चैत्य में रोह के शरीर को छोड़ा, छोड़कर भारद्वाज के शरीर में अनुप्रवेश किया, अनुप्रवेश कर अठारह वर्ष तक पांचवें 'पोट्ट-परिहार' में रहा।

छठे पोट्ट परिहार में मैंने वैशाली नगरी के बाहर कोण्डिकायन चैत्य में भारद्वाज के शरीर को छोड़ा, छोड़कर गौतम पुत्र अर्जुनक के शरीर में अनुप्रवेश किया। अनुप्रवेश कर सतरह वर्ष तक छठे 'पोट्ट-परिहार' में रहा।

सातवें पोट्ट-परिहार में मैंने इसी श्रावस्ती नगरी के हालाहला कुंभकारी के कुंभकारापण में गौतमपुत्र अर्जुनक के शरीर को छोड़ा, छोड़कर मैंने मंखलिपुत्र गोशाल के शरीर को समर्थ, स्थिर, ध्रुव, धारण करने योग्य, सर्दी को सहन करने वाला, गर्मी को सहन करने वाला, क्षुधा को सहन करने वाला, विविध दंश, मशक आदि परीषह और उपसर्ग को सहन करने

वाला, स्थिर संहनन वाला जानकर उसमें अनुप्रवेश किया। अनुप्रवेश कर सोलह वर्षों से इस सातवें 'पोट्ट परिहार'! में मैं रह रहा हूं। आयुष्मन् काश्यप! इसी प्रकार मैंने एक सौ तैंतीस वर्षों में मेरे ये सात पोट्ट परिहार हुए हैं। यह मैं कहता हूं। इसलिए आयुष्मन् काश्यप! तुमने मुझे इस प्रकार अच्छा कहा। आयुष्मन् काश्यप! तुमने मुझे इस प्रकार साधु कहा—मंखलिपुत्र गोशाल मेरा धर्मान्तेवासी है, मंखलिपुत्र गोशाल मेरा धर्मान्तेवासी है।

भगवान् द्वारा गोशालक के वचन का प्रतिकार-पद

१०२. श्रमण भगवान् महावीर ने मंखलिपुत्र गोशाल से इस प्रकार कहा—गोशाल! जैसे कोई चोर है। वह ग्रामीणों द्वारा कहीं पर भी गड्ढा, गुफा, दुर्ग, निम्न स्थान, पर्वत अथवा विषम स्थान के न मिलने पर एक बड़े ऊन के कंबल से, सण के रोम से, कपास के बने हुए रोम से, तृण-सूत्र से अपने आपको आवृत कर बैठ जाता है, वह अनावृत होकर भी अपने आपको आवृत मानता है, अप्रच्छन्न होते हुए भी अपने आपको प्रच्छन्न मानता है, अदृश्य--छिपा हुआ न होते हुए भी अपने आपको अदृश्य मानता है। इसी प्रकार गोशाल! तुम अन्य न होकर भी अपने आपको अन्य बता रहे हो, इसलिए गोशाल! तुम ऐसा मत करो, यह तुम्हारे लिए उचित नहीं है। गोशाल! तुम वही हो, वही तुम्हारी छाया है, अन्य नहीं है।

गोशाल का पुनः आक्रोश-पद

१०३. श्रमण भगवान् महावीर के इस प्रकार कहने पर मंखलिपुत्र गोशाल तत्काल आवेश में आ गया। रुष्ट हो गया, कुपित हो गया, उसका रूप रौद्र हो गया, क्रोध की अग्नि में प्रदीप्त होकर श्रमण भगवान् महावीर के प्रति उच्चावच आक्रोश-युक्त वचनों से आक्रोश प्रकट किया, उच्चावच उद्‌घर्षणा-युक्त वचनों से उद्‌घर्षण किया, उच्चावच निर्भर्त्सना-युक्त वचनों से निर्भर्त्सना की, उच्चावच तिरस्कार-युक्त वचनों से तिरस्कार किया। तिरस्कार कर इस प्रकार कहा—तुम कभी आचार से नष्ट हो गए, कभी विनष्ट हो गए, कभी भ्रष्ट हो गए, तुम कभी नष्ट, विनष्ट और भ्रष्ट हो गए। आज तुम जीवित नहीं रहोगे। मेरे द्वारा तुम्हें सुख प्राप्त नहीं हो सकता।

१०४. उस काल और उस समय में श्रमण भगवान् महावीर के अन्तेवासी पूर्वजनपद के निवासी सर्वानुभूति नाम का अनगार था। वह प्रकृति से भद्र और उपशान्त था। उसके क्रोध, मान, माया और लोभ प्रतनु थे। वह मृदु-मार्दव-सम्पन्न, आलीन (संयतेन्द्रिय) और विनीत था। धर्माचार्य के अनुराग से अनुरक्त था। इस अर्थ पर अश्रद्धा करते हुए वह उठने की मुद्रा में उठा, उठकर जहां मंखलिपुत्र गोशाल था वहां आया, वहां आकर मंखलिपुत्र गोशाल से इस प्रकार कहा— गोशाल! जो तथारूप श्रमण अथवा ब्राह्मण के पास एक भी आर्य धार्मिक वचन का श्रवण करता है, वह भी उन्हें वन्दन करता है, नमस्कार करता है, सत्कार-सम्मान करता है, कल्याणकारी, मंगल, देव और प्रशस्त-चित्त वाले श्रमण की पर्युपासना करता है।

गोशाल! भगवान् ने तुम्हें प्रव्रजित किया, भगवान् ने तुम्हें मुंडित किया, भगवान् ने तुम्हें शैक्ष बनाया, भगवान् ने तुम्हें शिक्षित किया, भगवान् ने तुम्हें बहुश्रुत बनाया। तुम भगवान् के प्रति ही मिथ्यात्व-विप्रतिपन्न हो गए? गोशाल! तुम ऐसा मत करो, यह तुम्हारे लिए उचित नहीं है। गोशाल! तुम वही हो, वही तुम्हारी छाया है, अन्य नहीं है।

गोशाल द्वारा सर्वानुभति का भस्म-राशी-करण-पद

१०५. सर्वानुभूति अनगार के इस प्रकार कहने पर मंखलिपुत्र गोशाल तत्काल आवेश में आ गया। वह रुष्ट हो गया, कुपित हो गया, उसका रूप रौद्र हो गया। क्रोध की अग्नि में प्रदीप्त होकर उसने सर्वानुभूति अनगार को अपने तपः-तेज से कूटाघात की भांति एक प्रहार में राख का ढेर कर दिया।

१०६. मंखलिपुत्र गोशाल सर्वानुभूति अनगार को अपने तपः-तेज से कूटाघात की भांति एक प्रहार में राख का ढेर कर दूसरी बार भी श्रमण भगवान् महावीर के प्रति उच्चावच आक्रोश--युक्त वचनों से आक्रोश प्रकट किया, उच्चावच उद्‌घर्षणा-युक्त वचनों से उद्‌घर्षण किया, उच्चावच निर्भर्त्सना-युक्त वचनों से निर्भर्त्सना की, उच्चावच तिरस्कार-युक्त वचनों से तिरस्कार किया, तिरस्कार कर इस प्रकार कहा--तुम कभी आचार से नष्ट हो गए, तुम कभी विनष्ट हो गए, तुम कभी भ्रष्ट हो गए, तुम कभी नष्ट, विनष्ट और भ्रष्ट हो गए। आज तुम जीवित नहीं रहोगे। मेरे द्वारा तुम्हें सुख प्राप्त नहीं हो सकता।

गोशाल द्वारा सुनक्षत्र को परिताप-पद

१०७. उस काल और उस समय में श्रमण भगवान् महावीर का अंतेवासी कौशल जनपद का निवासी सुनक्षत्र नामक अनगार था। प्रकृति से भद्र यावत् विनीत था। धर्माचार्य के अनुराग से अनुरक्त था। इस अर्थ के प्रति अश्रद्धा करते हुए उठने की मुद्रा में उठा, उठकर जहां मंखलिपुत्र गोशाल था, वहां आया, वहां आकर मंखलिपुत्र गोशाल को इस प्रकार कहा—गोशाल! जो तथारूप श्रमण अथवा ब्राह्मण के पास एक भी आर्य धार्मिक सुवचन का श्रवण करता है, वह उन्हें वंदन करता है, नमस्कार करता है, सत्कार-सम्मान करता है, कल्याणकारी, मंगल, देव, और प्रशस्तचित्त वाले श्रमण की पर्युपासना करता है। गोशाल! भगवान् ने तुम्हें प्रव्रजित किया, भगवान् ने तुम्हें मुंडित किया, भगवान् ने तुम्हें शैक्ष बनाया, भगवान् ने तुम्हें शिक्षित किया, भगवान् ने तुम्हें बहुश्रुत बनाया, तुम भगवान् के प्रति ही मिथ्यात्व-विप्रतिपन्न हो गए? इसलिए गोशाल! तुम ऐसा मत करो, यह तुम्हारे लिए उचित नहीं है। गोशाल! तुम वही हो, वही तुम्हारी छाया है, तुम अन्य नहीं हो।

१०८. सुनक्षत्र अनगार के इस प्रकार कहने पर मंखलिपुत्र गोशाल तत्काल आवेश में आ गया। वह रुष्ट हो गया, कुपित हो गया। उसका रूप रौद्र हो गया। क्रोध की अग्नि में प्रदीप्त होकर उसने अपने तपः-तेज से सुनक्षत्र अनगार को परितापित किया।

१०९. मंखलिपुत्र गोशाल के तपःतेज से परितापित होने पर सुनक्षत्र अनगार, जहां श्रमण भगवान् महावीर थे, वहां आया, आकर श्रमण भगवान् महावीर को तीन बार वन्दन--नमस्कार किया, वंदन-नमस्कार कर स्वयं ही पंच-महाव्रतों का आरोपण किया, आरोपण कर श्रमण-श्रमणियों से क्षमा-याचना की, क्षमा-याचना कर, आलोचना-प्रतिक्रमण कर, समाधि को प्राप्त कर क्रमशः मृत्यु को प्राप्त हो गया।

गोशाल का भगवान के वध के लिए तेज-निसर्जन-पद

११०. अपने तपः-तेज से सुनक्षत्र अनगार को परितापित कर मंखलिपुत्र गोशाल ने तीसरी बार

भी श्रमण भगवान् महावीर के प्रति उच्चावच आक्रोश-युक्त वचनों से आक्रोश प्रकट किया, उच्चावच उद्घर्षण-युक्त वचनों से उद्घर्षणा की, उच्चावच निर्भर्त्सना-युक्त वचनों से निर्भर्त्सना की, उच्चावच तिरस्कार-युक्त वचनों से तिरस्कृत किया, तिरस्कार कर इस प्रकार कहा—तुम कभी आचार से विनष्ट हो गए, कभी नष्ट हो गए, कभी भ्रष्ट हो गए। कभी विनष्ट, नष्ट और भ्रष्ट हो गए, तुम आज जीवित नहीं रहोगे। मेरे द्वारा तुम्हें सुख प्राप्त नहीं हो सकता।

१११. श्रमण भगवान् महावीर ने मंखलिपुत्र गोशाल से इस प्रकार कहा—गोशाल! जो तथारूप श्रमण अथवा ब्राह्मण के पास एक भी आर्य धार्मिक सुवचन का श्रवण करता है, वह वंदन-नमस्कार करता है, सत्कार-सम्मान करता है। कल्याणकारी, मंगल, देव और प्रशस्त चित्त वाले श्रमण की पर्युपासना करता है। गोशाल! मैंने तुम्हें प्रव्रजित किया, मैंने तुम्हें मुंडित किया, मैंने तुम्हें शैक्ष बनाया, मैंने तुम्हें शिक्षित किया, मैंने तुम्हें बहुश्रुत किया, तुम मेरे प्रति ही मिथ्यात्व-विप्रतिपन्न हो गए? इसलिए गोशाल! तुम ऐसा मत करो, यह तुम्हारे लिए उचित नहीं है। गोशाल! तुम वही हो, वही तुम्हारी छाया है, तुम अन्य नहीं हो।

११२. श्रमण भगवान् महावीर के इस प्रकार कहने पर मंखलिपुत्र गोशाल तत्काल आवेश में आ गया, वह रुष्ट हो गया, कुपित हो गया। उसका रूप रौद्र हो गया। क्रोध की अग्नि से प्रदीप्त होकर वह तैजस-समुद्घात से समवहत हुआ, समवहत होकर सात-आठ पैर पीछे सरका, पीछे सरक कर श्रमण भगवान् महावीर के वध के लिए अपने शरीर से तेज का निसर्जन किया। जिस प्रकार उत्कलिका-वात अथवा मंडलिका-वात पर्वत, भित्ति, स्तम्भ अथवा स्तूप से आवारित अथवा निवारित होती हुई उनका क्रमण नहीं करती और प्रक्रमण नहीं करती।

इसी प्रकार श्रमण भगवान् महावीर के वध के लिए मंखलिपुत्र गोशाल के शरीर से निकला हुआ तपःतेज उनका क्रमण नहीं करता, प्रक्रमण नहीं करता, गमनागमन करता है, दायीं ओर से प्रारम्भ कर प्रदक्षिणा करता है—प्रदक्षिणा कर वह शक्ति आकाश में ऊंची उछली, वहां से प्रतिहत होकर लौटती हुई उसी मंखलिपुत्र गोशाल के शरीर को जलाती हुई, जलाती हुई उसके भीतर अनुप्रविष्ट हो गई।

११३. मंखलिपुत्र गोशाल ने स्वयं के तेज से अनाविष्ट होने पर श्रमण भगवान् महावीर को इस प्रकार कहा—आयुष्मन् काश्यप! मेरे तपः-तेज से अनाविष्ट होकर तुम्हारा शरीर पित्तज्वर से व्याप्त हो जाएगा, उसमें जलन पैदा हो जाएगी, तुम छह मास के भीतर छद्मस्थ-अवस्था में मृत्यु को प्राप्त करोगे।

११४. श्रमण भगवान् महावीर ने मंखलिपुत्र गोशाल से इस प्रकार कहा—गोशाल! तुम्हारे तपः-तेज से पराभूत होकर, मेरा शरीर पित्तज्वर से व्याप्त नहीं होगा, उसमें जलन पैदा नहीं होगी, मैं छह माह के भीतर मृत्यु को प्राप्त नहीं करूंगा। मैं अन्य सोलह वर्ष तक जिन-अवस्था में गंध-हस्ती की भांति विहरण करूंगा। गोशाल! स्वयं अपने तपः-तेज से पराभूत होकर तुम्हारा शरीर पित्तज्वर से व्याप्त हो जाएगा, उसमें जलन पैदा हो जाएगी, तुम सात दिन के भीतर छद्मस्थ अवस्था में ही मृत्यु को प्राप्त करोगे।

श्रावस्ती में जन-प्रवाद-पद

११५. श्रावस्ती नगरी के शृंगाटकों, तिराहों, चौराहों, चौहटों, चार द्वार वाले स्थानों, राजमार्गों, मार्गों पर बहुजन परस्पर इस प्रकार आख्यान यावत् प्ररूपण करते हैं– देवानुप्रियो! श्रावस्ती नगरी के बाहर कोष्ठक चैत्य में दो जिन संलाप करते हैं। एक कहता है–तुम पहले काल करोगे। एक कहता है–तुम पहले काल करोगे। उनमें कौन सम्यग्वादी है? कौन मिथ्यावादी है। उनमें जो यथाप्रधान जन (मुख्य व प्रतिष्ठित व्यक्ति) है, वह कहता है–श्रमण भगवान् महावीर सम्यग्वादी है, मंखलिपुत्र गोशाल मिथ्यावादी है।

गोशाल से श्रमणों का प्रश्नव्याकरण-पद

११६. 'आर्यो!'–श्रमण भगवान् महावीर ने श्रमण-निर्ग्रंथों को आमन्त्रित कर इस प्रकार कहा–'आर्यो! जैसे तृण का ढेर, काठ का ढेर, पत्रों का ढेर, छाल का ढेर, तुष का ढेर, भूसे का ढेर, गोमय (गोबर) का ढेर, अकुरडी का ढेर, अग्नि से जल जाने पर, अग्नि से झुलस जाने पर, अग्नि से परिणमित होने पर उसका तेज हत हो जाता है, उसका तेज चला जाता है, उसका तेज लुप्त हो जाता है, उसका तेज विनष्ट हो जाता है, इसी प्रकार मेरे वध के लिए अपने शरीर से तेज का निसर्जन कर मंखलिपुत्र गोशाल हत-तेज, गत-तेज, लुप्त-तेज और विनष्ट-तेज वाला हो गया है, इसलिए आर्यो! तुम मंखलिपुत्र गोशाल को धार्मिक प्रतिस्मारणा से प्रतिस्मारित करो, धार्मिक प्रत्युपचार से प्रत्युचारित करो, अर्थों, हेतुओं, प्रश्नों, व्याकरणों और कारणों के द्वारा निरुत्तर-प्रश्न एवं व्याकरण-रहित करो।

११७. श्रमण भगवान् महावीर के इस प्रकार कहने पर श्रमण निर्गन्थों ने श्रमण भगवान् महावीर को वन्दन-नमस्कार किया, वंदन-नमस्कार कर जहां मंखलिपुत्र गोशाल था वहां गए, जाकर मंखलिपुत्र गोशाल को धार्मिक प्रतिप्रेरणा से प्रतिप्रेरित किया, धार्मिक प्रतिस्मारणा से प्रतिस्मारित किया, धार्मिक प्रत्युपचार से प्रत्युपचारित किया। विभिन्न अर्थों, हेतुओं, प्रश्नों, व्याकरणों और कारणों के द्वारा निरुत्तर-प्रश्न एवं व्याकरण-रहित किया।

११८. श्रमण-निर्ग्रन्थों द्वारा धार्मिक प्रतिप्रेरणा से प्रतिप्रेरित होने पर, धार्मिक प्रतिस्मारणा से प्रतिस्मारित होने पर, धार्मिक प्रत्युपचार से प्रत्युपचारित होने पर, विभिन्न अर्थों, हेतुओं, प्रश्नों, व्याकरणों और कारणों के द्वारा निरुत्तर-प्रश्न एवं व्याकरण-रहित किए जाने पर मंखलिपुत्र गोशाल तत्काल आवेश में आ गया, वह रुष्ट हो गया, कुपित हो गया, उसका रूप रौद्र हो गया। क्रोध की अग्नि से प्रदीप्त होकर वह श्रमण-निर्गन्थों के शरीर को किञ्चित आबाधा, अथवा व्याबाधा पहुंचाने में, अथवा छविच्छेद करने में समर्थ नहीं हुआ।

गोशाल का संघभेद-पद

११९. श्रमण-निर्ग्रन्थों द्वारा धार्मिक प्रतिप्रेरणा से प्रतिप्रेरित किए जाने पर, धार्मिक प्रतिस्मारणा से प्रतिस्मारित किए जाने पर, धार्मिक प्रत्युपचार से प्रत्युपचारित किए जाने पर विभिन्न अर्थों, हेतुओं, प्रश्नों, व्याकरणों और कारणों के द्वारा निरुत्तर-प्रश्न एवं व्याकरण-रहित किए जाने पर मंखलिपुत्र गोशाल तत्काल आवेश में आ गया। रुष्ट हो गया, कुपित हो गया, उसका रूप रौद्र हो गया, क्रोध की अग्नि से प्रदीप्त होकर वह श्रमण-निर्गन्थों के शरीर को किञ्चित्

आबाधा, व्याबाधा अथवा छविच्छेद न करते हुए, मंखलिपुत्र गोशाल को आजीवक स्थविरों ने देखा, देखकर उन्होंने मंखलिपुत्र गोशाल के पास से अपने आप अपक्रमण किया, अपक्रमण कर जहां श्रमण भगवान् महावीर थे वहां आए, आकर श्रमण भगवान् महावीर को दायीं ओर से प्रारम्भ कर तीन बार प्रदक्षिणा की, प्रदक्षिणा कर वंदन-नमस्कार किया, वंदन--नमस्कार कर भगवान् महावीर को स्वीकार कर विहार करने लगे। कुछ आजीवक स्थविर मंखलिपुत्र गोशाल को ही स्वीकार कर विहार करने लगे।

गोशाल का प्रतिक्रमण-पद

१२०. मंखलिपुत्र गोशाल जिस प्रयोजन के लिए शीघ्र आया, उस प्रयोजन को सिद्ध न कर पाने पर, दिशाओं की ओर दीर्घ दृष्टिपात करते हुए, दीर्घ और गर्म निःश्वास लेते हुए, दाढी के बालों को नोचते हुए, गर्दन के पृष्ठ भाग को खुजलाते हुए, कूल्हे के भाग का प्रस्फोट करते हुए, हाथों को मलता हुआ, दोनों पैरों को भूमि पर पटकते हुए 'हा हा, अहो' इस प्रकार बोलता हुआ श्रमण भगवान् महावीर के पास से, कोष्ठक चैत्य से प्रतिनिष्क्रमण किया, प्रतिनिष्क्रमण कर जहां श्रावस्ती नगरी थी, जहां हालाहला कुंभकारी का कुंभकारापण था, वहां आया, आकर हालाहला कुंभकारी के कुंभकारापण में आम्रफल को हाथ में लेकर मद्यपानक को पीते हुए, बार-बार गाते हुए, बार-बार नाचते हुए, बार बार हालाहला कुंभकारी को प्रणाम करते हुए मिट्टी के बर्तन में रहे हुए आतञ्चन-उदक से अपने गात्र का परिसिंचन करता हुआ विहरण कर रहा था।

गोशाल के द्वारा नानासिद्धान्त-प्ररूपण-पद

१२१. आर्यो! श्रमण भगवान् महावीर ने श्रमण-निर्ग्रन्थों को आमन्त्रित कर इस प्रकार कहा—आर्यो! मंखलिपुत्र गोशाल ने मेरे वध के लिए जितने तेज का निसर्जन किया, वह सोलह जनपदों का घात, वध, उच्छेदन और भस्मीसात् करने के लिए पर्याप्त था, जैसे—

१. अंग २. बंग ३. मगध ४. मलय ५. मालव ६. अच्छ ७. वत्स ८. कौत्स ९. पाठ ११. वज्र १२. मौली १३. काशी १४. कौशल १५. अवध १६. शुम्भोत्तर।

आर्यो! मंखलिपुत्र गोशाल हालाहला कुंभकारी के कुंभकारापण में आम्रफल को हाथ में लेकर मद्यपान को पीता हुआ, बार-बार गाता हुआ, बार-बार नृत्य करता हुआ, बार-बार हालाहला कुंभकारी को प्रणाम करता हुआ विहरण कर रहा है, वह अपने पाप कर्म के प्रच्छादन के लिए इन आठ चरमों की प्ररूपणा करता है, जैसे—१. चरम पान २. चरम गीत ३. चरम नृत्य. ४. चरम अंजलि ५. चरम पुष्कल-संवर्त्तक महामेघ ६. चरम सेचनक गंधहस्ती ७. चरम महाशिला-कंटक-संग्राम ८. मैं इस अवसर्पिणी-काल के चौबीस तीर्थंकरों में चरम तीर्थंकर के रूप में सिद्ध होऊंगा यावत् सब दुःखों का अन्त करूंगा।

आर्यो! मंखलिपुत्र गोशाल मिट्टी के बर्तन में रहे हुए शीतल आतञ्चन-जल से गात्र का परिसिञ्चन करता हुआ विहरण कर रहा है, वह अपने पाप कर्म के प्रच्छादन के लिए इन चार पानकों और चार अपानकों की प्रज्ञापना करता है।

१२२. वह पानक क्या ह?

पानक चार प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—१. गाय की पीठ से गिरा हुआ २. हाथ के मर्दन से उत्पन्न ३. सूर्य के आतप से तप्त ४. शिला से प्रभ्रष्ट। यह है पानक।

१२३. वह अपानक क्या है?

अपानक चार प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—१. स्थाल पानक २. त्वचा पानक ३. सिंबलि (मटर आदि की फली) का पानक ४. शुद्ध पानक।

१२४. वह स्थाल-पानक क्या है?

स्थाल-पानक—पानी से आर्द्र स्थाल, बारक (सिकोरा), घड़ा, कलश अथवा शीतलक, जिसका हाथ से स्पर्श किया जा सके, किन्तु जिसे पीया न जा सके। यह है स्थाल-पानक।

१२५. वह त्वचा-पानक क्या है?

त्वचा-पानक—आम्र, अम्बाडक आदि **पण्णवणा,** प्रयोग-पद (१६/५५) की भांति यावत् बेर अथवा तिन्दुरूक, जो तरुण और अपक्व है, उसे मुख में रखकर स्वल्प चूसे, अथवा विशेष रूप से चूसे किन्तु उसका पानी न पी सके। यह है त्वचा-पानक।

१२६. वह सिंबलि-पानक क्या है?

सिंबलि-पानक—ग्वार की फली, मूंग की फली उड़द की फली, अथवा सिंबली की फली, जो तरुण और अपक्व है, को मुंह में स्वल्प चबाता है अथवा विशेष चबाता है। यह है सिंबलि-पानक।

१२७. वह शुद्ध-पानक क्या है?

शुद्ध-पानक—जो छह मास तक शुद्ध खादिम आहार करता है, दो मास पृथ्वी-संस्तारक पर, दो मास काष्ठ-संस्तारक पर, दो मास दर्भ-संस्तारक पर सोता है, बहुप्रतिपूर्ण छह मास की अंतिम रात्रि में उसके ये दो देव प्रकट होते हैं, जैसे—पूर्णभद्र और माणिभद्र। वे देव शीतल और जलार्द्र हाथों से उसका स्पर्श करते हैं, जो उन देवों का अनुमोदन करता है, वह आशीविष के रूप में कर्म करता है, जो उन देवों का अनुमोदन नहीं करता है, उसके स्वयं के शरीर में अग्निकाय उत्पन्न हो जाता है। अग्निकाय अपने तेज से शरीर को जलाता है, जलाने के पश्चात् सिद्ध यावत् सब दुःखों का अंत करता है। यह है शुद्ध-पानक।

अयम्पुल—आजीविकोपासक-पद

१२८. श्रावस्ती नगरी में अयंपुल आजीवक-उपासक रहता था—आढ्य, हालाहला कुंभकारी की भांति वक्तव्यता यावत् आजीवक-सिद्धान्त के द्वारा अपने आपको भावित करते हुए विहार कर रहा था। उस अयंपुल-आजीवक उपासक के किसी एक दिन पूर्वरात्र-अपररात्र काल समय में कुटुंब-जागरिका करते हुए इस प्रकार का आध्यात्मिक, स्मृत्यात्मक, अभिलाषात्मक और मनोगत संकल्प उत्पन्न हुआ—हल्ला नामक कीट किस संस्थान वाला प्रज्ञप्त है?

१२९. उस आजीवक-उपासक अयंपुल के दूसरी बार भी इस प्रकार का आध्यात्मिक, स्मृत्यात्मक, अभिलाषात्मक और मनोगत संकल्प उत्पन्न हुआ—मेरे धर्माचार्य धर्मोपदेशक

मंखलिपुत्र गोशाल उत्पन्न-ज्ञान-दशन के धारक, अर्हत्, जिन, केवली, सर्वज्ञ और सर्वदर्शी है। वे इस श्रावस्ती नगरी में हालाहला कुंभकारी के कुंभकारापण में आजीवक-संघ से संपरिवृत होकर आजीवक-सिद्धांत के द्वारा अपने आपको भावित करते हुए विहार कर रहे हैं। इसलिए कल उषाकाल में पौ फटने पर यावत् सहस्ररश्मि दिनकर सूर्य के उदित और तेज से देदीप्यमान होने पर मंखलिपुत्र गोशाल को वंदना कर यावत् पर्युपासना कर यह इस प्रकार का व्याकरण पूछना मेरे लिए श्रेयस्कर होगा ऐसी संप्रेक्षा की। संप्रेक्षा कर दूसरे दिन उषाकाल में पौ फटने पर यावत् सहस्ररश्मि दिनकर सूर्य के उदित और तेज से देदीप्यमान होने पर स्नान किया, बलिकर्म किया यावत् अल्पभार और बहुमूल्य वाले आभूषणों से शरीर को अलंकृत कर अपने घर से प्रतिनिष्क्रमण किया। प्रतिनिष्क्रमण कर पैदल चलते हुए श्रावस्ती नगरी के बीचोंबीच जहां हालाहला कुंभकारी का कुंभकारापण था, वहां आया, वहां आकर हालाहला कुंभकारी के कुंभकारापण में मंखलिपुत्र गोशाल को हाथ में आम्रफल लेकर मद्यपानक पीते हुए, बार-बार गाते हुए, बार-बार नाचते हुए, बार-बार हालाहला कुंभकारी से अंजलि-कर्म करते हुए, मिट्टी के बर्तन में रहे हुए शीतल आतञ्जल जल से अपने गात्र का परिसिंचन करते हुए देखा, देख कर लज्जित हुआ, उसकी लज्जा प्रगाढ़ होती चली गई। वह धीरे-धीरे पीछे सरक गया।

१३०. आजीवक-स्थविरों ने आजीवक-उपासक अयंपुल को लज्जित यावत् पीछे सरकते हुए देखा, देखकर इस प्रकार कहा—अयंपुल! यहां आओ।

१३१. आजीवक-उपासक अयंपुल आजीवक-स्थविरों के इस प्रकार कहने पर जहां आजीवक-स्थविर थे, वहां आया, आकर आजीवक-स्थविरों को वंदन-नमस्कार किया, वंदन-नमस्कार कर न अति दूर और न अति निकट—यावत् पर्युपासना करने लगा।

१३२. अयि अयुंपुल! आजीवक-स्थविरों ने आजीवक-उपासक अयंपुल से इस प्रकार कहा—अयंपुल! पूर्वरात्र-अपरारात्र काल समय में कुटुंब-जागरिका करते हुए इस प्रकार का आध्यात्मिक, स्मृत्यात्मक, अभिलाषात्मक मनोगत संकल्प उत्पन्न हुआ—हल्ला नामक कीट किस संस्थान वाला प्रज्ञप्त है?

अयंपुल! तुम्हें दूसरी बार भी इस प्रकार का पूर्ववत् सर्व वक्तव्यता यावत् श्रावस्ती नगरी के बीचोंबीच जहां हालाहला कुंभकारी का कुंभकारापण है, जहां हम हैं, वहां शीघ्र जाऊं। अयंपुल! का यह अर्थ संगत है?

हां, है।

अयंपुल! तुम्हारे धर्माचार्य धर्मोपदेशक मंखलिपुत्र गोशाल हालाहला कुंभकारी के कुंभकारापण में हाथ में आम्रफल लेकर यावत् अंजलि-कर्म करते हुए विहार कर रहे हैं। वहां भी भगवान् ने इन आठ चरमों का प्रज्ञापन किया है, जैसे—चरम पान यावत् सब दुःखों का अंत करेगा।

अयंपुल! तुम्हारे धर्माचार्य धर्मोपदेशक मंखलिपुत्र गोशाल मिट्टी के बर्तन में रहे हुए, शीतल आतञ्चन-जल से अपने गात्र को आतञ्चन करते हुए विहार कर रहे हैं, वहां भगवान् ने इन

चार पानकों और चार अपानकों की प्रज्ञापना की है।

वह पानक क्या है? पानक यावत् उसके पश्चात् सिद्ध होता है, यावत् सब दुःखों का अंत करता है।

अयंपुल! इसलिए तुम जाओ। ये ही तुम्हारे धर्माचार्य धर्मोपदेशक मंखलिपुत्र गोशाल यह इस प्रकार का व्याकरण करेंगे।

१३३. आजीवक-उपासक अयंपुल आजीवक-स्थविरों के इस प्रकार कहने पर हृष्ट-तुष्ट होकर उठने की मुद्रा में उठा। उठकर जहां मंखलिपुत्र गोशाल था, वहां जाने के लिए तत्पर हुआ।

१३४. आजीवक-स्थविरों ने मंखलिपुत्र गोशाल को एकांत में आम्रफल को फैंकने के लिए संकेत किया।

१३५. मंखलिपुत्र गोशाल ने आजीवक-स्थविरों के संकेत को ग्रहण किया, ग्रहण कर आम्रफल को एकांत में फैंक दिया।

१३६. आजीवक-उपासक अयंपुल जहां मंखलिपुत्र गोशाल था, वहां आया, आकर मंखलिपुत्र गोशाल को तीन बार यावत् पर्युपासना की।

१३७. अयंपुल! मंखलिपुत्र गोशाल ने आजीवक-उपासक अयंपुल से इस प्रकार कहा— अयंपुल! पूर्वरात्र-अपररात्र काल समय में यावत् जहां मैं हूं वहां शीघ्र आए। अयंपुल! यह अर्थ संगत है?

हां, है।

इसलिए यह आम्रफल नहीं, यह आम्र का छिलका है। हल्ला किस संस्थान वाली प्रज्ञप्त है?

हल्ला बांस-मूल के संस्थान वाली प्रज्ञप्त है। रे वीरो! वीणा बजाओ। रे वीरो! वीणा बजाओ।

१३८. मंखलिपुत्र गोशाल के यह इस प्रकार का व्याकरण करने पर आजीवक-उपासक अयंपुल हृष्ट-तुष्ट चित्तवाला, आनंदित, नंदित, प्रीतिपूर्ण मन वाला, परम सौमनस्य-युक्त और हर्ष से विकस्वर-हृदय वाला हो गया। मंखलिपुत्र गोशाल को वंदन-नमस्कार किया, वंदन-नमस्कार कर प्रश्नों को पूछा। पूछ कर अर्थों को ग्रहण किया, ग्रहण कर उठने की मुद्रा में उठा। उठ कर मंखलिपुत्र गोशाल को वंदन-नमस्कार किया, वंदन-नमस्कार कर जिस दिशा से आया उसी दिशा में लौट गया।

गोशाल द्वारा अपनी मरणोत्तर क्रिया का निर्देश-पद

१३९. मंखलिपुत्र गोशाल ने अपने मरण को जान कर आजीवक-स्थविरों को बुलाया, बुला कर इस प्रकार कहा—*देवानुप्रियो! तुम मुझे मृत्यु को प्राप्त जान कर सुरभित गंधोदक से स्नान* करवाना, स्नान करा कर रोएंदार सुकुमार गंध-वस्त्र से शरीर को पौंछना, पौंछकर सरस गो-शीर्ष चंदन का गात्र पर अनुलेप करना। अनुलेप कर बहुमूल्य अथवा महापुरुष योग्य हंसलक्षण वाला पट-शाटक पहनाना। पहनाकर सर्व अलंकारों से विभूषित करना, विभूषित

कर हजार पुरुषों द्वारा वहन की जाने वाली शिविका में चढ़ाना, चढ़ा कर श्रावस्ती नगरी के शृंगाटकों, तिराहों, चौराहों, चौहटों, चार द्वार वाले स्थानों, राजमार्गों और मार्गों पर महान्--महान् शब्दों के द्वारा उद्घोष करते हुए, उद्घोष करते हुए इस प्रकार कहना— देवानुप्रियो! मंखलिपुत्र गोशाल जिन होकर जिन-प्रलापी, अर्हत् होकर अर्हत-प्रलापी, केवली होकर केवली-प्रलापी, सर्वज्ञ होकर सर्वज्ञ-प्रलापी, जिन होकर 'जिन' शब्द से अपने आपको प्रकाशित करता हुआ, विहरण कर इस अवसर्पिणी-काल में चौबीस तीर्थंकरों में अंतिम तीर्थंकर था, उसने सिद्ध यावत् सब दुःखों को क्षीण कर दिया। इस प्रकार ऋद्धि-सत्कार--समुदय के द्वारा मेरे शरीर की मरणोत्तर क्रिया करना।

१४०. आजीवक-स्थविरों ने मंखलिपुत्र गोशाल के इस अर्थ को विनयपूर्वक स्वीकार किया।

गोशाल का परिणाम-परिवर्तनपूर्वक कालधर्म-पद

१४१. मंखलिपुत्र गोशाल के सातवीं रात में परिणमन करते हुए, सम्यक्त्व के प्राप्त होने पर इस प्रकार का आध्यात्मिक, स्मृत्यात्मक, अभिलाषात्मक, मनोगत संकल्प उत्पन्न हुआ—मैं जिन होकर जिन-प्रलापी नहीं हूं, अर्हत् होकर अर्हत्-प्रलापी नहीं हूं, केवली होकर केवली--प्रलापी नहीं हूं, सर्वज्ञ होकर सर्वज्ञ-प्रलापी नहीं हूं, मैंने जिन न होकर जिन शब्द से प्रकाशित करते हुए विहार किया। मैं ही मंखलिपुत्र गोशाल हूं। मैं श्रमण-घातक, श्रमण--मारक, श्रमण-प्रत्यनीक, आचार्य-उपाध्यायों का अयश करने वाला, अवर्ण करने वाला, अकीर्ति करने वाला हूं। मैंने बहुत असद्भाव की उद्भावना और मिथ्यात्व-अभिनिवेश के द्वारा स्वयं को, दूसरे को तथा दोनों को भ्रांत करते हुए, मिथ्या धारणा में व्युत्पन्न करते हुए विहरण किया। अपने तेज से अभिभूत होकर सात रात के भीतर मेरा शरीर पित्त-ज्वर से ग्रस्त होकर दाह से अपक्रांत होकर मैं छद्मस्थ-अवस्था में ही मृत्यु को प्राप्त करूंगा। श्रमण भगवान् महावीर जिन होकर जिन-प्रलापी, अर्हत् होकर अर्हत्-प्रलापी, केवली होकर केवली-प्रलापी, सर्वज्ञ होकर सर्वज्ञ-प्रलापी, जिन होकर जिन शब्द से अपने आपको प्रकाशित करते हुए विहार कर रहे हैं—इस प्रकार संप्रेक्षा की, संप्रेक्षा कर आजीवक-स्थविरों को बुलाया, बुलाकर शपथ दिलाकर इस प्रकार कहा—मैं जिन होकर जिन-प्रलापी नहीं हूं यावत् प्रकाशित करते हुए विहरण किया। मैं ही मंखलिपुत्र गोशाल हूं। मैं श्रमण-घातक, श्रमण-मारक, श्रमण-प्रत्यनीक, आचार्य-उपाध्यायों का अयश करने वाला, अवर्ण करने वाला, अकीर्ति करने वाला हूं। मैंने बहुत असद्भाव की उद्भावना और मिथ्यात्व--अभिनिवेश के द्वारा स्वयं को, दूसरे को तथा दोनों को भ्रांत करते हुए, मिथ्या धारणा में व्युत्पन्न करते हुए विहरण किया। अपने तेज से पराभूत होने पर मेरा शरीर पित्तज्वर से व्याप्त हो गया, मैं सात रात के भीतर दाह से अपक्रांत होकर छद्मस्थ-अवस्था में ही मृत्यु को प्राप्त करूंगा। इसलिए देवानुप्रियो! तुम मुझे मृत्यु को प्राप्त जानकर मेरे बाएं पैर को रज्जु से बांधना, बांधकर तीन बार मुंह पर थूकना, थूककर श्रावस्ती नगरी से शृंगाटकों, तिराहों, चौराहों, चौहटों, चार द्वार वाले स्थानों, राजमार्गों और मार्गों पर मुझे घसीटते हुए बाढ स्वर से उद्घोषणा करते हुए, उद्घोषणा करते हुए इस प्रकार कहना—देवानुप्रियो! मंखलिपुत्र गोशाल जिन होकर जिन-प्रलापी नहीं था। यावत् छद्मस्थ-अवस्था में मृत्यु को प्राप्त हुआ

है। श्रमण भगवान् महावीर जिन होकर जिन-प्रलापी हैं यावत् विहरण कर रहे हैं। महान् अऋद्धि और असत्कार समुदय के द्वारा मेरे शरीर की मरणोत्तर क्रिया करना—इस प्रकार कहकर वह मृत्यु को प्राप्त हो गया।

गोशाल का निर्हरण-पद

१४२. मंखलिपुत्र गोशाल को मृत्यु-प्राप्त जानकर आजीवक-स्थविरों ने हालाहला कुंभकारी के कुंभकारापण के बहु मध्यदेश भाग में श्रावस्ती नगरी का चित्रांकन कर मंखलिपुत्र गोशाल के बाएं पैर को रज्जु से बांधा, बांधकर तीन बार मुंह पर थूका, थूककर चित्रित श्रावस्ती नगरी के शृंगाटकों, तिराहों, चौराहों, चौहटों, चार द्वार वाले स्थानों, राजमार्गों और मार्गों पर निम्न--निम्न स्वर में उद्घोष करते हुए, उद्घोष करते हुए इस प्रकार कहा—देवानुप्रियो! मंखलिपुत्र गोशाल जिन होकर जिन-प्रलापी नहीं था, यावत् विहरण किया। यही मंखलिपुत्र गोशाल है, श्रमण घातक यावत् छद्मस्थ-अवस्था में मृत्यु को प्राप्त हुआ है। श्रमण भगवान् महावीर जिन होकर जिन-प्रलापी है यावत् विहरण कर रहे हैं। शपथ-प्रतिमोचन करते हैं, करके दूसरी बार भी पूजा, सत्कार और स्थिरीकरण के लिए मंखलिपुत्र गोशाल के बाएं पैर से रज्जु को मुक्त किया, मुक्त कर हालाहला कुंभकारी के कुंभकारापण के द्वार को खोला, खोल कर मंखलिपुत्र गोशाल के शरीर को सुरभित गंधोदक से स्नान कराया, पूर्ववत् यावत् महान् ऋद्धि-सत्कार-समुदय के द्वारा मंखलिपुत्र गोशाल के शरीर की मरणोत्तर क्रिया की।

१४३. श्रमण भगवान् महावीर ने किसी एक दिन श्रावस्ती नगरी से कोष्ठक चैत्य से प्रतिनिष्क्रमण किया, प्रतिनिष्क्रमण कर बाहर जनपद-विहार करने लगे।

भगवान् के रोग-आतंक-प्रादुर्भवन-पद

१४४. उस काल और उस समय में 'मेंढिय-ग्राम' नाम का नगर था—वर्णक। उस मेंढिय-ग्राम नगर के बाहर उत्तर पूर्व दिशिभाग। यहां 'शान कोष्ठक' नाम का चैत्य था—वर्णक यावत् पृथ्वी-शिला-पट्टक। उस शान कोष्ठक चैत्य के न अति दूर और न अति निकट, एक महान मालुका-कच्छ था—कृष्ण, कृष्णाभास वाला यावत् काली कजरारी घटा के समान, पत्र, पुष्प और फलयुक्त, हरा-भरा, विशिष्ट श्री से बहुत-बहुत उपशोभायमान खड़ा था। उस मेंढिय--ग्राम नगर में रेवती नाम की गृह-स्वामिनी रहती थी—वह आढ्या यावत् बहुजन के द्वारा अपरिभूत थी।

१४५. श्रमण भगवान् महावीर किसी एक दिन क्रमानुसार विचरण, ग्रामानुग्राम परिव्रजन और सुखपूर्वक विहार करते हुए जहां मेंढिय-ग्राम नगर था, जहां शान कोष्ठक चैत्य था, वहां आए, यावत् परिषद् वापस नगर में चली गई।

१४६. श्रमण भगवान् महावीर के शरीर में विपुल रोग-आतंक प्रकट हुआ—उज्ज्वल, विपुल, प्रगाढ, कर्कश, कटुक, चण्ड, दुःखद, कष्ट-साध्य, तीव्र और दुःसह। उनका शरीर पित्तज्वर से व्याप्त हो गया। उसमें जलन पैदा हो गई। उनके शौच में खून आने लगा, चारों वर्णों के लोगों ने कहा—मंखलिपुत्र गोशाल के तपः-तेज से पराभूत श्रमण भगवान् महावीर का शरीर पित्तज्वर से व्याप्त हो गया, उसमें जलन पैदा हो गई, ये छह माह के भीतर छद्मस्थ-अवस्था में ही मृत्यु को प्राप्त करेंगे।

सिंह का मानसिक-दुःख-पद

१४७. उस काल और उस समय में श्रमण भगवान् महावीर का अंतेवासी सिंह नाम का अनगार—प्रकृति से भद्र यावत् विनीत। मालुकाकच्छ से न अति दूर और न अति निकट निरन्तर षष्ठ-षष्ठ भक्त (दो-दो दिन के उपवास) तपः-कर्म में आतापन-भूमि में दोनों भुजाएं ऊपर उठाकर सूर्य के सामने आतापना लेते हुए विहार कर रहा था।

१४८. ध्यानांतर में वर्तमान सिंह अनगार के इस प्रकार का आध्यात्मिक, स्मृत्यात्मक, अभिलाषात्मक, मनोगत संकल्प उत्पन्न हुआ—मेरे धर्माचार्य धर्मोपदेशक श्रमण भगवान् महावीर के शरीर में विपुल रोग-आतंक प्रकट हुआ है—उज्ज्वल यावत् छद्मस्थ-अवस्था में ही मृत्यु को प्राप्त करेंगे। अन्यतीर्थिक भी इस प्रकार कहते हैं—छद्मस्थ-अवस्था में ही मृत्यु को प्राप्त होंगे—यह इस प्रकार के महान मनोमानसिक दुःख से पराभूत होकर आतापन-भूमि से नीचे उतरा, उतरकर जहां मालुकाकच्छ था, वहां आया, आकर मालुकाकच्छ के भीतर-भीतर अनुप्रवेश किया, अनुप्रवेश कर बाढ स्वर से 'कुहु-कुहु' शब्द करते हुए रुदन करने लगा।

भगवान् द्वारा सिंह को आश्वासन-पद

१४९. अयि आर्यो! श्रमण भगवान् महावीर ने श्रमण-निर्ग्रन्थों को आमंत्रित किया, आमंत्रित कर इस प्रकार कहा—आर्यो! मेरा अंतेवासी सिंह नामक अनगार, प्रकृति भद्र यावत् विनीत मालुकाकच्छ के न अति दूर और न अति निकट निरंतर षष्ठ-षष्ठ-भक्त के तपः-कर्म में आतापन-भूमि में दोनों भुजाएं ऊपर उठाकर, सूर्य के सामने आतापना लेते हुए विहार कर रहा है।

ध्यानांतर में वर्तमान उस सिंह अनगार के इस प्रकार का आध्यात्मिक, स्मृत्यात्मक, अभिलाषात्मक, मनोगत संकल्प उत्पन्न हुआ—मेरे धर्माचार्य धर्मोपदेशक श्रमण भगवान् महावीर के शरीर में विपुल रोग-आतंक प्रकट हुआ है—उज्ज्वल यावत् छद्मस्थ-अवस्था में ही मृत्यु को प्राप्त करेंगे। अन्यतीर्थिक यह कहते हैं—छद्मस्थ-अवस्था में मृत्यु को प्राप्त होंगे।

यह इस प्रकार मनोमानसिक दुःख से अभिभूत होकर आतापन-भूमि से नीचे उतरा, उतरकर जहां मालुकाकच्छ था, वहां आया। आकर मालुकाकच्छ के भीतर-भीतर अनुप्रवेश किया, अनुप्रवेश कर बाढ स्वर से 'कुहु कुहु' शब्द करते हुए रुदन करने लगा।

इसलिए आर्यो! तुम जाओ, सिंह अनगार को बुलाओ।

१५०. श्रमण भगवान् महावीर के इस प्रकार कहने पर श्रमण-निर्ग्रन्थों ने श्रमण भगवान् महावीर को वंदन-नमस्कार किया, वंदन-नमस्कार कर श्रमण भगवान् महावीर के पास से शान कोष्ठक चैत्य से प्रतिनिष्क्रमण किया, प्रतिनिष्क्रमण कर जहां मालुकाकच्छ था, जहां सिंह अनगार था—वहां आए, आकर सिंह अनगार से इस प्रकार कहा—सिंह! धर्माचार्य बुलाते हैं।

१५१. श्रमण-निर्ग्रन्थों के साथ सिंह अनगार ने मालुकाकच्छ से प्रतिनिष्क्रमण किया, प्रतिनिष्क्रमण कर जहां शान कोष्ठक चैत्य था, जहां श्रमण भगवान् महावीर थे, वहां आया, आकर श्रमण भगवान् महावीर को दायीं ओर से प्रारम्भ कर तीन बार प्रदक्षिणा यावत् पर्युपासना की।

१५२. अयि सिंह! श्रमण भगवान् महावीर ने सिंह अनगार को इस प्रकार कहा—सिंह! ध्यानांतर में वर्तमान तुम्हारे इस प्रकार का आध्यात्मिक, स्मृत्यात्मक, अभिलाषात्मक, मनोगत संकल्प उत्पन्न हुआ—मेरे धर्माचार्य धर्मोपदेशक श्रमण भगवान् महावीर के शरीर में विपुल रोग-आतंक प्रकट हुआ—उज्ज्वल यावत् छद्मस्थ-अवस्था में ही मृत्यु को प्राप्त करेंगे। अन्यतीर्थिक कहते हैं—छद्मस्थ-अवस्था में ही मृत्यु को प्राप्त करेंगे। यह इस प्रकार के महान् मनोमानसिक दुःख से अभिभूत होकर तुम आतापन-भूमि से नीचे उतर कर, जहां मालुकाकच्छ था, वहां आकर, मालुकाकच्छ के भीतर-भीतर अनुप्रवेश कर बाढ स्वर से 'कुहु-कुहु' शब्द करते हुए रुदन करने लगा।

सिंह! क्या यह अर्थ संगत है?

हां, है।

सिंह! यह ऐसा नहीं है कि मंखलिपुत्र गोशाल के तपः-तेज से पराभूत होकर मेरा शरीर पित्त-ज्वर से व्याप्त हो गया, उसमें जलन हो गई, मैं छह माह के भीतर छद्मस्थ-अवस्था में ही मृत्यु को प्राप्त करूंगा। मैं साढ़े पंद्रह वर्ष तक जिन-अवस्था में गन्धहस्ती के समान विहरण करूंगा। इसलिए सिंह! तुम मेंढिय-ग्राम नगर, गृहस्वामिनी रेवती के घर जाओ, वहां गृह-स्वामिनी ने मेरे लिए दो कपोत-शरीर—मकोय के फल पकाए हैं। वे मेरे लिए प्रयोजनीय नहीं हैं। उसके पास अन्य बासी रखा हुआ मार्जारकृत अर्थात् चित्रक वनस्पति से भावित, कुक्कुट-मांस—चौपतिया शाक है, वह लाओ, वह प्रयोजनीय है।

१५३. श्रमण भगवान् महावीर के इस प्रकार कहने पर सिंह अनगार हृष्ट-तुष्ट हो गया। उसका चित्त आनंदित, नंदित, प्रीतिपूर्ण मन वाला, परम सौमनस्य-युक्त, हर्ष से विकस्वर-हृदय वाला हो गया। उसने श्रमण भगवान् महावीर को वंदन-नमस्कार किया, वंदन-नमस्कार कर त्वरता-, चपलता- और संभ्रम-रहित होकर मुखवस्त्रिका का प्रतिलेखन किया, प्रतिलेखन कर पात्र-वस्त्र का प्रतिलेखन किया, प्रतिलेखन कर पात्रों का प्रमार्जन किया, प्रमार्जन कर पात्रों को हाथ में लिया, हाथ में लेकर जहां श्रमण भगवान् महावीर थे, वहां आया, आकर श्रमण भगवान् महावीर को वंदन-नमस्कार किया, वंदन-नमस्कार कर श्रमण भगवान् महावीर के पास से, शान कोष्ठक चैत्य से प्रतिनिष्क्रमण किया, प्रतिनिष्क्रमण कर त्वरता-, चपलता- -और संभ्रम-रहित होकर युगप्रमाण भूमि को देखने वाली दृष्टि से ईर्या का शोधन करते हुए, शोधन करते हुए, जहां मेंढिय-ग्राम नगर था, वहां आया, आकर मेंढिय-ग्राम नगर के बीचोंबीच जहां गृहस्वामिनी रेवती का घर था, वहां आया, आकर रेवती के घर में अनुप्रविष्ट हो गया।

१५४. गृहस्वामिनी रेवती ने सिंह अनगार को आते हुए देखा। वह देखकर हृष्ट-तुष्ट हो गई। शीघ्र ही आसन से उठी, उठकर सात-आठ पैर सिंह अनगार के सामने गई। सामने जाकर दायीं ओर से प्रारम्भ कर तीन बार प्रदक्षिणा की। प्रदक्षिणा कर वंदन-नमस्कार किया, वंदन- -नमस्कार कर इस प्रकार कहा—देवानुप्रिय! आप संदेश दें—आपके आगमन का प्रयोजन क्या है?

१५५. सिंह अनगार ने गृहस्वामिनी रेवती से इस प्रकार कहा—देवानुप्रिय! श्रमण भगवान् महावीर के लिए तुमने दो कपोत-शरीर अर्थात् मकाय के फल पकाए हैं, वे प्रयोजनीय नहीं हैं। तुमने कल जो अन्य बासी रखा हुआ, मार्जारकृत अर्थात् चित्रक वनस्पति से भावित कुक्कुटमांस अर्थात् चौपतिया शाक है, वह लाओ, वह प्रयोजनीय है।

१५६. गृहस्वामिनी रेवती ने सिंह अनगार से इस प्रकार कहा—सिंह! वह ऐसा ज्ञानी अथवा तपस्वी कौन है जिसने मेरा यह रहस्यपूर्ण अर्थ बताया, जिससे यह तुम जानते हो?

१५७. सिंह अनगार ने गृहस्वामिनी रेवती से इस प्रकार कहा—रेवती! मेरे धर्माचार्य धर्मोपदेशक श्रमण भगवान् महावीर उत्पन्न-ज्ञान-दर्शन के धारक, अर्हत्, जिन, केवली, अतीत, वर्तमान और भविष्य के विज्ञाता, सर्वज्ञ और सर्वदर्शी हैं। उन्होंने मुझे तुम्हारा यह रहस्यपूर्ण अर्थ बताया, जिससे यह मैं जानता हूं।

१५८. गृहस्वामिनी रेवती सिंह अनगार के पास इस अर्थ को सुनकर, अवधारणकर हृष्ट-तुष्ट हो गई। जहां भोजनगृह था, वहां आई, आकर चौपतिया शाक वाला बर्तन निकाला, निकालकर जहां सिंह अनगार था, वहां आई, वहां आकर सिंह अनगार के पात्र में वह सर्व चौपतिया शाक सम्यक् रूप से निसर्जित किया।

१५९. गृहस्वामिनी रेवती ने द्रव्य शुद्ध, दाता शुद्ध, प्रतिग्राहक शुद्ध—त्रिविध, त्रिकरण शुद्ध दान के द्वारा सिंह अनगार को प्रतिलाभित कर देवायुष्य का निबंध किया, संसार को परीत किया, उसके घर ये पांच दिव्य प्रकट हुए, जैसे—रत्नों की धारा निपात-वृष्टि, पांच वर्ण वाले फूलों की वृष्टि, ध्वजा फहराने लगी, देव-दुन्दुभियां बजीं, आकाश के अंतराल में 'अहो! दानम् अहो! दानम्' की उद्घोषणा हुई।

१६०. राजगृह नगर के शृंगाटकों, तिराहों, चौराहों, चौहटों, चार द्वार वाले स्थानों, राजमार्गों और मार्गों पर बहुजन इस प्रकार आख्यान, भाषण, प्रज्ञापन एवं प्ररूपणा करते हैं—देवानुप्रियो! गृहस्वामिनी रेवती धन्या है, देवानुप्रियो! गृहस्वामिनी रेवती कृतार्थ है, देवानुप्रियो! गृहस्वामिनी रेवती कृतपुण्या है। देवानुप्रियो! गृहस्वामिनी रेवती कृतलक्षणा है। देवानुप्रियो! गृहस्वामिनी रेवती ने इहलोक और परलोक—दोनों को सुधार लिया है। देवानुप्रियो! गृहस्वामिनी ने मनुष्य जन्म और जीवन का फल अच्छी तरह से प्राप्त किया है, जिसके घर में तथारूप साधु के साधु रूप में प्रतिलाभित होने पर ये पांच दिव्य प्रकट हुए, जैसे—रत्नों की धारा निपात-वृष्टि यावत् 'अहो! दानम् अहो! दानम्' की उद्घोषणा। इसलिए वह धन्या, कृतार्था, कृतपुण्या और कृतलक्षणा है। उसने इहलोक और परलोक दोनों को सुधारा है। गृहस्वामिनी रेवती ने मनुष्य जन्म और जीवन का फल अच्छी तरह से प्राप्त किया है।

१६१. सिंह अनगार ने गृहस्वामिनी के घर से प्रतिनिष्क्रमण किया, प्रतिनिष्क्रमण कर मेंढिय-ग्राम नगर के बीचोंबीच निर्गमन किया, निर्गमन कर गौतम स्वामी की भांति यावत् भक्त-पान दिखलाया, दिखलाकर श्रमण भगवान् महावीर के हाथ में उस सर्व (चौपतिया शाक) का निसर्जन किया।

भगवान का आरोग्य-पद

१६२. श्रमण भगवान् महावीर ने अमूर्च्छित, अगृद्ध, अग्रथित और अनासक्त होकर बिल में प्रविष्ट सर्प के सदृश अपने आपको बनाकर उस आहार को शरीर-रूप कोष्ठक में डाल दिया।

१६३. श्रमण भगवान् महावीर के उस आहार को लेने पर वह विपुल रोग-आतंक शीघ्र ही उपशांत हो गया, शरीर हृष्ट, अरोग और बलिष्ठ हो गया। श्रमण तुष्ट हो गए, श्रमणियां तुष्ट हो गईं, श्रावक तुष्ट हो गए, श्राविकाएं तुष्ट हो गईं, देव तुष्ट हो गए, देवियां तुष्ट हो गईं। देव, मनुष्य, असुर-सहित पूरा लोक तुष्ट हो गया—श्रमण भगवान् महावीर हृष्ट हो गए, श्रमण भगवान् महावीर हृष्ट हो गए।

सर्वानुभूति का उपपात-पद

१६४. अयि भंते! भगवान् गौतम ने श्रमण भगवान् महावीर से इस प्रकार कहा— देवानुप्रिय का अंतेवासी पूर्व जनपद का निवासी सर्वानुभूति नाम का अनगार प्रकृति से भद्र यावत् विनीत। भन्ते! तब वह मंखलिपुत्र गोशाल के तपःतेज से राख का ढेर होने पर कहां गया है? कहां उपपन्न हुआ है?

गौतम! मेरा अंतेवासी पूर्व जनपद का निवासी सर्वानुभूति नाम का अनगार—प्रकृति से भद्र यावत् विनीत। मंखलिपुत्र गोशाल के तपः-तेज से राख का ढेर होने पर ऊर्ध्व चंद्र-सूर्य यावत् ब्रह्म, लांतक, महाशुक्र-कल्प का व्यतिक्रमण कर सहस्रार-कल्प में देव रूप में उत्पन्न हुआ है। वहां कुछ देवों की स्थिति अठारह सागरोपम प्रज्ञप्त है। सर्वानुभूति देव की स्थिति अठारह सागरोपम प्रज्ञप्त है।

भंते! सर्वानुभूति देव उस देवलोक से आयु-क्षय, भव-क्षय और स्थिति-क्षय के अनंतर च्यवन कर कहां जाएगा? कहां उपपन्न होगा?

गौतम! महाविदेह वास में सिद्ध होगा यावत् सब दुःखों का अंत करेगा।

सुनक्षत्र का उपपात-पद

१६५. देवानुप्रिय का अंतेवासी कौशल जनपद-निवासी सुनक्षत्र नाम का अनगार—प्रकृति से भद्र यावत् विनीत। भंते! मंखलिपुत्र गोशाल के तपःतेज से परितापित होकर कालमास में मृत्यु को प्राप्त कर वह कहां गया है? कहां उपपन्न हुआ है?

गौतम! मेरा अंतेवासी सुनक्षत्र नाम का अनगार—प्रकृति से भद्र यावत् विनीत। मंखलिपुत्र गोशाल के तपःतेज से परितापित होने पर जहां मैं था, वहां आया, आकर वंदन-नमस्कार किया। वंदन-नमस्कार कर स्वयं ही पांच महाव्रतों का आरोपण किया। आरोपण कर श्रमण-श्रमणियों से क्षमायाचना की, क्षमायाचना कर आलोचना-प्रतिक्रमण कर, समाधि को प्राप्त होकर कालमास में मृत्यु को प्राप्त कर ऊर्ध्व चंद्र-सूर्य यावत् आनत-प्राणत, आरण-कल्प का व्यतिक्रमण कर अच्युत-कल्प में देवरूप में उपपन्न हुआ है। वहां कई देवों की स्थिति बाईस सागरोपम प्रज्ञप्त है। वहां सुनक्षत्र देव की स्थिति बाईस सागरोपम प्रज्ञप्त है।

भंते! सुनक्षत्र देव उस देवलोक से आयु-क्षय, भव-क्षय और स्थिति-क्षय के अनंतर कहां जाएगा? कहां उपपन्न होगा?

गौतम! महाविदेह वास में सिद्ध होगा यावत् सब दुःखों का अंत करेगा।

गोशाल का भवभ्रमण-पद

१६६. देवानुप्रिय के अंतेवासी कुशिष्य का नाम था मंखलिपुत्र गोशाल। भंते! वह मंखलिपुत्र गोशाल कालमास में मृत्यु को प्राप्त कर कहां गया है? कहां उपपन्न हुआ है?

गौतम! मेरा अंतेवासी कुशिष्य जिसका नाम था मंखलिपुत्र गोशाल, वह श्रमण-घातक यावत् छद्मस्थ-अवस्था में ही मृत्यु को प्राप्त कर ऊर्ध्व चंद्र, सूर्य यावत् अच्युत कल्प में देवरूप में उपपन्न हुआ। वहां कुछ देवों की स्थिति बाईस सागरोपम प्रज्ञप्त है। गोशाल देव की स्थिति भी बाईस सागरोपम प्रज्ञप्त है।

१६७. गोशाल देव उस देवलोक से आयु-क्षय, भव-क्षय और स्थिति-क्षय के अनंतर च्यवन कर कहां जाएगा? कहां उपपन्न होगा?

गौतम! इस जंबूद्वीप द्वीप में भारत वर्ष में विंध्यगिरि के मूल में पुण्ड्र जनपद के शतद्वार नगर के राजा सन्मति की भार्या भद्रा की कुक्षि से पुत्र के रूप में उपपन्न होगा। बहु प्रतिपूर्ण नौ मास और साढे सात रात दिन के व्यतिक्रान्त होने पर यावत् सुरूप पुत्र के रूप में पैदा होगा।

१६८. जिस रजनी में वह पुत्र उत्पन्न होगा, उस रजनी में शतद्वार नगर के भीतर और बाहर भार-प्रमाण और कुंभ-प्रमाण फूलों और रत्नों की वर्षा होगी।

१६९. उस बालक के माता-पिता ग्यारह दिवस के बीत जाने पर, अशुचि जातकर्म से निवृत्त होने पर बारहवें दिवस के आने पर इस प्रकार का गुणयुक्त गुणनिष्पन्न नामकरण करेंगे, क्योंकि इस बालक के उत्पन्न होने पर शतद्वार नगर के भीतर और बाहर, भार-प्रमाण और कुंभ-प्रमाण फूलों और रत्नों की वृष्टि हुई, इसलिए हमें इस बालक का नामकरण करना चाहिए महापद्म-महापद्म। उस बालक के माता-पिता उसका नामकरण करेंगे—'महापद्म'।

१७०. बालक महापद्म को आठ वर्ष से कुछ अधिक आयु वाला जानकर माता-पिता शोभन तिथि, करण, दिवस, नक्षत्र और मुहूर्त्त में उसे महान् राज्याभिषेक से अभिषिक्त करेंगे। वह वहां राजा होगा—महान हिमालय, महान् मलय मेरु और महेन्द्र की भांति वर्णक यावत् विहरण करेगा।

१७१. किसी दिन महापद्म राजा को महर्द्धिक यावत् महान् ऐश्वर्यशाली दो देव जैसे—पुण्यभद्र और माणिभद्र, सैन्य-कर्म की शिक्षा देंगे।

तब उस शत-द्वार नगर में अनेक राजा, ईश्वर, तलवर, माडम्बिक, कौटुम्बिक, इभ्य, श्रेष्ठी, सेनापति, सार्थवाह आदि एक दूसरे को बुलाएंगे, बुलाकर इस प्रकार कहेंगे—देवानुप्रियो! महापद्म राजा को दो महर्द्धिक यावत् महान ऐश्वर्यशाली दो देव जैसे—पुण्यभद्र और माणिभद्र, सैन्य-कर्म की शिक्षा दे रहे हैं, इसलिए देवानुप्रियो! हमारे राजा महापद्म का दूसरा

नाम होना चाहिए देवसेन-देवसेन। तब उस राजा महापद्म का दूसरा नाम 'देवसेन' होगा।

१७२. किसी दिन राजा महापद्म के विमल शंखतल के समान श्वेत चतुर्दन्त हस्ति-रत्न उत्पन्न होंगे। तब राजा देवसेन विमल शंख-तलके समान श्वेत चतुर्दन्त हस्ति-रत्न पर आरूढ़ होकर शतद्वार नगर के बीचोंबीच होते हुए बार-बार प्रवेश और निष्क्रमण करेंगे। शतद्वार नगर में अनेक राजा, ईश्वर, तलवर, माडम्बिक, कौटुम्बिक, इभ्य, श्रेष्ठी, सेनापति, सार्थवाह आदि दूसरे को बुलाएंगे, बुलाकर इस प्रकार कहेंगे—देवानुप्रियो! हमारे राजा देवसेन के विमल शंख तल के समान श्वेत चतुर्दन्त हस्ति-रत्न उत्पन्न हुआ है, इसलिए देवानुप्रियो! हमारे राजा देवसेन का तीसरा नाम विमलवाहन-विमलवाहन होना चाहिए। तब से उस देवसेन राजा का तीसरा नाम 'विमलवाहन' होगा।

१७३. राजा विमलवाहन किसी दिन श्रमण-निर्ग्रन्थों के प्रति मिथ्यात्व से विप्रतिपन्न होगा—वह अनेक श्रमण-निर्ग्रन्थों के प्रति आक्रोश करेगा, अनेक श्रमण-निर्ग्रन्थों का उपहास करेगा, अनेक श्रमण-निर्ग्रन्थों का तिरस्कार करेगा, अनेक श्रमण-निर्ग्रन्थों की निर्भर्त्सना करेगा, अनेक श्रमण-निर्ग्रन्थों को बांधेगा, अनेक श्रमण-निर्ग्रन्थों को कारागार में डाल देगा, अनेक श्रमण-निर्ग्रन्थों का छविच्छेद करेगा, अनेक श्रमण-निर्ग्रन्थों को पीटेगा, अनेक श्रमण-निर्ग्रन्थों को मारेगा, अनेक श्रमण-निर्ग्रन्थों के वस्त्र, पात्र, कंबल, पादप्रौञ्छन का आच्छेदन, विच्छेदन, भेदन और अपहरण करेगा, अनेक श्रमण-निर्ग्रन्थों के भक्त-पान का विच्छेद करेगा, अनेक श्रमण-निर्ग्रन्थों को नगर-रहित करेगा, अनेक श्रमण-निर्ग्रन्थों को निर्वासित करेगा।

१७४. शतद्वार नगर के अनेक राजा, ईश्वर, तलवर, माडम्बिक, कौटुम्बिक, इभ्य, श्रेष्ठी, सेनापति, सार्थवाह आदि एक दूसरे को बुलाएंगे, बुलाकर इस प्रकार कहेंगे—देवानुप्रियो! राजा विमलवाहन श्रमण-निर्ग्रन्थों के प्रति मिथ्यात्व से विप्रतिपन्न हो गया है—अनेक श्रमण--निर्ग्रन्थों के प्रति आक्रोश करता है यावत् निर्वासित करता है—इसलिए देवानुप्रियो! न यह हमारे लिए श्रेय है, न राजा विमलवाहन के लिए श्रेय है, न यह राज्य, राष्ट्र, सेना, वाहन, पुर, अन्तःपुर और जनपद के लिए श्रेय है, क्योंकि राजा विमलवाहन मिथ्यात्व से विप्रतिपन्न हो गया है। इसलिए देवानुप्रियो! यह श्रेय है कि हम राजा विमलवाहन को इस अर्थ की जानकारी दें, इस प्रकार एक दूसरे के पास इस अर्थ को स्वीकार करेंगे, स्वीकार कर जहां राजा विमलवाहन है, वहां आएंगे, वहां जाकर दोनों हथेलियों से निष्पन्न संपुट आकार वाली दसनखात्मक अञ्जलि को घुमाकर मस्तक पर टिकाकर विमलवाहन राजा को जय--विजय के द्वारा वर्धापित करेंगे, वर्धापित कर इस प्रकार कहेंगे—देवानुप्रिय! श्रमण-निर्ग्रन्थों के प्रति मिथ्यात्व से विप्रतिपन्न होकर आप अनेक श्रमण-निर्ग्रन्थों के प्रति आक्रोश करते हैं यावत् अनेक श्रमण-निर्ग्रन्थों को निर्वासित करते हैं, इसलिए यह न देवानुप्रियों के लिए श्रेय है, न हमारे लिए श्रेय है, न हमारे राज्य यावत् जनपद के लिए श्रेय है, क्योंकि देवानुप्रिय! (आप) श्रमण-निर्ग्रन्थों के प्रति मिथ्यात्व से विप्रतिपन्न हो, इसलिए विराम लो, देवानुप्रिय! इस अर्थ को मत करो।

१७५. अनेक राजा, ईश्वर, तलवर, माडम्बिक, कौटुम्बिक, राज्य, श्रेष्ठी, सेनापति, सार्थवाह

आदि के द्वारा इस अर्थ क विज्ञात होने पर राजा विमलवाहन ने 'यह न धर्म है, न तप है' ऐसा मानकर मिथ्या-विनय-पूर्वक इस वचन को स्वीकार किया।

१७६. उस शतद्वार नगर के बाहर, उत्तर-पूर्व दिशि भाग में, सुभूमि-भाग नाम का उद्यान होगा—सर्वत्रऋतु में पुष्प, फल से समृद्ध– वर्णक।

१७७. उस काल और उस समय में अर्हत् विमल के प्रपौत्र (प्रशिष्य) जाति-संपन्न, जैसे धर्मघोष का वर्णक यावत् संक्षिप्त विपुल तेजोलेश्या और तीन ज्ञान से सम्पन्न। सुभूमि-भाग उद्यान के न अति दूर और न अति निकट निरन्तर बेले-बेले की तपः-साधना के द्वारा, दोनों भुजाओं को ऊपर उठाकर सूर्य के सामने आतापन-भूमि में आतापना लेता हुआ विहरण करेगा।

१७८. एक दिन राजा विमलवाहन रथचर्या करने के लिए निर्गमन करेगा।

१७९. सुभूमि-भाग उद्यान के न अति दूर और न अति निकट राजा विमलवाहन रथचर्या करता हुआ सुमंगल (नामक) अनगार को निरन्तर बेले-बेले तपःकर्म करता हुआ आतापन-भूमि में दोनों भुजाएं ऊपर उठाकर सूर्य के सामने आतापना लेता हुआ देखेगा, देखकर वह (राजा) तत्काल आवेश में आएगा, रूष्ट हो जाएगा, कुपित हो जाएगा, उसका रूप रौद्र हो जाएगा, क्रोध की अग्नि में प्रदीप्त होकर रथ का अग्रिम हिस्सा सुमंगल अनगार के ऊपर चढ़ाकर उन्हें उछाल कर नीचे गिराएगा।

१८०. तब वह सुमंगल अनगार विमलवाहन राजा के द्वारा रथ के अग्रिम हिस्से से गिराए जाने पर धीरे-धीरे उठेंगे, उठ कर आतापन-भूमि में दूसरी बार दोनों भुजाएं ऊपर उठाकर सूर्य के सामने आतापना लेते हुए विहरण करेंगे।

१८१. तब वह विमलवाहन राजा दूसरी बार भी रथ के अग्रिम हिस्से से सुमंगल अनगार को ऊपर उछाल कर नीचे गिराएगा।

१८२. तब वह सुमंगल अनगार विमलवाहन राजा के द्वारा रथ के अग्रिम हिस्से से दूसरी बार गिराए जाने पर धीरे-धीरे उठेंगे, उठ कर अवधि (ज्ञान) का प्रयोग करेंगे, प्रयोग कर विमलवाहन राजा के अतीत-काल को देखेंगे, देखकर विमलवाहन राजा को इस प्रकार कहेंगे—तुम विमलवाहन राजा नहीं हो, तुम देवसेन राजा नहीं हो, तुम महापद्म राजा नहीं हो, तूं इससे पूर्व तीसरे भव में गोशाल नामक मंखलिपुत्र था—श्रमणघातक यावत् छद्मस्थ-अवस्था में ही मृत्यु को प्राप्त हुआ था, उस समय यद्यपि सर्वानुभूति अनगार ने प्रभु होने पर भी तुम्हें सम्यक् सहन किया, क्षमा की, तितिक्षा की, अधिसहन किया; उस समय यद्यपि सुनक्षत्र अनगार ने प्रभु होने पर भी तुम्हें सम्यक् सहन किया, क्षमा की, तितिक्षा की, अधिसहन किया; उस समय श्रमण भगवान् महावीर ने प्रभु होने पर भी तुम्हें सम्यक् सहन किया, क्षमा की, तितिक्षा की, अधिसहन किया; किन्तु निश्चित ही मैं ऐसा नहीं हूं जो तुम्हें उस प्रकार सम्यक् सहन करूंगा, क्षमा करूंगा, तितिक्षा करूंगा, अधिसहन करूंगा; मैं तो तुम्हें घोड़े--सहित, रथ-सहित और सारथि-सहित मेरे तपःतेज से कूटाघात की भांति एक प्रहार में राख का ढेर कर दूंगा।

१८३. उस समय सुमंगल अनगार के द्वारा इस प्रकार कहे जाने पर वह विमलवाहन राजा तत्काल आवेश में आ जायेगा, रुष्ट हो जायेगा, कुपित हो जायेगा, उसका रूप रौद्र हो जायेगा, क्रोध की अग्नि से प्रदीप्त होकर वह तीसरी बार भी रथ का अग्रिम हिस्सा सुमंगल अनगार के ऊपर चढ़ाकर उन्हें उछाल कर नीचे गिराएगा।

१८४. तब विमलवाहन राजा के द्वारा तीसरी बार भी गिराए जाने पर वह सुमंगल अनगार तत्काल आवेश में आकर यावत् क्रोध की अग्नि से प्रदीप्त होकर आतापन-भूमि से नीचे उतरेगा, नीचे उतरकर तैजस-समुद्घात से समवहत होगा, समवहत होकर सात-आठ पैर पीछे सरकेगा, पीछे सरककर विमल-वाहन राजा को घोड़े-सहित, रथ-सहित और सारथि-सहित अपने तपः-तेज से कूटाघात की भांति एक प्रहार में राख का ढेर कर देगा।

१८५. भन्ते! सुमंगल अनगार विमलवाहन राजा को घोड़े-सहित यावत् राख का ढेर कर कहां जायेगा? कहां उपपन्न होगा?

गौतम! सुमंगल अनगार विमलवाहन राजा को घोड़े-सहित यावत् राख का ढेर करने के पश्चात् अनेक षष्ठ-षष्ठ-भक्त (दो-दो दिन का उपवास), अष्टम-अष्टम-भक्त (तीन-तीन दिन का उपवास), दशम-दशम-भक्त (चार-चार दिन का उपवास), द्वादश-द्वादश भक्त (पांच-पांच दिन का उपवास) (आदि से लेकर) अर्ध-मासक्षपण (पन्द्रह दिन का उपवास) और मासक्षपण (तीस दिन का उपवास) के रूप में विचित्र तपःकर्म के द्वारा अपने आपको भावित करते हुए बहुत वर्षों तक श्रामण्य-पर्याय को प्राप्त करेगा, प्राप्तकर एक मासिक संलेखना के द्वारा अपने आपको कृश बनाकर अनशन के द्वारा साठ भक्तों का छेदन कर, आलोचना और प्रतिक्रमण कर समाधिपूर्ण दशा में (दिवंगत होकर) ऊर्ध्वलोक में चन्द्रमा यावत् ग्रैवेयक विमानावास-शतक का व्यतिक्रमण कर सर्वार्थसिद्ध महाविमान में देव-रूप में उपपन्न होगा। वहां देवताओं की जघन्य और उत्कृष्ट स्थिति तेतीस सागरोपम की प्रज्ञप्त है। वहां सुमंगल देव की स्थिति भी जघन्य और उत्कृष्ट तेतीस सागरोपम की प्रज्ञप्त है।

भंते! वह सुमंगल देव उस देवलोक से आयु-क्षय, भव-क्षय और स्थिति-क्षय के अनन्तर च्यवन कर कहां जायेगा? कहां उपपन्न होगा?

गौतम! महाविदेह वास में सिद्ध होगा यावत् सब दुःखों का अन्त करेगा।

१८६. भन्ते! सुमंगल अनगार के द्वारा घोड़े-सहित यावत् राख का ढेर कर दिए जाने पर राजा विमलवाहन कहां जायेगा? कहां उपपन्न होगा?

गौतम! सुमंगल अनगार के द्वारा घोड़े-सहित यावत् राख का ढेर कर दिए जाने पर राजा विमलवाहन अधःसप्तमी-पृथ्वी में उत्कृष्ट कालस्थितिवाली नरक में नैरयिक के रूप में उपपन्न होगा।

वह उसके अनन्तर वहां से उद्वृत्त होकर मत्स्य के रूप में उपपन्न होगा। वहां पर भी शस्त्रवध्य होता हुआ दाह की उत्पत्ति से कालमास में काल (मृत्यु) को प्राप्त कर दूसरी बार भी अधःसप्तमी-पृथ्वी में उत्कृष्ट कालस्थितिवाली नरक में नैरयिक के रूप में उपपन्न होगा। वह उसके अनन्तर वहां से उद्वृत्त होकर दूसरी बार भी मत्स्य के रूप में उपपन्न होगा। वहां

पर भी शस्त्रवध्य होता हुआ दाह की उत्पत्ति से कालमास में काल को प्राप्त कर छट्ठी तमा--पृथ्वी में उत्कृष्ट काल-स्थिति वाली नरक में नैरयिक के रूप में उपपन्न होगा।

वह उसके अनन्तर वहां से उद्वृत्त होकर स्त्री के रूप में उपपन्न होगा। वहां पर भी शस्त्रवध्य होता हुआ दाह की उत्पत्ति से कालमास में काल को प्राप्त कर दूसरी बार भी छट्ठी तमा-पृथ्वी में उत्कृष्ट काल-स्थिति वाली नरक में नैरयिक के रूप में उपपन्न होगा।

वह उसके अनन्तर वहां से उद्वृत्त होकर दूसरी बार भी स्त्री के रूप में उपपन्न होगा। वहां पर भी शस्त्रवध्य होता हुआ दाह की उत्पत्ति से कालमास में काल को प्राप्त कर पांचवीं धूमप्रभा-पृथ्वी में उत्कृष्ट काल-स्थिति वाली नरक में नैरयिक के रूप में उपपन्न होगा।

वह उसके अनन्तर वहां से उद्वृत्त होकर उरःपरिसर्प--(पेट के बल पर चलने वाले सांप) के रूप में उपपन्न होगा। वहां पर भी शस्त्रवध्य होता हुआ दाह की उत्पत्ति से कालमास में काल को प्राप्त कर दूसरी बार भी धूमप्रभा-पृथ्वी में उत्कृष्ट काल-स्थिति वाली नरक में नैरयिक के रूप में उपपन्न होगा।

वह उसके अनन्तर वहां से उद्वृत्त होकर दूसरी बार भी उरपरिसर्प के रूप में उपपन्न होगा। वहां पर भी शस्त्रवध्य होता हुआ दाह की उत्पत्ति से कालमास में काल को प्राप्त कर चौथी पंकप्रभा-पृथ्वी में उत्कृष्ट काल-स्थिति वाली नरक में नैरयिक के रूप में उपपन्न होगा।

वह उसके अनन्तर वहां से उद्वृत्त होकर सिंह के रूप में उपपन्न होगा। वहां पर भी शस्त्र-वध्य होता हुआ दाह की उत्पत्ति से कालमास में काल को प्राप्त कर दूसरी बार भी चौथी पंकप्रभा-पृथ्वी में उत्कृष्ट काल-स्थिति वाली नरक में नैरयिक के रूप में उपपन्न होगा।

वह उसके अनन्तर वहां से उद्वृत्त होकर दूसरी बार भी सिंह के रूप में उपपन्न होगा। वहां पर भी शस्त्रवध्य होता हुआ दाह की उत्पत्ति से कालमास में काल को प्राप्त कर तीसरी बालुकाप्रभा-पृथ्वी में उत्कृष्ट काल-स्थिति वाली नरक में नैरयिक के रूप में उपपन्न होगा।

वह उसके अनन्तर वहां से उद्वृत्त होकर पक्षी के रूप में उपपन्न होगा। वहां पर भी शस्त्रवध्य होता हुआ दाह की उत्पत्ति से कालमास में काल को प्राप्त कर दूसरी बार भी तीसरी बालुकाप्रभा-पृथ्वी में उत्कृष्ट काल-स्थिति वाली नरक में नैरयिक के रूप में उपपन्न होगा।

वह उसके अनन्तर वहां से उद्वृत्त होकर दूसरी बार भी पक्षी के रूप में उपपन्न होगा। वहां पर भी शस्त्रवध्य होता हुआ दाह की उत्पत्ति से कालमास में काल को प्राप्त कर दूसरी शर्कराप्रभा-पृथ्वी में उत्कृष्ट काल-स्थिति वाली नरक में नैरयिक के रूप में उपपन्न होगा।

वह उसके अनन्तर वहां से उद्वृत्त होकर सरीसृप के रूप में उपपन्न होगा। वहां पर भी शस्त्रवध्य होता हुआ दाह की उत्पत्ति से कालमास में काल को प्राप्त कर दूसरी बार भी दूसरी शर्कराप्रभा-पृथ्वी में उत्कृष्ट काल-स्थिति वाली नरक में नैरयिक के रूप में उपपन्न होगा।

वह उसके अनन्तर वहां से उद्वृत्त होकर दूसरी बार भी सरीसृप के रूप में उपपन्न होगा। वहां पर भी शस्त्रवध्य होता हुआ दाह की उत्पत्ति से कालमास में काल को प्राप्त कर इस

पहली रत्नप्रभा-पृथ्वी में उत्कृष्ट काल-स्थिति वाली नरक में नैरयिक के रूप में उपपन्न होगा।

वह उसके अनन्तर वहां से उद्‌वृत्त होकर संज्ञी जीव के रूप में उपपन्न होगा। वहां पर भी शस्त्रवध्य होता हुआ दाह की उत्पत्ति से कालमास में काल को प्राप्त कर असंज्ञी जीव के रूप में उत्पन्न होगा। वहां पर भी शस्त्रवध्य होता हुआ दाह की उत्पत्ति से कालमास में काल को प्राप्त कर दूसरी बार भी इस पहली रत्नप्रभा-पृथ्वी में पल्योपम के असंख्येयभाग स्थिति वाली नरक में नैरयिक के रूप में उपपन्न होगा।

वह उसके अनन्तर वहां से उद्‌वृत्त होकर जो ये खेचर (पक्षी) के भेदों का विधान किया गया है, जैसे—चर्मपक्षी, रोमपक्षी, समुद्‌गपक्षी और विततपक्षी, इन जीवों के रूप में अनेक शत--सहस्र बार मर कर पुनः उन्हीं जीवों के रूप में बार-बार जन्म लेगा।

इन सभी स्थानों में भी शस्त्रवध्य होता हुआ दाह की उत्पत्ति से कालमास में काल को प्राप्त कर ये जो भुजपरिसर्प (हाथों के बल चलने वाले गोह आदि) जीवों के भेदों का विधान किया गया है, जैसे—गोह, नेवला, जैसा **पण्णवणा** (प्रथम)-पद (१/७६) में बताया गया है यावत् जाहक तक चतुष्पद वाले प्राणी हैं, उनमें अनेक शत-सहस्र बार मर कर पुनः उन्हीं जीवों के रूप में बार-बार जन्म लेगा।

इन सभी स्थानों में भी शस्त्रवध्य होता हुआ दाह की उत्पत्ति से कालमास में काल को प्राप्त कर ये जो उरपरिसर्प जीवों के भेदों का विधान किया गया है, जैसे—सांप, अजगर, आशालिका और महोरग हैं, उनमें अनेक शत-सहस्र बार मर कर पुनः उन्हीं जीवों के रूप में बार-बार जन्म लेगा।

इन सभी स्थानों में भी शस्त्रवध्य होता हुआ दाह की उत्पत्ति से कालमास में काल को प्राप्त कर ये जो चतुष्पद जीवों के भेदों का विधान किया गया है, जैसे—एक खुर वाले (घोड़ा आदि), दो खुर वाले (बैल आदि), गण्डीपद (हाथी आदि) और सनख-पद (शेर आदि) हैं, उनमें अनेक शत-सहस्र बार मर कर पुनः उन्हीं जीवों के रूप में बार-बार जन्म लेगा।

इन सभी स्थानों में भी शस्त्रवध्य होता हुआ दाह की उत्पत्ति से कालमास में काल को प्राप्त कर ये जो जलचर जीवों के भेदों का विधान किया गया है, जैसे—मत्स्य, कछुआ यावत् सुंसुमार (मगरमच्छ) तक **पण्णवणा**, १/५५ हैं, उनमें अनेक शतसहस्र बार मर कर पुनः उन्हीं जीवों के रूप में बार-बार जन्म लेगा।

इन सभी स्थानों में भी शस्त्रवध्य होता हुआ दाह की उत्पत्ति से कालमास में काल को प्राप्त कर ये जो चतुरिन्द्रिय जीवों के भेदों का विधान किया गया है, जैसे—अन्धिका, पोत्तिका, जैसा **पण्णवणा** (प्रथम)-पद (१/५१) में बताया गया है यावत् गोमयकीटक (गोबर का कीड़ा) तक हैं, उनमें अनेक शतसहस्र बार मर कर पुनः उन्हीं जीवों के रूप में बार-बार जन्म लेगा।

इन सभी स्थानों में भी शस्त्रवध्य होता हुआ दाह की उत्पत्ति से कालमास में काल को प्राप्त कर ये जो त्रीन्द्रिय जीवों के भेदों का विधान किया गया है, जैसे—उपचित यावत् हस्तिसुण्डी

तक (**पण्णवणा,** १/५०) हैं, उनमें अनेक शतसहस्र बार मर कर पुनः उन्हीं जीवों के रूप में बार-बार जन्म लेगा।

इन सभी स्थानों में भी शस्त्रवध्य होता हुआ दाह की उत्पत्ति से कालमास में काल को प्राप्त कर ये जो द्वीन्द्रिय जीवों के भेदों का विधान किया गया है, जैसे—पुलाकृमिक यावत् समुद्रलिक्षा तक (**पण्णवणा,** १/४९) हैं, उनमें अनेक शत-सहस्र बार मर कर पुनः उन्हीं जीवों के रूप में बार-बार जन्म लेगा।

इन सभी स्थानों में भी शस्त्रवध्य होता हुआ दाह की उत्पत्ति से कालमास में काल को प्राप्त कर ये जो वनस्पति-जीवों के भेदों का विधान किया गया है, जैसे—वृक्ष, गुच्छ यावत् कुहण (भूंफोड आदि) तक (**पण्णवणा,** १/३३) हैं, उनमें अनेक शत-सहस्र बार मर कर पुनः उन्हीं जीवों के रूप में बार-बार जन्म लेगा—बहुल रूप में कटुकवृक्ष, कटुकवल्ली में बार-बार जन्म लेगा।

इन सभी स्थानों में भी शस्त्रवध्य होता हुआ दाह की उत्पत्ति से कालमास में काल को प्राप्त कर ये जो वायुकायिक-जीवों के भेदों का विधान किया गया है, जैसे—पूर्ववात यावत् शुद्धवात तक (**पण्णवणा,** १/२९) हैं, उनमें अनेक शत-सहस्र बार मर कर पुनः उन्हीं जीवों के रूप में बार-बार जन्म लेगा।

इन सभी स्थानों में भी शस्त्रवध्य होता हुआ दाह की उत्पत्ति से कालमास में काल को प्राप्त कर ये जो तेजस्कायिक जीवों के भेदों का विधान किया गया है, जैसे—अंगार यावत् सूर्यकान्तमणि निश्रित अग्नि तक (**पण्णवणा,** १/२६) हैं, उनमें अनेक शत-सहस्र बार मर कर पुनः उन्हीं जीवों के रूप में बार-बार जन्म लेगा।

इन सभी स्थानों में भी शस्त्रवध्य होता हुआ दाह की उत्पत्ति से कालमास में काल को प्राप्त कर ये जो अप्कायिक जीवों के भेदों का विधान किया गया है, जैसे—ओस, यावत् खातोदग (खाई का पानी) तक (**पण्णवणा,** १/२३) हैं, उनमें अनेक शत-सहस्र बार मर कर पुनः उन्हीं जीवों के रूप में बार-बार जन्म लेगा— बहुलरूप में खाराजल और खातोदग में बार-बार जन्म लेगा।

इन सभी स्थानों में भी शस्त्रवध्य होता हुआ दाह की उत्पत्ति से कालमास में काल को प्राप्त कर ये जो पृथ्वीकायिक जीवों के भेदों का विधान किया गया है, जैसे—शर्करा यावत् सूर्यकान्त तक (**पण्णवणा,** १/२०) हैं, उनमें अनेक शत-सहस्र बार मर कर पुनः उन्हीं जीवों के रूप में बार-बार जन्म लेगा—बहुल रूप में खर बादर पृथ्वीकायिक जीवों में—कठोर पृथ्वी में बार-बार जन्म लेगा।

इन सभी स्थानों में भी शस्त्रवध्य होता हुआ दाह की उत्पत्ति से कालमास में काल को प्राप्त कर राजगृह नगर में बाहर की ओर रहने वाली वेश्या के रूप में उत्पन्न होगा।

वहां पर भी शस्त्रवध्य होता हुआ दाह की उत्पत्ति से कालमास में काल को प्राप्त कर दूसरी बार भी राजगृह नगर में अन्दर की ओर रहने वाली वेश्या के रूप में उत्पन्न होगा।

वहां पर भी शस्त्रवध्य होता हुआ दाह की उत्पत्ति से कालमास में काल को प्राप्त कर इसी

जम्बूद्वीप में भारत-वर्ष के अन्दर विन्ध्यगिरि की तलहटी में स्थित बेभेल सन्निवेश में ब्राह्मण-कुल में पुत्री के रूप में उत्पन्न होगा।

तत्पश्चात् वह कन्या (माता-पिता के द्वारा) क्रमशः उन्मुक्त बालभाव एवं यौवन को प्राप्त कर उचित कन्यादान के साथ विनयपूर्वक योग्य पति के साथ पत्नी के रूप में विवाहित की जाएगी। वह कन्या उस पति की इष्ट, कान्त यावत् अनुमत पत्नी बनेगी; वह आभरण-करण्डक के समान आदेय बनेगी; वह तेल के पात्र जैसी समुचित रूप में रक्षणीय होगी, वह वस्त्र की मंजूषा की तरह समुचित रूप में उपद्रव-रहित स्थान में गृहीत और निवेशित होगी, वह आभरण-करण्डक की भांति सुसंरक्षित और सुसंगोपित होती हुई, 'इसे सर्दी न लगे, गर्मी न लगे यावत् परीषह और उपसर्ग इसका स्पर्श न करे' (इस अभिसन्धि से पालित होगी।) तब वह दारा अन्य समय में गर्भिणी होकर श्वसुर कुल से अपने पीहर जाती हुई बीच में दवाग्नि की ज्वाला से अभिहत होती हुई कालमास में काल को प्राप्त कर दाक्षिणात्य अग्निकुमार-देवों में देव के रूप में उपपन्न होगी।

तदनन्तर वह जीव वहां से उद्वृत्त होकर मनुष्य-शरीर को प्राप्त करेगा, प्राप्त कर सम्पूर्ण बोधि का अनुभव करेगा, अनुभव कर मुंड होकर अगार-धर्म से अनगार-धर्म में प्रव्रजित होगा।

वहां पर भी श्रामण्य की विराधना कर कालमास में काल को प्राप्तकर दाक्षिणात्य असुरकुमार-देवों में देव के रूप में उपपन्न होगा।

तदनन्तर वह जीव वहां से मर कर मनुष्य-शरीर को प्राप्त करेगा, प्राप्तकर सम्पूर्ण बोधि का अनुभव करेगा, अनुभव कर मुंड होकर अगार-धर्म से अनगार-धर्म में प्रव्रजित होगा।

वहां पर भी श्रामण्य की विराधना कर कालमास में काल को प्राप्तकर दाक्षिणात्य नागकुमार-देवों में देव के रूप में उपपन्न होगा।

तदनन्तर वह जीव वहां से इस प्रकार अभिलाप से दाक्षिणात्य सुपर्णकुमार-देवों में, इसी प्रकार विद्युतकुमार-देवों में, इसी प्रकार अग्निकुमार-देवों को छोड़कर यावत् दाक्षिणात्य स्तनितकुमार-देवों में (देव के रूप में उपपन्न होगा)।

तदनन्तर वह जीव वहां से मर कर मनुष्य-शरीर को प्राप्त करेगा, प्राप्त कर सम्पूर्ण बोधि का अनुभव करेगा, अनुभव कर मुंड होकर अगार-धर्म से अनगार-धर्म में प्रव्रजित होगा। वहां पर भी श्रामण्य की विराधना कर ज्योतिष्क-देवों में उपपन्न होगा।

तदनन्तर वह जीव वहां से च्यवन कर मनुष्य शरीर को प्राप्त करेगा, प्राप्त कर सम्पूर्ण बोधि का अनुभव करेगा, अनुभव कर मुंड होकर अगार-धर्म से अनगार-धर्म में प्रव्रजित होगा। वहां पर भी श्रामण्य की विराधना न कर कालमास में काल को प्राप्त कर सौधर्म-कल्प में देव के रूप में उपपन्न होगा।

तदनन्तर वह जीव वहां से च्यवन कर मनुष्य शरीर को प्राप्त करेगा। वहां पर भी श्रामण्य की विराधना न कर कालमास में काल को प्राप्त कर सनत्कुमार-कल्प में देव के रूप में उपपन्न होगा।

तदनन्तर वह जीव वहां से इसी प्रकार जैसे सनत्कुमार में वैसे ही ब्रह्मलोक में, महाशुक्र में, आनत में, आरण में उपपन्न होगा।

तदनन्तर वह जीव वहां से च्यवन कर मनुष्य-शरीर को प्राप्त करेगा, प्राप्त कर सम्पूर्ण बोधि का अनुभव करेगा, अनुभव कर मुंड होकर अगार-धर्म से अनगार-धर्म में प्रव्रजित होगा। वहां पर भी श्रामण्य की विराधना न कर कालमास में काल को प्राप्त कर सर्वार्थसिद्ध-महाविमान में देव के रूप में उपपन्न होगा।

तदनन्तर वह जीव वहां से च्यवन कर महाविदेह वर्ष में जो ये कुल हैं—आढ्य यावत् अपरिभूत, उन कुलों में पुत्रत्व के रूप में जन्म लेगा, इसी प्रकार जैसी **उववाई** (सू. १४१) में दृढ़प्रतिज्ञ की वक्तव्यता है वही वक्तव्यता अविकल रूप से बतलानी चाहिए यावत् उत्तम केवल-ज्ञान, केवल-दर्शन को प्राप्त करेगा।

१८७. उसके पश्चात् वह दृढ़प्रतिज्ञ केवली अपना अतीतकाल देखेगा, देख कर श्रमण-निर्ग्रंथों को बुलाएगा, बुला कर इस प्रकार कहेगा—आर्यो! मैं ही निश्चित चिर अतीत काल में गोशाल नामक मंखलिपुत्र था—श्रमण-घातक यावत् छद्मस्थ-अवस्था में ही काल को प्राप्त किया था, आर्यो! उसके फलस्वरूप मैंने (गोशाल के जीव ने) आदि-अन्त-हीन दीर्घपथ वाले चतुर्गत्यात्मक संसार-कान्तार में पर्यटन किया, इसलिए आर्यो! तुम में से कोई आचार्य का प्रत्यनीक, उपाध्याय का प्रत्यनीक, आचार्य और उपाध्याय का अयशकारक, अवर्णकारक और अकीर्तिकारक मत बनना, और इस प्रकार आदि-अन्त-हीन दीर्घपथ वाले चतुर्गत्यात्मक संसार-कान्तार में पर्यटन मत करना, जैसे कि मैंने (किया)।

१८८. उसके पश्चात् वे श्रमण-निर्ग्रंथ दृढ़प्रतिज्ञ केवली के पास इस अर्थ को सुनकर और अवधारण कर भीत, त्रस्त, तृषित और संसार के भय से उद्विग्न होकर, दृढ़प्रतिज्ञ केवली को वन्दन करेंगे, नमस्कार करेंगे, वन्दन-नमस्कार कर उस स्थान की आलोचना करेंगे, प्रतिक्रमण करेंगे, निन्दा करेंगे यावत् यथायोग्य प्रायश्चित्त तपःकर्म को स्वीकार करेंगे।

१८९. वह दृढ़प्रतिज्ञ केवली बहुत वर्षों तक केवली-पर्याय को प्राप्त करेंगे, प्राप्त कर अपनी आयु का अन्त निकट जान कर भक्त-प्रत्याख्यान करेंगे—अनशन स्वीकार करेंगे, इस प्रकार जैसा **उववाई** (सू. १५४) में बतलाया गया है वैसा यावत् सब दुःखों का अन्त करेंगे, तक बतलाना चाहिए।

१९०. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है यावत् विहरण कर रहे हैं।

● ● ●

सोलहवां शतक

पहला उद्देशक

संग्रहणी गाथा

१. अहरन २. जरा ३. कर्म ४. यावत्क ५. गंगदत्त ६. स्वप्न ७. उपयोग ८. लोक ९. बलि १०. अवधि ११. द्वीप १२. उदधि १३. दिशा १४. स्तनित।

वायुकाय-पद

१. उस काल और उस समय में राजगृह नगर यावत् पर्युपासना करते हुए गौतम ने इस प्रकार कहा—भंते! क्या अधिकरण—अहरन में वायुकाय उत्पन्न होता है?

हां, होता है।

२. भंते! क्या वायुकायिक जीव स्पृष्ट होकर मरता है? अस्पृष्ट रह कर मरता है?

गौतम! स्पृष्ट होकर मरता है, अस्पृष्ट रह कर नहीं मरता।

३. भंते! क्या वायुकायिक जीव सशरीर निष्क्रमण करता है? अशरीर निष्क्रमण करता है?

गौतम! वह स्यात् सशरीर निष्क्रमण करता है, स्यात् अशरीर निष्क्रमण करता है।

४. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—वायुकायिक जीव स्यात् सशरीर निष्क्रमण करता है, स्यात् अशरीर निष्क्रमण करता है?

गौतम! वायुकायिक जीव के चार शरीर प्रज्ञप्त हैं, जैसे—औदारिक, वैक्रिय, तैजस और कार्मण। वह औदारिक- और वैक्रिय-शरीर को छोड़कर तैजस और कार्मण-शरीर के साथ निष्क्रमण करता है। गौतम! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—वायुकायिक-जीव स्यात् सशरीर निष्क्रमण करता है, स्यात् अशरीर निष्क्रमण करता है।

अग्निकाय-पद

५. भंते! अंगारकारिका कोयला बनाने की भट्टी में अग्निकाय कितने समय तक रहता है?

गौतम! जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त, उत्कृष्टतः तीन दिन-रात। वहां अन्य जीव वायुकाय भी उत्पन्न होता है। वायुकाय के बिना अग्निकाय प्रज्वलित नहीं होता।

क्रिया-पद

६. भंते! लोह के कोठे में तप्त लोह को लोहमय संडासी से निकालता अथवा डालता हुआ पुरुष कितनी क्रियाओं से स्पृष्ट होता है?

गौतम! जब तक पुरुष लोहे के कोठे में तप्त लोह को लोहमय संडासी से निकालता अथवा

डालता है तब तक वह पुरुष कायिकी यावत् प्राणातिपात-क्रिया—पांचों क्रियाओं से स्पृष्ट होता है। जिन जीवों के शरीर से लोह निष्पन्न हुआ है, लोहे का कोठा निष्पन्न हुआ है, संडासी निष्पन्न हुई है, अंगारे निष्पन्न हुए हैं, अंगारा निकालने वाली ईषत् वक्र लोहमयी यष्टि निष्पन्न हुई है, धौंकनी निष्पन्न हुई है, वे जीव भी कायिकी यावत् प्राणातिपात क्रिया—पांचों क्रियाओं से स्पृष्ट होते हैं।

७. भंते! लोहे के कोठे से लोहमय संडासी से तप्त लोह को लेकर अधिकरण में निकालता अथवा डालता हुआ पुरुष कितनी क्रियाओं से स्पृष्ट होता है?

गौतम! जब तक पुरुष लोहे के कोठे से लोहमय संडासी से लोह को निकालकर अधिकरणी में निकालता अथवा डालता है तब तक वह पुरुष कायिकी यावत् प्राणातिपात क्रिया—पांचों क्रियाओं से स्पृष्ट होता है। जिन जीवों के शरीर से लोह निष्पन्न हुआ, संडासी निष्पन्न हुई, घन निष्पन्न हुआ, हथौड़ा निष्पन्न हुआ, अहरन निष्पन्न हुई, अहरन की लकड़ी निष्पन्न हुई, उदक-द्रोणी निष्पन्न हुई, अधिकरण-शाला निष्पन्न हुई, वे जीव भी कायिकी यावत् प्राणातिपात-क्रिया—पांचों क्रियाओं से स्पृष्ट होते हैं।

अधिकरणी-अधिकरण-पद

८. भंते! क्या जीव अधिकरणी है? अधिकरण है?

गौतम! जीव अधिकरणी भी है, अधिकरण भी है।

९. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—जीव अधिकरणी भी है, अधिकरण भी है?

गौतम! अविरति की अपेक्षा। इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—जीव अधिकरणी भी है, अधिकरण भी है।

१०. भंते! क्या नैरयिक अधिकरणी है? अधिकरण है?

गौतम! अधिकरणी भी है, अधिकरण भी है। इस प्रकार जैसे जीव, वैसे ही नैरयिक की वक्तव्यता। इस प्रकार निरन्तर यावत् वैमानिक की वक्तव्यता।

११. भंते! क्या जीव अधिकरणी-सहित है? अधिकरणी-रहित है?

गौतम! अधिकरणी-सहित है, अधिकरणी-रहित नहीं है।

१२. यह किस अपेक्षा से—पृच्छा।

गौतम! अविरति की अपेक्षा। इस अपेक्षा से यावत् अधिकरणी-रहित नहीं है। इस प्रकार यावत् वैमानिक की वक्तव्यता।

१३. भंते! क्या जीव आत्म-अधिकरणी है? पर-अधिकरणी है? तदुभय-अधिकरणी है?

गौतम! आत्म-अधिकरणी भी है, पर-अधिकरणी भी है, तदुभय-अधिकरणी भी है।

१४. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—यावत् तदुभय अधिकरणी भी है?

गौतम! अविरति की अपेक्षा। इस अपेक्षा से यावत् तदुभय-अधिकरणी भी है। इस प्रकार यावत् वैमानिक की वक्तव्यता।

१५. भंते! जीवों का अधिकरण क्या आत्म-प्रयोग से निष्पन्न होता है? पर-प्रयोग से निष्पन्न होता है? तदुभय-प्रयोग से निष्पन्न होता है?

गौतम! जीवों का अधिकरण आत्म-प्रयोग से निष्पन्न भी है, पर-प्रयोग से निष्पन्न भी है, तदुभय-प्रयोग से निष्पन्न भी है।

१६. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है?

गौतम! अविरति की अपेक्षा। इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है यावत् तदुभय-प्रयोग निष्पन्न भी है। इस प्रकार यावत् वैमानिक की वक्तव्यता।

१७. भंते! शरीर कितने प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! शरीर पांच प्रज्ञप्त हैं, जैसे—औदारिक, वैक्रिय, आहारक, तैजस और कार्मण।

१८. भंते! इन्द्रियां कितनी प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! इन्द्रियां पांच प्रज्ञप्त हैं, जैसे—श्रोत्र-इन्द्रिय, चक्षु-इन्द्रिय, घ्राण-इन्द्रिय, रसन-इन्द्रिय, स्पर्श-इन्द्रिय।

१९. भंते! योग के कितने प्रकार प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! योग के तीन प्रकार प्रज्ञप्त हैं, जैसे—मन-योग, वचन-योग, काय-योग।

२०. भंते! जीव औदारिक-शरीर को निष्पन्न करता हुआ क्या अधिकरणी है? अधिकरण है?

गौतम! अधिकरणी भी है, अधिकरण भी है।

२१. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—जीव अधिकरणी भी है? अधिकरण भी है?

गौतम! अविरति की अपेक्षा। इस अपेक्षा से यावत् अधिकरण भी है।

२२. भंते! पृथ्वीकायिक-जीव औदारिक-शरीर को निष्पन्न करता हुआ क्या अधिकरणी है? अधिकरण है?

पूर्ववत्। इसी प्रकार यावत् मनुष्य की वक्तव्यता। इसी प्रकार वैक्रिय-शरीर की वक्तव्यता, इतना विशेष है—जिसके वह शरीर है।

२३. भंते! जीव आहारक-शरीर को निष्पन्न करता हुआ क्या अधिकरणी है?—पृच्छा।

गौतम! अधिकरणी भी है, अधिकरण भी है।

२४. यह किस अपेक्षा से यावत् अधिकरण भी है?

गौतम! प्रमाद की अपेक्षा। इस अपेक्षा से यावत् अधिकरण भी है। इसी प्रकार मनुष्य की वक्तव्यता। तैजस-शरीर की औदारिक-शरीर की भांति वक्तव्यता, इतना विशेष है—वह सर्व जीवों के वक्तव्य है। इसी प्रकार कर्म-शरीर की वक्तव्यता।

२५. भंते! जीव श्रोत्रेन्द्रिय को निष्पन्न करता हुआ क्या अधिकरणी है? अधिकरण है?

इस प्रकार जैसे—औदारिक शरीर की वक्तव्यता वैसे ही श्रोत्रेन्द्रिय की वक्तव्यता, इतना विशेष है—जिसके श्रोत्रेन्द्रिय है। इसी प्रकार चक्षुरिन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, जिह्वेन्द्रिय, स्पर्शेन्द्रिय की वक्तव्यता, इतना विशेष है—जिस जीव के जितनी इन्द्रियां हैं।

२६. भंते! जीव मन-योग को निष्पन्न करता हुआ क्या अधिकरणी है, अधिकरण है?

इस प्रकार जैसे श्रोत्रेन्द्रिय की वक्तव्यता, वैसे ही निरवशेष वक्तव्य है। वचन-योग की पूर्ववत् वक्तव्यता, इतना विशेष है—एकेन्द्रिय-वर्जित। इसी प्रकार काय-योग की वक्तव्यता, इतना विशेष है—सर्व जीवों के यावत् वैमानिक।

२७. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

दूसरा उद्देशक

जीवों का जरा-शोक-पद

२८. राजगृह नगर यावत् गौतम ने इस प्रकार कहा—क्या जीवों के जरा है? शोक है?

गौतम! जीवों के जरा भी है, शोक भी है।

२९. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—जीवों के जरा भी है, शोक भी है?

गौतम! जो जीव शारीरिक वेदना का वेदन करते हैं, उन जीवों के जरा तथा जो जीव मानसिक वेदना का वेदन करते हैं, उन जीवों के शोक होता है। गौतम! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—जीवों के जरा भी होती है, शोक भी होता है। इसी प्रकार नैरयिक की वक्तव्यता। इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमार की वक्तव्यता।

३०. भंते! क्या पृथ्वीकायिक-जीवों के जरा है? शोक है?

गौतम! पृथ्वीकायिक-जीवों के जरा है, शोक नहीं है।

३१. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—पृथ्वीकायिक-जीवों के जरा है, शोक नहीं है?

गौतम! पृथ्वीकायिक-जीव शारीरिक वेदना का वेदन करते हैं, मानसिक वेदना का वेदन नहीं करते।

गौतम! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—पृथ्वीकायिक-जीवों के जरा होती है, शोक नहीं होता। इस प्रकार यावत् चतुरिन्द्रिय की वक्तव्यता। शेष जीवों की भांति वक्तव्य हैं यावत् वैमानिक की वक्तव्यता।

३२. भंते! वह ऐसा ही है। भंते वह ऐसा ही है। यह कह कर यावत् पर्युपासना करने लगे।

शक्र का अवग्रह-अनुज्ञापन-पद

३३. उस काल और उस समय में वज्रपाणि, पुरन्दर देवराज देवेन्द्र शक्र यावत् दिव्य भोगार्ह भोगों को भोगता हुआ विहरण कर रहा था। इस सम्पूर्ण जम्बूद्वीप द्वीप को विपुल अवधि-ज्ञान के द्वारा जानता हुआ, जानता हुआ देखता है—यहां श्रमण भगवान् महावीर जम्बूद्वीप द्वीप में है। इस प्रकार जैसे तृतीय शतक (**भ.** ३/१०९) में ईशान की वक्तव्यता, उसी प्रकार शक्र की वक्तव्यता, इतना विशेष है—शक्र आभियोगिक-देवों को आमन्त्रित नहीं करता। उसकी पदाति सेना का अधिपति हरिणगमेषी देव, सुघोषा घंटा, विमान-निर्माता पालक, विमान का नाम पालक, निर्गमन का मार्ग उत्तर दिशा। दक्षिण-पूर्व में रतिकर पर्वत। शेष पूर्ववत् (**भ.** ३/२७) यावत् नाम बताकर पर्युपासना की। भगवान् ने धर्म कहा यावत् परिषद् लौट गई (**उववाई**, सू. ७१-७९)।

३४. देवराज देवेन्द्र शक्र श्रमण भगवान् महावीर के पास धर्म को सुन कर, अवधारण कर, हृष्ट-तुष्ट हो गया। उसने श्रमण भगवान् महावीर को वंदन-नमस्कार किया, वंदन-नमस्कार कर इस प्रकार कहा—भंते! अवग्रह कितने प्रकार का प्रज्ञप्त है?

शक्र! अवग्रह पांच प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—देवेन्द्र-अवग्रह, राज-अवग्रह, गृहपति-अवग्रह, सागारिक-अवग्रह, साधर्मिक-अवग्रह।

भंते! जो ये श्रमण-निर्ग्रंथ आर्य-रूप में विहरण करते हैं, उन्हें अवग्रह की अनुज्ञा देता हूं। यह कहकर श्रमण भगवान् महावीर को वंदन-नमस्कार किया, वंदन-नमस्कार कर उसी दिव्य यान-विमान पर चढा, चढकर जिस दिशा से आया था, उसी दिशा में लौट गया।

शक्र-सम्बन्धी व्याकरण-पद

३५. अयि भंते! भगवान् गौतम ने श्रमण भगवान् महावीर को वन्दन-नमस्कार किया, वंदन--नमस्कार कर इस प्रकार कहा—भंते! देवराज देवेन्द्र शक्र ने आपसे जो कहा, क्या वह अर्थ सत्य है?

हां, सत्य है।

३६. भंते! देवराज देवेन्द्र शक्र क्या सम्यग्वादी है? मिथ्यावादी है?

गौतम! सम्यग्वादी है, मिथ्यावादी नहीं है।

३७. भंते! देवराज देवेन्द्र शक्र क्या सत्य भाषा बोलता है? मृषा भाषा बोलता है? सत्यामृषा भाषा बोलता है? असत्यामृषा भाषा बोलता है?

गौतम! सत्य भाषा भी बोलता है यावत् असत्यामृषा भाषा भी बोलता है।

३८. भंते! देवराज देवेन्द्र शक्र क्या सावद्य भाषा बोलता है? अनवद्य भाषा बोलता है?

गौतम! सावद्य भाषा भी बोलता है, अनवद्य भाषा भी बोलता है।

३९. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—देवराज देवेन्द्र शक्र सावद्य भाषा भी बोलता है, अनवद्य भाषा भी बोलता है?

गौतम! जब देवराज देवेन्द्र शक्र सूक्ष्मकाय का निर्यूहण किए बिना बोलता है, तब देवराज देवेन्द्र शक्र सावद्य भाषा बोलता है। जब देवराज देवेन्द्र शक्र सूक्ष्मकाय का निर्यूहण कर बोलता है, तब देवराज देवेन्द्र शक्र निरवद्य भाषा बोलता है। गौतम! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—देवराज देवेन्द्र शक्र सावद्य भाषा भी बोलता है, अनवद्य भाषा भी बोलता है।

४०. भंते! देवराज देवेन्द्र शक्र क्या भवसिद्धिक है? अभवसिद्धिक है? सम्यग्-दृष्टि है? मिथ्या-दृष्टि है? परित-संसारी है? अनंत-संसारी है? सुलभ-बोधि है? दुर्लभ-बोधि है? आराधक है? विराधक है? चरम है? अचरम है?

गौतम! देवराज देवेन्द्र शक्र भवसिद्धिक है, अभवसिद्धिक नहीं है। सम्यग्-दृष्टि है, मिथ्या-दृष्टि नहीं है। परित-संसारी है, अनन्त-संसारी नहीं है। सुलभ बोधि है, दुर्लभ-बोधि नहीं है। आराधक है, विराधक नहीं है। चरम है, अचरम नहीं है। इस प्रकार मोक उद्देशक (**भ.** ३/७२-७३) में सनत्कुमार की भांति वक्तव्यता यावत् अचरम नहीं है।

चैतन्य-अचैतन्य-कृत-कर्म-पद

४१. भंते! जीवों के कर्म चैतन्य के द्वारा कृत हैं? अचैतन्य के द्वारा कृत हैं?

गौतम! जीवों के कर्म चैतन्य के द्वारा कृत हैं, अचैतन्य के द्वारा कृत नहीं हैं।

४२. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—जीवों के कर्म चैतन्य के द्वारा कृत हैं, अचैतन्य के द्वारा कृत नहीं हैं?

गौतम! जैसे पुद्गल जीवों के आहार के रूप में उपचित हैं, शरीर के रूप में उपचित हैं, कलेवर के रूप में उपचित हैं, वे उस-उस रूप में परिणत होते हैं। आयुष्मन् श्रमण! वैसे ही कर्म-पुद्गल कर्म-रूप में परिणत होते हैं, इसलिए कर्म अचेतन के द्वारा कृत नहीं हैं।

जैसे पुद्गल दुःस्थान, दुःशय्या और दुर्निषद्या में उस-उस-रूप में (अशुभ-रूप में) परिणत होते हैं, आयुष्मन् श्रमण! वैसे ही कर्म-पुद्गल भी कर्म-रूप में परिणत होते हैं, इसलिए कर्म अचैतन्य-कृत नहीं हैं। जैसे आतंक वध के लिए होता है, संकल्प वध के लिए होता है मरणांत वध के लिए होता है, आयुष्मन् श्रमण! वैसे ही कर्म-पुद्गल कर्म-रूप में परिणत होते हैं, इसलिए कर्म अचैतन्य के द्वारा कृत नहीं हैं। गौतम! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—जीवों के कर्म चैतन्य के द्वारा कृत हैं, अचैतन्य के द्वारा कृत नहीं हैं। इसी प्रकार नैरयिकों की वक्तव्यता। इसी प्रकार यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता।

४३. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है। ऐसा कह कर यावत् विहरण करने लगे।

तीसरा उद्देशक

कम-पद

४४. राजगृह नगर यावत् गौतम ने इस प्रकार कहा—भंते! कर्म-प्रकृतियां कितनी प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! कर्म-प्रकृतियां आठ प्रज्ञप्त हैं जैसे—ज्ञानावरणीय यावत् आंतरायिक। इस प्रकार यावत् वैमानिक की वक्तव्यता।

४५. भंते! जीव ज्ञानावरणीय-कर्म का वेदन करता हुआ कितनी कर्म-प्रकृतियों का वेदन करता है?

गौतम! आठ कर्म प्रकृतियों का वेदन करता है—इस प्रकार जैसे **पण्णवणा** का वेदावेदक उद्देशक (**पण्णवणा,** पद २७) निरवशेष वक्तव्य है। वेद-बंध पद (**पण्णवणा,** पद २८) भी उसी प्रकार, बंध-वेद पद (**पण्णवणा,** पद २५) भी उसी प्रकार, बंधा-बंध पद (**पण्णवणा,** पद २४) भी उसी प्रकार वक्तव्य है, यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता।

४६. भंते! वह ऐसा ही है, भंते वह ऐसा ही है, यह कहकर यावत् विहरण करने लगे।

४७. श्रमण भगवान् महावीर ने किसी दिन राजगृह नगर के गुणशीलक चैत्य से प्रतिनिष्क्रमण किया। प्रतिनिष्क्रमण कर बाहर जनपद-विहार करने लगे।

अर्श-छेदन में वैद्य का क्रिया-पद

४८. उस काल और उस समय में उल्लूकातीर नामक नगर था—वर्णक। उस उल्लूकातीर नगर

के बाहर उत्तर-पूर्व दिशि-भाग, वहां एकजम्बूक नाम का चैत्य था—वर्णक। श्रमण भगवान् महावीर किसी दिन क्रमानुसार विचरण, ग्रामानुग्राम परिव्रजन और सुखपूर्वक विहार करते हुए एकजंबूक चैत्य में समवसृत हुए यावत् परिषद् लौट गई।

४९. अयि भंते! भगवान् गौतम ने श्रमण भगवान् महावीर को वंदन-नमस्कार किया, वंदन--नमस्कार कर इस प्रकार कहा—भंते! निरंतर बेले-बेले तपःकर्म के द्वारा आतापन-भूमि में दोनों भुजाएं ऊपर उठाकर सूर्य के सामने आतापना लेते हुए भावितात्मा अनगार के लिए दिन के पूर्वार्द्ध में हाथ, पैर, भुजा और साथल का संकोचन अथवा फैलाव कल्प की सीमा में नहीं है—विहित नहीं है। दिन के उत्तरार्ध में हाथ, पैर, भुजा और साथल का संकुचन अथवा फैलाव विहित है। उस भावितात्मा अनगार के अर्श—मस्सा लटक रहा है। वैद्य ने उसे देखा, पैर सिकोड़ कर घुटनों को ऊंचा कर भूमि पर लिटाया, लिटा कर अर्श—मस्से का छेदन किया। भंते! जो छेदन करता है,उसके क्रिया होती है? जिसका छेदन करता है, उसके एक धर्मान्तराय के सिवाय अतिरिक्त क्रिया नहीं होती?

हां, गौतम! जो छेदन करता है, उसके क्रिया होती है। जिसका छेदन करता है, उसके एक धर्मान्तराय के सिवाय क्रिया नहीं होती।

५०. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

चौथा उद्देशक

नैरयिक का निर्जरा-पद

५१. राजगृह नगर यावत् गौतम ने इस प्रकार कहा—भंते! रूक्षभोजी श्रमण-निर्ग्रंथ जितने कर्मों की निर्जरा करता है—क्या नरकों में नैरयिक एक वर्ष, अनेक वर्ष अथवा सौ वर्षों में इतने कर्मों का क्षय करते हैं?

यह अर्थ संगत नहीं है।

भंते! चतुर्थ-भक्त (उपवास) करने वाला श्रमण-निर्ग्रन्थ जितने कर्मों की निर्जरा करता है—क्या नरक में नैरयिक इतने कर्मों का सौ वर्ष, सैकड़ों वर्ष अथवा हजार वर्ष में क्षय करते हैं?

यह अर्थ संगत नहीं है।

भंते! षष्ठ-भक्त (दो दिन का उपवास) करने वाला श्रमण-निर्ग्रन्थ जितने कर्मों की निर्जरा करता है—क्या नरक में नैरयिक इतने कर्मों का हजार वर्ष में, हजारों वर्ष में अथवा लाख वर्ष में क्षय करते हैं?

यह अर्थ संगत नहीं है।

भंते! अष्टम-भक्त (तीन दिन का उपवास) करने वाला श्रमण-निर्ग्रन्थ जितने कर्मों की निर्जरा करता है—क्या नरक में नैरयिक इतने कर्मों का लाख वर्ष, लाखों वर्ष अथवा करोड़ वर्ष में क्षय करते हैं?

यह अर्थ संगत नहीं है।

भंते! दशम-भक्त (चार दिन का उपवास) करने वाला श्रमण-निर्ग्रन्थ जितने कर्मों की निर्जरा करता है—क्या नरक में नैरयिक इतने कर्मों का करोड़ वर्ष, करोड़ों वर्ष अथवा क्रोड़ाक्रोड़ वर्ष में क्षय करते हैं?

यह अर्थ संगत नहीं है।

५२. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—रूक्षभोजी श्रमण-निर्ग्रन्थ जितने कर्मों की निर्जरा करता है—नरक में नैरयिक इतने कर्मों का एक वर्ष, अनेक वर्ष अथवा सौ वर्षों में क्षय नहीं करते, चतुर्थ-भक्त करने वाला श्रमण-निर्ग्रंथ जितने कर्मों की निर्जरा करता है—इस प्रकार पूर्व कथित उच्चारणीय है, यावत् क्रोड़ाक्रोड़ वर्ष में क्षय नहीं करता।

गौतम! जैसे कोई पुरुष वृद्ध है, उसका शरीर जरा से जर्जरित है, त्वचा के शिथिल होने से चेहरे पर झुर्रियां पड़ गई हैं, दांतों की श्रेणी कहीं विरल हो गई है, कहीं दंत-विहीन हो गई है। गर्मी से अभिहत, प्यास से अभिहत, आतुर, बुभुक्षित, पिपासित, दुर्बल और क्लांत है। वह पुरुष एक महान् कुसुंब वृक्ष की शुष्क, जटिल, गुंडीली, 'चिकनी', टेढ़ी, शाखा पर पत्ती--रहित कुंद फरसे से प्रहार करता है, तब वह पुरुष जोर-जोर से शब्द करता है। किन्तु वह उस विशाल वृक्ष की शाखा के बड़े-बड़े टुकड़े नहीं कर सकता। गौतम! इसी प्रकार नैरयिकों के कर्म गाढ़ किए हुए होते हैं, चिकने किए हुए होते हैं, संसृष्ट किए हुए होते हैं, और अलंघ्य होते हैं। वे प्रगाढ वेदना का वेदन करते हुए भी महानिर्जरा वाले नहीं होते, महापर्यवसान वाले नहीं होते।

जैसे कोई पुरुष अहरन को तेज शब्द, तेज घोष और निरन्तर तेज आघात के साथ हथौड़े से पीटता हुआ उस अहरन के स्थूल पुद्गलों का परिशाटन करने में समर्थ नहीं होता, गौतम! इसी प्रकार नैरयिकों के पाप-कर्म गाढ़ रूप में किए हुए होते हैं, चिकने किए हुए होते हैं, संसृष्ट किए हुए होते हैं और अलंघ्य होते हैं। वे प्रगाढ़ वेदना का वेदन करते हुए भी महानिर्जरा वाले नहीं होते, महापर्यवसान वाले नहीं होते।

जैसे कोई पुरुष तरुण, बलवान् यावत् निपुण और सूक्ष्म शिल्प से समन्वित है। वह पुरुष एक महान् शाल्मली की गंडिका आर्द्र, सरल, गांठ-रहित, चिकनाई-रहित, सीधी शाखा पर पत्ती-सहित तीक्ष्ण हथौड़े से आक्रमण करता है, वह पुरुष बहुत जोर-जोर से शब्द नहीं करता किन्तु शाखा के बड़े-बड़े टुकड़े कर देता है। गौतम! इसी प्रकार श्रमण-निर्ग्रंथों के शिथिल रूप में किए हुए, निःसत्त्व किए हुए और विपरिणमन को प्राप्त किए हुए सूक्ष्म कर्म-पुद्गल शीघ्र विध्वस्त हो जाते हैं। वे जिस-तिस मात्रा में भी वेदना का वेदन करते हुए महानिर्जरा और महापर्यवसान वाले होते हैं।

गौतम! जैसे कोई पुरुष सूखे घास के पूलों को अग्नि में डालता है, वह अग्नि में डाला हुआ सूखा घास का पूला शीघ्र ही भस्म हो जाता है?

हां, भस्म हो जाता है।

गौतम! इसी प्रकार श्रमण-निर्ग्रंथों के शिथिल रूप में किए हुए, निःसत्त्व किए हुए और

विपरिणमन को प्राप्त किए हुए स्थूल कर्म-पुद्गल शीघ्र ही विध्वस्त हो जाते हैं। वे जिस-तिस मात्रा में भी वेदना का वेदन करते हुए महानिर्जरा और महापर्यवसान वाले होते हैं।

गौतम! जैसे कोई पुरुष तपे हुए लोहे के तवे पर पानी की बूंद गिराता है। तपे हुए लोहे के तवे पर गिराई हुई पानी की बूंद शीघ्र ही विध्वस्त हो जाती है?

हां, विध्वस्त हो जाती है।

गौतम! उसी प्रकार श्रमण-निर्ग्रंथों के शिथिल-रूप में किए हुए, निःसत्त्व किए हुए और विपरिणमन को प्राप्त किए हुए स्थूल कर्म-पुद्गल शीघ्र ही विध्वस्त हो जाते हैं। वे जिस-तिस मात्रा में वेदना का वेदन करते हुए महानिर्जरा और महापर्यवसान वाले होते हैं।

गौतम! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—अन्नग्लायक श्रमण-निर्ग्रंथ जितने कर्मों की निर्जरा करता है, पूर्ववत् यावत् नरक में नैरयिक इतने कर्मों का करोड़ वर्ष, करोड़ों वर्ष अथवा क्रोड़ाक्रोड़ वर्ष में क्षय नहीं करता।

५३. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है। ऐसा कह कर यावत् विहरण करने लगे।

पांचवां उद्देशक

शक्र का उत्क्षिप्त प्रश्नव्याकरण-पद

५४. उस काल और उस समय में उल्लूकातीर नाम का नगर था—वर्णक। एकजंबूक चैत्य—वर्णक। उस काल और उस समय में स्वामी समवसृत हुए यावत् परिषद् पर्युपासना करने लगी। उस काल उस समय वज्रपाणि देवराज देवेन्द्र शक्र—इस प्रकार जैसे द्वितीय उद्देशक (भ. १६/३३) की वक्तव्यता वैसे ही दिव्य यान-विमान से आया यावत् जहां श्रमण भगवान् महावीर हैं, वहां आया, आकर श्रमण भगवान् महावीर को वंदन-नमस्कार किया, वन्दन-नमस्कार कर इस प्रकार बोला—भंते! महान् ऋद्धि यावत् महान् ऐश्वर्य वाला देव बाहरी पुद्गलों का ग्रहण किए बिना आने में समर्थ है?

यह अर्थ संगत नहीं है।

भंते! महान् ऋद्धि यावत् महान् ऐश्वर्य वाला देव बाह्य पुद्गलों का ग्रहण कर आने में समर्थ है?

हां, समर्थ है।

भंते! महान् ऋद्धि यावत् महान् ऐश्वर्य वाला देव इस अभिलाप के अनुसार बाह्य पुद्गलों को ग्रहण किए बिना गमन करने, बोलने, व्याकरण करने, चक्षु का उन्मेष और निमेष करने, शरीर के संकोचन, आसन, शय्या, निषद्या करने, विक्रिया करने, परिचारणा करने में समर्थ है।

इन आठ प्रश्न-व्याकरणों को खड़े-खड़े पूछा, पूछकर संभ्रम-पूर्वक वंदना की, वंदना कर उसी दिव्य यान-विमान पर चढा, चढकर जिस दिशा से आया, उसी दिशा में लौट गया।

गंगदत्त देव के संदर्भ म परिणममाण-परिणत-पद

५५. अयि भंते! भगवान् गौतम ने श्रमण भगवान् महावीर को वंदन-नमस्कार किया। वंदन--नमस्कार कर इस प्रकार बोले—भंते! देवराज देवेन्द्र शक्र जब कभी देवानुप्रिय को वंदन--नमस्कार करता है, सत्कार करता है यावत् पर्युपासना करता है। भंते! क्या कारण है—आज देवराज देवेन्द्र शक्र ने देवानुप्रिय से खड़े खड़े आठ प्रश्न-व्याकरण पूछे, पूछ कर संभ्रम-पूर्वक वंदन-नमस्कार किया, यावत् उसी दिशा में लौट गया?

अयि गौतम! श्रमण भगवान् महावीर ने भगवान् गौतम से इस प्रकार कहा—गौतम! उस काल और उस समय में महाशुक्र-कल्प में महासामान्य विमान में दो देव महान् ऋद्धि यावत् महान् ऐश्वर्य वाले एक विमान में देव-रूप में उपपन्न हुए जैसे—मायी-मिथ्यादृष्टि-उपपन्नक, अमायी-सम्यग्दृष्टि-उपपन्नक।

मायी-मिथ्यादृष्टि-उपपन्नक देव ने अमायी-सम्यग्दृष्टि-उपपन्नक देव से इस प्रकार *कहा—परिणममाण पुद्गल परिणत नहीं हैं, अपरिणत हैं*। परिणमन कर रहे हैं, इसलिए पुद्गल परिणत नहीं हैं, अपरिणत हैं।

अमायी-सम्यगदृष्टि-उपपन्नक देव ने उस मायी-मिथ्यादृष्टि-उपपन्नक देव से इस प्रकार कहा—परिणममान पुद्गल परिणत हैं, अपरिणत नहीं हैं। परिणमन कर रहे हैं, इसलिए पुद्गल परिणत हैं, अपरिणत नहीं हैं।

मायी-मिथ्यादृष्टि-उपपन्नक देव को इस प्रकार प्रतिहत किया। प्रतिहत कर अवधि-ज्ञान का प्रयोग किया, प्रयोग कर मुझे अवधि-ज्ञान से देखा, देखकर इस प्रकार का आध्यात्मिक, स्मृत्यात्मक, अभिलाषात्मक एवं मनोगत संकल्प उत्पन्न हुआ—श्रमण भगवान् महावीर जंबूद्वीप द्वीप में भारत वर्ष में उल्लूकातीर नगर के बाहर एकजम्बुक चैत्य में योग्य स्थान की अनुमति लेकर संयम और तप से अपने आपको भावित करते हुए विहार कर रहे हैं। इसलिए मेरे लिए श्रेय है कि मैं श्रमण भगवान् महावीर की वंदना यावत् पर्युपासना कर यह इस प्रकार का व्याकरण पूछूं। इस प्रकार संप्रेक्षा की, संप्रेक्षा कर चार हजार सामानिक, तीन प्रकार की परिषद्, सात प्रकार की सेना, सात सेनाधिपति, सोलह हजार आत्मरक्षक-देव, अन्य बहु महासामान्य विमानवासी वैमानिक-देवों से संपरिवृत होकर यावत् दुंदुभि-निर्घोष से नादित रव के साथ जहां जंबूद्वीप द्वीप है, जहां भारत वर्ष है, जहां उल्लूकातीर नगर है, जहां एकजंबुक चैत्य है, जहां मैं हूं, वहां आने के लिए प्रस्थान किया। देवराज देवेन्द्र शक्र उस देव की दिव्य देव-ऋद्धि, दिव्य देव-द्युति, दिव्य देव-अनुभाग, दिव्य तेजोलेश्या को सहन न करता हुआ मेरे पास खड़े-खड़े आठ प्रश्न-व्याकरण पूछकर, संभ्रम-पूर्वक वंदना कर यावत् लौट गया।

५६. जिस समय श्रमण भगवान् महावीर ने भगवान् गौतम को यह अर्थ कहा, उसी समय वह देव उस देश-भाग में शीघ्र आ गया। उस देव ने श्रमण भगवान् महावीर को दायीं ओर से प्रारंभ कर तीन बार प्रदक्षिणा की, प्रदक्षिणा कर वंदन-नमस्कार किया, वंदन-नमस्कार कर इस प्रकार बोला—भंते! महाशुक्र-कल्प महासामान्य-विमान में एक मायी-मिथ्यादृष्टि--उपपन्नक देव ने मुझे इस प्रकार कहा—परिणममान पुद्गल परिणत नहीं हैं, अपरिणत हैं।

परिणमन कर रहे हैं, इसलिए वे पुद्गल परिणत नहीं हैं, अपरिणत हैं। तब मैंने उस मायी-मिथ्यादृष्टि-उपपन्नक देव से इस प्रकार कहा—परिणममान पुद्गल परिणत हैं, अपरिणत नहीं हैं। परिणमन कर रहे हैं, इसलिए वे पुद्गल परिणत हैं, अपरिणत नहीं हैं। भंते! यह कैसे है?

५७. अयि गंगदत्त! श्रमण भगवान् महावीर ने गंगदत्त देव से इस प्रकार कहा—गंगदत्त! मैं भी इसी प्रकार आख्यान करता हूं, भाषण, प्रज्ञापन और प्ररूपण करता हूं—परिणममान पुद्गल परिणत हैं, अपरिणत नहीं हैं। परिणमन कर रहे हैं इसलिए पुद्गल परिणत हैं, अपरिणत नहीं हैं। यह अर्थ सत्य है।

५८. गंगदत्त देव श्रमण भगवान् महावीर के पास इस अर्थ को सुन कर, अवधारण कर हृष्ट-तुष्ट हो गया। श्रमण भगवान् महावीर को वंदन-नमस्कार किया, वंदन-नमस्कार कर न अति-निकट यावत् पर्युपासना करने लगा।

गंगदत्त देव का आत्म-विषयक प्रश्न-पद

५९. श्रमण भगवान् महावीर ने गंगदत्त देव को उस विशालतम परिषद् में धर्म कहा यावत् आराधक होता है।

६०. गंगदत्त देव श्रमण भगवान् महावीर के पास धर्म को सुनकर, अवधारण कर हृष्ट-तुष्ट हो गया। वह उठने की मुद्रा में उठा, उठकर श्रमण भगवान् महावीर को वंदन-नमस्कार किया, वंदन-नमस्कार कर इस प्रकार बोला—भंते! मैं गंगदत्त देव क्या भवसिद्धिक हूं? अभवसिद्धिक हूं? सम्यग्-दृष्टि हूं? मिथ्या- दृष्टि हूं? परित-संसारी हूं? अनन्त-संसारी हूं? सुलभ-बोधि हूं? दुर्लभ-बोधि हूं? आराधक हूं? विराधक हूं? चरम हूं? अचरम हूं?

अयि गंगदत्त! श्रमण भगवान् महावीर ने गंगदत्त देव से इस प्रकार कहा—गंगदत्त! तुम भविसिद्धिक हो, अभवसिद्धिक नहीं। सम्यग्-दृष्टि हो, मिथ्या-दृष्टि नहीं। परित-संसारी हो, अनंत-संसारी नहीं। सुलभ-बोधि हो, दुर्लभ-बोधि नहीं। आराधक हो, विराधक नहीं। चरम हो, अचरम नहीं।

गंगदत्त देव द्वारा नाट्य-उपदर्शन-पद

६१. गंगदत्त देव श्रमण भगवान् महावीर के इस प्रकार कहने पर हृष्ट-तुष्ट चित्त वाला, आनंदित, नंदित, प्रीतिपूर्ण मन वाला, परम सौमनस्य-युक्त और हर्ष से विकस्वर-हृदय वाला हो गया। श्रमण भगवान् महावीर को वंदन-नमस्कार किया, वंदन-नमस्कार कर इस प्रकार बोला—भंते! तुम सब जानते हो, सब देखते हो, सब ओर से जानते हो, सब ओर से देखते हो, सब काल को जानते हो,सब काल को देखते हो, सब भावों को जानते हो, सब भावों को देखते हो।

देवानुप्रिय मेरे पूर्व और पश्चात् को जानते हैं—मुझे इस प्रकार की दिव्य ऋद्धि, दिव्य द्युति, दिव्य देव अनुभाव लब्ध, प्राप्त और अभिसमन्वागत है। इसीलिए मैं देवानुप्रिय गौतम आदि श्रमण-निर्ग्रन्थों को भक्ति-पूर्वक दिव्य देव-ऋद्धि, दिव्य देवद्युति, दिव्य देवानुभाव, दिव्य बत्तीस प्रकार की नाट्यविधि दिखलाना चाहता हूं।

६२. गंगदत्त देव के इस प्रकार कहने पर श्रमण भगवान् महावीर ने गंगदत्त देव के इस अर्थ को

आदर नहीं दिया, स्वीकार नहीं किया, वे मौन रहे।

६३. गंगदत्त देव ने श्रमण भगवान् महावीर को दूसरी बार भी, तीसरी बार भी इस प्रकार कहा—भंते! तुम सब जानते हो, सब देखते हो, सब ओर से जानते हो, सब ओर से देखते हो, सब काल को जानते हो, सब काल को देखते हो, सब भावों को जानते हो, सब भावों को देखते हो।

देवानुप्रिय मेरे पूर्व और पश्चात् को जानते हैं—मुझे इस प्रकार दिव्य देव-ऋद्धि, दिव्य देव-द्युति, दिव्य देवानुभाव लब्ध, प्राप्त और अभिसमन्वागत है, इसलिए मैं देवानुप्रिय गौतम आदि श्रमण-निर्ग्रंथों को भक्तिपूर्वक दिव्य देव-ऋद्धि, दिव्य देवद्युति, दिव्य देवानुभाव, दिव्य बत्तीस प्रकार की नाट्य-विधि दिखलाना चाहता हूं। यह कहकर बत्तीस प्रकार की नाट्य-विधि का उपदर्शन किया, उपदर्शन कर यावत् जिस दिशा से आया था, उसी दिशा में लौट गया।

६४. अयि भंते! भगवान् गौतम ने श्रमण भगवान् महावीर को वंदन-नमस्कार किया, वंदन-नमस्कार कर इस प्रकार कहा—भंते! गंगदत्त देव की वह दिव्य देव-ऋद्धि, दिव्य देवद्युति, दिव्य देवानुभाव कहां गया? कहां अनुप्रविष्ट हो गया?

गौतम! शरीर में गया, शरीर में अनुप्रविष्ट हो गया। कूटागार-शाला दृष्टान्त यावत् शरीर में अनुप्रविष्ट हो गया।

भंते! गंगदत्त देव महान् ऋद्धि, महान् द्युति, महान् बल, महान् यश और महान् ऐश्वर्यशाली है।

गंगदत्त देव का पूर्व-भव-पद

६५. भंते! गंगदत्त देव को वह दिव्य देव-ऋद्धि वह दिव्य देवद्युति, वह दिव्य देवानुभाव कैसे लब्ध, प्राप्त और अभिसमन्वागत हुआ? यह पूर्व भव में कौन था? नाम क्या था? गौत्र क्या था? किस ग्राम, नगर, निगम, राजधानी, खेट, कर्बट, मडंब, पत्तन, द्रोणमुख, आकर, आश्रम, संबाध और सन्निवेश में रहता था? इसने क्या दिया? क्या भोगा? क्या किया? क्या समाचरण किया? किस तथारूप श्रमण-ब्राह्मण के पास एक भी आर्य धार्मिक सुवचन को सुना, अवधारण किया, जिससे गंगदत्त देव को वह दिव्य-ऋद्धि, दिव्य देवद्युति, दिव्य देवानुभाव लब्ध, प्राप्त और अभिसमन्वागत हुआ?

६६. अयि गौतम! श्रमण भगवान् महावीर ने भगवान् गौतम से इस प्रकार कहा—गौतम! उस काल और उस समय में इस जंबूद्वीप द्वीप में भारत-वर्ष में हस्तिनापुर नाम का नगर था—वर्णक। सहस्राम्रवन उद्यान—वर्णक। वहां हस्तिनापुर नगर में गंगदत्त नाम का गृहपति रहता था—आढ्य यावत् बहुजन के द्वारा अपरिभूत।

६७. उस काल और उस समय में मुनिसुव्रत अर्हत् आदिकर यावत् सर्वज्ञ सर्वदर्शी थे। उनके आगे-आगे आकाश में धर्मचक्र चलता था, उनके ऊपर आकाशगत छत्र, उनके पार्श्व में चामर डुलते थे। उनके आकाश जैसा स्वच्छ पादपीठ-सहित सिंहासन था, उनके आगे आगे धर्मध्वज चल रहा था। वे शिष्य गण से संपरिवृत होकर क्रमानुसार विचरण, ग्रामानुग्राम

परिव्रजन, और सुखपूर्वक विहरण करते हुए जहां हस्तिनापुर नगर था, जहां सहस्राम्रवन उद्यान था यावत् विहरण करने लगे। परिषद् ने नगर से निर्गमन किया यावत् पर्युपासना करने लगी।

६८. गंगदत्त गृहपति इस कथा को सुनकर हृष्ट-तुष्ट हुआ। उसने स्नान किया, बलिकर्म किया यावत् अल्पभार और बहुमूल्य वाले आभरणों से शरीर को अलंकृत किया। अपने घर से प्रतिनिष्क्रमण किया, प्रतिनिष्क्रमण कर पैदल चलते हुए हस्तिनापुर नगर के बीचोंबीच निर्गमन किया, निर्गमन कर जहां सहस्राम्रवन उद्यान था, जहां अर्हत् मुनिसुव्रत थे, वहां आया, आकर अर्हत् मुनिसुव्रत को दायीं ओर से प्रारंभ कर तीन बार प्रदक्षिणा की यावत् तीन प्रकार की पर्युपासना के द्वारा पर्युपासना करने लगा।

६९. अर्हत् मुनिसुव्रत ने गंगदत्त गृहपति को उस विशालतम परिषद् में धर्म कहा यावत् परिषद् लौट गई।

७०. गंगदत्त गृहपति अर्हत् मुनिसुव्रत के पास धर्म को सुनकर, अवधारण कर हृष्ट-तुष्ट हो गया। वह उठने की मुद्रा में उठा, उठकर अर्हत् मुनिसुव्रत को वंदन-नमस्कार किया, वंदन--नमस्कार कर इस प्रकार बोला—भंते! मैं निर्ग्रन्थ प्रवचन में श्रद्धा करता हूं। भंते! यह इष्ट है, भंते! यह प्रतीप्सित है, भंते! यह इष्ट-प्रतीप्सित है। जैसा आप कह रहे हैं, इतना विशेष है—देवानुप्रिय! मैं ज्येष्ठ पुत्र को कुटुम्ब में स्थापित करूंगा फिर मैं देवानुप्रिय के पास मुंड होकर अगार से अनगारिता में प्रव्रजित हो जाऊंगा।

देवानुप्रिय! जैसा तुम्हें सुख हो, प्रतिबंध मत करो।

७१. गंगदत्त गृहपति अर्हत् मुनिसुव्रत के इस प्रकार कहने पर हृष्ट-तुष्ट हो गया। अर्हत् मुनिसुव्रत को वंदन-नमस्कार किया। वंदन-नमस्कार कर अर्हत् मुनिसुव्रत के पास से सहस्राम्रवन उद्यान से प्रतिनिष्क्रमण किया, प्रतिनिष्क्रमण कर जहां हस्तिनापुर नगर था, जहां अपना घर था, वहां आया, आकर विपुल अशन, पान, खाद्य, स्वाद्य तैयार करवाया, करवाकर मित्र, ज्ञाति, कुटुम्बी, स्वजन, संबंधी, परिजनों को आमंत्रित किया, आमंत्रित कर उसके पश्चात् स्नान किया, पूरण गृहपति (भ. ३/१०२) की भांति यावत् ज्येष्ठ पुत्र को कुटुम्ब में स्थापित किया। मित्र, ज्ञाति, कुटुम्ब, स्वजन, संबंधी, परिजनों और ज्येष्ठ पुत्र को पूछा, पूछकर हजार पुरुषों द्वारा वहन की जाने वाली शिविका में चढ़ा, चढ़कर चलने लगा, पीछे-पीछे चल रहे मित्र, ज्ञाति, कुटुम्बी, स्वजन, संबंधी, परिजनों और ज्येष्ठ पुत्र के साथ संपूर्ण ऋद्धि यावत् दुन्दुभि के निर्घोष से नादित शब्द के साथ हस्तिनापुर नगर के बीचोंबीच निर्गमन किया, निर्गमन कर जहां सहस्राम्रवन उद्यान था, वहां आया, आकर छत्र आदि तीर्थंकरों के अतिशय को देखा, इस प्रकार उद्रायण (भ. १३/११७) की भांति यावत् स्वयं ही आभरण उतारे, उतार कर स्वयं ही पंचमुष्टि लोच किया, लोच कर जहां अर्हत् मुनिसुव्रत इस प्रकार जैसे उद्रायण वैसे ही प्रव्रजित हुआ। उसी प्रकार ग्यारह अंगों का अध्ययन किया यावत् एक मास की संलेखना से अपने शरीर को कृश बनाया, कृश बनाकर साठ-भक्त (भोजन के समय) का छेदन किया, छेदन कर आलोचना-प्रतिक्रमण कर, समाधि प्राप्त कर कालमास में काल कर महाशुक्र-कल्प में महासामान्य-विमान में उपपात-सभा में देवशयनीय में यावत् गंगदत्त देव के रूप में उपपन्न हुआ।

७२. गंगदत्त देव अभी उपपन्न मात्र होने पर पंच प्रकार की पर्याप्ति से पर्याप्त भाव को प्राप्त हो गया (जैसे—आहार-पर्याप्ति यावत् भाषा-मनः-पर्याप्ति) गौतम! इस प्रकार गंगदत्त देव को वह दिव्य देव-ऋद्धि, वह दिव्य देव-द्युति, वह दिव्य देवानुभाव लब्ध, प्राप्त और अभिसमन्वागत है।

७३. भंते! गंगदत्त देव की स्थिति कितने काल की प्रज्ञप्त है?

गौतम! सतरह सागरोपम की स्थिति प्रज्ञप्त है।

७४. भंते! गंगदत्त देव उस देवलोक से आयु-क्षय, भव-क्षय और स्थिति-क्षय के अनंतर च्यवन कर कहां जाएगा? कहां उपपन्न होगा?

गौतम! महाविदेह-वास में सिद्ध होगा यावत् सब दुःखों का अंत करेगा।

७५. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

छठा उद्देशक

स्वप्न-पद

७६. भंते! स्वप्न-दर्शन कितने प्रकार का प्रज्ञप्त है?

गौतम! स्वप्न-दर्शन पांच प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—यथातथ्य, प्रतान, चिंता-स्वप्न, तद्विपरीत, अव्यक्त दर्शन।

७७. भंते! क्या जीव सुप्त अवस्था में स्वप्न देखता है? जागृत अवस्था में स्वप्न देखता है? सुप्त-जागृत अवस्था में स्वप्न देखता है?

गौतम! सुप्त अवस्था में स्वप्न नहीं देखता, जागृत अवस्था में स्वप्न नहीं देखता, सुप्त-जागृत अवस्था में स्वप्न देखता है।

७८. भंते! क्या जीव सुप्त हैं? जागृत हैं? सुप्त-जागृत हैं?

गौतम! जीव सुप्त भी हैं, जागृत भी हैं, सुप्त-जागृत भी हैं।

७९. भंते! नैरयिक सुप्त हैं—पृच्छा।

गौतम! नैरयिक सुप्त हैं, जागृत नहीं हैं, सुप्त-जागृत नहीं हैं। इसी प्रकार यावत् चतुरिन्द्रिय की वक्तव्यता।

८०. भंते! पंचेन्द्रिय तिर्यग्योनिक क्या सुप्त हैं? पृच्छा।

गौतम! सुप्त हैं, जागृत नहीं हैं। सुप्त-जागृत भी हैं। मनुष्य की जीव की भांति वक्तव्यता। वाणमंतर, ज्योतिष्क और वैमानिक की नैरयिक की भांति वक्तव्यता।

८१. भंते! क्या संवृत स्वप्न देखता है? असंवृत स्वप्न देखता है? संवृतासंवृत स्वप्न देखता है?

गौतम! संवृत भी स्वप्न देखता है, असंवृत भी स्वप्न देखता है, संवृतासंवृत भी स्वप्न देखता है। संवृत स्वप्न देखता है, वह यथातथ्य देखता है। असंवृत स्वप्न देखता है, वह

वैसा भी होता है, अन्यथा भी होता है। संवृतासंवृत स्वप्न देखता है, वह वैसा भी होता है, अन्यथा भी होता है।

८२. भंते! क्या जीव संवृत हैं? असंवृत हैं? संवृतासंवृत हैं?

गौतम! जीव संवृत भी हैं, असंवृत भी हैं, संवृतासंवृत भी हैं। जैसे सुप्त के दण्डक वैसे ही संवृत की वक्तव्यता।

८३. भंते! स्वप्न कितने प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! स्वप्न बयांलीस प्रज्ञप्त हैं।

८४. भंते! महा-स्वप्न कितने प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! महा-स्वप्न तीस प्रज्ञप्त हैं।

८५. भंते! सर्व-स्वप्न कितने प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! सर्व-स्वप्न बहत्तर प्रज्ञप्त हैं।

८६. भंते! तीर्थंकर की माता तीर्थंकर के गर्भ में आने के समय कितने महा-स्वप्न देखकर जागृत होती हैं?

गौतम! तीर्थंकर की माता तीर्थंकर के गर्भ में आने के समय इन तीस महा-स्वप्नों में से ये चौदह महा-स्वप्न देखकर जागृत होती हैं, जैसे—गज, वृषभ यावत् अग्नि।

८७. भंते! चक्रवर्ती की माता चक्रवर्ती के गर्भ में आने के समय कितने महा-स्वप्न देखकर जागृत होती हैं?

गौतम! चक्रवर्ती की माता चक्रवर्ती के गर्भ में आने के समय इन तीस महा-स्वप्न में से ये चौदह महा-स्वप्न देखकर जागृत होती हैं, जैसे—गज, वृषभ यावत् अग्नि।

८८. वासुदेव की माता—पृच्छा।

गौतम! वासुदेव की माता वासुदेव के गर्भ में आने के समय इन चौदह महा-स्वप्नों में से किन्हीं सात महा-स्वप्नों को देखकर जागृत होती हैं।

८९. बलदेव की माता—पृच्छा।

गौतम! बलदेव की माता यावत् इन चौदह महा-स्वप्नों में से किन्हीं चार महा-स्वप्नों को देखकर जागृत होती हैं।

९०. भंते! मांडलिक की माता—पृच्छा।

गौतम! मांडलिक की माता यावत् इन चौदह महा-स्वप्नों में से किसी एक महा-स्वप्न को देखकर जागृत होती हैं।

भगवान् का महास्वप्न-दर्शन-पद

९१. श्रमण भगवान् महावीर छद्मस्थकालीन अवस्था में रात के अंतिम भाग में इन दस महा-
-स्वप्नों को देखकर जागृत हुए, जैसे—

१. महान् घोर रूप वाले दीप्तिमान एक ताल पिशाच (ताड़ जैसे लंबे पिशाच) को स्वप्न में पराजित हुआ देखकर प्रतिबुद्ध हुए।

२. श्वेत पंखों वाले एक बड़े पुंस्कोकिल को स्वप्न में देखकर प्रतिबुद्ध हुए।

३. चित्र-विचित्र पंखों वाले एक बड़े पुंस्कोकिल को स्वप्न में देखकर प्रतिबुद्ध हुए।

४. सर्वरत्नमय दो बड़ी मालाओं को स्वप्न में देखकर प्रतिबुद्ध हुए।

५. एक महान् श्वेत गोवर्ग को स्वप्न में देखकर प्रतिबुद्ध हुए।

६. चिहुं ओर कुसुमित एक बड़े पद्म-सरोवर को स्वप्न में देखकर प्रतिबुद्ध हुए।

७. स्वप्न में हजारों ऊर्मियों और वीचियों से परिपूर्ण एक महासागर को भुजाओं से तीर्ण हुआ देखकर प्रतिबुद्ध हुए।

८. तेज से जाज्वल्यमान एक महान् सूर्य को स्वप्न में देखकर प्रतिबुद्ध हुए।

९. स्वप्न में भूरे व नीले वर्ण वाली अपनी आंतों से मानुषोत्तर पर्वत को चारों ओर से आवेष्टित और परिवेष्टित हुआ देखकर प्रतिबुद्ध हुए।

१०. स्वप्न में महान् मंदर पर्वत की मंदर चूलिका पर अवस्थित सिंहासन के ऊपर अपने आपको बैठे हुए देखकर प्रतिबुद्ध हुए।

१. श्रमण भगवान् महावीर महान् घोर रूप वाले दीप्तिमान् एक ताल-पिशाच को स्वप्न में पराजित हुआ देखकर प्रतिबुद्ध हुए, उसके फलस्वरूप श्रमण भगवान् महावीर ने मोहनीय--कर्म को मूल से उखाड़ फैंका।

२. श्रमण भगवान् महावीर श्वेत पंखों वाले एक बड़े पुंस्कोकिल को स्वप्न में देखकर प्रतिबुद्ध हुए, उसके फलस्वरूप श्रमण भगवान् महावीर शुक्ल-ध्यान को प्राप्त हुए।

३. श्रमण भगवान् महावीर चित्र-विचित्र पंखों वाले एक बड़े पुंस्कोकिल को स्वप्न में देखकर प्रतिबुद्ध हुए, उसके फलस्वरूप श्रमण भगवान् महावीर ने स्व-समय और पर-समय का निरूपण करने वाले द्वादशांग गणिपिटक का आख्यान, प्रज्ञापन, प्ररूपण, दर्शन, निदर्शन और उपदर्शन किया, जैसे— आचार, सूत्रकृत् यावत् दृष्टिवाद।

४. श्रमण भगवान् महावीर सर्वरत्नमय दो बड़ी मालाओं को स्वप्न में देखकर प्रतिबुद्ध हुए, उसके फलस्वरूप श्रमण भगवान् महावीर ने इन दो प्रकार के धर्मों की प्रज्ञापना की, जैसे—अगार-धर्म और अनगार-धर्म।

५. श्रमण भगवान् महावीर एक महान् श्वेत गोवर्ग को स्वप्न में देखकर प्रतिबुद्ध हुए, उसके फलस्वरूप श्रमण भगवान् महावीर के चतुर्वर्णात्मक श्रमण संघ हुआ, जैसे—श्रमण, श्रमणी, श्रावक और श्राविका।

६. श्रमण भगवान् महावीर चिहुं ओर कुसुमित एक बड़े पद्म सरोवर को स्वप्न में देखकर प्रतिबुद्ध हुए, उसके फलस्वरूप श्रमण भगवान् महावीर ने चार प्रकार के देवों का प्रज्ञापन किया, जैसे—भवनपति, वाणमंतर, ज्योतिष्क और वैमानिक।

७. श्रमण भगवान् महावीर स्वप्न में हजारों ऊर्मियों और वीचियों से परिपूर्ण एक महासागर को भुजाओं से तीर्ण हुआ देखकर प्रतिबुद्ध हुए, उसके फलस्वरूप श्रमण भगवान् महावीर ने अनादि, अनंत, प्रलंब और चार अंत वाले संसार-रूपी कानन को पार किया।

८. श्रमण भगवान् महावीर तेज से जाज्वल्यमान एक महान् सूर्य को स्वप्न में देखकर प्रतिबुद्ध हुए, उसके फलस्वरूप श्रमण भगवान् महावीर को अनंत, अनुत्तर, निर्व्याघात, निरावरण, पूर्ण, प्रतिपूर्ण केवल-ज्ञान और केवल-दर्शन प्राप्त हुए।

९. श्रमण भगवान् महावीर स्वप्न में भूरे और नील वर्ण वाली अपनी आंतों से मानुषोत्तर पर्वत को चारों ओर से आवेष्टित और परिवेष्टित हुआ देखकर प्रतिबुद्ध हुए, उसके फलस्वरूप श्रमण भगवान् महावीर की देव, मनुष्य और असुरों के लोक में प्रधान कीर्ति, वर्ण, शब्द और श्लाघा व्याप्त हुई। श्रमण भगवान् महावीर ऐसे हैं, श्रमण भगवान् महावीर ऐसे हैं—ये शब्द सर्वत्र फैल गए।

१०. श्रमण भगवान् महावीर स्वप्न में महान् मंदर पर्वत की मंदर चूलिका पर अवस्थित सिंहासन पर अपने आपको बैठे हुए देख कर प्रतिबुद्ध हुए, उसके फलस्वरूप श्रमण भगवान् महावीर ने देव, मनुष्य और असुर की परिषद् के बीच केवलि-प्रज्ञप्त धर्म का आख्यान, प्रज्ञापन, प्ररूपण, दर्शन, निदर्शन और उपदर्शन किया।

स्वप्न-फल-पद

९२. स्त्री अथवा पुरुष स्वप्न के अंत में एक महान् अश्व-पंक्ति, गज-पंक्ति, नर-पंक्ति, किन्नर-पंक्ति, किंपुरुष-पंक्ति, महोरग-पंक्ति, गंधर्व-पंक्ति, वृषभ-पंक्ति को देखता हुआ देखता है, चढता हुआ चढता है, मैं चढ गया हूं, ऐसा स्वयं को मानता है, उसी क्षण वह जागृत हो जाए तो उसी भव-ग्रहण में सिद्ध होता है यावत् सब दुःखों का अंत करता है।

९३. स्त्री अथवा पुरुष स्वप्न के अंत में पूर्व से पश्चिम तक फैली हुई, समुद्र के दोनों छोरों का स्पर्श करती हुई एक महान् रस्सी को देखता हुआ देखता है, समेटता हुआ समेटता है। मैंने समेटा है, ऐसा स्वयं को मानता है, वह उसी क्षण जागृत हो जाए तो उसी भव-ग्रहण में सिद्ध होता है यावत् सब दुःखों का अंत करता है।

९४. स्त्री अथवा पुरुष स्वप्न के अंत में पूर्व से पश्चिम तक फैली हुई लोक के दोनों छोरों का स्पर्श करती हुई एक महान् रज्जु को देखता हुआ देखता है, काटता हुआ काटता है। मैंने काट दिया है, ऐसा स्वयं को मानता है, वह उसी क्षण जागृत हो जाए तो उसी भव-ग्रहण में सिद्ध होता है यावत् सब दुःखों का अंत करता है।

९५. स्त्री अथवा पुरुष स्वप्न के अंत में एक महान् काले सूत्र, नीले सूत्र, लाल सूत्र, पीले सूत्र अथवा श्वेत सूत्र को देखता हुआ देखता है, सुलझाता हुआ सुलझाता है, मैंने इसे सुलझाया है, ऐसा स्वयं को मानता है, वह उसी क्षण जागृत हो जाए तो उसी भव-ग्रहण में सिद्ध होता है यावत् सब दुःखों का अंत करता है।

९६. स्त्री अथवा पुरुष स्वप्न के अंत में एक महान् लोह-राशि, ताम्र-राशि, रांगा-राशि, सीसा राशि को देखता हुआ देखता है, उस पर चढता हुआ चढ़ता है। मैं चढ़ गया हूं, ऐसा स्वयं

को मानता है। वह उसी क्षण जागृत हो जाए तो दूसरे भव-ग्रहण में सिद्ध होता है यावत् सब दुःखों का अंत करता है।

९७. स्त्री अथवा पुरुष स्वप्न के अंत में एक महान् हिरण्य-राशि, स्वर्ण-राशि, रजत-राशि, वज्र-राशि को देखता हुआ देखता है, उस पर चढता हुआ चढता है। मैं चढ गया हूं, ऐसा स्वयं को मानता है। वह उसी क्षण जागृत हो जाए तो उसी भव-ग्रहण में सिद्ध होता है यावत् सब दुःखों का अंत करता है।

९८. स्त्री अथवा पुरुष स्वप्न के अंत में एक महान् तृण के ढेर, काठ के ढेर, पत्तों के ढेर, छाल के ढेर, तुष के ढेर, भूसे के ढेर, गोमय (गोबर) के ढेर, अकूरडी के ढेर को देखता हुआ देखता है, उसे बिखेरता हुआ बिखेरता है, मैंने बिखेर दिया है, ऐसा स्वयं को मानता है, वह उसी क्षण जागृत हो जाए तो उसी भव-ग्रहण में सिद्ध यावत् सब दुःखों का अंत करता है।

९९. स्त्री अथवा पुरुष स्वप्न के अंत में एक महान् शरकंडे के स्तम्भ, वीरण के स्तम्भ, वंशीमूल के स्तम्भ, वल्लीमूल के स्तम्भ को देखता हुआ देखता है, उन्मूलन करता हुआ उन्मूलन करता है, मैंने उन्मूलन कर दिया है, ऐसा स्वयं को मानता है। वह उसी क्षण जागृत हो जाए तो उसी भव-ग्रहण में सिद्ध यावत् सब दुःखों का अंत करता है।

१००. स्त्री अथवा पुरुष स्वप्न के अंत में क्षीर-कुंभ, दधि-कुंभ, घृत-कुंभ, मधु-कुंभ को देखता हुआ देखता है, उठाता हुआ उठाता है, मैंने उठाया है, ऐसा स्वयं को मानता है। वह उसी क्षण जागृत हो जाए तो उसी भव-ग्रहण में सिद्ध यावत् सब दुःखों का अंत करता है।

१०१. स्त्री अथवा पुरुष स्वप्न के अन्त में एक महान् मदिरा से आकीर्ण कुंभ, कांजी के जल से आकीर्ण-कुंभ, तेल-कुंभ, वसा-कुंभ को देखता हुआ देखता है, भेदन करता हुआ भेदन करता है। मैंने भेदन कर दिया, ऐसा स्वयं को मानता है। वह उसी क्षण जागृत हो जाए तो दूसरे भव-ग्रहण में सिद्ध होता है यावत् सब दुःखों का अंत करता है।

१०२. स्त्री अथवा पुरुष स्वप्न के अंत में एक महान् कुसुमित पद्म-सरोवर को देखता हुआ देखता है, अवगाहन करता हुआ अवगाहन करता है, मैंने अवगाहन कर लिया, ऐसा स्वयं को मानता है। वह उसी क्षण जागृत हो जाए तो उसी भव-ग्रहण में सिद्ध होता है यावत् सब दुःखों का अंत करता है।

१०३. स्त्री अथवा पुरुष स्वप्न के अंत में एक हजारों ऊर्मियों और तरंगों से युक्त एक महान् समुद्र को देखता हुआ देखता है, तरता हुआ तरता है, मैं तर गया, ऐसा स्वयं को मानता है। वह उसी क्षण जागृत हो जाए तो उसी भव-ग्रहण में सिद्ध होता है यावत् सब दुःखों का अंत करता है।

१०४. स्त्री अथवा पुरुष स्वप्न के अंत में एक महान् रत्नमय मकान को देखता हुआ देखता है, अनुप्रवेश करता हुआ अनुप्रवेश करता है, मैं अनुप्रविष्ट हो चुका हूं, ऐसा स्वयं को मानता है। वह उसी क्षण जागृत हो जाए तो उसी भव-ग्रहण में सिद्ध होता है यावत् सब दुःखों का अन्त करता है।

१०५. स्त्री अथवा पुरुष स्वप्न के अंत में एक महान् सर्वरत्नमय विमान को देखता हुआ देखता

है, उस पर चढ़ता हुआ चढता है, मैं चढ़ गया हूं, ऐसा स्वयं को मानता है, वह उसी क्षण जागृत हो जाए तो उसी भव-ग्रहण में सिद्ध होता है यावत् सब दुःखों का अंत करता है।

गंध-पुद्गल-पद

१०६. भंते! कोष्ठ-पुट यावत् केतकी-पुट (**रायपसेणइयं,** सू. ३०) आघ्राता—गंध ग्रहण करने वाले पुरुष की अनुकूल दिशा में खोले जा रहे हैं, ढक्कन उतारे जा रहे हैं, उत्कीर्ण किया जा रहा है, विकीर्ण किया जा रहा है, एक स्थान से दूसरे स्थान पर संक्रांत किया जा रहा है, इस अवस्था में कोष्ठ-पुट नाक के पास आता है? यावत् केतकी-पुट नाक के पास आता है?

गौतम! न कोष्ठ-पुट नाक के पास आता है, न केतकी-पुट नाक के पास आता है। गंध-सह-गत पुद्गल नाक के पास आते हैं।

१०७. भंते! वह एसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

सातवां उद्देशक

१०८. भंते! उपयोग कितने प्रकार का प्रज्ञप्त है?

गौतम! उपयोग दो प्रकार का प्रज्ञप्त है—इस प्रकार **पण्णवणा** का उपयोग-पद (**पण्णवणा,** पद २९) निरवशेष ज्ञातव्य है और दर्शन-पद (**पण्णवणा,** पद ३०) भी ज्ञातव्य है।

१०९. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

आठवां उद्देशक

लोक के चरमान्त में जीव-अजीव-आदि का मार्गणा-पद

११०. भंते! लोक कितना बड़ा प्रज्ञप्त है?

गौतम! लोक विशालतम प्रज्ञप्त है, जैसे बारहवें शतक (**भ.** १२/१३०; २/३४) में वैसे ही यावत् परिधि में असंख्येय-योजन-क्रोड़ाक्रोड़-प्रमाण है।

१११. भंते! लोक के पूर्व चरमान्त में क्या जीव हैं? जीव-देश हैं? जीव-प्रदेश हैं? अजीव हैं? अजीव-देश हैं? अजीव-प्रदेश हैं?

गौतम! जीव नहीं हैं। जीव के देश भी हैं, जीव के प्रदेश भी हैं। अजीव भी हैं, अजीव के देश भी हैं, अजीव के प्रदेश भी हैं। जो जीव के देश हैं, वे नियमतः एकेन्द्रिय के देश हैं अथवा एकेन्द्रिय के देश और द्वीन्द्रिय का देश है—इस प्रकार दसवें शतक (**भ.** १०/६) में आग्नेयी-दिशा की भांति वक्तव्यता, इतना विशेष है—देशों में प्रथम विकल्प-विरहित अनिन्द्रियों की वक्तव्यता। जो अरूपी अजीव हैं, उनके छह प्रकार हैं। अध्वा-समय नहीं है। शेष पूर्ववत् निरवेशष वक्तव्य है।

११२. भंते! लोक के दक्षिण चरमान्त में क्या जीव हैं?

पूर्ववत्। इसी प्रकार पश्चिम चरमान्त, इसी प्रकार उत्तर चरमान्त की वक्तव्यता।

११३. भंते! लोक के उर्ध्व चरमान्त में क्या जीव हैं–पृच्छा।

गौतम! जीव नहीं हैं। जीव के देश भी हैं यावत् अजीव के प्रदेश भी हैं। जो जीव के देश हैं वे नियमतः एकेन्द्रिय के देश हैं और अनिन्द्रिय के देश हैं। अथवा एकेन्द्रिय के देश हैं, अनिन्द्रिय के देश हैं और द्वीन्द्रिय का देश है। अथवा एकेन्द्रिय के देश हैं, अनिन्द्रिय के देश हैं और द्वीन्द्रियों के देश हैं। इस प्रकार मध्यम-विकल्प-विरहित यावत् पंचेन्द्रियों की *वक्तव्यता।* जो जीव के प्रदेश हैं, वे नियमतः एकेन्द्रिय के प्रदेश हैं और अनिन्द्रिय के प्रदेश हैं। अथवा एकेन्द्रिय के प्रदेश हैं, अनिन्द्रिय के प्रदेश हैं और द्वीन्द्रिय के प्रदेश हैं। अथवा एकेन्द्रिय के प्रदेश हैं, अनिन्द्रिय के प्रदेश हैं और द्वीन्द्रियों के प्रदेश हैं। इस प्रकार प्रथम--विकल्प-विरहित यावत् पंचेन्द्रियों की वक्तव्यता। अजीव जैसे दशम शतक (भ. १०/७) में तमा की वक्तव्यता वैसे ही निरवशेष वक्तव्य है।

११४. भंते! लोक के अधस्तन चरमान्त में जीव–पृच्छा।

गौतम! जीव नहीं हैं। जीव के देश भी हैं यावत् अजीव के प्रदेश भी हैं। जो जीव के देश हैं, वे नियमतः एकेन्द्रिय के देश हैं। अथवा एकेन्द्रिय के देश हैं और द्वीन्द्रिय का देश है, अथवा एकेन्द्रिय के देश हैं और द्वीन्द्रियों के देश हैं। इस प्रकार मध्यम-विकल्प-विरहित यावत् अनिन्द्रियों की वक्तव्यता। सबके प्रदेश आदि विकल्प-विरहित पूर्व चरमान्त की भांति वक्तव्य है। जीवों की ऊर्ध्व चरमान्त की भांति वक्तव्यता।

११५. भंते! इस रत्नप्रभा-पृथ्वी के पूर्व चरमान्त में क्या जीव हैं? पृच्छा।

गौतम! जीव नहीं हैं। इस प्रकार जैसे लोक की वक्तव्यता वैसे ही चारों चरमान्त की वक्तव्यता यावत् उत्तर चरमान्त, ऊर्ध्व चरमान्त की दशम शतक (भ. १०/१-७) में विमला-दिशा की भांति निरवशेष वक्तव्यता। लोक के निम्नवर्ती भाग के चरमान्त की भांति अधःस्तन चरमान्त की वक्तव्यता, इतना विशेष है। पंचेन्द्रिय में देश के तीन भंग वक्तव्य हैं, शेष पूर्ववत्। जिस प्रकार रत्नप्रभा के चार चरमान्तों की वक्तव्यता उसी प्रकार शर्कराप्रभा की वक्तव्यता। उपरिवर्ती और निम्नवर्ती भाग की रत्नप्रभा के निम्नवर्ती भाग की भांति वक्तव्यता। इस प्रकार यावत् अधःसप्तमी की वक्तव्यता। इसी प्रकार सौधर्म यावत् अच्युत की वक्तव्यता। ग्रैवेयक विमानों की पूर्ववत् वक्तव्यता, इतना विशेष है–ऊर्ध्व एवं अधोवर्ती चरमान्तों में पंचेन्द्रियों के देशों में मध्यम विकल्प-विरहित। शेष पूर्ववत्। ग्रैवेयक-विमानों की भांति अनुत्तर-विमान और ईषत्-प्राग्भारा की वक्तव्यता।

परमाणु-पुद्गल का गति-पद

११६. भंते! परमाणु-पुद्गल पूर्व चरमान्त से पश्चिम चरमान्त में एक समय में जाता है? पश्चिम चरमान्त से पूर्व चरमान्त में एक समय में जाता है? दक्षिण चरमान्त से उत्तर चरमान्त में एक समय में जाता है? उत्तर चरमान्त से दक्षिण चरमान्त में एक समय में जाता है? ऊर्ध्व चरमान्त से अधस्तन चरमान्त में एक समय में जाता है? अधस्तन चरमान्त से ऊर्ध्व चरमान्त में एक समय में जाता है?

हां गौतम! परमाणु-पुद्गल लोक के पूर्व चरमान्त से पूर्ववत् यावत् ऊर्ध्व चरमान्त में एक समय में जाता है।

क्रिया-पद

११७. भंते! वर्षा हो रही है या नहीं हो रही है—यह जानने के लिए हाथ, पैर, बाहु, जंघा का आकुंचन और प्रसारण करते हुए पुरुष के कितनी क्रिया लगती है?

गौतम! वर्षा हो रही है या वर्षा नहीं हो रही है—यह जानने के लिए पुरुष जिस समय हाथ, पैर, बाहु, जंघा का आकुंचन अथवा प्रसारण करता है उस समय वह पुरुष कायिकी, आधिकरणिकी, प्रादोषिकी, पारितापनिकी, प्राणातिपात-क्रिया—इन पांच क्रियाओं से स्पृष्ट होता है।

अलोक-गति निषेध-पद

११८. भंते! महर्द्धिक यावत् महान् ऐश्वर्यशाली के रूप में प्रख्यात देव लोकान्त में स्थित होकर अलोक में हाथ, पैर, बाहु अथवा जंघा का आकुंचन एवं प्रसारण करने में समर्थ है?

यह अर्थ संगत नहीं है।

११९. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—महर्द्धिक यावत् महान् ऐश्वर्यशाली के रूप में प्रख्यात देव लोक के अंत में स्थित होकर अलोक में हाथ, पैर, बाहु अथवा जंघा का आकुंचन एवं प्रसारण करने में समर्थ नहीं है?

गौतम! पुद्गल जीवों का अनुगमन करते हैं, वे आहार के रूप में उपचित हैं, वे बोंदी के रूप में चित हैं, वे कलेवर के रूप में चित हैं। पुद्गलों का आश्रय लेकर जीवों और अजीवों का गति-पर्याय कहा गया है। अलोक में जीव नहीं हैं, पुद्गल नहीं हैं। गौतम! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—महर्द्धिक यावत् महान् ऐश्वर्यशाली के रूप में प्रख्यात देव लोक के अंत में स्थित होकर अलोक में हाथ, पैर, बाहु अथवा जंघा का आकुंचन एवं प्रसारण करने में समर्थ नहीं है।

१२०. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

नौवां उद्देशक

बलि का सभा-पद

१२१. भंते! वैरोचनेन्द्र वैरोचनराज बलि की सभा कहां प्रज्ञप्त है?

गौतम! जंबूद्वीप द्वीप में मेरु पर्वत से उत्तर भाग में तिरछे असंख्य द्वीप-समुद्र चमर की भांति (भ. २/११८) यावत् बयांलीस हजार योजन अवगाहन करने पर वैरोचनेन्द्र वैरोचनराज बलि का रुचकेन्द्र नाम का उत्पात पर्वत प्रज्ञप्त है—उसकी ऊंचाई सतरह सौ इक्कीस योजन प्रज्ञप्त है। प्रमाण तिगिच्छकूट प्रसादावतंसक की भांति वक्तव्य है। बलि का सिंहासन उसके परिवार के सिंहासनों-सहित वक्तव्य है। इतना विशेष है—वे रुचकेन्द्र प्रभा वाले हैं, रुचकेन्द्र प्रभा वाले हैं, रुचकेन्द्र प्रभा वाले हैं। शेष पूर्ववत् यावत् बलिचंचा राजधानी में दूसरों पर यावत्

उस रुचकेन्द्र उत्पात पर्वत के उत्तर से छह सौ करोड़ उसी प्रकार यावत् चालीस हजार योजन अवगाहन करने पर वैरोचनेन्द्र वैरोचनराज की बलिचंचा नामक राजधानी प्रज्ञप्त है—एक लाख योजन प्रमाण, उसी प्रकार यावत् बलिपीठ का उपपात यावत् सर्व आत्मरक्षक देव निरवशेष वक्तव्य हैं, इतना विशेष है—स्थिति सागरोपम से कुछ अधिक प्रज्ञप्त है। शेष पूर्ववत् यावत् (**भ.** २/११८-१२१) वैरोचनेन्द्र बलि, वैरोचनेन्द्र बलि।

१२२. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है। यावत् विहरण करने लगे।

दसवां उद्देशक

अवधि-पद

१२३. भंते! अवधि कितने प्रकार का प्रज्ञप्त है?

गौतम! अवधि दो प्रकार का प्रज्ञप्त है। अवधि-पद (**पण्णवणा,** पद ३३) निरवशेष वक्तव्य है।

१२४. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है। यावत् विहरण करने लगे।

ग्यारहवां उद्देशक

द्वीपकुमार-आदि-पद

१२५. भंते! क्या सब द्वीपकुमार समान आहार वाले हैं? समान उच्छ्वास-निःश्वास वाले हैं?

यह अर्थ संगत नहीं है। इस प्रकार जैसे प्रथम शतक के द्वितीय उद्देशक (**भगवइ** १/७४-७५) में द्वीपकुमारों की वक्तव्यता, उसी प्रकार यावत् समान आयुष्य और समान उच्छ्वास-निःश्वास वाले नहीं हैं।

१२६. भंते! द्वीपकुमारों में कितनी लेश्याएं प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! चार लेश्याएं प्रज्ञप्त हैं, जैसे—कृष्ण-लेश्या, नील-लेश्या, कापोत-लेश्या, तेजो-लेश्या।

१२७. भंते! कृष्ण-लेश्या वाले यावत् तेजो-लेश्या वाले इन द्वीपकुमारों में कौन किससे अल्प, बहुत, तुल्य अथवा विशेषाधिक हैं?

गौतम! तेजो-लेश्या वाले द्वीपकुमार सबसे अल्प हैं। कापोत-लेश्या वाले उनसे असंख्येय-गुण हैं। नील-लेश्या वाले उनसे विशेषाधिक हैं। कृष्ण-लेश्या वाले उनसे विशेषाधिक हैं।

१२८. भंते! कृष्ण-लेश्या वाले यावत् तेजो-लेश्या वाले इन द्वीपकुमारों में कौन किससे अल्पर्द्धिक अथवा महर्द्धिक हैं?

गौतम! नील-लेश्या वाले कृष्ण-लेश्या वालों से महर्द्धिक हैं यावत् तेजो-लेश्या वाले सबसे महर्द्धिक हैं।

१२९. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है। यावत् विहरण करने लगे।

बारहवां से चौदहवां उद्देशक

१३०. भंते! क्या सब उदधिकुमार समान आहार वाले हैं?

पूर्ववत्, द्वीपकुमार की भांति वक्तव्यता।

१३१. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

१३२. इसी प्रकार दिशाकुमार भी वक्तव्य हैं।

१३३. इसी प्रकार स्तनितकुमार भी वक्तव्य हैं।

१३४. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है, यावत् विहरण करने लगे।

• • •

सतरहवां शतक

पहला उद्देशक

श्रुत-देवता भगवती को नमस्कार।

संग्रहणी गाथा

१. हाथी २. संयत ३. शैलेशी ४. क्रिया ५. ईशान ६-७. पृथ्वी ८-९. पानी १०-११. वायु १२. एकेन्द्रिय १३. नाग १४. सुपर्ण १५. विद्युत् १६-१७. वायु, अग्नि—प्रस्तुत शतक के ये सत्तरह उद्देशक हैं।

हस्तिराज-पद

१. राजगृह नगर यावत् गौतम ने इस प्रकार कहा—भंते! हस्तिराज उदायी कहां से अनंतर उद्वर्तन कर हस्तिराज उदायी के रूप में उपपन्न हुआ है?

गौतम! असुरकुमार-देव से अनंतर उद्वर्तन कर हस्तिराज उदायी के रूप में उपपन्न हुआ है।

२. भंते! हस्तिराज उदायी कालमास में काल-धर्म को प्राप्त कर कहां जाएगा? कहां उपपन्न होगा?

गौतम! इसी रत्नप्रभा-पृथ्वी के उत्कृष्ट सागरोपम स्थिति वाले नरकावासों में नैरयिक के रूप में उपपन्न होगा।

३. भंते! वह वहां से अनंतर उद्वर्तन कर कहां जाएगा? कहां उपपन्न होगा?

गौतम! महाविदेह-वास में सिद्ध होगा यावत् सब दुःखों का अन्त करेगा।

४. भंते! हस्तिराज भूतानंद कहां से अनंतर उद्वर्तन कर हस्तिराज भूतानन्द के रूप में उपपन्न हुआ है?

इसी प्रकार उदायी की भांति वक्तव्यता यावत् सब दुःखों का अंत करेगा।

क्रिया-पद

५. भंते! कोई पुरुष ताड़ के वृक्ष पर चढ़ता है। चढ़कर ताड़-वृक्ष के ताड़-फल को हिलाता है अथवा गिराता है, वह पुरुष कितनी क्रिया से स्पृष्ट होता है?

गौतम! जिस समय वह ताड़-वृक्ष पर चढ़ता है। चढ़कर ताड़-वृक्ष से ताड़-फल को हिलाता अथवा गिराता है उस समय वह पुरुष कायिकी यावत् पांच क्रियाओं से स्पृष्ट

होता है। जिन जीवों के शरीर से ताड़-वक्ष निष्पन्न हुआ है, ताड़-फल निष्पन्न हुआ है, वे जीव भी कायिकी यावत् पांच क्रियाओं से स्पृष्ट होते हैं।

६. भंते! वह ताड़-फल अपनी गुरुता से, भारीपन से, गुरुत्व-भारीपन से स्वाभाविक रूप से नीचे आता हुआ वहां रहे हुए प्राण यावत् सत्त्वों का प्राण वियोजन करता है, भंते! तब वह पुरुष कितनी क्रियाओं से स्पृष्ट होता है?

गौतम! जिस समय वह ताड़-फल अपनी गुरुता से यावत् प्राण का वियोजन करता है, तब वह पुरुष कायिकी यावत् चार क्रियाओं से स्पृष्ट होता है। जिन जीवों के शरीर से ताड़--वृक्ष निष्पन्न हुआ है, वे जीव भी कायिकी यावत् चार क्रियाओं से स्पृष्ट होते हैं। जिन जीवों के शरीर से ताड़-फल निष्पन्न हुआ है, वे जीव कायिकी यावत् पांच क्रियाओं से स्पृष्ट होते हैं। जो जीव नीचे गिरते हुए ताड़-फल के आलंबन बनते हैं, वे जीव भी कायिकी यावत् पांच क्रियाओं से स्पृष्ट होते हैं।

७. भंते! कोई वृक्ष के मूल को हिलाता अथवा गिराता है, वह पुरुष कितनी क्रिया से स्पृष्ट होता है?

गौतम! जिस समय वह पुरुष वृक्ष के मूल को हिलाता अथवा गिराता है, उस समय वह पुरुष कायिकी यावत् पांच क्रियाओं से स्पृष्ट होता है। जिन जीवों के शरीर से वह मूल निष्पन्न हुआ यावत् बीज निष्पन्न हुआ, वे जीव भी कायिकी यावत् पांच क्रिया से स्पृष्ट होते हैं।

८. भंते! वह मूल अपनी गुरुता से यावत् प्राण का वियोजन करता है, तब वह पुरुष कितनी क्रिया से स्पृष्ट होता है?

गौतम! जिस समय वह मूल अपनी गुरुता से यावत् प्राण का वियोजन करता है, उस समय वह पुरुष कायिकी यावत् चार क्रियाओं से स्पृष्ट होता है। जिन जीवों के शरीर से कंद निष्पन्न हुआ यावत् बीज निष्पन्न हुआ, वे जीव भी कायिकी यावत् चार क्रियाओं से स्पृष्ट होते हैं। जिन जीवों के शरीर से मूल निष्पन्न हुआ है, वे जीव कायिकी यावत् पांच क्रियाओं से स्पृष्ट होते हैं। जो जीव स्वभाव से नीचे गिरते हुए मूल के आलंबन बनते हैं, वे जीव भी कायिकी यावत् पांच क्रियाओं से स्पृष्ट होते हैं।

९. भंते! कोई वृक्ष के कंद को हिलाता अथवा गिराता है। वह पुरुष कितनी क्रिया से स्पृष्ट होता है?

गौतम! जिस समय वह पुरुष वृक्ष के कंद को हिलाता अथवा गिराता है, उस समय वह कायिकी यावत् पांच क्रियाओं से स्पृष्ट होता है। जिन जीवों के शरीर से मूल निष्पन्न हुआ यावत् बीज निष्पन्न हुआ, वे जीव भी कायिकी यावत् पांच क्रियाओं से स्पृष्ट होते हैं।

१०. भंते! वह कंद अपनी गुरुता से यावत् प्राण का वियोजन करता है, भंते! तब वह पुरुष कितनी क्रिया से स्पृष्ट होता है?

गौतम! जिस समय वह कंद अपनी गुरुता से यावत् प्राण का वियोजन करता है, उस समय वह पुरुष कायिकी यावत् चार क्रियाओं स स्पृष्ट होता है। जिन जीवों के शरीर से

मूल निष्पन्न हुआ, स्कंध निष्पन्न हुआ यावत् बीज निष्पन्न हुआ, वे जीव भी कायिकी यावत् चार क्रियाओं से स्पृष्ट होते हैं। जिन जीवों के शरीर से कंद निष्पन्न हुआ, वे जीव कायिकी यावत् पांच क्रियाओं से स्पृष्ट होते हैं। जो जीव स्वभाव से नीचे गिरते हुए कंद का आलंबन बनते हैं, वे जीव भी कायिकी यावत् पांच क्रियाओं से स्पृष्ट होते हैं।

इसी प्रकार कंद की भांति यावत् बीज की वक्तव्यता।

११. भंते! शरीर कितने प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! शरीर पांच प्रज्ञप्त हैं—औदारिक यावत् कार्मण।

१२. भंते! इन्द्रियां कितनी प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! इन्द्रियां पांच प्रज्ञप्त हैं, जैसे—श्रोत्रेन्द्रिय यावत् स्पर्शनेन्द्रिय।

१३. भंते! योग कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! योग तीन प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—मन-योग, वचन-योग, काय- योग।

१४. भंते! औदारिक-शरीर को निष्पन्न करता हुआ जीव कितनी क्रिया से स्पृष्ट होता है?

गौतम! स्यात् तीन क्रिया से, स्यात् चार क्रिया से, स्यात् पांच क्रिया से। इसी प्रकार पृथ्वीकायिक की वक्तव्यता, इसी प्रकार यावत् मनुष्य की वक्तव्यता।

१५. भंते! औदारिक शरीर को निष्पन्न करते हुए जीव कितनी क्रियाओं से स्पृष्ट होते हैं?

गौतम! तीन क्रियाओं से भी, चार क्रियाओं से भी, पांच क्रियाओं से भी। इसी प्रकार पृथ्वीकायिक जीवों की वक्तव्यता, इसी प्रकार यावत् मनुष्यों की वक्तव्यता। इसी प्रकार वैक्रिय-शरीर के भी दो दण्डक वक्तव्य है, इतना विशेष है—जिसके वैक्रिय शरीर है। इसी प्रकार यावत् कर्म-शरीर की वक्तव्यता। इसी प्रकार श्रोत्रेन्द्रिय यावत् स्पर्शनेन्द्रिय की वक्तव्यता। इसी प्रकार मन-योग, वचन-योग और काय-योग की वक्तव्यता। जिन जीवों के जो है, वह वक्तव्य है।

ये एकत्व और बहुत्व की दृष्टि से छब्बीस दंडक होते हैं।

भाव-पद

१६. भंते! भाव कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! भाव छह प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—औदयिक, औपशमिक, क्षायिक, क्षायोपशमिक, पारिणामिक, सांनिपातिक।

१७. भंते! वह औदयिक-भाव क्या है?

औदयिक-भाव दो प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—उदय और उदय-निष्पन्न। इस प्रकार इस अभिलाप के अनुसार जैसे **अणुओगदाराइं** में छह नाम (**अणुओगदाराइं**, २७३-२९७) वैसे ही निरवशेष वक्तव्य है यावत् यह है सांनिपातिक भाव।

१८. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

दूसरा उद्देशक

धर्माधर्म-स्थित-पद

१९. भंते! संयत, विरत, अतीत के पाप-कर्म का प्रतिहनन करने वाला, भविष्य के पाप--कर्म का प्रत्याख्यान करने वाला क्या धर्म में स्थित होता है? असंयत, अविरत, अतीत के पाप-कर्म का प्रतिहनन और भविष्य के पाप-कर्म का प्रत्याख्यान न करने वाला क्या अधर्म में स्थित होता है? क्या संयतासंयत धर्माधर्म में स्थित होता है?

हां, गौतम! संयत, विरत, अतीत के पाप-कर्म का प्रतिहनन करने वाला, भविष्य के पाप--कर्म का प्रत्याख्यान करने वाला धर्म में स्थित होता है। असंयत, अविरत, अतीत के पाप कर्म का प्रतिहनन और भविष्य के पाप कर्म का प्रत्याख्यान न करने वाला अधर्म में स्थित होता है। संयतासंयत धर्माधर्म में स्थित होता है।

२०. भंते! धर्म में, अधर्म में, धर्माधर्म में क्या कोई प्राणी रुक सकता है? सो सकता है? खड़ा रह सकता है? बैठ सकता है? करवट ले सकता है?

गौतम! यह अर्थ संगत नहीं है।

२१. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है यावत् संयतासंयत धर्माधर्म में स्थित होता है?

गौतम! संयत, विरत, अतीत के पाप-कर्म का प्रतिहनन करने वाला और भविष्य के पाप--कर्म का प्रत्याख्यान करने वाला धर्म में स्थित होता है, वह धर्म को ही स्वीकार कर विहार करता है। असंयत, अविरत, अतीत के पापकर्म का प्रतिहनन न करने वाला और भविष्य के पाप-कर्म का प्रत्याख्यान न करने वाला अधर्म में स्थित होता है, वह अधर्म को ही स्वीकार कर विहार करता है। संयतासंयत धर्माधर्म में स्थित होता है, वह धर्माधर्म को स्वीकार कर विहार करता है। इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—यावत् धर्माधर्म में स्थित होता है।

२२. भंते! क्या जीव धर्म में स्थित हैं, अधर्म में स्थित हैं? धर्माधर्म में स्थित हैं?

गौतम! जीव धर्म में भी स्थित हैं, अधर्म में भी स्थित हैं, धर्माधर्म में भी स्थित हैं।

२३. नैरयिकों की पृच्छा।

गौतम! नैरयिक धर्म में स्थित नहीं हैं, अधर्म में स्थित हैं, धर्माधर्म में स्थित नहीं हैं। इसी प्रकार यावत् चतुरिन्द्रियों की वक्तव्यता।

२४. पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों की पृच्छा।

गौतम! पंचेन्द्रिय-तिर्यक्योनिक धर्म में स्थित नहीं हैं, अधर्म में स्थित हैं, धर्माधर्म में भी स्थित हैं। मनुष्यों की जीवों की भांति वक्तव्यता। वाणमंतर, ज्योतिष्क, वैमानिक नैरयिक की भांति वक्तव्य हैं।

बालपंडित-पद

२५. भंते! अन्ययूथिक इस प्रकार आख्यान यावत् प्ररूपणा करते हैं—श्रमण पण्डित हैं,

श्रमणोपासक बाल-पंडित ह, जिसने एक प्राणी का वध भी त्यागा नहीं है, वह एकान्त बाल है—ऐसा वक्तव्य है।

२६. भंते! यह इस प्रकार कैसे है?

गौतम! अन्ययूथिक जो इस प्रकार आख्यान करते हैं यावत् एकान्त बाल है, ऐसा वक्तव्य है—जो ऐसा कहते हैं, वे मिथ्या कहते हैं। गौतम! मैं इस प्रकार आख्यान करता हूं यावत् प्ररूपणा करता हूं—श्रमण पंडित हैं, श्रमणोपासक बाल-पंडित हैं, जिसने एक प्राणी का भी वध त्यागा है, वह एकांत बाल नहीं है, ऐसा वक्तव्य है।

२७. भंते! क्या जीव बाल हैं? पंडित हैं? बाल-पंडित हैं?

गौतम! जीव बाल भी हैं, पंडित भी हैं, बाल-पंडित भी हैं।

२८. नैरयिकों की पृच्छा।

गौतम! नैरयिक बाल हैं, पंडित नहीं हैं, बाल-पंडित नहीं हैं।

इसी प्रकार यावत् चतुरिन्द्रिय की वक्तव्यता।

२९. पंचेन्द्रिय तिर्यग्‌योनिकों की पृच्छा।

गौतम! पंचेन्द्रिय तिर्यक्‌योनिक बाल हैं, पंडित नहीं हैं, बाल-पंडित भी हैं, मनुष्यों की जीवों की भांति वक्तव्यता।

वाणमंतर, ज्योतिष्क और वैमानिक नैरयिक की भांति वक्तव्य हैं।

जीव-जीवात्मा एकत्व-पद

३०. भंते! अन्ययूथिक इस प्रकार आख्यान यावत् प्ररूपणा करते हैं—प्राणातिपात, मृषावाद यावत् मिथ्यादर्शन-शल्य में वर्तमान है उसका जीव अन्य है, जीवात्मा अन्य है। प्राणातिपात-विरमण यावत् परिग्रह-विरमण, क्रोध-विवेक यावत् मिथ्यादर्शनशल्य-विवेक में वर्तमान है उसका जीव अन्य है, जीवात्मा अन्य है। औत्पत्तिकी-, वैनयिकी-, कार्मिकी- और पारिणामिकी-बुद्धि में वर्तमान है उसका जीव अन्य है, जीवात्मा अन्य है। अवग्रह, ईहा, अपाय और धारणा में वर्तमान है उसका जीव अन्य है, जीवात्मा अन्य है। उत्थान, कर्म, बल, वीर्य और पुरुषकार-पराक्रम में वर्तमान है उसका जीव अन्य है, जीवात्मा अन्य है। नैरयिकत्व, तिर्यक्, मनुष्य और देवत्व में वर्तमान है उसका जीव अन्य है, जीवात्मा अन्य है। ज्ञानावरणीय यावत् अंतराय में वर्तमान है उसका जीव अन्य है, जीवात्मा अन्य है। इसी प्रकार कृष्ण-लेश्या यावत् शुक्ल-लेश्या में, सम्यग्-दृष्टि, मिथ्या-दृष्टि और सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि में, इसी प्रकार चक्षु-दर्शन, अचक्षु-दर्शन, अवधि--दर्शन, केवल-दर्शन में, आभिनिबोधिक-ज्ञान, श्रुत-ज्ञान, अवधि-ज्ञान, मनःपर्यव-ज्ञान और केवल-ज्ञान में, मति-अज्ञान, श्रुत-अज्ञान और विभंग-ज्ञान में, आहार-संज्ञा, भय--संज्ञा, मैथुन-संज्ञा और परिग्रह-संज्ञा में, इसी प्रकार औदारिक-शरीर, वैक्रिय-शरीर, आहारक-शरीर, तैजस-शरीर और कार्मण-शरीर में, इसी प्रकार मन-योग, वचन-योग और काय-योग में, साकार-उपयोग और अनाकार-उपयोग में वर्तमान है उसका जीव अन्य है, जीवात्मा अन्य है।

३१. भंते! यह इस प्रकार कैसे हैं?

गौतम! अन्ययूथिक, जो इस प्रकार आख्यान करते हैं यावत् जो ऐसा कहते हैं, वे मिथ्या कहते हैं। गौतम! मैं इस प्रकार आख्यान यावत् प्ररूपणा करता हूं—प्राणातिपात यावत् मिथ्यादर्शन-शल्य में जो वर्तमान है, वही जीव है, वही जीवात्मा है यावत् अनाकार--उपयोग में जो वर्तमान है वही जीव है, वही जीवात्मा है।

रूपी-अरूपी-पद

३२. महर्द्धिक यावत् महान् ऐश्वर्यशाली के रूप में प्रख्यात देव पहले रूपी होकर अरूपी विक्रिया करने में समर्थ है?

गौतम! यह अर्थ संगत नहीं है।

३३. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—महर्द्धिक यावत् महान् ऐश्वर्यशाली के रूप में प्रख्यात देव पहले रूपी होकर अरूपी विक्रिया करने में समर्थ नहीं है?

गौतम! मैं जानता हूं, मैं देखता हूं, मैं यह बोध करता हूं, मैं यह अभिसमन्वागत करता हूं। मैंने यह जाना है, मैंने यह देखा है, मैंने यह बोध किया है, मैंने यह अभिसमन्वागत किया है—जो तथागत जीव सरूपी, कर्म-सहित, राग-सहित, वेद-सहित, मोह-सहित, लेश्या-सहित, शरीर-सहित है, जो जीव इस शरीर से विप्रमुक्त नहीं है उसका इस प्रकार प्रज्ञापन किया जाता है, जैसे—कालापन यावत् शुक्लत्व, सुरभि-गन्धत्व यावत् दुरभि--गंधत्व, तिक्तता यावत् मधुरता, कर्कशता यावत् रूक्षता। गौतम! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—महर्द्धिक यावत् महान् ऐश्वर्यशाली के रूप में प्रख्यात देव पहले रूपी होकर अरूपी विक्रिया करने में समर्थ नहीं हैं।

३४. भंते! वही जीव पहले अरूपी होकर रूपी विक्रिया करने में समर्थ है?

यह अर्थ संगत नहीं है।

३५. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—वही जीव पहले अरूपी होकर रूपी विक्रिया करने में समर्थ नहीं है?

गौतम! मैं यह जानता हूं, मैं यह देखता हूं, मैं यह बोध करता हूं, मैं यह अभिसमन्वागत करता हूं। मैंने यह जाना है, मैंने यह देखा है, मैंने यह बोध किया है, मैंने यह अभिसमन्वागत किया है—जो तथागत जीव अरूपी कर्म-रहित, राग-रहित, वेद-रहित, मोह-रहित, लेश्या-रहित, शरीर-रहित है, जो जीव इस शरीर से विप्रमुक्त है उसका इस प्रकार प्रज्ञापन नहीं किया जाता, जैसे—कालापन यावत् शुक्लता, सुरभि-गंधत्व यावत् दुरभि-गंधत्व, तिक्तता यावत् मधुरता, कर्कशता यावत् रूक्षता। गौतम! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—वही जीव पहले अरूपी होकर रूपी विक्रिया करने में समर्थ नहीं है।

३६. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

तीसरा उद्देशक

एजना-पद

३७. भंते! शैलेशी-प्रतिपन्नक अणगार सदा प्रतिक्षण एजन, व्येजन, चलन, स्पन्दन, घट्टन, क्षोभ और उदीरणा को प्राप्त होता है तथा उस-उस भाव में परिणत होता है?

यह अर्थ संगत नहीं है। केवल एक पर-प्रयोग छोड़कर।

३८. भंते! एजना कितने प्रकार की प्रज्ञप्त है?

गौतम! पांच प्रकार की प्रज्ञप्त है, जैसे—द्रव्य-एजना, क्षेत्र-एजना, काल-एजना, भव-एजना, भाव-एजना।

३९. भंते! द्रव्य-एजना कितने प्रकार की प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! चार प्रकार की प्रज्ञप्त है, जैसे—नैरयिक-द्रव्य-एजना, तिर्यग्योनिक-द्रव्य-एजना, मनुष्य-द्रव्य-एजना, देव-द्रव्य-एजना।

४०. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—नैरयिक-द्रव्य-एजना नैरयिक-द्रव्य-एजना है?

गौतम! जो नैरयिक नैरयिक-द्रव्य में वर्तन करते थे, वर्तन करते हैं, वर्तन करेंगे, उन नैरयिकों ने वहां नैरयिक-द्रव्य में वर्तमान नैरयिक-द्रव्यों की एजना की थी, एजना करते हैं, एजना करेंगे। इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—यावत् नैरयिक-द्रव्य-एजना है।

भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—तिर्यग्योनिक-द्रव्य-एजना तिर्यग्योनिक-द्रव्य-एजना है?

गौतम! जो तिर्यग्योनिक तिर्यग्योनिक-द्रव्य में वर्तन करते थे, वर्तन करते हैं, वर्तन करेंगे, उन तिर्यग्योनिकों ने वहां तिर्यग्योनिक-द्रव्य में वर्तमान तिर्यग्योनिक द्रव्यों की एजना की थी, एजना करते हैं, एजना करेंगे। इस अपेक्षा से कहा जा रहा है—यावत् तिर्यग्योनिक-द्रव्य-एजना है।

भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—मनुष्य-द्रव्य-एजना मनुष्य-द्रव्य-एजना है?

गौतम! जो मनुष्य मनुष्य-द्रव्य में वर्तन करते थे, वर्तन करते हैं, वर्तन करेंगे, उन मनुष्यों ने वहां मनुष्य-द्रव्य में वर्तमान मनुष्य-द्रव्यों की एजना की थी, एजना करते हैं, एजना करेंगे। इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—यावत् मनुष्य-द्रव्य-एजना है।

भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—देव-द्रव्य-एजना देव-द्रव्य-एजना है?

गौतम! जो देव देव-द्रव्य में वर्तन करते थे, वर्तन करते हैं, वर्तन करेंगे, उन देवों ने वहां देव-द्रव्य में वर्तमान देव-द्रव्यों की एजना की थी, एजना करते हैं, एजना करेंगे। इस अपेक्षा से कहा जा रहा है—यावत् देव-द्रव्य-एजना है।

४१. भंते! क्षेत्र-एजना कितने प्रकार की प्रज्ञप्त है?

गौतम! चार प्रकार की प्रज्ञप्त है, जैसे—नैरयिक-क्षेत्र-एजना यावत् देव-क्षेत्र-एजना।

४२. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—नैरयिक-क्षेत्र-एजना नैरयिक-क्षेत्र-एजना है?

पूर्ववत्! इतना विशेष है—नैरयिक-क्षेत्र-एजना वक्तव्य है। इसी प्रकार यावत् देव-क्षेत्र-एजना। इसी प्रकार काल-एजना, इसी प्रकार भव-एजना, इसी प्रकार भाव-एजना, इसी प्रकार यावत् देव-भाव-एजना की वक्तव्यता।

चलना-पद

४३. भंते! चलना कितने प्रकार की प्रज्ञप्त है?

गौतम! चलना तीन प्रकार की प्रज्ञप्त है, जैसे—शरीर-चलना, इन्द्रिय-चलना, योग-चलना।

४४. भंते! शरीर-चलना कितने प्रकार की प्रज्ञप्त है?

गौतम! पांच प्रकार की प्रज्ञप्त है, जैसे—औदारिक-शरीर-चलना यावत् कार्मण-शरीर-चलना।

४५. भंते! इन्द्रिय-चलना कितने प्रकार की प्रज्ञप्त है?

गौतम! पांच प्रकार की प्रज्ञप्त है, जैसे—श्रोत्रेन्द्रिय-चलना यावत् स्पर्शनेन्द्रिय-चलना।

४६. भंते! योग-चलना कितने प्रकार की प्रज्ञप्त है?

गौतम! तीन प्रकार की प्रज्ञप्त है, जैसे—मन-योग-चलना, वचन-योग-चलना, काय-योग-चलना।

४७. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—औदारिक-शरीर-चलना औदारिक-शरीर-चलना है?

गौतम! औदारिक-शरीर में वर्तमान जीव औदारिक-शरीर-प्रायोग्य द्रव्यों को औदारिक-शरीर के रूप में परिणत करते हुए औदारिक-शरीर की चलना करते थे, चलना करते हैं, चलना करेंगे। इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—यावत् औदारिक-शरीर-चलना है।

भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—वैक्रिय-शरीर-चलना वैक्रिय-शरीर-चलना है।

पूर्ववत्, इतना विशेष है—वैक्रिय-शरीर में वर्तमान जीव। इसी प्रकार यावत् कार्मण-शरीर-चलना की वक्तव्यता।

भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—श्रोत्रेन्द्रिय-चलना श्रोत्रेन्द्रिय-चलना है?

गौतम! श्रोत्रेन्द्रिय में वर्तमान जीव श्रोत्रेन्द्रिय-प्रायोग्य-द्रव्यों को श्रोत्रेन्द्रिय के रूप परिणत करते हुए श्रोत्रेन्द्रिय की चलना करते थे, चलना करते हैं, चलना करेंगे। इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—यावत् श्रोत्रेन्द्रिय-चलना है। इसी प्रकार यावत् स्पर्शनेन्द्रिय-चलना की वक्तव्यता।

भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—मन-योग-चलना मन-योग-चलना है?

गौतम! मन-योग में वर्तमान जीव मन-योग-प्रायोग्य-द्रव्यों को मन-योग के रूप में परिणत करते हुए मन-योग की चलना करते थे, चलना करते हैं, चलना करेंगे। इस अपेक्षा से यह

कहा जा रहा है—यावत् मन-योग-चलना है। इसी प्रकार वचन-योग-चलना की, इसी प्रकार काय-योग-चलना की वक्तव्यता।

संवेग-आदि-पद

४८. भंते! संवेग, निर्वेद, गुरु-साधर्मिक-शुश्रूषा, आलोचना, निंदा, गर्हा, क्षमापना, व्यवशमन, श्रुत-सहायता, भाव-अप्रतिबद्धता, विनिवर्तन, विविक्तशयनासनसेवन, श्रोत्रेन्द्रिय-संवर यावत् स्पर्शनेन्द्रिय-संवर, योग-प्रत्याख्यान, शरीर-प्रत्याख्यान, कषाय-प्रत्याख्यान, संभोज-प्रत्याख्यान, उपधि-प्रत्याख्यान, भक्त-प्रत्याख्यान, क्षमा, विराग, भाव-सत्य, योग-सत्य, करण-सत्य, मन-समन्वाहरण, वचन-समन्वाहरण, काय-समन्वाहरण, क्रोध-विवेक यावत् मिथ्या-दर्शन-शल्य-विवेक, ज्ञान-संपन्न, दर्शन-संपन्न, चरित्र-संपन्न, वेदना-अधिसहन, मारणान्तिक-अधिसहन—इनका पर्यवसान-फल क्या प्रज्ञप्त है, आयुष्मन् श्रमण!

गौतम! संवेग, निर्वेद यावत् मारणान्तिक-अधिसहन का पर्यवसान-फल सिद्धि प्रज्ञप्त है आयुष्मन् श्रमण!

४९. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है। यावत् विहरण करने लगे।

चौथा उद्देशक

क्रिया-पद

५०. उस काल और उस समय में राजगृह नगर यावत् गौतम ने इस प्रकार कहा—भंते! क्या जीवों के प्राणातिपात-क्रिया होती है?

हां, होती है।

५१. भंते! क्या वह स्पृष्ट होती है? अस्पृष्ट होती है?

गौतम! वह स्पृष्ट होती है, अस्पृष्ट नहीं होती यावत् व्याघात न होने पर छहों दिशाओं में, व्याघात होने पर स्यात् तीन, स्यात् चार, स्यात् पांच दिशाओं में होती है।

५२. भंते! क्या वह कृत होती है? अकृत होती है?

गौतम! वह कृत होती है, अकृत नहीं होती।

५३. भंते! क्या वह आत्म-कृत होती है? पर-कृत होती है? उभय-कृत होती है?

गौतम! वह आत्म-कृत होती है। पर-कृत नहीं होती। उभय-कृत भी नहीं होती।

५४. भंते! क्या वह आनुपूर्वी-कृत होती है? अनानुपूर्वी-कृत होती है?

गौतम! आनुपूर्वी-कृत होती है, अनानुपूर्वी-कृत नहीं होती। जो क्रिया की गई है, जो की जा रही है, जो की जाएगी, वह सर्व आनुपूर्वी-कृत है, अनानुपूर्वी-कृत नहीं, ऐसा कहा जा सकता है। इस प्रकार यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता, इतना विशेष है—एकेन्द्रिय-जीवों के व्याघात न होने पर छहों दिशाओं में, व्याघात होने पर स्यात् तीन, स्यात् चार और स्यात् पांच दिशाओं में। शेष का नियम छह दिशाओं में है।

५५. भंते! जीवों के मृषावाद-क्रिया होती है?

हां, होती है।

५६. भंते! क्या वह स्पृष्ट होती है? अस्पृष्ट होती है?

प्राणातिपात की भांति मृषावाद का दंडक वक्तव्य है। इसी प्रकार अदत्तादान, मैथुन, परिग्रह की वक्तव्यता। इस प्रकार ये पांच दंडक हैं।

५७. भंते! जिस समय जीवों के प्राणातिपात-क्रिया होती है, भंते! क्या वह स्पृष्ट होती है? अस्पृष्ट होती है? इसी प्रकार यावत् वक्तव्य है, यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता। इसी प्रकार परिग्रह की वक्तव्यता। इसी प्रकार ये पांच दंडक हैं।

५८. भंते! जिस देश में जीवों के प्राणातिपात-क्रिया होती है? पूर्ववत् यावत् परिग्रह की वक्तव्यता। ये पांच दंडक हैं।

५९. भंते! जिस प्रदेश में जीवों के प्राणातिपात-क्रिया होती है। भंते! क्या वह स्पृष्ट होती है? इसी प्रकार दंडक वक्तव्य है। इसी प्रकार यावत् परिग्रह की वक्तव्यता। इस प्रकार ये बीस दंडक हैं।

दुःख-वेदना-पद

६०. भंते! क्या जीवों के दुःख आत्म-कृत है, क्या दुःख पर-कृत है? क्या दुःख उभय-कृत है?

गौतम! दुःख आत्म-कृत है। दुःख पर-कृत नहीं है, दुःख उभय-कृत नहीं है। इसी प्रकार यावत् वैमानिक की वक्तव्यता।

६१. भंते! क्या जीव आत्म-कृत दुःख का वेदन करते हैं, पर-कृत दुःख का वेदन करते हैं? उभय-कृत दुःख का वेदन करते हैं?

गौतम! आत्म-कृत दुःख का वेदन करते हैं, पर-कृत दुःख का वेदन नहीं करते, उभय-कृत दुःख का वेदन नहीं करते। इसी प्रकार यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता।

६२. भंते! क्या जीवों के वेदना आत्म-कृत है? क्या वेदना पर-कृत है? क्या वेदना उभय-कृत है?

गौतम! वेदना आत्म-कृत है, वेदना पर-कृत नहीं है, वेदना उभय-कृत नहीं है। इसी प्रकार यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता।

६३. भंते! क्या जीव आत्म-कृत वेदना का वेदन करते हैं? पर-कृत वेदना का वेदन करते हैं? उभय-कृत वेदना का वेदन करते हैं?

गौतम! जीव आत्म-कृत वेदना का वेदन करते हैं, पर-कृत वेदना का वेदन नहीं करते, उभय-कृत वेदना का वेदन नहीं करते। इसी प्रकार यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता।

६४. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

पांचवां उद्देशक

ईशान-पद

६५. भंते! देवराज देवेन्द्र ईशान की सुधर्मा-सभा कहां प्रज्ञप्त है?

गौतम! जंबूद्वीप द्वीप में मंदर पर्वत के उत्तर में इस रत्नप्रभा-पृथ्वी के बहुसम एवं रमणीय भूभाग से ऊर्ध्व में चंद्र, सूर्य, ग्रह-गण, नक्षत्र, तारा-रूप जैसे स्थान-पद (**पण्णवणा,** २/५१) की भांति यावत् मध्य में ईशानावतंसक है। वह ईशानावतंसक- महाविमान साढ़े बारह लाख योजन का है। इस प्रकार जैसे दसवें शतक (**भ.** १०/९९) में शक्र-विमान की जो वक्तव्यता है, वह ईशान की निरवशेष वक्तव्य है यावत् आत्मरक्षक। स्थिति सातिरेक दो सागरोपम है। शेष पूर्ववत् यावत् देवराज देवेन्द्र ईशान देवराज देवेन्द्र ईशान हैं।

६६. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

छठा उद्देशक

पृथ्वीकायिक-आदि का देश-सर्व-मारणान्तिक-समुद्घात-पद

६७. भंते! इस रत्नप्रभा-पृथ्वी पर पृथ्वीकायिक समवहत होता है, समवहत होकर जो भव्य सौधर्म-कल्प में पृथ्वीकायिक के रूप में उपपन्न होने वाला है। भंते! क्या पहले उपपन्न होकर पश्चात् स्थान को संप्राप्त करता है? पहले स्थान को संप्राप्त कर पश्चात् उपपन्न होता है?

गौतम! पहले उपपन्न होकर पश्चात् स्थान को संप्राप्त करता है। पहले स्थान को संप्राप्त कर पश्चात् उपपन्न होता है।

६८. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है यावत् पश्चात् उपपन्न होता है?

गौतम! पृथ्वीकायिक जीवों के तीन समुद्घात प्रज्ञप्त हैं, जैसे—वेदना-समुद्घात, कषाय-समुद्घात, मारणान्तिक-समुद्घात। मारणान्तिक-समुद्घात से समवहत होता हुआ देश-समवहत भी होता है, सर्व-समवहत भी होता है। देश से समवहत होता हुआ पहले स्थान को संप्राप्त कर पश्चात् उपपन्न होता है। सर्व से समवहत होता हुआ पहले उपपन्न होकर पश्चात् स्थान को संप्राप्त करता है। इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—यावत् पश्चात् उपपन्न होता है।

६९. भंते! क्या पृथ्वीकायिक इस रत्नप्रभा-पृथ्वी पर समवहत होता है, समवहत होकर ईशान-कल्प में पृथ्वीकायिक के रूप में उपपन्न होने के योग्य है?

ईशान में भी पूर्ववत्। इसी प्रकार यावत् अच्युत, ग्रैवेयक-विमान में, अनुत्तर-विमान में, इसी प्रकार ईषत्-प्राग्भारा में।

७०. भंते! पृथ्वीकायिक जीव शर्कराप्रभा-पृथ्वी पर समवहत होता है, समवहत होकर सौधर्म-कल्प में पृथ्वीकायिक के रूप में उपपन्न होने के योग्य है?

इस प्रकार जैसे रत्नप्रभा के पृथ्वीकायिक का उपपात बतलाया गया है। वैसे ही शर्कराप्रभा के पृथ्वीकायिक का उपपात भी वक्तव्य है यावत् ईषत्-प्राग्भारा में। इस प्रकार जैसे

रत्नप्रभा की वक्तव्यता, इसी प्रकार यावत् अधःसप्तमी में समवहत होकर ईषत्-प्राग्भारा में उपपात की वक्तव्यता। शेष पूर्ववत्।

७१. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

सातवां उद्देशक

७२. भंते! पृथ्वीकायिक सौधर्म-कल्प पर समवहत होता है। समवहत होकर जो भव्य इसी रत्नप्रभा-पृथ्वी में पृथ्वीकायिक के रूप में उपपन्न होने वाला है। भंते! क्या वह पहले उपपन्न होगा, पश्चात् स्थान को संप्राप्त करेगा?

शेष पूर्ववत्। जैसे रत्नप्रभा के पृथ्वीकायिक का सर्व कल्पों में यावत् ईषत्-प्राग्भारा में उपपात, इसी प्रकार सौधर्म-पृथ्वीकायिक का सातों पृथ्वियों में उपपात वक्तव्य है यावत् अधःसप्तमी में। इस प्रकार जैसे सौधर्म-पृथ्वीकायिक का सब पृथ्वियों में उपपात। इसी प्रकार यावत् ईषत्-प्राग्भारा-पृथ्वीकायिक से सर्व पृथ्वियों में उपपात यावत् अधःसप्तमी में।

७३. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

आठवां उद्देशक

७४. भंते! इस रत्नप्रभा-पृथ्वी पर अप्कायिक समवहत होता है। समवहत होकर जो भव्य सौधर्म-कल्प में अप्कायिक के रूप में उपपन्न होने वाला है?

इसी प्रकार पृथ्वीकायिक की भांति अप्कायिक का सर्व कल्पों में यावत् ईषत्-प्राग्भारा में उपपात होता है। इस प्रकार जैसे रत्नप्रभा के अप्कायिक का उपपात होता है वैसे ही अधःसप्तमी के अप्कायिक का उपपात वक्तव्य है यावत् ईषत्-प्राग्भारा में।

७५. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

नवम उद्देशक

७६. भंते! सौधर्म-कल्प में अप्कायिक समवहत होता है। समवहत होकर जो भव्य इस रत्नप्रभा-पृथ्वी के घनोदधि-वलय में अप्कायिक के रूप में उपपन्न होने वाला है, भंते! क्या वह पहले उपपन्न होता है, पश्चात् स्थान को संप्राप्त करता है?

पूर्ववत्। इसी प्रकार यावत् अधःसप्तमी में। इसी प्रकार सौधर्म-अप्कायिक की भांति यावत् ईषत्-प्राग्भारा के अप्कायिक का यावत् अधःसप्तमी में उपपात वक्तव्य हैं।

७७. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

दसवां उद्देशक

७८. भंते! इस रत्नप्रभा-पृथ्वी पर वायुकायिक जीव, यावत् जो भव्य सौधर्म-कल्प में वायुकायिक के रूप में उपपन्न होने वाला है। भंते! क्या वह पहले उपपन्न होता है। पश्चात् स्थान को संप्राप्त करता है।

पृथ्वीकायिक की भांति वायुकायिक की वक्तव्यता। इतना विशेष है—वायुकायिक जीवों के

चार समुद्घात प्रज्ञप्त हैं, जैसे—वेदना-समुद्घात यावत् वैक्रिय-समुद्घात, मारणान्तिक-समुद्घात से समवहत होता हुआ वह देश से समवहत होता है, शेष पूर्ववत् यावत् अधःसप्तमी से समवहत होकर ईषत्-प्राग्भारा में उपपात वक्तव्य है।

७९. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

ग्यारहवां उद्देशक

८०. भंते! सौधर्म-कल्प पर वायुकायिक समवहत होता है, समवहत होकर जो भव्य इसी रत्नप्रभा-पृथ्वी के घनवात, तनुवात, घनवात-वलयों में, तनवात-वलयों में वायुकायिक के रूप में उपपन्न होने वाला है, भंते! क्या वह पहले उपपन्न होता है, पश्चात् स्थान को संप्राप्त करता है।

पूर्ववत्। इसी प्रकार सौधर्म-कल्प के वायुकायिक का सातों पृथ्वियों में उपपात वक्तव्य है। इसी प्रकार यावत् ईषत्-प्राग्भारा वायुकायिक का अधःसप्तमी में यावत् उपपात वक्तव्य है।

८१. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

बारहवां उद्देशक

एकेन्द्रिय-पद

८२. भंते! सब एकेन्द्रिय-जीव समान आहार वाले हैं?

इस प्रकार जैसे प्रथम शतक के द्वितीय उद्देशक (भ. १/७६-८१) में पृथ्वीकायिक-जीवों की वक्तव्यता, वही एकेन्द्रिय-जीवों की यहां वक्तव्य है यावत् समान आयु वाले नहीं है, एक साथ उपपन्न नहीं है।

८३. भंते! एकेन्द्रिय-जीवों के कितनी लेश्याएं प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! चार लेश्याएं प्रज्ञप्त हैं जैसे—कृष्ण-लेश्या, नील-लेश्या, कापोत-लेश्या, तेजो-लेश्या।

८४. भंते! इन कृष्ण-लेश्या, नील-लेश्या, कापोत-लेश्या और तेजो-लेश्या वालों में कौन किससे अल्प, बहुत, तुल्य अथवा विशेषाधिक है?

गौतम! तेजो-लेश्या वाले एकेन्द्रिय सबसे अल्प हैं, कापोत-लेश्या वाले उनसे अनन्त-गुण हैं, नील-लेश्या वाले उनसे विशेषाधिक हैं, कृष्ण-लेश्या वाले उनसे विशेषाधिक हैं।

८५. भंते! इन कृष्ण-लेश्या वाले एकेन्द्रिय-जीवों की ऋद्धि?

द्वीपकुमार (भ. १६/१२८) की भांति वक्तव्यता।

८६. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

तेरहवां से सत्रहवां उद्देशक

नागकुमार-आदि-पद

८७. भंते! सब नागकुमार समान आहार वाले हैं? सोलहवें शतक के दीपकुमार-उद्देशक

(भ. १६/१२५-१२९) की भांति निरवशेष वक्तव्यता यावत् ऋद्धि।

८८. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है। यावत् विहरण करने लगे।

८९. भंते! सब सुपर्णकुमार समान आहार वाले हैं?

पूर्ववत्।

९०. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

९१. भंते! सब विद्युत्कुमार समान आहार वाले हैं?

पूर्ववत्।

९२. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

९३. भंते! सब वायुकुमार समान आहार वाले हैं?

पूर्ववत्।

९४. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

९५. भंते! सब अग्निकुमार समान आहार वाले हैं?

पूर्ववत्।

९६. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

• • •

अठारहवां शतक

पहला उद्देशक

संग्रहणी गाथा

१. प्रथम २. विशाखा ३. माकंदिक ४. प्राणातिपात ५. असुर ६. गुड़ ७. केवली ८. अनगार ९. भव्य १०. सोमिल—ये अठारहवें शतक के दस उद्देशक हैं।

प्रथम-अप्रथम-पद

१. उस काल और उस समय में राजगृह नगर यावत् गौतम ने इस प्रकार कहा—भंते! जीव जीव-भाव से प्रथम है? अप्रथम है?

गौतम! प्रथम नहीं है, अप्रथम है। इस प्रकार नैरयिक यावत् वैमानिक की वक्तव्यता।

२. भंते! क्या सिद्ध सिद्ध-भाव से प्रथम है? अप्रथम है?

गौतम! प्रथम है, अप्रथम नहीं है।

३. भंते! जीव जीव-भाव से प्रथम हैं? अप्रथम हैं?

गौतम! प्रथम नहीं हैं। अप्रथम हैं। इस प्रकार यावत् वैमानिक की वक्तव्यता।

४. सिद्धों की—पृच्छा।

गौतम! प्रथम हैं, अप्रथम नहीं हैं।

५. भंते! आहारक-जीव आहार-भाव से क्या प्रथम है? अप्रथम है?

गौतम! प्रथम नहीं है, अप्रथम है। इस प्रकार यावत् वैमानिक की वक्तव्यता। इस प्रकार बहुवचन की वक्तव्यता।

६. भंते! अनाहारक-जीव अनाहार-भाव से—पृच्छा।

गौतम! स्यात् प्रथम है, स्यात् अप्रथम है।

७. भंते! नैरयिक-जीव अनाहारक-भाव से—पृच्छा।

इसी प्रकार नैरयिक यावत् वैमानिक प्रथम नहीं हैं, अप्रथम है। सिद्ध प्रथम है, अप्रथम नहीं है।

८. भंते! अनाहारक-जीव अनाहारक-भाव से—पृच्छा।

गौतम! प्रथम भी हैं, अप्रथम भी हैं। नैरयिक यावत् वैमानिक प्रथम नहीं हैं, अप्रथम हैं। सिद्ध प्रथम हैं, अप्रथम नहीं हैं—एक-एक पृच्छा वक्तव्य है।

९. भवसिद्धिक के एकत्व-बहुत्व की आहारक की भांति वक्तव्यता। इसी प्रकार अभवसिद्धिक की वक्तव्यता। भंते! नोभवसिद्धिक-नोअभवसिद्धिक-जीव की नोभवसिद्धिक-नोअभवसिद्धिक-भाव से—पृच्छा।

गौतम! प्रथम है, अप्रथम नहीं है। भंते! नोभवसिद्धिक-नोअभवसिद्धिक-सिद्ध की नोभवसिद्धिक-नोअभवसिद्धिक-भाव से—पृच्छा।

इस प्रकार बहुवचन के द्वारा दोनों की वक्तव्यता।

१०. भंते! क्या संज्ञी-जीव संज्ञी-भाव से प्रथम हैं—पृच्छा।

गौतम! प्रथम नहीं है, अप्रथम है। इसी प्रकार विकलेन्द्रिय को छोड़कर यावत् वैमानिक की वक्तव्यता। इसी प्रकार बहुवचन की भी वक्तव्यता। इसी प्रकार असंज्ञी के एकत्व-बहुत्व की वक्तव्यता, इतना विशेष है—यावत् वाणमंतर। नोसंज्ञी-नोअसंज्ञी-जीव मनुष्य, सिद्ध प्रथम है, अप्रथम नहीं है। इसी प्रकार बहुवचन की भी वक्तव्यता।

११. भंते! सलेश्य की—पृच्छा।

गौतम! आहारक की भांति वक्तव्यता। इसी प्रकार बहुवचन की भी वक्तव्यता। इसी प्रकार कृष्ण-लेश्या वाले यावत् शुक्ल-लेश्या वाले की वक्तव्यता, इतना विशेष है—जिसके जो लेश्या है। अलेश्य-जीव मनुष्य सिद्ध की नोसंज्ञी-नोअसंज्ञी की भांति वक्तव्यता।

१२. भंते! सम्यग्-दृष्टि-जीव क्या सम्यग्-दृष्टि भाव से प्रथम है—पृच्छा। गौतम! स्यात् प्रथम है, स्यात् अप्रथम है। इसी प्रकार एकेन्द्रिय को छोड़कर यावत् वैमानिक की वक्तव्यता। सिद्ध प्रथम है, अप्रथम नहीं हैं। बहुवचन से सम्यग्-दृष्टि जीव प्रथम भी हैं, अप्रथम भी हैं। इसी प्रकार यावत् वैमानिक की वक्तव्यता। सिद्ध प्रथम हैं, अप्रथम नहीं हैं। मिथ्या-दृष्टि एकत्व-बहुत्व की आहारक की भांति वक्तव्यता। सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि की एकत्व-बहुत्व की सम्यग् दृष्टि की भांति वक्तव्यता। सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि की एकत्व-बहुत्व। की सम्यग्-दृष्टि की भांति वक्तव्यता, इतना विशेष है—जिसके सम्यग्-मिथ्यात्व है।

१३. संयत जीव मनुष्य के एकत्व-बहुत्व की सम्यग्-दृष्टि की भांति वक्तव्यता। असंयत की आहारक की भांति वक्तव्यता। संयतासंयत-जीव पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक मनुष्य के एकत्व-बहुत्व की सम्यग्-दृष्टि की भांति वक्तव्यता। नोसंयत-नोअसंयत-नोसंयतासंयत-जीव, सिद्ध एकत्व-बहुत्व में प्रथम हैं, अप्रथम नहीं है।

१४. सकषायी क्रोध-कषायी यावत् लोभ-कषायी—इनके एकत्व-बहुत्व की आहारक की भांति वक्तव्यता। सकषायी जीव स्यात् प्रथम है, स्यात् अप्रथम है। इसी प्रकार मनुष्य की भी वक्तव्यता। सिद्ध प्रथम है, अप्रथम नहीं है। बहुवचन में मनुष्य जीव प्रथम भी हैं, अप्रथम भी हैं। सिद्ध प्रथम हैं, अप्रथम नहीं हैं।

१५. ज्ञानी के एकत्व-बहुत्व की सम्यग्-दृष्टि की भांति वक्तव्यता। आभिनिबोधिक-ज्ञानी यावत् मनःपर्यव-ज्ञानी की एकत्व-बहुत्व में पूर्ववत् वक्तव्यता, इतना विशेष है—जिसके जो है। केवल-ज्ञानी जीव, मनुष्य, सिद्ध एकत्व-बहुत्व में प्रथम है, अप्रथम नहीं है। अज्ञानी,

मति-अज्ञानी, श्रुत-अज्ञानी, विभंग-ज्ञानी की एकत्व-बहुत्व में आहारक की भांति वक्तव्यता।

१६. सयोगी, मन-योगी, वचन-योगी, काय-योगी के एकत्व-बहुत्व की आहारक की भांति वक्तव्यता, इतना विशेष है–जिसके जो योग है। अयोगी-जीव सिद्ध, मनुष्य एकत्व-बहुत्व में प्रथम है, अप्रथम नहीं है।

१७. साकारोपयुक्त, अनाकारोपयुक्त के एकत्व-बहुत्व की अनाहारक की भांति वक्तव्यता।

१८. सवेदक यावत् नपुंसकवेदक के एकत्व-बहुत्व की आहारक की भांति वक्तव्यता, इतना विशेष है–जिसके जो वेद है। अवेदक के एकत्व-बहुत्व की तीनों पदों में अकषायी की भांति वक्तव्यता।

१९. सशरीरी की आहारक की भांति वक्तव्यता। इसी प्रकार यावत् कर्मक-शरीरी की वक्तव्यता, जिसके जो शरीर है। इतना विशेष है–आहारक-शरीरी की एकत्व-बहुत्व में सम्यग्-दृष्टि की भांति वक्तव्यता। अशरीरी जीव सिद्ध एकत्व-बहुत्व में प्रथम हैं, अप्रथम नहीं हैं।

२०. पांच पर्याप्तियों से पर्याप्तक, पांच पर्याप्तियों से अपर्याप्तक के एकत्व-बहुत्व की आहारक की भांति वक्तव्यता, इतना विशेष है–जिसके जो पर्याप्ति, अपर्याप्ति है यावत् वैमानिक प्रथम नहीं हैं, अप्रथम हैं। यह लक्षण गाथा है–

जो जिस भाव को प्राप्त कर चुका वह भाव उसके लिए अप्रथम होता है। शेष अप्राप्त पूर्व भावों में जीव प्रथम होता है।

चरम-अचरम-पद

२१. भंते! क्या जीव भाव से चरम है? अचरम है?

गौतम! चरम नहीं है, अचरम है।

२२. भंते! नैरयिक नैरयिक-भाव से–पृच्छा।

गौतम! स्यात् चरम है, स्यात् अचरम है। इसी प्रकार यावत् वैमानिक की वक्तव्यता। सिद्ध की जीव की भांति वक्तव्यता।

२३. जीवों की–पृच्छा।

गौतम! चरम नहीं हैं, अचरम हैं। नैरयिक चरम भी हैं, अचरम भी हैं। इसी प्रकार यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता। सिद्धों की जीवों की भांति वक्तव्यता।

२४. आहारक सर्वत्र एकत्व में स्यात् चरम है, स्यात् अचरम है। बहुवचन में चरम भी हैं, अचरम भी हैं। अनाहारक-जीव, सिद्ध एकवचन-बहुवचन में चरम नहीं हैं, अचरम हैं। शेष स्थानों में एकवचन-बहुवचन की आहारक की भांति वक्तव्यता।

२५. भवसिद्धिक-जीव-पद में एकवचन-बहुवचन में चरम हैं, अचरम नहीं हैं। शेष स्थानों में आहारक की भांति वक्तव्यता। अभवसिद्धिक सर्वत्र एकवचन-बहुवचन में चरम नहीं है, अचरम है। नोभवसिद्धिक-नोअभवसिद्धिक-जीवों, सिद्धों के एकवचन-बहुवचन की

अभवसिद्धिक की भांति वक्तव्यता।

२६. संज्ञी की आहारक की भांति वक्तव्यता। इसी प्रकार असंज्ञी की आहारक की भांति वक्तव्यता। नोसंज्ञी-नोअसंज्ञी-जीव-पद में, सिद्ध-पद में अचरम हैं, मनुष्य-पद-में एकवचन, बहुवचन में चरम हैं।

२७. सलेश्य यावत् शुक्ल-लेश्या वाले की आहारक की भांति वक्तव्यता, इतना विशेष है—जिसके जो है। अलेश्य की नोसंज्ञी-नोअसंज्ञी की भांति वक्तव्यता।

२८. सम्यग्-दृष्टि की अनाहारक की भांति वक्तव्यता। मिथ्यादृष्टि की आहारक की भांति वक्तव्यता। एकेन्द्रिय-विकलेन्द्रिय को छोड़कर सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि स्यात् चरम हैं, स्यात् अचरम हैं। बहुवचन में चरम भी हैं, अचरम भी हैं।

२९. संयत-जीव-पद एवं मनुष्य-पद की आहारक की भांति वक्तव्यता। असंयत की भी उसी प्रकार वक्तव्यता। संयतासंयत की आहारक की भांति वक्तव्यता, इतना विशेष है—जिसके जो है। नोसंयत, नोअसंयत, नोसंयतासंयत की नोभवसिद्धिक-नोअभवसिद्धिक की भांति वक्तव्यता।

३०. सकषायी यावत् लोभ-कषायी की सब स्थानों में आहारक की भांति वक्तव्यता। अकषायी-जीव-पद, सिद्ध में चरम नहीं है, अचरम है। मनुष्य-पद में स्यात् चरम है, स्यात् अचरम है।

३१. ज्ञानी की सर्वत्र सम्यग्-दृष्टि की भांति वक्तव्यता। आभिनिबोधिक-ज्ञानी यावत् मनःपर्यव-ज्ञानी की आहारक की भांति वक्तव्यता, इतना विशेष है—जिनके जो है। केवलज्ञानी की नोसंज्ञी-नोअसंज्ञी की भांति वक्तव्यता। अज्ञानी यावत् विभंग-ज्ञानी की आहारक की भांति वक्तव्यता।

३२. सयोगी यावत् काययोगी की आहारक की भांति वक्तव्यता। जिसके जो योग है। अयोगी की नोसंज्ञी-नोअसंज्ञी की भांति वक्तव्यता।

३३. साकारोपयुक्त-अनाकारोपयुक्त की अनाहारक की भांति वक्तव्यता।

३४. सवेदक यावत् नपुंसक-वेदक की आहारक की भांति वक्तव्यता, अवेदक की अकषायी की भांति वक्तव्यता।

३५. सशरीरी यावत् कर्मक-शरीरी की आहारक की भांति वक्तव्यता, इतना विशेष है—जिसके जो है। अशरीरी की नोभवसिद्धिक-नोअभवसिद्धिक की भांति वक्तव्यता।

३६. पांच पर्याप्तियों से पर्याप्तक, पांच अपर्याप्तियों से अपर्याप्तक की आहारक की भांति वक्तव्यता। सर्वत्र एकवचन-बहुवचन में ये दण्डक वक्तव्य हैं। यह लक्षण गाथा है—

जो जिस भाव को पुनः प्राप्त करता है, वह उस भाव से अचरम होता है। जिसका जिस भाव से अत्यन्त वियोग हो जाता है, वह उस भाव से चरम होता है।

३७. भंते! वह ऐसा ही होता है। भंते! वह ऐसा ही है। यावत् विहरण करने लगे।

दूसरा उद्देशक

शक्र का कार्तिक श्रेष्ठी नामक पूर्व-भव-पद

३८. उस काल और उस समय में विशाखा नाम की नगरी थी—वर्णक। बहु-पुत्रिक चैत्य—वर्णक। स्वामी समवसृत हुए यावत् परिषद् पर्युपासना करने लगी। उस काल और उस समय में देवराज देवेन्द्र वज्रपाणी पुरन्दर शक्र—इस प्रकार सोलहवें शतक के द्वितीय उद्देशक (**भ.** १६/३३, ३/२७) की भांति दिव्ययान विमान से आए, इतना विशेष है—उनके आभियोगिक-देव भी थे यावत् बत्तीस प्रकार की नाट्यविधि का प्रदर्शन कर यावत् उसी दिशा में लौट गए।

३९. अयि भंते! भगवान् गौतम ने श्रमण भगवान् महावीर को वंदन-नमस्कार किया, वंदन--नमस्कार कर इस प्रकार कहा—तृतीय शतक (**भ.** ३/२८-३०) में ईशान की वक्तव्यता, उसी प्रकार कूटागार दृष्टान्त, पूर्वभव पृच्छा यावत् अभिसमन्वागत किया है।

४०. अयि गौतम! श्रमण भगवान् महावीर ने भगवान् गौतम से इस प्रकार कहा—गौतम! उस काल और उस समय में इसी जंबूद्वीप द्वीप में, भारतवर्ष में हस्तिनापुर नाम का नगर था—वर्णक। सहस्राम्रवन उद्यान—वर्णक। उस हस्तिनापुर नगर में कार्तिक नाम का श्रेष्ठी रहता था आढ्य यावत् बहुजन के द्वारा अपरिभूत। वणिकों में उसका आसन पहला था। एक हजार आठ वणिकों के बहुत से कार्यों, कारणों, सामुदायिक कर्तव्यों, मंत्रणाओं, गोपनीय कार्यों, रहस्यों और निश्चयों में उसका मत पूछा जाता था, पुनः-पुनः पूछा जाता था। वह मेढ़ी-प्रमाण, आधार, आलंबन और चक्षु तथा मेढ़ीभूत, प्रमाणभूत, आधारभूत, आलंबनभूत और चक्षुभूत था। एक हजार आठ वणिकों के स्वजन और कुटुम्ब का आधिपत्य, पौरपत्य, स्वामित्व, भर्तृत्व (पोषण) तथा आज्ञा देने में समर्थ, सेनापतित्व करता था, अन्य वणिकों से आज्ञा का पालन करवाता था। वह श्रमणोपासक जीव-अजीव को जानने वाला यावत् यथापरिगृहीत तपःकर्म के द्वारा आत्मा को भावित करते हुए रह रहा था।

४१. उस काल और उस समय में अर्हत् आदिकर मुनिसुव्रत सोलहवें शतक (**भ.** १६/६७,६८) की भांति वक्तव्यता। यावत् समवसृत हुए, यावत् परिषद पर्युपासना करने लगी।

४२. कार्तिक श्रेष्ठी इस कथा को सुनकर हृष्ट-तुष्ट हो गया। इस प्रकार ग्यारहवें शतक में सुदर्शन (**भ.** ११/११६) की भांति घर से प्रतिनिष्क्रमण किया यावत् पर्युपासना की।

४३. अर्हत् मुनिसुव्रत ने उस विशालतम परिषद में कार्तिक श्रेष्ठी को धर्म कहा यावत् परिषद लौट गई।

४४. कार्तिक श्रेष्ठी अर्हत् मुनिसुव्रत के पास धर्म को सुनकर, अवधारण कर हृष्ट-तुष्ट होकर उठा। उठकर अर्हत् मुनिसुव्रत को वंदन-नमस्कार किया, वंदन-नमस्कार कर इस प्रकार बोला—भंते! यह ऐसा ही है यावत् जैसा आप कह रहे हैं, इतना विशेष है—देवानुप्रिय! एक हजार आठ वणिकों को पूछूंगा, ज्येष्ठपुत्र को कुटुम्ब में स्थापित करूंगा, उसके बाद मैं देवानुप्रिय के पास प्रव्रजित होऊंगा।

देवानुप्रिय! जैसे सुख हो, प्रतिबंध मत करो।

४५. कार्तिक श्रेष्ठी ने यावत् प्रतिनिष्क्रमण किया, प्रतिनिष्क्रमण कर जहां हस्तिनापुर नगर था, जहां अपना घर था, वहां आया। आकर एक हजार आठ वणिकों को बुलाया, बुलाकर इस प्रकार कहा—देवानुप्रियो! मैंने अर्हत् मुनिसुव्रत के पास धर्म को सुना, वही धर्म मुझे इष्ट, प्रतीप्सित और अभिरुचित है। देवानुप्रियो! मैं संसार के भय से उद्विग्न यावत् प्रव्रजित होऊंगा। देवानुप्रियो! तुम क्या सोचते हो? क्या निश्चय कर रहे हो? हृदय से तुम क्या चाहते हो? तुम्हारे सामर्थ्य कैसी है?

४६. एक हजार आठ वणिकों ने कार्तिक श्रेष्ठी से इस प्रकार कहा—देवानुप्रिय! यदि तुम संसार-भय से उद्विग्न हो यावत् प्रव्रजित होओगे। देवानुप्रिय! हमारे लिए दूसरा कौन आलंबन है? कौन आधार है और कौन प्रतिबंध है? देवानुप्रिय! हम भी संसारभय से उद्विग्न, जन्म और मरण से भीत, देवानुप्रिय के साथ अर्हत् मुनिसुव्रत के पास मुंड होकर अगार से अनगारिता में प्रव्रजित होना चाहते हैं।

४७. कार्तिक श्रेष्ठी ने उन एक हजार आठ वणिकों से इस प्रकार कहा—देवानुप्रियो! यदि संसारभय से उद्विग्न और जन्म-मरण से भीत हो, तुम मेरे साथ अर्हत् मुनिसुव्रत के पास मुंड होकर अगार से अनगारिता में प्रव्रजित होना चाहते हो तो देवानुप्रियो! तुम अपने--अपने घर जाओ, विपुल अशन, पान, खाद्य, स्वाद्य तैयार कराओ। मित्र, ज्ञाति, कुटुम्बी, स्वजन-संबंधी परिजनों को आमंत्रित करो। उन मित्र, ज्ञाति, कुटुम्बी, स्वजन, संबंधी, परिजनों का विपुल अशन, पान, खाद्य और स्वाद्य से, गंध, वस्त्र, माल्य और अलंकार से सत्कार-सम्मान करो, उन्हीं मित्र, ज्ञाति, कुटुम्बी, स्वजन, संबंधी, परिजनों के सामने ज्येष्ठपुत्र को कुटुम्ब में स्थापित करो, स्थापित कर मित्र, ज्ञाति, कुटुम्बी, स्वजन, संबंधी, परिजनों और ज्येष्ठ पुत्र से पूछो, पूछ कर हजारों पुरुषों द्वारा वहन की जानेवाली शिविका में चढ़ो, चढ़कर चलो, पीछे-पीछे चल रहे मित्र, ज्ञाति, कुटुम्बी, स्वजन, संबंधी, परिजनों और ज्येष्ठपुत्र के साथ संपूर्ण ऋद्धि यावत् दुंदुभि के निर्घोष से नादित शब्द के साथ काल का परिक्षेप किए बिना मेरे पास आओ।

४८. उन एक हजार आठ वणिकों ने कार्तिक श्रेष्ठी के इस अर्थ को विनयपूर्वक स्वीकार किया, स्वीकार कर जहां अपने-अपने घर थे, वहां गए, वहां जाकर विपुल अशन, पान, खाद्य और स्वाद्य तैयार कराया, तैयार करा कर मित्र ज्ञाति, कुटुम्बी, स्वजन, संबंधी, परिजनों का विपुल अशन, पान, खाद्य और स्वाद्य से वस्त्र, माल्य, गंध और अलंकार से सत्कार-सम्मान किया। उन्हीं मित्र, ज्ञाति, कुटुम्बी, स्वजन, संबंधी, परिजनों के सामने ज्येष्ठ पुत्र को कुटुम्ब में स्थापित किया, स्थापित कर मित्र, ज्ञाति, कुटुम्बी, स्वजन, संबंधी, परिजनों और ज्येष्ठ पुत्र से पूछा—पूछ कर हजार पुरुषों द्वारा वहन की जानेवाली शिविका में चढ़े, चढ़कर चले। पीछे-पीछे चल रहे मित्र, ज्ञाति, कुटुम्बी, स्वजन, संबंधी, परिजनों और ज्येष्ठ पुत्रों के साथ संपूर्ण ऋद्धि यावत् दुंदुभि के निर्घोष से नादित शब्द के साथ काल का परिक्षेप किए बिना कार्तिक श्रेष्ठी के पास आए।

४९. कार्तिक श्रेष्ठी ने विपुल अशन, पान, खाद्य और स्वाद्य तैयार कराया। गंगदत्त (भ. १६/७१) की भांति वक्तव्यता यावत् शिविका पर चढ़ा, चढ़ कर चला, पीछे-पीछे चल

रहे मित्र, ज्ञाति, स्वजन, कुटुम्बी, संबंधी, परिजनों ज्येष्ठ पुत्र तथा एक हजार आठ वणिकों के साथ संपूर्ण ऋद्धि यावत् दुन्दुभि के निर्घोष से नादित शब्द के साथ हस्तिनापुर नगर के बीचोंबीच निर्गमन किया, गंगदत्त (भ. १६/७१) की भांति वक्तव्यता यावत् भंते! यह लोक बुढ़ापे और मौत से आदीप्त हो रहा है, जल रहा है। भंते! यह लोक बुढ़ापे और मौत से प्रदीप्त हो रहा है। प्रज्वलित हो रहा है। भंते! यह लोक बुढ़ापे और मौत से आदीप्त-प्रदीप्त हो रहा है यावत् आनुगामिकता के लिए होगा। इसलिए भंते! मैं एक हजार आठ वणिकों के साथ आपके द्वारा ही प्रव्रजित होना चाहता हूं यावत् धर्म का आख्यान चाहता हूं।

५०. अर्हत् मुनिसुव्रत ने एक हजार आठ वणिकों के साथ कार्तिक श्रेष्ठी को स्वयं प्रव्रजित किया, यावत् धर्म का आख्यान किया—देवानुप्रिय! इस प्रकार चलना चाहिए, इस प्रकार ठहरना चाहिए यावत् इस प्रकार संयम से संयत रहना चाहिए।

५१. एक हजार आठ वणिकों के साथ कार्तिक श्रेष्ठी ने अर्हत् मुनिसुव्रत के इस धार्मिक उपदेश को सम्यग् प्रकार से स्वीकार किया—उसे भलीभांति जान कर वैसे ही संयमपूर्वक चलते हैं यावत् संयम से संयत रहते हैं।

५२. एक हजार आठ वणिकों के साथ वह कार्तिक श्रेष्ठी अनगार हो गया—वह विवेकपूर्वक चलता है यावत् ब्रह्मचर्य को सुरक्षित रखता है।

५३. कार्तिक अनगार ने अर्हत् मुनिसुव्रत के तथारूप स्थविरों के पास सामायिक आदि चौदह पूर्वों का अध्ययन किया, अध्ययन कर अनेक षष्ठ-भक्त, दशम-भक्त, द्वादश-भक्त, अर्ध-मास और मास-क्षपण—इस प्रकार विचित्र तपःकर्म के द्वारा आत्मा को भावित करते हुए बहुप्रतिपूर्ण बारह वर्ष श्रामण्य-पर्याय का पालन किया, पालन कर मासिक संलेखना के द्वारा शरीर को कृश किया, कृश कर अनशन के द्वारा साठ-भक्तों का छेदन किया, छेदन कर आलोचना और प्रतिक्रमण कर समाधिपूर्ण दशा में काल-मास में काल को प्राप्त हो गया। वह सौधर्म कल्प में सौधर्मावतंसक विमान में उपपात-सभा के देवदूष्य से आच्छन्न देव-शयनीय में अंगुल के असंख्यातवें भाग जितनी अवगाहना से देवेन्द्र शक्र के रूप में उपपन्न हुआ।

५४. वह देवराज देवेन्द्र शक्र अभी उपपन्न मात्र होने पर पांच प्रकार की पर्याप्ति से पर्याप्त भाव को प्राप्त हो गया; शेष गंगदत्त की भांति वक्तव्यता (भ. १६/७२-७५) यावत् सब दुःखों का अंत करेगा। इतना विशेष है—स्थिति दो सागरोपम है, शेष पूर्ववत्।

५५. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

तीसरा उद्देशक

माकन्दिक-पुत्र-पद

५६. उस काल और उस समय में राजगृह नगर का वर्णक। गुणशिलक चैत्य—वर्णक यावत् परिषद लौट गई। उस काल और उस समय में श्रमण भगवान् महावीर के अंतेवासी माकंदिक-पुत्र नामक अनगार भगवान् के पास आया। वह प्रकृति से भद्र था—मंडितपुत्र की

भांति वक्तव्यता (भ. ३/१३४) यावत् पर्युपासना करता हुआ इस प्रकार बोला—

५७. भंते! कापोत-लेश्या वाला पृथ्वीकायिक कापोत-लेश्या वाले पृथ्वीकायिक से अनंतर उद्वर्तन कर मनुष्य-शरीर को प्राप्त करता है, प्राप्त कर केवल बोधि से बुद्ध होता है, बुद्ध होकर उसके पश्चात् सिद्ध यावत् सब दुःखों का अंत करता है?

हां माकन्दिक-पुत्र! कापोत-लेश्या वाला पृथ्वीकायिक यावत् सब दुःखों का अंत करता है।

५८. भंते! कापोत-लेश्या वाला अप्कायिक जीव कापोत-लेश्या वाले अप्कायिक से अनंतर उद्वर्तन कर मनुष्य-शरीर को प्राप्त करता है, प्राप्त कर केवल बोधि से बुद्ध होता है, यावत् सब दुःखों का अन्त करता है?

हां, माकन्दिक-पुत्र! यावत् सब दुःखों का अंत करता है।

५९. भंते! कापोत-लेश्या वाला वनस्पतिकायिक-जीव कापोत-लेश्या वाले वनस्पतिकायिक से अनन्तर उद्वर्तन कर मनुष्य-शरीर को प्राप्त करता है, प्राप्त कर केवल बोधि से बुद्ध होता है, बुद्ध होकर सिद्ध यावत् सब दुःखों का अंत करता है?

हां, माकन्दिक-पुत्र! यावत् सब दुःखों का अंत करता है।

६०. भंते! वह ऐसा ही है, भंते! वह ऐसा ही है—यह कहकर अनगार माकंदिक-पुत्र ने श्रमण भगवान् महावीर को वंदन-नमस्कार किया, वंदन-नमस्कार कर जहां श्रमण-निर्ग्रन्थ थे, वहां आया, आकर श्रमण-निर्ग्रन्थों को इस प्रकार कहा—आर्यो! कापोत-लेश्या वाला पृथ्वीकायिक यावत् सब दुःखों का अंत करता है। आर्यो! कापोत-लेश्या वाला अप्कायिक यावत् सब दुःखों का अंत करता है। आर्यो! कापोत-लेश्या वाला वनस्पतिकायिक यावत् सब दुःखों का अंत करता है।

६१. माकन्दिक-पुत्र अनगार के इस प्रकार आख्यान यावत् प्ररूपणा करने पर श्रमण-निर्ग्रंथों ने इस अर्थ पर श्रद्धा, प्रतीति और रुचि नहीं की। इस अर्थ पर अश्रद्धा, अप्रतीति और अरुचि करते हुए श्रमण-निर्ग्रन्थ जहां श्रमण भगवान् महावीर थे, वहां आए, आकर श्रमण भगवान् महावीर को वन्दन-नमस्कार किया, वन्दन-नमस्कार कर इस प्रकार कहा—भंते! माकंदिक-पुत्र अनगार हमें इस प्रकार आख्यान यावत् प्ररूपणा करता है—आर्यो! कापोत--लेश्या वाला पृथ्वीकायिक यावत् सब दुःखों का अंत करता है। कापोत-लेश्या वाला अप्कायिक यावत् सब दुःखों का अंत करता है। आर्यो! कापोत-लेश्या वाला वनस्पतिकायिक यावत् सब दुःखों का अंत करता है।

६२. भंते! यह इस प्रकार कैसे है?

आर्यो! यह कहकर श्रमण भगवान् महावीर ने श्रमण निर्ग्रन्थों को आमंत्रित कर इस प्रकार कहा—आर्यो! माकन्दिक-पुत्र अनगार तुम्हें जो आख्यान यावत् प्ररूपणा करता है—आर्यो! कापोत-लेश्या वाला पृथ्वीकायिक यावत् सब दुःखों का अंत करता है। आर्यो! कापोत--लेश्या वाला वनस्पतिकायिक यावत् सब दुःखों का अंत करता है। यह अर्थ सत्य है। आर्यो! मैं भी इस प्रकार आख्यान, भाषण, प्रज्ञापन एवं प्ररूपणा करता हूं—कृष्ण-लेश्या

वाला पृथ्वीकायिक कृष्ण-लेश्या वाले पृथ्वीकायिक से अनन्तर उद्वर्तन कर यावत् सब दुःखों का अंत करता है। आर्यो! तीन लेश्या वाला पृथ्वीकायिक यावत् सब दुःखों का अंत करता है। इसी प्रकार कापोत-लेश्या वाले पृथ्वीकायिक की वक्तव्यता। पृथ्वीकायिक की भांति अप्कायिक की वक्तव्यता। इसी प्रकार वनस्पतिकायिक की भी वक्तव्यता। यह अर्थ सत्य है।

६३. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है। यह कह कर श्रमण-निर्ग्रन्थों ने श्रमण भगवान् महावीर को वंदन-नमस्कार किया, वंदन-नमस्कार कर जहां माकंदिक-पुत्र अनगार था, वहां आए, आकर माकंदिक-पुत्र अणगार को वंदन-नमस्कार किया, वन्दन-नमस्कार कर सम्यक् विनयपूर्वक इस अर्थ के लिए बार-बार क्षमायाचना की।

६४. माकन्दिक-पुत्र अनगार उठने की मुद्रा में उठा, उठकर जहां श्रमण भगवान् महावीर थे, वहां आया, आकर श्रमण भगवान् महावीर को वंदन-नमस्कार किया, वन्दन-नमस्कार कर इस प्रकार बोला—

६५. भंते! भावितात्मा अनगार सब कर्मों का वेदन करता है, सब कर्मों की निर्जरा करता है, सब मरण से मरता है, सब शरीर का त्याग करता है, चरम कर्म का वेदन करता है, चरम कर्म की निर्जरा करता है, चरम मरण से मरता है, चरम शरीर का त्याग करता है, मारणान्तिक कर्म का वेदन करता है, मारणान्तिक कर्म की निर्जरा करता है, मारणान्तिक मरण से मरता है, मारणान्तिक शरीर का त्याग करता है, उसके जो चरम निर्जरा-पुद्गल है, आयुष्मन् श्रमण! क्या वे पुद्गल सूक्ष्म प्रज्ञप्त हैं? क्या वे पुद्गल सर्व-लोक का अवगाहन कर ठहरे हुए हैं?

हां, माकन्दिक-पुत्र! भावितात्मा अनगार सब कर्मों का वेदन करता है यावत् इसके जो चरम निर्जरा-पुद्गल हैं, आयुष्मन् श्रमण! वे पुद्गल सूक्ष्म प्रज्ञप्त हैं। वे सर्व-लोक का अवगाहन कर ठहरे हुए हैं।

निर्जरा-पुद्गल-जानना-आदि-पद

६६. भंते! छद्मस्थ-मनुष्य उन निर्जरा-पुद्गलों का कुछ भी अन्यत्व, नानात्व, अवमत्व, तुच्छत्व, गुरुत्व, लघुत्व को जानता देखता है?

माकंदिक-पुत्र! यह अर्थ संगत नहीं है।

६७. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—छद्मस्थ-मनुष्य उन निर्जरा-पुद्गलों का कुछ भी अन्यत्व, नानात्व, अवमत्व, तुच्छत्व, गुरुत्व, लघुत्व को नहीं जानता-देखता है?

माकन्दिक-पुत्र! कुछ देव भी उन निर्जरा-पुद्गलों का कुछ भी अन्यत्व, नानात्व, अवमत्व, तुच्छत्व, गुरुत्व और लघुत्व नहीं जानते-देखते। माकन्दिक-पुत्र! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—छद्मस्थ-मनुष्य उन निर्जरा-पुद्गलों का कुछ भी अन्यत्व, नानात्व, अवमत्व, तुच्छत्व, गुरुत्व और लघुत्व को नहीं जानता-देखता। आयुष्मन् श्रमण! वे पुद्गल सूक्ष्म प्रज्ञप्त हैं। सर्व-लोक का अवगाहन कर ठहरे हुए हैं।

६८. भंते! क्या नैरयिक उन निर्जरा-पुद्गलों को जानते-देखते हैं? उनका आहरण करते हैं?

अथवा नहीं जानते, नहीं देखते हैं, आहरण नहीं करते?

माकंदिक पुत्र! नैरयिक उन निर्जरा-पुद्गलों को नहीं जानते, नहीं देखते हैं, उनका आहरण नहीं करते। इसी प्रकार यावत् पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक की वक्तव्यता।

६९. भंते! मनुष्य उन निर्जरा-पुद्गलों को जानते-देखते हैं, उनका आहरण करते हैं अथवा नहीं जानते, नहीं देखते, नहीं उनका आहरण करते है।

माकन्दिक-पुत्र! कुछ जानते-देखते हैं, उनका आहरण करते हैं। कुछ नहीं जानते, नहीं देखते, आहरण करते हैं।

७०. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—कुछ जानते-देखते हैं, उनका आहरण करते हैं? कुछ नहीं जानते, नहीं देखते, आहरण करते हैं?

माकन्दिक-पुत्र! मनुष्य दो प्रकार के प्रज्ञप्त हैं—जैसे—संज्ञीभूत, असंज्ञीभूत। उनमें जो असंज्ञीभूत हैं, वे नहीं जानते, नहीं देखते, आहरण करते हैं। जो संज्ञीभूत हैं, वे दो प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—उपयुक्त, अनुपयुक्त। उनमें जो अनुपयुक्त हैं, वे नहीं जानते, नहीं देखते, आहरण करते हैं। जो उपयुक्त हैं, वे जानते-देखते हैं, आहरण करते हैं। माकन्दिक-पुत्र! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—कुछ नहीं जानते, नहीं देखते, आहरण करते हैं। कुछ जानते-देखते हैं, आहरण करते हैं। वाणमंतर, ज्योतिष्क की वैमानिक की भांति वक्तव्यता।

७१. भंते! वैमानिक उन निर्जरा-पुद्गलों को जानते-देखते हैं, आहरण करते हैं?

माकन्दिक-पुत्र! वैमानिक की मनुष्यों की भांति वक्तव्यता। इतना विशेष है—वैमानिक के दो प्रकार प्रज्ञप्त है, जैसे—मायी-मिथ्यादृष्टि-उपपन्नक, अमायी-सम्यग्दृष्टि-उपपन्नक। जो मायी-मिथ्यादृष्टि-उपपन्नक हैं, वे नहीं जानते, नहीं देखते, आहरण करते हैं। उनमें जो अमायी-सम्यग्दृष्टि-उपपन्नक हैं, वे दो प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—अनन्तर-उपपन्नक, परंपर--उपपन्नक। जो अनंतर-उपपन्नक हैं, वे नहीं जानते, नहीं देखते, आहरण नहीं करते। जो परम्पर-उपपन्नक हैं, वे दो प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—पर्याप्त, अपर्याप्तक। जो अपर्याप्तक हैं, वे नहीं जानते, नहीं देखते, उनका आहरण करते हैं। जो पर्याप्तक हैं, वे दो प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—उपयुक्त, अनुपयुक्त। उनमें जो अनुपयुक्त हैं, वे नहीं जानते, नहीं देखते, आहरण करते हैं। जो उपयुक्त हैं, वे जानते-देखते हैं, आहरण करते हैं। माकंदिक-पुत्र! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—कुछ नहीं जानते, नहीं देखते, आहरण करते हैं। कुछ जानते-देखते हैं, आहरण करते हैं।

बंध-पद

७२. भंते! बंध कितने प्रकार का प्रज्ञप्त है?

माकंदिक-पुत्र! बंध दो प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—द्रव्य-बंध, भाव-बंध।

७३. भंते! द्रव्य-बंध कितने प्रकार का प्रज्ञप्त है?

माकंदिक-पुत्र! दो प्रकार का प्रज्ञप्त है—प्रयोग-बंध, विस्रसा-बंध।

७४. भंते! विस्रसा-बंध कितने प्रकार का प्रज्ञप्त है?

माकंदिक-पुत्र! दो प्रकार का प्रज्ञप्त है जैसे—सादिक-विस्रसा-बंध, अनादिक-विस्रसा-बंध।

७५. भंते! प्रयोग-बंध कितना प्रकार का प्रज्ञप्त है?

माकंदिक-पुत्र! दो प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—शिथिल-बंधन-बद्ध, गाढ़-बंधन-बद्ध।

७६. भंते! भाव-बंध कितने प्रकार का प्रज्ञप्त है?

माकंदिक-पुत्र! दो प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—मूल-प्रकृति-बंध, उत्तर-प्रकृति-बंध।

७७. भंते! नैरयिकों के कितने प्रकार का भाव-बंध प्रज्ञप्त है?

माकंदिक-पुत्र! दो प्रकार का भाव-बंध प्रज्ञप्त है, जैसे—मूल-प्रकृति-बंध, उत्तर-प्रकृति--बंध। इस प्रकार यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता।

७८. भंते! ज्ञानावरणीय-कर्म का कितने प्रकार का भाव-बंध प्रज्ञप्त हैं?

माकंदिक-पुत्र! दो प्रकार का भाव-बंध प्रज्ञप्त है। जैसे—मूल-प्रकृति-बंध, उत्तर-प्रकृति--बंध।

७९. भंते! नैरयिकों के ज्ञानावरणीय-कर्म का कितने प्रकार का भाव-बंध प्रज्ञप्त है?

माकंदिक-पुत्र! दो प्रकार का भाव-बंध प्रज्ञप्त है, जैसे—मूल-प्रकृति-बंध, उत्तर-प्रकृति--बंध। इस प्रकार यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता। जैसे—ज्ञानावरणीय के दंडक बतलाए गए हैं, इसी प्रकार यावत् आंतरायिक-कर्म के दंडक वक्तव्य हैं।

कर्म-नानात्व-पद

८०. भंते! जीवों के द्वारा जो पाप-कर्म कृत है, जो किया जा रहा है, जो किया जाएगा, क्या उसमें कुछ नानात्व है?

हां, है।

८१. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—जीवों के द्वारा जो पाप-कर्म कृत है, जो किया जा रहा है, जो किया जाएगा, उसमें कुछ नानात्व है?

माकंदिक-पुत्र! जैसे कोई पुरुष धनुष हाथ में लेता है, लेकर बाण को धनुष पर चढ़ाता है। चढ़ाकर स्थान (वैशाख नाम की मुंह की मुद्रा) में खड़ा होता है, खड़ा होकर बाण को कान की लंबाई तक खींचता है, खींचकर ऊपर आकाश की ओर उसे फेंकता है, माकंदिक-पुत्र! ऊर्ध्व आकाश में तीर को फेंकते हुए उस पुरुष के एजन में भी नानात्व है, व्येजन में भी नानात्व है, चलन में भी नानात्व हैं, स्पन्दन में भी नानात्व है, घट्टन में भी नानात्व है, क्षोभ में भी नानात्व है, उदीरणा में भी नानात्व है, उस-उस भाव के परिणमन में भी नानात्व है?

हां भगवन्! एजन में भी नानात्व है यावत् उस-उस भाव के परिणमन में भी नानात्व है।

माकंदिक-पुत्र! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—एजन में भी नानात्व है, यावत् उस--उस भाव के परिणमन में भी नानात्व है।

८२. भंते! नैरयिकों के द्वारा जो पाप-कर्म कृत हैं, पूर्ववत् इस प्रकार यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता।

८३. भंते! नैरयिक जिन पुद्गलों को आहार के रूप में ग्रहण करते हैं, भंते! उन पुद्गलों का भविष्य-काल में कितना भाग आहार-रूप में ग्रहण होता है, कितने भाग का निर्जरण करते हैं?

माकंदिक-पुत्र! असंख्येय भाग का आहार करते हैं, अनंत भाग का निर्जरण करते हैं।

८४. भंते! उन निर्जरित पुद्गलों पर कोई रुक सकता है? यावत् करवट ले सकता है?

यह अर्थ संगत नहीं है। आयुष्मन् श्रमण! ये पुद्गल अनाहार कहे गए हैं, इस प्रकार यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता।

८५. भंते! वह ऐसा ही ह। भंते! वह ऐसा ही है।

चौथा उद्देशक

जीवों का परिभोग-अपरिभोग-पद

८६. उस काल और उस समय में राजगृह नगर यावत् भगवान् गौतम ने इस प्रकार कहा—भंते! प्राणातिपात, मृषावाद यावत् मिथ्या-दर्शन-शल्य, प्राणातिपात-विरमण यावत् मिथ्या-दर्शन-शल्य-विरमण। पृथ्वीकायिक-जीव यावत् वनस्पतिकायिक-जीव, धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, शरीर-मुक्त जीव, परमाणु-पुद्गल, शैलेशी-प्रतिपन्नक अनगार, सब स्थूल शरीरधारी द्वीन्द्रिय आदि जीव—ये दोनों प्रकार के जीव-द्रव्य और अजीव-द्रव्य जीवों के परिभोग में आते हैं?

गौतम! प्राणातिपात यावत् इन दो प्रकार के जीव-द्रव्यों और अजीव-द्रव्यों में कुछ जीवों के परिभोग में नहीं आते।

८७. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—प्राणातिपात यावत् परिभोग में नहीं आते?

गौतम! प्राणातिपात यावत् मिथ्या-दर्शन-शल्य, पृथ्वीकायिक-जीव यावत् वनस्पतिकायिक--जीव, सर्व स्थूल शरीरधारी द्वीन्द्रिय आदि जीव—ये दोनों प्रकार के जीव-द्रव्य और अजीव-द्रव्य जीवों के परिभोग में आते हैं।

• प्राणातिपात-विरमण यावत् मिथ्या-दर्शन-शल्य-विवेक, धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, यावत् परमाणु-पुद्गल, शैलेशी-प्रतिपन्नक अनगार—ये दोनों प्रकार के जीव-द्रव्य और अजीव-द्रव्य जीव के परिभोग में नहीं आते। गौतम! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—प्राणातिपात यावत् परिभोग में नहीं आते।

कषाय-पद

८८. भंते! कषाय कितने प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! कषाय चार प्रज्ञप्त हैं, जैसे—कषाय-पद (**पण्णवणा,** पद १४) निरवशेष वक्तव्य है यावत् लोभ के द्वारा निर्जरा करेंगे।

युग्म-पद

८९. भंते! युग्म (राशि-विशेष) कितने प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! युग्म चार प्रज्ञप्त हैं, जैसे—कृतयुग्म, त्र्योज, द्वापरयुग्म, कल्योज।

९०. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है, यावत् कल्योज है?

गौतम! जिस राशि में से चार-चार निकालने के बाद शेष चार रहे, वह है कृतयुग्म। जिस राशि में से चार-चार निकालने के बाद शेष तीन रहे, वह है त्र्योज। जिस राशि में से चार-चार निकालने के बाद शेष दो रहे, वह है द्वापरयुग्म। जिस राशि में से चार-चार निकालने के बाद शेष एक रहे, वह है कल्योज। गौतम! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है यावत् कल्योज है।

९१. भंते! नैरयिक क्या कृतयुग्म हैं? त्र्योज हैं? द्वापरयुग्म हैं? कल्योज हैं?

गौतम! जघन्य-पद में कृतयुग्म हैं। उत्कृष्ट-पद में त्र्योज हैं। अजघन्य-अनुत्कृष्ट पद में स्यात् कृतयुग्म यावत् स्यात् त्र्योज हैं। इस प्रकार यावत् स्तनितकुमार की वक्तव्यता।

९२. वनस्पतिकायिक—पृच्छा।

गौतम! जघन्य-पद में अपद हैं, उत्कृष्ट-पद में अपद हैं। अजघन्य-अनुत्कृष्ट-पद में स्यात् कृतयुग्म यावत् स्यात् कल्योज हैं।

९३. द्वीन्द्रिय की पृच्छा।

गौतम! जघन्य-पद में कृतयुग्म, उत्कृष्ट-पद में द्वापरयुग्म, अजघन्य-अनुत्कृष्ट-पद में स्यात् कृतयुग्म यावत् स्यात् कल्योज है। इस प्रकार यावत् चतुरिन्द्रिय की वक्तव्यता। शेष एकेन्द्रियों की द्वीन्द्रिय की भांति वक्तव्यता। पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक यावत् वैमानिकों की नैरयिक की भांति वक्तव्यता। सिद्धों की वनस्पतिकायिक की भांति वक्तव्यता।

९४. भंते! स्त्रियां क्या कृतयुग्म हैं—पृच्छा।

गौतम! जघन्य-पद में कृतयुग्म, उत्कृष्ट-पद में स्यात् कल्योज है। इसी प्रकार असुरकुमार-देवियां यावत् स्तनितकुमार-देवियों की वक्तव्यता। इसी प्रकार तिर्यग्योनिक-स्त्रियों, मनुष्य-स्त्रियों की वक्तव्यता। इसी प्रकार वाणमंतर-, ज्योतिष्क- और वैमानिक-देवियों की वक्तव्यता।

अंधकवृष्णि-जीवों का वर-पर-पद

९५. भंते! जितने अंधकवृष्णि-जीव वर हैं, उतने ही अंधकवृष्णि-जीव पर हैं?

हां, गौतम! जितने अंधकवृष्णि-जीव वर हैं, उतने ही अंधकवृष्णि-जीव पर हैं।

९६. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह एसा ही है।

पांचवां उद्देशक

वैक्रिय-अवैक्रिय-असुरकुमार-आदि-पद

९७. भंते! दो असुरकुमार एक असुरकुमारावास में असुरकुमार-देव के रूप में उपपन्न हुए। उनमें एक असुरकुमार देव द्रष्टा के चित्त को प्रसन्न करने वाला, दर्शनीय, कमनीय, और रमणीय होता है। एक असुरकुमार-देव द्रष्टा के चित्त को प्रसन्न करने वाला, दर्शनीय, कमनीय और रमणीय नहीं होता। भंते! यह इस प्रकार कैसे है?

गौतम! असुरकुमार देव दो प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—वैक्रिय-शरीर-वाले, अवैक्रिय-शरीर वाले। जो वैक्रिय-शरीर-वाला असुरकुमार-देव हैं, द्रष्टा के चित्त को प्रसन्न करने वाला यावत् रमणीय होता है। जो अवैक्रिय-शरीर वाला असुरकुमार-देव है, वह द्रष्टा के चित्त को प्रसन्न करने वाला यावत् रमणीय नहीं होता।

९८. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—जो वैक्रिय-शरीर वाला है, पूर्ववत् यावत् रमणीय नहीं होता?

गौतम! जैसे इस मनुष्य-लोक में दो पुरुष होते हैं—एक पुरुष अलंकृत और विभूषित है, एक पुरुष अलंकृत और विभूषित नहीं है। गौतम! इनमें से कौन पुरुष द्रष्टा के चित्त को प्रसन्न करने वाला यावत् रमणीय होता है, कौन पुरुष द्रष्टा के चित्त को प्रसन्न करने वाला यावत् रमणीय नहीं होता। वह पुरुष जो अलंकृत-विभूषित है अथवा वह पुरुष जो अलंकृत-विभूषित नहीं है?

भगवन्! जो अलंकृत-विभूषित है, वह द्रष्टा के चित्त को प्रसन्न करने वाला यावत् रमणीय होता है, जो अलंकृत-विभूषित नहीं है, वह द्रष्टा के चित्त को प्रसन्न करने वाला यावत् रमणीय नहीं होता।

इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—यावत् वैक्रिय न करने वाला असुरकुमार-देव रमणीय नहीं होता।

९९. भंते! दो नागकुमार एक नागकुमारावास में उपपन्न हुए पूर्ववत् यावत् स्तनितकुमार की वक्तव्यता। इसी प्रकार वाणमंतर, ज्योतिष्क और वैमानिक की वक्तव्यता।

नैरयिक-आदि का महाकर्म-आदि-पद

१००. भंते! दो नैरयिक एक नरकावास में नैरयिक के रूप में उपपन्न हुए। एक नैरयिक महा-कर्म वाला, महा-क्रिया वाला, महा-आश्रव वाला, महा-वेदना वाला होता है। एक नैरयिक अल्प-कर्म वाला, अल्प-क्रिया वाला, अल्प-आश्रव वाला, अल्प-वेदना वाला होता है। भंते! यह इस प्रकार कैसे है?

गौतम! नैरयिक दो प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—मायी-मिथ्यादृष्टि-उपपन्नक, अमायी-सम्यग्दृष्टि-उपपन्नक। जो मायी-मिथ्यादृष्टि-उपपन्नक नैरयिक है, वह महा-कर्म वाला यावत् महा-वेदना वाला होता है। जो अमायी-सम्यग्दृष्टि-उपपन्नक नैरयिक है वह अल्प-कर्म वाला यावत् अल्प-वेदना वाला होता है।

१०१. भंते! दो असुरकुमार? पूर्ववत्। इसी प्रकार विकलेन्द्रिय को छोड़कर एकेन्द्रिय, यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता।

नैरयिक-आदि का आयु-पद

१०२. भंते! जो भव्य नैरयिक अनंतर उद्वर्तन कर पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक में उपपन्न होने वाला है, भंते! वह किस आयुष्य का प्रतिसंवेदन करता है?

गौतम! नैरयिक आयुष्य का प्रतिसंवेदन करता है, वह पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-आयुष्य को सामने रख कर रहता है। इसी प्रकार मनुष्य में भी, इतना विशेष है—मनुष्य-आयुष्य को सामने रखकर रहता है।

१०३. भंते! जो भव्य असुरकुमार अनंतर उद्वर्तन कर पृथ्वीकायिक में उपपन्न होने वाला है, भंते! वह किस आयुष्य का प्रतिसंवेदन करता है?

गौतम! वह असुरकुमार के आयुष्य का प्रतिसंवेदन करता है, पृथ्वीकायिक के आयुष्य को सामने रखकर रहता है। इसी प्रकार जो भव्य जिसमें उपपन्न होने वाला है, वह उसे सामने रख कर रहता है, जिसमें स्थित है, उसका प्रतिसंवेदन करता है, यावत् वैमानिक। इतना विशेष है—पृथ्वीकायिक पृथ्वीकायिक-जीवों में उपपन्न होने वाला है। वह वर्तमान पृथ्वीकायिक के आयुष्य का प्रतिसंवेदन करता है, आगामी पृथ्वीकायिक को सामने रखकर रहता है। इसी प्रकार यावत् मनुष्य का स्वस्थान में उपपात वक्तव्य है, परस्थान में भी पूर्ववत्।

असुरकुमार-आदि का विक्रिया-पद

१०४. भंते! दो असुरकुमार का एक असुरकुमारावास में असुरकुमार-देव के रूप में उपपन्न हुए। उनमें एक असुरकुमार-देव ऋजु-विक्रिया करूंगा, यह सोचकर ऋजु-विक्रिया करता है, वक्र-विक्रिया करूंगा, यह सोचकर वक्र-विक्रिया करता है, जो जैसे चाहता है, वह वैसे विक्रिया करता है। एक असुरकुमार-देव ऋजु-विक्रिया करूंगा—यह सोचकर वक्र-विक्रिया करता है। वक्र-विक्रिया करूंगा, यह सोचकर ऋजु-विक्रिया करता है। जो जैसे चाहता है, वह वैसे विक्रिया नहीं करता। भंते! यह इस प्रकार कैसे है?

गौतम! असुरकुमार-देव दो प्रकार के प्रज्ञप्त हैं—जैसे—मायी-मिथ्यादृष्टि-उपपन्नक, अमायी-सम्यग्दृष्टि-उपपन्नक। उनमें जो मायी-मिथ्यादृष्टि-उपपन्नक असुरकुमार-देव है, वह ऋजु-विक्रिया करूंगा, यह सोचकर वक्र-विक्रिया करता है, यावत् जो जैसे चाहता है, वह वैसे विक्रिया नहीं कर पाता। जो अमायी-सम्यग्दृष्टि-उपपन्नक-देव है, वह ऋजु-विक्रिया करूंगा, यह सोचकर ऋजु-विक्रिया करता है, यावत् जो जैसे कहता है वह वैसे विक्रिया करता है।

१०५. भंते! दो नागकुमार?

पूर्ववत्। इसी प्रकार स्तनितकुमार की वक्तव्यता। इसी प्रकार वाणमंतर, ज्योतिष्क, वैमानिक की वक्तव्यता।

१०६. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

छठा उद्देशक

नैश्चयिक-व्यवहार-नय-पद

१०७. भंते! फाणित-गुड़ कितने वर्ण, कितने गंध, कितने रस और कितने स्पर्श वाला प्रज्ञप्त है?

गौतम! यहां दो नय होते हैं, जैसे—नैश्चयिक नय, व्यावहारिक नय। व्यावहारिक नय से फाणित-गुड़ मधुर रस वाला है। नैश्चयिक नय से पांच वर्ण, दो गंध, पांच रस और आठ स्पर्श वाला प्रज्ञप्त है।

१०८. भंते! भ्रमर कितने वर्ण, कितने गंध, कितने रस और कितने स्पर्श वाला प्रज्ञप्त है?

गौतम! यहां दो नय होते हैं, जैसे—नैश्चयिक नय, व्यावहारिक नय। व्यावहारिक नय से भ्रमर काला है। नैश्चयिक नय से पांच वर्ण यावत् आठ स्पर्श वाला प्रज्ञप्त है।

१०९. भंते! तोते का पंख कितने वर्ण, कितने गंध, कितने रस और कितने स्पर्श वाला प्रज्ञप्त है?

पूर्ववत्, इतना विशेष है—व्यावहारिक नय से तोते का पंख नीला है, नैश्चयिक नय से वह पांच वर्ण यावत् आठ स्पर्श वाला प्रज्ञप्त है। इस प्रकार इस अभिलाप से मजीठ लाल, हल्दी पीली, शंख शुक्ल, कोष्ठ सुगंध-युक्त, मृतक-शरीर दुर्गन्ध-युक्त, नीम तीता, सूंठ कटुक, कपित्थ कषैला, इमली खट्टी, शर्करा मधुर, वज्र कर्कश, नवनीत मृदु, लोह भारी, उलूक-पत्र हल्का, हिम शीत, अग्नि-काय उष्ण और तैल स्निग्ध। इनकी वक्तव्यता पूर्ववत्।

११०. भंते! राख की पृच्छा।

गौतम! यहां दो नय होते हैं, जैसे—नैश्चयिक नय, व्यावहारिक नय। व्यावहारिक नय से राख रूक्ष है, नैश्चयिक नय से पांच वर्ण यावत् आठ स्पर्श वाली प्रज्ञप्त है।

परमाणु-स्कन्ध के वर्ण का आदि-पद

१११. भंते! परमाणु-पुद्गल कितने वर्ण यावत् कितने स्पर्श वाला प्रज्ञप्त है?

गौतम! एक वर्ण, एक गंध, एक रस और दो स्पर्श वाला प्रज्ञप्त है।

११२. भंते! द्वि-प्रदेशी स्कंध कितने वर्ण यावत् कितने स्पर्श वाला प्रज्ञप्त है?

गौतम! स्यात् एक वर्ण, स्यात् दो वर्ण, स्यात् एक गंध, स्यात् दो गंध, स्यात् एक रस, स्यात् दो रस, स्यात् दो स्पर्श, स्यात् तीन स्पर्श, स्यात् चार स्पर्श वाला प्रज्ञप्त है।

११३. भंते! त्रि-प्रदेशी स्कन्ध कितने वर्ण यावत् कितने स्पर्श वाला प्रज्ञप्त है?

गौतम! स्यात् एक वर्ण, स्यात् दो वर्ण, स्यात् तीन वर्ण, स्यात् एक गंध, स्यात् दो गंध, स्यात् एक रस, स्यात् दो रस, स्यात् तीन रस, स्यात् दो स्पर्श, स्यात् तीन स्पर्श, स्यात् चार स्पर्श वाला प्रज्ञप्त है।

११४. भंते! चतुष्प्रदेशी स्कन्ध कितने वर्ण यावत् कितने स्पर्श वाला प्रज्ञप्त है?

गौतम! स्यात् एक वर्ण, स्यात् दो वर्ण, स्यात् तीन वर्ण, स्यात् चार वर्ण, स्यात् एक गंध,

स्यात् दो गंध, स्यात् एक रस, स्यात् दो रस, स्यात् तीन रस, स्यात् चार रस, स्यात् दो स्पर्श, स्यात् तीन स्पर्श, स्यात् चार स्पर्श वाला प्रज्ञप्त है।

११५. भंते! पांच-प्रदेशी स्कंध कितने वर्ण यावत् कितने स्पर्श वाला प्रज्ञप्त है?

गौतम! स्यात् एक वर्ण, स्यात् दो वर्ण, स्यात् तीन वर्ण, स्यात् चार वर्ण, स्यात् पांच वर्ण, स्यात् एक गंध, स्यात् दो गंध, स्यात् एक रस, स्यात् दो रस, स्यात् तीन रस, स्यात् चार रस, स्यात् पांच रस, स्यात् दो स्पर्श, स्यात् तीन स्पर्श, स्यात् चार स्पर्श वाला प्रज्ञप्त है। पांच-प्रदेशी की भांति यावत् असंख्येय-प्रदेशी स्कन्ध की वक्तव्यता।

११६. भंते! सूक्ष्म-परिणत अनंत-प्रदेशी स्कंध कितने वर्ण यावत् कितने स्पर्श वाला प्रज्ञप्त है?

पांच-प्रदेशी की भांति निरवशेष वक्तव्यता।

११७. भंते! बादर-परिणत अनंत-प्रदेशी स्कंध कितने वर्ण यावत् कितने स्पर्श वाला प्रज्ञप्त है?

गौतम! स्यात् एक वर्ण यावत् स्यात् पांच वर्ण, स्यात् एक गंध, स्यात् दो गंध, स्यात् एक रस यावत् स्यात् पांच रस, स्यात् चार स्पर्श यावत् स्यात् आठ स्पर्श वाला प्रज्ञप्त है।

११८. भंते! वह ऐसा ही है। भते! वह ऐसा ही है।

सातवां उद्देशक

केवलि-भाषा-पद

११९. राजगृह नगर यावत् गौतम ने इस प्रकार कहा—भंते! अन्यतीर्थिक इस प्रकार आख्यान यावत् प्ररूपण करते हैं—केवली यक्षावेश से आविष्ट होते हैं। यक्षावेश से आविष्ट होने पर दो भाषाएं बोलते हैं, जैसे—मृषा, सत्यामृषा। भंते! यह इस प्रकार कैसे है?

गौतम! जो अन्यतीर्थिक इस प्रकार कहते हैं यावत् जिन्होंने ऐसा कहा है, उन्होंने मिथ्या कहा है। गौतम! मैं इस प्रकार आख्यान, भाषण, प्रज्ञापन और प्ररूपण करता हूं—न केवली यक्षावेश से आविष्ट होते हैं, न केवली यक्षावेश से आविष्ट होने पर दो भाषाएं बोलते हैं—जैसे—मृषा, सत्यामृषा। केवली असावद्य और अपरोपघातिनी दो भाषाएं बोलते हैं, जैसे—सत्यभाषा, असत्यामृषा—व्यवहारभाषा।

उपधि-पद

१२०. भंते! उपधि के कितने प्रकार प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! उपधि के तीन प्रकार प्रज्ञप्त हैं—जैसे—कर्म-उपधि, शरीर-उपधि, बाह्य-भांड-अमत्र--उपकरण-उपधि।

१२१. भंते! नैरयिकों की पृच्छा।

गौतम! उपधि के दो प्रकार प्रज्ञप्त हैं, जैसे—कर्म-उपधि, शरीर-उपधि। एकेन्द्रिय को छोड़कर शेष सब दंडकों के यावत् वैमानिकों के तीन उपधि प्रज्ञप्त है। एकेन्द्रिय के दो

प्रकार की उपधि प्रज्ञप्त है, जैसे—कर्म-उपधि, शरीर-उपधि।

१२२. भंते! उपधि के कितने प्रकार प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! उपधि के तीन प्रकार प्रज्ञप्त हैं, जैसे—सचित्त, अचित्त, मिश्र। इसी प्रकार नैरयिकों की वक्तव्यता। इसी प्रकार निरवशेष यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता।

परिग्रह-पद

१२३. भंते! परिग्रह कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! परिग्रह तीन प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—कर्म-परिग्रह, शरीर-परिग्रह, बाह्य-भांड--अमत्र-उपकरण-परिग्रह।

१२४. भंते! नैरयिकों के कितने प्रकार के परिग्रह प्रज्ञप्त हैं?

जैसे उपधि के दो दंडक कहे गए हैं, वैसे परिग्रह के भी दो दंडक वक्तव्य हैं।

प्रणिधान-पद

१२५. भंते! प्रणिधान के कितने प्रकार प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! प्रणिधान के तीन प्रकार प्रज्ञप्त हैं, जैसे—मनः-प्रणिधान, वचन-प्रणिधान, काय--प्रणिधान।

१२६. भंते! नैरयिकों के कितने प्रकार के प्रणिधान-प्रज्ञप्त हैं?

पूर्ववत्। इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमारों की वक्तव्यता।

१२७. पृथ्वीकायिकों की पृच्छा।

गौतम! एक काय-प्रणिधान प्रज्ञप्त है। इसी प्रकार यावत् वनस्पतिकायिकों की वक्तव्यता।

१२८. द्वीन्द्रियों की पृच्छा।

गौतम! दो प्रकार के प्रणिधान प्रज्ञप्त हैं, जैसे—वचन-प्रणिधान, काय-प्रणिधान। इसी प्रकार यावत् चतुरिन्दियों की वक्तव्यता। शेष के तीन प्रकार के प्रणिधान प्रज्ञप्त हैं। यावत् वैमानिक।

१२९. भंते! दुष्प्रणिधान के कितने प्रकार प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! दुष्प्रणिधान के तीन प्रकार प्रज्ञप्त हैं, जैसे—मनः-दुष्प्रणिधान। जैसे प्रणिधान का दंडक कहा गया है, वैसे ही दुष्प्रणिधान का भी वक्तव्य है।

१३०. भंते! सुप्रणिधान के कितने प्रकार प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! सुप्रणिधान के तीन प्रकार प्रज्ञप्त हैं, जैसे—मनः-सुप्रणिधान, वचन-सुप्रणिधान, काय-सुप्रणिधान।

१३१. भंते! मनुष्यों के कितने प्रकार के सुप्रणिधान प्रज्ञप्त हैं?

पूर्ववत्।

१३२. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है। यावत् विहरण करने लगे।

१३३. श्रमण भगवान् महावीर ने किसी समय राजगृह नगर और गुणशीलक चैत्य से प्रतिनिष्क्रमण किया, प्रतिनिष्क्रमण कर बाहर जनपद-विहार करने लगे।

कालोदायी-प्रभृति का पंचास्तिकाय-संदेह-पद

१३४. उस काल और उस समय में राजगृह नाम का नगर था—वर्णक। गुणशिलक नाम का चैत्य—वर्णक यावत् पृथ्वी-शिलापट्ट। उस गुणशिलक चैत्य के न बहुत दूर न बहुत निकट अनेक अन्ययूथिक निवास करते थे, जैसे—कालोदायी, शैलोदायी, शैवालोदायी, उदक, नामोदक, नर्मोदक, अन्नपालक, शैलपालक, शंखपालक और सुहस्ती गृहपति।

१३५. वे अन्ययूथिक किसी समय अपने-अपने आवास-गृहों से निकलकर एकत्र हुए, एक स्थान पर बैठे। उनमें परस्पर इस प्रकार का समुल्लाप प्रारंभ हुआ—श्रमण ज्ञातपुत्र पांच अस्तिकायों की प्रज्ञापना करते हैं, जैसे—धर्मास्तिकाय यावत् पुद्गलास्तिकाय।

श्रमण ज्ञातपुत्र चार अस्तिकायों को अजीव-काय बतलाते हैं, जैसे—धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय। श्रमण ज्ञातपुत्र एक जीवास्तिकाय को जो अरूपि-काय है, जीव-काय बतलाते हैं।

श्रमण ज्ञातपुत्र चार अस्तिकायों को अरूपि-काय बतलाते हैं, जैसे—धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय और जीवास्तिकाय। श्रमण ज्ञातपुत्र एक पुद्गलास्तिकाय को रूपि-काय अजीव-काय बतलाते हैं, क्या यह ऐसा है?

१३६. राजगृह नगर में मद्दुक नाम का श्रमणोपासक था—आढ्य यावत् बहुजन के द्वारा अपरिभूत, जीव-अजीव को जानने वाला, यावत् आत्मा को भावित करते हुए रह रहा था।

१३७. श्रमण भगवान् महावीर किसी दिन क्रमानुसार विचरण, ग्रामानुग्राम में परिव्रजन और सुखपूर्वक विहार करते हुए जहां राजगृह नगर और गुणशिलक चैत्य था, वहां आए। स्वामी समवसृत हुए, परिषद् यावत् पर्युपासना करने लगी।

१३८. श्रमणोपासक मद्दुक इस कथा को सुनकर हृष्ट-तुष्ट चित्त वाला, आनंदित, नंदित, प्रीतिपूर्ण मन वाला, परमसौमनस्य-युक्त और हर्ष से विकस्वर हृदय-वाला हो गया। उसने स्नान किया यावत् अल्पभार और बहुमूल्य वाले आभरणों से शरीर को अलंकृत किया। अपने घर से प्रतिनिष्क्रमण किया, प्रतिनिष्क्रमण कर पैदल चलते हुए राजगृह नगर के बीचोंबीच निर्गमन किया। निर्गमन कर उन अन्ययूथिकों के न अति दूर न अति निकट व्यतिव्रजन किया।

१३९. अन्ययूथिकों ने मद्दुक श्रमणोपासक को न अति दूर न अति निकट व्यतिव्रजन करते हुए देखा। देखकर परस्पर एक-दूसरे को बुलाया, बुला कर इस प्रकार कहा—देवानुप्रियो! यह कथा—अस्तिकाय की वक्तव्यता हमारे लिए अप्रकट है—अस्पष्ट है। श्रमणोपासक मद्दुक न अति दूर न अति निकट हमारे पार्श्ववर्ती मार्ग से जा रहा है। देवानुप्रियो! हमारे लिए यह श्रेय है कि हम यह अर्थ मद्दुक से पूछें, यह चिंतन कर एक दूसरे के पास जाकर इस विषय का प्रतिश्रवण किया, प्रतिश्रवण कर जहां श्रमणोपासक मद्दुक था, वहां आए, आकर

श्रमणोपासक मद्दुक से इस प्रकार कहा—'मद्दुक! तुम्हारे धर्माचार्य, धर्मोपदेशक श्रमण ज्ञातपुत्र पांच अस्तिकाय की प्रज्ञापना करते हैं जैसे—धर्मास्तिकाय यावत् पुद्गलास्तिकाय। पूर्ववत् रूपि-काय अजीव-काय का प्रज्ञापन करते हैं। मद्दुक! यह इस प्रकार कैसे है?

श्रमणोपासक मद्दुक का समाधान-पद

१४०. श्रमणोपासक मद्दुक ने अन्ययूथिकों से इस प्रकार कहा—हम इन्द्रिय-ज्ञानी मनुष्य परोक्ष वस्तु को कार्य के आधार पर जानते हैं। यदि उनके द्वारा कोई कार्य किया जाता है तो हम जानते-देखते हैं। जब उनके द्वारा कार्य नहीं किया जाता तो हम नहीं जानते, नहीं देखते। धर्मास्तिकाय आदि का कार्य हमारे प्रत्यक्ष नहीं है, इसलिए उन्हें नहीं जानते, नहीं देखते।

१४१. अन्ययूथिकों ने श्रमणोपासक मद्दुक से इस प्रकार कहा—मद्दुक! तुम कैसे श्रमणोपासक हो; जो इस अर्थ को नहीं जानते हो, नहीं देखते हो?

१४२. श्रमणोपासक मद्दुक ने अन्ययूथिकों से इस प्रकार कहा—आयुष्मन्! क्या वायु चल रही है?

हां।

आयुष्मन्! क्या तुम चलती हुई वायु के रूप को देखते हो?

यह अर्थ संगत नहीं है।

आयुष्मन्! क्या नाक में गंध के पुद्गल आते हैं?

हां।

आयुष्मन्! क्या तुम नाक में आने वाले गंध के पुद्गलों के रूप को देखते हो?

यह अर्थ संगत नहीं है।

आयुष्मन्! क्या अरणि-सहगत अग्निकाय है?

हां है।

आयुष्मन्! क्या तुम अरणि-सहगत रूप को देखते हो?

यह अर्थ संगत नहीं है।

आयुष्मन्! क्या समुद्र के पार रूप हैं?

हां हैं।

आयुष्मन्! क्या तुम समुद्र के पार रूपों को देखते हो?

यह अर्थ संगत नहीं है।

आयुष्मन्! क्या देवलोक में रूप हैं?

हां हैं।

आयुष्मन्! क्या तुम देवलोक के रूपों को देखते हो?

यह अर्थ संगत नहीं है।

इस प्रकार आयुष्मन्! मैं, तुम या अन्य कोई भी छद्मस्थ जो जिस वस्तु को नहीं जानता, नहीं देखता वह सब नहीं होता, इस प्रकार आप मानते हैं तो आपके लिए यह लोक बहुत बड़ा नहीं होगा। अज्ञात और अदृष्ट अस्तित्व नहीं होता। यह कहकर उन अन्ययूथिकों को प्रत्युत्तर दिया, प्रत्युत्तर देकर जहां गुणशिलक चैत्य था, जहां श्रमण भगवान् महावीर थे, वहां आया, आकर श्रमण भगवान् महावीर को पंचविध अभिगम के द्वारा यावत् पर्युपासना करने लगा।

भगवान् द्वारा मद्दुक का प्रशंसा-पद

१४३. अयि मद्दुक! श्रमण भगवान् महावीर ने मद्दुक को इस प्रकार कहा—सुष्ठुक है मद्दुक! तुमने उन अन्ययूथिकों को इस प्रकार कहा। साधु है मद्दुक! तुमने उन अन्ययूथिकों को इस प्रकार कहा। मद्दुक! जो मनुष्य अज्ञात, अदृष्ट, अश्रुत, अस्मृत और अविज्ञात, अर्थ, हेतु, प्रश्न अथवा व्याकरण का बहुजन के मध्य आख्यान, प्रज्ञापन, प्ररूपण, दर्शन, निदर्शन और उपदर्शन करता है वह अर्हतों की आशातना में वर्तन करता है, अर्हत्- प्रज्ञप्त धर्म की आशातना में वर्तन करता है, अर्हत्-प्रज्ञप्त धर्म की आशातना करता है वह केवलियों की आशातना करता है, केवलि-प्रज्ञप्त धर्म की आशातना करता है, इसलिए सुष्ठु है मद्दुक! तुमने उन अन्ययूथिकों से इस प्रकार कहा—साधु है मद्दुक! तुमने उन अन्ययूथिकों को इस प्रकार कहा।

१४४. श्रमण भगवान् महावीर के इस प्रकार कहने पर श्रमणोपासक मद्दुक हृष्ट-तुष्ट हो गया। श्रमण भगवान् महावीर को वंदन-नमस्कार कर न अति निकट, न अति दूर शुश्रूषा और नमस्कार की मुद्रा में उनके सम्मुख सविनय बद्धांजलि होकर पर्युपासना करने लगा।

१४५. श्रमण भगवान् महावीर ने श्रमणोपासक मद्दुक को उस विशालतम परिषद् में धर्म कहा यावत् परिषद् लौट गई।

१४६. श्रमणोपासक मद्दुक श्रमण भगवान् महावीर के पास धर्म को सुनकर अवधारण कर हृष्ट-तुष्ट हो गया। उसने प्रश्न पूछे—पूछकर अर्थ को ग्रहण किया, ग्रहण कर उठने की मुद्रा में उठा, उठकर श्रमण भगवान् महावीर को वंदन-नमस्कार किया, वंदन-नमस्कार कर जिस दिशा से आया था, उसी दिशा में लौट गया।

१४७. अयि भंते! भगवान् गौतम ने श्रमण भगवान् महावीर को वन्दन-नमस्कार किया, वंदन-नमस्कार कर इस प्रकार कहा—भंते! श्रमणोपासक मद्दुक देवानुप्रिय के पास मुंड होकर अगार से अनगारिता में प्रव्रजित होगा?

यह अर्थ संगत नहीं है, इस प्रकार जैसे शंख की वक्तव्यता वैसे ही मद्दुक की वक्तव्यता। अरुणाभ में उपपन्न होगा यावत् सब दुःखों का अंत करेगा।

विकुर्वणा में एक-जीव-संबंध-पद

१४८. भंते! महान् ऋद्धि यावत् महान् ऐश्वर्यशाली के रूप में प्रख्यात देव हजार रूपों की विक्रिया कर परस्पर एक-दूसरे के साथ युद्ध करने में समर्थ है?

हां, समर्थ है।

भंते! क्या वे शरीर एक-जीव-स्पृष्ट हैं? अनेक-जीव-स्पृष्ट हैं।

गौतम! एक-जीव-स्पृष्ट हैं, अनेक-जीव-स्पृष्ट नहीं हैं।

भंते! क्या उन शरीरों का अंतर एक-जीव-स्पृष्ट है? अनेक-जीव-स्पृष्ट है?

गौतम! एक-जीव-स्पृष्ट है, अनेक-जीव-स्पृष्ट नहीं है।

१४९. भंते! कोई पुरुष जीव के छिन्न अवयवों के अंतराल का हाथ, पैर अथवा अंगुली से, शलाका, काष्ठ अथवा खपाची से स्पर्श-संस्पर्श, आलेखन-विलेखन करता है अथवा किसी अन्य तीखे शस्त्र से उसका आच्छेदन, विच्छेदन करता है अथवा अग्नि से उसको जलाता है? क्या ऐसा करता हुआ वह उन जीव-प्रदेशों के लिए किंचित् आबाधा अथवा विबाधा उत्पन्न करता है? उनका छविच्छेद-अंग-भंग करता है?

यह अर्थ संगत नहीं है, उस अंतर में शस्त्र का संक्रमण (प्रवेश) प्रवेश नहीं होता।

देव-असुर-संग्राम-पद

१५०. क्या देवों-असुरों के बीच संग्राम होता है? क्या देवों-असुरों के बीच संग्राम होता है?

हां होता है।

१५१. भंते! देवों-असुरों के बीच संग्राम चल रहा हो, उस समय उन देवों के कौन-सी वस्तु प्रहरण-रत्न (शस्त्र) रूप में परिणत होती है?

गौतम! वे देव जिस तृण, काष्ठ, पत्र, कंकर आदि का स्पर्श करते हैं, वे उन देवों के प्रहरण-रत्न के रूप में परिणत हो जाते हैं।

जैसे देवों की वक्तव्यता वैसे ही असुरकुमारों की वक्तव्यता है?

यह अर्थ संगत नहीं है। असुरकुमारों के प्रहरण-रत्न नित्य विक्रिया वाले प्रज्ञप्त हैं।

देव का द्वीप-समुद्र-अनुपरिवर्तन-पद

१५२. भंते! महर्द्धिक यावत् महान् ऐश्वर्यशाली के रूप में प्रख्यात देव लवणसमुद्र का अनुपरिवर्तन कर शीघ्र आने में समर्थ है?

हां, समर्थ है।

१५३. भंते! महर्द्धिक यावत् महान् ऐश्वर्यशाली के रूप में प्रख्यात देव धातकी-खंड द्वीप का अनुपरिवर्तन कर शीघ्र आने में समर्थ है?

हां, समर्थ है। इसी प्रकार यावत् रुचकवर-द्वीप का अनुपरिवर्तन कर शीघ्र आने में समर्थ है?

हां, समर्थ है। उससे आगे व्यतिव्रजन करते हैं, अनुपरिवर्तन नहीं करते।

देवों का कर्म-क्षपण-काल-पद

१५४. भंते! क्या ऐसे देव हैं, जो विद्यमान अनंत कर्मों—पुण्य-कर्म-पुद्गलों को जघन्यतः

सौ-, दो-सौ-, तीन-सौ-, उत्कृष्टतः पांच-सौ-वर्ष में भोगकर क्षीण करते हैं?

हां, है।

१५५. भंते! क्या ऐसे देव हैं, जो विद्यमान अनंत कर्मों—पुण्य-कर्म-पुद्गलों को जघन्यतः हजार-वर्ष, दो-हजार-वर्ष, तीन-हजार-वर्ष उत्कृष्टतः पांच-हजार-वर्ष में भोगकर क्षीण करते हैं?

हां, है।

१५६. भंते! क्या ऐसे देव हैं, जो विद्यमान अनंत कर्मों—पुण्य-कर्म-पुद्गलों को जघन्यतः एक-लाख-वर्ष, दो-लाख-वर्ष, तीन-लाख-वर्ष उत्कृष्टतः पांच-लाख-वर्ष में भोग कर क्षीण करते हैं?

हां, है।

१५७. भंते! वे देव कौन हैं, जो विद्यमान अनंत कर्मों—पुण्य-कर्म-पुद्गलों को जघन्यतः सौ-, दो-सौ-, तीन-सौ- उत्कृष्टतः पांच-सौ-वर्ष में भोग कर क्षीण करते हैं?

भंते! वे देव कौन हैं, यावत् पांच-हजार-वर्ष में भोगकर क्षीण करते हैं?

भंते! वे देव कौन हैं, यावत् पांच-लाख-वर्ष में भोगकर क्षीण करते हैं?

गौतम! वाणमंतर देव विद्यमान अनंत कर्मों—पुण्य-कर्म-पुद्गलों को सौ-वर्ष में भोगकर क्षीण कर देते हैं। असुरेन्द्र को छोड़कर भवनवासी-देव विद्यमान अनंत कर्मों—पुण्य-कर्म-पुद्गलों को दो-सौ-वर्ष में भोगकर क्षीण कर देते हैं। असुरकुमार-देव विद्यमान अनंत कर्मों—पुण्य-कर्म-पुद्गलों को तीन-सौ-वर्ष में भोगकर क्षीण कर देते हैं। ग्रह-, नक्षत्र-, -तारा-रूप ज्योतिष्क-देव विद्यमान अनंत कर्मों—पुण्य-कर्म-पुद्गलों को चार-सौ-वर्ष में भोगकर क्षीण कर देते हैं। ज्योतिषराज ज्योतिषेन्द्र चंद्र-सूर्य-देव विद्यमान अनंत कर्मों—पुण्य-कर्म-पुद्गलों को पांच-सौ-वर्ष में भोगकर क्षीण कर देते हैं।

सौधर्म-ईशान-देव विद्यमान अनंत कर्मों—पुण्य-कर्म-पुद्गलों को एक-हजार-वर्ष में भोगकर क्षीण कर देते हैं। सनत्कुमार-माहेन्द्र-देव विद्यमान अनंत-कर्मों—पुण्य-कर्म-पुद्गलों को दो-हजार-वर्ष में भोगकर क्षीण कर देते हैं। इसी प्रकार इस अभिलाप से ब्रह्मलोक-लातंक-देव विद्यमान अनंत कर्मों—पुण्य-कर्म-पुद्गलों को तीन-हजार-वर्ष में भोगकर क्षीण कर देते हैं। महाशुक्र-सहस्रार-देव-विद्यमान अनंत कर्मों—पुण्य-कर्म-पुद्गलों को चार-हजार-वर्ष में भोगकर क्षीण कर देते हैं। आनत-प्राणत-, आरण-अच्युत-देव विद्यमान अनंत कर्मों—पुण्य-कर्म-पुद्गलों को पांच-हजार-वर्ष में भोगकर क्षीण कर देते हैं।

निम्नवर्ती-ग्रैवेयक-देव विद्यमान अनंत कर्मों—पुण्य-कर्म-पुद्गलों को एक-लाख-वर्ष में भोगकर क्षीण कर देते हैं। मध्यम-ग्रैवेयक-देव विद्यमान अनंत कर्मों—पुण्य-कर्म-पुद्गलों को दो-लाख-वर्ष में भोगकर क्षीण कर देते हैं। उपरिवर्ती-ग्रैवेयक-देव विद्यमान अनंत कर्मों—पुण्य-कर्म-पुद्गलों को तीन-लाख-वर्ष में भोगकर क्षीण कर देते हैं। विजय-वैजयन्त-, जयंत—अपराजित-देव विद्यमान अनंत कर्मों—पुण्य-कर्म-पुद्गलों को चार-

-लाख-वर्ष में भोगकर क्षीण कर देते हैं। सर्वार्थसिद्ध-देव विद्यमान अनंत कर्मों—पुण्य-कर्म-पुद्गलों को पांच-लाख-वर्ष में भोगकर क्षीण कर देते हैं।

गौतम! ये जो देव हैं, वे विद्यमान अनंत कर्मों—पुण्य-कर्म-पुद्गलों को जघन्यतः सौ-, दो--सौ-, तीन-सौ- उत्कृष्टतः पांच-लाख-वर्ष में भोगकर क्षीण कर देते हैं।

१५८. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

आठवां उद्देशक

ईर्या की अपेक्षा गौतम का संवाद-पद

१५९. राजगृह नगर यावत् गौतम ने इस प्रकार कहा—भंते! भावितात्मा अनगार सामने दोनों ओर युगमात्र (शरीर-प्रमाण) भूमि की प्रेक्षाकर चल रहा है। उसके पैर के नीचे मुर्गी का शावक, बत्तख का शावक, कुलिंग का शावक मर जाए तो भंते! क्या उस भावितात्मा अनगार के ईर्यापथिकी-क्रिया होती है? साम्परायिकी-क्रिया होती है?

गौतम! भावितात्मा अनगार सामने दोनों ओर युगमात्र-भूमि की प्रेक्षा कर चल रहा है। उसके पैर के नीचे मुर्गी का शावक, बत्तख का शावक, कुलिंग का शावक मर जाए तो उस भावितात्मा अनगार के ईर्यापथिकी-क्रिया होती है, सांपरायिकी-क्रिया नहीं होती।

१६०. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है?

गौतम! जिसके क्रोध, मान, माया, लोभ व्युच्छिन्न हो जाते हैं, उसके ऐर्यापथिकी-क्रिया होती है। जिसके क्रोध, मान, माया और लोभ व्युच्छिन्न नहीं होते, उसके सांपरायिकी--क्रिया होती है। यथासूत्र—सूत्र के अनुसार चलने वाले के ईर्यापथिकी-क्रिया होती है। उत्सूत्र—सूत्र के विपरीत चलने वाले के सांपरायिकी-क्रिया होती है। भावितात्मा अनगार यथासूत्र चलते हैं। यह इस अपेक्षा से कहा जाता है।

१६१. भंते! वह ऐसा ही है, भंते! वह ऐसा ही है। यावत् विहरण करने लगे।

१६२. श्रमण भगवान् महावीर ने किसी दिन राजगृह नगर से गुणशिलक चैत्य से प्रतिनिष्क्रमण किया, प्रतिनिष्क्रमण कर नगर से बाहर जनपद विहार करने लगे।

अन्ययूथिक-आरोप-पद

१६३. उस काल और उस समय में राजगृह नाम का नगर था। गुणशिलक चैत्य—वर्णक यावत् पृथ्वी-शिला-पट्टक। उस गुणशिलक चैत्य के न दूर, न निकट बहुत अन्ययूथिक रहते थे। श्रमण भगवान् महावीर यावत् समवसृत हुए यावत् परिषद् लौट गई।

१६४. उस काल और उस समय में श्रमण भगवान् महावीर के ज्येष्ठ अंतेवासी इंद्रभूति नाम का अनगार यावत् ऊर्ध्व-जानु, अधःसिर (उकडू-आसन की मुद्रा में) और ध्यान-कोष्ठ में लीन होकर संयम और तप से अपने-आपको भावित करते हुए विहरण कर रहे थे।

१६५. वे अन्ययूथिक जहां भगवान् गौतम थे, वहां आए, वहां आकर भगवान् गौतम ने इस *प्रकार कहा—आर्यो! तुम तीन योग और तीन करण से असंयत, अविरत, अतीत के पाप-*

-कर्म का प्रतिहनन न करने वाले, भविष्य के पाप-कर्म का प्रत्याख्यान न करने वाले, क्रिया-सहित, असंवृत एकांत-दंड यावत् एकांत-बाल भी हो।

१६६. भगवान् गौतम ने उन अन्ययूथिकों से इस प्रकार कहा—आर्यो! कैसे हम तीन योग और तीन करण से असंयत यावत् एकान्त-बाल हैं?

१६७. अन्ययूथिकों ने भगवान् गौतम से इस प्रकार कहा—आर्यो! तुम गमन करते हुए प्राणों को आक्रांत, अभिहत यावत् उपद्रुत करने के कारण तीन योग और तीन करण से यावत् एकांत-बाल हो।

१६८. भगवान् गौतम ने अन्ययूथिकों से इस प्रकार कहा—आर्यो! हम गमन करते हुए प्राणों को आक्रांत यावत् उपद्रुत नहीं करते। आर्यो! हम शारीरिक आवश्यकता की पूर्ति, सेवा आदि कार्य तथा संयम की दृष्टि से देख-देख-कर बहुत सावधानी-पूर्वक गमन करते हैं। हम देख-देख-कर बहुत सावधानी-पूर्वक गमन करते हैं, इसलिए प्राणों को आक्रांत नहीं करते यावत् उपद्रुत नहीं करते। हम प्राणों को अनाक्रांत यावत् अनुपद्रुत करते हैं, इसलिए तीन योग और तीन करण से संयत यावत् एकांत-पंडित हैं। आर्यो! तुम स्वयं तीन योग और तीन करण से असंयत यावत् एकांत-बाल भी हो।

१६९. अन्ययूथिकों ने भगवान् गौतम से इस प्रकार कहा—आर्यो! कैसे हम तीन योग और तीन करण से असंयत यावत् एकांत-बाल भी हैं?

१७०. भगवान् गौतम ने उन अन्ययूथिकों को इस प्रकार कहा—आर्यो! तुम गमन करते हुए प्राणों को आक्रांत यावत् उपद्रुत करते हो, इसलिए तुम प्राणों को आक्रांत यावत् उपद्रुत करते हुए तीन योग और तीन करण से असंयत यावत् एकांत-बाल भी हो।

१७१. भगवान् गौतम ने उन अन्ययूथिकों को इस प्रकार कहा—उत्तर दिया, उत्तर देकर जहां श्रमण भगवान् महावीर थे वहां आए, आकर श्रमण भगवान् महावीर को वंदन-नमस्कार किया, वन्दन-नमस्कार कर न अति दूर न अति निकट यावत् पर्युपासना करने लगे।

१७२. अयि गौतम! श्रमण भगवान् महावीर ने भगवान् गौतम से इस प्रकार कहा—सुष्ठु गौतम! तुमने अन्ययूथिकों को इस प्रकार कहा। साधु गौतम! तुमने अन्ययूथिकों को इस प्रकार कहा। गौतम! मेरे अनेक अंतेवासी श्रमण-निर्ग्रन्थ छद्मस्थ हैं, जो इस प्रकार का व्याकरण करने में समर्थ नहीं है, जैसे तुम हो। इसलिए सुष्ठु गौतम! अन्ययूथिकों ने इस प्रकार कहा। साधु गौतम! तुमने अन्ययूथिकों से इस प्रकार कहा।

१७३. श्रमण भगवान् महावीर के इस प्रकार कहने पर भगवान् गौतम हृष्ट-तुष्ट हो गए। उन्होंने भगवान् महावीर को वंदन-नमस्कार किया, वंदन-नमस्कार कर इस प्रकार कहा—

परमाणु-पुद्गल-आदि का जानना-देखना-पद

१७४. भंते! छद्मस्थ-मनुष्य क्या परमाणु-पुद्गल को जानता-देखता है? अथवा नहीं जानता, नहीं देखता?

गौतम! कोई जानता है, देखता नहीं। कोई नहीं जानता, नहीं देखता।

१७५. भंते! छद्मस्थ-मनुष्य क्या द्वि-प्रदेशी स्कंध को जानता-देखता है? अथवा नहीं जानता, नहीं देखता?

गौतम! कोई जानता है, देखता नहीं। कोई नहीं जानता है, नहीं देखता है। यावत् असंख्येय-प्रदेशी स्कंध की वक्तव्यता।

१७६. भंते! छद्मस्थ-मनुष्य क्या अनंत-प्रदेशी स्कंध को जानता-देखता है? अथवा नहीं जानता, नहीं देखता?

गौतम! कोई जानता-देखता है। कोई जानता है, नहीं देखता। कोई नहीं जानता, देखता है। कोई नहीं जानता, नहीं देखता।

१७७. भंते! आधोवधिक-मनुष्य परमाणु-पुद्गल को जानता-देखता है अथवा नहीं जानता नहीं देखता? छद्मस्थ की भांति आधोवधिक की वक्तव्यता, परमाणु की भांति अनंत-प्रदेशिक स्कंध की वक्तव्यता।

१७८. भंते! परमाधोवधिक-मनुष्य परमाणु-पुद्गल को जिस समय जानता है, उस समय देखता है? जिस समय देखता है, उस समय जानता है?

यह अर्थ संगत नहीं है।

१७९. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—परमाधोवधिक-मनुष्य परमाणु-पुद्गल को जिस समय जानता है? उस समय नहीं देखता? जिस समय देखता है, उस समय नहीं जानता?

गौतम! ज्ञान साकार होता है। और दर्शन अनाकार। गौतम! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—परमाधोवधिक-मनुष्य परमाणु-पुद्गल को जिस समय जानता है, उस समय नहीं देखता। जिस समय देखता है, उस समय नहीं जानता। इस प्रकार यावत् अनंत-प्रदेशिक स्कंध की वक्तव्यता।

१८०. भंते! केवली मनुष्य क्या परमाणु-पुद्गल को जिस समय जानता है, उस समय देखता है? जिस समय देखता है, उस समय जानता है?

यह अर्थ संगत नहीं है।

१८१. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—केवली मनुष्य परमाणु-पुद्गल को जिस समय जानता है, उस समय नहीं देखता? जिस समय देखता है, उस समय नहीं जानता?

गौतम! ज्ञान साकार होता है और दर्शन अनाकार। गौतम! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—केवली मनुष्य परमाणु-पुद्गल को जिस समय जानता है, उस समय नहीं देखता। जिस समय देखता है, उस समय नहीं जानता। इस प्रकार यावत् अनंत-प्रदेशी स्कंध की वक्तव्यता।

१८२. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

नवां उद्देशक

भव्य-द्रव्य-पद

१८३. राजगृह नगर यावत् गौतम ने इस प्रकार कहा—भंते! भव्य-द्रव्य-नैरयिक भव्य-द्रव्य-नैरयिक है?

हां, है।

१८४. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—भव्य-द्रव्य-नैरयिक भव्य-द्रव्य-नैरयिक है?

गौतम! जो भव्य पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक अथवा मनुष्य नैरयिक में उपपन्न होंगे। इस अपेक्षा से यह कहा जाता है। इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमार की वक्तव्यता।

१८५. भंते! भव्य-द्रव्य-पृथ्वीकायिक भव्य-द्रव्य-पृथ्वीकायिक है?

हां, है।

१८६. किस अपेक्षा से?

गौतम! जो भव्य तिर्यग्योनिक, मनुष्य अथवा देव पृथ्वीकायिक-निकायों में उपपन्न होंगे। इस अपेक्षा से कहा जाता है। अप्कायिक, वनस्पतिकायिक की पूर्ववत् वक्तव्यता। तैजस, वायु, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रियों के जो भव्य तिर्यग्योनिक, मनुष्य, तैजस, वायु, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय अथवा चतुरिन्द्रियों में उपपन्न होंगे। पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक के जो भव्य नैरयिक, तिर्यक्, योनिक, मनुष्य, देव, पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक अथवा पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों में उपपन्न होंगे। इस प्रकार मनुष्यों की वक्तव्यता। वाणमंतर, ज्योतिष्क, वैमानिक की नैरयिक की भांति वक्तव्यता।

१८७. भंते! भव्य-द्रव्य-नैरयिक की कितने काल की स्थिति प्रज्ञप्त है?

गौतम! जघन्यतः अंतर्मुहूर्त्त, उत्कृष्टतः क्रोड-पूर्व।

१८८. भंते! भव्य-द्रव्य-असुरकुमार की कितने काल की स्थिति प्रज्ञप्त है?

गौतम! जघन्यतः अंतर्मुहूर्त्त, उत्कृष्टतः तीन पल्योपम। इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमार की वक्तव्यता।

१८९. भंते! भव्य-द्रव्य-पृथ्वीकायिक की पृच्छा।

गौतम! जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त, उत्कृष्टतः सातिरेक दो सागरोपम।

इसी प्रकार अप्कायिक की वक्तव्यता। तैजस, वायुकायिक की नैरयिक की भांति वक्तव्यता। द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय की नैरयिक की भांति वक्तव्यता। पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक की जघन्यतः अंतर्मुहूर्त्त, उत्कृष्टतः तैंतीस सागरोपम। इसी प्रकार मनुष्य की वक्तव्यता। वाणमंतर, ज्योतिष्क, वैमानिक की असुरकुमार की भांति वक्तव्यता।

१९०. भंते! वह ऐसा ही ह। भंते! वह ऐसा ही है।

दसवां उद्देशक

भावितात्मा का असि-धारा-आदि का अवगाहन-आदि-पद

१९१. राजगृह नगर यावत् गौतम ने इस प्रकार कहा—

भंते! भावितात्मा अनगार तलवार की धारा अथवा छूरे की धारा पर अवगाहन कर सकता है?

हां, अवगाहन कर सकता है।

क्या वह वहां छिन्न अथवा भिन्न होता है?

यह अर्थ संगत नहीं है। भावितात्मा अनगार पर शस्त्र नहीं चलता।

१९२. भंते! भावितात्मा अनगार अग्निकाय के बीचोंबीच से जा सकता है?

हां, जा सकता है।

भंते! क्या वह वहां पर जलता है?

गौतम! यह अर्थ संगत नहीं है। भावितात्मा अनगार पर शस्त्र नहीं चलता।

१९३. भंते! भावितात्मा अनगार पुष्कल-संवर्तक महामेघ के बीचोंबीच से जा सकता है?

हां, जा सकता है।

भंते! क्या वह वहां पर आर्द्र होता है?

गौतम! यह अर्थ संगत नहीं है, भावितात्मा अनगार पर शस्त्र नहीं चलता।

१९४. भंते! भावितात्मा अनगार गंगा महानदी के प्रतिस्रोत में शीघ्र ही आ सकता है?

हां, वह शीघ्र ही आ सकता है।

भंते! क्या वह वहां विनिघात को प्राप्त होता है?

गौतम! यह अर्थ संगत नहीं है, भावितात्मा अनगार पर शस्त्र नहीं चलता।

१९५. भंते! भावितात्मा अनगार जल के आवर्त्त या जल की बूंद पर अवगाहन कर सकता है?

हां, अवगाहन कर सकता है।

भंते! क्या वह वहां पर पीड़ित होता है?

गौतम! यह अर्थ संगत नहीं है। भावितात्मा अनगार पर शस्त्र नहीं चलता।

परमाणु-पुद्गल-आदि का वायुकाय-स्पर्श-पद

१९६. भंते! क्या परमाणु-पुद्गल वायुकाय से स्पृष्ट होता है? अथवा वायुकाय परमाणु--पुद्गल से स्पृष्ट होता है?

गौतम! परमाणु-पुद्गल वायुकाय से स्पृष्ट होता है, वायुकाय परमाणु-पुद्गल से स्पृष्ट नहीं होता।

१९७. भंते! द्वि-प्रदेशी स्कंध वायुकाय से स्पृष्ट होता है? अथवा वायुकाय द्वि-प्रदेशी स्कंध से स्पृष्ट होता है?

पूर्ववत्। इसी प्रकार यावत् असंख्येय-प्रदेशी स्कंध की वक्तव्यता।

१९८. भंते! अनंत-प्रदेशी स्कंध वायुकाय से स्पृष्ट होता है—पृच्छा।

गौतम! अनंत-प्रदेशी स्कंध वायुकाय से स्पृष्ट होता है। वायुकाय अनंत-प्रदेशी स्कंध से स्यात् स्पृष्ट होता है, स्यात् स्पृष्ट नहीं होता।

१९९. भंते! वस्ति (मशक) वायुकाय से स्पृष्ट होता है अथवा वायुकाय वस्ति से स्पृष्ट होता है?

गौतम! वस्ति वायुकाय से स्पृष्ट होता है, वायुकाय वस्ति से स्पृष्ट नहीं होता।

द्रव्यों का वर्ण-आदि-पद

२००. भंते! इस रत्नप्रभा-पृथ्वी के अधोवर्ती द्रव्य-पुद्‌गल वर्ण की दृष्टि से कृष्ण, नील, लाल, पीत और श्वेत। गंध की दृष्टि से सुरभिगंध, दुर्गंध। रस की दृष्टि से तिक्त, कटु, कषाय, आम्ल, मधुर। स्पर्श की दृष्टि से कर्कश, मृदु, गुरु, लघु, शीत, उष्ण, स्निग्ध, रूक्ष हैं? वे अन्योन्य-बद्ध, अन्योन्य-स्पृष्ट, अन्योन्य-बद्ध-स्पृष्ट, अन्योन्य-एकीभूत बने हुए हैं।

हां, है। इसी प्रकार अधःसप्तमी की वक्तव्यता।

२०१. भंते! सौधर्म-कल्प के अधोवर्ती द्रव्य (पुद्‌गल) यावत् एकीभूत हैं?

पूर्ववत्। इसी प्रकार यावत् ईषत्-प्राग्भारा-पृथ्वी के।

२०२. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है। यावत् विहरण करने लगे।

२०३. श्रमण भगवान् महावीर ने किसी दिन राजगृह नगर से गुणशिलक चैत्य से प्रतिनिष्क्रमण किया, प्रतिनिष्क्रमण कर बाहर जनपद-विहार करने लगे।

सोमिल ब्राह्मण-पद

२०४. उस काल और उस समय में वाणिज्यग्राम नाम का नगर था—वर्णक। दूति-पलाशक चैत्य—वर्णक। उस वाणिज्य-ग्राम नामक नगर में सोमिल नाम का ब्राह्मण रहता था—आढ्य यावत्। बहुजन के द्वारा अभिभूत। ऋग्वेद- यावत् परिव्राजक-संबंधी नयों में निष्णात।

पांच सौ छात्रों और अपने कुटुम्ब का आधिपत्य, पौरपत्य, स्वामित्व, कर्तृत्व और आज्ञा देने में समर्थ तथा सेनापतित्व करता था, दूसरों से आज्ञा का पालन करवाता था। श्रमण भगवान् महावीर वहां आए, यावत् समवसृत हुए यावत् परिषद् पर्युपासना करने लगी।

२०५. उस समय सोमिल ब्राह्मण के मन में इस कथा को सुनकर इस प्रकार का आध्यात्मिक, स्मृत्यात्मक, अभिलाषात्मक, मनोगत संकल्प समुत्पन्न हुआ—श्रमण ज्ञातपुत्र क्रमानुसार विचरण ग्रामानुग्राम में परिव्रजन करते हुए, सुखपूर्वक विहार करते हुए यहां आए हैं, यहां संप्राप्त हुए हैं, यहां समवसृत हुए हैं, इसी वाणिज्यग्राम नगर में, दूतिपलाशक चैत्य में प्रवास-योग्य स्थान की अनुमति लेकर संयम और तप से अपने आपको भावित

करते हुए रह रहे हैं। इसलिए म श्रमण ज्ञातपुत्र के पास जाऊं, इन इस प्रकार के आठ हेतु, प्रश्न, कारण और व्याकरण को पूछूं। वे इन इस प्रकार के अर्थ यावत् व्याकरण का उत्तर देंगे तब मैं वंदना करूंगा, नमस्कार करूंगा यावत् पर्युपासना करूंगा। यदि वे इन अर्थ यावत् व्याकरण का उत्तर नहीं देंगे तो मैं इन्हीं अर्थों यावत् व्याकरणों से उन्हें निरुत्तर करूंगा—इस प्रकार संप्रेक्षा की, संप्रेक्षा कर स्नान किया यावत् अल्पभार और बहुमूल्य आभरणों से शरीर को अलंकृत कर अपने घर से प्रतिनिष्क्रमण किया, प्रतिनिष्क्रमण कर पैदल चलते हुए एक सौ छात्रों के साथ संपरिवृत होकर वाणिज्यग्राम नगर के बीचोंबीच निर्गमन किया, निर्गमन कर जहां दूतिपलाशक चैत्य था, जहां श्रमण भगवान् महावीर थे, वहा आया, आकर श्रमण भगवान् महावीर के न अतिदूर न अतिनिकट स्थित होकर श्रमण भगवान् महावीर से इस प्रकार कहा—

२०६. भंते! क्या तुम्हें यात्रा मान्य है? भंते! क्या तुम्हें यमनीय मान्य है? भंते! क्या तुम्हें अव्याबाध मान्य है? भंते! क्या तुम्हें प्रासुक विहार मान्य है?

सोमिल! मुझे यात्रा भी मान्य है, यमनीय भी मान्य है, अव्याबाध भी मान्य है, प्रासुक विहार भी मान्य है।

२०७. भंते! तुम्हारी यात्रा क्या है?

सोमिल! ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप और संयम आदि योगों के साथ जो मेरी प्रयत्नशीलता (यतना) है, वह मेरी यात्रा है।

२०८. भंते! तुम्हारा यमनीय क्या है?

सोमिल! यमनीय दो प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—इन्द्रिय-यमनीय और नोइन्द्रिय-यमनीय।

२०९. भंते! वह इन्द्रिय-यमनीय क्या है?

सोमिल! इन्द्रिय-यमनीय—जो श्रोत्रेन्द्रिय, चक्षुरिन्द्रिय, घ्राणेन्द्रिय, जिह्वेन्द्रिय और स्पर्शनेन्द्रिय निरुपहत (परिपूर्ण) होकर भी मेरे वश में रहते हैं, वह इन्द्रिय-यमनीय है।

२१०. भंते! वह नोइन्द्रिय-यमनीय क्या है?

सोमिल! नोइन्द्रिय-यमनीय जो मेरे क्रोध, मान, माया और लोभ व्युवच्छिन्न होने से उदीप्त नहीं होते, वह नोइन्द्रिय-यमनीय है। यह है यमनीय।

२११. भंते! वह तुम्हारा अव्याबाध क्या है?

सोमिल! जो मेरे वातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक, सांनिपातिक—ये विविध रोग-आतंक और शरीर-गत दोष उपशांत हैं, उदीर्ण नहीं हैं, वह अव्याबाध है।

२१२. भंते! वह प्रासुक विहार क्या है?

सोमिल! जो मैं आरामों, उद्यानों, देवकुलों, स्त्री, पुरुष और नपुंसक-रहित व्यक्तियों में प्रासुक एषणीय पीठ-फलक, शय्या और संस्तारक को ग्रहण कर विहार करता हूं, वह प्रासुक विहार है।

२१३. भंते! तुम्हारे लिए सरिसवय भक्ष्य हैं या अभक्ष्य?

सोमिल! सरिसवय मेरे लिए भक्ष्य भी हैं, अभक्ष्य भी हैं।

२१४. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—सरिसवय मेरे लिए भक्ष्य भी हैं, अभक्ष्य भी हैं?

सोमिल! ब्राह्मण-नय में सरिसवय के दो प्रकार प्रज्ञप्त हैं, जैसे—मित्र-सरिसवय (सदृश वयसाः सवयाः) और धान्य-सरिसवय। जो मित्र-सरिसवय हैं, वे तीन प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—सह-जात, सह-वर्धित, सह-पांशु-क्रीडित। वे श्रमण-निर्ग्रंथों के लिए अभक्ष्य हैं।

जो धान्य-सर्षप हैं, वे दो प्रकार के प्रज्ञप्त हैं—जैसे शस्त्र-परिणत और अशस्त्र-परिणत। जो अशस्त्र-परिणत हैं, वे श्रमण-निर्ग्रंथों के लिए अभक्ष्य हैं। जो शस्त्र-परिणत हैं, वे दो प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—एषणीय और अनेषणीय। जो अनेषणीय हैं, वे श्रमण-निर्ग्रन्थों के लिए अभक्ष्य हैं। जो एषणीय हैं, वे दो प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—याचित और अयाचित। अयाचित हैं, वे श्रमण-निर्ग्रंथों के लिए अभक्ष्य हैं। जो याचित हैं वे दो प्रकार के प्रज्ञप्त हैं—जैसे लब्ध और अलब्ध। जो अलब्ध हैं, वे श्रमण-निर्ग्रंथों के लिए अभक्ष्य हैं। जो लब्ध हैं, वे श्रमण निर्ग्रंथों के लिए भक्ष्य हैं। सोमिल! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—सरिसवय मेरे लिए भक्ष्य भी हैं, अभक्ष्य भी हैं।

२१५. भंते! तुम्हारे लिए माष भक्ष्य हैं या अभक्ष्य?

सोमिल! माष मेरे लिए भक्ष्य भी हैं, अभक्ष्य भी हैं।

२१६. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा—माष मेरे लिए भक्ष्य भी हैं, अभक्ष्य भी हैं?

सोमिल! ब्राह्मण-नय में माष दो प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, द्रव्य-माष, काल-मास। जो काल-मास हैं वे श्रावण आदि से आषाढ़ पर्यवसान तक बारह प्रज्ञप्त हैं, जैसे—श्रावण, भाद्रव, आश्विन, कार्तिक, मृगशिर, पौष, माघ, फाल्गुन, चैत्र, वैशाख, ज्येष्ठामूल और आषाढ़। वे श्रमण-निर्ग्रंथों के लिए अभक्ष्य हैं।

जो द्रव्य-माष हैं, वे दो प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—अर्थ-माष, धान्य-माष।

जो अर्थ-माष हैं, वे दो प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—स्वर्ण-माष, रूप्य-माष। वे श्रमण-निर्ग्रंथों के लिए अभक्ष्य हैं।

जो धान्य-माष हैं, वे दो प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे शस्त्र-परिणत और अशस्त्र-परिणत। इसी प्रकार धान्य-सरिसवय की भांति वक्तव्यता, यावत् इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—माष भक्ष्य भी हैं, अभक्ष्य भी हैं।

२१७. भंते! तुम्हारे कुलथा भक्ष्य हैं या अभक्ष्य?

सोमिल! कुलथा मेरे लिए भक्ष्य भी हैं, अभक्ष्य भी हैं।

२१८. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है यावत् अभक्ष्य भी है?

सोमिल! ब्राह्मण-नय में कुलथा दो प्रकार के प्रज्ञप्त हैं—जैसे—स्त्री-कुलथा और धान्य-कुलथा। जो स्त्री-कुलथा हैं, वे तीन प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—कुल-वधू, कुल-माता, कुल-पुत्री। वे श्रमण-निर्ग्रंथों के लिए अभक्ष्य हैं।

जो धान्य-कुलथा हैं, वे धान्य-सर्षप की भांति वक्तव्य हैं। इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है यावत् अभक्ष्य भी हैं।

२१९. आप एक हैं? आप दो हैं? आप अक्षय हैं? आप अव्यय हैं? आप अवस्थित हैं? आप भूत, वर्तमान और भावी अनेक पर्यायों से युक्त हैं?

सोमिल! मैं एक भी हूं यावत् भूत, वर्तमान और भावी अनेक पर्यायों से युक्त भी हूं।

२२०. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—मैं एक भी हूं यावत् भूत, वर्तमान और भावी अनेक पर्यायों से युक्त भी हूं?

सोमिल! द्रव्य की दृष्टि से मैं एक भी हूं। ज्ञान और दर्शन की दृष्टि से मैं दो भी हूं। प्रदेश की दृष्टि से मैं अक्षय भी हूं, अव्यय भी हूं, अवस्थित भी हूं। उपयोग की दृष्टि से मैं भूत, वर्तमान और भावी अनेक पर्यायों से युक्त भी हूं।

२२१. इस चर्चा-प्रसंग से संबुद्ध सोमिल ब्राह्मण ने श्रमण भगवान् महावीर ने वंदन-नमस्कार किया, वंदन-नमस्कार कर इस प्रकार कहा—स्कंदक की भांति वक्तव्यता यावत् यह वैसा ही है, जैसा आप कहते हैं। जैसे देवानुप्रियों के पास अनेक राजे, युवराजे, कोटवाल, मडम्ब-पति, कुटुम्ब-पति, इभ्य, सेठ, सेनापति, सार्थवाह आदि मुंड होकर अगारता से अनगारिता में प्रव्रजित होते हैं, वैसा मैं नहीं करूंगा। मैं देवानुप्रियों के पास बारह प्रकार के श्रावक-धर्म को स्वीकार करूंगा यावत् बारह प्रकार के श्रावक-धर्म का स्वीकार किया। स्वीकार कर श्रमण भगवान् महावीर को वंदन-नमस्कार किया। वंदन-नमस्कार कर जिस दिशा से आया था, उसी दिशा में लौट गया।

२२२. वह सोमिल ब्राह्मण श्रमणोपासक हो गया—जीव-अजीव को जानने वाला यावत् यथापरिगृहीत-तपःकर्म के द्वारा अपने-आपको भावित करते हुए रहने लगा।

२२३. अयि भंते! भगवान् गौतम ने श्रमण भगवान् महावीर को वंदन-नमस्कार किया, वंदन-नमस्कार कर इस प्रकार कहा—भंते! क्या सोमिल ब्राह्मण देवानुप्रियों के पास मुंड होकर अगारता से अनगारिता में प्रव्रजित होने में समर्थ है?

यह अर्थ संगत नहीं है। शंख की भांति वैसे ही निरवशेष वक्तव्यता यावत् सब दुःखों का अंत करेगा।

२२४. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है। यावत् विहरण करने लगे।

• • •

उन्नीसवां शतक

पहला उद्देशक

संग्रहणी गाथा

१. लेश्या, २. गर्भ, ३. पृथ्वी, ४. महास्रव, ५. चरम, ६. दीप, ७. भवन, ८. निवृत्ति, ९. करण, १०. वनचर-देव—उन्नीसवें शतक में ये दस उद्देशक हैं।

लेश्या-पद

१. राजगृह नगर यावत् गौतम ने इस प्रकार कहा—भंते! लेश्याएं कितनी प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! छह लेश्याएं प्रज्ञप्त हैं, जैसे—इस प्रकार **पण्णवणा** की भांति चौथा लेश्या-उद्देशक (**पण्णवणा,** १७/११४-१४४) निरवशेष वक्तव्य है।

२. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

दूसरा उद्देशक

३. भंते! (मनुष्य गर्भ में) लेश्याएं कितनी प्रज्ञप्त हैं?

इस प्रकार **पण्णवणा** के गर्भ-उद्देशक (**पण्णवणा,** १७/१६६-१७२) की भांति पूर्ववत् निरवशेष वक्तव्य है।

४. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

तीसरा उद्देशक

पृथ्वीकायिक-पद

५. राजगृह नगर यावत् गौतम ने इस प्रकार कहा—भंते! (दो-तीन) यावत् चार-पांच पृथ्वीकायिक-जीव एकत्र होकर साधारण-शरीर का निर्माण करते हैं, निर्माण कर उसके पश्चात् आहार करते हैं, उसका परिणमन करते हैं, शरीर का विशिष्ट निर्माण अथवा पोषण करते हैं?

यह अर्थ संगत नहीं है। पृथ्वीकायिक-जीव प्रत्येक आहार करने वाले—स्वतंत्र आहार करने वाले, परिणाम वाले—स्वतंत्र परिणमन करने वाले हैं और वे अपने-अपने शरीर का निर्माण करते हैं। निर्माण कर उसके पश्चात् आहार करते हैं, उसका परिणमन करते हैं, शरीर का विशिष्ट निर्माण अथवा पोषण करते हैं।

६. भंते! उन जीवों के कितनी लेश्याएं प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! चार लेश्याएं प्रज्ञप्त हैं, जैसे—कृष्ण-लेश्या, नील-लेश्या, कापोत-लेश्या, तेजो-लेश्या।

७. भंते! क्या वे सम्यग्-दृष्टि हैं? मिथ्या-दृष्टि हैं? सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि हैं?

गौतम! सम्यग्-दृष्टि नहीं हैं, मिथ्या-दृष्टि हैं, सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि नहीं हैं।

८. भंते! वे जीव ज्ञानी हैं? अज्ञानी हैं?

गौतम! ज्ञानी नहीं हैं, अज्ञानी हैं। नियमतः दो अज्ञान वाले हैं, जैसे—मति-अज्ञानी, श्रुत-अज्ञानी।

९. भंते! वे जीव क्या मनो-योगी हैं? वचन-योगी हैं? काय-योगी हैं?

गौतम! मनो-योगी नहीं हैं, वचन-योगी नहीं हैं, काय-योगी हैं।

१०. भंते! वे जीव क्या साकारोपयुक्त होते हैं? अनाकारोपयुक्त होते हैं?

गौतम! साकारोपयुक्त होते हैं, अनाकारोपयुक्त भी होते हैं।

११. भंते! वे जीव किस प्रकार का आहार करते हैं?

गौतम! द्रव्यतः अनंत-प्रदेशी द्रव्यों का आहार करते हैं—इस प्रकार **पण्णवणा** के प्रथम आहार-उद्देशक (२८/३०-३२) की भांति वक्तव्यता यावत् सब आत्म-प्रदेशों से आहार करते हैं।

१२. भंते! वे जीव जिसका आहार करते हैं, उसका चय होता है? जिसका आहार नहीं करते, उसका चय नहीं होता? जिसका चय होता है, क्या उसके असार पुद्गलों का विसर्जन और सार पुद्गलों का शरीर और इन्द्रिय के रूप में परिणमन होता है?

हां, गौतम! वे जीव जिसका आहार करते हैं, उसका चय होता है, जिसका आहार नहीं करते, उनका चय नहीं होता यावत् शरीर और इंद्रिय के रूप में परिणमन होता है।

१३. भंते! क्या उन जीवों के इस प्रकार की संज्ञा, प्रज्ञा, मन अथवा वचन होता है कि हम आहार कर रहे हैं?

यह अर्थ संगत नहीं है। किन्तु वे आहार करते हैं।

१४. भंते! क्या उन जीवों के इस प्रकार की संज्ञा, प्रज्ञा, मन अथवा वचन होता है कि हम इष्ट और अनिष्ट स्पर्श का प्रतिसंवेदन कर रहे हैं?

यह अर्थ संगत नहीं हैं। किन्तु वे प्रतिसंवेदन करते हैं।

१५. भंते! क्या वे जीव प्राणातिपात में प्रवृत्त कहलाते हैं, मृषावाद, अदत्तादान यावत् मिथ्या-दर्शन-शल्य में प्रवृत्त कहलाते हैं?

गौतम! प्राणातिपात में भी प्रवृत्त कहलाते हैं, यावत् मिथ्या-दर्शन-शल्य में भी प्रवृत्त कहलाते हैं। वे पृथ्वीकायिक-जीव जिन पृथ्वीकायिक-जीवों की हिंसा में प्रवृत्त होते हैं, उन वध्यमान जीवों को भी ये जीव हमारे वधक हैं इस प्रकार का नानात्व (वध्य-वधक-भाव का भेद) विज्ञात नहीं होता।

१६. भंते! वे जीव कहां से उपपन्न होते हैं? क्या नैरयिक से उपपन्न होते हैं?

इस प्रकार वक्रांति-पद (**पण्णवणा,** ६/८०-८५) में पृथ्वीकायिकों के उपपात की भांति वक्तव्य है।

१७. भंते! उन जीवों के कितने काल की स्थिति प्रज्ञप्त है?

गौतम! जघन्यतः अंतर्मुहूर्त्त, उत्कृष्टतः बाईस हजार वर्ष।

१८. भंते! उन जीवों के कितने समुद्घात प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! तीन समुद्घात प्रज्ञप्त हैं, जैसे—वेदना-समुद्घात, कषाय-समुद्घात, मारणान्तिक-समुद्घात।

१९. भंते! वे जीव मारणान्तिक-समुद्घात से समवहत होकर मरते हैं? असमवहत होकर मरते हैं?

गौतम! मारणान्तिक-समुद्घात से समवहत होकर भी मरते हैं, असमवहत होकर भी मरते हैं।

२०. भंते! वे जीव अनंतर-उद्वर्तन कर कहां जाते हैं? कहां उपपन्न होते हैं?

इस प्रकार वक्रांति-पद (**पण्णवणा** ६/१०३) की भांति उद्वर्तना की वक्तव्यता।

अप्कायिक-आदि-पद

२१. भंते! (दो-तीन) यावत् चार-पांच अप्कायिक जीव एकत्र होकर साधारण-शरीर का निर्माण करते हैं, निर्माण कर उसके पश्चात् आहार करते हैं?

इस प्रकार जो पृथ्वीकायिक का गम (विकल्प) है, वही कथनीय है, यावत् उद्वर्तन करते हैं। इतना विशेष है—अप्कायिक-जीवों की उत्कृष्ट स्थिति सात हजार वर्ष है। शेष पूर्ववत्।

२२. भंते! (दो-तीन) यावत् चार-पांच तैजसकायिक-जीव..........?

पृथ्वीकायिक की भांति वक्तव्यता। इतना विशेष है—उपपात, स्थिति, उद्वर्तना की **पण्णवणा** (६/८६, ४/७२, ६/१०४) की भांति वक्तव्यता, शेष पूर्ववत्। इसी प्रकार वायुकायिक-जीवों की वक्तव्यता, इतना विशेष है—चार समुद्घात प्रज्ञप्त हैं।

२३. भंते! (दो-तीन) यावत् चार-पांच वनस्पतिकायिक ....पृच्छा।

गौतम! यह अर्थ संगत नहीं है। अनंत वनस्पतिकायिक-जीव एकत्र होकर साधारण-शरीर का निर्माण करते हैं। निर्माण कर उसके पश्चात् आहार करते हैं, उसका परिणमन करते हैं, शरीर का विशिष्ट निर्माण अथवा पोषण करते हैं। शेष तैजसकायिक की भांति वक्तव्यता यावत् उद्वर्तन करते हैं। इतना विशेष है—आहार नियमतः छहों दिशाओं से लेते हैं। स्थिति जघन्यतः अंतर्मुहूर्त, उत्कृष्टतः भी अंतर्मुहूर्त। शेष पूर्ववत्।

स्थावर-जीवों की अवगाहना-अल्पबहुत्व-पद

२४. भंते! इन पृथ्वीकायिक-, अप्कायिक-, तैजसकायिक-, वायुकायिक-, वनस्पति-कायिक-जीवों के सूक्ष्म, बादर, पर्याप्तक, अपर्याप्तक की जघन्य-उत्कृष्ट अवगाहना में कौन किससे अल्प, बहु, तुल्य अथवा विशेषाधिक है?

गौतम! १. अपर्याप्तक-सूक्ष्म-निगोद की जघन्य अवगाहना सबसे अल्प है। २. अपर्याप्तक-सूक्ष्म-वायुकायिक की जघन्य अवगाहना उससे असंख्येय-गुणा है। ३. अपर्याप्तक-सूक्ष्म-तैजसकायिक की जघन्य अवगाहना उससे असंख्येय-गुणा है। ४. अपर्याप्तक-सूक्ष्म-अप्कायिक की जघन्य अवगाहना उससे असंख्येय-गुणा है। ५. अपर्याप्तक-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक की जघन्य अवगाहना उससे असंख्येय-गुणा है। ६. अपर्याप्तक-बादर-वायुकायिक की जघन्य अवगाहना उससे असंख्येय-गुणा है। ७. अपर्याप्तक-बादर-तैजसकायिक की जघन्य अवगाहना उससे असंख्येय-गुणा है। ८. अपर्याप्तक-बादर-अप्कायिक की जघन्य अवगाहना उससे असंख्येय-गुणा है। ९. अपर्याप्तक-बादर-पृथ्वीकायिक की जघन्य अवगाहना उससे असंख्येय-गुणा है। १०-११. प्रत्येक शरीर वाले बादर-वनस्पतिकायिक और बादर-निगोद—इनकी अपर्याप्तक अवस्था की जघन्य अवगाहना तुल्य तथा अपर्याप्तक-बादर-पृथ्वीकायिक की जघन्य अवगाहना से असंख्येय-गुणा है। १२. पर्याप्तक-सूक्ष्म-निगोद की जघन्य अवगाहना उससे असंख्येय-गुणा है। १३. उसके अपर्याप्तक की उत्कृष्ट अवगाहना उससे विशेषाधिक है। १४. उसके पर्याप्तक की उत्कृष्ट अवगाहना उससे विशेषाधिक है। १५. पर्याप्तक-सूक्ष्म-वायुकायिक की जघन्य अवगाहना उससे असंख्येय-गुणा है। १६. उसके अपर्याप्तक की उत्कृष्ट अवगाहना उससे विशेषाधिक है। १७. उसके पर्याप्तक की उत्कृष्ट अवगाहना उससे विशेषाधिक है। १८-२०. इसी प्रकार सूक्ष्म-तैजसकायिक की वक्तव्यता। २१-२३. इसी प्रकार सूक्ष्म-अप्कायिक की वक्तव्यता। २४-२६. इसी प्रकार सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक की वक्तव्यता। २७-२९. इसी प्रकार बादर-वायुकायिक की वक्तव्यता। ३०-३२. इसी प्रकार बादर-तैजसकायिक की वक्तव्यता। ३३-३५. इसी प्रकार बादर-अप्कायिक की वक्तव्यता। ३६-३८. इसी प्रकार बादर-पृथ्वीकायिक की वक्तव्यता। ये सब तीन (१८-३८) गमों के द्वारा वक्तव्य है। ३९. पर्याप्तक-बादर-निगोद की जघन्य अवगाहना असंख्येय-गुणा है। ४०. अपर्याप्तक-बादर-निगोद की उत्कृष्ट अवगाहना उससे विशेषाधिक है। ४१. पर्याप्तक-बादर-निगोद की उत्कृष्ट अवगाहना उससे विशेषाधिक है। ४२. पर्याप्तक-प्रत्येक-शरीरी-बादर वनस्पतिकायिक की जघन्य अवगाहना उससे असंख्येय-गुणा है। ४३. अपर्याप्तक-प्रत्येक-शरीरी-बादर-वनस्पतिकायिक की उत्कृष्ट अवगाहना उससे असंख्येय-गुणा है। ४४. पर्याप्तक-प्रत्येक-शरीरी-बादर-वनस्पति-कायिक की उत्कृष्ट अवगाहना उससे असंख्येय-गुणा है।

स्थावर-जीवों का सर्व-सूक्ष्म-सर्व-बादर-पद

२५. भंते! इन पृथ्वीकायिक, अप्कायिक, तैजसकायिक, वायुकायिक और वनस्पतिकायिक में कौनसा काय सर्वथा सूक्ष्म है? कौनसा काय सबमें अतिशय सूक्ष्म है?

गौतम! वनस्पतिकाय सर्वथा सूक्ष्म है, वनस्पतिकाय सबमें अतिशय सूक्ष्म है।

२६. *भंते! इन पृथ्वीकायिक, अप्कायिक, तैजसकायिक और वायुकायिक में कौनसा काय* सर्वथा सूक्ष्म है? कौनसा काय सबमें अतिशय सूक्ष्म है?

गौतम! वायुकाय सर्वथा सूक्ष्म है, वायुकाय सबमें अतिशय सूक्ष्म है।

२७. भंते! इन पृथ्वीकायिक, अप्कायिक और तैजसकायिक में कौनसा काय सर्व सूक्ष्म है? कौनसा काय सूक्ष्मतर है?

गौतम! तैजसकाय सर्वथा सूक्ष्म है, तैजसकाय सबमें अतिशय सूक्ष्म है।

२८. भंते! इन पृथ्वीकायिक और अप्कायिक में कौनसा काय सर्वथा सूक्ष्म है? कौनसा काय सबमें अतिशय सूक्ष्म है?

गौतम! अप्काय सर्वथा सूक्ष्म है, अप्काय सबमें अतिशय सूक्ष्म है।

२९. भंते! इन पृथ्वीकायिक, अप्कायिक, तैजसकायिक, वायुकायिक और वनस्पतिकायिक में कौनसा काय सर्वथा बादर है? कौनसा काय सबमें अतिशय बादर है?

गौतम! वनस्पतिकाय सर्वथा बादर है, वनस्पतिकाय सबमें अतिशय बादर है।

३०. भंते! इन पृथ्वीकायिक, अप्कायिक, तैजसकायिक और वायुकायिक में कौनसा काय सर्वथा बादर है? कौनसा काय सबमें अतिशय बादर है?

गौतम! पृथ्वीकाय सर्वथा बादर है। पृथ्वीकाय सबमें अतिशय बादर है।

३१. भंते! इन अप्कायिक, तैजसकायिक और वायुकायिक में कौनसा काय सर्वथा बादर है? कौनसा काय सबमें अतिशय बादर है?

गौतम। अप्काय सर्वथा बादर है। अप्काय सबमें अतिशय बादर है।

३२. भंते! इन तैजसकायिक और वायुकायिक में कौनसा काय सर्वथा बादर है? कौनसा काय सबमें अतिशय बादर है।

गौतम! तैजसकाय सर्वथा बादर है। तैजसकाय सबमें अतिशय बादर है।

पृथ्वी-शरीर की विशालता का पद

३३. भंते! पृथ्वीकाय का शरीर कितना बड़ा प्रज्ञप्त है?

गौतम! अनंत सूक्ष्म-वनस्पतिकायिक जीवों के जितने शरीर हैं, उतना बड़ा एक सूक्ष्म--वायुकाय का शरीर है। असंख्येय सूक्ष्म-वायुकायिक-जीवों के जितने शरीर हैं, उतना बड़ा एक सूक्ष्म-तैजसकाय का शरीर है। असंख्येय सूक्ष्म-तैजसकायिक-जीवों के जितने शरीर हैं, उतना बड़ा एक सूक्ष्म-अप्काय का शरीर है। असंख्येय सूक्ष्म-अप्कायिक-जीवों के जितने शरीर हैं, उतना बड़ा एक सूक्ष्म-पृथ्वीकाय का शरीर है। असंख्येय सूक्ष्म--पृथ्वीकायिक-जीवों के जितने शरीर हैं, उतना बड़ा एक बादर-वायुकाय का शरीर है। असंख्येय बादर-वायुकायिक-जीवों के जितने शरीर हैं, उतना बड़ा एक बादर-तैजसकाय का शरीर है। असंख्येय बादर-तैजसकायिक-जीवों के जितने शरीर हैं, उतना बड़ा एक बादर-अप्काय का शरीर है। असंख्येय बादर-अप्कायिक-जीवों के जितने शरीर हैं, उतना बड़ा एक बादर-पृथ्वीकाय का शरीर है। गौतम! पृथ्वीकाय का शरीर इतना बड़ा प्रज्ञप्त है।

पृथ्वीकायिक का शरीर-अवगाहना-पद

३४. भंते! पृथ्वीकायिक जीव के शरीर की अवगाहना कितनी बड़ी प्रज्ञप्त है?

गौतम! जैसे कोइ चातुरंत चक्रवर्ती राजा की चन्दन पीसने वाली दासी जो तरुणी, बलवती, युगवान्, युवती, स्वस्थ और सधे हुए हाथों वाली है। उसके हाथ, पांव, पार्श्व, पृष्ठान्तर और उरू दृढ़ और विकसित हैं। सम-श्रेणी में स्थित दो तालवृक्ष और परिघा के समान जिसकी भुजाएं हैं, जो आंतरिक उत्साह-बल से युक्त है, लंघन, प्लवन, धावन और व्यायाम करने में समर्थ है, छेक, दक्ष, प्राप्तार्थ, कुशल, मेधावी, निपुण और सूक्ष्म शिल्प से समन्वित है। वह पीसने की वज्रमयी तीक्ष्ण शिला पर, वज्रमय तीक्ष्ण लोढ़े से, लाख के गोले के समान एक विशाल पृथ्वीकाय के पिण्ड को ग्रहण कर, बार बार इकट्ठा कर, बार बार पिण्डीकरण कर यावत् 'मैं इसे अभी पीस डालूंगी'—ऐसा विचार कर उसे इक्कीस बार पीस देती है, फिर भी गौतम! कुछ पृथ्वीकायिक-जीवों का उस शिला और लोढ़े से स्पर्श होता है, कुछ पृथ्वीकायिक-जीवों का उस शिला और लोढ़े से स्पर्श नहीं होता। कुछ पृथ्वीकायिक-जीवों का उस शिला और लोढ़े से घर्षण होता है, कुछ पृथ्वीकायिक--जीवों का उस शिला और लोढ़े से घर्षण नहीं होता। कुछ पृथ्वीकायिक-जीव परितप्त होते हैं, कुछ पृथ्वीकायिक-जीव परितप्त नहीं होते। कुछ पृथ्वीकायिक-जीव मरते हैं, कुछ नहीं मरते। कुछ पृथ्वीकायिक-जीव पीसे जाते हैं, कुछ नहीं पीसे जाते। गौतम! पृथ्वीकायिक-जीवों के शरीर की इतनी बड़ी अवगाहना प्रज्ञप्त है।

पृथ्वीकायिक का वेदना-पद

३५. भंते! पृथ्वीकायिक-जीव आक्रांत होने पर किस प्रकार की वेदना का प्रत्यनुभव करता हुआ विहरण करता है?

गौतम! जैसे कोई पुरुष तरुण, बलवान्, युगवान्, युवा, स्वस्थ और सधे हुए हाथों वाला है। उसके हाथ, पांव, पार्श्व, पृष्ठान्तर और उरू दृढ़ और विकसित हैं। सम-श्रेणी में स्थित दो ताल वृक्ष और परिघा के समान जिसकी भुजाएं हैं, चर्मेष्टक-पाषाण, मुद्गर और मुट्ठी के प्रयोगों से जिसके शरीर के पुट्ठे आदि सुदृढ़ हैं, जो आंतरिक उत्साह-बल से युक्त है। लंघन, प्लवन, धावन और व्यायाम करने में समर्थ है, छेक, दक्ष, प्राप्तार्थ, कुशल मेधावी, निपुण और सूक्ष्म शिल्प से समन्वित है। वह वृद्धावस्था से जीर्ण, जरा से जर्जरित देह, आतुर, बुभुक्षित, पिपासित, दुर्बल, क्लांत पुरुष के मस्तक को दोनों मुट्ठियों से अभिहत करता है। गौतम! उस पुरुष के दोनों मुट्ठियों से मस्तक के अभिहत होने पर वह पुरुष कैसी वेदना का प्रत्यनुभव करता हुआ विहरण करता है?

श्रमण आयुष्मन्! वह अनिष्ट वेदना का प्रत्यनुभव करता हुआ विहरण करता है।

गौतम! पृथ्वीकायिक-जीव आक्रांत होने पर उस पुरुष की वेदना से अधिक अनिष्टतर, अकांततर, अप्रियतर, अशुभतर, अमनोज्ञतर और अमनोरमतर वेदना का प्रत्यनुभव करता हुआ विहरण करता है।

अप्कायिक-आदि का वेदना-पद

३६. भंते! अप्कायिक-जीव संघर्षण होने पर किस प्रकार की वेदना का प्रत्यनुभव करता हुआ विहरण करता है?

गौतम! पृथ्वीकायिक की भांति वक्तव्यता। इसी प्रकार तैजसकायिक, इसी प्रकार वायुकायिक, इसी प्रकार वनस्पतिकायिक की वक्तव्यता यावत् विहरण करता है।

३७. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

चौथा उद्देशक

महास्रव-आदि-पद

३८. भंते! नैरयिक महाआस्रव, महाक्रिया, महावेदना और महानिर्जरा वाले हैं?
गौतम! यह अर्थ संगत नहीं है।

३९. भंते! नैरयिक महाआस्रव, महाक्रिया, महावेदना और अल्पनिर्जरा वाले हैं?
हां, हैं।

४०. भंते! नैरयिक महाआस्रव, महाक्रिया, अल्पवेदना और महानिर्जरा वाले हैं?
गौतम! यह अर्थ संगत नहीं है।

४१. भंते! नैरयिक महाआस्रव, महाक्रिया, अल्पवेदना और अल्पनिर्जरा वाले हैं?
गौतम! यह अर्थ संगत नहीं है।

४२. भंते! नैरयिक महाआस्रव, अल्पक्रिया, महावेदना और महानिर्जरा वाले हैं?
गौतम! यह अर्थ संगत नहीं है।

४३. भंते! नैरयिक महाआस्रव, अल्पक्रिया, महावेदना और अल्पनिर्जरा वाले हैं?
गौतम! यह अर्थ संगत नहीं है।

४४. भंते! नैरयिक महाआस्रव, अल्पक्रिया, अल्पवेदना और महानिर्जरा वाले हैं?
यह अर्थ संगत नहीं है।

४५. भंते! नैरयिक महाआस्रव, अल्पक्रिया, अल्पवेदना और अल्पनिर्जरा वाले हैं?
यह अर्थ संगत नहीं है।

४६. भंते! नैरयिक अल्पआस्रव, महाक्रिया, महावेदना और महानिर्जरा वाले हैं?
यह अर्थ संगत नहीं है।

४७. भंते! नैरयिक अल्पआस्रव, महाक्रिया, महावेदना और अल्पनिर्जरा वाले हैं?
यह अर्थ संगत नहीं है।

४८. भंते! नैरयिक अल्पआस्रव, महाक्रिया, अल्पवेदना और महानिर्जरा वाले हैं?
यह अर्थ संगत नहीं है।

४९. भंते! नैरयिक अल्पआस्रव, महाक्रिया, अल्पवेदना और अल्पनिर्जरा वाले हैं?
यह अर्थ संगत नहीं है।

५०. भंते! नैरयिक अल्पआस्रव, अल्पक्रिया, महावेदना और महानिर्जरा वाले हैं?

यह अर्थ संगत नहीं है।

५१. भंते! नैरयिक अल्पआस्रव, अल्पक्रिया, महावेदना और अल्पनिर्जरा वाले हैं?

यह अर्थ संगत नहीं है।

५२. भंते! नैरयिक अल्पआस्रव, अल्पक्रिया, अल्पवेदना और महानिर्जरा वाले हैं?

यह अर्थ संगत नहीं है।

५३. भंते! नैरयिक अल्पआस्रव, अल्पक्रिया, अल्पवेदना और अल्पनिर्जरा वाले हैं?

यह अर्थ संगत नहीं है। ये सोलह भंग हैं।

५४. भंते! असुरकुमार महाआस्रव, महाक्रिया, महावेदना और महानिर्जरा वाले हैं?

यह अर्थ संगत नहीं है। इस प्रकार चौथा भंग वक्तव्य है, शेष पंद्रह भंग वर्जनीय हैं। इस प्रकार यावत् स्तनितकुमार की वक्तव्यता।

५५. भंते! पृथ्वीकायिक महाआस्रव, महाक्रिया, महावेदना और महानिर्जरा वाले हैं?

हां हैं। इसी प्रकार यावत्—

५६. भंते! पृथ्वीकायिक अल्पआस्रव, अल्पक्रिया, अल्पवेदना और अल्पनिर्जरा वाले हैं?

हां, है। इसी प्रकार यावत् मनुष्यों की वक्तव्यता। वाणमंतर, ज्योतिष्क, वैमानिक की असुरकुमार की भांति वक्तव्यता।

५७. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

पांचवां उद्देशक

चरम-परम-पद

५८. भंते! नैरयिक चरम भी हैं? नैरयिक परम भी हैं?

हां, हैं।

५९. भंते! चरम नैरयिकों से परम नैरयिक महाकर्मतर, महाक्रियातर, महाआश्रवतर, महावेदनतर हैं? परम नैरयिकों से चरम नैरयिक अल्पकर्मतर, अल्पक्रियातर, अल्प-आस्रवतर और अल्पवेदनतर हैं?

हां, गौतम! चरम नैरयिकों से परम नैरयिक यावत् महावेदनतर हैं। परम नैरयिकों से चरम नैरयिक यावत् अल्पवेदनतर हैं।

६०. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—यावत् अल्पवेदनतर हैं?

गौतम! स्थिति की अपेक्षा से। गौतम! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है यावत् अल्पवेदनतर हैं।

६१. भंते! असुरकुमार चरम भी हैं? असुरकुमार परम भी हैं?

पूर्ववत्। इतना विशेष है—कर्म के विषय में असुरकुमारों की वक्तव्यता नैरयिकों की वक्तव्यता से विपरीत है—परम अल्पकर्म वाले हैं और चरम महाकर्म वाले हैं। शेष पूर्ववत्

यावत् स्तनितकुमार की इसी प्रकार वक्तव्यता। पृथ्वीकायिक यावत् मनुष्य की नैरयिक की भांति वक्तव्यता। वाणमंतर, ज्योतिष्क और वैमानिक की असुरकुमार की भांति वक्तव्यता।

वेदना-पद

६२. भंते! वेदना कितने प्रकार की प्रज्ञप्त है?

गौतम! वेदना दो प्रकार की प्रज्ञप्त है, जैसे—निदा और अनिदा।

६३. भंते! नैरयिक निदा-वेदना का वेदन करते हैं? अनिदा-वेदना का वेदन करते हैं?

गौतम! निदा-वेदना का वेदन भी करते हैं, अनिदा-वेदना का वेदन भी करते हैं। **पण्णवणा** (पद ३५) की भांति यावत् वैमानिक की वक्तव्यता।

६४. भंते! वह एसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

छठा उद्देशक

६५. भंते! द्वीप-समुद्र कहां हैं? भंते! द्वीप-समुद्र कितने हैं? भंते! द्वीप-समुद्र किस संस्थान वाले हैं?

इस प्रकार **जीवाजीवाभिगम** का द्वीप-समुद्र-उद्देशक (**जीवाजीवाभिगम,** ३/२५९-९७५) ज्योतिषमंडित-उद्देशक को छोड़कर यहां वक्तव्य है यावत् परिणाम, जीव-उपपात यावत् अनंत बार।

६६. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

सातवां उद्देशक

असुरकुमार-आदि का भवन-आदि-पद

६७. भंते! असुरकुमार-भवनावास कितने लाख प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! असुरकुमार-भवनावास चौसठ लाख प्रज्ञप्त हैं।

६८. भंते! वे किंमय—किससे बने हुए हैं?

गौतम! सर्वरत्नमय, स्वच्छ, सूक्ष्म यावत् रमणीय (भ. २/११८) हैं। वहां बहुत जीव और पुद्‌गल उपपन्न होते हैं और विनष्ट होते हैं, च्युत होते हैं और उपपन्न होते हैं। वे भवन द्रव्यार्थिक की दृष्टि से शाश्वत हैं, वर्ण-पर्यव यावत् स्पर्श-पर्यव (भ. १४/२५०) से अशाश्वत हैं। इस प्रकार यावत् स्तनितकुमारावास की वक्तव्यता।

६९. भंते! वानमंतर भौमेय नगरावास कितने लाख प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! वानमंतर भौमेय नगरावास असंख्येय लाख प्रज्ञप्त हैं।

७०. भंते! वे किंमय—किससे बने हुए हैं?

शेष पूर्ववत्।

७१. भंते! ज्योतिष्क-विमानावास कितने लाख प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! ज्योतिष्क-विमानावास असंख्येय लाख प्रज्ञप्त हैं।

७२. भंते! वे किंमय—किससे बने हुए हैं?

गौतम! वे सर्व-स्फटिक-रत्नमय और स्वच्छ हैं। शेष पूर्ववत्।

७३. भंते! सौधर्म-कल्प में कितने लाख विमानावास प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! बत्तीस लाख विमानावास प्रज्ञप्त हैं।

७४. भंते! वे किंमय—किससे बने हुए हैं?

गौतम! सर्वरत्नमय और स्वच्छ हैं। शेष पूर्ववत् यावत् अनुत्तरविमान की वक्तव्यता, इतना विशेष है—जहां जितने भवन अथवा विमान ज्ञातव्य है।

७५. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

आठवां उद्देशक

जीव-आदि-निर्वृत्ति-पद

७६. भंते! जीव-निर्वृत्ति कितने प्रकार की प्रज्ञप्त है?

गौतम! जीव-निर्वृत्ति पांच प्रकार की प्रज्ञप्त है, जैसे—एकेन्द्रिय-जीव-निर्वृत्ति यावत् पंचेन्द्रिय-जीव-निर्वृत्ति।

७७. भंते! एकेन्द्रिय-जीव-निर्वृत्ति कितने प्रकार की प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! पांच प्रकार की प्रज्ञप्त हैं, जैसे—पृथ्वीकायिक-एकेन्द्रिय-जीव-निर्वृत्ति यावत् वनस्पतिकायिक-एकेन्द्रिय-जीव-निर्वृत्ति।

७८. भंते! पृथ्वीकायिक-एकेन्द्रिय-जीव-निर्वृत्ति कितने प्रकार की प्रज्ञप्त है?

गौतम! दो प्रकार की प्रज्ञप्त है, जैसे—सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-एकेन्द्रिय-जीव-निर्वृत्ति, बादर-पृथ्वीकायिक-एकेन्द्रिय-जीव-निर्वृत्ति।

इस प्रकार इस अभिलाप के अनुसार तैजस-शरीर का वर्तक-बंध यावत्।

७९. भंते! सर्वार्थसिद्ध-अनुत्तरोपपातिक-कल्पातीत-वैमानिक-देव-पंचेन्द्रिय-जीव-निर्वृत्ति कितने प्रकार की प्रज्ञप्त है?

गौतम! दो प्रकार की प्रज्ञप्त है, जैसे—पर्याप्तक-सर्वार्थसिद्ध-अनुत्तरोपपातिक-कल्पातीत-वैमानिक-देव-पंचेन्द्रिय-जीव-निर्वृत्ति, अपर्याप्तक-सर्वार्थसिद्ध-अनुत्तरोपपातिक-कल्पातीत-वैमानिक-देव-पंचेन्द्रिय-जीव-निर्वृत्ति।

८०. भंते! कर्म-निर्वृत्ति कितने प्रकार की प्रज्ञप्त है?

गौतम! कर्म-निर्वृत्ति आठ प्रकार की प्रज्ञप्त है, जैसे—ज्ञानावरणीय-कर्म-निर्वृत्ति यावत् आंतरायिक-कर्म-निर्वृत्ति।

८१. भंते! नैरयिकों के कितने प्रकार की कर्म-निर्वृत्ति प्रज्ञप्त है?

गौतम! आठ प्रकार की कर्म-निर्वृत्ति प्रज्ञप्त है, जैसे—ज्ञानावरणीय-कर्म-निर्वृत्ति यावत्

आंतरायिक-कर्म-निर्वृत्ति। इस प्रकार यावत् वैमानिक की वक्तव्यता।

८२. भंते! शरीर-निर्वृत्ति कितने प्रकार की प्रज्ञप्त है?

गौतम! शरीर-निर्वृत्ति पांच प्रकार की प्रज्ञप्त है, जैसे—औदारिक-शरीर-निर्वृत्ति यावत् कर्म-शरीर-निर्वृत्ति।

८३. भंते! नैरयिकों के कितने प्रकार की शरीर-निर्वृत्ति प्रज्ञप्त है?

पूर्ववत्। इस प्रकार यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता। इतना विशेष ज्ञातव्य है—जिसमें जितने शरीर प्राप्त हैं।

८४. भंते! सर्वेन्द्रिय-निर्वृत्ति कितने प्रकार की प्रज्ञप्त है?

गौतम! सर्वेन्द्रिय-निर्वृत्ति पांच प्रकार की प्रज्ञप्त है, जैसे श्रोत्रेन्द्रिय-निर्वृत्ति यावत् स्पर्शनेन्द्रिय--निर्वृत्ति। इसी प्रकार नैरयिकों यावत् स्तनितकुमार की वक्तव्यता।

८५. पृथ्वीकायिकों की पृच्छा।

गौतम! एक स्पर्शनेन्द्रिय-निर्वृत्ति प्रज्ञप्त है। इस प्रकार जिसमें जितनी इन्द्रियां प्राप्त हैं, यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता।

८६. भंते! भाषा-निर्वृत्ति कितने प्रकार की प्रज्ञप्त है?

गौतम! भाषा-निर्वृत्ति चार प्रकार की प्रज्ञप्त है, जैसे—सत्यभाषा-निर्वृत्ति, मृषाभाषा--निर्वृत्ति, सत्यामृषा-भाषा-निर्वृत्ति, असत्यामृषा-भाषा-निर्वृत्ति। इस प्रकार एकेन्द्रिय को छोड़कर जिसमें जितनी भाषा प्राप्त हैं, यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता।

८७. भंते! मन-निर्वृत्ति कितने प्रकार की प्रज्ञप्त है?

गौतम! मन-निर्वृत्ति चार प्रकार की प्रज्ञप्त है, जैसे—सत्य-मन-निर्वृत्ति यावत् असत्यामृषा--मन-निर्वृत्ति। इस प्रकार एकेन्द्रिय-विकलेन्द्रिय को छोड़कर यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता।

८८. भंते! कषाय-निर्वृत्ति कितने प्रकार की प्रज्ञप्त है?

गौतम! कषाय-निर्वृत्ति चार प्रकार की प्रज्ञप्त है, जैसे—क्रोध-कषाय-निर्वृत्ति यावत् लोभ--कषाय-निर्वृत्ति। इस प्रकार यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता।

८९. भंते! वर्ण-निर्वृत्ति कितने प्रकार की प्रज्ञप्त है?

गौतम! वर्ण-निर्वृत्ति पांच प्रकार की प्रज्ञप्त है, जैसे—कृष्ण-वर्ण-निर्वृत्ति यावत् शुक्ल-वर्ण--निर्वृत्ति। इस प्रकार निरवशेष यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता। गंध-निर्वृत्ति दो प्रकार की है यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता। रस-निर्वृत्ति पांच प्रकार की है यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता। स्पर्श-निर्वृत्ति आठ प्रकार की है यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता।

९०. भंते! संस्थान-निर्वृत्ति कितने प्रकार की प्रज्ञप्त है?

गौतम! संस्थान-निर्वृत्ति छह प्रकार की प्रज्ञप्त है, जैसे—समचतुरस्र-संस्थान-निर्वृत्ति यावत् हुंड-संस्थान-निर्वृत्ति।

९१. नैरयिकों की पृच्छा।

गौतम! एक हुंड-संस्थान-निर्वृत्ति प्रज्ञप्त है।

९२. असुरकुमारों की पृच्छा।

गौतम! एक समचतुरस्र-संस्थान-निर्वृत्ति प्रज्ञप्त हैं। इस प्रकार यावत् स्तनितकुमारों की वक्तव्यता।

९३. पृथ्वीकायिक जीवों की पृच्छा।

गौतम! एक मसूरचंद-संस्थान-निर्वृत्ति प्रज्ञप्त है। इस प्रकार जिसमें जितने संस्थान प्राप्त हैं, यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता।

९४. भंते! संज्ञा-निर्वृत्ति कितने प्रकार की प्रज्ञप्त है?

गौतम! संज्ञा-निर्वृत्ति चार प्रकार की प्रज्ञप्त है, जैसे—आहार-संज्ञा-निर्वृत्ति यावत् परिग्रह-संज्ञा-निर्वृत्ति। इस प्रकार यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता।

९५. भंते! लेश्या-निर्वृत्ति कितने प्रकार की प्रज्ञप्त है?

गौतम! लेश्या-निर्वृत्ति छह प्रकार की प्रज्ञप्त है, जैसे—कृष्ण-लेश्या-निर्वृत्ति यावत् शुक्ल-लेश्या-निर्वृत्ति। इस प्रकार यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता, जिसमें जितनी लेश्याएं प्राप्त हैं।

९६. भंते! दृष्टि-निर्वृत्ति कितने प्रकार की प्रज्ञप्त है?

गौतम! दृष्टि-निर्वृत्ति तीन प्रकार की प्रज्ञप्त है, जैसे—सम्यक्-दृष्टि-निर्वृत्ति, मिथ्या-दृष्टि-निर्वृत्ति, सम्यक्-मिथ्या-दृष्टि-निर्वृत्ति। इस प्रकार यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता, जिसमें जितनी दृष्टि प्राप्त हैं।

९७. भंते! ज्ञान-निर्वृत्ति कितने प्रकार की प्रज्ञप्त है?

गौतम! ज्ञान-निर्वृत्ति पांच प्रकार की प्रज्ञप्त है, जैसे—आभिनिबोधिक-ज्ञान-निर्वृत्ति यावत् केवल-ज्ञान-निर्वृत्ति। इस प्रकार एकेन्द्रिय को छोड़कर यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता, जिसमें जितने ज्ञान प्राप्त हैं।

९८. भंते! अज्ञान-निर्वृत्ति कितने प्रकार की प्रज्ञप्त है?

गौतम! अज्ञान-निर्वृत्ति तीन प्रकार की प्रज्ञप्त है, जैसे—मति-अज्ञान-निर्वृत्ति, श्रुत-अज्ञान-निर्वृत्ति, विभंग-ज्ञान-निर्वृत्ति। इस प्रकार जिसमें जितने अज्ञान प्राप्त हैं यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता।

९९. भंते! योग-निर्वृत्ति कितने प्रकार की प्रज्ञप्त है?

गौतम! योग-निर्वृत्ति तीन प्रकार की प्रज्ञप्त है, जैसे—मनो-योग-निर्वृत्ति, वचन-योग-निर्वृत्ति, काय-योग-निर्वृत्ति। इस प्रकार यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता, जिसमें जितने प्रकार के योग प्राप्त हैं।

१००. भंते! उपयोग-निर्वृत्ति कितने प्रकार की प्रज्ञप्त है?

गौतम! उपयोग-निर्वृत्ति दो प्रकार की प्रज्ञप्त है, जैसे—साकार-उपयोग-निर्वृत्ति, अनाकार-
-उपयोग-निर्वृत्ति। इस प्रकार यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता।

१०१. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

नवां उद्देशक

करण-पद

१०२. भंते! करण कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! करण पांच प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—द्रव्य-करण, क्षेत्र-करण, काल-करण, भव-
-करण, भाव-करण।

१०३. भंते! नैरयिकों के कितने करण प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! पांच करण प्रज्ञप्त हैं, जैसे—द्रव्य-करण यावत् भाव-करण। इस प्रकार यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता।

१०४. भंते! शरीर-करण कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! शरीर-करण पांच प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—औदारिक-शरीर-करण यावत् कर्म-
-शरीर-करण। इस प्रकार यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता, जिसमें जितने शरीर प्राप्त हैं।

१०५. भंते! इंद्रिय-करण कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! इन्द्रिय-करण पांच प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—श्रोत्रेन्द्रिय-करण यावत् स्पर्शनेन्द्रिय-
-करण। इस प्रकार यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता, जिसमें जितनी इंद्रियां प्राप्त हैं। इस प्रकार इस क्रम से भाषा-करण चार प्रकार का, मनो-करण चार प्रकार का, कषाय-करण चार प्रकार का, समुद्घात-करण सात प्रकार का, संज्ञा-करण चार प्रकार का, लेश्या-करण छह प्रकार का, दृष्टि-करण तीन प्रकार का, वेद-करण तीन प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—स्त्री-वेद-करण, पुरुष-वेद-करण, नपुंसक-वेद-करण। ये सर्व नैरयिक, नैरयिक आदि के दंडक यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता, जिसे जो प्राप्त है, उसके वह सर्व वक्तव्य है।

१०६. भंते! प्राणातिपात-करण कितने प्रकार का प्रज्ञप्त है?

गौतम! प्राणातिपात-करण पांच प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—एकेन्द्रिय-प्राणातिपात-करण यावत् पंचेन्द्रिय-प्राणातिपात-करण। इस प्रकार निरवशेष यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता।

१०७. भंते! पुद्गल-करण कितने प्रकार का प्रज्ञप्त है?

गौतम! पुद्गल-करण पांच प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—वर्ण-करण, गंध-करण, रस-करण, स्पर्श-करण, संस्थान-करण।

१०८. भंते! वर्ण-करण कितने प्रकार का प्रज्ञप्त है?

गौतम! पांच प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—कृष्ण-वर्ण-करण यावत् शुक्ल-वर्ण करण। इस प्रकार गंध-करण दो प्रकार का, रस-करण पांच प्रकार का, स्पर्श-करण आठ प्रकार का प्रज्ञप्त है।

१०९. भंते! संस्थान-करण कितने प्रकार का प्रज्ञप्त है?

गौतम! पांच प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—परिमंडल-संस्थान-करण यावत् (भ. ८/३६) आयत-संस्थान-करण।

११०. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है। यावत् विहरण करने लगे।

दसवां उद्देशक

१११. भंते! सब वाणमंतर समान आहार वाले हैं?

इस प्रकार सोलहवें शतक में दीपकुमार उद्देशक (भ. १६/१२५-१२८) की वक्तव्यता यावत् अल्पर्द्धिक हैं।

११२. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

• • •

बीसवां शतक

पहला उद्देशक

संग्रहणी गाथा

१. द्वीन्द्रिय, २. आकाश, ३. प्राण-वध, ४. परमाणु, ६. अंतर, ७. बंध, ८. भूमि, ९. चारण, १०. सोपक्रम-जीव।

द्वीन्द्रिय-आदि-पद

१. राजगृह नगर यावत् गौतम ने इस प्रकार कहा—भंते! (दो-तीन) यावत् चार-पांच द्वीन्द्रिय जीव एकत्र होकर साधारण-शरीर का निर्माण करते हैं, निर्माण कर उसके पश्चात् आहार करते हैं, उसका परिणमन करते हैं, शरीर का विशिष्ट निर्माण अथवा पोषण करते हैं?

यह अर्थ संगत नहीं है। द्वीन्द्रिय जीव प्रत्येक आहार करने वाले—स्वतंत्र आहार करने वाले, प्रत्येक परिणाम वाले—स्वतंत्र परिणमन करने वाले हैं और वे प्रत्येक शरीर—अपने-अपने शरीर का निर्माण करते हैं। निर्माण कर उसके पश्चात् आहार करते हैं, उसका परिणमन करते हैं, शरीर का विशिष्ट निर्माण अथवा पोषण करते हैं।

२. भंते! उन जीवों के कितनी लेश्याएं प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! तीन लेश्याएं प्रज्ञप्त हैं, जैसे—कृष्ण-लेश्या, नील-लेश्या, कापोत-लेश्या। इस प्रकार जैसे उन्नीसवें शतक (भ. १९/२२) में तैजसकायिक-जीवों की वक्तव्यता यावत् उद्वर्तन करते हैं, इतना विशेष है—सम्यग्-दृष्टि भी हैं, मिथ्या-दृष्टि भी हैं, सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि नहीं हैं। नियमतः दो ज्ञान और दो अज्ञान वाले हैं। मन-योग वाले नहीं हैं। वचन-योग वाले भी हैं, काय-योग वाले भी हैं। नियमतः छहों दिशाओं से आहार लेते हैं।

३. भंते! उन जीवों के इस प्रकार की संज्ञा, प्रज्ञा, मन अथवा वचन होता है कि हम इष्ट और अनिष्ट रस का, इष्ट और अनिष्ट स्पर्श का प्रतिसंवेदन कर रहे हैं?

गौतम! यह अर्थ संगत नहीं है किन्तु वे प्रतिसंवेदन करते हैं। स्थिति जघन्यतः अंतर्मुहूर्त्त, उत्कृष्टतः बारह संवत्सर। शेष पूर्ववत्। इसी प्रकार त्रीन्द्रिय जीवों की वक्तव्यता। इसी प्रकार चतुरिन्द्रिय जीवों की वक्तव्यता। इन्द्रियों में, स्थिति में नानात्व है, शेष पूर्ववत्। स्थिति की **पण्णवणा** (४/९८-१०१) की भांति वक्तव्यता।

४. भंते! (दो-तीन) यावत् चार-पांच पंचेन्द्रिय-जीव एकत्र होकर साधारण-शरीर का निर्माण करते हैं?

इस प्रकार द्वीन्द्रिय की भांति वक्तव्यता, इतना विशेष है—लेश्या छह है, तीन दृष्टि, ज्ञान

चार, तीन अज्ञान की भजना, योग तीन।

५. भंते! उन जीवों के संज्ञा, प्रज्ञा, मन अथवा वचन होता है कि हम आहार कर रहे हैं?

गौतम! कुछ जीवों के इस प्रकार की संज्ञा, प्रज्ञा, मन अथवा वचन होता है कि हम आहार कर रहे हैं। कुछ जीवों के इस प्रकार की संज्ञा, प्रज्ञा, मन अथवा वचन नहीं होता कि हम आहार कर रहे हैं किन्तु वे आहार करते हैं।

६. भंते! उन जीवों के इस प्रकार की संज्ञा यावत् वचन होता है कि हम इष्ट-अनिष्ट शब्द, इष्ट-अनिष्ट, रूप इष्ट-अनिष्ट गंध, इष्ट-अनिष्ट रस, इष्ट-अनिष्ट स्पर्श का प्रतिसंवेदन कर रहे हैं?

गौतम! कुछ जीवों के इस प्रकार की संज्ञा यावत् वचन होता है कि हम इष्ट-अनिष्ट शब्द यावत् इष्ट-अनिष्ट स्पर्श का प्रतिसंवेदन कर रहे हैं। कुछ जीवों के इस प्रकार की संज्ञा यावत् वचन नहीं होता कि हम इष्ट-अनिष्ट शब्द यावत् इष्ट-अनिष्ट स्पर्श का प्रतिसंवेदन कर रहे हैं किन्तु वे प्रतिसंवेदन करते हैं।

७. भंते! क्या वे जीव प्राणातिपात में प्रवृत्त कहलाते हैं? पृच्छा।

गौतम! कुछ जीव प्राणातिपात में प्रवृत्त कहलाते हैं यावत् मिथ्या-दर्शन-शल्य में प्रवृत्त कहलाते हैं। कुछ जीव प्राणातिपात में प्रवृत्त नहीं कहलाते, मृषावाद में यावत् मिथ्या-दर्शन-शल्य में प्रवृत्त नहीं कहलाते। वे जीव जिन जीवों की हिंसा में प्रवृत्त होते हैं, उन वध्यमान जीवों में भी कुछ जीवों को, ये जीव हमारे वधक हैं, इस प्रकार का नानात्व (वध्य-वधक-भाव का भेद) विज्ञात होता है, कुछ जीवों को यह नानात्व (वध्य-वधक-भाव का भेद) विज्ञात नहीं होता। उपपात सर्व दंडकों से होता है यावत् सर्वार्थसिद्ध तक से होता है। (**पण्णवणा**, ६/७०-८१, ८७-९८)। स्थिति—जघन्यतः अंतर्मुहूर्त्त, उत्कृष्टतः तैंतीस सागरोपम। केवली-समुद्घात को छोड़कर छह समुद्घात। उद्वर्तना कर सर्वत्र जाते हैं, उत्पन्न होते हैं यावत् सर्वार्थसिद्ध तक। (सर्वार्थसिद्धि में संयत ही उत्पन्न होते हैं।) (**पण्णवणा**, ६/९३-१०२,१०५-११३) शेष द्वीन्द्रिय की भांति वक्तव्यता।

८. भंते! इन द्वीन्द्रिय-जीवों यावत् पंचेन्द्रिय-जीवों में कौन किससे अल्प, बहुत, तुल्य अथवा विशेषाधिक है?

गौतम! सबसे अल्प पंचेन्द्रिय-जीव हैं। चतुरिन्द्रिय उससे विशेषाधिक हैं, त्रीन्द्रिय उससे विशेषाधिक हैं, द्वीन्द्रिय उससे विशेषाधिक हैं।

९. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है। यावत् विहरण करने लगे।

दूसरा उद्देशक

अस्तिकाय-पद

१०. भंते! आकाश कितने प्रकार का प्रज्ञप्त है?

गौतम! आकाश दो प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—लोकाकाश और अलोकाकाश।

११. भंते! लोकाकाश में क्या जीव हैं? जीव के देश हैं?

इस प्रकार जैसे द्वितीय शतक में अस्ति-उद्देशक (भ. २/१३९-१४५) है, वह यहां भी वक्तव्य है, इतना विशेष है—अभिलाप यावत् भंते! धर्मास्तिकाय कितना बड़ा प्रज्ञप्त है? गौतम! वह लोक में है, लोक-परिमाण है, लोक-प्रमाण है, लोक से स्पृष्ट है, लोक का ही अवगाहन कर अवस्थित है। इसी प्रकार यावत् पुद्‌गलास्तिकाय की वक्तव्यता।

१२. भंते! अधो-लोक धर्मास्तिकाय के कितने भाग में अवगाढ़ है।

गौतम! वह धर्मास्तिकाय के कुछ अधिक आधे भाग में अवगाढ़ हैं। इस प्रकार इस अभिलाप के अनुसार जैसे द्वितीय शतक (भ. २/१४७-१५३) की वक्तव्यता यावत्—

१३. भंते! ईषत्-प्राग्भारा-पृथ्वी लोकाकाश के क्या संख्येय भाग में अवगाढ़ है?

गौतम! संख्यातवें भाग में अवगाढ़ नहीं है, असंख्यातवें भाग में अवगाढ़ है, संख्येय-भाग में अवगाढ़ नहीं है, असंख्येय-भाग में अवगाढ़ नहीं है, सर्वलोक में अवगाढ़ नहीं है। शेष पूर्ववत्।

अस्तिकाय का अभिवचन-पद

१४. भंते! धर्मास्तिकाय के कितने अभिवचन प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! अनेक अभिवचन प्रज्ञप्त हैं, जैसे—धर्म, धर्मास्तिकाय, प्राणातिपात-विरमण, मृषावाद-विरमण, इस प्रकार यावत् परिग्रह-विरमण, क्रोध-विवेक यावत् मिथ्या-दर्शन--शल्य-विवेक, ईर्या-समिति, भाषा-समिति, एषणा-समिति, आदान-भांड-मात्र-निक्षेप--समिति, मल-मूत्र, श्लेष्मा, नाक के मैल, शरीर का गाढ़ मैल-परिष्ठापनिक-समिति, मन-गुप्ति, वचन-गुप्ति, काय-गुप्ति—जो अन्य भी इस प्रकार (चारित्र-धर्म के वाचक) के हैं, वे सब धर्मास्तिकाय के अभिवचन हैं।

१५. भंते! अधर्मास्तिकाय के कितने अभिवचन प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! अनेक अभिवचन प्रज्ञप्त हैं, जैसे—अधर्म, अधर्मास्तिकाय, प्राणातिपात यावत् मिथ्या-दर्शन-शल्य, ईर्या-असमिति यावत् मल, मूत्र, श्लेष्म, नाक और शरीर का गाढ़ मैल-परिष्ठापनिक-असमिति, मन-अगुप्ति, वचन-अगुप्ति, काय-अगुप्ति—जो अन्य भी तथा प्रकार के हैं, वे सब अधर्मास्तिकाय के अभिवचन हैं।

१६. भंते! आकाशास्तिकाय के कितने अभिवचन प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! आकाशास्तिकाय के अनेक अभिवचन प्रज्ञप्त हैं, जैसे—आकाश, आकाशास्तिकाय, गगन, नभ, सम, विषम, खह, विह, वीची, विवर, अंबर, अंबरिस, छिद्र, शुशिर, मार्ग, विमुख, अर्त, विवर्त, आधार, व्योम, भाजन, अंतरिक्ष, श्याम, अवकाशांतर, अगम, स्फटिक, अनंत—जो अन्य भी इस प्रकार के हैं, वे सब आकाशास्तिकाय के अभिवचन हैं।

१७. भंते! जीवास्तिकाय के कितने अभिवचन प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! अनेक अभिवचन प्रज्ञप्त हैं, जैसे—जीव, जीवास्तिकाय, प्राण, भूत, सत्त्व, विज्ञ, वेदा, चेदा, जेता, आत्मा, रंगन, हिंदुक, पुद्‌गल, मानव, कर्ता, विकर्ता, जगत्, जंतु, योनि, स्वयंभू, सशरीरी, नायक, अंतरात्मा—जो अन्य भी इस प्रकार के हैं, वे सब जीवास्तिकाय के अभिवचन हैं।

१८. भंते! पुद्गलास्तिकाय के कितन अभिवचन प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! अनेक अभिवचन प्रज्ञप्त हैं, जैसे—पुद्गल, पुद्गलास्तिकाय, परमाणु-पुद्गल, द्वि-प्रदेशी, त्रि-प्रदेशी यावत् असंख्येय-प्रदेशी, अनंत-प्रदेशी स्कंध, जो अन्य भी इस प्रकार के हैं, वे सब पुद्गलास्तिकाय के अभिवचन हैं।

१९. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

तीसरा उद्देशक

प्राणातिपात-आदि का आत्मा में परिणति-पद

२०. भंते! प्राणातिपात, मृषावाद यावत् मिथ्या-दर्शन-शल्य, प्राणातिपात-विरमण यावत् मिथ्या-दर्शन-शल्य-विवेक, औत्पत्तिकी, वैनयिकी, कर्मजा, परिणामजा, अवग्रह, ईहा, अवाय, धारणा, उत्थान, कर्म, बल, वीर्य, पुरुषकार-पराक्रम, नैरयिकत्व, असुरकुमारत्व यावत् वैमानिकत्व, ज्ञानावरणीय यावत् आंतरायिक, कृष्ण-लेश्या यावत् शुक्ल-लेश्या, सम्यग्-दृष्टि, मिथ्या-दृष्टि, सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि, चक्षु-दर्शन, अचक्षु-दर्शन, अवधि-दर्शन, केवल-दर्शन, आभिनिबोधिक-ज्ञान यावत् विभंग-ज्ञान, आहार-संज्ञा, भय-संज्ञा, मैथुन-संज्ञा, परिग्रह-संज्ञा, औदारिक-शरीर, वैक्रिय-शरीर, आहारक-शरीर, तैजस-शरीर, कर्मक-शरीर, मन-योग, वचन-योग, काय-योग, साकारोपयोग, अनाकारोपयोग—जो अन्य भी इस प्रकार के हैं, वे सब आत्मा के सिवाय अन्यत्र कहीं परिणत नहीं होते?

हां, गौतम! प्राणातिपात यावत् ये सब आत्मा के सिवाय अन्यत्र कहीं परिणत नहीं होते।

गर्भ-अवक्रममाण के वर्ण-आदि-पद

२१. भंते! गर्भ में अवक्रमण करता हुआ जीव कितने वर्ण, कितने गंध, कितने रस और कितने रस के परिणामों से परिणत होता है?

गौतम! पांच वर्ण, दो गंध, पांच रस और आठ स्पर्श के परिणामों से परिणत होता है।

२२. भंते! क्या जीव कर्म से विभक्ति-भाव (नरक, मनुष्य आदि भव) में परिणमन करता है, अकर्म से विभक्ति-भाव में परिणमन नहीं करता? क्या जगत् कर्म से विभक्ति-भाव में परिणमन करता है? अकर्म से विभक्ति-भाव में परिणमन नहीं करता?

हां! गौतम! जीव कर्म से विभक्ति-भाव में परिणमन करता है, अकर्म से नहीं, जगत् कर्म से विभक्ति-भाव में परिणमन करता है, अकर्म से नहीं।

२३. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

चौथा उद्देशक

इन्द्रिय-उपचय-पद

२४. भंते! इन्द्रिय-उपचय कितने प्रकार का प्रज्ञप्त है?

गौतम! इन्द्रिय-उपचय पांच प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—श्रोत्रेन्द्रिय-उपचय, इस प्रकार **पण्णवणा** का द्वितीय उद्देशक (१५/२) निरवशेष वक्तव्य है।

२५. भंते! वह ऐसा ही है। भते! वह ऐसा ही है। भगवान् गौतम यावत् विहरण करने लगे।

पांचवां उद्देशक

परमाणु-स्कंधों के वर्ण-आदि भंग-पद

२६. भंते! परमाणु पुद्गल कितने वर्ण, कितने गंध, कितने रस और कितने स्पर्श वाला प्रज्ञप्त है?

गौतम! एक वर्ण, एक गंध, एक रस और दो स्पर्श वाला प्रज्ञप्त है। यदि एक वर्ण वाला है? स्यात् काला, स्यात् नीला, स्यात् लाल, स्यात् पीला, स्यात् शुक्ल है। यदि एक गंध वाला है? स्यात् सुगंध वाला है, स्यात् दुर्गंध वाला है। यदि एक रस वाला है? स्यात् तिक्त, स्यात् कटुक, स्यात् कषाय, स्यात् अम्ल, स्यात् मधुर है। यदि दो स्पर्श वाला है? स्यात् शीत और स्निग्ध स्पर्श वाला है। स्यात् शीत और रूक्ष स्पर्श वाला है। स्यात् उष्ण और स्निग्ध स्पर्श वाला है। स्यात् उष्ण और रूक्ष स्पर्श वाला है।

२७. भंते! द्वि-प्रदेशी स्कंध कितने वर्ण यावत् कितने स्पर्श वाला प्रज्ञप्त है?

गौतम! स्यात् एक वर्ण वाला, स्यात् दो वर्ण वाला, स्यात् एक गंध वाला, स्यात् दो गंध वाला, स्यात् एक रस वाला, स्यात् दो रस वाला, स्यात् दो स्पर्श वाला, स्यात् चार स्पर्श वाला प्रज्ञप्त है। यदि एक वर्ण वाला है? स्यात् काला यावत् स्यात् शुक्ल है। यदि दो वर्ण वाला है? १. स्यात् काला और नीला है। २. स्यात् काला और लाल है। ३. स्यात् काला और पीला है। ४. स्यात् काला और शुक्ल है। ५. स्यात् नीला और लाल है। ६. स्यात् नीला और पीला है। ७. स्यात् नीला और शुक्ल है। ८. स्यात् लाल और पीला है। ९. स्यात् लाल और शुक्ल है। १०. स्यात् पीला और शुक्ल है। इस प्रकार इन द्वि-संयोगों से दस भंग होते हैं। यदि एक गंध वाला है? स्यात् सुगंध वाला है, स्यात् दुर्गंध वाला है। यदि दो गंध वाला है? सुगंध और दुर्गंध वाला है। रस की वर्ण की भांति वक्तव्यता। यदि दो स्पर्श वाला है। स्यात् शीत और स्निग्ध है, इस प्रकार परमाणु-पुद्गल की भांति वक्तव्यता। यदि तीन स्पर्श वाला है? १. सर्व शीत, देश स्निग्ध और देश रूक्ष है। २. सर्व उष्ण, देश स्निग्ध और देश रूक्ष है। ३. सर्व स्निग्ध, देश शीत और देश उष्ण है। ४. सर्व रूक्ष, देश शीत और देश उष्ण है। यदि चार स्पर्श वाला है? १. देश शीत, देश उष्ण, देश स्निग्ध और देश रूक्ष है। ये स्पर्श के नौ भंग हैं। (द्रष्टव्य, २०/२८, पृ. ६७८)

२८. भंते! त्रि-प्रदेशी स्कंध कितने वर्ण वाला प्रज्ञप्त है?

अठारहवें शतक के छठे उद्देशक (भ. १८/११३) की भांति वक्तव्यता यावत् चार स्पर्श प्रज्ञप्त हैं। यदि एक वर्ण वाला है? स्यात् काला यावत् शुक्ल वर्ण वाला प्रज्ञप्त है। यदि दो वर्ण वाला है? १. स्यात् काला और नीला है। २. स्यात् काला और नीले हैं। ३. स्यात् काले और नीला है। ४. स्यात् काला और लाल है। ५. स्यात् काला और लाल हैं। ६. स्यात् काले और लाल है। इसी प्रकार पीले के साथ तीन, इसी प्रकार शुक्ल के साथ तीन, इसी प्रकार स्यात् नीला और स्यात् लाल के साथ तीन भंग। इसी प्रकार पीले के साथ तीन, इसी प्रकार शुक्ल के साथ तीन, स्यात् लाल और पीला के तीन भंग,

शुक्ल के साथ तीन भंग, स्यात् पीला और स्यात् शुक्ल के तीन भंग—ये सब दस द्वि-संयोगज भंग तीस होते हैं।

यदि तीन वर्ण वाला है? १. स्यात् काला, नीला और लाल है। २. स्यात् काला, नीला और पीला है। ३. स्यात् काला, नीला और शुक्ल है। ४. स्यात् काला, लाल और पीला है, ५. स्यात् काला, लाल और शुक्ल है। ६. स्यात् काला, पीला और शुक्ल है। ७. स्यात् नीला, लाल और पीला है। ८. स्यात् नीला, लाल और शुक्ल है। ९. स्यात् नीला, पीला और शुक्ल है। १०. स्यात् लाल, पीला और शुक्ल है। इस प्रकार ये दस त्रि-संयोगज भंग हैं।

यदि एक गंध वाला है? स्यात् सुगंध वाला है, स्यात् दुर्गंध वाला है। यदि दो गंध वाला है? सुगंध वाला और दुर्गंध वाला है—ये तीन भंग हैं। रस की वर्ण की भांति वक्तव्यता।

यदि दो स्पर्श वाला है? स्यात् शीत और स्निग्ध है। इस प्रकार द्वि-प्रदेशी स्कंध की भांति चार भंग वक्तव्य हैं। यदि तीन स्पर्श वाला है? १. सर्व शीत, देश स्निग्ध और देश रूक्ष है। २. सर्व शीत, देश स्निग्ध और देश रूक्ष (बहुवचन) हैं। ३. सर्व शीत, देश स्निग्ध (बहुवचन) और देश रूक्ष हैं। ४-६. सर्व उष्ण, देश स्निग्ध और देश रूक्ष है—यहां तीन भंग वक्तव्य हैं। ७-९. सर्व स्निग्ध, देश शीत और देश उष्ण है—यहां भी तीन भंग वक्तव्य हैं। १०-१२. सर्व रूक्ष, देश शीत और देश उष्ण है—यहां भी तीन भंग वक्तव्य हैं।

यदि चार स्पर्श वाला है? १. देश शीत, देश उष्ण, देश स्निग्ध और देश रूक्ष है। २. देश शीत, देश उष्ण, देश स्निग्ध और देश रूक्ष (बहुवचन) हैं। ३. देश शीत, देश उष्ण, देश स्निग्ध (बहुवचन) और देश रूक्ष है। ४. देश शीत, देश उष्ण (बहुवचन), देश स्निग्ध और देश रूक्ष है। ५. देश शीत, देश उष्ण (बहुवचन), देश स्निग्ध और देश रूक्ष (बहुवचन) हैं। ६. देश शीत, देश उष्ण (बहुवचन), देश स्निग्ध (बहुवचन) और देश रूक्ष है। ७. देश शीत (बहुवचन), देश उष्ण, देश स्निग्ध और देश रूक्ष है। ८. देश शीत (बहुवचन), देश उष्ण, देश स्निग्ध और देश रूक्ष (बहुवचन) हैं। ९. देश शीत (बहुवचन) देश उष्ण, देश स्निग्ध (बहुवचन) और देश रूक्ष है। इस प्रकार त्रि-प्रदेशी स्कन्ध-स्पर्श के पच्चीस भंग होते हैं।

२९. भंते! चतुष्प्रदेशी स्कंध कितने वर्ण वाला प्रज्ञप्त है?

अठारहवें शतक (भ. १८/११४) की भांति वक्तव्यता यावत् स्यात् चार स्पर्श वाला प्रज्ञप्त है।

यदि एक वर्ण वाला है? स्यात् काला यावत् शुक्ल है। यदि दो वर्ण वाला है? १. स्यात् काला और नीला है। २. स्यात् काला और नीला (बहुवचन) हैं। ३. स्यात् काला (बहुवचन) और नीला है। ४. स्यात् काला (बहुवचन) और नीला (बहुवचन) हैं। ५-८. स्यात् काला और लाल है—यहां भी चार विकल्प हैं। ९-१२. स्यात् काला और पीला है। १३-१६. स्यात् काला और शुक्ल है। १७-२०. स्यात् नीला और लाल है। २१-२४. स्यात् नीला और पीला है। २५-२८. स्यात् नीला और शुक्ल है।

२९-३२. स्यात् लाल और पीला है। ३३-३६. स्यात् लाल और शुक्ल है। ३७-४०. स्यात् पीला और शुक्ल है। इस प्रकार ये दस द्वि-संयोगज भंग से चालीस होते हैं।

यदि तीन वर्ण वाला है? १. स्यात् काला, नीला और लाल है। २. स्यात् काला, नीला और लाल (बहुवचन) हैं। ३. स्यात् काला, नीला (बहुवचन) और लाल है। ४. स्यात् काला (बहुवचन) नीला और लाल है। ये चार भंग हैं। इस प्रकार ५-८. काला, नीला और पीला के भंग चार, ९-१२. काला, नीला और शुक्ल के चार १३-१६. काला, लाल और पीला के चार, १७-२०. काला, लाल और शुक्ल के चार, २१-२४. काला, पीला और शुक्ल के चार २५-२८. नीला, लाल और पीला के चार २९-३२. नीला, लाल और शुक्ल के चार ३३-३६. नीला, पीला और शुक्ल के चार ३७-४०. लाल, पीला और शुक्ल के चार–इस प्रकार के ये दस त्रिक-संयोगज, एक-एक के चार चार भंग–ये सर्व चालीस भंग होते हैं।

यदि चार वर्ण वाला है? १. स्यात् काला, नीला, लाल और पीला है। २. स्यात् काला, नीला, लाल और शुक्ल है। ३. स्यात् काला, नीला, पीला और शुक्ल है। ४. स्यात् काला, लाल, पीला और शुक्ल है। ५. स्यात् नीला, लाल, पीला और शुक्ल है। इस प्रकार ये चतुष्क-संयोगज भंग पांच होते हैं। ये वर्ण के नब्बे भंग होते हैं।

यदि एक गंध वाला है? स्यात् सुगंध वाला है, स्यात् दुर्गंध वाला है। यदि दो गंध वाला है? सुगंध और दुर्गंध वाला है। रस की वर्ण की भांति वक्तव्यता।

यदि दो स्पर्श वाला है? परमाणु-पुद्‌गल की भांति वक्तव्यता। यदि तीन स्पर्श वाला है? १. सर्व शीत, देश स्निग्ध और देश रूक्ष है। २. सर्व शीत, देश स्निग्ध और देश रूक्ष (बहुवचन) है। ३. सर्व शीत, देश स्निग्ध (बहुवसन) और देश रूक्ष है। ४. सर्व शीत, देश स्निग्ध (बहुवचन) और देश रूक्ष (बहुवचन) है। ५-८. सर्व उष्ण, देश स्निग्ध और देश रूक्ष के भंग चार ९-१२. सर्व स्निग्ध, देश, शीत और देश उष्ण के भंग चार १३-१६. सर्व रूक्ष, देश शीत और देश उष्ण के भंग चार। ये तीन स्पर्श के सोलह भंग होते हैं।

यदि चार स्पर्श वाला है? १. देश शीत, देश उष्ण, देश स्निग्ध और देश रूक्ष है। २. देश शीत, देश उष्ण, देश स्निग्ध और देश रूक्ष (बहुवचन) हैं। ३. देश शीत, देश उष्ण, देश स्निग्ध (बहुवचन) और देश रूक्ष है। ४. देश शीत, देश उष्ण, देश स्निग्ध (बहुवचन) और देश रूक्ष (बहुवचन) हैं। ५. देश शीत, देश उष्ण (बहुवचन), देश स्निग्ध और देश रूक्ष है। ६. देश शीत, देश उष्ण (बहुवचन), देश स्निग्ध और देश रूक्ष (बहुवचन) हैं। ७. देश शीत, देश उष्ण (बहुवचन), देश स्निग्ध (बहुवचन) और देश रूक्ष है। ८. देश शीत, देश उष्ण (बहुवचन), देश स्निग्ध (बहुवचन) और देश रूक्ष (बहुवचन) हैं। ९. देश शीत (बहुवचन) देश उष्ण, देश स्निग्ध और देश रूक्ष है–इस प्रकार चार स्पर्श के सोलह भंग वक्तव्य है यावत् १६. देश शीत (बहुवचन), देश उष्ण (बहुवचन), देश स्निग्ध (बहुवचन) और देश रूक्ष (बहुवचन) है। ये सर्व स्पर्श के छत्तीस भंग हैं।

३०. भंते! पांच-प्रदेशी स्कंध कितने वर्ण वाला प्रज्ञप्त हैं?

अठारहवें शतक (१८/११५) की भांति वक्तव्यता यावत् स्यात् चार स्पर्श प्रज्ञप्त है।

यदि एक वर्ण वाला है? एक वर्ण, दो वर्ण की चतुष्प्रदेशी स्कंध की भांति वक्तव्यता।

यदि तीन वर्ण वाला है? १. स्यात् काला, नीला और लाल है। २. स्यात् काला, नीला और लाल (बहुवचन) हैं। ३. स्यात् काला, नीला (बहुवचन) और लाल है। ४. स्यात् काला, नीला (बहुवचन) और लाल (बहुवचन) हैं। ५. स्यात् काला (बहुवचन) नीला और लाल है। ६. स्यात् काला (बहुवचन) नीला और लाल (बहुवचन) हैं। ७. स्यात् काला (बहुवचन) नीला (बहुवचन) और लाल है। ८-१४. स्यात् काला, नीला और पीला है—यहां भी सात भंग है। १५-२१. काला, नीला और शुक्ल के सात भंग। २२-२८. काला, लाल और पीला के सात भंग। २९-३५. काला, लाल और शुक्ल के सात भंग। ३६-४२. काला, पीला और शुक्ल के सात भंग। ४३-४९. नीला, लाल और पीला के सात भंग। ५०-५६. नीला, लाल और शुक्ल के सात भंग। ५७-६३. नीला, पीला और शुक्ल के सात भंग। ६४-७०. लाल, पीला और शुक्ल के सात भंग। ये त्रिक संयोग से सत्तर भंग होते हैं।

यदि चार वर्ण वाला है? १. स्यात् काला, नीला, लाल और पीला है। २. स्यात् काला, नीला, लाल और पीला (बहुवचन) हैं। ३.स्यात् काला, नीला, लाल (बहुवचन) और पीला है। ४. स्यात् काला, नीला (बहुवचन), लाल और पीला है। ५. स्यात् काला (बहुवचन), नीला, लाल और पीला है। ये पांच भंग हैं। ६-१०. स्यात् काला, नीला, लाल और शुक्ल—यहां भी पांच भंग है। ११-१५. इसी प्रकार काला, नीला, पीला और शुक्ल—इनमें पांच भंग हैं। १६-२०. काला, लाल, पीला और शुक्ल—इनके पांच भंग हैं। २१-२५. नीला, लाल, पीला और शुक्ल—इनके पांच भंग हैं। इस प्रकार ये चतुष्क-संयोग से पच्चीस भंग होते हैं।

यदि पांच वर्ण वाला है? काला, नीला, लाल, पीला और शुक्ल है। ये सर्व एक, दो, तीन, चार, पंच संयोग से इनके सौ भंग होते हैं। गंध की चतुष्प्रदेशी स्कंध की भांति वक्तव्यता। रस की वर्ण की भांति वक्तव्यता। स्पर्श की चतुष्प्रदेशी स्कंध की भांति वक्तव्यता।

३१. भंते! छह-प्रदेशी स्कंध कितने वर्ण वाला है? इस प्रकार पांच-प्रदेशी स्कंध की भांति वक्तव्यता यावत् स्यात् चार स्पर्श प्रज्ञप्त हैं।

यदि एक वर्ण वाला है? एक वर्ण, दो वर्ण की पांच-प्रदेशी स्कंध की भांति वक्तव्यता।

यदि तीन वर्ण वाला है? १. स्यात् काला, नीला और लाल इस प्रकार पांच प्रदेशी स्कंध की भांति सात भंग वक्तव्य हैं यावत् स्यात् काला (बहुवचन), नीला (बहुवचन) और लाल है ८. स्यात् काला (बहुवचन), नीला (बहुवचन) और लाल (बहुवचन) हैं। ये आठ भंग हैं। इस प्रकार ये दस त्रिसंयोगज भंग, एक-एक संयोग में आठ भंग—इस प्रकार ये त्रिक-संयोग से अस्सी भंग होते हैं।

यदि चार वर्ण वाला है? स्यात् काला, नीला, लाल और पीला है। २. स्यात् काला,

नीला, लाल और पीला (बहुवचन) हैं। ३. स्यात् काला, नीला, लाल (बहुवचन) और पीला है। ४. स्यात् काला, नीला, लाल (बहुवचन) और पीला (बहुवचन) हैं। ५. स्यात् काला, नीला (बहुवचन) लाल और पीला है। ६. स्यात् काला, नीला (बहुवचन) लाल और पीला (बहुवचन) हैं। ७. स्यात् काला, नीला (बहुवचन) लाल (बहुवचन) और पीला है। ८. स्यात् काला (बहुवचन), नीला, लाल और पीला है। ९. स्यात् काला (बहुवचन), नीला, लाल और पीला (बहुवचन) हैं। १०. स्यात् काला (बहुवचन), नीला, लाल (बहुवचन) और पीला है। ११. स्यात् काला (बहुवचन), नीला (बहुवचन), लाल और पीला है। ये ग्यारह भंग हैं। इस प्रकार ये पांच चतुष्क-संयोगज भंग करणीय हैं। एक-एक संयोग में ग्यारह भंग। ये सर्व चतुःसंयोग से पचपन भंग होते हैं।

यदि पांच वर्ण वाला है? १. स्यात् काला, नीला, लाल, पीला और शुक्ल है। २. स्यात् काला, नीला, लाल, पीला और शुक्ल (बहुवचन) हैं। ३. स्यात् काला, नीला, लाल, पीला (बहुवचन) और शुक्ल है। ४. स्यात् काला, नीला, लाल (बहुवचन) और शुक्ल है। ४. स्यात् काला, नीला, लाल (बहुवचन), पीला और शुक्ल है। ५. स्यात् काला, नीला (बहुवचन), लाल, पीला, और शुक्ल है। ६. स्यात् काला (बहुवचन) नीला, पीला और शुक्ल है। इस प्रकार ये छह भंग वक्तव्य हैं। इस प्रकार ये सर्व एक, दो, तीन, चार, पांच संयोग से एक सौ छयांसी भंग होते हैं।

गंध की पांच-प्रदेशी स्कंध की भांति वक्तव्यता। रस की इसके ही वर्ण की भांति वक्तव्यता। स्पर्श की चतुष्प्रदेशी स्कंध की भांति वक्तव्यता।

३२. भंते! सात-प्रदेशी स्कंध कितने वर्ण वाला है?

पांच-प्रदेशी स्कंध की भांति वक्तव्यता यावत् चार स्पर्श प्रज्ञप्त है।

यदि एक वर्ण वाला है? इस प्रकार एक वर्ण, दो वर्ण, तीन वर्ण की छह- प्रदेशी स्कंध की भांति वक्तव्यता।

यदि चार वर्ण वाला है? १. स्यात् काला, नीला, लाल और पीला है। २. स्यात् काला, नीला, लाल और पीला (बहुवचन) हैं। ३. स्यात् काला, नीला, लाल (बहुवचन) और पीला है। इस प्रकार ये चतुष्क संयोग से पंद्रह भंग वक्तव्य है यावत् १५. स्यात् काला (बहुवचन), नीला (बहुवचन), लाल (बहुवचन) और पीला है। इस प्रकार ये पांच चतुष्क संयोग ज्ञातव्य है। एक-एक संयोग में पंद्रह भंग। ये सर्व पचहत्तर भंग होते हैं।

यदि पांच वर्ण वाला है? १. स्यात् काला, नीला, लाल, पीला और शुक्ल है। २. स्यात् काला, नीला, लाल, पीला और शुक्ल (बहुवचन) हैं। ३. स्यात् काला, नीला, लाल, पीला (बहुवचन) और शुक्ल है। ४. स्यात् काला, नीला, लाल, पीला (बहुवचन) और शुक्ल (बहुवचन) हैं। ५. स्यात् काला, नीला, लाल (बहुवचन), पीला और शुक्ल है। ६. स्यात् काला, नीला, लाल (बहुवचन), पीला और शुक्ल (बहुवचन) हैं। ७. स्यात् काला, नीला, लाल (बहुवचन), पीला (बहुवचन) और शुक्ल है।

८. स्यात् काला, नीला (बहवचन), लाल, पीला और शुक्ल है। ९. स्यात् काला, नीला (बहुवचन), लाल, पीला और शुक्ल (बहुवचन) हैं। १०. स्यात् काला, नीला (बहुवचन), लाल, पीला (बहुवचन) और शुक्ल है। ११. स्यात् काला, नीला (बहुवचन), लाल, पीला (बहुवचन) और शुक्ल है। १२. स्यात् काला (बहुवचन), नीला, लाल, पीला और शुक्ल है। १३. स्यात् काला (बहुवचन) नीला, लाल, पीला और शुक्ल (बहुवचन) हैं। १४. स्यात् काला (बहुवचन) नीला, लाल, पीला (बहुवचन) और शुक्ल है। १५. स्यात् काला (बहुवचन), नीला, लाल (बहुवचन), पीला (बहुवचन), शुक्ल है १६. स्यात् काला (बहुवचन), नीला (बहुवचन) लाल, पीला और शुक्ल है। ये सोलह भंग है। ये सर्व एक, दो, तीन, चार, पांच, संयोग से दो सौ सोलह भंग होते हैं।

गंध की चार-प्रदेशी स्कंध की भांति वक्तव्यता। रस की इसके ही वर्ण की भांति वक्तव्यता। स्पर्श की चार-प्रदेशी स्कंध की भांति वक्तव्यता।

३३. भंते! अष्ट-प्रदेशी स्कंध–पृच्छा।

गौतम! सात-प्रदेशी स्कंध की भांति वक्तव्यता–स्यात् एक वर्ण वाला है, यावत् स्यात् चार स्पर्श प्रज्ञप्त हैं।

यदि एक वर्ण वाला है? इस प्रकार एक वर्ण, दो वर्ण, तीन वर्ण की सात-प्रदेशी की भांति वक्तव्यता।

यदि चार वर्ण वाला है? १. स्यात् काला, नीला, लाल और पीला है। २. स्यात् काला, नीला, लाल और पीला (बहुवचन) हैं। इसी प्रकार सात-प्रदेशी स्कंध की भांति वक्तव्यता यावत् १५. स्यात् काला (बहुवचन), नीला (बहुवचन), लाल (बहुवचन) और पीला है। १६. स्यात् काला (बहुवचन), नीला (बहुवचन), लाल (बहुवचन) और पीला (बहुवचन) हैं। ये सोलह भंग हैं। इस प्रकार ये पांच चतुष्क-संयोगज भंग। इस प्रकार ये अस्सी भंग होते हैं।

यदि पांच वर्ण वाला है? १. स्यात् काला, नीला, लाल, पीला और शुक्ल है। २. स्यात् काला, नीला, लाल, पीला और शुक्ल (बहुवचन) हैं। इस प्रकार इस क्रम से भंग संचारणीय है यावत् १५. स्यात् काला, नीला (बहुवचन), लाल (बहुवचन), पीला (बहुवचन) और शुक्ल है। यह पंद्रहवां भंग है। १६. स्यात् काला (बहुवचन), नीला, लाल, पीला और शुक्ल है। १७. स्यात् काला (बहुवचन), नीला, लाल, पीला और शुक्ल (बहुवचन) हैं। १८. स्यात् काला (बहुवचन), नीला, लाल, पीला (बहुवचन) और शुक्ल है। १९. स्यात् काला (बहुवचन), नीला, लाल, पीला (बहुवचन) और शुक्ल (बहुवचन) हैं। २०. स्यात् काला (बहुवचन), नीला, लाल (बहुवचन), पीला और शुक्ल है। २१. स्यात् काला (बहुवचन), नीला, लाल (बहुवचन), पीला और शुक्ल (बहुवचन) हैं। २२. स्यात् काला (बहुवचन), नीला, लाल (बहुवचन), पीला (बहुवचन) और शुक्ल है। २३. स्यात् काला (बहुवचन), नीला (बहुवचन), लाल, पीला और शुक्ल है। २४. स्यात् काला (बहुवचन), नीला (बहुवचन), लाल, पीला

और शुक्ल (बहुवचन) हैं। २५. स्यात् काला (बहुवचन), नीला (बहुवचन), लाल, पीला (बहुवचन) और शुक्ल है। २६. स्यात् काला (बहुवचन), नीला (बहुवचन), लाल (बहुवचन), पीला और शुक्ल है। ये पंच संयोग से छब्बीस भंग होते हैं। इस प्रकार पूर्वापर-सहित एक, दो, तीन, चार और पांच संयोगों से दो सौ इकत्तीस भंग होते हैं। गंध की सात-प्रदेशी स्कंध की भांति वक्तव्यता। रस की इसके ही वर्ण की भांति वक्तव्यता। स्पर्श की चार-प्रदेशी स्कंध की भांति वक्तव्यता।

३४. भंते! नौ-प्रदेशी स्कंध—पृच्छा।

गौतम! आठ-प्रदेशी स्कंध की भांति एक वर्ण वाला है। यावत् स्यात् चार स्पर्श प्रज्ञप्त हैं।

यदि एक वर्ण वाला है? एक वर्ण, दो वर्ण, तीन वर्ण और चार वर्ण की आठ-प्रदेशी स्कंध की भांति वक्तव्यता।

यदि पांच वर्ण वाला है? १. स्यात् काला, नीला, लाल, पीला और शुक्ल है? २. स्यात् काला, नीला, लाल, पीला और शुक्ल (बहुवचन) हैं। इस परिपाटी से इकतीस भंग वक्तव्य हैं यावत् ३१. स्यात् काला (बहुवचन), नीला (बहुवचन), लाल (बहुवचन), पीला (बहुवचन) और शुक्ल है। ये इकतीस भंग हैं। इस प्रकार एक, दो, तीन, चार और पांच संयोगों से दो सौ छत्तीस भंग होते हैं। गंध की आठ-प्रदेशी स्कंध की भांति वक्तव्यता। रस की इसके ही वर्ण की भांति वक्तव्यता। स्पर्श की चार-प्रदेशी स्कंध की भांति वक्तव्यता।

३५. भंते! दस-प्रदेशी स्कंध—पृच्छा।

गौतम! नौ-प्रदेशी स्कंध की भांति स्यात् एक वर्ण वाला है यावत् स्यात् चार स्पर्श प्रज्ञप्त हैं।

यदि एक वर्ण वाला है? एक वर्ण, दो वर्ण, तीन वर्ण, चार वर्ण की नौ-प्रदेशी स्कंध की भांति वक्तव्यता। पांच वर्ण की उसी प्रकार वक्तव्यता, इतना विशेष है—बत्तीसवां भंग कहा गया है। इस प्रकार एक, दो, तीन, चार और पांच संयोगों से दो सौ सैंतीस भंग होते हैं। गंध की नौ-प्रदेशी स्कंध की भांति वक्तव्यता। रस की इसके ही वर्ण की भांति वक्तव्यता। स्पर्श की चार-प्रदेशी स्कंध की भांति वक्तव्यता। दश-प्रदेशी स्कंध की भांति संख्येय-प्रदेशी की वक्तव्यता। इसी प्रकार असंख्येय-प्रदेशी की वक्तव्यता, इसी प्रकार सूक्ष्म-परिणत अनंत-प्रदेशी स्कंध की वक्तव्यता।

३६. भंते! बादर-परिणत अनंत-प्रदेशी स्कंध कितने वर्ण वाला है?

इस प्रकार अठारहवें शतक (भ. १८/११७) की भांति वक्तव्यता यावत् आठ स्पर्श प्रज्ञप्त हैं। वर्ण, गंध, रस की दस-प्रदेशी स्कंध की भांति वक्तव्यता।

यदि चार स्पर्श वाला है? १. सर्व कर्कश, सर्व गुरु, सर्व शीत और सर्व स्निग्ध है। २. सर्व कर्कश, सर्व गुरु, सर्व शीत और सर्व रूक्ष है। ३. सर्व कर्कश, सर्व गुरु, सर्व उष्ण और सर्व स्निग्ध है। ४. सर्व कर्कश, सर्व गुरु, सर्व उष्ण और सर्व रूक्ष है। ५. सर्व कर्कश, सर्व लघु, सर्व शीत और सर्व स्निग्ध है। ६. सर्व कर्कश, सर्व लघु, सर्व शीत

और सर्व रूक्ष है। ७. सर्व कर्कश, सर्व लघु, सर्व उष्ण और सर्व स्निग्ध है। ८. सर्व कर्कश, सर्व लघु, सर्व उष्ण और सर्व रूक्ष है। ९. सर्व मृदु, सर्व गुरु, सर्व शीत और सर्व स्निग्ध है। १०. सर्व मृदु, सर्व गुरु, सर्व शीत और सर्व रूक्ष है। ११. सर्व मृदु, सर्व गुरु, सर्व उष्ण और सर्व स्निग्ध है। १२. सर्व मृदु, सर्व गुरु, सर्व उष्ण और सर्व रूक्ष है। १३. सर्व मृदु, सर्व लघु, सर्व शीत और सर्व स्निग्ध है। १४. सर्व मृदु, सर्व लघु, सर्व शीत और सर्व रूक्ष है। १५. सर्व मृदु, सर्व लघु, सर्व उष्ण और सर्व स्निग्ध है। १६. सर्व मृदु, सर्व लघु, सर्व उष्ण, और सर्व रूक्ष है। ये सोलह भंग हैं।

यदि पांच स्पर्श वाला है? १. सर्व कर्कश, सर्व गुरु, सर्व शीत, देश स्निग्ध और देश रूक्ष है। २. सर्व कर्कश, सर्व गुरु, सर्व शीत, देश स्निग्ध और देश रूक्ष (बहुवचन) हैं। ३. सर्व कर्कश, सर्व गुरु, सर्व शीत, देश स्निग्ध (बहुवचन) और देश रूक्ष है। ४. सर्व कर्कश, सर्व गुरु, सर्व शीत, देश स्निग्ध (बहुवचन) और देश रूक्ष (बहुवचन) हैं। ५-८. सर्व कर्कश, सर्व गुरु, सर्व उष्ण, देश स्निग्ध, देश रूक्ष, ९-१२. सर्व कर्कश, सर्व लघु, सर्व शीत, देश स्निग्ध, देश रूक्ष। १३-१६. सर्व कर्कश, सर्व लघु, सर्व उष्ण, देश स्निग्ध, देश रूक्ष। इस प्रकार ये कर्कश से सोलह भंग हैं। १७-३२. सर्व मृदु, सर्व गुरु, सर्व शीत, देश स्निग्ध, देश रूक्ष—इसी प्रकार मृदु से भी सोलह भंग। इस प्रकार बत्तीस भंग होते हैं।

सर्व कर्कश, सर्व गुरु, सर्व स्निग्ध, देश शीत, देश उष्ण तथा सर्व कर्कश, सर्व गुरु, सर्व रूक्ष, देश शीत, देश उष्ण—ये बत्तीस भंग होते हैं।

सर्व कर्कश, सर्व शीत, सर्व स्निग्ध, देश गुरु, देश लघु—यहां भी बत्तीस भंग होते हैं।

सर्व गुरु, सर्व शीत, सर्व स्निग्ध, देश कर्कश, देश मृदु—यहां भी बत्तीस भंग होते हैं। इस प्रकार पांच स्पर्श से ये सब एक सौ अठाईस भंग होते हैं।

यदि छह स्पर्श वाला है? १. सर्व कर्कश, सर्व गुरु, देश शीत, देश उष्ण, देश स्निग्ध और देश रूक्ष है। २. सर्व कर्कश, सर्व गुरु, देश शीत, देश उष्ण, देश स्निग्ध, देश रूक्ष (बहुवचन) हैं, इस प्रकार यावत् १६. सर्व कर्कश, सर्व गुरु, देश शीत (बहुवचन), देश उष्ण (बहुवचन), देश स्निग्ध (बहुवचन) और देश रूक्ष (बहुवचन)। ये सोलह भंग हैं।

सर्व कर्कश, सर्व लघु, देश शीत, देश उष्ण, देश स्निग्ध और देश रूक्ष—यहां भी सोलह भंग होते हैं।

सर्व मृदु, सर्व गुरु, देश शीत, देश उष्ण, देश स्निग्ध और देश रूक्ष—यहां भी सोलह भंग होते हैं।

सर्व मृदु, सर्व लघु, देश शीत, देश उष्ण, देश स्निग्ध और देश रूक्ष—यहां भी सोलह भंग होते हैं। ये चौसठ भंग हैं।

सर्व कर्कश, सर्व शीत, देश गुरु, देश लघु, देश स्निग्ध और देश रूक्ष। इस प्रकार यावत् सर्व मृदु, सर्व उष्ण, देश गुरु (बहुवचन), देश लघु (बहुवचन), देश स्निग्ध (बहुवचन) देश रूक्ष (बहुवचन) हैं—यहां भी चौसठ भंग होते हैं।

सर्व कर्कश, सर्व स्निग्ध, देश गुरु, दश लघु, देश शीत, देश उष्ण यावत् सर्व मृदु, सर्व रूक्ष, देश गुरु (बहुवचन), देश लघु (बहुवचन), देश शीत (बहुवचन), देश उष्ण (बहुवचन)—ये चौसठ भंग होते हैं।

सर्व गुरु, सर्व शीत, देश कर्कश, देश मृदु, देश स्निग्ध, देश रूक्ष। इस प्रकार यावत् सर्व लघु, सर्व उष्ण, देश कर्कश (बहुवचन), देश मृदु (बहुवचन), देश स्निग्ध (बहुवचन), देश रूक्ष (बहुवचन)—ये चौसठ भंग होते हैं।

सर्व गुरु, सर्व स्निग्ध, देश कर्कश, देश मृदु, देश शीत, देश उष्ण यावत् सर्व लघु, सर्व रूक्ष, देश कर्कश (बहुवचन), देश मृदु (बहुवचन), देश शीत (बहुवचन) देश उष्ण (बहुवचन)—ये चौसठ भंग होते हैं।

सर्व शीत, सर्व स्निग्ध, देश कर्कश, देश मृदु, देश गुरु, देश लघु यावत् सर्व उष्ण, सर्व रूक्ष, देश कर्कश (बहुवचन), देश मृदु (बहुवचन) देश गुरु (बहुवचन), देश लघु (बहुवचन)—ये चौसठ भंग होते हैं।

छह स्पर्श से ये सर्व तीन सौ चौरासी भंग होते हैं।

यदि सात स्पर्श वाला है? १-४. सर्व कर्कश, देश गुरु, देश लघु, देश शीत, देश उष्ण, देश स्निग्ध, देश रूक्ष यावत् सर्व कर्कश, देश गुरु, देश लघु, देश शीत, देश उष्ण, देश स्निग्ध (बहुवचन), देश रूक्ष (बहुवचन)। ५-८. सर्व कर्कश, देश गुरु, देश लघु, देश शीत, देश उष्ण (बहुवचन), देश स्निग्ध, देश रूक्ष। ९-१२. सर्व कर्कश, देश गुरु, देश लघु, देश शीत (बहुवचन), देश उष्ण, देश स्निग्ध, देश रूक्ष। १३-१६. सर्व कर्कश, देश गुरु, देश लघु, देश शीत (बहुवचन), देश उष्ण (बहुवचन), देश स्निग्ध, देश रूक्ष—ये सर्व सोलह भंग वक्तव्य हैं।

सर्व कर्कश, देश गुरु, देश लघु (बहुवचन) देश शीत, देश उष्ण, देश स्निग्ध, देश रूक्ष—इस प्रकार गुरु-एकत्व, लघु-पृथक्त्व से ये सोलह भंग होते हैं।

सर्व कर्कश, देश गुरु (बहुवचन), देश लघु, देश शीत, देश उष्ण, देश स्निग्ध, देश रूक्ष—ये भी सोलह भंग वक्तव्य हैं।

सर्व कर्कश, देश गुरु (बहुवचन), देश लघु (बहुवचन), देश शीत, देश उष्ण, देश स्निग्ध, देश रूक्ष—ये भी सोलह भंग वक्तव्य हैं। इस प्रकार ये चौसठ भंग कर्कश के साथ होते हैं।

सर्व मृदु, देश गुरु, देश लघु, देश शीत, देश उष्ण, देश स्निग्ध, देश रूक्ष—इस प्रकार मृदु के साथ भी चौसठ भंग वक्तव्य हैं।

सर्व गुरु, देश कर्कश, देश मृदु, देश शीत, देश उष्ण, देश स्निग्ध, देश रूक्ष—इस प्रकार गुरु के साथ भी चौसठ भंग करणीय हैं।

सर्व लघु, देश कर्कश, देश मृदु, देश शीत, देश उष्ण, देश स्निग्ध, देश रूक्ष—इस प्रकार लघु के साथ चौसठ भंग करणीय हैं।

सर्व शीत, देश कर्कश, देश मृदु, देश गुरु, देश लघु, देश स्निग्ध, देश रूक्ष—इस प्रकार

शीत के साथ चौसठ भंग करणीय हैं।

सर्व उष्ण, देश कर्कश, देश मृदु, देश गुरु, देश लघु, देश स्निग्ध, देश रूक्ष—इस प्रकार उष्ण के साथ भी चौसठ भंग करणीय हैं।

सर्व स्निग्ध, देश कर्कश, देश मृदु, देश गुरु, देश लघु, देश शीत, देश उष्ण—इस प्रकार स्निग्ध के साथ चौसठ भंग करणीय हैं।

सर्व रूक्ष, देश कर्कश, देश मृदु, देश गुरु, देश लघु, देश शीत, देश उष्ण—इस प्रकार रूक्ष के साथ चौसठ भंग करणीय हैं यावत् सर्व रूक्ष, देश कर्कश (बहुवचन), देश मृदु (बहुवचन), देश गुरु (बहुवचन), देश लघु (बहुवचन) देश शीत (बहुवचन), देश उष्ण (बहुवचन)। इस प्रकार सात स्पर्श के पांच सौ बारह भंग होते हैं।

यदि आठ स्पर्श वाला है? १-४. देश कर्कश, देश मृदु, देश गुरु, देश लघु, देश शीत, देश उष्ण, देश स्निग्ध, देश रूक्ष। ५-८. देश कर्कश, देश मृदु, देश गुरु, देश लघु, देश शीत, देश उष्ण (बहुवचन), देश स्निग्ध, देश रूक्ष। ९-१२ देश कर्कश, देश मृदु, देश गुरु, देश लघु, देश शीत (बहुवचन), देश उष्ण, देश स्निग्ध, देश रूक्ष। १३-१६. देश कर्कश, देश मृदु, देश गुरु, देश लघु, देश शीत (बहुवचन), देश उष्ण (बहुवचन), देश स्निग्ध, देश रूक्ष—ये चार चतुष्क सोलह भंग होते हैं।

देश कर्कश, देश मृदु, देश गुरु, देश लघु (बहुवचन), देश शीत, देश उष्ण, देश स्निग्ध, देश रूक्ष—इस प्रकार ये गुरु-एकत्व, लघु-पृथक्त्व से सोलह भंग करणीय हैं।

देश कर्कश, देश मृदु, देश गुरु (बहुवचन), देश लघु, देश शीत, देश उष्ण, देश स्निग्ध, देश रूक्ष—ये भी सोलह भंग करणीय हैं।

देश कर्कश, देश मृदु, देश गुरु (बहुवचन), देश लघु (बहुवचन), देश शीत, देश उष्ण, देश स्निग्ध, देश रूक्ष—ये भी सोलह भंग करणीय हैं। ये चौसठ भंग कर्कश-मृदु के एकत्व से हैं।

इसके पश्चात् कर्कश-एकत्व और मृदु-पृथक्त्व से चौसठ भंग करणीय हैं।

इसके पश्चात् कर्कश-पृथक्त्व और मृदु-एकत्व से चौसठ भंग करणीय हैं।

इसके पश्चात् इन दोनों (कर्कश-मृदु) के पृथक्त्व से चौसठ भंग करणीय हैं। यावत् देश कर्कश (बहुवचन), देश मृदु (बहुवचन), देश गुरु (बहुवचन), देश लघु (बहुवचन), देश शीत (बहुवचन), देश उष्ण (बहुवचन), देश स्निग्ध (बहुवचन), देश रूक्ष (बहुवचन)—यह प्रथम भंग है। अष्ट स्पर्श के ये सर्व दो सौ छप्पन भंग होते हैं।

इस प्रकार बादर-परिणत अनंत-प्रदेशी स्कंध के सर्व संयोगों से बारह सौ छियानवें भंग होते हैं।

परमाणु-पद

३७. भंते! परमाणु कितने प्रकार का प्रज्ञप्त है?

गौतम! परमाणु के चार प्रकार प्रज्ञप्त हैं, जैसे—द्रव्य-परमाणु, क्षेत्र-परमाणु, काल-परमाणु, भाव-परमाणु।

३८. भंते! द्रव्य-परमाणु कितने प्रकार का प्रज्ञप्त है?

गौतम! चार प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—अछेद्य, अभेद्य, अदाह्य, अग्राह्य।

३९. भंते! क्षेत्र-परमाणु कितने प्रकार का प्रज्ञप्त है?

गौतम! चार प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—अनर्ध, अमध्य, अप्रदेश, अविभाजित।

४०. भंते! काल-परमाणु कितने प्रकार का प्रज्ञप्त है?

गौतम! चार प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—अवर्ण, अगंध, अरस, अस्पर्श।

४१. भंते! भाव-परमाणु कितने प्रकार का प्रज्ञप्त है?

गौतम! चार प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—वर्णवान्, गंधवान्, रसवान् और स्पर्शवान्।

४२. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है। यावत् विहरण करने लगे।

छठा उद्देशक

पृथ्वी-आदि का आहार-पद

४३. भंते! पृथ्वीकायिक-जीव इस रत्नप्रभा- और शर्कराप्रभा-पृथ्वी के बीच समवहत हुआ, समवहत होकर जो भव्य सौधर्म-कल्प में पृथ्वीकायिक के रूप में उपपन्न होता है, भंते! क्या वह पहले उपपन्न होता है, पश्चात् आहार करता है? पहले आहार करता है, पश्चात् उपपन्न होता है?

गौतम! पहले उपपन्न होता है, पश्चात् आहार करता है—इस प्रकार सतरहवें शतक के छठे उद्देशक (भ. १७/६७,६८) की भांति वक्तव्यता यावत् गौतम! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—पहले यावत् उपपन्न होता है। इतना विशेष है—वहां संप्राप्ति है, यहां आहार की वक्तव्यता है। शेष पूर्ववत्।

४४. भंते! पृथ्वीकायिक-जीव इस रत्नप्रभा- और शर्कराप्रभा-पृथ्वी के बीच समवहत हुआ, समवहत होकर जो भव्य ईशान-कल्प में पृथ्वीकायिक के रूप में उपपन्न होता है?

पूर्ववत्। इस प्रकार यावत् ईषत्-प्राग्भारा में उपपन्न होता है।

४५. भंते! पृथ्वीकायिक-जीव शर्कराप्रभा- और बालुकाप्रभा-पृथ्वी के बीच समवहत हुआ। समवहत होकर जो भव्य सौधर्म यावत् ईषत्-प्राग्भारा में, इसी प्रकार इस क्रम से यावत् तमा- और अधःसप्तमी-पृथ्वी के बीच समवहत होकर जो भव्य सौधर्म यावत् ईषत्--प्राग्भारा में उपपन्न होता है।

४६. भंते! पृथ्वीकायिक-जीव सौधर्म-, ईशान-, सनत्कुमार-, माहेन्द्र-कल्पों के बीच समवहत हुआ। समवहत होकर जो भव्य इसी रत्नप्रभा-पृथ्वी में पृथ्वीकायिक के रूप में उपपन्न हुआ, भंते! वह क्या पहले उपपन्न होता है, पश्चात् आहार करता है?

शेष पूर्ववत् यावत् इस अपेक्षा से यावत् निक्षेप।

४७. भंते! पृथ्वीकायिक-जीव सौधर्म-, ईशान-, सनत्कुमार-, माहेन्द्र-कल्पों के बीच समवहत हुआ, समवहत होकर जो भव्य शर्कराप्रभा-पृथ्वी में पृथ्वीकायिक के रूप में उपपन्न होता है?

पूर्ववत्। इसी प्रकार यावत् अधःसप्तमी में उपपात होता है।

इसी प्रकार सनत्कुमार-, माहेन्द्र-, ब्रह्मलोक-कल्प के बीच समवहत हुआ, समवहत होकर पुनः यावत् अधःसप्तमी में उपपात होता है। इसी प्रकार ब्रह्मलोक-, लांतक-कल्प के बीच समवहत हुआ, पुनः यावत् अधःसप्तमी में उपपात होता है। इसी प्रकार लांतक-महाशुक्र--कल्प के बीच में समवहत हुआ, पुनः यावत् अधःसप्तमी में उपपात होता है। इसी प्रकार महाशुक्र-, सहस्रार-कल्प के बीच में समवहत हुआ, पुनः यावत् अधःसप्तमी में उपपात होता है। इसी प्रकार सहस्रार-, आनत-, प्राणत-कल्पों के बीच समवहत हुआ, पुनः यावत् अधःसप्तमी में उपपात होता है। इसी प्रकार आनत-, प्राणत-, आरण-, अच्युत--कल्पों के बीच में समवहत हुआ, पुनः यावत् अधःसप्तमी में उपपात होता है। इसी प्रकार आरण, अच्युत, ग्रैवेयक-विमानों के बीच समवहत हुआ, पुनः यावत् अधःसप्तमी में उपपात होता है। इसी प्रकार ग्रैवेयक-विमानों और अनुत्तर-विमानों के बीच समवहत हुआ, पुनः यावत् अधःसप्तमी में उपपात होता है। इसी प्रकार अनुत्तर-विमानों, ईषत्--प्राग्भारा के बीच समवहत हुआ, पुनः यावत् अधःसप्तमी में उपपात होता है।

४८. भंते! अप्कायिक-जीव इस रत्नप्रभा- और शर्कराप्रभा-पृथ्वी के बीच समवहत हुआ, समवहत होकर जो भव्य सौधर्म-कल्प में अप्कायिक के रूप में उपपन्न होता है, शेष.....

इस प्रकार पृथ्वीकायिक की भांति यावत् इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है। इस प्रकार प्रथम और द्वितीय (कल्पों) के बीच समवहत होता है यावत् ईषत्-प्राग्भारा में उपपात होता है। इस प्रकार इस क्रम से यावत् तमा- और अधःसप्तमी-पृथ्वी के बीच समवहत हुआ, समवहत होकर यावत् ईषत्-प्राग्भारा में अप्कायिक के रूप में उपपात होता है।

४९. भंते! अप्कायिक-जीव सौधर्म-, ईशान-, सनत्कुमार- और माहेन्द्र-कल्पों के बीच समवहत हुआ, समवहत होकर जो भव्य इस रत्नप्रभा-पृथ्वी में घनोदधि-घनोदधि-वलय में अप्कायिक-जीव के रूप में उपपन्न होता है?

शेष पूर्ववत्। इसी प्रकार इन्हीं कल्पों के बीच समवहत हुआ यावत् अधःसप्तमी-पृथ्वी के घनोदधि-घनोदधि-वलय में अप्कायिक जीव के रूप में उपपात होता है। इसी प्रकार यावत् अनुत्तर-विमानों एवं ईषत्-प्राग्भारा-पृथ्वी के बीच समवहत हुआ यावत् अधःसप्तमी-पृथ्वी में घनोदधि-घनोदधि-वलय में उपपात होता है।

५०. भंते! वायुकायिक-जीव इस रत्नप्रभा- और शर्कराप्रभा-पृथ्वी के बीच समवहत हुआ, समवहत होकर जो भव्य सौधर्म-कल्प में वायुकायिक जीव के रूप में उपपन्न होता है?

इस प्रकार सतरहवें शतक के वायुकायिक-उद्देशक (भ. १७/७८-८०) की भांति यहां भी वक्तव्यता, इतना विशेष है—अंतरों (बीच) में समवहत ज्ञातव्य है। शेष पूर्ववत् यावत् बीच में समवहतता ज्ञातव्य है, शेष पूर्ववत् यावत् अनुत्तर-विमानों और ईषत्प्राग्भारा-पृथ्वी के

बीच समवहत होता है, समवहत होकर जो भव्य घनवात-तनुवात, घनवात-तनुवातवलय में वायुकायिक-जीव के रूप में उपपन्न होता है। शेष पूर्ववत् यावत् इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—यावत् उपपन्न होता है।

५१. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

सातवां उद्देशक

बंध-पद

५२. भंते! बंध कितने प्रकार का प्रज्ञप्त है?

गौतम! बंध तीन प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—जीव-प्रयोग-बंध, अनंतर-बंध, परंपर-बंध।

५३. भंते! नैरयिकों के बंध कितने प्रकार का प्रज्ञप्त है?

इस प्रकार यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता।

५४. भंते! ज्ञानावरणीय-कर्म का बंध कितने प्रकार का प्रज्ञप्त है?

गौतम! तीन प्रकार का बंध प्रज्ञप्त है, जैसे—जीव-प्रयोग-बंध, अनंतर-बंध, परंपर-बंध।

५५. भंते! नैरयिकों के ज्ञानावरणीय-कर्म का बंध कितने प्रकार का प्रज्ञप्त है?

पूर्ववत् इस प्रकार यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता। इस प्रकार यावत् आंतरायिक-कर्म की वक्तव्यता।

५६. भंते! ज्ञानावरणीय-कर्म का उदय होने पर बंध कितने प्रकार का प्रज्ञप्त है?

गौतम! पूर्ववत् तीन प्रकार का बंध प्रज्ञप्त है। इस प्रकार नैरयिकों की वक्तव्यता। इसी प्रकार यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता। इस प्रकार यावत् आंतरायिक-कर्म का उदय होने पर बंध की वक्तव्यता।

५७. भंते! स्त्री-वेद-कर्म का बंध कितने प्रकार का प्रज्ञप्त है?

गौतम! पूर्ववत् तीन प्रकार का बंध प्रज्ञप्त है।

५८. भंते! असुरकुमारों के स्त्री-वेद-कर्म का बंध कितने प्रकार का प्रज्ञप्त है?

पूर्ववत्। इस प्रकार यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता। इतना विशेष है—जिसके स्त्री-वेद है। इसी प्रकार पुरुष-वेद की भी वक्तव्यता, इसी प्रकार नपुंसक-वेद की वक्तव्यता यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता, इतना विशेष है—जिसके जो वेद है।

५९. भंते! दर्शन-मोहनीय-कर्म का बंध कितने प्रकार का प्रज्ञप्त है?

पूर्ववत् निरंतर यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता। इसी प्रकार चारित्र-मोहनीय-कर्म की वक्तव्यता यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता। इस प्रकार इस क्रम से औदारिक-शरीर यावत् कर्म-शरीर, आहार-संज्ञा यावत् परिग्रह-संज्ञा, कृष्ण-लेश्या यावत् शुक्ल-लेश्या, सम्यग्--दृष्टि, मिथ्या-दृष्टि, सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि, आभिनिबोधिक-ज्ञान यावत् केवल-ज्ञान, मति--अज्ञान, श्रुत-अज्ञान, विभंग-ज्ञान, इस प्रकार भंते! आभिनिबोधिक-ज्ञान के विषय का

बंध कितने प्रकार का प्रज्ञप्त है यावत् केवल-ज्ञान के विषय का बंध, मति-अज्ञान के विषय का, श्रुत-अज्ञान के विषय का, विभंग-ज्ञान के विषय का, श्रुत-अज्ञान के विषय का, विभंगज्ञान के विषय का—इन सब पदों का बंध तीन प्रकार का प्रज्ञप्त है। ये सारे चौबीस दंडक वक्तव्य हैं, इतना विशेष ज्ञातव्य है—जिसमें जो प्राप्त है यावत्—

६०. भंते! वैमानिकों के विभंग-ज्ञान के विषय का बंध कितने प्रकार का प्रज्ञप्त है?

गौतम! बंध तीन प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—जीव-प्रयोग-बंध, अनंतर-बंध, परंपर-बंध।

६१. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है। यावत् विहरण करने लगे।

आठवां उद्देशक

समय-क्षेत्र में अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी-पद

६२. भंते! कर्म-भूमियां कितनी प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! पंद्रह कर्म-भूमियां प्रज्ञप्त हैं, जैसे—पांच भरत, पांच ऐरवत, पांच महाविदेह।

६३. भंते! अकर्म-भूमियां कितनी प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! तीस अकर्म-भूमियां प्रज्ञप्त हैं, जैसे—पांच हैमवत, पांच हैरण्यवत, पांच हरिवास, पांच रम्यक्‌वास, पांच देवकुरु, पांच उत्तरकुरु।

६४. भंते! इन तीस अकर्मभूमियों में अवसर्पिणी-काल है? उत्सर्पिणी-काल है?

यह अर्थ संगत नहीं है।

६५. भंते! इन पांच भरत, पांच ऐरवत में अवसर्पिणी-काल है? उत्सर्पिणी-काल है?

हां, है। इन पांच महाविदेहों में अवसर्पिणी-काल नहीं है, उत्सर्पिणी-काल नहीं है। आयुष्मान् श्रमण! वहां काल अवस्थित प्रज्ञप्त है।

पांच-महाव्रत-चातुर्याम-धर्म-पद

६६. भंते! इन पांच महाविदेहों में अर्हत् भगवान् पांच-महाव्रत, सप्रतिक्रमण-धर्म का प्रज्ञापन करते हैं?

यह अर्थ संगत नहीं है। इन पांच भरत में, पांच ऐरवत में पूर्व और पश्चिम के दो अर्हत् भगवान् पांच-महाव्रत सप्रतिक्रमण-धर्म का प्रज्ञापन करते हैं। अवशेष अर्हत् भगवान चातुर्याम धर्म का प्रज्ञापन करते हैं। इन पांच महाविदेहों में अर्हत् भगवान् चातुर्याम धर्म का प्रज्ञापन करते हैं।

तीर्थंकर-पद

६७. भंते! जंबूद्वीप द्वीप में भारत वर्ष में इस अवसर्पिणी में कितने तीर्थंकर प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! चौबीस तीर्थंकर प्रज्ञप्त हैं, जैसे—ऋषभ, अजित, संभव, अभिनंदन, सुमति, सुप्रभ, सुपार्श्व, चंद्र, पुष्पदंत, शीतल, श्रेयांस, वासुपूज्य, विमल, अनंत, धर्म, शांति, कुंथु, अर, मल्लि, मुनिसुव्रत, नमि, नेमि, पार्श्व और वर्द्धमान।

६८. भंते! इन चाबीस तीर्थंकरों में कितने जिनान्तर प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! तेईस जिनान्तर प्रज्ञप्त हैं।

जिनान्तरों में कालिक-श्रुत-पद

६९. भंते! इन तेईस जिनान्तरों में किस जिनान्तर में कब कालिक-श्रुत का व्यवच्छेद प्रज्ञप्त है?

गौतम! इन तेईस जिनान्तरों में पूर्व के आठ और अंतिम के आठ जिनान्तरों में कालिक--श्रुत का अव्यवच्छेद प्रज्ञप्त है। मध्यवर्ती सात जिनान्तरों में कालिक-श्रुत का व्यवच्छेद प्रज्ञप्त है। दृष्टिवाद का विच्छेद सर्वत्र प्रज्ञप्त है।

पूर्वगत-पद

७०. भंते! जंबूद्वीप द्वीप में भारत वर्ष में इसी अवसर्पिणी में देवानुप्रिय के शासन का पूर्वगत-श्रुत कितने काल तक रहेगा?

गौतम! जंबूद्वीप द्वीप में भारत वर्ष में इसी अवसर्पिणी में मेरे शासन का पूर्वगत-श्रुत एक हजार वर्ष तक रहेगा।

७१. भंते! जैसे जंबूद्वीप द्वीप में भारत वर्ष में इसी अवसर्पिणी में देवानुप्रिय के शासन का पूर्वगत-श्रुत एक हजार वर्ष तक रहेगा, भंते! वैसे जंबूद्वीप द्वीप में भारत वर्ष में अन्य तीर्थंकरों के शासन का पूर्वगत-श्रुत कितने काल तक रहा?

गौतम! कुछ का संख्येय काल और कुछ का असंख्येय काल रहा।

तीर्थ-पद

७२. भंते! जंबूद्वीप द्वीप में भारत वर्ष में इस अवसर्पिणी में देवानुप्रिय का तीर्थ कितने काल तक रहेगा?

गौतम! जंबूद्वीप द्वीप में भारत वर्ष में इस अवसर्पिणी में मेरा तीर्थ इक्कीस हजार वर्ष तक रहेगा।

७३. भंते! जैसे जंबूद्वीप द्वीप में भारत वर्ष में इस अवसर्पिणी में देवानुप्रिय का तीर्थ इक्कीस हजार वर्ष तक रहेगा। भंते! वैसे जंबूद्वीप द्वीप में आगामी चरम तीर्थंकर (चौबीसवें तीर्थंकर) का तीर्थ कितने काल तक रहेगा?

गौतम! कौशलिक अर्हत् ऋषभ का जितना जिन-पर्याय है, उतने संख्येय काल तक आगामी चरम तीर्थंकर का तीर्थ रहेगा।

७४. भंते! तीर्थ तीर्थ है? तीर्थंकर तीर्थ है?

गौतम! अर्हत् नियमतः तीर्थंकर हैं। तीर्थ चातुर्वर्ण धर्मसंघ है, जैसे—श्रमण, श्रमणी, श्रावक, श्राविका।

७५. भंते! प्रवचन प्रवचन है? प्रावचनी (प्रवचनकार) प्रवचन है?

गौतम! अर्हत् नियमतः प्रावचनी हैं। प्रवचन द्वादशांग गणिपिटक हैं, जैसे—आचार, सूत्रकृत,

स्थान, समवाय, व्याख्याप्रज्ञप्ति, ज्ञाताधर्मकथा, उपासकदशा, अंतकृतदशा, अनुत्तरोपपातिकदशा, प्रश्नव्याकरण, विपाकश्रुत, दृष्टिवाद।

उग्र-आदि का निर्ग्रंथ-धर्म-अनुगमन-पद

७६. भंते! ये उग्र, भोज, राजन्य, इक्ष्वाकु, नाग, कौरव—ये इस धर्म में अवगाहन कर आठ प्रकार के कर्म के रज-मल को धोते हैं, धोकर उसके पश्चात् सिद्ध होते हैं यावत् सब दुःखों का अंत करते हैं?

हां, गौतम! जो ये उग्र, भोज, राजन्य, इक्ष्वाकु, नाग, कौरव—ये इस धर्म में अवगाहन करते हैं, आठ प्रकार के कर्म के रज-मल को धोते हैं, धोकर उसके पश्चात् सिद्ध होते हैं यावत् सब दुःखों का अंत करते हैं, कुछ किसी देवलोक में देव रूप में उपपन्न होते हैं।

७७. भंते! देवलोक कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! देवलोक चार प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—भवनवासी, वाणमंतर ज्योतिष्क, वैमानिक।

७८. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

नवां उद्देशक

करण-पद

७९. भंते! चारण कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! चारण दो प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—विद्याचारण, जंघाचारण।

८०. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—विद्याचारण विद्याचारण है?

गौतम! निरंतर बेले-बेले तप करने वाले तथा विद्या के द्वारा उत्तरगुण-लब्धि में सामर्थ्य प्राप्त करने वाले के विद्याचारण-लब्धि नामक लब्धि समुत्पन्न होती है।

गौतम! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—विद्याचारण विद्याचारण है।

८१. भंते! विद्याचारण की शीघ्र गति कैसी होती है? उसका शीघ्र गति-विषय कितना प्रज्ञप्त है?

गौतम! इस जंबूद्वीप द्वीप में यावत् उसका परिक्षेप तीन लाख, सोलह हजार, दो सौ सत्ताईस योजन, तीन कोस, एक सौ अट्ठाईस धनुष और साढ़ा तेरह अंगुल से कुछ अधिक प्रज्ञप्त है। महर्द्धिक देव यावत् महा ऐश्वर्यशाली यावत् 'यह रहा, यह रहा', इस प्रकार कह कर संपूर्ण जंबूद्वीप द्वीप में तीन बार चुटकी बजाने जितने समय में तीन बार घूम कर शीघ्र ही आ जाता है। गौतम! विद्याचारण की वैसी शीघ्र गति है, वैसा शीघ्र गति-विषय प्रज्ञप्त है।

८२. भंते! विद्याचारण का तिर्यग्-गति-विषय कितना प्रज्ञप्त है?

गौतम! वह जंबूद्वीप द्वीप से एक उड़ान में मानुषोत्तर पर्वत में समवसरण करता है, समवसरण कर वहां चैत्यों का वंदन करता है, वंदन कर दूसरी उड़ान में नंदीश्वर-द्वीप में

समवसरण करता है, वहां चत्यों को वंदन करता है, वंदन कर वहां से लौटता है, लौट कर जंबूद्वीप द्वीप में आता है, यहां आकर चैत्यों को वंदन करता है।

गौतम! विद्याचारण का इतना तिर्यग्-गति-विषय प्रज्ञप्त है।

८३. भंते! विद्याचारण का ऊर्ध्व-गति-विषय कितना प्रज्ञप्त है?

गौतम! वह जंबूद्वीप-द्वीप से एक उड़ान में नंदन-वन में समवसरण करता है, समवसरण कर वहां चैत्यों को वंदन करता है, वंदन कर दूसरी उड़ान में पंडक-वन में समवसरण करता है। समवसरण कर वहां चैत्यों को वंदन करता है, वंदन कर वहां से लौटता है, लौट कर जंबूद्वीप-द्वीप में आता है। यहां आकर चैत्यों को वंदन करता है। गौतम! विद्याचारण का ऊर्ध्व-गति-विषय इतना प्रज्ञप्त है। जो उस स्थान की आलोचना-प्रतिक्रमण किए बिना मृत्यु को प्राप्त होता है, उसके आराधना नहीं होती। उस स्थान की आलोचना-प्रतिक्रमण कर मृत्यु को प्राप्त होता है, उसके आराधना होती है।

८४. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—जंघाचारण जंघाचारण है?

गौतम! निरंतर तेले-तेले तप के द्वारा अपनी आत्मा को भावित करने वाले के जंघाचारण लब्धि नामक लब्धि समुत्पन्न होती है।

गौतम! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—जंघाचारण जंघाचारण है।

८५. भंते! जंघाचारण की शीघ्र गति कैसी होती है? उसका शीघ्र गति-विषय कितना प्रज्ञप्त है?

गौतम! इस जंबूद्वीप-द्वीप में यावत् उसका परिक्षेप तीन लाख, सोलह हजार दो सौ अठाईस योजन, तीन कोस एक सौ अठाईस धनुष और साढ़ा तेरह अंगुल से कुछ अधिक प्रज्ञप्त है। महर्द्धिक देव यावत् महान् ऐश्वर्य शाली यावत् यह रहा, यह रहा, इस प्रकार कह कर संपूर्ण जंबूद्वीप द्वीप में तीन बार चुटकी बजाने जितने समय में इक्कीस बार घूम कर शीघ्र ही आ जाता है। गौतम! जंघाचारण की वैसी शीघ्र गति है, वैसा शीघ्र गति-विषय प्रज्ञप्त है।

८६. भंते! जंघाचारण का तिर्यग्-गति-विषय कितना प्रज्ञप्त है?

गौतम! वह जंबूद्वीप-द्वीप से एक उड़ान में रुचकवर-द्वीप में समवसरण करता है, समवसरण कर वहां चैत्यों को वंदन करता है, वंदन कर वहां से लौटते हुए दूसरी उड़ान में नंदीश्वर-द्वीप में समवसरण करता है, समवसरण कर वहां चैत्यों को वंदन करता है, वंदन कर जंबूद्वीप-द्वीप में आता है, यहां आकर चैत्यों को वंदन करता है।

गौतम! जंघाचारण का तिर्यग्-गति-विषय इतना प्रज्ञप्त है।

८७. भंते! जंघाचारण का ऊर्ध्व-गति-विषय कितना प्रज्ञप्त है?

गौतम! वह जंबूद्वीप-द्वीप से एक उड़ान में पंडक-वन में समवसरण करता है, समवसरण कर वहां चैत्यों को वंदन करता है, वंदन कर वहां से लौटते हुए दूसरी उड़ान में नंदन-वन में समवसरण करता है, समवसरण कर वहां चैत्यों को वंदन करता है, वंदन कर जंबूद्वीप

द्वीप में आता ह, यहां आकर चैत्यों को वंदन करता है। गौतम! जंघाचारण का ऊर्ध्व--गति-विषय इतना प्रज्ञप्त है। उस स्थान की आलोचना-प्रतिक्रमण किए बिना मृत्यु को प्राप्त होता है, उसके आराधना नहीं होती। उस स्थान की आलोचना-प्रतिक्रमण कर मृत्यु को प्राप्त होता है, उसके आराधना होती है।

८८. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है। यावत् विहरण करने लगे।

दसवां उद्देशक

आयुष्य-पद

८९. भंते! क्या जीव सोपक्रम-आयुष्य वाले हैं, निरुपक्रम-आयुष्य वाले हैं?

गौतम! जीव सोपक्रम-आयुष्य वाले हैं, निरुपक्रम-आयुष्य वाले भी हैं।

९०. नैरयिकों की पृच्छा।

गौतम! नैरयिक सोपक्रम-आयुष्य वाले नहीं हैं, निरुपक्रम-आयुष्य वाले हैं। इस प्रकार यावत् स्तनितकुमार की वक्तव्यता। पृथ्वीकायिक की जीव की भांति वक्तव्यता। इस प्रकार यावत् मनुष्यों की वक्तव्यता। वाणमंतर, ज्योतिष्क और वैमानिक की नैरयिकों की भांति वक्तव्यता।

९१. भंते! नैरयिक क्या अपने उपक्रम से उपपन्न होते हैं? पर-उपक्रम से उपपन्न होते हैं? निरुपक्रम से उपपन्न होते हैं?

गौतम! अपने-उपक्रम से भी उपपन्न होते हैं, पर-उपक्रम से भी उपपन्न होते हैं, निरुपक्रम से भी उपपन्न होते हैं। इस प्रकार यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता।

९२. भंते! नैरयिक क्या अपने उपक्रम से उद्वर्तन करते हैं? पर-उपक्रम से उद्वर्तन करते हैं? निरुपक्रम से उद्वर्तन करते हैं?

गौतम! अपने उपक्रम से उद्वर्तन नहीं करते, पर-उपक्रम से उद्वर्तन नहीं करते, निरुपक्रम से उद्वर्तन करते हैं। इस प्रकार यावत् स्तनितकुमार की वक्तव्यता। पृथ्वीकायिक यावत् मनुष्य तीनों प्रकार से उद्वर्तन करते हैं। शेष की नैरयिक की भांति वक्तव्यता, इतना विशेष है—ज्योतिष्क, वैमानिक च्यवन करते हैं।

९३. भंते! क्या नैरयिक अपनी ऋद्धि से उपपन्न होते हैं? पर-ऋद्धि से उपपन्न होते हैं?

गौतम! अपनी ऋद्धि से उपपन्न होते हैं, पर-ऋद्धि से उपपन्न नहीं होते। इस प्रकार यावत् वैमानिक की वक्तव्यता।

९४. भंते! नैरयिक अपनी ऋद्धि से उद्वर्तन करते हैं? पर-ऋद्धि से उद्वर्तन करते हैं?

गौतम! अपनी ऋद्धि से उद्वर्तन करते हैं, पर-ऋद्धि से उद्वर्तन नहीं करते। इस प्रकार यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता, इतना विशेष अभिलाप है—ज्योतिष्क, वैमानिक च्यवन करते हैं।

९५. भंते! क्या नैरयिक अपने कर्म से उपपन्न होते हैं? पर-कर्म से उपपन्न होते हैं?

गौतम! अपने कर्म से उपपन्न होते हैं, पर-कर्म से उपपन्न नहीं होते। इस प्रकार यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता। इसी प्रकार उद्‌वर्तना-दंडक की वक्तव्यता।

९६. भंते! क्या नैरयिक अपने प्रयोग से उपपन्न होते हैं? पर-प्रयोग से उपपन्न होते हैं?

गौतम! अपने प्रयोग से उपपन्न होते हैं, परप्रयोग से उपपन्न नहीं होते। इस प्रकार यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता। इसी प्रकार उद्‌वर्तना-दंडक की वक्तव्यता।

कति-संचित-आदि-पद

९७. भंते! क्या नैरयिक कति-संचित हैं? अकति-संचित हैं? अवक्तव्यक-संचित हैं?

गौतम! नैरयिक कति-संचित भी हैं, अकति-संचित भी हैं, अवक्तव्यक-संचित भी हैं।

९८. यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—यावत् अवक्तव्यक-संचित भी हैं?

गौतम! जो नैरयिक संख्येय-प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे कति-संचित हैं। जो नैरयिक असंख्येय-प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे अकति-संचित हैं, जो नैरयिक एक-प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे अवक्तव्यक-संचित हैं।

गौतम! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—यावत् अवक्तव्यक-संचित भी हैं। इस प्रकार यावत् स्तनितकुमार की वक्तव्यता।

९९. पृथ्वीकायिकों की पृच्छा।

गौतम! पृथ्वीकायिक कति-संचित नहीं हैं, अकति-संचित हैं, अवक्तव्यक-संचित नहीं हैं।

१००. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—यावत् अवक्तव्यक-संचित नहीं हैं?

गौतम! पृथ्वीकायिक असंख्येय-प्रवेशन से प्रवेश करते हैं। इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—यावत् अवक्तव्यक-संचित नहीं हैं। इस प्रकार यावत् वनस्पतिकायिक की वक्तव्यता। द्वीन्द्रिय यावत् वैमानिक की नैरयिक की भांति वक्तव्यता।

१०१. सिद्धों की पृच्छा।

गौतम! सिद्ध कति-संचित हैं, अकति-संचित नहीं हैं, अवक्तव्यक-संचित भी हैं।

१०२. यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है यावत् अवक्तव्यक संचित भी हैं?

गौतम! जो सिद्ध संख्येय-प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे कति-संचित हैं। जो सिद्ध एक--प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे अवक्तव्यक-संचित हैं। इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—यावत् अवक्तव्यक-संचित भी हैं।

१०३. भंते! इन नैरयिकों के कति-संचित, अकति-संचित और अवक्तव्यक-संचित में कौन किससे अल्प, बहुत, तुल्य अथवा विशेषाधिक हैं?

गौतम! अवक्तव्यक-संचित नैरयिक सबसे अल्प हैं। कति-संचित उससे संख्येय-गुण हैं। अकति-संचित उससे असंख्येय-गुण हैं। इस प्रकार एकेन्द्रिय को छोड़कर यावत् वैमानिकों के अल्प-बहुत्व की वक्तव्यता।

१०४. भंते! इन सिद्धों के कति-संचित और अवक्तव्यक-संचित में कौन किससे अल्प, बहुत, तुल्य अथवा विशेषाधिक है?

गौतम! कति-संचित सिद्ध सबसे अल्प हैं, अवक्तव्यक-संचित उससे संख्येय गुण हैं।

षट्क समर्जित-आदि-पद

१०५. भंते! क्या नैरयिक षट्क-समर्जित हैं? नोषट्क-समर्जित हैं? षट्क-नोषट्क-समर्जित हैं? अनेक-षट्क-समर्जित हैं? अनेक-षट्क-एक-नोषट्क-समर्जित हैं?

गौतम! नैरयिक षट्क-समर्जित भी हैं, नोषट्क-समर्जित भी हैं, षट्क-नोषट्क-समर्जित भी हैं, अनेक-षट्क-समर्जित भी हैं, अनेक-षट्क-एक-नोषट्क-समर्जित भी हैं।

१०६. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—नैरयिक षट्क-समर्जित भी हैं यावत् अनेक षट्क-नोषट्क-समर्जित भी हैं?

गौतम! जो नैरयिक षट्क-प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे षट्क-समर्जित हैं। जो नैरयिक जघन्यतः एक-, दो-अथवा तीन-, उत्कृष्टतः पांच-प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे नोषट्क-समर्जित हैं। जो नैरयिक एक-षट्क तथा अन्य जघन्यतः एक-, दो-, तीन-, उत्कृष्टतः पांच-प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे षट्क-नोषट्क समर्जित हैं। जो नैरयिक अनेक-षट्क-प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे अनेक-षट्क-समर्जित हैं। जो नैरयिक अनेक--षट्क तथा अन्य जघन्यतः एक-, दो-, तीन-, उत्कृष्टतः पांच-प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे अनेक-षट्क-एक-नोषट्क-समर्जित हैं। इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—यावत् अनेक-षट्क-एक-नोषट्क-समर्जित भी हैं। इस प्रकार यावत् स्तनितकुमार की वक्तव्यता।

१०७. पृथ्वीकायिकों की पृच्छा।

गौतम! पृथ्वीकायिक-जीव षट्क-समर्जित नहीं है, नोषट्क-समर्जित नहीं है, षट्क- और नोषट्क-समर्जित नहीं हैं। अनेक-षट्क-समर्जित हैं, अनेक-षट्क-एक-नोषट्क-समर्जित भी हैं।

१०८. यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—यावत् अनेक-षट्क-एक-नोषट्क-समर्जित हैं?

गौतम! जो पृथ्वीकायिक-जीव अनेक-षट्क-प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं वे पृथ्वीकायिक अनेक-षट्क-समर्जित हैं। जो पृथ्वीकायिक अनेक-षट्क तथा अन्य जघन्य एक-, दो-, तीन-, उत्कृष्टतः पांच-प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे पृथ्वीकायिक अनेक-षट्क-एक--नोषट्क-समर्जित हैं। इस प्रकार यावत् वनस्पतिकायिक की वक्तव्यता। द्वीन्द्रिय की वैमानिक की भांति वक्तव्यता। सिद्ध की नैरयिक की भांति वक्तव्यता।

१०९. भंते! इन नैरयिकों के षट्क-समर्जित, नोषट्क-समर्जित, षट्क-नोषट्क-समर्जित, अनेक-षट्क-समर्जित, अनेक-षट्क-एक-नोषट्क-समर्जित में कौन किनसे अल्प, बहुत, तुल्य अथवा विशेषाधिक हैं?

गौतम! षट्क-समर्जित नैरयिक सबसे अल्प हैं, नोषट्क-समर्जित उनसे संख्येय-गुण हैं, षट्क-नोषट्क-समर्जित उनसे संख्येयगुण हैं, अनेक-षट्क-समर्जित उनसे असंख्येय-गुण हैं,

अनेक-षट्क-एक-नोषट्क-समर्जित उनसे संख्येय-गुण हैं। इस प्रकार यावत् स्तनितकुमार की वक्तव्यता।

११०. भंते! इन पृथ्वीकायिकों के अनेक-षट्क-समर्जित, अनेक-षट्क-एक-नोषट्क-समर्जित में कौन किनसे अल्प, बहुत, तुल्य अथवा विशेषाधिक हैं?

गौतम! अनेक-षट्क-समर्जित पृथ्वीकायिक सबसे अल्प हैं। अनेक-षट्क-एक-नोषट्क--समर्जित उनसे संख्येय-गुण हैं। इस प्रकार यावत् वनस्पतिकायिक की वक्तव्यता। द्वीन्द्रिय यावत् वैमानिकों की नैरयिक की भांति वक्तव्यता।

१११. भंते! इन सिद्धों के षट्क-समर्जित, नोषट्क-समर्जित यावत् अनेक-षट्क-एक--नोषट्क-समर्जित में कौन किनसे अल्प, बहुत, तुल्य अथवा विशेषाधिक हैं?

गौतम! अनेक-षट्क-एक-नोषट्क-समर्जित सिद्ध सबसे अल्प हैं, अनेक-षट्क-समर्जित उनसे संख्येय-गुण हैं, षट्क-नोषट्क-समर्जित उनसे संख्येय-गुण हैं, नोषट्क-समर्जित उनसे संख्येय-गुण हैं।

द्वादश-समर्जित-आदि-पद

११२. भंते! क्या नैरयिक द्वादश-समर्जित हैं? नोद्वादश-समर्जित हैं? द्वादश-नोद्वादश--समर्जित हैं? अनेक-द्वादश-समर्जित हैं? अनेक-द्वादश-नोद्वादश-समर्जित हैं?

गौतम! नैरयिक द्वादश-समर्जित भी हैं यावत् अनेक-द्वादश-नोद्वादश-समर्जित भी हैं।

११३. यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है यावत् अनेक-द्वादश-नोद्वादश-समर्जित भी हैं?

गौतम! जो नेरयिक द्वादश-प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे द्वादश-समर्जित हैं। जो नैरयिक जघन्यतः एक-, दो-, तीन- उत्कृष्टतः ग्यारह-प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे नोद्वादश--समर्जित हैं। जो नैरयिक द्वादश-प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं तथा अन्य जघन्यतः एक-, दो-, तीन- उत्कृष्टतः ग्यारह-प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे द्वादश-नोद्वादश-समर्जित हैं। जो नैरयिक अनेक-द्वादश-प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे अनेक-द्वादश-समर्जित हैं। जो नैरयिक अनेक-द्वादश- तथा जघन्यतः एक-, दो-, तीन- उत्कृष्टतः ग्यारह-प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे अनेक-द्वादश-नोद्वादश-समर्जित हैं। इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—यावत् अनेक-द्वादश-नोद्वादश-समर्जित भी हैं।

११४. पृथ्वीकायिकों की पृच्छा।

गौतम! पृथ्वीकायिक द्वादश-समर्जित नहीं हैं, नोद्वादश-समर्जित नहीं हैं, द्वादश-नोद्वादश--समर्जित नहीं हैं। अनेक-द्वादश-समर्जित हैं, अनेक-द्वादश-नोद्वादश-समर्जित भी हैं।

११५. यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—यावत् अनेक-द्वादश-नोद्वादश-समर्जित भी हैं?

गौतम! जो पृथ्वीकायिक अनेक-द्वादश-प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे द्वादश-समर्जित हैं। जो पृथ्वीकायिक अनेक-द्वादश- तथा अन्य जघन्यतः एक-, दो-, तीन- उत्कृष्टतः ग्यारह--प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे अनेक-द्वादश-नोद्वादश-समर्जित हैं। इस अपेक्षा से यह

कहा जा रहा है—यावत् अनेक-द्वादश-नोद्वादश-समर्जित भी हैं। इस प्रकार यावत् वनस्पतिकायिक की वक्तव्यता। द्वीन्द्रिय यावत् सिद्धों की नैरयिक की भांति वक्तव्यता।

११६. भंते! इन नैरयिकों के द्वादश-समर्जित—इन सबके अल्प-बहुत्व की षट्क-समर्जितों की भांति वक्तव्यता, इतना विशेष है—द्वादश अभिलाप्य है, शेष पूर्ववत्।

चतुरशीति-समर्जित-आदि-पद

११७. भंते! क्या नैरयिक चतुरशीति(चौरासी)-समर्जित हैं? नोचतुरशीति-समर्जित हैं? चतुरशीति-नोचतुरशीति-समर्जित हैं? अनेक-चतुरशीति-समर्जित हैं? अनेक--चतुरशीति—नोचतुरशीति-समर्जित हैं?

गौतम! नैरयिक चतुरशीति-समर्जित भी हैं यावत् अनेक-चतुरशीति—नोचतुरशीति-समर्जित भी हैं।

११८. यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—यावत् अनेक-चतुरशीति-नोचतुरशीति-समर्जित भी हैं?

गौतम! जो नैरयिक चौरासी-प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे चतुरशीति-समर्जित हैं। जो नैरयिक जघन्यतः एक-, दो-, तीन- उत्कृष्टतः तिरासी-प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे नोचतुरशीति-समर्जित हैं। जो नैरयिक चौरासी- तथा अन्य जघन्यतः एक-, दो-, तीन--उत्कृष्टतः तिरासी-प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे चतुरशीति-नोचतुरशीति-समर्जित हैं। जो नैरयिक अनेक-चौरासी-प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे अनेक-चतुरशीति-समर्जित हैं। जो नैरयिक अनेक-चौरासी- तथा अन्य जघन्यतः एक-, दो-, तीन- उत्कृष्टतः तिरासी--प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे अनेक-चतुरशीति-नोचतुरशीति-समर्जित हैं। इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—यावत् अनेक-चतुरशीति-नोचतुरशीति-समर्जित भी हैं। इस प्रकार यावत् स्तनितकुमार की वक्तव्यता। पृथ्वीकायिक की अंतिम दो विकल्पों की भांति वक्तव्यता, इतना विशेष है—चौरासी अभिलाप्य है। इस प्रकार यावत् वनस्पतिकायिक की वक्तव्यता। द्वीन्द्रिय यावत् वैमानिकों की नैरयिक की भांति वक्तव्यता।

११९. सिद्धों की पृच्छा।

गौतम! सिद्ध चतुरशीति-समर्जित भी हैं, नोचतुरशीति-समर्जित भी हैं, चतुरशीति--नोचतुरशीति-समर्जित भी हैं, अनेक-चतुरशीति-समर्जित नहीं है, अनेक-चतुरशीति--नोचतुरशीति-समर्जित नहीं हैं।

१२०. यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—यावत् अनेक, चतुरशीति-नोचतुरशीति-समर्जित नहीं हैं?

गौतम! जो सिद्ध चौरासी-प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे चतुरशीति-समर्जित हैं। जो सिद्ध जघन्यतः एक-, दो-, तीन- उत्कृष्टतः तिरासी-प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे नोचतुरशीति-समर्जित हैं। जो सिद्ध चौरासी- तथा अन्य जघन्यतः, एक-, दो-, तीन--उत्कृष्टतः तिरासी-प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे चतुरशीति-नोचतुरशीति-समर्जित हैं। इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है यावत् चतुरशीति-नोचतुरशीति-समर्जित हैं।

१२१. भंते! इन नैरयिकों के चतुरशीति-समर्जित, नोचतुरशीति-समर्जित—सबके अल्प-बहुत्व की षट्क-समर्जित की भांति वक्तव्यता यावत् वैमानिक, इतना विशेष है—चतुरशीति अभिलाप्य है।

१२२. भंते! इन सिद्धों के चतुरशीति-समर्जित, नोचतुरशीति-समर्जित, चतुरशीति--नोचतुरशीति-समर्जित में कौन किनसे अल्प यावत् विशेषाधिक हैं?

गौतम! चतुरशीति-नोचतुरशीति-समर्जित सिद्ध सबसे अल्प हैं, चतुरशीति-समर्जित उनसे अनंत-गुणा हैं, नोचतुरशीति-समर्जित उनसे अनंत-गुणा हैं।

१२३. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है। यावत् विहरण करने लगे।

• • •

इक्कीसवां शतक

पहला वर्ग

पहला उद्देशक

संग्रहणी गाथा

१. शालि २. मटर ३. अलसी ४. बांस ५. इक्षु ६. डाभ ७. अभ्र ८. तुलसी—इक्कीसवें शतक में आठ वर्ग हैं। प्रत्येक वर्ग में दस उद्देशक हैं। इस प्रकार सब मिलकर अस्सी उद्देशक हो जाते हैं।

शालि-आदि जीवों का उपपात-आदि-पद

१. राजगृह नगर यावत् गौतम ने इस प्रकार कहा—भंते! शालि, व्रीहि, गेहूं, जौ, यवयव—भंते! इनके जो जीव मूल-रूप में उपपन्न होते हैं, भंते! वे जीव कहां से (आकर) उपपन्न होते हैं—क्या नैरयिकों से उपपन्न होते हैं? क्या तिर्यग्-योनिकों से उपपन्न होते हैं? मनुष्यों से उपपन्न होते हैं? देवों से उपपन्न होते हैं?

पण्णवणा (पद ६) अवक्रांति-पद में जैसा उपपात निरूपित है वैसा ही उपपात यहां वक्तव्य है, केवल इतना विशेष है—देव मूल-रूप में उपपन्न नहीं होते।

२. भंते! वे जीव एक समय में कितने उपपन्न होते हैं?

गौतम! जघन्यतः एक, दो, तीन, उत्कृष्टतः संख्येय अथवा असंख्येय उपपन्न होते हैं। (उनकी संख्या ज्ञात करने के लिए किए जाने वाले) अपहार की उत्पल-उद्देशक (**भ.** ११/४) की भांति वक्तव्यता।

३. भंते! उन जीवों के शरीर की अवगाहना कितनी बड़ी प्रज्ञप्त है?

गौतम! जघन्यतः अंगुल-का-असंख्यातवां-भाग, उत्कृष्टतः पृथक्त्व-धनुष-परिमाण।

४. भंते! वे जीव ज्ञानावरणीय-कर्म के बंधक हैं? अबंधक हैं?

उत्पल-उद्देशक (**भ.** ११/६-११) की भांति वक्तव्यता। इसी प्रकार वेदन, उदय और उदीरणा की भी वक्तव्यता।

५. भंते! वे जीव कृष्ण-लेश्या वाले हैं? नील-लेश्या वाले हैं? कापोत-लेश्या वाले हैं?

छब्बीस भंग वक्तव्य हैं। दृष्टि यावत् इंद्रियों की उत्पल-उद्देशक (**भ.** ११/१३-२८) की भांति वक्तव्यता।

६. भंते! शालि, व्रीहि, गेहूं, जौ, यवयव—इनका मूल जीव काल की अपेक्षा कितने काल तक रहता है?

गौतम! जघन्यतः अंतर्मुहूर्त्त, उत्कृष्टतः असंख्येय काल।

७. भंते! शालि, व्रीहि, गेहूं, जौ, यवयव—इनका मूल जीव पृथ्वीकायिक-जीव के रूप में उपपन्न होता है, पुनः शालि, व्रीहि, गेहूं, जौ, यवयव के मूल जीव के रूप में उत्पन्न होकर कितने काल तक रहता है? कितने काल तक गति-आगति करता है?

इस प्रकार उत्पल-उद्देशक (भ. ११/३०-३४) की भांति वक्तव्यता। इस अभिलाप के अनुसार यावत् मनुष्य-जीव। आहार की उत्पल-उद्देशक (भ. ११/३५) की भांति वक्तव्यता। स्थिति जघन्यतः अंतर्मुहूर्त्त, उत्कृष्टतः पृथक्त्व वर्ष। समुद्घात, समवहतता और उद्वर्तना की उत्पल-उद्देशक (भ. ११/३७-३९) की भांति वक्तव्यता।

८. भंते! सर्व प्राण यावत् सर्व सत्त्व शालि, व्रीहि, गेहूं, जौ, यवयव के मूल जीव के रूप में पहले उपपन्न हुए हैं?

हां, गौतम! अनेक बार अथवा अनंत बार।

९. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

दूसरा-दसवां उद्देशक

१०. भंते! शालि, व्रीहि, गेहूं, जौ, यवयव—इनके कंद-रूप में जो जीव उपपन्न होते हैं, वे जीव कहां से आ कर उपपन्न होते हैं?

इस प्रकार कंद-अधिकार में वही पूर्वोक्त मूल-उद्देशक अपरिशेष वक्तव्य है यावत् अनेक बार अथवा अनंत बार उपपन्न हुए हैं।

११. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

१२. इसी प्रकार स्कंध-उद्देशक ज्ञातव्य है। इसी प्रकार त्वचा-उद्देशक की वक्तव्यता। इसी प्रकार शाखा-उद्देशक की वक्तव्यता। इसी प्रकार प्रवाल-उद्देशक की वक्तव्यता। इसी प्रकार पत्र-उद्देशक की वक्तव्यता। ये सात उद्देशक पूर्णतया मूल की भांति ज्ञातव्य है। इसी प्रकार पुष्प-उद्देशक की वक्तव्यता, इतना विशेष है—उत्पल-उद्देशक (भ. ११/२) की भांति देव उपपन्न होते हैं। लेश्याएं चार हैं। अस्सी भंग वक्तव्य हैं। अवगाहना जघन्यतः अंगुल-का--असंख्यातवां-भाग, उत्कृष्टतः पृथक्त्व-अंगुल। शेष पूर्ववत्।

१३. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

१४. पुष्प की भांति फल-उद्देशक की पूर्ण वक्तव्यता। इसी प्रकार बीज-उद्देशक की वक्तव्यता। ये दस उद्देशक हैं।

दूसरा वर्ग

१५. भंते! मटर, मसूर, तिल, मूंग, उड़द, निष्पाव (सेम) कुलथी, चवला, 'सतीण' (मटर का एक भेद) और काला चना—इनके जो जीव मूल-रूप में उपपन्न होते हैं, भंते! वे जीव कहां से (आकर) उपपन्न होते हैं?

इस प्रकार इन जीवों के संदर्भ में भी मूल आदि दस उद्देशक वैसे ही निरवशेष वक्तव्य हैं जैसे (भ. २१/१-१४ में) शालि-वर्ग के संदर्भ में कहे गए हैं।

तीसरा वर्ग

१६. भंते! अलसी, कुसुम्भ, कोदव, कंगु, चीना धान्य, दाल, 'कोदूसा' (कोदव की एक जाति), सन, सरसों, मूलकबीज—इनके जो जीव मूल-रूप में उपपन्न होते हैं, भंते! वे जीव कहां से (आकर) उपपन्न होते हैं?

इस प्रकार इन जीवों के संदर्भ में भी मूल आदि दश उद्देशक की वक्तव्यता, वैसे ही निरवशेष वक्तव्य हैं जैसे (भ. २१/१-१४ में) शालि-वर्ग के संदर्भ में कहे गए हैं।

चौथा वर्ग

१७. भंते! वंश (बांस), वेणु (बांस), कनक (धतूरा), कर्कावंश, चारुवंश, उडा (दण्डा), कुटी, विमल (पद्मकाष्ठ), कण्डा (सरकंडा), वेणुका (वेणुयव), कल्याण (गरजन)—इनके जो जीव मूल-रूप में उपपन्न होते हैं, भंते! वे जीव कहां से (आकर) उपपन्न होते हैं?

इस प्रकार इन जीवों के संदर्भ में भी मूल आदि दस उद्देशक वैसे ही वक्तव्य हैं जैसे (भ. २१/१-१४ में) शालि-वर्ग के संदर्भ में कहे गए हैं, केवल इतना अन्तर है—देव सर्वत्र उत्पन्न नहीं होते। तीन लेश्याएं होती हैं। सर्वत्र छब्बीस भंग होते हैं, शेष उसी प्रकार।

पांचवां वर्ग

१८. भंते! इक्षु (गन्ना), इक्षुवाटिका (पुण्ड्र नामक ईख का भेद), वीरण (गाडर घास), इक्कट (इकडी), भमास (धमासा), श्रुव (चूरनहार), शर (रामसर), वेत्र (बेंत), तिमिर (जल महुआ), शतपोरक ईख, नल (नरकट)—इनके जो जीव मूल-रूप में उपपन्न होते हैं, भंते! वे जीव कहां से (आकर) उपपन्न होते हैं?

इस प्रकार इन जीवों के संदर्भ में भी मूल आदि दस उद्देशक वैसे ही वक्तव्य है, जैसे (भ. २१/१७) में) वंश-वर्ग के संदर्भ में कहे गए हैं, केवल इतना अन्तर हैं—स्कन्ध--उद्देशक में देव उत्पन्न होते हैं। लेश्याएं चार हैं। शेष उसी प्रकार।

छठा वर्ग

१९. भंते! सेडिय (मूंज), भक्तिका (आरामशीतला), होत्रीय (सितदर्भ), दर्भ (डाभ, श्वेत दर्भ), कुश (कुस घास), पर्वत (पहाड़ी तृण), पोटगल (नल-तृण), अर्जुन (तृण), आषाढा (दुर्वा—हरी दूब), रौहिषक (दीर्घ रौहिष या रूसाघास), शुक (बालतृण अथवा पटुतृण), तवक्षीर (तीरवुर), भुस (भुसा), एरण्ड, कुरूकुंद (कुरुविंद, मोथा), करकर (करकरा या करीर), सूंठ, विभंगु, मधुर तृण (मज्जर तृण), स्थूल इक्षुर (अथवा स्थूलशर), शिल्पिका तृण—शूकडितृण—इनके जो जीव मूल-रूप में उपपन्न होते हैं, भंते! वे जीव कहां से (आकर) उपपन्न होते हैं?

इस प्रकार इन जीवों के संदर्भ में भी मूल आदि दस उद्देशक वैसे ही निरवशेष वक्तव्य हैं, जैसे (भ. २१/१७ में) वंश-वर्ग के संदर्भ में कहे गए हैं।

सातवां वर्ग

२०. भंते! अम्भोरूह (कमल), वोयाण, हरित (श्वेत सहजन शाक), चौलाई का शाक, तृण (रोहितघास), बथुआ, बांस की गांठ, लाल चित्रक, पाची-लता, चिल्ली शाक (बड़ा बथुआ), पालक, जलपीपल, दारूहलदी, सुनिषण्णक शाक, ब्राह्मी, मूली, सरसों, कोकम, जिवसाग—इनके जो जीव मूल-रूप में उपपन्न होते हैं, भंते! वे जीव कहां से (आकर) उपपन्न होते हैं?

इस प्रकार इन जीवों के संदर्भ में भी मूल आदि दस उद्देशक वैसे ही निरवशेष वक्तव्य हैं, जैसे (भ. २१/१७ में) वंश-वर्ग के संदर्भ में कहे गए हैं।

आठवां वर्ग

२१. भंते! तुलसी, कृष्ण तुलसी, दराल, फणिज्जक (फांगला), अर्जक (बाबरी जो तुलसी का एक भेद है), जम्बीरतृण, शंखिनी, जीरक (जीरा), दवना, सफेद मरूआ, नील कमल, शतपुष्पा (सोआ या वन सौंफ)—इनके जो जीव मूल-रूप में उपपन्न होते हैं, भंते! वे जीव कहां से (आकर) उपपन्न होते हैं?

इस प्रकार इन जीवों के संदर्भ में भी मूल आदि दस उद्देशक वैसे ही निरवशेष वक्तव्य हैं, जैसे (भ. २१/१७) में) वंश-वर्ग के संदर्भ में कहे गए हैं।

इस प्रकार इन आठ वर्गों के अस्सी उद्देशक होते हैं।

• • •

बाईसवां शतक

पहला वर्ग

पहला उद्देशक

संग्रहणी गाथा

१,२. ताल, एकास्थिक, ३. बहुबीजक ४. गुच्छ ५. गुल्म ६. वल्ली—बाइसवें शतक के छह वर्ग हैं। प्रत्येक वर्ग के दस उद्देशक हैं। इस प्रकार इन छह वर्गों के साठ उद्देशक होते हैं।

ताल-आदि जीवों में उपपात-आदि-पद

१. राजगृह नगर यावत् गौतम ने इस प्रकार कहा—भंते! ताल, तमाल, अरणी, तेतली, साल, चीड़, साल-कल्याण, जावित्री, केवड़ा, केला, कंदली (कमलगट्टा), भोजपत्र का वृक्ष, अखरोट, हींग का वृक्ष, लवंग का वृक्ष, सुपारी, खजूर तथा नारियल—इनके जो जीव मूल-रूप में उत्पन्न होते हैं, भंते! वे जीव कहां से (आकर) उत्पन्न होते हैं? इस प्रकार इन जीवों के संदर्भ में भी मूल आदि दस उद्देशक वैसे ही वक्तव्य हैं जैसे शालि-वर्ग के संदर्भ में (भ. २१/१-१४ में) कहे गये हैं, केवल इतना अन्तर है—यह नानात्व है—मूल, कंद, स्कन्ध (खंध), त्वक् (त्वचा) और शाखा—इन पांच उद्देशकों में देव उपपन्न नहीं होते। लेश्याएं तीन हैं। स्थिति जघन्यतः अंतर्मुहूर्त्त, उत्कृष्टतः दस हजार वर्ष। अंतिम पांच उद्देशकों में देव उपपन्न होते हैं। लेश्याएं चार हैं। स्थिति जघन्यतः अंतर्मुहूर्त्त, उत्कृष्टतः पृथक्त्व-वर्ष। अवगाहना मूल और कंद में पृथक्त्व-धनुष, स्कन्ध (खंध), त्वक् (त्वचा) और शाखा में पृथक्त्व-गव्यूत, प्रवाल और पत्ते में पृथक्त्व-धनुष, पुष्प में पृथक्त्व-हाथ, फल और बीज में पृथक्त्व-अंगुल। सभी की अवगाहना जघन्यतः अंगुल-का-असंख्यातवां-भाग। शेष सालि की भांति जानना चाहिए। इसी प्रकार ये दस उद्देशक हैं।

दूसरा वर्ग

नीम-आदि एकास्थिक-वृक्षों में उपपात-आदि-पद

२. भंते! नीम, आम, जामुन, कोसम, साल, ढेरा अंकोल, पीलू, लिसोड़ा, सलइ, शाल्मली, काली तुलसी, मौलसरी ढाक, कंटक करंज, जिया-पोता, रीठा, बेहड़ा, हरड़, भिलावा, वायविडंग, गंभीरी, धाय, चिरौंजी, पोई, महानीम—वकायन, निर्मली, पाशिकावृक्ष (दक्षिण का एक प्रसिद्ध वृक्ष), सीसम, विजयसार, जायफल, सुलतान, चंपा,

सेहुंड कायफल, अशोक—इनके जो जीव मूल-रूप में उपपन्न होते हैं, भंते! वे जीव कहां से (आकर) उपपन्न होते हैं? इस प्रकार इन जीवों के संदर्भ में मूल आदि दस उद्देशक वैसे ही निरवशेष वक्तव्य हैं जैसे (भ. २२/१ में) ताल-वर्ग के संदर्भ में कहे गए हैं।

तीसरा वर्ग

हडसंधारी-आदि बहुबीजक-वृक्षों में उपपात-आदि-पद

३. भंते! हडसंधारी—हडजोड़ी, तेंदु—आबनूस, बदर(सेव), कैथ, आमड़ा, बिजौरा, नींबू, बेल, आंवला, कटहल्ल, अनार, पीपल, गूलर, बड़, खेजड़ी, तून, पीपर, शतावरी, पाकर, कटूमर, धनिया, धधर बेल, तिलिया, बडहर, गुण्डतृण, सिरस, छतिवन, दधिपर्ण[१], लोध, धौं, चंदन, अर्जुन, नीम[२]—धाराकदम्ब, कुटज—कूड़ा, कदम्ब—इनके जो जीव मूल--रूप में उपपन्न होते हैं, भंते! वे जीव कहां से (आकर) उपपन्न होते हैं? इस प्रकार इन जीवों के संदर्भ में मूल आदि दस उद्देशक (भ. २२/१ में कहे गए) ताल-वर्ग के सदृश जानने चाहिए। यावत् बीज।

चौथा वर्ग

बैंगन-आदि गुच्छों म उपपात-आदि-पद

४. भंते! बैंगन, सलइ, बोदरी, इस प्रकार **पण्णवणा** (१/३७) की गाथानुसार ज्ञातव्य है, यावत् गांजा, पाढल, नील कटसरैया, ढेरा तक—इनके जो जीव मूल-रूप में उत्पन्न होते हैं, भंते! वे जीव कहां से (आकर) उपपन्न होते हैं? इस प्रकार इन जीवों के संदर्भ में मूल आदि दस उद्देशक (भ. २१/१७ में कहे गए) वंश-वर्ग के सदृश जानने चाहिए यावत् बीज।

पांचवां वर्ग

श्वेतपुष्प-कटसरैया-आदि गल्मों में उपपात-आदि-पद

५. भंते! श्वेतपुष्पवाली कटसरैया, नेवारी, पीले फूलवाली कटसरैया, दुपहरिया, कामजा, इस प्रकार **पण्णवणा** (१/३८) की गाथानुसार ज्ञातव्य है, यावत् महामेदा, कुंद, वासंती पुष्पलता—इनके जो जीव मूल-रूप में उत्पन्न होते हैं, भंते! वे जीव कहां से (आकर) उपपन्न होते हैं? इस प्रकार इन जीवों के संदर्भ में मूल आदि दस उद्देशक (भ. २१/१--१४ में कहे गए) शालि-वर्ग को भांति निरवशेष जानने चाहिए।

छठा वर्ग

६. भंते! कुम्हडी, तरबूज, कड़वी तुम्बी, खीरा, बालुकाशाक, इस प्रकार **पण्णवणा** (पद १, वल्लि-वर्ग) के अनुसार पदच्छेद करणीय है, यावत् सेमचरिया, काकलिदाख, जंगली एरण्ड, सूरजमुखी तक—इनके जो जीव मूल-रूप में उत्पन्न होते हैं, भंते! वे जीव कहां से (आकर) उपपन्न होते हैं? इस प्रकार इन जीवों के संदर्भ में मूल आदि दस उद्देशक (**भ.**

२२/१ में कहे गए) ताल-वर्ग की भांति कहने चाहिए, केवल इतना अन्तर है—फल--उद्देशक में अवगाहना—जघन्यतः अंगुल-का-असंख्यातवां-भाग, उत्कर्षतः पृथक्त्व-धनुष। स्थिति—सर्वत्र जघन्यतः अंतर्मुहूर्त्त, उत्कर्षतः पृथक्त्व-वर्ष, शेष उसी प्रकार। इस प्रकार छह वर्गों के साठ उद्देशक होते हैं।

तेईसवां शतक

पहला वर्ग

संग्रहणी गाथा

१. आलुक २. रोहीतक ३. शैवाल ४. पाठा तथा ५. जंगली उड़द—तेइसवें शतक के पांच वर्ग हैं। प्रत्येक वर्ग के दस उद्देशक हैं। इस प्रकार इन पांच वर्गों के पचास उद्देशक होते हैं।

आलुक-आदि जीवों में उपपात-आदि-पद

१. राजगृह नगर यावत् गौतम ने इस प्रकार कहा—भंते! आलुक, मूला, अदरक, हलदी, वन रोहेडा, रिंगणी, जारूल, घोडबेल (बिदारी कंद), वाराही कंद, कुंदरू, कृष्णपुष्पवाली कटभी, जलमहुआ, पुथलकी, गुडमार, तेलियाकंद, नाकुली, गिलोयपद्म, शालिषाष्टिक आदि—इनके जो जीव मूल-रूप में उपपन्न होते हैं, भंते! वे जीव कहां से (आकर) उत्पन्न होते हैं? इस प्रकार इन जीवों के संदर्भ में भी मूल आदि दस उद्देशक (भ. २१/१७ में कहे गए) वंश-वर्ग के सदृश कहने चाहिए, केवल इतना अन्तर है—परिमाण—जघन्यतः एक अथवा दो अथवा तीन, उत्कर्षतः संख्यात अथवा असंख्यात अथवा अनंत उत्पन्न होते हैं। अपहार—गौतम! ये जीव अनंत होते हैं जो समय-समय में अपहृत किए जाने पर अनंत-अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी जितना काल व्यतीत होने पर अपहृत होते हैं, उतने अनंत हैं। स्थिति—जघन्यतः एवं उत्कर्षतः अंतर्मुहूर्त्त, शेष उसी प्रकार।

दूसरा वर्ग

२. भंते! रोहीतक,त्रिधारा थूहर, थीहू, स्तबक, शाल, अडूसा, कांटा थूहर, काली मूसली—इनके जो जीव मूल-रूप में उपपन्न होते हैं, भंते! वे जीव कहां से (आकर) उपपन्न होते हैं? इस प्रकार इन जीवों के संदर्भ में मूल आदि दस उद्देशक (भ. २३/१) में कहे गए) आलुक-वर्ग की भांति कहने चाहिए, केवल इतना अन्तर है—अवगाहना—(भ. २२/१ में कहे गए) ताल-वर्ग की भांति कहनी चाहिए, शेष उसी प्रकार।

३. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

तीसरा वर्ग

४. भंते! आय कुहण (भूमि स्फोट), काय, ग्रन्थिपर्ण, कुन्दुरु (लबान), दारूहल्दी, सका, बड़ा शालवृक्ष, भूइंछत्ता, वंसाणिय (वंशलोचन और शुकनासा), कुराण (कुरवाण)—इनके

जो जीव मूल-रूप में उपपन्न होते हैं, भंते! वे जीव कहां से (आकर) उत्पन्न होते हैं? इस प्रकार इन जीवों के संदर्भ में भी मूल आदि दस उद्देशक (भ. २३/१ में कहे गए) आलुक-वर्ग की भांति अविकल रूप में कहने चाहिए—केवल इतना अन्तर है, अवगाहना—(भ. २२/१ में कहे गए) ताल-वर्ग की भांति वक्तव्य है, शेष उसी प्रकार।

५. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

चौथा वर्ग

६. भंते! पाठा, बड़ी इन्द्रायण, मुलहठी, करेली, पद्मा (स्थल कमल), अतिविसा, दंती (लघुदंती), लिंगनी (शिवलिंगी)—इनके जो जीव मूल-रूप में उपपन्न होते हैं, भंते! वे जीव कहां से (आकर) उत्पन्न होते हैं? इस प्रकार इन जीवों के संदर्भ में भी मूल आदि दस उद्देशक (भ. २३/१ में कहे गए) आलुक-वर्ग की भांति अविकल रूप में कहने चाहिए—केवल इतना अंतर है, अवगाहना—(भ. २२/६ में कहे गए) वल्ली-वर्ग की भांति वक्तव्य है, शेष उसी प्रकार।

७. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

पांचवां वर्ग

८. भंते! जंगली उडद, वनमूंग, जीवक, सरसों, छोटी अमलतास, काकोली, क्षीरकाकाली, भांग, नाही कंद, माजूफल, भद्रमुस्ता (मोथा), लाङ्गलकी (कलिकारी), वच, कृष्णा (कृष्ण तुलसी), बिदारी आदि, जलकुंभी, रेणुका (संभालू का बीज), रोहीतक (रोहेडा)—इनके जो जीव मूल-रूप में उपपन्न होते हैं, भंते! वे जीव कहां से (आकर) उत्पन्न होते हैं? इस प्रकार इन जीवों के संदर्भ में भी मूल आदि दस उद्देशक (भ. २३/१ में कहे गए) आलुक-वर्ग की भांति अविकल रूप में कहने चाहिए। इस प्रकार इन पांच वर्गों के पचास उद्देशक कहने चाहिए। इन सबमें देव उत्पन्न नहीं होते हैं। तीन लेश्याएं होती हैं।

९. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

चौबीसवां शतक

पहला उद्देशक

संग्रहणी गाथा

१. *उपपात* २. *परिमाण* ३. *संहनन* ४. *उच्चत्व* ५. *संस्थान* ६. *लेश्या* ७. *दृष्टि* ८. *ज्ञान-अज्ञान* ९. योग १०. उपयोग ११. संज्ञा १२. कषाय १३. इन्द्रिय १४. समुद्घात १५. वेदना १६. वेद १७. आयुः १८. अध्यवसान १९. अनुबन्ध २० कायसंवेध—ये बीस द्वार हैं।

प्रत्येक जीव-पद में जीवों के दण्डक के उद्देशक हैं। एक-एक दण्डक का एक-एक उद्देशक है। इस प्रकार चौबीसवें शतक में चौबीस उद्देशक होते हैं।

नैरयिक-आदि में उपपात-आदि के गमक का पद

नरक-अधिकार

१. राजगृह में यावत् इस प्रकार कहा (**भ.** १/४-१०)— भन्ते! नैरयिक कहां से उपपन्न होते हैं—क्या नैरयिकों से उपपन्न होते हैं? तिर्यग्योनिकों से उपपन्न होते हैं? मनुष्यों से उपपन्न होते हैं? देवों से उपपन्न होते हैं?

गौतम! नैरयिकों से उपपन्न नहीं होते, तिर्यग्योनिकों से उपपन्न होते हैं, मनुष्यों से भी उपपन्न होते हैं, देवों से उपपन्न नहीं होते।

२. (भन्ते!) यदि नैरयिक-जीव तिर्यग्योनिकों से उपपन्न होते हैं, तो क्या—एकेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक जीवों से उपपन्न होते हैं यावत् पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों से उपपन्न होते हैं?

गौतम! एकेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों से उपपन्न नहीं होते, द्वीन्द्रिय-, त्रीन्द्रिय-, चतुरिन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों से उपपन्न नहीं होते, पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों से उपपन्न होते हैं।

प्रथम आलापक : नैरयिक में असंज्ञी-तिर्यंच-पचेन्द्रिय-जीवों का उपपात-आदि

३. (भन्ते!) यदि नैरयिक-जीव पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों से उपपन्न होते हैं तो—क्या संज्ञी-पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों से उपपन्न होते हैं? असंज्ञी-पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों से उपपन्न होते हैं?

गौतम! संज्ञी-पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों से उपपन्न होते हैं, असंज्ञी-पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों से भी उपपन्न होते ह।

४. (भन्ते!) यदि नैरयिक-जीव असंज्ञी-पंचेन्द्रिय-तिर्यग्‌योनिक जीवों से उपपन्न होते हैं तो—क्या जलचर-जीवों से उपपन्न होते हैं? स्थलचर-जीवों से उपपन्न होते हैं? खेचर-जीवों से उपपन्न होते हैं?

गौतम! जलचर-जीवों से उपपन्न होते हैं, स्थलचर-जीवों से भी उपपन्न होते हैं। खेचर-जीवों से भी उपपन्न होते हैं।

५. (भन्ते!) यदि नैरयिक-जीव जलचर-, स्थलचर- और खेचर-जीवों से उपपन्न होते हैं तो—क्या पर्याप्तक-जीवों से उपपन्न होते हैं? अपर्याप्तक-जीवों से उपपन्न होते हैं?

गौतम! पर्याप्तक-जीवों से उपपन्न होते हैं, अपर्याप्तक-जीवों से उपपन्न नहीं होते।

प्रथम नरक में असंज्ञी-तिर्यंच-पंचेन्द्रिय-जीवों का उपपात-आदि

६. भन्ते! पर्याप्त-असंज्ञी-पंचेन्द्रिय-तिर्यग्‌योनिक, जो नैरयिक-जीवों (नरकगति) में उपपन्न होने योग्य है वह कितनी पृथ्वी तक उपपन्न हो सकता है?

गौतम! वह केवल एक रत्नप्रभा पृथ्वी (प्रथम नरक) में उपपन्न हो सकता है।

(पहला गमक : औघिक और औघिक)

१. उपपात-द्वार

७. भन्ते! पर्याप्त-असंज्ञी-पंचेन्द्रिय-तिर्यग्‌योनिक, जो रत्नप्रभा-पृथ्वी में नैरगिकों में उपपन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितने काल की स्थिति वाले नैरयिकों में उपपन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः दस हजार वर्ष की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः एक-पल्योपम-के--असंख्यातवें-भाग की स्थिति वाले नैरयिकों में उपपन्न होता है।

२. परिमाण-द्वार

८. भन्ते! वे पर्याप्त-असंज्ञी-पंचेन्द्रिय-तिर्यग्‌योनिक-जीव रत्नप्रभा में एक समय में कितने उपपन्न होते हैं?

गौतम! जघन्यतः एक, दो अथवा तीन, उत्कृष्टतः संख्यात अथवा असंख्यात (जीव) उपपन्न होते हैं।

३. संहनन-द्वार

९. भन्ते! उन जीवों के शरीर किस संहनन वाले प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! सेवार्त्त-संहनन वाले प्रज्ञप्त हैं।

४. अवगाहना-द्वार

१०. भन्ते! उन जीवों के शरीर की अवगाहना कितनी बड़ी प्रज्ञप्त है?

गौतम! जघन्यतः अंगुल-के-असंख्यातवें-भाग जितनी, उत्कृष्टतः हजार योजन।

५. संस्थान-द्वार

११. भन्ते! उन जीवों के शरीर किस संस्थान वाले प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! हुंड-संस्थान वाले प्रज्ञप्त हैं।

६. लेश्या-द्वार

१२. भन्ते! उन जीवों के कितनी लेश्याएं प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! तीन लेश्याएं प्रज्ञप्त हैं, जैसे—१. कृष्ण-लेश्या २. नील-लेश्या ३. कापोत--लेश्या।

७. दृष्टि-द्वार

१३. भन्ते! वे जीव क्या सम्यग्-दृष्टि होते हैं? मिथ्या-दृष्टि होते हैं? सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि होते हैं?

गौतम! सम्यग्-दृष्टि नहीं होते, मिथ्या-दृष्टि होते हैं, सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि नहीं होते।

८. ज्ञान-अज्ञान-द्वार

१४. भन्ते! वे जीव क्या ज्ञानी होते हैं? अज्ञानी होते हैं?

गौतम! ज्ञानी नहीं होते, अज्ञानी होते हैं, नियमतः दो अज्ञान वाले होते हैं जैसे—मति--अज्ञान, श्रुत-अज्ञान।

९. योग-द्वार

१५. भन्ते! वे जीव क्या मन-योगी होते हैं? वचन-योगी होते हैं? काय-योगी होते हैं?

गौतम! मन-योगी नहीं होते, वचन-योगी भी होते हैं, काय-योगी भी होते हैं।

१०. उपयोग-द्वार

१६. भन्ते! वे जीव क्या साकारोपयुक्त होते हैं? अनाकारोपयुक्त होते हैं?

गौतम! साकारोपयुक्त भी होते हैं, अनाकारोपयुक्त भी होते हैं।

११. संज्ञा-द्वार

१७. भन्ते! उन जीवों के कितनी संज्ञाएं प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! चार संज्ञाएं प्रज्ञप्त हैं, जैसे—आहार-संज्ञा, भय-संज्ञा, मैथुन-संज्ञा और परिग्रह-संज्ञा।

१२. कषाय-द्वार

१८. भन्ते! उन जीवों के कितने कषाय प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! उन जीवों के चार कषाय प्रज्ञप्त हैं, जैसे—क्रोध-कषाय, मान-कषाय, माया-कषाय और लोभ-कषाय।

१३. इन्द्रिय-द्वार

१९. भन्ते! उन जीवों के कितनी इन्द्रियां प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! पांच इन्द्रियां प्रज्ञप्त हैं, जैसे—श्रोत्रेन्द्रिय यावत् स्पर्शनेन्द्रिय। (भ. २/७७)

१४. समुद्घात-द्वार

२०. भन्ते! उन जीवों के कितने समुद्घात प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! तीन समुद्घात प्रज्ञप्त हैं, जैसे—वेदना-समुद्घात, कषाय-समुद्घात और मारणान्तिक-समद्घात।

१५. वेदक-द्वार

२१. भन्ते! वे जीव क्या सात का वेदन करने वाले होते हैं? असात का वेदन करने वाले होते हैं?

गौतम! सात का वेदन करने वाले भी होते हैं, असात का वेदन करने वाले भी होते हैं।

१६. वेद-द्वार

२२. भन्ते! वे जीव क्या स्त्री-वेद वाले होते हैं? पुरुष-वेद वाले होते हैं? नपुंसक-वेद वाले होते हैं?

गौतम! स्त्री-वेद वाले नहीं होते, पुरुष-वेद वाले नहीं होते, नपुंसक-वेद वाले होते हैं।

१७. स्थिति-द्वार

२३. भन्ते! उन जीवों की कितनी काल की स्थिति प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्टतः कोटि-पूर्व।

१८. अध्यवसाय-द्वार

२४. भन्ते! उन जीवों के कितने अध्यवसान प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! असंख्येय अध्यवसान प्रज्ञप्त हैं।

२५. भन्ते! वे जीव क्या प्रशस्त अध्यवसान वाले होते हैं? अप्रशस्त अध्यवसान वाले होते हैं?

गौतम! प्रशस्त अध्यवसान वाले भी होते हैं, अप्रशस्त अध्यवसान वाले भी होते हैं।

१९. अनुबन्ध-द्वार

२६. भन्ते! वह (पर्याप्तक-असंज्ञी-पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव) पर्याप्तक-असंज्ञी-पंचेन्द्रिय--तिर्यग्योनिक-रूप में काल की दृष्टि से कितने समय तक रहता है?

गौतम! जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्टतः कोटि-पूर्व। (यह अनुबंध—विवक्षित पर्याय का अव्यवच्छिन्न रूप में अवस्थान है।)

२०. कायसंवेध-द्वार

२७. भन्ते! वह पर्याप्तक-असंज्ञी-पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव रत्नप्रभा-पृथ्वी में नैरयिक होकर पुनः पर्याप्तक असंज्ञी-पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक जीव के रूप में उत्पन्न होता है—वह कितने काल तक रहता है? कितने काल तक वह गति-आगति करता है?

गौतम! भव की अपेक्षा वह दो भव ग्रहण करता है—एक भव असंज्ञी-पंचेन्द्रिय-तिर्यञ्च का और दूसरा भव नारक का। काल की अपेक्षा जघन्यतः अंतर्मुहूर्त-अधिक-दस-हजार--वर्ष, उत्कृष्टतः कोटि-पूर्व-अधिक-पल्योपम-का-असंख्यातवां-भाग—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(दूसरा गमक : औघिक और जघन्य)

२८. भन्ते! पर्याप्तक-असंज्ञी-पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव जो रत्नप्रभा-पृथ्वी के जघन्य काल-स्थिति वाले नैरयिकों में उपपन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितनी काल-स्थिति वाले नैरयिकों में उपपन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः दस हजार वर्ष की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः भी दस हजार वर्ष की स्थिति वाले नैरयिक के रूप में उपपन्न होता है।

२९. भन्ते! वे जीव एक समय में कितने उपपन्न होते हैं?

इस प्रकार वही वक्तव्यता निरवशेष कथनीय है यावत् अनुबन्ध तक। (भ. २४/८-२६)

३०. भन्ते! वह पर्याप्तक-असंज्ञी-पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव जघन्य काल-स्थिति वाली रत्नप्रभा-पृथ्वी में नैरयिक होकर, पुनः पर्याप्तक-असंज्ञी-पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव के रूप में उपपन्न होता है—वह कितने काल तक रहता है? कितने काल तक वह गति-आगति करता है?

गौतम! भव की अपेक्षा वह दो भव ग्रहण करता है—एक भव असंज्ञी-पंचेन्द्रिय-तिर्यञ्च का और दूसरा भव नारक का। काल की अपेक्षा जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त-अधिक-दस-हजार--वर्ष, उत्कृष्टतः दस-हजार-वर्ष-अधिक-एक-कोटि-पूर्व—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(तीसरा गमक : औघिक और उत्कृष्ट)

३१. भन्ते! पर्याप्तक-असंज्ञी-पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव, जो उत्कृष्ट काल की स्थिति वाले रत्नप्रभा-पृथ्वी के नैरयिकों में उपपन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितनी काल-स्थिति वाले नैरयिकों में उपपन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः पल्योपम-के-असंख्यातवें-भाग की स्थिति वाले उत्कृष्टतः भी पल्योपम-के-असंख्यातवें-भाग की स्थिति वाले नैरयिकों में उपपन्न होता है।

३२. भन्ते! वे जीव एक समय में कितने उपपन्न होते हैं? शेष पूर्ववत् वक्तव्य है यावत् (भ. २४/८-२६) अनुबन्ध तक।

३३. भन्ते! वह पर्याप्तक-असंज्ञी-पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव उत्कृष्ट काल स्थिति वाली रत्नप्रभा-पृथ्वी में नैरयिक होकर पुनः पर्याप्तक-असंज्ञी-पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक के रूप में उत्पन्न होता है—वह कितने काल तक रहता है? कितने काल तक वह गति-आगति करता है?

गौतम! भव की अपेक्षा दो भव ग्रहण करता है—एक भव असंज्ञी-पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक का और दूसरा भव नारक का। काल की अपेक्षा जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त-अधिक-पल्योपम--का-असंख्यातवां-भाग, उत्कृष्टतः कोटि-पूर्व-अधिक-पल्योपम-का-असंख्यातवां--भाग—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक वह गति-आगति करता है।

(चौथा गमक : जघन्य और औघिक)

३४. भन्ते! जो पर्याप्तक-असंज्ञी-पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव जघन्य काल की स्थिति वाले

रत्नप्रभा-पृथ्वी में नैरयिकों में उपपन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितनी स्थिति वाले नैरयिकों में उपपन्न होगा?

गौतम! जघन्यतः दस हजार वर्ष स्थिति वाले नैरयिकों में, उत्कृष्टतः पल्योपम-के--असंख्यातवें-भाग की स्थिति वाले नैरयिकों में उपपन्न होता है।

३५. भन्ते! वे जीव एक समय में कितने उपपन्न होते हैं?

शेष पूर्ववत्। इतना विशेष है—ये तीन नानात्व हैं—आयुष्य, अध्यवसान और अनुबन्ध। जघन्यतः स्थिति अन्तर्मुहूर्त्त, उत्कृष्टतः भी अन्तर्मुहूर्त्त।

३६. भन्ते! उन जीवों के कितने अध्यवसान प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! असंख्यात अध्यवसान प्रज्ञप्त हैं।

३७. भन्ते! वे जीव क्या प्रशस्त अध्यवसान वाले होते हैं? अप्रशस्त अध्यवसान वाले होते हैं?

गौतम! प्रशस्त अध्यवसान वाले नहीं होते, अप्रशस्त-अध्यवसान वाले होते हैं। उनका अनुबंध अंतर्मुहूर्त्त का होता है, शेष पूर्ववत्।

३८. भन्ते! जघन्य काल की स्थिति वाला पर्याप्तक-असंज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव रत्नप्रभा-पृथ्वी में यावत् गति-आगति करता है?

गौतम! भव की अपेक्षा वह दो भव ग्रहण करता है, काल की अपेक्षा वह जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-दस-हजार-वर्ष, उत्कृष्टतः अंतर्मुहूर्त्त-अधिक-पल्योपम-का--असंख्यातवां-भाग—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(पांचवां गमक : जघन्य और जघन्य)

३९. भन्ते! जघन्य काल की स्थिति वाला पर्याप्तक-असंज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव जघन्य काल की स्थिति वाली रत्नप्रभा-पृथ्वी (प्रथम नरक) में नैरयिक के रूप में उपपन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितने काल की स्थिति वाले नैरयिक के रूप में उपपन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः दस हजार वर्ष की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः भी दस हजार वर्ष की स्थिति वाले नैरयिक के रूप में उपपन्न होता है।

४०. भन्ते! वे जीव एक समय में कितने उपपन्न होते हैं? शेष उसी प्रकार वक्तव्य है, उनके तीन नानात्व हैं—आयु, अध्यवसाय, अनुबंध यावत्—(भ. २४।८-२६,३५-३७)

४१. भन्ते! वह जघन्य काल की स्थिति वाला पर्याप्तक-असंज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक--जीव जघन्य-काल की स्थिति वाली रत्नप्रभा-पृथ्वी में नैरयिक होकर पुनः पर्याप्तक--असंज्ञी-पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक के रूप में उपपन्न होता है, वह कितने काल तक रहता है? कितने काल तक वह गति-आगति करता है?

गौतम! भव की अपेक्षा दो भव ग्रहण करता है, काल की अपेक्षा जघन्यतः अंतर्मुहूर्त्त--अधिक-दस-हजार-वर्ष, उत्कृष्टतः भी अंतर्मुहूर्त्त-अधिक-दस-हजार-वर्ष—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(छट्ठा गमक : जघन्य और उत्कृष्ट)

४२. भन्ते! जघन्य काल की स्थिति वाला पर्याप्तक-असंज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव उत्कृष्ट काल की स्थिति वाली रत्नप्रभा-पृथ्वी में नैरयिक के रूप में उपपन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितने काल की स्थिति वाले नैरयिक के रूप में उपपन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः पल्योपम-के-असंख्यातवें-भाग की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः भी पल्योपम--के-असंख्यातवें-भाग की स्थिति वाले नैरयिक के रूप में उपपन्न होता है।

४३. भन्ते! वे जीव एक समय में कितने उपपन्न होते हैं? शेष उसी प्रकार वक्तव्य हैं, ये तीन ही नानात्व हैं—आयुष्य, अध्यवसाय और अनुबन्ध। यावत्—(भ. २४/८-२६,३५--३७)

४४. भन्ते! वह जघन्य काल की स्थिति वाला पर्याप्तक-असंज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक उत्कृष्ट काल की स्थिति वाली रत्नप्रभा में यावत् (भ. २४/२७) गति-आगति करता है?

गौतम! भव की अपेक्षा दो भव ग्रहण करता है, काल की अपेक्षा जघन्यतः अंतर्मुहूर्त--अधिक-पल्योपम-का-असंख्यातवां-भाग, उत्कृष्टतः भी अंतर्मुहूर्त-अधिक-पल्योपम--का-असंख्यातवां-भाग—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(सातवां गमक : उत्कृष्ट और औधिक)

४५. भन्ते! उत्कृष्ट काल की स्थिति वाला पर्याप्तक-असंज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव रत्नप्रभा-पृथ्वी में नैरयिक के रूप में उपपन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितने काल की स्थिति वाले नैरयिक के रूप में उपपन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः दस-हजार-वर्ष की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः पल्योपम-के-असंख्यातवें--भाग की स्थिति वाले नैरयिक के रूप में उपपन्न होता है।

४६. भन्ते! वे जीव एक समय में कितने उपपन्न होते हैं? शेष जैसा औघिक गमक में बतलाया गया है वैसा ही अनुगमन करना चाहिए, केवल इतना विशेष है—ये दो नानात्व हैं—स्थिति जघन्यतः कोटि-पूर्व, उत्कृष्टतः भी कोटि-पूर्व। इसी प्रकार अनुबन्ध भी वक्तव्य है। शेष वक्तव्यता पूर्ववत्।

४७. भन्ते! वह उत्कृष्ट काल की स्थिति वाला पर्याप्तक-असंज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक--जीव रत्नप्रभा-पृथ्वी में यावत् गति-आगति करता है?

गौतम! भव की अपेक्षा दो भव ग्रहण करता है, काल की अपेक्षा जघन्यतः दस-हजार--वर्ष-अधिक-कोटि-पूर्व उत्कृष्टतः कोटि-पूर्व-अधिक-पल्योपम-का-असंख्यातवां-भाग—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(आठवां गमक : उत्कृष्ट और जघन्य)

४८. भन्ते! उत्कृष्ट काल की स्थिति वाला पर्याप्तक-असंज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्-योनिक-जीव जघन्य काल की स्थिति वाली रत्नप्रभा-पृथ्वी में नैरयिक के रूप में उपपन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितने काल की स्थिति वाले नैरयिक के रूप में उपपन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः दस-हजार-वर्ष की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः भी दस-हजार- वर्ष की स्थिति वाले नैरयिक के रूप में उपपन्न होता है।

४९. भन्ते! वे जीव एक समय में कितने उपपन्न होते हैं? शेष उसी प्रकार वक्तव्य है, जैसे सातवां गमक यावत्-(**भ.** २४/४६)।

५०. भन्ते! वह उत्कृष्ट काल की स्थिति वाला पर्याप्तक-असंज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव जघन्य काल की स्थिति वाली रत्नप्रभा-पृथ्वी में यावत् (भ. २४/२७) गति-आगति करता है?

गौतम! भव की अपेक्षा दो भव ग्रहण करता है, काल की अपेक्षा जघन्यतः दस-हजार-वर्ष-अधिक-कोटि-पूर्व, उत्कृष्टतः भी दस-हजार-वर्ष-अधिक-कोटि-पूर्व—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(नवां गमक : उत्कृष्ट और उत्कृष्ट)

५१. भन्ते! उत्कृष्ट काल की स्थिति वाला पर्याप्तक-असंज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव उत्कृष्ट काल की स्थिति वाली रत्नप्रभा-पृथ्वी में नैरयिक के रूप में उपपन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितने काल की स्थिति वाले नैरयिक के रूप में उपपन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः पल्योपम-के-असंख्यातवें-भाग की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः भी पल्योपम-के-असंख्यातवें-भाग की स्थिति वाले नैरयिक के रूप में उपपन्न होता है।

५२. भन्ते! वे जीव एक समय में कितने उपपन्न होते हैं? शेष उसी प्रकार वक्तव्य है, जैसे सातवां गमक यावत् (**भ.** २४/४६)।

५३. भन्ते! उत्कृष्ट काल की स्थिति वाला पर्याप्तक-असंज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव उत्कृष्ट काल की स्थिति वाली रत्नप्रभा-पृथ्वी में यावत् (भ. २४/२७) गति-आगति करता है?

गौतम! भव की अपेक्षा से दो भव ग्रहण करता है, काल की अपेक्षा से जघन्यतः कोटि-पूर्व-अधिक-पल्योपम-का-असंख्यातवां-भाग, उत्कृष्टतः भी कोटि-पूर्व-अधिक-पल्योपम-का-असंख्यातवां-भाग—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

इस प्रकार ये औधिक के तीन गमक, जघन्य काल की स्थिति वालों के तीन गमक, उत्कृष्ट काल की स्थित वालों के तीन गमक—ये सब नौ गमक होते हैं।

दूसरा आलापक : नैरयिक में संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-तिर्यंच-पंचेन्द्रिय-जीवों का उपपात-आदि

५४. यदि संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों से आकर उपपन्न होते हैं तो क्या—(वे जीव) संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों से उपपन्न होते हैं? अथवा असंख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों से उपपन्न होते हैं?

गौतम! संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों से उपपन्न होते हैं, असंख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों से उपपन्न नहीं होते।

५५. यदि संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों से उपपन्न होते हैं—तो क्या जलचर-जीवों से उपपन्न होते हैं.... पृच्छा।

गौतम! जलचर-जीवों से उपपन्न होते हैं, जैसे असंज्ञी यावत् पर्याप्तक-जीवों से उपपन्न होते हैं (भ. २४/४,५), अपर्याप्तक-जीवों से उपपन्न नहीं होते।

५६. भन्ते! संख्यात वर्ष की आयु वाला पर्याप्त-संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव नैरयिक के रूप में उपपन्न होने योग्य है, वह जीव कितनी पृथ्वियों में उपपन्न होता है?

गौतम! वह जीव सातों पृथ्वियों (नरकों) में उपपन्न होता है, जैसे—रत्नप्रभा में यावत् अधःसप्तमी में। (भ. २/७६)

प्रथम नरक में संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-तिर्यंच-पंचेन्द्रिय-जीवों का उपपात-आदि (पहला गमक : औघिक और औघिक)

५७. भन्ते! संख्यात वर्ष की आयु वाला पर्याप्त-संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव जो रत्नप्रभा-पृथ्वी में नैरयिक के रूप में उपपन्न होने योग्य है, वह जीव कितने काल की स्थिति वाले नैरयिक के रूप में उपपन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः दस-हजार-वर्ष की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः एक सागरोपम की स्थिति वाले नैरयिक के रूप में उपपन्न होता है।

५८. भन्ते! वे जीव एक समय में कितने उपपन्न होते हैं?

असंज्ञी की भांति वक्तव्यता। (भ. २४/८)।

५९. भन्ते! उन जीवों के शरीर किस संहनन वाले प्रज्ञप्त है?

गौतम! छह प्रकार के संहनन वाले प्रज्ञप्त हैं, जैसे—वज्र-ऋषभ-नाराच-संहनन वाला, ऋषभ-नाराच-संहनन वाला (ठाणं, ६/३०) यावत् सेवार्त्त-संहनन वाला। शरीर की अवगाहना असंज्ञी जीवों की भांति, जघन्यतः अंगुल-का-असंख्यातवां-भाग, उत्कृष्टतः एक-हजार-योजन।

६०. भन्ते! उन जीवों का शरीर किस संस्थान वाला प्रज्ञप्त है?

गौतम! छह प्रकार के संस्थान वाला प्रज्ञप्त है, जैसे—समचतुरस्र-संस्थान वाला, न्यग्रोध--संस्थान वाला यावत् (भ. १४/८१) हुण्डक-संस्थान वाला।

६१. भन्ते! उन जीवों के कितनी लेश्याएं प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! छह लेश्याएं प्रज्ञप्त हैं,जैसे—कृष्ण-लेश्या यावत् शुक्ल-लेश्या। उनमें दृष्टि भी तीनों प्रकार की होती है। उनमें तीन ज्ञान अथवा अज्ञान की भजना—विकल्प है। योग भी तीनों प्रकार का होता है। शेष असंज्ञी-जीवों की भांति वक्तव्य है (भ. २४/१६-२६) यावत् अनुबन्ध, इतना विशेष है—उनमें प्रथम पांच समुद्घात होते हैं। वेद तीनों प्रकार के होते हैं। शेष-अवशेष पूर्ववत्। यावत्—

६२. भन्ते! वह संख्यात वर्ष की आयु वाला पर्याप्त-संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव रत्नप्रभा-पृथ्वी में यावत् गति-आगति करता है?

गौतम! भव की अपेक्षा जघन्यतः दो भव-ग्रहण, उत्कृष्टतः आठ भव-ग्रहण करता है। काल की अपेक्षा जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-दस-हजार-वर्ष, उत्कृष्टतः चार-कोटि-पूर्व--अधिक-चार-सागरोपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(दूसरा गमक : औधिक और जघन्य)

६३. भन्ते! वह संख्यात वर्ष की आयु वाला पर्याप्त-संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव जघन्य काल की स्थिति वाली रत्नप्रभा पृथ्वी में नैरयिक के रूप में उपपन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितने काल की स्थिति वाले नैरयिक के रूप में उपपन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः दस-हजार-वर्ष की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः भी दस-हजार-वर्ष की स्थिति वाले नैरयिक के रूप में उपपन्न होता है।

६४. भन्ते! वे जीव एक समय में कितने उपपन्न होते हैं? इसी प्रकार वही प्रथम गमक अविकल रूप से वक्तव्य है यावत् (भ. २४/५८-६२)—काल की अपेक्षा जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-दस-हजार-वर्ष, उत्कृष्टतः चालीस-हजार-वर्ष-अधिक-चार-कोटि--पूर्व—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(तीसरा गमक : औधिक और उत्कृष्ट)

६५. वही संख्यात वर्ष की आयु वाला पर्याप्त-संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव उत्कृष्ट काल की स्थिति वाली रत्नप्रभा-पृथ्वी में नैरयिक के रूप में उपपन्न होता है, वह जघन्यतः एक सागरोपम की स्थिति में, उत्कृष्टतः भी एक सागरोपम की स्थिति में उपपन्न होता है। अवशेष परिमाण आदि से भवादेश-पर्यन्त वही प्रथम गमक ज्ञातव्य है। यावत् काल की अपेक्षा जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-एक-सागरोपम, उत्कृष्टतः चार-कोटि--पूर्व-अधिक-चार-सागरोपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(चौथा गमक : जघन्य और औघिक)

६६. भन्ते! जघन्य काल की स्थिति वाला संख्यात वर्ष की आयु वाला पर्याप्त-संज्ञी--पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव जो रत्नप्रभा-पृथ्वी में नैरयिक के रूप में उपपन्न होने योग्य है, भन्ते! वह जीव कितने काल की स्थिति वाले नैरयिक के रूप में उपपन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः दस-हजार-वर्ष की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः एक सागरोपम की स्थिति वाले नैरयिक के रूप में उपपन्न होता है।

६७. भन्ते! वह जीव एक समय में कितने उपपन्न होते हैं? शेष वही गमक वक्तव्य है, इतना विशेष है—ये आठ नानात्व हैं—१. शरीर की अवगाहना— जघन्यतः अंगुल-का-असंख्यातवां--भाग, उत्कृष्टतः पृथक्त्व (दो से नौ)-धनुष्य। २. लेश्या—प्रथम तीन लेश्या ३. सम्यग्--दृष्टि नहीं है, मिथ्या-दृष्टि है, सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि नहीं है। ४. ज्ञानी नहीं है, नियमतः दो अज्ञान। ५. समुद्‌घात—प्रथम तीन समुद्‌घात ६. आयु, ७. अध्यवसान, ८. अनुबन्ध—ये तीनों असंज्ञी-जीवों की भांति वक्तव्य हैं। शेष जैसा प्रथम गमक की भांति वक्तव्य है यावत् काल की अपेक्षा जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-दस-हजार-वर्ष, उत्कृष्टतः चार-

-अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-चार-सागरोपम—इतने काल तक रहते हैं, इतने काल तक गति-आगति करते हैं।

(पांचवां गमक : जघन्य और जघन्य)

६८. वही जघन्य काल की स्थिति वाला संख्यात वर्ष की आयु वाला पर्याप्त-संज्ञी--पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव जघन्य काल की स्थिति वाले नैरयिक के रूप में उपपन्न होता है—जघन्यतः दस-हजार-वर्ष की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः भी दस-हजार-वर्ष की स्थिति वाले नैरयिक के रूप में उपपन्न होता है।

६९. भन्ते! वे जीव एक समय में कितने उपपन्न होते हैं? इसी प्रकार वही चतुर्थ गमक अविकल रूप से वक्तव्य है यावत् (भ. २४/६७) काल की अपेक्षा जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त--अधिक-दस-हजार-वर्ष, उत्कृष्टतः चार-अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-चालीस-हजार-वर्ष—इतने काल तक रहते हैं, इतने काल तक गति-आगति करते हैं।

(छट्ठा गमक : जघन्य और उत्कृष्ट)

७०. वही जघन्य काल की स्थिति वाला संख्यात वर्ष की आयु वाला पर्याप्त-संज्ञी--पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव उत्कृष्ट काल की स्थिति वाले नैरयिक के रूप में उपपन्न जघन्यतः एक सागरोपम की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः भी एक सागरोपम की स्थिति वाले नैरयिक के रूप में उपपन्न होता है।

७१. भन्ते! वे जीव एक समय में कितने उपपन्न होते हैं? इसी प्रकार वही चतुर्थ गमक निरवशेष वक्तव्य है यावत् (भ. २४/६७) काल की अपेक्षा जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-एक--सागरोपम, उत्कृष्टतः चार-अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-चार-सागरोपम—इतने काल तक रहते हैं, इतने काल तक गति-आगति करते हैं।

(सातवां गमक : उत्कृष्ट और औधिक)

७२. भन्ते! उत्कृष्ट काल की स्थिति वाला संख्यात वर्ष की आयु वाला पर्याप्त-संज्ञी--पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव जो रत्नप्रभा-पृथ्वी में नैरयिक के रूप में उपपन्न होने योग्य है, भन्ते! वह जीव कितने काल की स्थिति वाले नैरयिक के रूप में उपपन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः दस हजार वर्ष की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः एक सागरोपम की स्थिति वाले नैरयिक के रूप में उपपन्न होता है।

७३. भन्ते! वे जीव एक समय में कितने उपपन्न होते हैं? शेष परिमाण से लेकर भवादेश-पर्यवसान—(भव की अपेक्षा तक) वही प्रथम गमक ज्ञातव्य है (भ. २४/५८-६२), इतना *विशेष है—स्थिति—जघन्यतः कोटि-पूर्व, उत्कृष्टतः भी कोटि-पूर्व। इसी प्रकार अनुबन्ध भी* वक्तव्य है, शेष पूर्ववत्। काल की अपेक्षा जघन्यतः दस-हजार-वर्ष-अधिक-कोटि-पूर्व, उत्कृष्टतः चार-कोटि-पूर्व-अधिक-चार-सागरोपम—इतने काल तक रहते हैं, इतने काल तक गति-आगति करते हैं।

(आठवां गमक : उत्कृष्ट और जघन्य)

७४. वही जघन्य काल की स्थिति वाला संख्यात वर्ष की आयु वाला पर्याप्त-संज्ञी--पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव जघन्य काल की स्थिति वाले नैरयिक के रूप में उपपन्न होता है—जघन्यतः दस-हजार-वर्ष की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः भी दस-हजार-वर्ष की स्थिति वाले नैरयिक के रूप में उपपन्न होता है।

७५. भन्ते! वे जीव एक समय में कितने उपपन्न होते हैं? वही सप्तम गमक अविकल रूप से वक्तव्य है यावत् भवादेश—भव की अपेक्षा तक। काल की अपेक्षा जघन्यतः दस-हजार--वर्ष-अधिक-कोटि-पूर्व, उत्कृष्टतः चालीस-हजार-वर्ष-अधिक-चार-कोटि-पूर्व—इतने काल तक रहते हैं, इतने काल तक गति-आगति करते हैं।

(नवां गमक : उत्कृष्ट और उत्कृष्ट)

७६. भन्ते! उत्कृष्ट काल की स्थिति वाला संख्यात वर्ष की आयु वाला पर्याप्त-संज्ञी--पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव जो उत्कृष्ट काल की स्थिति वाली रत्नप्रभा-पृथ्वी में नैरयिक के रूप में उपपन्न होने योग्य है, भन्ते! वह जीव कितने काल की स्थिति वाले नैरयिक के रूप में उपपन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः एक सागरोपम की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः भी एक सागरोपम की स्थिति वाले नैरयिक के रूप में उपपन्न होता है।

७७. भन्ते! वे जीव एक समय में कितने उपपन्न होते हैं? वही सप्तम गमक निरवशेष वक्तव्य है यावत् भवादेश—भव की अपेक्षा तक। काल की अपेक्षा जघयतः कोटि-पूर्व-अधिक--एक-सागरोपम, उत्कृष्टतः चार-कोटि-पूर्व-अधिक-चार-सागरोपम—इतने काल तक रहते हैं, इतने काल तक गति-आगति करते हैं।

इस प्रकार ये नौ गमक हैं। नव ही गमकों में उत्क्षेप-गमक की प्रस्तावना और निक्षेप--गमक का निगमन पर्याप्तक-असंज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों की भांति वक्तव्य है।

तीसरा आलापक : दूसरी नरक में संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-तिर्यंच-पंचेन्द्रिय--जीवों का उपपात आदि

(पहला गमक : औघिक और औघिक)

७८. भन्ते! संख्यात वर्ष की आयु वाला पर्याप्त-संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक जीव—जो शर्कराप्रभा-पृथ्वी में नैरयिक के रूप में उपपन्न होने योग्य है, भंते! वह कितने काल की स्थिति वाले नैरयिक के रूप में उपपन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः एक सागरोपम की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः तीन सागरोपम की स्थिति वाले नैरयिक के रूप में उपपन्न होता है।

७९. भन्ते! वे जीव एक समय में कितने उपपन्न होते हैं? इस प्रकार जैसे रत्नप्रभा में उपपद्यमान जीव के परिमाण, संहनन आदि की प्राप्ति बतलाई गई है, वही निरवशेष वक्तव्य है यावत् भवादेश—भव की अपेक्षा तक। काल की अपेक्षा जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-एक-

-सागरोपम, उत्कृष्टतः चार-कोटि-पूर्व-अधिक-बारह-सागरोपम—इतने काल तक रहते हैं, इतने काल तक गति-आगति करते हैं।

(दूसरे से नवें गमक तक)

इस प्रकार रत्नप्रभा-पृथ्वी के गमक सदृश ये नौ गमक वक्तव्य हैं, इतना विशेष है—सभी गमकों में भी नैरयिक की स्थिति और संवेध में सागरोपम वक्तव्य है।

चौथा आलापक : तीसरी से छट्ठी नरक में संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-तिर्यंच-पंचेन्द्रिय-जीवों का उपपात-आदि

इस प्रकार यावत् छट्ठी (तमा-) पृथ्वी तक। इतना विशेष है—जिस पृथ्वी में नैरयिक की जघन्यतः और उत्कृष्टतः जितनी स्थिति है, वह उसी क्रम से (कायसंवेध) चार गुणा करणीय है। बालुकाप्रभा-पृथ्वी में (उत्कृष्ट स्थिति सात सागरोपम से) चतुर्गुण करने पर अट्ठाईस सागरोपम होती है। पंकप्रभा (पृथ्वी) में (दस सागरोपम से चतुर्गुण करने पर) चालीस सागरोपम, धूमप्रभा (पृथ्वी) में (सतरह सागरोपम से चतुर्गुण करने पर) अड़सठ सागरोपम, तमप्रभा (पृथ्वी) में (बाईस सागरोपम से चतुर्गुण करने पर) अट्ठासी सागरोपम।

संहनन—बालुकाप्रभा-पृथ्वी में उपपन्न होने वाले जीव पांच संहनन वाले होते हैं, जैसे—वज्र-ऋषभ-नाराच-संहनन वाले यावत् कीलिका-संहनन वाले। पंकप्रभा-पृथ्वी में उपपन्न होने वाले जीव चार संहनन वाले, धूमप्रभा-पृथ्वी में उपपन्न होने वाले जीव तीन संहनन वाले, तमा-पृथ्वी में उपपन्न होने वाले जीव दो संहनन वाले होते हैं, जैसे—वज्र-ऋषभ-नाराच-संहनन वाले, ऋषभ-नाराच-संहनन वाले। शेष पूर्ववत्।

पांचवां आलापक : सातवीं नरक में संख्यात वर्ष की आयुवाले संज्ञी-तिर्यंच-पंचेन्द्रिय-जीवों का उपपात-आदि

(पहला गमक : औघिक और औघिक)

८०. भन्ते! संख्यात वर्ष की आयु वाला पर्याप्त-संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव, जो अधःसप्तमी-पृथ्वी में नैरयिक के रूप में उपपन्न होने योग्य है, वह जीव कितने काल की स्थिति वाले जीव के रूप में उपपन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः बाईस सागरोपम की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः तैंतीस सागरोपम की स्थिति वाले नैरयिक के रूप में उपपन्न होता है।

८१. भन्ते! वे जीव एक समय में कितने उपपन्न होते हैं? इस प्रकार रत्नप्रभा-पृथ्वी की भांति नौ गमक वक्तव्य हैं, प्राप्ति भी वही वक्तव्य है, इतना विशेष है—वे वज्र-ऋषभ-नाराच-संहनन वाले होते हैं। स्त्री-वेदक सातवीं नरक में उपपन्न नहीं होते, शेष पूर्ववत् यावत् अनुबन्ध तक (भ. २४/७९)।

कायसंवेध—भव की अपेक्षा जघन्यतः तीन भव-ग्रहण, उत्कृष्टतः सात भव-ग्रहण। काल की अपेक्षा जघन्यतः दो-अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-बाईस-सागरोपम, उत्कृष्टतः चार-कोटि-पूर्व-अधिक-छासट्ठ-सागरोपम—इतने काल तक रहते हैं, इतने काल तक गति-आगति करते हैं।

(दूसरा गमक : औघिक और जघन्य)

८२. वही (संख्यात वर्ष की आयु वाला पर्याप्त-संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव) जघन्य काल की स्थिति (बाईस सागरोपम) वाली अधःसप्तमी-पृथ्वी में नैरयिक के रूप में उपपन्न होता है, वही वक्तव्यता यावत् भवादेश तक। कालादेश—जघन्यतः काल की अपेक्षा वही वक्तव्य है यावत् चार कोटि-पूर्व-अधिक-छासठ-सागरोपम—इतने काल तक रहते हैं, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(तीसरा गमक : औघिक और उत्कृष्ट)

८३. वही (संख्यात वर्ष की आयु वाला पर्याप्त-संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव) उत्कृष्ट काल की स्थिति (तेतीस सागरोपम) वाली अधःसप्तमी-पृथ्वी में नैरयिक के रूप में उपपन्न होता है, वही प्राप्ति वक्तव्य है यावत् अनुबन्ध तक (भ. २४/८१)। भव की अपेक्षा जघन्यतः तीन भव-ग्रहण, उत्कृष्टतः पांच भव-ग्रहण। काल की अपेक्षा जघन्यतः दो-अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-तैतीस-सागरोपम, उत्कृष्टतः तीन-कोटि-पूर्व-अधिक-छासठ-सागरोपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(चौथा गमक : जघन्य और औघिक)

८४. वही अपनी जघन्य काल-स्थिति में उत्पन्न संख्यात वर्ष की आयु वाला पर्याप्त-संज्ञी--पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव नैरयिकों में उपपन्न होता है। वही जघन्य काल की स्थिति वाली रत्नप्रभा-पृथ्वी में उपपन्न होने वाले नैरयिक की (भ. २४/६७) वक्तव्यता यावत् भवादेश तक, इतना विशेष है—प्रथम संहनन— केवल वज्र-ऋषभ-नाराच-संहनन वाला ही होता है, स्त्री-वेदक उपपन्न नहीं होता। भव की अपेक्षा जघन्यतः तीन भव-ग्रहण, उत्कृष्टतः सात भव-ग्रहण। काल की अपेक्षा जघन्यतः दो-अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-बाईस-सागरोपम, उत्कृष्टतः चार-अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-छासट्ठ-सागरोपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(पांचवां गमक : जघन्य और जघन्य)

८५. वही (संख्यात वर्ष की आयु वाला पर्याप्त-संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव) जघन्य काल की स्थिति (बाईस सागरोपम) वाली अधःसप्तमी-पृथ्वी में जघन्य काल स्थिति वाले नैरयिक के रूप में उपपन्न होता है, वही चतुर्थ गमक (भ. २४/६७) अविकल रूप से वक्तव्य है यावत् कालादेश तक।

(छट्ठा गमक : जघन्य और उत्कृष्ट)

८६. वही (संख्यात वर्ष की आयुवाला पर्याप्त-संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव) उत्कृष्ट काल (तेतीस सागरोपम) स्थिति वाली अधःसप्तमी-पृथ्वी वाले नैरयिक के रूप में उपपन्न होता है, वही प्राप्ति वक्तव्य है यावत् अनुबन्ध तक (भ. २४/८१)। भव की अपेक्षा जघन्यतः तीन भव-ग्रहण, उत्कृष्टतः पांच भव-ग्रहण। काल की अपेक्षा जघन्यतः दो-अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-तेतीस-सागरोपम, उत्कृष्टतः तीन-अंतर्मुहूर्त्त-अधिक-छासट्ठ-सागरोपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(सातवां गमक : उत्कृष्ट और औघिक)

८७. वही अपनी उत्कृष्ट काल-स्थिति में उत्पन्न संख्यात वर्ष की आयु वाला पर्याप्त-संज्ञी--पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव नैरयिकों में उपपन्न होता है। वह अधः-सप्तमी-पृथ्वी में जघन्यतः बाईस सागरोपम की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः तेतीस सागरोपम की स्थिति वाले नैरयिक के रूप में उपपन्न होता है।

८८. भन्ते! वे जीव एक समय में कितने उपपन्न होते हैं? शेष वही सप्तम-पृथ्वी के प्रथम गमक की वक्तव्यता यावत् भवादेश तक, इतना विशेष है—स्थिति और अनुबन्ध जघन्यतः कोटि-पूर्व उत्कृष्टतः भी कोटि-पूर्व, शेष पूर्ववत्। काल की अपेक्षा जघन्यतः दो-कोटि--पूर्व-अधिक-बाईस-सागरोपम, उत्कृष्टतः चार-कोटि-पूर्व-अधिक-छासट्ठ-सागरोपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(आठवां गमक : औघिक और जघन्य)

८९. वही (संख्यात वर्ष की आयु वाला पर्याप्त-संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव) जघन्य काल की स्थिति वाली अधःसप्तमी-पृथ्वी में नैरयिक के रूप में उपपन्न होता है, वही प्राप्ति तथा संवेध भी वही सातवें गमक के सदृश वक्तव्य है।

(नवां गमक : उत्कृष्ट और उत्कृष्ट)

९०. वही (संख्यात वर्ष की आयु वाला पर्याप्त-संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव) उत्कृष्ट काल की स्थिति वाली अधःसप्तमी-पृथ्वी में नैरयिक के रूप में उपपन्न होता है, वही प्राप्ति वक्तव्य है यावत् अनुबन्ध तक (**भ.** २४/८७,८८)। भव की अपेक्षा जघन्यतः तीन भव--ग्रहण, उत्कृष्टतः पांच भव-ग्रहण। काल की अपेक्षा जघन्यतः दो-कोटि-पूर्व-अधिक--तेतीस-सागरोपम, उत्कृष्टतः तीन कोटि-पूर्व-अधिक-छासट्ठ-सागरोपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

छट्ठा आलापक : नरक में उत्पन्न होने वाले संज्ञी-मनुष्य

९१. भन्ते! यदि नैरयिक जीव मनुष्यों से उपपन्न होते हैं तो क्या—संज्ञी-मनुष्यों से उपपन्न होते हैं? असंज्ञी-मनुष्यों से उपपन्न होते हैं?

गौतम! संज्ञी-मनुष्यों से उपपन्न होते हैं, असंज्ञी-मनुष्यों से उपपन्न नहीं होते।

९२. भन्ते! यदि संज्ञी-मनुष्यों से उपपन्न होते हैं, तो क्या—संख्येय वर्ष की आयु वाले संज्ञी--मनुष्यों से उपपन्न होते हैं? असंख्येय वर्ष की आयु वाले संज्ञी-मनुष्यों से उपपन्न होते हैं?

गौतम! संख्येय वर्ष की आयु वाले संज्ञी-मनुष्यों से उपपन्न होते हैं, असंख्येय वर्ष की आयु वाले संज्ञी-मनुष्यों से उपपन्न नहीं होते।

९३. भन्ते! यदि संख्येय वर्ष की आयु वाले संज्ञी-मनुष्यों से उपपन्न होते हैं, तो क्या—संख्येय वर्ष की आयु वाले पर्याप्त-संज्ञी-मनुष्यों से उपपन्न होते हैं? संख्येय वर्ष की आयु वाले अपर्याप्त-संज्ञी-मनुष्यों से उपपन्न होते हैं?

गौतम! संख्यात वर्ष की आयु वाले पर्याप्त-संज्ञी-मनुष्यों से उपपन्न होते हैं, संख्यात वर्ष की आयु वाले अपर्याप्त-संज्ञी-मनुष्यों से उपपन्न नहीं होते।

९४. भन्ते! संख्यात वर्ष की आयु वाला पर्याप्त-संज्ञी-मनुष्य, जो नैरयिक के रूप में उपपन्न होने योग्य है, वह जीव कितनी पृथ्वियों में उपपन्न हो सकता है?

गौतम! वह जीव सातों पृथ्वियों (नरकों) में उपपन्न हो सकता है, जैसे—रत्नप्रभा में यावत् अधःसप्तमी में। (भ. २/७५)

प्रथम नरक में संखयात वर्ष की आयु वाले पर्याप्त-संज्ञी-मनुष्यों का उपपात आदि

(पहला गमक : औघिक और औघिक)

९५. भन्ते! संख्यात वर्ष की आयु वाला पर्याप्त-संज्ञी-मनुष्य, जो रत्नप्रभा-पृथ्वी में नैरयिक के रूप में उपपन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितने काल की स्थिति वाले नैरयिक के रूप में उपपन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः दस-हजार-वर्ष की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः एक सागरोपम की स्थिति वाले नैरयिक के रूप में उपपन्न होता है।

९६. भन्ते! वे जीव एक समय में कितने उपपन्न होते हैं?

गौतम! वे जीव एक समय में जघन्यतः एक अथवा दो अथवा तीन, उत्कृष्टतः संख्यात जीव उपपन्न होते हैं। उनमें छह संहनन होते हैं, उनके शरीर की अवगाहना जघन्यतः पृथक्त्व (दो से नौ)-अंगुल, उत्कृष्टतः पांच सौ धनुष की होती है। इसी प्रकार शेष संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय--तिर्यग्योनिक-जीवों की भांति वक्तव्य है। (भ. २४/६०,६१)

भवादेश तक। केवल इतना विशेष है—उनमें चार ज्ञान और तीन अज्ञान की भजना है, केवलि-समुद्घात को वर्ज कर शेष छह समुद्घात होते हैं। स्थिति और अनुबन्ध जघन्यतः पृथक्त्व (दो से नौ)-मास, उत्कृष्टतः कोटि-पूर्व, शेष पूर्ववत्। काल की अपेक्षा जघन्यतः पृथक्त्व (दो से नौ)-मास-अधिक-दस-हजार-वर्ष, उत्कृष्टतः चार-कोटि-पूर्व-अधिक--चार-सागरोपम—इतने काल तक रहते हैं, इतने काल तक गति-आगति करते हैं।

(दूसरा गमक : औघिक और जघन्य)

९७. वही (संख्यात वर्ष की आयु वाला पर्याप्त-संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-मनुष्य) जघन्य काल की स्थिति वाले नैरयिक के रूप में उपपन्न होता है, वही वक्तव्यता (भ. २४/१५-९६), केवल इतना विशेष है—काल की अपेक्षा जघन्यतः पृथक्त्व (दो से नौ)-मास-अधिक-दस--हजार-वर्ष, उत्कृष्टतः चालीस-हजार-वर्ष-अधिक-चार-कोटि-पूर्व—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(तीसरा गमक : औघिक और उत्कृष्ट)

९८. वही (संख्यात वर्ष की आयु वाला पर्याप्त-संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-मनुष्य) उत्कृष्ट काल की स्थिति वाली रत्नप्रभा-पृथ्वी में नैरयिक के रूप में उपपन्न होता है। वही वक्तव्यता, केवल इतना विशेष है—काल की अपेक्षा जघन्यतः पृथक्त्व (दो से नौ)-मास-अधिक-एक-

-सागरोपम, उत्कृष्टतः चार-कोटि-पूर्व-अधिक-चार-सागरोपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(चौथा गमक : जघन्य और औघिक)

९९. वही अपनी जघन्य काल स्थिति में उत्पन्न संख्यात वर्ष की आयु वाला पर्याप्त-संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-मनुष्य नैरयिकों में उपपन्न होता है। वही वक्तव्यता (**भ.** २४/९५) केवल इतना विशेष है—ये पांच नानात्व हैं—१. शरीर की अवगाहना—जघन्यतः पृथक्त्व (दो से नौ)-अंगुल, उत्कृष्टतः भी पृथक्त्व-अंगुल। २. तीन ज्ञान और तीन अज्ञान की भजना ३. समुद्घात—प्रथम पांच समुद्घात (आहारक- और केवलि-समुद्घात को छोड़कर), ४.५ स्थिति और अनुबन्ध—जघन्यतः पृथक्त्व (दो से नौ)-मास, उत्कृष्टतः भी पृथक्त्व-मास, शेष पूर्ववत् वक्तव्य है यावत् भवादेश तक। काल की अपेक्षा जघन्यतः पृथक्त्व-मास-अधिक-दस-हजार-वर्ष, उत्कृष्टतः चार-पृथक्त्व-मास-अधिक-चार-सागरोपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(पांचवां गमक : जघन्य और जघन्य)

१००. वही (संख्यात वर्ष की आयु वाला पर्याप्त-संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-मनुष्य) जघन्य काल की स्थिति वाला नैरयिक हुआ, नैरयिक जीवों में चतुर्थ गमक के समान वक्तव्यता। (**भ.** २४/९९) केवल इतना विशेष है—

काल की अपेक्षा जघन्यतः पृथक्त्व-मास-अधिक-दस-हजार-वर्ष, उत्कृष्टतः चार-पृथक्त्व-मास-अधिक-चालीस-हजार-वर्ष—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(छट्ठा गमक : जघन्य और उत्कृष्ट)

१०१. वही (संख्यात वर्ष की आयु वाला पर्याप्त-संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-मनुष्य) उत्कृष्ट काल की स्थिति वाले नैरयिक के रूप में उत्पन्न होता है, वही गमक वक्तव्य है, केवल इतना विशेष है—काल की अपेक्षा जघन्यतः पृथक्त्व-मास-अधिक-एक-सागरोपम, उत्कृष्टतः चार-पृथक्त्व-मास-अधिक-चार-सागरोपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(सातवां गमक : उत्कृष्ट और औघिक)

१०२. वही अपनी उत्कृष्ट काल स्थिति में उत्पन्न संख्यात वर्ष की आयु वाला पर्याप्त-संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-मनुष्य नैरयिकों में उपपन्न होता है। वही प्रथम गमक ज्ञातव्य है (**भ.** २४/९५,९६), केवल इतना विशेष है—१. शरीर की अवगाहना—जघन्यतः पांच सौ धनुष, उत्कृष्टतः भी पांच सौ धनुष २. स्थिति—जघन्यतः कोटि-पूर्व, उत्कृष्टतः भी कोटि-पूर्व। इसी प्रकार अनुबन्ध भी। काल की अपेक्षा जघन्यतः दस-हजार-वर्ष-अधिक-कोटि-पूर्व, उत्कृष्टतः चार-कोटि-पूर्व-अधिक-चार-सागरोपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(आठवां गमक : उत्कृष्ट और जघन्य)

१०३. वही (संख्यात वर्ष की आयु वाला पर्याप्त-संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-मनुष्य) जघन्य काल की स्थिति वाले नैरयिक के रूप में उत्पन्न होता है, वही सप्तम गमक की भांति वक्तव्यता, केवल इतना विशेष है—काल की अपेक्षा जघन्यतः दस-हजार-वर्ष-अधिक-कोटि-पूर्व, उत्कृष्टतः चलीस-हजार-वर्ष-अधिक-चार-कोटि-पूर्व—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गत-आगति करता है।

(नवां गमक : उत्कृष्ट और उत्कृष्ट)

१०४. वही (संख्यात वर्ष की आयु वाला पर्याप्त-संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-मनुष्य) उत्कृष्ट काल की स्थिति वाले नैरयिक के रूप में उत्पन्न होता है, वही सप्तम गमक की भांति वक्तव्यता, केवल इतना विशेष है—काल की अपेक्षा जघन्यतः कोटि-पूर्व-अधिक-एक-सागरोपम, उत्कृष्टतः चार-पूर्व-कोटि-अधिक-चार-सागरोपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

सातवां आलापक : दूसरी नरक में संख्यात वर्ष की आयु वाले पर्याप्त-संज्ञी-मनुष्यों का उपपात-आदि

(पहला गमक : औधिक और औधिक)

१०५. भन्ते! संख्यात वर्ष की आयु वाला पर्याप्त-संज्ञी-मनुष्य, जो शर्कराप्रभा-पृथ्वी में नैरयिक के रूप में उपपन्न होने योग्य है, भन्ते! वह मनुष्य कितने काल की स्थिति वाले नैरयिक के रूप में उपपन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः एक सागरोपम की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः तीन सागरोपम की स्थिति वाले नैरयिक के रूप में उपपन्न होता है।

१०६. भन्ते! वे जीव एक समय में कितने उपपन्न होते हैं? वही रत्नप्रभा-पृथ्वी के प्रथम गमक की भांति वक्तव्यता, केवल इतना विशेष है—शरीरावगाहना—जघन्यतः पृथक्त्व (दो से नौ)-रत्नि (चौबीस अंगुल), उत्कृष्टतः पांच सौ धनुष। स्थिति—जघन्यतः पृथक्त्व--वर्ष, उत्कृष्टतः कोटि-पूर्व। इसी प्रकार अनुबन्ध भी। शेष पूर्ववत् यावत् भवादेश तक। काल की अपेक्षा जघन्यतः पृथक्त्व-वर्ष-अधिक-एक-सागरोपम, उत्कृष्टतः चार-कोटि-पूर्व अधिक बारह-सागरोपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(दूसरा और तीसरा गमक : औधिक और जघन्य, औधिक और उत्कृष्ट)

इसी प्रकार औधिक तीनों गमकों में मनुष्य की प्राप्ति की वक्तव्यता, केवल इतना नानात्व है—काल की अपेक्षा नैरयिक स्थिति और कायसंवेध ज्ञातव्य है।

टिप्पण

१. प्रथम गमक—ऊपरवत् (भ. २४/१०५)

२. द्वितीय गमक—औधिक और जघन्य आयुष्य के संबंध में—नारक की स्थिति जघन्य

और उत्कृष्ट दोनों एक सागरोपम, काल की अपक्षा से कायसंवेध जघन्यतः पृथक्त्व (दो से नौ)-वर्ष-अधिक-एक-सागरोपम, उत्कर्षतः चार-कोटि-पूर्व-अधिक-चार-सागरोपम।

३. तृतीय गमक—अधिक और उत्कृष्ट स्थिति—नारक की स्थिति जघन्य और उत्कृष्ट तीन सागरोपम। काल की अपेक्षा से—जघन्यतः पृथक्त्व (दो से नौ)-वर्ष-अधिक-तीन-सागरोपम, उत्कृष्टतः चार-कोटि-पूर्व-अधिक-बारह-सागरोपम।

(चौथे से छट्ठा गमक : जघन्य और औधिक, जघन्य और जघन्य, जघन्य और उत्कृष्ट)

१०७. वही अपनी जघन्य काल की स्थिति में उत्पन्न संख्यात वर्ष की आयु वाला पर्याप्त-संज्ञी-मनुष्य नैरयिकों में उपपन्न होता है। उसकी तीनों गमकों में वही प्राप्ति, केवल इतना विशेष है—शरीरावगाहना—जघन्यतः पृथ्क्त्व-रत्नि, उत्कृष्टतः भी पृथक्त्व-रत्नि। स्थिति—जघन्यतः पृथक्त्व-वर्ष, उत्कृष्टतः भी पृथक्त्व-वर्ष। इसी प्रकार अनुबन्ध भी वक्तव्य है। शेष औधिक की भांति वक्तव्य है। (भ. २४/१०५) कायसंवेध यथोचित वक्तव्य है।

टिप्पण

४. चतुर्थ गमक—जघन्यतः पृथक्त्व-वर्ष-अधिक-एक-सागरोपम, उत्कृष्टतः चार-पृथक्त्व-वर्ष-अधिक-बारह-सागरोपम।

५. पञ्चम गमक—जघन्यतः पृथक्त्व-वर्ष-अधिक-एक-सागरोपम, उत्कृष्टतः चार-पृथक्त्व-वर्ष-अधिक-चार-सागरोपम।

६. षष्ठ गमक—जघन्यतः पृथक्त्व-वर्ष-अधिक-तीन-सागरोपम, उत्कृष्टतः चार-पृथक्त्व-अधिक-बारह-सागरोपम।

(सातवें से नवां गमक : उत्कृष्ट और औधिक, उत्कृष्ट और जघन्य, उत्कृष्ट और उत्कृष्ट)

१०८. वही अपनी उत्कृष्ट काल की स्थिति में उत्पन्न संख्यात वर्ष की आयु वाला पर्याप्त-संज्ञी-मनुष्य नैरयिकों में उत्पन्न होता है। उसके भी तीनों गमकों में वही प्राप्ति वक्तव्य है। केवल यह नानात्व है—शरीरावगाहना—जघन्यतः पांच सौ धनुष, उत्कृष्टतः भी पांच सौ धनुष। स्थिति—जघन्यतः कोटि-पूर्व, उत्कृष्टतः भी कोटि-पूर्व। इसी प्रकार अनुबन्ध की वक्तव्यता। शेष प्रथम गमक सदृश वक्तव्य है, केवल इतना विशेष है—नैरयिक स्थिति और कायसंवेध (काल की अपेक्षा) के विषय में सप्तम, अष्टम और नवम गमक वक्तव्य है। सप्तम गमक—स्थिति जघन्यतः एक सागरोपम, उत्कृष्टतः तीन सागरोपम। कायसंवेध—जघन्यतः एक कोटि-पूर्व-अधिक-एक-सागरोपम, उत्कृष्टतः चार-कोटि-पूर्व-अधिक-बारह-सागरोपम।

अष्टम गमक—जघन्यतः एक सागरोपम, उत्कृष्टतः भी एक सागरोपम, कायसंवेध जघन्यतः एक-कोटि-पूर्व-अधिक-एक-सागरोपम, उत्कृष्टतः चार-कोटि-पूर्व-अधिक-चार-सागरोपम, नवम गमक—जघन्यतः तीन सागरोपम, उत्कृष्टतः भी तीन सागरोपम, कायसंवेध—जघन्यतः एक-कोटि-पूर्व-अधिक-तीन-सागरोपम, उत्कृष्टतः चार-कोटि-पूर्व-अधिक-बारह-सागरोपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

आठवां आलापक : तीसरी से छट्ठी नरक में संख्यात वर्ष की आयु वाले पर्याप्त--संज्ञी–मनुष्यों का उपपात-आदि

इसी प्रकार यावत् छट्ठी पृथ्वी तक वक्तव्यता, केवल इतना विशेष है–(संहनन) संज्ञी--पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक की भांति क्रमशः एक-एक संहनन हीन होता है। (भ. २४/७९) काल की अपेक्षा भी पूर्ववत् वक्तव्यता (भ. २४/७९), इतना विशेष है–मनुष्य के गमक में मनुष्य की स्थिति ज्ञातव्य है। जघन्यतः पृथक्त्व-वर्ष-अधिक और उत्कृष्टतः कोटि--पूर्व-अधिक क्रमशः शर्करा-प्रभा से तमःप्रभा तक की स्थिति जोड़ कर बतलाना चाहिए।

नवां आलापक : सातवीं नरक में संख्यात वर्ष की आयु वाले पर्याप्त-संज्ञी-मनुष्यों का उपपात-आदि

(पहला गमक : औघिक और औघिक)

१०९. भन्ते! संख्यात वर्ष की आयु वाला पर्याप्त-संज्ञी-मनुष्य जो अधःसप्तमी-पृथ्वी में नैरयिक के रूप में उपपन्न होने योग्य है, भन्ते! वह जीव कितने काल की स्थिति वाले नैरयिक रूप में उपपन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः बाईस सागरोपम की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः तेतीस सागरोपम की स्थिति वाले नैरयिक के रूप में उपपन्न होता है।

११०. भन्ते! वे जीव एक समय में कितने उपपन्न होते हैं? अवशेष शर्कराप्रभा-पृथ्वी के गमक की भांति ज्ञातव्य है (भ. २४/१०५), इतना विशेष है–प्रथम संहनन–वज्र-ऋषभ--नाराच-संहनन वाले होते हैं, स्त्री-वेदक उपपन्न नहीं होते। शेष पूर्ववत् यावत् अनुबन्ध तक। भव की अपेक्षा दो भव-ग्रहण (एक मनुष्य का, दूसरा सातवीं नरक का) काल की अपेक्षा जघन्यतः पृथक्त्व-वर्ष-अधिक-बाईस सागरोपम, उत्कृष्टतः कोटि-पूर्व-अधिक-तेतीस--सागरोपम–इतने काल तक रहते हैं, इतने काल तक गति-आगति करते हैं।

(दूसरा गमक : औघिक और जघन्य)

१११. वही संख्यात वर्ष की आयु वाला पर्याप्त-संज्ञी-मनुष्य जघन्य काल की स्थिति वाले नैरयिक के रूप में उपपन्न होता है, वही वक्तव्यता (भ. २४/११०) इतना विशेष है–नैरयिक की स्थिति और कायसंवेध ज्ञातव्य है।

टिप्पण

(दूसरे गमक की तरह–स्थिति जघन्यतः बाईस सागरोपम, उत्कृष्टतः भी बाईस सागरोपम, कायसंवेध–जघन्यतः पृथक्त्व-(दो से नौ))-वर्ष-अधिक-बाईस-सागरोपम, उत्कृष्टतः कोटि--पूर्व-अधिक-बाईस-सागरोपम)।

(तीसरा गमक : औघिक और उत्कृष्ट)

११२. वही संख्यात वर्ष की आयु वाला पर्याप्त-संज्ञी-मनुष्य उत्कृष्ट काल की स्थिति वाले नैरयिक के रूप उपपन्न होता है, वही वक्तव्यता (भ. २४/११०) इतना विशेष है–स्थिति और कायसंवेध तीसरे गमक की भांति ज्ञातव्य है।

टिप्पण

(स्थिति जघन्यतः तेतीस सागरोपम, उत्कृष्टतः भी तेतीस सागरोपम, कायसंवेध—जघन्यतः पृथक्त्व-वर्ष-अधिक-तेतीस-सागरोपम, उत्कृष्टतः कोटि-पूर्व-अधिक-तेतीस-सागरोपम)।

(चौथा, पांचवां, छट्ठा गमक : जघन्य और औधिक, जघन्य और जघन्य, जघन्य और उत्कृष्ट)

११३. वही अपनी जघन्य काल की स्थिति में उत्पन्न संख्यात वर्ष की आयु वाला पर्याप्त-संज्ञी-मनुष्य नैरयिक में उपपन्न होता है। उसके भी तीनों गमकों में वही वक्तव्यता (**भ.** २४/११०), इतना विशेष है—शरीरावगाहना—जघन्यतः पृथक्त्व-रत्नि, उत्कृष्टतः भी पृथक्त्व-रत्नि, स्थिति—जघन्यतः पृथक्त्व-वर्ष, उत्कृष्टतः भी पृथक्त्व-वर्ष। इसी प्रकार अनुबन्ध भी वक्तव्य है। (पहले गमक में उत्कृष्ट स्थिति कोटि-पूर्व बतलाई है, यहां उत्कृष्ट स्थिति और अनुबन्ध पृथक्त्व-वर्ष वक्तव्य है, चौथे गमक में नैरयिक की स्थिति जघन्यतः बाईस सागरोपम उत्कृष्टतः तेतीस सागरोपम), कायसंवेध—यथोचित वक्तव्य है।

टिप्पण

चतुर्थ से छट्ठे गमक तक। (चतुर्थ गमक-कायसंवेध—जघन्यतः पृथक्त्व-वर्ष-अधिक-बाईस-सागरोपम, उत्कृष्टतः पृथक्त्व-वर्ष-अधिक-तेतीस-सागरोपम, पंचम गमक—काय संवेध—जघन्यतः पृथक्त्व-वर्ष-अधिक-बाईस-सागरोपम और उत्कृष्टतः भी पृथक्त्व-वर्ष-अधिक-बाईस-सागरोपम, षष्ठगमक—कायसंवेध—जघन्यतः पृथक्त्व-वर्ष-अधिक-तेतीस-सागरोपम और उत्कृष्टतः भी पृथक्त्व-वर्ष-अधिक-तेतीस-सागरोपम)।

(सातवां, आठवां, नवां गमक : उत्कृष्ट और औधिक, उत्कृष्ट और जघन्य, उत्कृष्ट और उत्कृष्ट)

११४. वही अपनी उत्कृष्ट काल स्थिति में उत्पन्न संख्यात वर्ष की आयु वाला पर्याप्त-संज्ञी-मनुष्य नैरयिकों में उपपन्न होता है। उसके भी तीनों गमकों में (सातवें, आठवें, नवमें) वही वक्तव्यता (**भ.** २४/११०), इतना विशेष है—शरीरावगाहना—जघन्यतः पांच सौ धनुष, उत्कृष्टतः भी पांच सौ धनुष। स्थिति—जघन्यतः कोटि-पूर्व, उत्कृष्टतः भी कोटि-पूर्व। इसी प्रकार अनुबन्ध भी (पहले गमक में स्थिति और अनुबन्ध में जघन्यतः पृथक्त्व वर्ष था, यहां जघन्यतः कोटि-पूर्व वक्तव्य है।) इन नव ही गमकों में भी नैरयिक स्थिति और कायसंवेध ज्ञातव्य है। सर्वत्र दो भव-ग्रहण यावत् नौवां गमक। (सप्तम गमक—स्थिति-जघन्यतः बाईस सागरोपम, उत्कृष्टतः तेतीस सागरोपम, कायसंवेध-जघन्यतः कोटि-पूर्व-अधिक-बाईस-सागरोपम, उत्कृष्टतः कोटि-पूर्व-अधिक-तेतीस-सागरोपम, अष्टम गमक—स्थिति-जघन्यतः बाईस-सागरोपम, उत्कृष्टतः भी बाईस-सागरोपम, कायसंवेध—जघन्यतः कोटि-पूर्व-अधिक-बाईस-सागरोपम, उत्कृष्टतः भी कोटि-पूर्व-अधिक-बाईस-सागरोपम, नवम गमक—स्थिति-जघन्यतः तेतीस-सागरोपम, उत्कृष्टतः भी तेतीस-सागरोपम। काल की अपेक्षा जघन्यतः कोटि-पूर्व-अधिक-तेतीस-सागरोपम, उत्कृष्टतः भी कोटि-पूर्व-अधिक-तेतीस-सागरोपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

११५. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है। यावत् संयम और तप से अपने आपको भावित करते हुए विहरण करने लगे।

दूसरा उद्देशक

दसवां आलापक : असुरकुमार-देव के रूप में उत्पन्न तिर्यंच-पंचेन्द्रिय-जीव

११६. राजगृह नगर यावत् गौतम ने इस प्रकार कहा—भन्ते! असुरकुमार के रूप में जीव कहां से उपपन्न होते हैं—क्या नैरयिकों से उपपन्न होते है? तिर्यग्योनिक-जीवों, मनुष्यों और देवों से उपपन्न होते हैं?

गौतम! नैरयिकों से उपपन्न नहीं होते, तिर्यग्योनिक-जीवों से उपपन्न होते हैं, मनुष्यों से उपपन्न होते हैं, देवों से उपपन्न नहीं होते। इस प्रकार नैरयिक-उद्देशक की भांति वक्तव्यता (भ. २४/२-६) यावत्—

असुरकुमार-देव के रूप में पर्याप्त-असंज्ञी-तिर्यंच-पंचेन्द्रिय-जीवों का उपपात-आदि

(पहला गमक : औघिक और औघिक)

११७. भन्ते! पर्याप्त-असंज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव जो असुरकुमार के रूप में उपपन्न होने योग्य है, भन्ते! वह जीव कितनी काल की स्थिति वाले असुरकुमार के रूप में उपपन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः दस-हजार-वर्ष की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः एक-पल्योपम-के--असंख्यातवें-भाग की स्थिति वाले असुरकुमार के रूप में उपपन्न होता है।

११८. भन्ते! वे जीव एक समय में कितने उपपन्न होते हैं? इस प्रकार रत्नप्रभा के गमक सदृश नौ गमक वक्तव्य हैं (भ. २४/८-५३) इतना विशेष है—(चौथे, पांचवे और छट्ठे गमक में) जब अपनी जघन्य काल की स्थिति वाला (असंज्ञी-पंचेन्द्रिय-तिर्यक्योनिक-जीव) होता है, तब तीनों ही गमकों में प्रशस्त अध्यवसान होते हैं, अप्रशस्त अध्यवसान नहीं होते। शेष पूर्ववत्।

ग्यारहवां आलापक : असुरकुमार-देव के रूप में असंख्यात वर्ष की आयु वाले (पर्याप्त)--संज्ञी-तिर्यंच-पंचेन्द्रिय-(यौगलिकों) का उपपात-आदि

११९. यदि संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों से उपपन्न होते हैं तो क्या संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों से उपपन्न होते हैं? असंख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों से उपपन्न होते हैं?

गौतम! संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों से उपपन्न होते हैं, असंख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों से भी उपपन्न होते हैं।

(पहला गमक : औघिक और औघिक)

१२०. भन्ते! असंख्यात वर्ष की आयु वाला (पर्याप्त)-संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्-योनिक (यौगिलक) जो असुरकुमार के रूप में उपपन्न होने योग्य है, वह जीव कितने काल की स्थिति वाले असुरकुमार के रूप में उपपन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः दस हजार वर्ष की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः तीन पल्योपम की स्थिति वाले असुरकुमार के रूप में उपपन्न होता है।

१२१. भन्ते! वे जीव एक समय में कितने उपपन्न होते हैं......पृच्छा।

गौतम! जघन्यतः एक अथवा दो अथवा तीन, उत्कृष्टतः संख्यात उपपन्न होते हैं। वे वज्र-ऋषभ-नाराच-संहनन वाले होते हैं। आवगाहना—जघन्यतः पृथक्त्व-धनुष, उत्कृष्टतः छह गव्यूत। वे समचतुरस्र-संस्थान वाले प्रज्ञप्त हैं। प्रथम चार लेश्याएं होती हैं, सम्यग्-दृष्टि नहीं होते, मिथ्या-दृष्टि होते हैं, सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि नहीं होते। ज्ञानी नहीं होते, अज्ञानी होते हैं। नियमतः दो अज्ञान—मति-अज्ञान और श्रुत-अज्ञान वाले होते हैं। योग—तीनों प्रकार के होते हैं। उपयोग दोनों प्रकार के होते हैं। संज्ञाएं चार। कषाय—चार। इन्द्रियां—पांच। समुद्घात—प्रथम तीन। समवहत अवस्था में भी मृत्यु को प्राप्त होते हैं, असमवहत अवस्था में भी मृत्यु को प्राप्त होते हैं। वेदना भी दो प्रकार की होती है—सात-वेदना वाले और असात-वेदना वाले होते हैं। वेद—दो प्रकार के होते हैं—स्त्री-वेद वाले भी होते हैं, पुरुष-वेद वाले भी, नपुंसक-वेद वाले नहीं होते। स्थिति—जघन्यतः कुछ-अधिक-कोटि-पूर्व, उत्कृष्टतः तीन पल्योपम। अध्यवसान प्रशस्त भी, अप्रशस्त भी। अनुबन्ध—स्थिति की भांति वक्तव्य है। कायसंवेध—भव की अपेक्षा से दो भव-ग्रहण, काल की अपेक्षा से जघन्यतः दस-हजार-वर्ष-अधिक-सातिरेक-कोटि-पूर्व, उत्कृष्टतः छह पल्योपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(दूसरा गमक : औघिक और जघन्य)

१२२. वही (असंख्यात वर्ष की आयु वाला संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक (यौगलिक)) जघन्य काल की स्थिति वाले असुरकुमार के रूप में उपपन्न होता है, वही वक्तव्यता, (भ. २४/१२१) इतना विशेष है—असुरकुमार-देवों की स्थिति और संवेध ज्ञातव्य है।

टिप्पण

(स्थिति—जघन्यतः 'और उत्कृष्टतः दस हजार वर्ष, कायसंवेध—जघन्यतः दस-हजार-वर्ष-अधिक-सातिरेक-कोटि-पूर्व, उत्कृष्टतः तीन पल्योपम यौगलिक का और दस हजार वर्ष असुरकुमार का)

(तीसरा गमक : औघिक और उत्कृष्ट)

१२३. वही (असंख्यात वर्ष की आयु वाला संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक (यौगलिक) उत्कृष्ट काल की स्थिति वाले असुरकुमार-देव के रूप में उपपन्न होता है, वह जघन्यतः तीन पल्योपम की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः भी तीन पल्योपम की स्थिति वाले असुरकुमार के रूप में उपपन्न होता है। यही वक्तव्यता, इतना विशेष है—स्थिति—जघन्यतः तीन पल्योपम, उत्कृष्टतः भी तीन पल्योपम। इसी प्रकार अनुबन्ध भी। काल की अपेक्षा जघन्यतः छह पल्योपम, उत्कृष्टतः भी छह पल्योपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है। शेष पूर्ववत्।

(चौथा गमक : जघन्य और औघिक)

१२४. वही अपनी जघन्य काल स्थिति में उत्पन्न यौगलिक असुरकुमारों में उपपन्न होता है। वह जघन्यतः दस हजार वर्ष की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः सातिरेक-कोटि-पूर्व-आयुष्य वाले असुरकुमार के रूप में उपपन्न होता है।

१२५. भन्ते! वे जीव एक समय में कितने उपपन्न होते हैं? अवशेष पूर्ववत् (भ. २४/१२३) यावत् भव की अपेक्षा तक, इतना विशेष है—अवगाहना—जघन्यतः पृथक्त्व-धनुष, उत्कृष्टतः कुछ-अधिक-हजार-धनुष। स्थिति—जघन्यतः कुछ-अधिक-कोटि-पूर्व, उत्कृष्टतः भी कुछ-अधिक-कोटि-पूर्व। इसी प्रकार अनुबन्ध भी। काल की अपेक्षा जघन्यतः दस-हजार-वर्ष-अधिक-सातिरेक-दो-कोटि-पूर्व—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(पांचवां गमक : जघन्य और जघन्य)

१२६. वही (असंख्यात वर्ष की आयु वाला संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक (यौगलिक)) जघन्य काल की स्थिति वाले असुरकुमार के रूप में उपपन्न होता है, वही वक्तव्यता केवल विशेष विशेष है—असुरकुमार की स्थिति और संवेध ज्ञातव्य है। (स्थिति—जघन्यतः और उत्कृष्टतः दस हजार वर्ष, कायसंवेध—जघन्यतः और वही उत्कृष्टतः दस-हज़ार-वर्ष-अधिक-सातिरेक-कोटि-पूर्व।)

(छट्ठा गमक : जघन्य और उत्कृष्ट)

१२७. वही (असंख्यात वर्ष की आयु वाला संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक (यौगलिक)) उत्कृष्ट काल की स्थति वाले असुरकुमार में उपपन्न होता है। वह जघन्यतः कुछ-अधिक-कोटि-पूर्व-आयुष्य वाले, उत्कृष्टतः भी कुछ- अधिक-कोटि-पूर्व-आयुष्य वाले असुरकुमारों में उपपन्न होता हैं, शेष पूर्ववत्। इतना विशेष है—काल की अपेक्षा जघन्यतः सातिरेक-कोटि-पूर्व, उत्कृष्टतः भी सातिरेक-दो-पूर्व-कोटि—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(सातवां गमक : उत्कृष्ट और औघिक)

१२८. वही (असंख्यात वर्ष की आयु वाला संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक (यौगलिक)) अपनी उत्कृष्ट काल की स्थिति वाला जीव हुआ। वह असुरकुमारों में उपपन्न होता है। वही प्रथम गमक की वक्तव्यता, (भ. २४/१२१) इतना विशेष है—स्थिति जघन्यतः तीन पल्योपम, उत्कृष्टतः भी तीन पल्योपम। इसी प्रकार अनुबन्ध भी। काल की अपेक्षा जघन्यतः दस-हजार- वर्ष-अधिक-तीन-पल्योपम, उत्कृष्टतः छह पल्योपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(आठवां गमक : उत्कृष्ट और जघन्य)

१२९. वही (असंख्यात वर्ष की आयु वाला संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक (यौगलिक)) जघन्य काल की स्थिति वाले असुरकुमारों में उपपन्न होता है। वही वक्तव्यता, (भ. २४/१२८) इतना विशेष है—असुरकुमार की स्थिति और संवेध ज्ञातव्य है। (स्थिति—जघन्यतः

और उत्कृष्टतः दस हजार वर्ष, कायसंवेध—जघन्यतः और उत्कृष्टतः दस-हजार-वर्ष-कुछ-अधिक-तीन-पल्योपम)।

(नवां गमक : उत्कृष्ट और उत्कृष्ट)

१३०. वही (असंख्यात वर्ष की आयु वाला संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव) (यौगलिक) उत्कृष्ट काल की स्थिति वाले असुरकुमारों में होता है, जघन्यतः तीन पल्योपम उत्कृष्टतः भी तीन पल्योपम, यही वक्तव्यता, (भ. २४/१२९) इतना विशेष है—काल की अपेक्षा जघन्यतः छह पल्योपम, उत्कृष्टतः भी छह पल्योपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

बारहवां आलापक : असुरकुमार में संख्यात वर्ष की आयुष्य वाले संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों का उपपात-आदि

१३१. (भन्ते!) यदि जीव संख्यात वर्ष की आयु वाला संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों से असुरकुमारों में उपपन्न होते हैं तो क्या जलचर-जीवों से उपपन्न होते हैं? इसी प्रकार यावत्—(भ. २४/४-५)

१३२. भन्ते! संख्यात वर्ष की आयु वाला पर्याप्त संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव जो असुरकुमारों में उपपन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितनी काल की स्थिति वाले असुरकुमारों में उपपन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः दस हजार वर्ष की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः कुछ-अधिक-एक-सागरोपम की स्थिति वाले जीव असुरकुमारों में उपपन्न होता है।

१३३. भन्ते! वे जीव एक समय में कितने उपपन्न होते हैं? इसी प्रकार रत्नप्रभा-पृथ्वी के समान नौ गमक ज्ञातव्य है (भ. २४/५८-७७), इतना विशेष है—जब अपनी जघन्य काल की स्थिति वाला (संख्यात वर्ष की आयु वाला पर्याप्त-संज्ञी-पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव) होता है तब तीनों ही गमक (चौथा, पांचवां और छट्ठा) नानात्व वक्तव्य है—चार लेश्याएं, अध्यवसान—प्रशस्त होते हैं, अप्रशस्त नहीं। शेष पूर्ववत्। कायसंवेध—कुछ अधिक एक सागरोपम करणीय है।

तेरहवां आलापक : असुरकुमार में संज्ञी-मनुष्य का उपपात-आदि

१३४. यदि मनुष्यों में उपपन्न होते हैं तो क्या संज्ञी-मनुष्यों से असुरकुमारों में उपपन्न होते हैं? अथवा असंज्ञी-मनुष्यों से असुरकुमारों में उपपन्न होते हैं?

गौतम! संज्ञी-मनुष्यों से असुरकुमारों में उपपन्न होते हैं, असंज्ञी-मनुष्यों से असुरकुमारों में उपपन्न नहीं होते।

१३५. यदि संज्ञी-मनुष्यों से उपपन्न होते हैं तो क्या—संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-मनुष्यों से उपपन्न होते हैं? असंख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-मनुष्यों से उपपन्न होते हैं?

गौतम! संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-मनुष्यों से उपपन्न होते हैं, असंख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-मनुष्यों से भी उपपन्न होते हैं।

असुरकुमार में असंख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-मनुष्यों (यौगलिकों) का उपपात--आदि

(पहला, दूसरा और तीसरा गमक : औधिक और औधिक, औधिक और जघन्य, औधिक और उत्कृष्ट)

१३६. भन्ते! असंख्यात वर्ष की आयु वाला संज्ञी-मनुष्य (यौगलिक), जो असुरकुमारों में उपपन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितने काल की स्थिति वाले असुरकुमारों में उपपन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः दस-हजार-वर्ष की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः तीन पल्योपम की स्थिति वाले असुरकुमारों में उपपन्न होता है। इसी प्रकार असंख्येय-वर्ष की आयुवाले तिर्यग्योनिक-(यौगलिकों) के समान प्रथम तीन गमक ज्ञातव्य है। केवल इतना विशेष है—शरीर की अवगाहना—प्रथम और द्वितीय गमकों में जघन्यतः कुछ-अधिक-पांच-सौ-धनुष, उत्कृष्टतः तीन गव्यूत। शेष पूर्ववत्। तीसरे गमक में अवगाहना—जघन्यतः तीन गव्यूत, उत्कृष्टतः भी तीन गव्यूत। शेष असंख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक (यौगलिकों) की भांति वक्तव्य है।

(चौथा, पांचवां और छट्ठा गमक : जघन्य और औधिक, जघन्य और जघन्य, जघन्य और उत्कृष्ट)

१३७. वही अपनी जघन्य काल की स्थिति में उत्पन्न असंख्यात वर्ष की आयु वाला संज्ञी--मनुष्य (यौगलिक) से असुरकुमारों में उत्पन्न होता है, उसके भी जघन्य काल की स्थिति वाले असंख्यात वर्ष की आयु वाले पञ्चेन्द्रिय-संज्ञी-तिर्यग्योनिकों के समान तीन गमक वक्तव्य है (भ. २४/१२४-१२७)। इतना विशेष है—शरीर की अवगाहना—तीनों ही गमकों में जघन्यतः कुछ-अधिक-पांच-सौ-धनुष, उत्कृष्टतः भी कुछ-अधिक-पांच-सौ-धनुष। शेष पूर्ववत्।

(सातवां, आठवां और नवां गमक : उत्कृष्ट और औधिक, उत्कृष्ट और जघन्य, उत्कृष्ट और उत्कृष्ट)

१३८. वही अपनी उत्कृष्ट काल-स्थिति में उत्पन्न मनुष्य असुरकुमारों में उपपन्न होता है। उसके भी वे ही अन्तिम तीन गमक वक्तव्य हैं, (भ. २४/१२८-१३०)। केवल इतना विशेष है—शरीर की अवगाहना—तीनों ही गमकों में जघन्यतः तीन गव्यूत, उत्कृष्टतः भी तीन गव्यूत। अवशेष पूर्ववत्।

चौदहवां आलापक : असुरकुमार में संख्यात वर्ष की आयु वाले पर्याप्त-संज्ञी-मनुष्य का उपपात-आदि

१३९. यदि संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-मनुष्यों से उपपन्न होते हैं तो क्या—संख्यात वर्ष की आयु वाले पर्याप्त संज्ञी-मनुष्यों से उपपन्न होते हैं? संख्यात वर्ष की आयु वाले अपर्याप्त-संज्ञी-मनुष्यों से उपपन्न होते हैं?

गौतम! संख्यात वर्ष की आयु वाले पर्याप्त-संज्ञी-मनुष्यों से उपपन्न होते हैं। संख्यात वर्ष की आयु वाले अपर्याप्त-संज्ञी-मनुष्यों से उपपन्न नहीं होते।

१४०. संख्यात वर्ष की आयु वाले पर्याप्त-संज्ञी-मनुष्य, जो असुरकुमार में उपपन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितने काल की स्थिति वाले असुरकुमारों में उपपन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः दस-हजार-वर्ष की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः कुछ-अधिक-एक-सागरोपम की स्थिति वाले असुरकुमारों में उपपन्न होता है।

१४१. भन्ते! वे जीव एक समय में कितने उपपन्न होते हैं? इस प्रकार जैसे इन जीवों के रत्नप्रभा-पृथ्वी में उपपन्न होने पर जो नव गमक होते हैं, (भ. २४/९६-१०४) उसी प्रकार यहां पर भी नव गमक वक्तव्य है, केवल इतना विशेष है—कायसंवेध कुछ-अधिक-सागरोपम करणीय है। शेष पूर्ववत्।

१४२. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

तीसरा उद्देशक

नागकुमार-अधिकार

१४३. राजगृह में यावत् इस प्रकार कहा—भन्ते! नागकुमार-(देव) के रूप में जीव कहां से उपपन्न होते हैं—क्या नैरयिकों से उपपन्न होते हैं? तिर्यग्योनिकों, मनुष्यों और देवों से उपपन्न होते हैं?

गौतम! नैरयिकों से उपपन्न नहीं होते, तिर्यञ्चयोनिक-जीवों से उपपन्न होते हैं, मनुष्यों से उपपन्न होते हैं, देवों से उपपन्न नहीं होते।

पन्द्रहवां आलापक : नागकुमार-देव में असंज्ञी-तिर्यंच-पंचेन्द्रिय-जीवों का उपपात-आदि

१४४. यदि तिर्यग्योनिकों से उपपन्न होते हैं.....? इस प्रकार जैसे असुरकुमार के विषय में वक्तव्यता वैसी ही नागकुमार के सम्बन्ध में वक्तव्यता यावत् असंज्ञी तक। (भ. २४/११६-११८)

१४५. यदि संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों से उपपन्न होते हैं तो क्या—संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों से उपपन्न होते हैं? असंख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों (यौगलिकों) से उपपन्न होते हैं?

गौतम! संख्यात वर्ष की आयुवाले संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों से उपपन्न होते हैं, अंख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों (यौगलिकों) से भी उपपन्न होते हैं। (भ. २४/१३५)

सोलहवां आलापक : नागकुमार-देव में असंख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-तिर्यंच-पंचेन्द्रिय (यौगलिकों) का उपपात-आदि

(पहला गमक : औघिक और औधिक)

१४६. भन्ते! असंख्यात वर्ष की आयु वाला संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक (यौगलिक) जो नागकुमारों में उपपन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितने काल की स्थिति वाले नागकुमारों में उपपन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः दस-हजार-वर्ष की स्थिति वाले उत्कृष्टतः कुछ-देशोन-दो-पल्योपम स्थिति वाले नागकुमारों म उपपन्न होता है।

१४७. भन्ते! वे जीव एक समय म कितने उपपन्न होते हैं? शेष वही असुरकुमारों में उपपन्न होने वाले गमक की वक्तव्यता (भ. २४/१२१) यावत्—भवादेश—भव की अपेक्षा तक। काल की अपेक्षा जघन्यतः दस-हजार-वर्ष-अधिक-सातिरेक-पूर्व-कोटि, उत्कृष्टतः देशोन--पांच-पल्योपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(दूसरा गमक : औधिक और जघन्य)

१४८. वही (असंख्यात वर्ष की आयु वाला संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक (यौगलिक) जघन्य काल की स्थिति वाले नागकुमारों में उपपन्न होता है, वही वक्तव्यता (भ. २४/१४७)), केवल इतना विशेष है—नागकुमार की स्थिति और कायसंवेध के विषय में जानना चाहिए। स्थिति—जघन्यतः दस-हजार-वर्ष, उत्कृष्टतः भी दस-हजार-वर्ष। कायसंवेध—जघन्यतः कुछ अधिक (दस-हजार-वर्ष-अधिक)-कोटि-पूर्व और उत्कृष्टतः कुछ-अधिक-(दस-हजार-वर्ष--तीन-पल्योपम)।

(तीसरा गमक : औधिक और उत्कृष्ट)

१४९. वही (असंख्यात वर्ष की आयु वाला संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक (यौगलिक)) उत्कृष्ट काल की स्थिति वाले नागकुमारों में उपपन्न होता है। वही वक्तव्यता (भ. २४/१४७), इतना विशेष है—स्थिति जघन्यतः देशोन-दो-पल्योपम, उत्कृष्टतः तीन पल्योपम। शेष पूर्ववत्। यावत् भवादेश तक। काल की अपेक्षा जघन्यतः देशोन-चार-पल्योपम, उत्कृष्टतः देशोन-पांच-पल्योपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(चौथा, पांचवां और छट्ठा गमक : जघन्य और औधिक, जघन्य और जघन्य, जघन्य और उत्कृष्ट)

१५०. वही अपनी जघन्य काल की स्थिति में उत्पन्न यौगलिक-जीव नागकुमारों में उपपन्न होता है। उसके विषय में तीनों ही गमक असुरकुमारों में उपपद्यमान जघन्य काल की स्थिति वाले असंख्यात-वर्षायुष्क-संज्ञी-पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक की भांति अविकल रूप से वक्तव्य है (भ. २४/१३७)।

(सातवां, आठवां और नवां गमक : उत्कृष्ट और औधिक, उत्कृष्ट और जघन्य, उत्कृष्ट और उत्कृष्ट)

१५१. वही अपनी उत्कृष्ट काल की स्थिति में उत्पन्न यौगलिक नागकुमारों में उपपन्न होता है। उसके विषय में तीनों ही (सातवां, आठवां, और नववां) गमक (भ. २४/१३८) में उपपद्यमान की भांति वक्तव्य है। इतना विशेष है—नागकुमार की स्थिति और कायसंवेध ज्ञातव्य हैं। शेष पूर्ववत्।

सत्रहवां आलापक : नागकुमार में संख्यात वर्ष की आयु वाले पर्याप्त संज्ञी-तिर्यञ्च--पञ्चेन्द्रिय-जीवों का उपपात-आदि

१५२. यदि संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों से उपपन्न होते हैं तो क्या—संख्यात वर्ष की आयु वाले पर्याप्त-संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों से उपपन्न होते

हैं? संख्यात वष की आयु वाले अपर्याप्त-संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों से उपपन्न होते हैं?

गौतम! संख्यात वर्ष की आयु वाले पर्याप्त-संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों से उपपन्न होते हैं, संख्यात वर्ष की आयु वाले अपर्याप्त-संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों से उपपन्न नहीं होते।

(पहला गमक : औघिक और औघिक)

१५३. भन्ते! संख्यात वर्ष की आयु वाला संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव नागकुमारों में उपपन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितने काल की स्थिति वाले नागकुमारों में उपपन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः दस हजार वर्ष की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः कुछ अंश कम दो पल्योपम की स्थिति वाले नागकुमारों में उपपन्न होता है।

(दूसरे से नवें गमक तक)

इसी प्रकार असुरकुमारों में उपपद्यमान की वक्तव्यता, वैसी ही नौ गमकों में वक्तव्य है (**भ. २४/१४०-१४१**), इतना विशेष है—नागकुमार की स्थिति और कायसंवेध ज्ञातव्य है। शेष पूर्ववत्।

१५४. यदि मनुष्यों से नागकुमारों में उपपन्न होते हैं तो क्या—संज्ञी-मनुष्य से उपपन्न होते हैं? असंज्ञी-मनुष्य से उपपन्न होते हैं?

गौतम! संज्ञी-मनुष्यों से उपपन्न होते हैं, असंज्ञी-मनुष्यों से उपपन्न नहीं होते, जैसे असुरकुमार में उपपद्यमान की भांति (**भ. २४/१३४-१३५**) यावत्—

अठारहवां आलापक : नागकुमार में असंख्यात वर्ष की आयु वाले (पर्याप्त-) संज्ञी-मनुष्य (यौगलिकों) का उपपात-आदि

(पहला, दूसरा और तीसरा गमक : औघिक और औघिक, औघिक और जघन्य, औघिक और उत्कृष्ट)

१५५. भन्ते! असंख्यात वर्ष की आयु वाला संज्ञी-मनुष्य, जो नागकुमारों में उपपन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितने काल की स्थिति वाले नागकुमारों में उपपन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः दस-हजार-वर्ष, उत्कृष्टतः कुछ-अंश-कम-दो-पल्योपम की स्थिति वाले नागकुमारों में उपपन्न होता है, जैसे असंख्यात वर्ष की आयु वाले तिर्यग्योनिकों की नागकुमारों में (उपपन्न होने पर) जो प्रथम तीन गमक कहे गए, यहां भी वक्तव्य हैं (**भ. २४/१४६-१४९**), इतना विशेष है—पहले और दूसरे गमक में शरीरावगाहना—जघन्यतः कुछ-अधिक-पांच-सौ-धनुष, उत्कृष्टतः तीन गव्यूत। तीसरे गमक में अवगाहना—जघन्यतः कुछ-अंश-कम-दो-गव्यूत, उत्कृष्टतः तीन गव्यूत। शेष पूर्ववत्।

(चौथा, पांचवां और छट्ठा गमक : जघन्य और औघिक, जघन्य और जघन्य, जघन्य और उत्कृष्ट)

१५६. वही (असंख्यात वर्ष की आयु वाला संज्ञी-मनुष्य) (यौगलिक) अपनी जघन्य काल की स्थिति में उत्पन्न मनुष्य-यौगिलक नागकुमारों में उपपन्न होता है, उसके तीनों गमक असुरकुमारों में उपपद्यमान की भांति निरवशेष वक्तव्य हैं। (भ. २४/१३७)

(सातवां, आठवां और नवां गमक : उत्कृष्ट और औघिक, उत्कृष्ट और जघन्य, उत्कृष्ट और उत्कृष्ट)

१५७. वही (असंख्यात वर्ष की आयु वाला संज्ञी-मनुष्य) (यौगलिक) अपनी उत्कृष्ट काल की स्थिति में उपपन्न मनुष्य-यौगलिक नागकुमारों में उपपन्न होता है। उसके तीनों (सातवां, आठवां और नवमां) गमक उत्कृष्ट काल की स्थिति वाले संज्ञी-मनुष्य के असुरकुमारों में उपपद्यमान की भांति वक्तव्य है (भ. २४/१३८), केवल इतना विशेष है—नागकुमार की स्थिति और कायसंवेध ज्ञातव्य हैं। शेष पूर्ववत्।

उन्नीसवां आलापक : नागकुमार में संख्यात वर्ष की आयु वाले पर्याप्त-संज्ञी-मनुष्यों का उपपात आदि

१५८. यदि संख्याात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-मनुष्यों से नागकुमारों में उपपन्न होते हैं तो क्या--संख्यात वर्ष की आयु वाले पर्याप्त-संज्ञी-मनुष्यों से उपपन्न होते हैं? संख्यात वर्ष की आयु वाले अपर्याप्त-संज्ञी-मनुष्यों से उपपन्न होते हैं?

गौतम! संख्यात वर्ष की आयु वाला पर्याप्त-संज्ञी-मनुष्यों से उपपन्न होते हैं, संख्यात वर्ष की आयु वाले अपर्याप्त-संज्ञी-मनुष्यों से उपपन्न नहीं होते।

(पहले से नवें गमक तक)

१५९. भन्ते! संख्यात वर्ष की आयु वाले पर्याप्त-संज्ञी-मनुष्य, जो नागकुमारों (देवों) में उपपन्न होने योग्य है, भन्ते! वह जीव कितने काल की स्थिति वाले नागकुमारों में उपपन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः दस-हजार-वर्ष की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः कुछ-अंश-कम-दो-पल्योपम की स्थिति वाले नागकुमारों में उपपन्न होता है। इसी प्रकार असुरकुमारों में उपपद्यमान की भांति वही प्राप्ति नौ गमकों में निरवशेष वक्तव्य है (भ. २४/१३९-१४१), केवल इतना विशेष है—नागकुमारों की स्थिति और कायसंवेध ज्ञातव्य हैं।

१६०. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

चौथा-ग्यारहवां उद्देशक

बीसवां आलापक : सुपर्णकुमार से स्तनितकुमार का अधिकार

१६१. सुवर्णकुमार आदि स्तनितकुमार तक के आठ उद्देशक वैसे ही वक्तव्य हैं, जैसे नागकुमार की निरवशेष वक्तव्यता।

१६२. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

बारहवां उद्देशक

पृथ्वीकाय का अधिकार

१६३. पृथ्वीकायिक-जीव कहां से उत्पन्न होते हैं—क्या नैरयिकों से उत्पन्न होते हैं? तिर्यग्योनिकों, मनुष्यों और देवों से उत्पन्न होते हैं?

गौतम! पृथ्वीकायिक नैरयिकों से उत्पन्न नहीं होते, तिर्यग्योनिकों, मनुष्यों और देवों से उत्पन्न होते हैं।

१६४. यदि तिर्यग्योनिकों से उत्पन्न होते हैं तो क्या—एकेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों से उत्पन्न होते हैं? इस प्रकार अवक्रांति-पद (**पण्णवण्णा,** ६/८३) उपपात की भांति वक्तव्यता यावत्—

१६५. यदि बादर-पृथ्वीकायिक-एकेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों से उत्पन्न होते हैं तो क्या—-पर्याप्त-बादर-पृथ्वीकायिक-एकेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों से उत्पन्न होते हैं? अपर्याप्त-बादर--पृथ्वीकायिक-एकेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों से उत्पन्न होते हैं?

गौतम! पर्याप्त-बादर-पृथ्वीकायिक-एकेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों से उत्पन्न होते हैं, अपर्याप्त-बादर-पृथ्वीकायिक-एकेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों से भी उत्पन्न होते हैं।

इक्कीसवां आलापक :

पृथ्वीकायिक में पृथ्वीकायिक-जीवों का उपपात-आदि

पहला गमक : औघिक और औघिक

१६६. भन्ते! पृथ्वीकायिक-जीव, जो पृथ्वीकायिक-जीवों में उत्पन्न होने योग्य है भन्ते! वह कितने काल की स्थिति वाले पृथ्वीकायिक-जीवों में उत्पन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः बाईस हजार वर्ष की स्थिति वाले पृथ्वीकायिक-जीवों में उत्पन्न होता है।

१६७. भन्ते! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं....पृच्छा।

गौतम! वे जीव प्रत्येक समय में विरह-रहित असंख्यात उत्पन्न होते हैं। सेवार्त्त-संहनन वाले होते हैं। शरीर की अवगाहना—जघन्यतः अंगुल-का-असंख्यातवां-भाग, उत्कृष्टतः भी अंगुल-का-असंख्यातवां-भाग। संस्थान—मसूर की दाल के संस्थान वाला। लेश्याएं चार, सम्यग्-दृष्टि नहीं होते, मिथ्या-दृष्टि होते हैं, सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि नहीं होते। ज्ञानी नहीं होते, अज्ञानी होते हैं, नियमतः दो अज्ञान वाले होते हैं, मन-योगी नहीं होते, वचन-योगी नहीं होते, काय-योगी होते हैं। उपयोग दोनों ही प्रकार के होते हैं। संज्ञाएं चार। कषाय चार। इन्द्रिय—एक स्पर्शनेन्द्रिय प्रज्ञप्त है। समुद्घात—तीन। वेदना दो प्रकार की होती है। स्त्री-वेद वाले नहीं होते, पुरुष-वेद वाले नहीं होते, नपुंसक-वेद वाले होते हैं। स्थिति—जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त, उत्कृष्टतः बाईस-हजार-वर्ष। प्रशस्त अध्यवसान वाले भी होते हैं, अप्रशस्त अध्यवसान वाले भी होते हैं। अनुबन्ध की स्थिति की भांति वक्तव्यता।

१६८. भन्ते! पृथ्वीकायिक-जीव पुनः पृथ्वीकायिक में उत्पन्न होता है तो कितने काल तक रहता है कितने काल तक गति-आगति करता है?

गौतम! भव की अपेक्षा जघन्यतः दो भव-ग्रहण, उत्कृष्टतः असंख्येय भव-ग्रहण। काल की अपेक्षा जघन्यतः दो अन्तर्मुहूर्त्त, उत्कृष्टतः असंख्येय-काल—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(दूसरा गमक : औघिक और जघन्य)

१६९. वही जघन्य काल की स्थिति वालों में उत्पन्न पृथ्वीकायिक-जीव जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः भी अन्तर्मुहूर्त्त की स्थिति वाले पृथ्वीकायिकों में उत्पन्न होता है। इस प्रकार यह निरवशेष वक्तव्यता है।

(तीसरा गमक : औघिक और उत्कृष्ट)

१७०. वही उत्कृष्ट काल की स्थिति वालों में उत्पन्न पृथ्वीकायिक-जीव जघन्यतः बाईस हजार वर्ष की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः भी बाईस हजार वर्ष की स्थिति वाले पृथ्वीकायिकों में उत्पन्न होता है। शेष पूर्ववत्। यावत् अनुबन्ध तक। केवल इतना विशेष है—जघन्यतः एक अथवा दो अथवा तीन, उत्कृष्टतः संख्येय अथवा असंख्येय उत्पन्न हो सकते हैं। भव की अपेक्षा जघन्यतः दो भव-ग्रहण, उत्कृष्टतः आठ भव-ग्रहण। काल की अपेक्षा जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-बाईस-हजार-वर्ष, उत्कृष्टतः एक-लाख-छिहत्तर-हजार-वर्ष—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(चौथा गमक : जघन्य और औघिक)

१७१. वही अपनी जघन्य काल की स्थिति में उत्पन्न पृथ्वीकायिक-जीव पृथ्वीकायिकों में उत्पन्न होता है। वही प्रथम गमक वक्तव्य है (भ. २४/१६६-१६८), केवल इतना विशेष है—लेश्याएं तीन। स्थिति—जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त, उत्कृष्टतः भी अन्तर्मुहूर्त्त। अप्रशस्त अध्यवसान वाले होते हैं। अनुबन्ध की स्थिति की भांति वक्तव्यता। शेष पूर्ववत्।

(पांचवां गमक : जघन्य और जघन्य)

१७२. वही जघन्य काल की स्थिति वालों में उत्पन्न पृथ्वीकायिक-जीव जघन्य काल की स्थिति वाले पृथ्वीकायिकों में उत्पन्न होता है, वही चतुर्थ गमक की वक्तव्यता कथनीय है। (भ. २४/१७१)

(छट्ठा गमक : जघन्य और उत्कृष्ट)

१७३. वही जघन्य काल की स्थिति वालों में उत्पन्न पृथ्वीकायिक-जीव उत्कृष्ट काल की स्थिति वाले पृथ्वीकायिकों में उत्पन्न होता है, वही वक्तव्यता, केवल इतना विशेष है—जघन्यतः एक अथवा दो अथवा तीन, उत्कृष्टतः संख्येय अथवा असंख्येय उत्पन्न हो सकते हैं। यावत् भव की अपेक्षा जघन्यतः दो भव-ग्रहण, उत्कृष्टतः आठ भव-ग्रहण। काल की अपेक्षा जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-बाईस-हजार-वर्ष, उत्कृष्टतः चार-अन्तर्मुहूर्त्त--अधिक-अट्ठासी-हजार-वर्ष—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(सातवां गमक : उत्कृष्ट और औघिक)

१७४. वही अपनी उत्कृष्ट काल की स्थिति वालों में उत्पन्न पृथ्वीकायिक-जीव उत्कृष्ट काल की स्थिति वाले पृथ्वीकायिकों में उत्पन्न होता है, इसी प्रकार तृतीय गमक के सदृश अविकल रूप से वक्तव्य है, केवल इतना विशेष है—उसकी अपनी स्थिति जघन्यतः बाईस-हजार--वर्ष, उत्कृष्टतः भी बाईस-हजार-वर्ष।

(आठवां गमक : उत्कृष्ट और जघन्य)

१७५. वही उत्कृष्ट काल की स्थिति वालों में उत्पन्न पृथ्वीकायिक-जीव जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त की स्थिति वाले उत्कृष्टतः भी अन्तर्मुहूर्त्त की स्थिति वाले पृथ्वीकायिकों में उत्पन्न होता है। इसी प्रकार जैसा सप्तम गमक में वक्तव्यता यावत् भवादेश तक। काल की अपेक्षा जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-बाईस-हजार-वर्ष, उत्कृष्टतः चार-अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक--अट्ठासी-हजार-वर्ष—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(नवां गमक : उत्कृष्ट और उत्कृष्ट)

१७६. वही उत्कृष्ट काल की स्थिति वालों में उत्पन्न पृथ्वीकायिक-जीव जघन्यतः बाईस--हजार-वर्ष की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः भी बाईस हजार वर्ष की स्थिति वाले पृथ्वीकायिकों में उत्पन्न होता है। वही सप्तम गमक की वक्तव्यता ज्ञातव्य है यावत् भवादेश तक। काल की अपेक्षा जघन्यतः चवालीस-हजार-वर्ष, उत्कृष्टतः एक-लाख-छिहत्तर-हजार-वर्ष—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

बाईसवां आलापक : पृथ्वीकाय में अप्काय का उपपात-आदि

१७७. यदि अप्कायिक-एकेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों से पृथ्वीकायिक-जीवों में उत्पन्न होते हैं तो—क्या सूक्ष्म-अप्कायिकों से उत्पन्न होता है? बादर-अप्कायिकों से उत्पन्न होता है? इस प्रकार चार भेद पृथ्वीकायिक जीवों की भांति कथनीय है। १. अपर्याप्त-सूक्ष्म--अप्कायिक २. पर्याप्त-सूक्ष्म-अपकायिक ३. अपर्याप्त-बादर-अप्कायिक ४. पर्याप्त--बादर-अप्कायिक।

(पहला गमक : औघिक और औघिक)

१७८. भन्ते! अप्कायिक जीव जो पृथ्वीकायिक-जीवों में उत्पन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितने काल की स्थिति वाले पृथ्वीकायिक-जीवों में उत्पन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः बाईस-हजार-वर्ष की स्थिति वाले पृथ्वीकायिकों में उत्पन्न होता है।

(दूसरे से नवें गमक तक)

इसी प्रकार पृथ्वीकायिक के गमक सदृश नौ गमक कथनीय हैं, केवल इतना विशेष है—अप्कायिक-जीव का संस्थान स्तिबुक-बिन्दु होता है। स्थिति—जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त, उत्कृष्टतः सात-हजार-वर्ष। इसी प्रकार अनुबन्ध भी। इसी प्रकार तीनों गमकों के विषयों में भी वक्तव्य है। स्थिति और कायसंवेध—तीसरे, छट्ठे, सातवें, आठवें और नौवें गमकों

में—भव की अपेक्षा जघन्यतः दो भव-ग्रहण, उत्कृष्टतः आठ भव-ग्रहण। शेष चार गमकों (पहला, दूसरा, चौथा और पांचवां) में—जघन्यतः दो भव-ग्रहण, उत्कृष्टतः असंख्येय भव-ग्रहण। तीसरे गमक में काल की अपेक्षा जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-बाईस-हजार-वर्ष, उत्कृष्टतः एक-लाख-सोलह-हजार-वर्ष—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है। छट्ठे गमक में काल की अपेक्षा जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-बाईस-हजार-वर्ष, उत्कृष्टतः चार-अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-अट्ठासी-हजार-वर्ष—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है। सातवें गमक में काल की अपेक्षा जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त- -अधिक-सात-हजार-वर्ष, उत्कृष्टतः एक-लाख-सोलह-हजार-वर्ष—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है। आठवें गमक में काल की अपेक्षा जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-सात-हजार-वर्ष, उत्कृष्टतः चार-अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-अट्ठाईस-हजार-वर्ष—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है। नवें गमक में भव की अपेक्षा जघन्यतः दो भव- ग्रहण करता, उत्कृष्टतः आठ भव-ग्रहण, काल की अपेक्षा जघन्यतः उनतीस- हजार-वर्ष, उत्कृष्टतः एक-लाख-सोलह-हजार-वर्ष—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है। इस प्रकार नौ ही गमकों में अप्कायिक-जीवों की स्थिति ज्ञातव्य है।

तेईसवां आलापक : पृथ्वीकायिक-जीवों में तेजस्कायिक-जीवों का उपपात-आदि

१७९. यदि तेजस्कायिक-एकेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों से पृथ्वीकायिक-जीवों में उत्पन्न होते हैं? तेजस्कायिकों के विषय में भी वही वक्तव्यता, (भ. २४/१७८) केवल इतना विशेष है—नौ गमकों में लेश्याएं तीन, तेजस्कायिक जीवों का संस्थान सूची-कलाप-संस्थान। स्थिति ज्ञातव्य है (जघन्य अन्तर्मुहूर्त्त, उत्कृष्ट तीन रात्री-दिवस।) तृतीय गमक (में काल-संवेध)—काल की अपेक्षा जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-बाईस-हजार-वर्ष, उत्कृष्टतः बारह-रात्री-दिवस-अधिक-अट्ठासी-हजार-वर्ष—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है। इसी प्रकार कायसंवेध यथोचित वक्तव्य है।

चोबीसवां आलापक : पृथ्वीकायिक-जीवों में वायुकायिक-जीवों का उपपात-आदि

१८०. यदि वायुकायिक-एकेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों से पृथ्वीकायिक जीवों में उत्पन्न होते हैं? वायुकायिक-जीवों के तेजस्कायिक-जीवों की भांति नौ गमक वक्तव्य है, केवल इतना विशेष है—वायुकायिक-जीव पताका-संस्थान वाले प्रज्ञप्त हैं। कायसंवेध हजार वर्ष वक्तव्य है। तृतीय गमक में काल की अपेक्षा जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-बाईस-हजार-वर्ष, उत्कृष्टतः एक-लाख-अट्ठाईस-हजार-वर्ष, इसी प्रकार कायसंवेध यथोचित वक्तव्य है।

पच्चीसवां आलापक : पृथ्वीकायिक-जीवों में वनस्पतिकायिक-जीवों का उपपात-आदि

१८१. यदि वनस्पतिकायिक-एकेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों से पृथ्वीकायिक-जीवों में उत्पन्न होते हैं? अप्कायिकों के गमक सदृश वनस्पतिकायिक-जीवों के नौ गमक वक्तव्य है, केवल इतना विशेष है—वनस्पतिकायिक-जीव अनेक प्रकार के संस्थान वाले हैं। शरीरावगाहना प्रथम तीन और अन्तिम तीन गमकों में जघन्यतः अंगुल-का-असंख्यातवां-भाग, उत्कृष्टतः कुछ-

-अधिक-एक-हजार-योजन, मध्य तीन गमक पृथ्वीकायिक-जीवों की भांति वक्तव्य है। कायसंवेध और स्थिति ज्ञातव्य है। तृतीय गमक में काल की अपेक्षा जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त--अधिक-बाईस-हजार-वर्ष, *उत्कृष्टतः एक-लाख-अट्ठाईस-हजार-वर्ष—इतने काल तक रहता* है, इतने काल तक गति-आगति करता है। इसी प्रकार कायसंवेध यथोचित वक्तव्य है।

छब्बीसवां आलापक : पृथ्वीकायिक-जीवों में द्वीन्द्रिय-जीवों का उपपात-आदि

१८२. यदि द्वीन्द्रिय-जीवों से पृथ्वीकायिक-जीवों में उत्पन्न होते हैं तो क्या—पर्याप्त-द्वीन्द्रिय से उत्पन्न होते हैं? अथवा अपर्याप्त-द्वीन्द्रिय से उत्पन्न होते हैं?

गौतम! पर्याप्त-द्वीन्द्रिय से भी उत्पन्न होते हैं, अपर्याप्त-द्वीन्द्रिय से भी उत्पन्न होते हैं।

(पहला गमक)

१८३. भन्ते! द्वीन्द्रिय-जीव जो पृथ्वीकायिक-एकेन्द्रिय-तिर्यग्‌योनिक-जीवों में उत्पन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितने काल की स्थिति वाले पृथ्वीकायिकों के रूप में उत्पन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः बाईस-हजार-वर्ष की स्थिति वाले पृथ्वीकायिक-जीवों में उत्पन्न होता है।

१८४. भन्ते! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं?

गौतम! जघन्यतः एक अथवा दो अथवा तीन, उत्कृष्टतः संख्यात अथवा असंख्यात उत्पन्न होते हैं। सेवार्त्त-संहनन वाले होते हैं। उन जीवों की अवगाहना जघन्यतः अंगुल-का--असंख्यातवां-भाग उत्कृष्टतः बारह योजन। वे हुण्डक-संस्थान वाले होते हैं। लेश्याएं तीन। वे सम्यग्-दृष्टि भी होते हैं, मिथ्या-दृष्टि भी होते हैं, सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि नहीं होते। दो ज्ञान, सम्यग्-दृष्टि की अवस्था में होते हैं, अन्यथा दो अज्ञान नियमतः (मिथ्या-दृष्टि की अवस्था में) होते हैं। मन-योगी नहीं होते, वचन-योगी और काय-योगी भी होते हैं। उपयोग दोनों प्रकार के होते हैं। संज्ञाएं चार। कषाय चार। इन्द्रियां दो प्रज्ञप्त हैं, जैसे—जिह्वा--इन्द्रिय—रसनेन्द्रिय और स्पर्शनेन्द्रिय। समुद्घात—प्रथम तीन। शेष पृथ्वीकायिक जीवों की भांति वक्तव्य है (**भ.** २४/१६७), केवल इतना विशेष है—स्थिति—जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त, उत्कृष्टतः बारह वर्ष। इसी प्रकार अनुबन्ध भी। शेष पूर्ववत्। भव की अपेक्षा जघन्यतः दो भव-ग्रहण, उत्कृष्टतः संख्येय भव-ग्रहण। काल की अपेक्षा जघन्यतः दो अन्तर्मुहूर्त्त, उत्कृष्टतः संख्येय काल—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(दूसरा गमक)

१८५. वही जीव (द्वीन्द्रिय) जघन्य काल की स्थिति वाले पृथ्वीकायिक-जीवों में उत्पन्न होता है—प्रथम गमक की भांति वही सर्व वक्तव्यता।

(तीसरा गमक)

१८६. वही जीव (द्वीन्द्रिय) उत्कृष्ट काल की स्थिति वाले पृथ्वीकायिक-जीवों में उत्पन्न होता है। (इस तृतीय गमक में) वही द्वीन्द्रिय की लब्धि वक्तव्य है, केवल इतना विशेष है—भव की अपेक्षा जघन्यतः दो भव-ग्रहण, उत्कृष्टतः आठ भव-ग्रहण। काल की अपेक्षा

जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-बाईस-हजार-वर्ष, उत्कृष्टतः अड़तालीस-वर्ष-अधिक-अट्ठासी-हजार-वर्ष—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(चौथा, पांचवां और छट्ठा गमक)

१८७. वही अपनी जघन्य काल की स्थिति में उत्पन्न द्वीन्द्रिय-जीव पृथ्वीकायिक में उत्पन्न होता है। उसकी तीनों गमकों (चौथे, पांचवें, छठे) में वही वक्तव्यता, (भ. २४/१८६) केवल इतना विशेष है—ये सात नानात्व (भिन्नत्व) हैं, १. शरीरावगाहना—पृथ्वीकायिक जीवों की भांति वक्तव्य है। २. सम्यग्-दृष्टि नहीं होते, मिथ्या-दृष्टि होते हैं, सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि नहीं होते। ३. नियमतः दो अज्ञान। ४. मन-योगी नहीं होते, वचन-योगी नहीं होते, काय-योगी होते हैं। ५. स्थिति—जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त, उत्कृष्टतः भी अन्तर्मुहूर्त्त ६. अध्यवसान अप्रशस्त होते हैं। ७. अनुबन्ध—स्थिति की भांति वक्तव्य है। कायसंवेध—प्रथम दो गमकों की भांति। तीसरे गमक में उसी प्रकार भव की अपेक्षा आठ भव-ग्रहण। काल की अपेक्षा जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-बाईस-हजार-वर्ष, उत्कृष्टतः चार-अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-अट्ठासी-हजार-वर्ष—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(सातवां, आठवां और नवां गमक)

१८८. वही अपनी उत्कृष्ट काल की स्थिति में उत्पन्न द्वीन्द्रिय-जीव पृथ्वीकायिकों में उत्पन्न होता है। उसके भी तीनों गमक औधिक गमक के समान (सातवां, आठवां और नवमां) वक्तव्य है, केवल इतना विशेष है—तीनों ही गमकों में स्थिति—जघन्यतः बारह वर्ष, उत्कृष्टतः भी बारह वर्ष। इसी प्रकार अनुबंध भी। भव की अपेक्षा जघन्यतः दो भव-ग्रहण, उत्कृष्टतः आठ भव-ग्रहण। काल की अपेक्षा यथोचित वक्तव्य है। यावत् नौवें गमक में जघन्यतः बारह-वर्ष-अधिक-बाईस-हजार-वर्ष, उत्कृष्टतः अड़चालीस-वर्ष-अधिक-अट्ठासी-हजार-वर्ष—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

सत्ताईसवां आलापक : पृथ्वीकायिक-जीवों में तेइन्द्रिय-जीवों का उपपात-आदि

१८९. यदि त्रीन्द्रियों से पृथ्वीकायिक-जीवों में उत्पन्न होते हैं? इसी प्रकार ही नव गमक वक्तव्य हैं, केवल इतना विशेष है—प्रथम तीन गमकों में शरीरावगाहना—जघन्यतः अंगुल-का-असंख्यातवां-भाग, उत्कृष्टतः तीन गव्यूत। इन्द्रियां तीन। स्थिति जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त, उत्कृष्टतः उनपचास-रात्रि-दिवस। तीसरे गमक में काल की अपेक्षा जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-बाईस-हजार-वर्ष, उत्कृष्टतः एक-सौ-छियानवें-रात्रि-दिवस-अधिक-अट्ठासी-हजार-वर्ष—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है। मध्यम तीन (चौथा, पांचवां और छट्ठा) गमक उसी प्रकार वक्तव्य हैं, अंतिम तीन (सातवां, आठवां और नवां) गमक भी उसी प्रकार वक्तव्य हैं, केवल इतना विशेष है—स्थिति—जघन्यतः उनपचास-रात्रि-दिवस, उत्कृष्टतः भी उनपचास-रात्रि-दिवस। कायसंवेध यथोचित वक्तव्य है।

अट्ठाइसवां आलापक : पृथ्वीकायिक-जीवों में चतुरिन्द्रिय-जीवों का उपपात आदि

१९०. यदि चतुरिन्द्रिय-जीवों से पृथ्वीकायिकों-जीवों में उत्पन्न होते हैं? इसी प्रकार चतुरिन्द्रिय के भी नौ गमक वक्तव्य हैं, केवल इतना विशेष है—इन स्थानों में नानात्व (भिन्नत्व) ज्ञातव्य है। शरीरावगाहना—जघन्यतः अंगुल-का-असंख्यातवां-भाग, उत्कृष्टतः चार गव्यूत, स्थिति—जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त, उत्कृष्टतः छह महीना। इसी प्रकार अनुबन्ध भी। चार इन्द्रियां। शेष पूर्ववत्। यावत् नौवें गमक—काल की अपेक्षा जघन्यतः छह-महीने-अधिक-बाईस-हजार-वर्ष, उत्कृष्टतः चौबीस-महीने-अधिक-अट्ठासी-हजार-वर्ष—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

१९१. यदि पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों से पथ्वीकायिक-जीवों में उत्पन्न होते हैं तो क्या—संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों से उत्पन्न होते हैं? अथवा असंज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों से उत्पन्न होते हैं?

गौतम! संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों से भी उत्पन्न होते हैं, असंज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों से भी उत्पन्न होते हैं।

१९२. यदि असंज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों से पृथ्वीकायिक-जीवों में उत्पन्न होते हैं तो क्या—जलचर-जीवों से उत्पन्न होते हैं यावत् क्या पर्याप्तक-जीवों से उत्पन्न होते हैं? अपर्याप्तक-जीवों से उत्पन्न होते हैं? (भ. २४/४,५)

गौतम! पर्याप्तक-जीवों से भी उत्पन्न होते हैं, अपर्याप्तक-जीवों से भी उत्पन्न होते हैं।

उनतीसवां आलापक : *पृथ्वीकायिक-जीवों में असंज्ञी-तिर्यंच-पंचेन्द्रिय-जीवों* का उपपात-आदि

(पहला गमक : औघिक और औघिक)

१९३. भन्ते! असंज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव जो पृथ्वीकायिक-जीवों में उत्पन्न होने योग्य है, भन्ते! वह जीव कितने काल की स्थिति वाले पृथ्वीकायिक-जीवों में उत्पन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त स्थिति वाले, उत्कृष्टतः बाईस-हजार-वर्ष की स्थिति वाले पृथ्वीकायिकों में उत्पन्न होता है।

१९४. भन्ते! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं? इसी प्रकार जैसे द्वीन्द्रिय के औघिक गमक में लब्धि (प्राप्ति) वैसे ही वक्तव्य है (भ. २४/१८४), केवल इतना विशेष है—शरीरावगाहना—जघन्यतः अंगुल-का-असंख्यातवां-भाग, उत्कृष्टतः एक हजार योजन। इन्द्रियां पांच। स्थिति और अनुबन्ध जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त, उत्कृष्टतः कोटि-पूर्व। शेष पूर्ववत्। भव की अपेक्षा जघन्यतः दो भव-ग्रहण, उत्कृष्टतः आठ भव-ग्रहण। काल की अपेक्षा जघन्यतः दो अन्तर्मुहूर्त्त, उत्कृष्टतः अट्ठासी-हजार-वर्ष-अधिक-चार-कोटि-पूर्व—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(दूसरे से नवें गमक तक)

नौ ही गमकों में कायसंवेध—भव की अपेक्षा जघन्यतः दो भव-ग्रहण, उत्कृष्टतः

आठ भव-ग्रहण। काल की अपेक्षा यथोचित वक्तव्य है। केवल इतना विशेष है–मध्यवर्ती तीनों गमकों में (चौथा, पांचवां और छट्ठा) द्वीन्द्रिय की भांति (भ. २४/१८७)। अन्तिम तीनों गमकों (सातवें, आठवें और नवें) में प्रथम गमक की भांति वक्तव्य है, केवल इतना विशेष है–स्थिति और अनुबंध जघन्यतः कोटि-पूर्व, उत्कृष्टतः भी कोटि-पूर्व। शेष पूर्ववत्। यावत् नौवें गमक में जघन्यतः बाईस-हजार-वर्ष-अधिक-कोटि-पूर्व, उत्कृष्टतः अट्ठासी--हजार-वर्ष-अधिक-चार-कोटि-पूर्व–इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

१९५. (भन्ते!) यदि संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों से पृथ्वीकायिक-जीवों में उत्पन्न होते हैं–तो क्या संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों से उत्पन्न होते हैं? असंख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों से उत्पन्न होते हैं?

गौतम! संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों से उत्पन्न होते हैं, असंख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों से उत्पन्न नहीं होते।

तीसवां आलापक : पृथ्वीकायिक में संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी- तिर्यंच-पंचेन्द्रिय--जीवों का उपपात-आदि

१९६. यदि संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों से उत्पन्न होते हैं तो क्या जलचर-जीवों से उत्पन्न होते हैं.....? शेष असंज्ञी-जीवों की भांति वक्तव्य है यावत्–(भ. २४/१९२,१९३)

(पहला गमक : औघिक और औघिक)

१९७. भन्ते! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं? इस प्रकार जैसे रत्नप्रभा में उपपद्यमान संज्ञी की वक्तव्यता उसी प्रकार यहां वक्तव्य है, इतना विशेष है–(भ. २४/५८-६२) अवगाहना–जघन्यतः अंगुल-का-असंख्यातवां-भाग, उत्कृष्टतः एक हजार योजन। शेष पूर्ववत् यावत् काल की अपेक्षा जघन्यतः दो अन्तर्मुहूर्त्त, उत्कृष्टतः अट्ठासी--हजार-वर्ष-अधिक-चार-कोटि-पूर्व–इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(पहले से नवें गमक तक)

इसी प्रकार कायसंवेध नौ ही गमकों असंज्ञी-जीवों की भांति अविकल रूप से वक्तव्य है। प्रथम तीन गमकों (पहले, दूसरे और तीसरे) में लब्धि रत्नप्रभा में उपपद्यमान संज्ञी--पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों की भांति वक्तव्य है। मध्यम तीनों गमकों (चौथे, पांचवें और छट्ठे) में पूर्ववत्। केवल इतना विशेष है–ये नौ नानात्व हैं–अवगाहना–जघन्यतः अंगुल-का--असंख्यातवां-भाग, उत्कृष्टतः अंगुल-का-असंख्यातवां-भाग। लेश्याएं तीन। मिथ्या-दृष्टि होते हैं। दो अज्ञान होते हैं। काय-योगी होते हैं। समुद्घात तीन। स्थिति–जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त, उत्कृष्टतः भी अन्तर्मुहूर्त्त। अध्यवसान अप्रशस्त होते हैं। अनुबन्ध–स्थिति की भांति वक्तव्य है। शेष पूर्ववत्। अन्तिम तीन गमकों (सातवें, आठवें और नवें) में प्रथम गमक के समान वक्तव्यता। केवल इतना विशेष है–स्थिति और अनुबन्ध जघन्यतः एक

कोटि-पूर्व, उत्कृष्टतः भी एक कोटि-पूर्व। शेष पूर्ववत्।

१९८. भन्ते! यदि मनुष्य से पृथ्वीकायिक-जीवों में उत्पन्न होते हैं तो—क्या संज्ञी-मनुष्यों से उत्पन्न होते हैं? असंज्ञी-मनुष्यों से उत्पन्न होते हैं?

गौतम! संज्ञी-मनुष्यों से उत्पन्न होते हैं, असंज्ञी-मनुष्यों से भी उत्पन्न होते हैं।

इकतीसवां आलापक : पृथ्वीकायिक-जीवों में असंज्ञी-मनुष्यों का उपपात-आदि

(प्रथम तीन गमक)

१९९. भन्ते! असंज्ञी-मनुष्य जो पृथ्वीकायिक-जीवों में उत्पन्न होने योग्य है, भन्ते! वह जीव कितने काल की स्थिति वाले पृथ्वीकायिक-जीवों में उत्पन्न होता है? इस प्रकार जैसे जघन्य काल की स्थिति वाले असंज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव के तीन गमक, वैसे ही असंज्ञी-मनुष्य के भी औघिक तीन गमक (गमक एक, दो, तीन) अविकल रूप में वक्तव्य है। शेष छह गमक वक्तव्य नहीं हैं।

बत्तीसवां आलापक : पृथ्वीकायिक-जीवों में संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-मनुष्यों का उपपात आदि

२००. (भन्ते!) यदि संज्ञी-मनुष्यों से पृथ्वीकायिक-जीवों में उत्पन्न होते हैं तो क्या संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-मनुष्यों से उत्पन्न होते हैं? असंख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी--मनुष्यों से उत्पन्न होते हैं?

गौतम! संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-मनुष्यों से उत्पन्न होते हैं, असंख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-मनुष्यों से उत्पन्न नहीं होते।

२०१. (भन्ते!) यदि संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-मनुष्यों से पृथ्वीकायिक-जीवों में उत्पन्न होते हैं तो—क्या संख्यात वर्ष की आयु वाले पर्याप्त-संज्ञी-मनुष्यों से उत्पन्न होते हैं? संख्यात वर्ष की आयु वाले अपर्याप्त-संज्ञी-मनुष्यों से उत्पन्न होते हैं?

गौतम! संख्यात वर्ष की आयु वाले पर्याप्त-संज्ञी-मनुष्यों से उत्पन्न होते हैं, संख्यात वर्ष की आयु वाले अपर्याप्त-संज्ञी-मनुष्यों से भी उत्पन्न होते हैं। (भ. २४/९३)

(प्रथम तीन गमक)

२०२. भन्ते! संज्ञी-मनुष्य, जो पृथ्वीकायिक-जीवों में उत्पन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितने काल की स्थिति वाले पृथ्वीकायिक-जीवों में उत्पन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः बाईस-हजार-वर्ष की स्थिति वाले पृथ्वीकायिक-जीवों में उत्पन्न होता है।

२०३. भन्ते! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं? इस प्रकार रत्नप्रभा में उपपद्यमान संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों की भांति तीनों ही गमकों (पहले, दूसरे और तीसरे) में लब्धि वक्तव्य है, केवल इतना विशेष है—अवगाहना—जघन्यतः अंगुल-का-असंख्यातवां--भाग, उत्कृष्टतः पांच सौ धनुष। स्थिति—जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त, उत्कृष्टतः कोटि-पूर्व। इसी प्रकार अनुबन्ध भी। कायसंवेध नौ ही गमकों में संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों के समान वक्तव्य है।

(चौथे से छट्ठे गमक तक)

मध्यम तीनों ही गमकों (चौथे, पांचवें और छट्ठे) में लब्धि संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों के समान वक्तव्य है। शेष पूर्ववत् अविकल रूप से वक्तव्य है।

(सातवें से नवें गमक तक)

अन्तिम तीन गमक (सातवां, आठवां और नौवां) इसी के औघिक गमकों की भांति वक्तव्य हैं, केवल इतना विशेष है—अवगाहना जघन्यतः पांच सौ धनुष, उत्कृष्टतः भी पांच सौ धनुष। स्थिति और अनुबन्ध जघन्यतः कोटि-पूर्व, उत्कृष्टतः भी कोटि-पूर्व। शेष पूर्ववत्।

तेतीसवां आलापक : पृथ्वीकायिक-जीवों में भवनपति-देवों का उपपात-आदि

२०४. (भन्ते!) यदि देवों से पृथ्वीकायिक-जीवों में उत्पन्न होते हैं तो—क्या भवनपति-देवों से उत्पन्न होते हैं,? वाणमन्तर-देवों से उत्पन्न होते हैं, ज्योतिष्क-देवों से उत्पन्न होते हैं, वैमानिक-देवों से उत्पन्न होते हैं?

गौतम! भवनपति-देवों से भी उत्पन्न होते हैं यावत् वैमानिक-देवों से भी उत्पन्न होते हैं।

२०५. (भन्ते!) यदि भवनपति-देवों से उत्पन्न होते हैं तो क्या—असुरकुमार-भवनपति-देवों से उत्पन्न होते हैं यावत् स्तनितकुमार-भवनपति-देवों से उत्पन्न होते हैं?

गौतम! असुरकुमार-भवनपति-देवों से उत्पन्न होते हैं यावत् स्तनितकुमार-भवनपति-देवों उत्पन्न होते हैं।

(पहला गमक : औघिक और औघिक)

२०६. भन्ते! असुरकुमार-देव जो पृथ्वीकायिक-जीवों में उत्पन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितने काल की स्थिति वाले पृथ्वीकायिकों में उत्पन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः बाईस-हजार-वर्ष की स्थिति वाले पृथ्वीकायिकों में उत्पन्न होता है।

२०७. भन्ते! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं?

गौतम! जघन्यतः एक अथवा दो अथवा तीन, उत्कृष्टतः संख्यात अथवा असंख्यात उत्पन्न होते हैं।

२०८. भन्ते! उन जीवों के शरीर किस संहनन वाले प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! छह संहननों में से एक भी संहनन नहीं होता यावत् परिणमन करते हैं (**भ.** १/२४५,२२४)।

२०९. भन्ते! उन जीवों के शरीर की अवगाहना कितनी बड़ी प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! शरीर की अवगाहना दो प्रकार की प्रज्ञप्त हैं, जैसे—भवधारणीय (जन्म से प्राप्त) और उत्तर-वैक्रिय (वैक्रिय-लब्धि से प्राप्त)। जो भवधारणीय है वह जघन्यतः अंगुल-का-असंख्यातवां-भाग, उत्कृष्टतः सात रत्नी। जो उत्तरवैक्रिय है वह जघन्यतः अंगुल-का-संख्यातवां भाग, उत्कृष्टतः एक लाख योजन।

२१०. भन्ते! उन जीवों के शरीर किस संस्थान वाले प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! शरीर दो प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—भवधारणीय शरीर (जन्म से प्राप्त) और उत्तरवैक्रिय शरीर (बाद में वैक्रिय लब्धि से प्राप्त)। जो भवधारणीय शरीर हैं वे समचतुरस्र-संस्थान वाले प्रज्ञप्त हैं। जो उत्तरवैक्रिय शरीर हैं वे अनेक प्रकार के संस्थान वाले प्रज्ञप्त हैं। लेश्याएं चार। दृष्टि तीनों प्रकार की। तीन ज्ञान नियमतः, तीन अज्ञान की भजना। तीनों प्रकार के योग, दोनों प्रकार के उपयोग—साकार-उपयोग और अनाकार-उपयोग)। संज्ञाएं चार। कषाय चार। इन्द्रियां पांच। समुद्घात पांच। दोनों प्रकार की वेदना। स्त्री-वेदक और पुरुष-वेदक होते हैं, नपुंसक-वेदक नहीं होते। स्थिति—जघन्यतः दस-हजार-वर्ष, उत्कृष्टतः कुछ-अधिक-एक-सागरोपम। अध्यवसान असंख्य होते हैं। वे प्रशस्त भी होते हैं और अप्रशस्त भी। अनुबन्ध—स्थिति की भांति वक्तव्य है। भव की अपेक्षा दो भव-ग्रहण। काल की अपेक्षा जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त-अधिक-दस-हजार-वर्ष, उत्कृष्टतः बाईस-हजार-वर्ष-अधिक-सातिरेक-एक-सागरोपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(दूसरे से नवें गमक तक)

इसी प्रकार नौ ही गमक ज्ञातव्य है, केवल इतना विशेष है—मध्यम तीन गमक और अन्तिम तीन गमकों में असुरकुमार-देवों की स्थिति का भेद ज्ञातव्य है। शेष औधिक गमक की तरह लब्धि (प्राप्ति) और कायसंवेध वक्तव्य। सर्वत्र भव की अपेक्षा से दो भव-ग्रहण यावत् नवें गमक तक। काल की अपेक्षा से जघन्यतः बाईस-हजार-वर्ष-अधिक-सातिरेक-एक-सागरोपम, उत्कृष्टतः भी बाईस-हजार-वर्ष-अधिक-सातिरेक-एक-सागरोपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

२११. भन्ते! नागकुमार-देव जो पृथ्वीकायिकों-जीवों में उत्पन्न होने योग्य है? इसी प्रकार वक्तव्यता यावत् (भ. २४/२०६-२१०) भव की अपेक्षा तक, केवल इतना विशेष है—स्थिति—जघन्यतः दस-हजार-वर्ष, उत्कृष्टतः कुछ-अंश-कम-दो-पल्योपम। इसी प्रकार अनुबन्ध भी। काल की अपेक्षा जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त-अधिक-दस-हजार-वर्ष, उत्कृष्टतः बाईस-हजार-वर्ष-अधिक-देशोन-दो-पल्योपम। इसी प्रकार नौ ही गमक असुरकुमार-देवों के गमक के समान वक्तव्य है, केवल इतना विशेष है—स्थिति और काल की अपेक्षा जानना चाहिए। इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमार तक।

चौतीसवां आलापक : पृथ्वीकायिक-जीवों में वाणमन्तर-देवों का उपपात-आदि

२१२. (भन्ते!) यदि वाणमन्तर-देवों से पृथ्वीकायिक-जीवों में उत्पन्न होते हैं तो क्या—पिशाच-वाणमन्तर-देवों से उत्पन्न होते हैं यावत् गन्धर्व-वाणमन्तर-देवों से उत्पन्न होते हैं?

गौतम! पिशाच-वाणमन्तर-देवों से उत्पन्न होते हैं यावत् गन्धर्व-वाणमन्तर-देवों से उत्पन्न होते हैं।

२१३. भन्ते! वाणमन्तर-देव जो पृथ्वीकायिक-जीवों में उत्पन्न होने योग्य है? इनके भी

असुरकुमार के गमक-सदृश नौ गमक वक्तव्य हैं (भ. २४/२०६-२१०), इतना विशेष है—स्थिति और काल की अपेक्षा जाननी चाहिए। स्थिति जघन्यतः दस-हजार-वर्ष, उत्कृष्टतः एक पल्योपम। शेष पूर्ववत्।

पैंतीसवां आलापक : पृथ्वीकायिक-जीवों में ज्योतिष्क-देवों का उपपात-आदि

२१४. (भन्ते!) यदि ज्योतिष्क-देवों से पृथ्वीकायिक-जीवों में उत्पन्न होते हैं तो क्या चन्द्रविमान-ज्योतिष्क-देवों से उत्पन्न होते हैं यावत् ताराविमान-ज्योतिष्क-देवों से उत्पन्न होते हैं?

गौतम! चन्द्रविमान-ज्योतिष्क-देवों से उत्पन्न होते हैं यावत् ताराविमान-ज्योतिष्क-देवों से उत्पन्न होते हैं।

२१५. भन्ते! ज्योतिष्क-देव जो पृथ्वीकायिक-जीवों में उत्पन्न होने योग्य है? लब्धि असुरकुमार की भांति वक्तव्य है, केवल इतना विशेष है—एक तेजो-लेश्या प्रज्ञप्त है, ज्ञान तीन, अज्ञान नियमतः तीन। स्थिति—जघन्यतः एक-पल्योपम-का-आठवां-भाग, उत्कृष्टतः एक-लाख-वर्ष-अधिक-एक-पल्योपम। इसी प्रकार अनुबन्ध भी। (कायसंवेध) काल की अपेक्षा जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त-अधिक-पल्योपम-का-आठवां-भाग, उत्कृष्टतः एक-लाख-बाईस-हजार-वर्ष-अधिक-एक-पल्योपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है। इसी प्रकार शेष आठ गमक वक्तव्य है, केवल इतना विशेष है—स्थिति और काल की अपेक्षा ज्ञातव्य है।

छत्तीसवां आलापक : पृथ्वीकायिक-जीवों में वैमानिक-देवों का उपपात-आदि

२१६. (भन्ते!) यदि वैमानिक-देवों से पृथ्वीकायिक-जीवों में उत्पन्न होते हैं तो क्या—कल्पवासी-वैमानिक-देवों से उत्पन्न होते हैं? कल्पातीत-वैमानिक-देवों से उत्पन्न होते हैं?

गौतम! कल्पवासी-वैमानिक-देवों से उत्पन्न होते हैं, कल्पातीत-वैमानिक-देवों से उत्पन्न नहीं होते।

२१७. (भन्ते!) यदि कल्पवासी-वैमानिक-देवों से उत्पन्न होते हैं तो क्या—सौधर्म-कल्पवासी-वैमानिक-देवों से उत्पन्न होते हैं यावत् अच्युत-कल्पवासी-वैमानिक-देवों से उत्पन्न होते हैं।

गौतम! सौधर्म-कल्पवासी-वैमानिक-देवों से उत्पन्न होते हैं, ईशान-कल्पवासी-वैमानिक-देवों से उत्पन्न होते हैं, सनत्कुमार-देवों से उत्पन्न नहीं होते यावत् अच्युत-कल्पवासी-वैमानिक-देवों से उत्पन्न नहीं होते।

पृथ्वीकायिक-जीवों में सौधर्मवासी-देवों का उपपात-आदि

(औघिक और औघिक)

२१८. भन्ते! सौधर्मवासी-देव, जो पृथ्वीकायिक-जीवों के रूप में उत्पन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितने काल की स्थिति वाले पृथ्वीकायिक-जीव में उत्पन्न होता है? (पृच्छा) इस प्रकार

ज्योतिष्क-देव (भ. २४/२१५) की भांति वक्तव्य है। इतना विशेष है—स्थिति और अनुबन्ध जघन्यतः एक पल्योपम, उत्कृष्टतः दो सागरोपम। काल की अपेक्षा जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त-अधिक-एक-पल्योपम, उत्कृष्टतः बाईस-हजार-वर्ष-अधिक-दो-सागरोपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है। इसी प्रकार शेष आठ गमक वक्तव्य है, केवल इतना विशेष है—स्थिति और काल की अपेक्षा जाननी चाहिए।

पृथ्वीकायिक-जीवों में ईशानवासी-देवों का उपपात-आदि

२१९. भन्ते! ईशानवासी-देव, जो पृथ्वीकायिक-जीवों में उत्पन्न होने योग्य है? (......पृच्छा) इसी प्रकार ईशानवासी-देव के नौ गमक वक्तव्य हैं, केवल इतना विशेष है—स्थिति और अनुबन्ध जघन्यतः कुछ-अधिक-एक-पल्योपम, उत्कृष्टतः कुछ-अधिक-दो-सागरोपम। शेष पूर्ववत्।

२२०. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है। इस प्रकार भगवान् गौतम यावत् संयम और तप से अपने आपको भावित करते हुए विहरण करने लगे। (भ. १/५१)

तेरहवां उद्देशक

सैंतीसवां आलापक : अप्कायिक-जीवों में पृथ्वीकायिक-जीवों का उपपात-आदि

२२१. भन्ते! अप्कायिक-जीव कहां से उत्पन्न होते हैं? इसी प्रकार पृथ्वीकायिक-जीवों के उद्देशक की भांति वक्तव्यता यावत्—(भ. २४/१६३-१६५)

२२२. भन्ते! पृथ्वीकायिक-जीव जो अप्कायिक-जीवों में उत्पन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितने काल की स्थिति वाले अप्कायिक-जीवों में उत्पन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः सात-हजार-वर्ष की स्थिति वाले अप्कायिक-जीवों में उत्पन्न होता है। इस प्रकार पृथ्वीकायिक-जीवों के समान वक्तव्य है, केवल इतना विशेष है—स्थिति और कायसंवेध ज्ञातव्य है। शेष पूर्ववत्।

२२३. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

चौदहवां उद्देशक

अड़तीसवां आलापक : तेजस्कायिक-जीवों में जीवों का उपपात-आदि

२२४. भन्ते! तेजस्कायिक-जीव कहां से उत्पन्न होते हैं? इसी प्रकार पृथ्वीकायिक-जीवों के उद्देशक के समान प्रस्तुत उद्देशक वक्तव्य है, केवल इतना विशेष है—स्थिति और कायसंवेध जानना चाहिए। तेजस्कायिक-जीव में देवता उत्पन्न नहीं होते। शेष पूर्ववत्।

२२५. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है, इस प्रकार भगवान् गौतम यावत् संयम और तप से अपने आप को भावित करते हुए विहरण करने लगे।

पन्द्रहवां उद्देशक

उनचालीसवां आलापक : वायुकायिक-जीवों में जीवों का उपपात-आदि

२२६. भन्ते! वायुकायिक-जीव कहां से उत्पन्न होते हैं? इस प्रकार तेजस्कायिक-जीवों की भांति वक्तव्यता, केवल इतना विशेष है—स्थिति और कायसंवेध जानना चाहिए।

२२७. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

सोलहवां उद्देशक

चालीसवां आलापक : वनस्पतिकायिक-जीवों में जीवों का उपपात-आदि

२२८. भन्ते! वनस्पतिकायिक-जीव कहां से उत्पन्न होते हैं? इसी प्रकार पृथ्वीकायिक-जीवों के उद्देशक की भांति वक्तव्यता, केवल इतना विशेष है—जब वनस्पतिकायिक जीव वनस्पतिकायिकों में उत्पन्न होता है तब प्रथम, द्वितीय, चतुर्थ और पञ्चम गमकों में परिमाण (इस प्रकार बतलाना चाहिए)—प्रतिसमय विरह-रहित (लगातार) अनन्त जीव उत्पन्न होते हैं। भव की अपेक्षा जघन्यतः दो भव-ग्रहण, उत्कृष्टतः अनन्त भव-ग्रहण। काल की अपेक्षा जघन्यतः दो अन्तर्मुहूर्त्त, उत्कृष्टतः अनन्त काल—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है। शेष पांच गमकों (तीसरे, छट्ठे, सातवें, आठवें और नौवें) में उत्कृष्टतः आठ भव-ग्रहण (**भ.** २४/१७०), केवल इतना विशेष है—स्थिति और कायसंवेध जानना चाहिए।

२२९. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

सत्रहवां उद्देशक

इकतालीसवां आलापक : द्वीन्द्रिय-जीवों में जीवों का उपपात-आदि

२३०. भन्ते! द्वीन्द्रिय-जीव कहां से उत्पन्न होते हैं? यावत् (**पण्णवणा,** ६।८२-८६)

२३१. भन्ते! पृथ्वीकायिक-जीव, जो द्वीन्द्रिय-जीवों में उत्पन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितने काल की स्थिति वाले द्वीन्द्रिय-जीवों में उत्पन्न होता है? पृथ्वीकायिक-जीव के पृथ्वीकायिक-जीवों में उत्पन्न होने पर जो लब्धि (प्राप्ति) (**भ.** २४/१६६,१६७) बतलाई गई, वही वक्तव्य है यावत् काल की अपेक्षा जघन्यतः दो अन्तर्मुहूर्त्त, उत्कृष्टतः संख्येय भव-ग्रहण—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है। इसी प्रकार उन्हीं चार गमकों में (प्रथम, द्वितीय, चतुर्थ और पंचम) वही कायसंवेध (जघन्यतः दो, उत्कृष्टतः संख्येय भव-ग्रहण), शेष पांच गमकों (तीसरे, छट्ठे, सातवें, आठवें, नवें) में उसी प्रकार आठ भव-ग्रहण (जघन्यतः दो भव, उत्कृष्टतः आठ भव) इसी प्रकार यावत् चतुरिन्द्रिय तक चार गमकों में संख्येय भव, पांच गमकों में आठ भव। पञ्चेन्द्रिय--तिर्यग्योनिक-जीव तथा मनुष्यों से द्वीन्द्रिय में उत्पन्न होने पर उसी प्रकार आठ भव (नौ ही गमकों में)। देव द्वीन्द्रिय में उत्पन्न नहीं होते। स्थिति और कायसंवेध जानना चाहिए।

२३२. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

अट्ठारहवां उद्देशक

बयालीसवां आलापक : त्रीन्द्रिय-जीवों में जीवों का उपपात-आदि

२३३. भन्ते! त्रीन्द्रिय-जीव कहां से उत्पन्न होते हैं? इसी प्रकार जैसे द्वीन्द्रिय-जीवों के उद्देशक की भांति वक्तव्यता, केवल इतना विशेष है—स्थिति और कायसंवेध जानना चाहिए। तेजस्कायिक-जीव तृतीय गमक के साथ कायसंवेध इस प्रकार वक्तव्य है—उत्कृष्टतः दो-

-सौ-आठ-रात्रि-दिवस, (त्रीन्द्रिय-जीव के रूप में उत्पन्न होने वाले) द्वीन्द्रिय-जीव के विषय में तृतीय गमक में कायसंवेध इस प्रकार—उत्कृष्टतः एक-सौ-छियानवें-रात्रि-दिवस-अधिक-अड़चालीस-वर्ष, (त्रीन्द्रिय-जीव के रूप में उत्पन्न होने वाले) त्रीन्द्रिय-जीव के विषय में तृतीय गमक में कायसंवेध इस प्रकार—उत्कृष्टतः तीन-सौ-बानवें-रात्रि-दिवस, इसी प्रकार सर्वत्र कायसंवेध जानना चाहिए (चतुरिन्द्रिय से लेकर) यावत् संज्ञी-मनुष्य तक।

२३४. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

उन्नीसवां उद्देशक

तयालीसवां आलापक : चतुरिन्द्रिय में जीवों का उपपात-आदि

२३५. भन्ते! चतुरिन्द्रिय-जीव कहां से उत्पन्न होते हैं? जैसे त्रीन्द्रिय-जीवों के विषय में उद्देशक है वैसे ही चतुरिन्द्रिय-जीवों के उद्देशक ज्ञातव्य है, केवल इतना विशेष है—स्थिति और कायसंवेध जानना चाहिए।

२३६. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

बीसवां उद्देशक

तिर्यंच-पंचेन्द्रिय-अधिकार

२३७. भन्ते! पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव कहां से उत्पन्न होते हैं—क्या नैरयिक-जीवों से उत्पन्न होते हैं? तिर्यग्योनिक-जीवों से उत्पन्न होते हैं? मनुष्यों से उत्पन्न होते हैं? देवों से उत्पन्न होते हैं?

गौतम! पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव नैरयिक-जीवों से उत्पन्न होते हैं, तिर्यग्योनिक-जीवों से उत्पन्न होते हैं, मनुष्यों से भी उत्पन्न होते हैं, देवों से भी उत्पन्न होते हैं।

२३८. भन्ते! यदि पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव नैरयिक-जीवों से उत्पन्न होते हैं तो—क्या रत्नप्रभा-पृथ्वी के नैरयिकों से उत्पन्न होते हैं यावत् अधःसप्तमी-पृथ्वी के नैरयिक-जीवों से उत्पन्न होते हैं?

गौतम! पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव रत्नप्रभा-पृथ्वी के नैरयिक-जीवों से उत्पन्न होते हैं यावत् अधःसप्तमी-पृथ्वी के नैरयिक-जीवों से भी उत्पन्न होते हैं।

चमालीसवां आलापक : तिर्यञ्च-पञ्चेन्द्रिय में प्रथम नरक के जीवों का उपपात-आदि

(पहला गमक : औघिक और औघिक)

२३९. भन्ते! रत्नप्रभा-पृथ्वी के नैरयिक-जीव, जो पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों में उत्पन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितने काल की स्थिति वाले पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों में उत्पन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः कोटि-पूर्व आयु वाल पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों में उत्पन्न होता है।

२४०. भन्ते! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं? इस प्रकार (कायिक जीव के रूप में) असुरकुमार-देवों की भांति वक्तव्यता (भ. २४/२०७-२०८), केवल इतना विशेष

है—संहनन के पुद्गल अनिष्ट, अकान्त यावत् परिणत होते हैं। अवगाहना दो प्रकार की प्रज्ञप्त है, जैसे—भवधारणीय-शरीर की अवगाहना—जीवन-पर्यन्त रहने वाले शरीर की अवगाहना और उत्तरवैक्रिय-शरीर की अवगाहना—पूर्ववैक्रिय-शरीर की अपेक्षा उत्तरकाल में निर्मित वैक्रिय-शरीर की अवगाहना। जो भवधारणीय-शरीर की अवगाहना है वह जघन्यतः अंगुल-का-असंख्यातवां-भाग, उत्कृष्टतः तीन-रत्नी-छह-अंगुल-अधिक-सात-धनुष्य, जो उत्तरवैक्रिय-शरीर की अवगाहना है, वह जघन्यतः अंगुल-का-संख्यातवां-भाग, उत्कृष्टतः ढाई-रत्नी-अधिक-पन्द्रह-धनुष्य।

२४१. भन्ते! उन जीवों के शरीर किस संस्थान वाले प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! शरीर के दो प्रकार प्रज्ञप्त हैं, जैसे—१. भवधारणीय-शरीर २. उत्तरवैक्रिय-शरीर। जो भवधारणीय-शरीर हैं वे हुंड-संस्थान वाले प्रज्ञप्त हैं। जो उत्तरवैक्रिय-शरीर हैं, वे भी हुंड-संस्थान वाले प्रज्ञप्त हैं। लेश्या एक कापोत-लेश्या प्रज्ञप्त है। समुद्घात चार। वे स्त्री-वेदक नहीं होते, पुरुष-वेदक नहीं होते, नपुंसक-वेदक होते हैं। स्थिति—जघन्यतः दस-हजार-वर्ष, उत्कृष्टतः एक सागरोपम। इसी प्रकार अनुबन्ध भी। शेष पूर्ववत्। भव की अपेक्षा जघन्यतः दो भव-ग्रहण, उत्कृष्टतः आठ भव-ग्रहण। काल की अपेक्षा जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-दस-हजार-वर्ष, उत्कृष्टतः चार-कोटि-पूर्व-अधिक-चार-सागरोपम—इतने काल तक रहते हैं, इतने काल तक गति-आगति करते हैं।[1]

(दूसरा गमक : जघन्य और औधिक)

२४२. वही जघन्य काल की स्थिति वाले में उत्पन्न रत्नप्रभा-पृथ्वी का नैरयिक जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः भी अन्तर्मुहूर्त्त की स्थिति वाले पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों में उत्पन्न होता है (**भ.** २४/२४०,२४१)। केवल इतना विशेष है—काल की अपेक्षा जघन्यतः पूर्ववत्। उत्कृष्टतः चार-अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-चार-सागरोपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(तीसरे से नवें गमक तक)

इसी प्रकार शेष सात गमक वक्तव्य हैं, नैरयिक-उद्देशक की भांति संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-जीवों में उत्पन्न होने वाले जीवों के। नैरयिकों के तीन मध्यम गमक (चौथे, पांचवें और छट्ठे) और तीन अन्तिम गमक (सातवें, आठवें और नवें) में स्थिति का नानात्व होता है। शेष पूर्ववत्। सर्वत्र स्थिति और कायसंवेध ज्ञातव्य है।

पैंतालीसवां आलापक : तिर्यञ्च-पंचेन्द्रिय-जीवों में दूसरी से छट्ठी नरक के नैरयिकों का उपपात-आदि

२४३. भन्ते! शर्कराप्रभा-पृथ्वी का नैरयिक, जो पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों में उत्पन्न होने योग्य है? इसी प्रकार जैसे रत्नप्रभा-पृथ्वी के नौ गमक वैसे ही शर्कराप्रभा-पृथ्वी के भी नव गमक वक्तव्य हैं (**भ.** २४/२३९-२४९), केवल इतना विशेष है—शरीरावगाहना-अवगाहन-संस्थान की भांति (**पण्णवणा**, पद २१) सात-धनुष्य-तीन-हाथ-(रत्नी)-छह-अंगुल, उत्कृष्ट अवगाहना प्रथम नरक में है इससे आगे दुगुनी-दुगुनी अवगाहना भवधारणीय

में बतलानी चाहिए। उत्तरवैक्रिय में भवधारणीय से दुगुनी बतलानी चाहिए। सातवीं नरक में उत्तरवैक्रिय की उत्कृष्ट अवगाहना एक हजार धनुष्य है। तीन ज्ञान अथवा तीन अज्ञान नियमतः होते हैं। स्थिति और अनुबन्ध पूर्ववत् वक्तव्य है। इसी प्रकार नौ ही गमक यथोचित वक्तव्य हैं। इसी प्रकार छट्ठी पृथ्वी तक, केवल इतना विशेष है—अवगाहना, लेश्या, स्थिति, अनुबन्ध और कायसंवेध ज्ञातव्य है।

छियालीसवां आलापक : तिर्यंच-पंचेन्द्रिय-जीवों में सातवीं नरक के नैरयिकों का उपपात-आदि

२४४. भन्ते! अधःसप्तमी-पृथ्वी का नैरयिक जो पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक जीवों में उत्पन्न होने योग्य है? इसी प्रकार नौ गमक वक्तव्य हैं (भ. २४/२४३), केवल इतना विशेष है—अवगाहना, लेश्या, स्थिति और अनुबन्ध ज्ञातव्य है। कायसंवेध—भव की अपेक्षा जघन्यतः दो भव-ग्रहण, उत्कृष्टतः छह भव-ग्रहण। काल की अपेक्षा जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-बाईस-सागरोपम, उत्कृष्टतः तीन-कोटि-पूर्व-अधिक-छासठ-सागरोपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है। प्रथम छह गमकों में (काय-संवेध की अपेक्षा से) जघन्यतः दो भव-ग्रहण, उत्कृष्टतः छह भव-ग्रहण करता है। अन्तिम तीन गमकों में जघन्यतः दो भव-ग्रहण, उत्कृष्टतः चार भव-ग्रहण। लब्धि नौ ही गमकों में प्रथम गमक की भांति वक्तव्य है, केवल इतना विशेष है—स्थिति विशेष और कालादेश—

द्वितीय गमक में जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-बाईस-सागरोपम, उत्कृष्टतः तीन-अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-छासठ-सागरोपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

तीसरे गमक में जघन्यतः कोटि-पूर्व-अधिक-बाईस-सागरोपम, उत्कृष्टतः तीन-कोटि-पूर्व-अधिक-छासठ-सागरोपम......।

चौथे गमक में जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-बाईस-सागरोपम, उत्कृष्टतः तीन-कोटि-पूर्व-अधिक-छासठ-सागरोपम.....।

पांचवें गमक में जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-बाईस-सागरोपम, उत्कृष्टतः तीन-अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-छासठ-सागरोपम.....।

छट्ठे गमक में जघन्यतः एक-कोटि-पूर्व-अधिक-बाईस-सागरोपम, उत्कृष्टतः तीन-कोटि-पूर्व-अधिक-छासठ-सागरोपम.....।

सातवें गमक में जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-तेतीस-सागरोपम, उत्कृष्टतः दो कोटि-पूर्व-अधिक-छासठ-सागरोपम.....।

आठवें गमक में जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-तेतीस-सागरोपम, उत्कृष्टतः दो-अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-छासठ-सागरोपम.....।

नवमें गमक में जघन्यतः एक-कोटि-पूर्व-अधिक-तेतीस-सागरोपम, उत्कृष्टतः दो-कोटि-पूर्व-अधिक-छासठ-सागरोपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

२४५. यदि तिर्यग्योनिक-जीवों से उत्पन्न होते हैं तो—क्या एकेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों से उत्पन्न होते हैं? इस प्रकार उपपात पृथ्वीकायिक-उद्देशक की भांति वक्तव्य है यावत्—(भ. २४/१६४,१६५)

सैंतालीसवां आलापक : तिर्यंच-पंचेन्द्रिय-जीवों में पृथ्वीकायिक-जीवों का उपपात-आदि

२४६. भन्ते! पृथ्वीकायिक-जीव, जो पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव के रूप में उत्पन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितने काल की स्थिति वाले पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों में उत्पन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः कोटि-पूर्व आयुष्य वालों में उत्पन्न होता है।

२४७. भन्ते! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं? इस प्रकार परिणाम से लेकर अनुबन्ध तक जो स्वस्थान में (पृथ्वीकायिक-जीवों की पृथ्वीकायिक-जीव के रूप में) वक्तव्यता है (भ. २४/१६७) वही पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों में उपपद्यमान के वक्तव्य है, केवल इतना विशेष है—नौ ही गमकों में परिमाण में प्रतिसमय जघन्यतः एक अथवा दो अथवा तीन, उत्कृष्टतः संख्येय अथवा असंख्येय जीव उत्पन्न होते हैं। भव की अपेक्षा भी नौ ही गमकों में जघन्यतः दो भव-ग्रहण, उत्कृष्टतः आठ भव-ग्रहण। शेष पूर्ववत्। काल की अपेक्षा दोनों (पृथ्वीकायिक और संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक) की अपनी-अपनी स्थिति करणीय है।

अड़तालीसवां आलापक : तिर्यञ्च-पञ्चेन्द्रिय-जीवों में अप्कायिक-जीवों से लेकर चतुरिन्द्रिय-जीव तक जीवों का उपपात-आदि

२४८. यदि अप्कायिक-जीवों से पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों में उत्पन्न होते हैं.....पृच्छा? इसी प्रकार अप्कायिक-जीवों की भी वक्तव्यता। इसी प्रकार यावत् चतुरिन्द्रिय-जीवों का उपपात वक्तव्य है। केवल इतना विशेष है—सर्वत्र अपनी-अपनी लब्धि की वक्तव्यता है। नौ ही गमकों में भव की अपेक्षा जघन्यतः दो भव-ग्रहण, उत्कृष्टतः आठ भव-ग्रहण। काल की अपेक्षा दोनों (अप्कायिक आदि जीव तथा संज्ञी-पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक) की अपनी-अपनी स्थिति सभी गमकों में वक्तव्य है। जिस प्रकार पृथ्वीकायिक-जीवों से तिर्यञ्च-पञ्चेन्द्रिय जीवों में उपपद्यमान जीवों की लब्धि वैसे ही सर्वत्र (अप्कायिक-जीवों से लेकर चतुरिन्द्रिय-जीवों तक) सभी गमकों में स्थिति और कायसंवेध यथोचित वक्तव्य है १-९॥

२४९. यदि पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों से पञ्चेन्द्रिय तिर्यग्योनिक-जीवों में उत्पन्न होते हैं तो—क्या संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों से उत्पन्न होते हैं? असंज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों से उत्पन्न होते हैं?

गौतम! संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों से भी उत्पन्न होते हैं, असंज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों से भी उत्पन्न होते हैं, जैसा पृथ्वीकायिक-जीवों में उपपद्यमान का भेद बतलाया गया है। यावत्—(भ. २४/१९२)।

उनचासवां आलापक : तिर्यञ्च-पञ्चेन्द्रिय-जीवों में असंज्ञी-तिर्यञ्च-पञ्चेन्द्रिय-जीवों का उपपात-आदि

(पहला गमक)

२५०. भन्ते! असंज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव जो पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों में उत्पन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितने काल की स्थिति वाले पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों में उत्पन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त की स्थिति वालों, उत्कृष्टतः पल्योपम-के-असंख्यातवें--भाग की स्थिति वालों में उत्पन्न होता है।

२५१. भन्ते! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं? शेष जैसे पृथ्वीकायिक-जीवों में उपपद्यमान असंज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव—वैसे ही निरवशेष वक्तव्य है यावत् भवादेश तक। काल की अपेक्षा जघन्यतः दो अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्टतः पृथक्त्व (दो से नौ)--कोटि-पूर्व-अधिक-पल्योपम-का-असंख्यातवां-भाग—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(दूसरा गमक)

द्वितीय गमक में यही लब्धि वक्तव्य है, केवल इतना विशेष है—काल की अपेक्षा जघन्यतः दो अन्तर्मुहूर्त्त, उत्कृष्टतः चार अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-चार-कोटि-पूर्व—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(तीसरा गमक)

२५२. वही उत्कृष्ट काल की स्थिति वालों में उत्पन्न असंज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव जघन्यतः पल्योपम-के-असंख्यातवें-भाग, उत्कृष्टतः भी पल्योपम-के-असंख्यातवें-भाग की स्थिति वाले संज्ञी-पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों में उत्पन्न होता है।

२५३. भन्ते! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं? इसी प्रकार जैसे रत्नप्रभा में उपपद्यमान असंज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव वैसे ही अविकल रूप से वक्तव्य है यावत् कालादेश तक, केवल इतना विशेष है—परिमाण—जघन्यतः एक अथवा दो अथवा तीन, उत्कृष्टतः संख्येय उत्पन्न होते हैं। शेष पूर्ववत्।

(चौथे से छट्ठे गमक तक)

२५४. वही अपनी जघन्य काल की स्थिति में उत्पन्न असंज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव जघन्यतः अंतर्मुहूर्त्त की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः कोटि-पूर्व आयुष्य वाले संज्ञी-पंचेन्द्रिय--तिर्यग्योनिक-जीवों में उत्पन्न होता है।

२५५. भन्ते! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं? अवशेष जैसे इस पृथ्वीकायिक--जीवों में उपपद्यमान का मध्य तीन गमकों (चोथे, पांचवें और छट्ठे) में कहा वैसे ही यहां भी तीन गमकों में यावत् अनुबन्ध तक। भव की अपेक्षा जघन्यतः दो भव-ग्रहण, उत्कृष्टतः आठ भव-ग्रहण। काल की अपेक्षा जघन्यतः दो अन्तर्मुहूर्त्त, उत्कृष्टतः चार--अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-चार-कोटि-पूर्व—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

२५६. वही जघन्य काल की स्थिति वालों में उत्पन्न असंज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव जघन्य काल की स्थिति वाले पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों में उत्पन्न होता है। वही वक्तव्यता, केवल इतना विशेष है—काल की अपेक्षा जघन्यतः दो अन्तर्मुहूर्त्त, उत्कृष्टतः आठ अन्तर्मुहूर्त्त—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

२५७. वही उत्कृष्ट काल की स्थिति वालों से उत्पन्न असंज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव जघन्यतः कोटि-पूर्व आयुष्य वाले, उत्कृष्टतः भी कोटि-पूर्व आयुष्य वाले संज्ञी-पंचेन्द्रिय--तिर्यक्योनिक-जीवों में उत्पन्न होता है, वही वक्तव्यता, केवल इतना विशेष है—काल की अपेक्षा यथोचित वक्तव्य है।

(सातवां गमक)

२५८. वही अपनी उत्कृष्ट काल की स्थिति में उत्पन्न असंज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव उत्कृष्ट काल की स्थिति वाले संज्ञी-पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों में उत्पन्न होता है, वही प्रथम गमक की भांति वक्तव्यता (**भ.** २४/२५०), केवल इतना विशेष है—स्थिति—जघन्यतः कोटि-पूर्व, उत्कृष्टतः भी कोटि-पूर्व। शेष पूर्ववत्। काल की अपेक्षा जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-कोटि-पूर्व, उत्कृष्टतः कोटि-पूर्व-पृथक्त्व (दो से नौ)-अधिक-पल्योपम--का-असंख्यातवां-भाग—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(आठवां गमक)

२५९. वही उत्कृष्ट काल की स्थिति वालों में उत्पन्न असंज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव जघन्य काल की स्थिति वाले संज्ञी-पंचेन्द्रिय-तिर्यक्योनिक-जीवों में उत्पन्न होता है, वही जैसी सातवें गमक की भांति वक्तव्यता, केवल इतना विशेष है—काल की अपेक्षा से जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-कोटि-पूर्व, उत्कृष्टतः चार-अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-चार-कोटि-पूर्व—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(नवां गमक)

२६०. वही उत्कृष्ट काल की स्थिति वालों में उत्पन्न असंज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव उत्कृष्ट काल की स्थिति वाले संज्ञी-पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों में उत्पन्न होता है—स्थिति—जघन्यतः पल्योपम-का-असंख्यातवां-भाग, उत्कृष्टतः भी पल्योपम-का--असंख्यातवां-भाग। इस प्रकार जैसे रत्नप्रभा में उपपद्यमान असंज्ञी-पञ्चेन्द्रिय--तिर्यग्योनिक-जीवों के नौवें गमक (में बतलाया) वैसा ही अविकल रूप से वक्तव्य है, यावत् कालादेश (**भ.** २४/५२,५३), केवल इतना विशेष है—परिमाण इसके तृतीय गमक की (**भ.** २४/२५३) भांति वक्तव्य है, शेष पूर्ववत्।

पचासवां आलापक : तिर्यंच-पञ्चेन्द्रिय-जीवों में संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी--पञ्चेन्द्रिय-तिर्यञ्चों का उपपात-आदि

२६१. (भन्ते!) यदि संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों से उत्पन्न होते हैं तो—क्या संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों से उत्पन्न होते हैं? असंख्यात वर्ष की आयुवाले संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों से उत्पन्न होते हैं?

गौतम! संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों से उत्पन्न होते हैं, असंख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों से उत्पन्न नहीं होते।

२६२. (भन्ते!) यदि संख्यात वर्ष की आयु वाले (संज्ञी-पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव से आकर उत्पन्न होता है) यावत् तो—क्या संख्यात वर्ष की आयु वाले पर्याप्त-संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय--तिर्यग्योनिक-जीवों से उत्पन्न होते हैं? संख्यात वर्ष की आयु वाले अपर्याप्त-संज्ञी--पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों से आकर उत्पन्न होते हैं? (गौतम!) दोनों से ही। (संख्यात वर्ष की आयु वाले पर्याप्त-संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों और संख्यात वर्ष की आयु वाले अपर्याप्त-संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों दोनों से उत्पन्न होते हैं।)

(पहला गमक : औघिक और औघिक)

२६३. भन्ते! संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव, जो पञ्चेन्द्रिय--तिर्यग्योनिक-जीवों में उत्पन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितने काल की स्थिति वाले पंचेन्द्रिय-तिर्यक्योनिक-जीवों में उत्पन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः तीन पल्योपम की स्थिति वाले पंचेन्द्रिय-तिर्यक्योनिक-जीवों में उत्पन्न होता है।

२६४. भन्ते! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं? अवशेष इसी के संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय--तिर्यग्योनिक-जीवों के रत्नप्रभा में उपपद्यमान के प्रथम गमक की भांति वक्तव्यता (भ. २४/५८-६२), केवल इतना विशेष है—अवगाहना—जघन्यतः अंगुल-का-असंख्यातवां--भाग, उत्कृष्टतः एक हजार योजन। शेष पूर्ववत्। यावत् भवादेश तक। काल की अपेक्षा (कायसंवेध) जघन्यतः दो अन्तर्मुहूर्त्त, उत्कृष्टतः पृथक्त्व-कोटि-पूर्व-अधिक-तीन--पल्योपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(दूसरा गमक : औघिक और जघन्य)

२६५. (भन्ते!) वही संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव जघन्य काल की स्थिति वाले पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों में उत्पन्न होता है। वही वक्तव्यता (भ. २४/२६३), केवल इतना विशेष है—काल की अपेक्षा—जघन्यतः दो अन्तर्मुहूर्त्त, उत्कृष्टतः चार-अन्तर्मुहूर्त्त--अधिक-चार-कोटि-पूर्व।

(तीसरा गमक : औघिक और उत्कृष्ट)

२६६. (भन्ते!) वही संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव उत्कृष्ट काल की स्थिति वाले पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों में—जघन्यतः तीन पल्योपम की स्थितिवाले, उत्कृष्टतः भी तीन पल्योपम की स्थिति वाले में उत्पन्न होता है, वही वक्तव्यता (भ. २४/२६५), केवल इतना विशेष है—परिमाण—जघन्यतः एक अथवा दो अथवा तीन, उत्कृष्टतः संख्येय उत्पन्न होते हैं। अवगाहना—जघन्यतः अंगुल-का-असंख्यातवां-भाग, उत्कृष्टतः एक हजार योजन। शेष पूर्ववत् यावत् अनुबन्ध-द्वार तक। भव की अपेक्षा दो भव-ग्रहण। काल की अपेक्षा—जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-तीन-पल्योपम, उत्कृष्टतः कोटि-पूर्व-अधिक-तीन--पल्योपम।

(चौथा, पांचवां और छट्ठा गमक : जघन्य और औघिक, जघन्य और जघन्य, जघन्य और उत्कृष्ट)

२६७. वही अपनी जघन्य काल की स्थिति में उत्पन्न संज्ञी-पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः कोटि-पूर्व आयुष्य वाले पंचेन्द्रिय--तिर्यग्योनिक-जीवों में उत्पन्न होता है, उसकी लब्धि संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव के पृथ्वीकायिक-जीव के रूप में उपपद्यमान के मध्यमवर्ती तीन गमकों (चोथे, पांचवें और छट्ठे) में जो वक्तव्यता है वही यहां मध्यमवर्ती तीनों गमकों में वक्तव्य है। कायसंवेध इसी के असंज्ञी-पंचेन्द्रिय-जीवों के तीनों गमकों की भांति वक्तव्य है।

(सातवां गमक : उत्कृष्ट और औघिक)

२६८. वही अपनी उत्कृष्ट काल की स्थिति में उत्पन्न संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव संज्ञी-पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों में उत्पन्न होता है—प्रथम गमक (**भ.** २४/२६३,२६४) की भांति वक्तव्यता, केवल इतना विशेष है—स्थिति और अनुबंध—जघन्यतः कोटि-पूर्व, उत्कृष्टतः भी कोटि-पूर्व। काल की अपेक्षा—जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-कोटि-पूर्व, उत्कृष्टतः पृथक्त्व-कोटि-पूर्व-अधिक-तीन-पल्योपम।

(आठवां गमक : उत्कृष्ट और जघन्य)

२६९. वही उत्कृष्ट काल की स्थिति में उत्पन्न पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव में जघन्य काल की स्थिति वाले पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों में उत्पन्न होता है। वही वक्तव्यता, केवल इतना विशेष है—काल की अपेक्षा जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-कोटि-पूर्व, उत्कृष्टतः चार--अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-चार-कोटि-पूर्व।

(नवां गमक : उत्कृष्ट और उत्कृष्ट)

२७०. वही उत्कृष्ट काल की स्थिति में उत्पन्न पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव उत्कृष्ट काल की स्थिति वाले पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों में उत्पन्न होता है—जघन्यतः तीन पल्योपम की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः भी तीन पल्योपम की स्थिति वाले पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक--जीवों में उत्पन्न होता है। अवशेष पूर्ववत्। (**भ.** २४/२६९) केवल इतना विशेष है—परिमाण और अवगाहना—इसी के तीसरे गमक की भांति वक्तव्य है। (**भ.** २४/२६६)। भव की अपेक्षा दो भव-ग्रहण, काल की अपेक्षा जघन्यतः कोटि-पूर्व-अधिक-तीन--पल्योपम, उत्कृष्टतः कोटि-पूर्व-अधिक-तीन-पल्योपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

तिर्यञ्च-पञ्चेन्द्रिय में मनुष्यों का उपपात आदि

२७१. यदि मनुष्य से पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों में उत्पन्न होते हैं तो—क्या संज्ञी-मनुष्यों से उत्पन्न होते हैं? असंज्ञी-मनुष्यों से उत्पन्न होते हैं?

गौतम! संज्ञी मनुष्यों से भी उत्पन्न होते हैं, असंज्ञी-मनुष्यों से भी उत्पन्न होते हैं।

इकावनवां आलापक : तिर्यञ्च-पञ्चेन्द्रिय में असंज्ञी-मनुष्यों का उपपात-आदि

२७२. भन्ते! असंज्ञी-मनुष्य, जो पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों में उत्पन्न होने योग्य है, भन्ते!

वह कितने काल की स्थिति वाले पंचेन्द्रिय-तिर्यक्योनिक-जीवों में उत्पन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः कोटि-पूर्व आयुष्य वाले पंचेन्द्रिय-तिर्यक्योनिक-जीवों में उत्पन्न होता है। उसकी लब्धि तीनों ही गमकों में पृथ्वीकायिक-जीवों में उपपद्यमान की भांति वक्तव्य है। (भ. २४/१९९) कायसंवेध–इसी में असंज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक के मध्यवर्ती तीन गमकों में वैसे ही अविकल रूप से वक्तव्य है।

बावनवां आलापक : तिर्यंच-पंचेन्द्रिय-जीवों में संज्ञी-मनुष्यों का उपपात-आदि

(पहला गमक : औघिक और औघिक)

२७३. यदि संज्ञी-मनुष्यों से उत्पन्न होते हैं तो—क्या संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-मनुष्यों से उत्पन्न होते हैं? असंख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-मनुष्यों से उत्पन्न होते हैं?

गौतम! संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-मनुष्यों से उत्पन्न होते हैं, असंख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-मनुष्यों से उत्पन्न नहीं होते।

२७४. यदि संख्यात वर्ष की आयुवाले संज्ञी-मनुष्यों से उत्पन्न होते हैं तो—क्या संख्यात वर्ष की आयु वाले पर्याप्त-संज्ञी-मनुष्यों से उत्पन्न होते हैं? संख्यात वर्ष की आयु वाले अपर्याप्त-संज्ञी-मनुष्यों से उत्पन्न होते हैं?

गौतम! संख्यात वर्ष की आयु वाले पर्याप्त-संज्ञी-मनुष्यों से उत्पन्न होते हैं, संख्यात वर्ष की आयु वाले अपर्याप्त-संज्ञी-मनुष्य से भी उत्पन्न होते हैं।

२७५. भन्ते! संज्ञी मनुष्य, जो पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों में उत्पन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितने काल की स्थिति वाले पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों में उत्पन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः तीन पल्योपम की स्थिति वाले पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों में उत्पन्न होता है।

२७६. भन्ते! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं? लब्धि इसी संज्ञी मनुष्य के पृथ्वीकायिक-जीवों में उपपद्यमान प्रथम गमक की भांति वक्तव्य है (भ. २४/२०२,२०३) यावत्—भवादेश तक। काल की अपेक्षा—जघन्यतः दो अन्तर्मुहूर्त्त, उत्कृष्टतः पृथक्त्व (यहां पृथक्त्व का अर्थ सात होता है) कोटि-पूर्व-अधिक-तीन-पल्योपम।

(दूसरा गमक : औघिक और जघन्य)

२७७. वही संज्ञी-मनुष्य जघन्य काल की स्थिति वाले पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों में उत्पन्न होता है, वही वक्तव्यता (भ. २४/२७६), केवल इतना विशेष है—(कायसंवेध)—काल की अपेक्षा—जघन्यतः दो अन्तर्मुहूर्त्त, उत्कृष्टतः चार-अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-चार-कोटि-पूर्व।

(तीसरा गमक : औघिक और उत्कृष्ट)

२७८. वही उत्कृष्ट काल की स्थिति में उत्पन्न संज्ञी-मनुष्य जघन्यतः तीन पल्योपम की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः भी तीन पल्योपम की स्थिति वाले पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों के रूप में उत्पन्न होता है, वही वक्तव्यता (भ. २४/२६६), केवल इतना विशेष है—अवगाहना—जघन्यतः पृथक्त्व (दो से नौ)-अंगुल, उत्कृष्टतः पांच सौ धनुष। स्थिति—जघन्यतः पृथक्त्व-(दो से नौ) मास, उत्कृष्टतः कोटि-पूर्व। इसी प्रकार अनुबन्ध भी। भव की अपेक्षा दो

भव-ग्रहण, काल की अपेक्षा जघन्यतः पृथक्त्व (दो से नौ)-मास-अधिक-तीन-पल्योपम, उत्कृष्टतः कोटि-पूर्व-अधिक-तीन-पल्योपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(चौथा, पांचवां और छट्ठा गमक : जघन्य और औघिक, जघन्य और जघन्य, जघन्य और उत्कृष्ट)

२७९. वही अपनी जघन्य काल की स्थिति में उत्पन्न संज्ञी-मनुष्य-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों में उत्पन्न होता है। जैसे संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव के पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों में उपपद्यमान जीव के मध्यवर्ती तीन गमकों में वक्तव्यता है (लब्धि भ. २४/२६७) वही वक्तव्यता इसके भी मध्य तीन गमकों में अविकल रूप में बतलानी चाहिए, केवल इतना विशेष है—परिमाण—उत्कृष्टतः संख्येय उत्पन्न होते हैं। शेष पूर्ववत्।

(सातवां गमक : उत्कृष्ट और औघिक)

२८०. वही अपनी उत्कृष्ट काल की स्थिति में उत्पन्न संज्ञी-मनुष्य-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों में उत्पन्न होता है। वही प्रथम गमक की वक्तव्यता, केवल इतना विशेष है—अवगाहना—जघन्यतः पांच सौ धनुष, उत्कृष्टतः भी पांच सौ धनुष। स्थिति और अनुबन्ध—जघन्यतः कोटि-पूर्व, उत्कृष्टतः भी कोटि-पूर्व। शेष पूर्ववत् यावत् भवादेश तक, काल की अपेक्षा जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-कोटि-पूर्व, उत्कृष्टतः पृथक्त्व-कोटि-पूर्व-अधिक-तीन-पल्योपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(आठवां गमक : उत्कृष्ट और जघन्य)

२८१. वही संज्ञी-मनुष्य जघन्य काल की स्थिति वाले पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों में उत्पन्न होता है। वही वक्तव्यता, केवल इतना विशेष है—काल की अपेक्षा जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-कोटि-पूर्व, उत्कृष्टतः चार-अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-चार-कोटि-पूर्व।

(नवां गमक : उत्कृष्ट और उत्कृष्ट)

२८२. वही संज्ञी-मनुष्य उत्कृष्ट काल की स्थिति वाले पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों में उत्पन्न होता है। जघन्यतः तीन पल्योपम की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः भी तीन पल्योपम की स्थिति वाले पंचेन्द्रिय-तिर्यकयोनिक-जीवों में उपपन्न होता है। वही लब्धि सातवें गमक की भांति (भ. २४/२८०)। भव की अपेक्षा—दो भव-ग्रहण। काय की अपेक्षा—जघन्यतः एक कोटि-पूर्व-अधिक-तीन-पल्योपम, उत्कृष्टतः भी एक कोटि-पूर्व-अधिक-तीन-पल्योपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

तिरेपनवां आलापक : तिर्यञ्च-पञ्चेन्द्रिय में भवनपति-देवों का उपपात-आदि

२८३. (भन्ते!) यदि देवों से उत्पन्न होते हैं तो—क्या भवनपति-देवों से उत्पन्न होते हैं,? वाणमन्तर देवों से उत्पन्न होते हैं? ज्योतिष्क-देवों से उत्पन्न होते हैं? वैमानिक-देवों से उत्पन्न होते हैं?

गौतम! भवनपति-देवों से उत्पन्न होते हैं यावत् वैमानिक-देवों से भी उत्पन्न होते हैं।

२८४. (भन्ते!) यदि भवनपति-देवों से उत्पन्न होते हैं तो—क्या असुरकुमार-भवनपति-देवों

से उत्पन्न होते हैं यावत् स्तनितकुमार-भवनपति-देवों से उत्पन्न होते हैं?

गौतम! असुरकुमार-भवनपति-देवों से यावत् स्तनितकुमार-भवनपति-देवों से उत्पन्न होते हैं।

२८५. भन्ते! असुरकुमार-देव, जो पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों में उत्पन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितने काल की स्थिति वाले पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों में उत्पन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः कोटि-पूर्व आयु वाले पंचेन्द्रिय--तिर्यग्योनिकों में उत्पन्न होता है। असुरकुमारों की लब्धि नौ ही गमकों में पृथ्वीकायिक में उपपद्यमान की भांति वक्तव्य है (भ. २४/२०७-२१०)। इसी प्रकार यावत् ईशान--देव की लब्धि की वक्तव्यता (भ. २४/२११-२१९)। भव की अपेक्षा से सर्वत्र उत्कृष्ट आठ भव-ग्रहण, जघन्यतः दो भव-ग्रहण। स्थिति और कायसंवेध यथोचित वक्तव्य है।

तिर्यञ्च-पञ्चेन्द्रिय में नवनिकाय (नागकुमार से लेकर स्तनितकुमार तक)-भवनपति-देवों की उत्पत्ति।

२८६. भन्ते! नागकुमार-देव, जो पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों में उत्पन्न होने योग्य है?

वही वक्तव्यता, केवल इतना विशेष है—स्थिति और कायसंवेध यथोचित वक्तव्य है। इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमार।

चौवनवां आलापक : तिर्यञ्च-पंचेन्द्रिय-जीवों में व्यन्तर-देवों का उपपात-आदि

२८७. (भन्ते!) यदि वाणमन्तर-देवों से उत्पन्न होते हैं? तो क्या पिशाच-वाणमन्तर-देवों से उत्पन्न होते हैं?

पूर्ववत् यावत्—

२८८. भन्ते! वाणमन्तर-देव जो पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों में उत्पन्न होने योग्य हैं? इसी प्रकार वक्तव्यता (भ. २४/२८६), केवल इतना विशेष है—स्थिति और कायसंवेध यथोचित वक्तव्य है।

२८९. (भन्ते!) यदि ज्योतिष्क-देवों से उत्पन्न होते हैं?

पूर्ववत् यावत्—

पचपनवां आलापक : तिर्यञ्च-पञ्चेन्द्रिय-जीवों में ज्योतिष्क-देवों का उपपात-आदि

२९०. भन्ते! ज्योतिष्क-देव जो पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों में उत्पन्न होने योग्य है?

पृथ्वीकायिक-उद्देशक की भांति वही वक्तव्यता (भ. २४/२१५)। भव की अपेक्षा—नौ ही गमकों में उत्कृष्टतः आठ भव-ग्रहण यावत् काल की अपेक्षा—जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक-पल्योपम-का-आठवां-भाग, उत्कृष्टतः चार-लाख-वर्ष-अधिक-चार-कोटि-पूर्व-और-चार-पल्योपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है। इसी प्रकार नौ ही गमकों में, केवल इतना विशेष है—स्थिति और कायसंवेध यथोचित वक्तव्य है।

छप्पनवां आलापक : तिर्यञ्च-पञ्चेन्द्रिय में वैमानिक-देवों का उपपात-आदि

२९१. (भंते!) यदि वैमानिक देवों से पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों में उत्पन्न होते हैं तो—क्या कल्पवासी-वैमानिक-देवों से उत्पन्न होते हैं? कल्पातीत-वैमानिक-देवों से उत्पन्न होते हैं?

गौतम! कल्पवासी-वैमानिक-देवों से उत्पन्न होते हैं, कल्पातीत-वैमानिक-देवों से उत्पन्न नहीं होते।

२९२. यदि कल्पवासी-वैमानिक देवों से उत्पन्न होते हैं? कल्पवासी-वैमानिक-देवों से यावत् सहस्रार-कल्पोपक-वैमानिक-देवों से भी उत्पन्न होते हैं, आनत- यावत् अच्युत-कल्पोपक--वैमानिक-देवों से उत्पन्न नहीं होते।

सत्तावनवां आलापक : तिर्यञ्च-पञ्चेन्द्रिय-जीवों में सौधर्म-आदि-देवों का उपपात-आदि

२९३. भन्ते! सौधर्मवासी-देव जो पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों में उत्पन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितने काल की स्थिति वाले पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों में उत्पन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः कोटि-पूर्व आयुष्य वाले पंचेन्द्रिय--तिर्यग्योनिक-जीवों में उत्पन्न होता है। शेष जैसे पृथ्वीकायिक-उद्देशक के (**भ.** २४/२१८) नौ गमकों में बतलाया गया था वैसे ही बतलाना चाहिए, केवल इतना विशेष है—नौ ही गमकों में (भव की अपेक्षा से) जघन्यतः दो भव-ग्रहण, उत्कृष्टतः आठ भव-ग्रहण। स्थिति और कालादेश ज्ञातव्य है। इसी प्रकार ईशान-देव की भी वक्तव्यता। इसी प्रकार इसी क्रम से शेष सभी यावत् सहस्रार-देव तक के देवों में उपपात वक्तव्य है, केवल इतना विशेष है—अवगाहना—अवगाहन-संस्थान (**पण्णवणा,** पद २१/७०) की भांति।

२९४. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

इक्कीसवां उद्देशक

मनुष्य-अधिकार

२९५. भन्ते! मनुष्य कहां से उत्पन्न होते हैं—क्या नैरयिक-जीवों से उत्पन्न होते हैं? यावत् देवों से उत्पन्न होते हैं?

गौतम! मनुष्य नरक-गति से भी उत्पन्न होते हैं यावत् देवों से भी उत्पन्न होते हैं। इसी प्रकार उपपात—जैसे—पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-उद्देशक में वक्तव्य है यावत् (**भ.** २४/२३८) तमा-पृथ्वी (छट्ठी नरक) नैरयिकों से भी उत्पन्न होते हैं, अधःसप्तमी-पृथ्वी (सातवीं नरक)--नैरयिकों से उत्पन्न नहीं होते।

अट्ठावनवां आलापक : मनुष्य में प्रथम नरक के नैरयिक-जीवों का उपपात-आदि

२९६. भन्ते! रत्नप्रभा-पृथ्वी के नैरयिक, जो मनुष्यों में उत्पन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितनी काल की स्थिति वाले मनुष्यों में उत्पन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः पृथक्त्व (दो से नौ)-मास की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः कोटि-पूर्व आयुष्य वाले मनुष्यों में उत्पन्न होता है। शेष जैसे पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों में उपपद्यमान की भांति वक्तव्यता (**भ.** २४/२४०-२४२), केवल इतना विशेष है—परिमाण—जघन्यतः एक अथवा दो अथवा तीन, उत्कृष्टतः संख्येय उत्पन्न होते हैं। (कायसंवेध—) जैसे वहां (पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों में प्रथम नैरयिक जीव की उत्पति में) अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक--दस-हजार-वर्ष कायसंवेध था) (**भ.** २४।२४१) वैसे ही यहां पृथक्त्व (दो से नौ)-मास-अधिक-दस-हजार-वर्ष कायसंवेध करता है। शेष पूर्ववत्।

उनसठवां आलापक : मनुष्य में दूसरी नरक से छट्ठी नरक के नैरयिक-जीवों का उपपात-आदि

जैसे रत्नप्रभा-(नैरयिक-जीवों की मनुष्य में उत्पत्ति के विषय में वक्तव्यता है वैसी ही वक्तव्यता शर्कराप्रभा के नैरयिक-जीवों के विषय में है, केवल इतना विशेष है—(स्थिति) जघन्यतः पृथक्त्व (दो से नौ)-वर्ष, उत्कृष्टतः कोटि-पूर्व आयुष्य वाले जीव के रूप में उत्पन्न होता है। अवगाहना, लेश्या, ज्ञान, स्थिति, अनुबन्ध और कायसंवेध का नानात्व (भिन्नता) तिर्यग्योनिक-उद्देशक (**भ.** २४/२४३) की भांति ज्ञातव्य है। इसी प्रकार यावत् तमा-पृथ्वी (छट्ठी नरक) के नैरयिक-जीवों तक के विषय में बतलाना चाहिए।

साठवां आलापक : मनुष्य में तिर्यंच का उपपात-आदि

२९७. यदि तिर्यग्योनिक-जीवों से उत्पन्न होते हैं तो—क्या एकेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों से उत्पन्न होते हैं यावत् पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक जीवों से उत्पन्न होते हैं?

गौतम! एकेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों के भेद पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-उद्देशक (**भ.** २४/२४५-२४८) की भांति वक्तव्य है, केवल इतना विशेष है—तेजस्कायिक और वायुकायिक--जीवों का निषेध वक्तव्य है। शेष पूर्ववत्। यावत्—

इकसठवां आलापक : मनुष्यों में पृथ्वीकायिक-जीवों का उपपात-आदि

२९८. भन्ते! पृथ्वीकायिक-जीव जो मनुष्य में उत्पन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितने काल की स्थिति वाले मनुष्यों में उत्पन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः कोटि-पूर्व आयुष्य वाले मनुष्यों में उत्पन्न होगा।

२९९. भन्ते! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं? इसी प्रकार जैसे पञ्चेन्द्रिय--तिर्यग्योनिक-जीवों में उपपद्यमान पृथ्वीकायिक-जीवों की वक्तव्यता (**भ.** २४/२४७), वही उपपद्यमान (पृथ्वीकायिक-जीव के मनुष्य में) नौ ही गमकों में वक्तव्यता, केवल इतना विशेष है—तीसरे, छट्ठे और नौवें गमकों में परिमाण—जघन्यतः एक अथवा दो अथवा तीन, उत्कृष्टतः संख्येय जीव उत्पन्न होते हैं। जब पृथ्वीकायिक-जीव अपनी जघन्य-काल की स्थिति में उत्पन्न होता है, उस समय प्रथम गमक में अध्यवसान प्रशस्त भी होते हैं, अप्रशस्त भी होते है, द्वितीय गमक में अध्यवसान अप्रशस्त होते हैं, तृतीय गमक में अध्यवसान प्रशस्त होते हैं। शेष पूर्ववत् अविकल रूप से वक्तव्य है।

बासठवां आलापक : मनुष्यों में अप्कायिक-जीव आदि नौ स्थानों के जीवों का उपपात-आदि

३००. यदि अप्कायिक-जीव मनुष्यों में उत्पन्न होते हैं? (पृच्छा)

इसी प्रकार अप्कायिक-जीवों की वक्तव्यता। इसी प्रकार वनस्पतिकायिक-जीवों की वक्तव्यता। इसी प्रकार यावत् चतुरिन्द्रिय-जीवों की वक्तव्यता। असंज्ञी-पञ्चेन्द्रिय--तिर्यग्योनिक, संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक, असंज्ञी-मनुष्य और संज्ञी-मनुष्य—ये सभी पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-उद्देशक की भांति वक्तव्य है (**भ.** २४/२४८-२८२), केवल इतना

विशेष है—इनक परिमाण और अध्यवसान में नानात्व ज्ञातव्य, जैसा पृथ्वीकायिक-उद्देशक (भ. २४/२९९) में निर्दिष्ट है। शेष अविकल रूप से वक्तव्य है (भ. २४/२६१-२८२)।

तिरेसठवां आलापक : मनुष्यों में असुरकुमार-देवों का उपपात-आदि

३०१. यदि देवों से मनुष्यों में उत्पन्न होते हैं तो—क्या भवनपति-देवों से उत्पन्न होते हैं? वाणमन्तर-देवों से उत्पन्न होते हैं? ज्योतिष्क-देवों से उत्पन्न होते हैं? वैमानिक-देवों से उत्पन्न होते हैं?

गौतम! भवनपति-देवों से भी उत्पन्न होते हैं यावत् वैमानिक-देवों से भी उत्पन्न होते हैं।

३०२. भन्ते! यदि भवनपति-देवों से उत्पन्न होते हैं तो—क्या असुरकुमार-भवनपति-देवों से उत्पन्न होते हैं यावत् स्तनितकुमार-भवनपति-देवों से उत्पन्न होते हैं?

गौतम! असुरकुमार-भवनपति-देवों से उत्पन्न होते हैं यावत् स्तनितकुमार-भवनपति-देवों से उत्पन्न होते हैं।

३०३. भन्ते! असुरकुमार-देव, जो मनुष्य में उत्पन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितने काल की स्थिति वाले मनुष्यों में उत्पन्न होगा?

गौतम! जघन्यतः पृथक्त्व (दो से नौ)-मास की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः कोटि-पूर्व आयुष्य वाले मनुष्यों में उत्पन्न होता है। इसी प्रकार पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-उद्देशक में जो वक्तव्यता है वही यहां भी वक्तव्य है। केवल इतना विशेष है—जैसे पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों में जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त की स्थिति वाले वैसे यहां जघन्यतः पृथक्त्व (दो से नौ)-मास की स्थिति वाले मनुष्यों में उत्पन्न होता है। परिमाण—जघन्यतः एक अथवा दो अथवा तीन, उत्कृष्टतः संख्येय जीव उत्पन्न होते हैं। शेष पूर्ववत् जैसे—पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों में असुरकुमार की उत्पत्ति के विषय में बतलाया गया (भ. २४/२८५)।

चौसठवां आलापक : मनुष्य में नवनिकाय-देवों से लेकर दूसरे देवलोक तक देवों का उपपात-आदि

इसी प्रकार (भ. २४।२८५-२९३) यावत् ईशान-देव तक (के रूप में उत्पन्न होने के विषय में बतलाना चाहिए) जैसे वहां ये नानात्व (जघन्यतः स्थिति, परिमाण का नानात्व बतलाये गये थे, वैसे यहां पर भी बतलाने चाहिए)।

सनत्कुमार आदि यावत् सहस्रार तक पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-उद्देशक (भ. २४/२९३) की भांति बतलाना चाहिए, केवल इतना विशेष है—परिमाण—जघन्यतः एक अथवा दो अथवा तीन, उत्कृष्टतः संख्येय उत्पन्न होते हैं। उपपात—जघन्यतः पृथक्त्व वर्ष की स्थिति वाले मनुष्यों में, उत्कृष्टतः कोटि-पूर्व आयुष्य वाले मनुष्यों में उत्पन्न होते हैं। शेष (संहनन आदि) पूर्ववत्। कायसंवेध—पृथक्त्व-वर्ष के स्थान पर कोटि-पूर्व करणीय है। (देवों की जघन्य और उत्कृष्ट स्थिति के आधार पर बतलानी चाहिए।

पैंसठवां आलापक : मनुष्यों में तीसरे देवलोक से आठवें देवलोक तक के देवों का उपपात-आदि

मनुष्यों में सनत्कुमार-देव का कायसंवेध प्रथम, द्वितीय, चतुर्थ, पञ्चम, गमक में जघन्यतः

पृथक्त्व-वर्ष-अधिक-दो-सागरोपम तथा तीसरे और छट्ठे गमक में पूर्व-कोटि-अधिक-सात--सागरोपम, सातवें और आठवें गमक में पृथक्त्व-वर्ष-अधिक सात-सागरोपम, नवें गमक में कोटि-पूर्व-अधिक-सात-सागरोपम, उत्कृष्टतः सनत्कुमार की उत्कृष्ट स्थिति को चतुर्गुणित *करने पर अट्ठाईस सागरोपम होती है, तथा मनुष्य के उत्कृष्ट काल का चतुर्गुणित करने* पर पहले, तीसरे, चौथे, छट्ठे, सातवें और नवमें गमक में चार कोटि-पूर्व, दूसरे, पांचवें और आठवें गमक में चार-पृथक्त्व-वर्ष-और-अधिक जोड़ना चाहिए, इतना काल लगता है इतने काल तक गति-आगति करता है।) माहेन्द्र-देवलोक (देवों की मनुष्य के रूप में उत्पत्ति का कायसंवेध) उससे (सनत्कुमार की स्थिति से) कुछ अधिक होने से कायसंवेध के काल में जघन्य काल में दो सागरोपम से कुछ अधिक और सात सागरोपम से कुछ अधिक सहित पूर्ववत् बतलाना चाहिए तथा उत्कृष्ट काल में चतुर्गुणित करने पर अट्ठाईस सागरोपम से कुछ अधिक अथवा आठ-सागरोपम-से-कुछ-अधिक-सहित पूर्ववत् बतलाना चाहिए, ब्रह्मदेव-लोक के (देवों की मनुष्य के रूप में उत्पत्ति का कायसंवेध) जघन्य काल में सात-सागरोपम-अथवा-दस-सागरोपम-सहित पूर्ववत् बतलाना चाहिए तथा उत्कृष्ट काल में चालीस-सागरोपम-(अथवा अट्ठाईस- सागरोपम)-सहित पूर्ववत् बतलाना चाहिए, लान्तक-देवलोक के (देवों की मनुष्य के रूप में उत्पत्ति का कायसंवेध) (जघन्य काल में दस-सागरोपम अथवा चौदह-सागरोपम सहित पूर्ववत् बतलाना चाहिए तथा उत्कृष्ट काल में) छप्पन सागरोपम-(अथवा-चालीस-सागरोपम-सहित पूर्ववत् बतलाना चाहिए), महाशुक्र-देवलोक के (देवों की मनुष्य के रूप में उत्पत्ति का कायसंवेध) (जघन्य काल चौदह-सागरोपम-अथवा-सत्रह-सागरोपम-सहित पूर्ववत् बतलाना चाहिए, उत्कृष्ट काल) अड़सठ-सागरोपम-(अथवा छप्पन-सागरोपम-सहित पूर्ववत् बतलाना चाहिए), सहस्रार--देवलोक के (देवों की मनुष्य के रूप में उत्पत्ति का कायसंवेध जघन्यकाल में सत्रह-अथवा अठारह-सागरोपम-सहित पूर्ववत् बतलाना चाहिए, उत्कृष्ट काल) बहत्तर-सागरोपम--(अथवा-अड़सठ-सागरोपम-सहित पूर्ववत् बतलाना चाहिए), यह उत्कृष्टतः स्थिति बतलाई गई। जघन्य स्थिति भी चतुर्गुणित करके वक्तव्य है। इसी प्रकार यावत् ईशानदेव की वक्तव्यता।

छासठवां आलापक : मनुष्यों में नौवें देवलोक के देवों का उपपात-आदि

३०४. भन्ते! आनत-देव, मनुष्य में उत्पन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितने काल की स्थिति वाले मनुष्यों में उत्पन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः पृथक्त्व (दो से नौ)-वर्ष की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः कोटि-पूर्व की स्थिति वाले मनुष्यों में उत्पन्न होता है।

३०५. भन्ते! वे जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं? इसी प्रकार सहस्रार-देवों की भांति (भ. २४/३०३), केवल इतना विशेष है—अवगाहना, स्थिति और अनुबन्ध यथोचित वक्तव्य हैं। शेष पूर्ववत् बतलाना चाहिए। (आनत आदि चार देवों की अवगाहना—भवधारणीय उत्कृष्टतः तीन हाथ बतलानी चाहिए, आनत-देवलोक की स्थिति जघन्यतः अठारह सागरोपम, उत्कृष्टतः उन्नीस सागरोपम बतलानी चाहिए।)

मनुष्यों में दसवें से बारहवें देवलोक के देवों का उपपात-आदि

प्राणत-देवलोक की स्थिति जघन्यतः उन्नीस सागरोपम, उत्कृष्टतः बीस सागरोपम बतलानी चाहिए, आरण-देवलोक की स्थिति जघन्यतः बीस सागरोपम, उत्कृष्टतः इक्कीस सागरोपम बतलानी चाहिए, अच्युत-देवलोक की स्थिति जघन्यतः इक्कीस सागरोपम, उत्कृष्टतः बाईस सागरोपम बतलानी चाहिए, अनुबन्ध—आयुष्य की तरह बतलाना चाहिए, शेष संहनन आदि सहस्रार-देव की तरह बतलाने चाहिए। भव की अपेक्षा जघन्यतः दो भव-ग्रहण, उत्कृष्टतः छह भव-ग्रहण करते हैं। नौवें देवलोक का (कायसंवेध)—काल की अपेक्षा जघन्यतः पृथक्त्व-वर्ष-अधिक-अट्ठारह-सागरोपम, उत्कृष्टतः तीन-कोटि-पूर्व-अधिक-सत्तावन--सागरोपम—इतने काल रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है। इसी प्रकार नौ ही गमकों में वक्तव्य, केवल इतना विशेष है—स्थिति, अनुबन्ध और कायसंवेध यथोचित वक्तव्य हैं। इसी प्रकार यावत् अच्युत-देव तक, केवल इतना विशेष है—स्थिति, अनुबन्ध और कायसंवेध यथोचित वक्तव्य हैं। प्राणत-देव की स्थिति (बीस सागरोपम) है, उससे तीन गुणा करने पर साठ सागरोपम, आरण-देव की स्थिति (इक्कीस सागरोपम) है, तीन गुणा करने पर तिरेसठ सागरोपम, अच्युत-देव की स्थिति (बाईस सागरोपम) है, उससे तीन गुणा करने पर छासठ सागरोपम (कायसंवेध इस काल के आधार पर बतलाने चाहिए)। नौवें देवलोक में (आनत-देवलोक में) स्थिति और अनुबन्ध दूसरे गमक में जघन्यतः अट्ठारह सागरोपम, उत्कृष्टतः अट्ठारह सागरोपम, तीसरे गमक में जघन्यतः अट्ठारह सागरोपम, उत्कृष्टतः उन्नीस सागरोपम, चौथे, पांचवे और छट्ठे गमक में जघन्य और उत्कृष्ट अट्ठारह सागरोपम, सातवें, आठवें और नवमें गमक में जघन्य और उत्कृष्ट उन्नीस सागरोपम, दसवें देवलोक में (प्राणत-देवलोक की) स्थिति और अनुबन्ध—पहले तीन गमक में जघन्य उन्नीस सागरोपम, उत्कृष्ट बीस सागरोपम, चोथे, पांचवें और छट्ठे गमक में जघन्य और उकृष्ट उन्नीस सागरोपम, सातवें, आठवें और नवमें गमक में जघन्य और उत्कृष्ट बीस सागरोपम। ग्यारहवें देवलोक में (आरण-देवलोक की) स्थिति और अनुबन्ध—पहले तीन गमक में जघन्यतः बीस सागरोपम, उत्कृष्टतः इक्कीस सागरोपम, चोथे, पांचवें और छट्ठे गमक में जघन्यतः और उत्कृष्टतः बीस सागरोपम, सातवें, आठवें और नवमें गमक में जघन्यतः और उत्कृष्टतः इक्कीस सागरोपम। बारहवें देवलोक में (अच्युत-देवलोक की) स्थिति और अनुबन्ध—पहले तीन गमक में जघन्यतः इक्कीस सागरोपम, उत्कृष्टतः बाईस सागरोपम, चोथे, पांचवें और छट्ठे गमक में जघन्यतः और उत्कृष्टतः इक्कीस सागरोपम, सातवें, आठवें और नवमें गमक में जघन्यतः और उत्कृष्टतः बाईस सागरोपम।

सडसठवां आलापक : मनुष्यों में ग्रैवेयक-कल्पातीत-देवों का उपपात-आदि

३०६. (भन्ते!) यदि कल्पातीत-वैमानिक-देवों से उत्पन्न होते हैं तो—क्या ग्रैवेयक-कल्पातीत--वैमानिक-देवों से उत्पन्न होते हैं? अनुत्तरोपातिक-कल्पातीत-वैमानिक-देवों से उत्पन्न होते हैं?

गौतम! ग्रैवेयक-कल्पातीत-वैमानिक-देवों से उत्पन्न होते हैं, अनुत्तरोपपातिक-कल्पातीत--वैमानिक-देवों से भी उत्पन्न होते हैं।

३०७. यदि ग्रैवेयक-कल्पातीत-वैमानिक-देवों से उत्पन्न होते हैं तो—अधो-अधोवर्ती-ग्रैवेयक-कल्पातीत-वैमानिक-देवों से उत्पन्न होते हैं यावत् ऊर्ध्व-ऊर्ध्ववर्ती-ग्रैवेयक-कल्पातीत-वैमानिक-देवों से उत्पन्न होते हैं?

गौतम! अधो-अधोवर्ती-ग्रैवेयक यावत् ऊर्ध्व-ऊर्ध्ववर्ती-ग्रैवेयक-कल्पातीत-वैमानिक-देवों से उत्पन्न होते हैं।

३०८. भन्ते! जो ग्रैवेयक-देव मनुष्य में उत्पन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितने काल की स्थिति वाले जीव के रूप में उत्पन्न होगा?

गौतम! जघन्यतः पृथक्त्व (दो से नौ)-वर्ष, उत्कृष्टतः कोटि-पूर्व स्थिति वाले जीव के रूप में उत्पन्न हो सकता है। शेष (संहनन आदि वाले) जैसी आनत-देव की वक्तव्यता बतलाई गई वैसे ही बतलाना चाहिए, केवल इतना विशेष है—अवगाहना—ग्रैवेयक-देवों के एक भवधारणीय-शरीर (वैक्रिय-शरीर) होता है, उसकी अवगाहना जघन्यतः अंगुल-के-असंख्यातवां-भाग, उत्कृष्टतः दो-रत्नी (दो हाथ)। संस्थान—एक भवधारणीय-शरीर होता है वह समचतुरस्र- संस्थान से संस्थित प्रज्ञप्त है। (समुद्घात) ग्रैवेयक-देव के पांच समुद्घात प्रज्ञप्त हैं, जैसे—वेदना-समुद्घात यावत् तेजस्-समुद्घात, किन्तु वे निश्चित ही वैक्रिय- और तेजस्-समुद्घात के द्वारा न समवहत हुए, न समवहत होते हैं, न समवहत होंगे (लब्धि की अपेक्षा से पांच समुद्घात होते हैं, किन्तु प्रयोजन के अभाव के कारण इनमें से वैक्रिय और तेजस्—ये दो समुद्घात नहीं करते)। स्थिति ओर अनुबन्ध—जघन्यतः बाईस सागरोपम, उत्कृष्टतः इकतीस सागरोपम। शेष (संहनन आदि) आनत-देव की तरह उसी प्रकार बतलाना चाहिए। (कायसंवेध) काल की अपेक्षा से—जघन्यतः पृथक्त्व-(दो से नौ)-वर्ष-अधिक-बाईस-सागरोपम, उत्कृष्टतः तीन-कोटि-पूर्व-अधिक-तिरानवें-सागरोपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है। इसी प्रकार शेष आठों ही गमकों में बतलाना चाहिए, केवल इतना विशेष है—स्थिति और कायसंवेध उपयोग लगाकर जानना चाहिए।

अडसठवां आलापक : मनुष्यों में विजय आदि चार अनुत्तरविमान के देवों का उपपात-आदि

३०९. यदि अनुत्तरोपपातिक-कल्पातीत-वैमानिक-देवों से मनुष्य में उत्पन्न होते हैं तो—क्या विजय-अनुत्तरोपपातिक-देवों से उत्पन्न होते हैं? वैजयन्त-अनुत्तरोपपातिक यावत् सर्वार्थसिद्ध-अनुत्तरोपपातिक-देवों से उत्पन्न होते हैं?

गौतम! विजय-अनुत्तरोपपातिक-यावत् सर्वार्थसिद्ध-अनुत्तरोपपातिक-देवों से उत्पन्न होते हैं।

३१०. भन्ते! विजय-, वैजयन्त-, जयन्त- और अपराजित-देव, जो मनुष्य में उत्पन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितने काल की स्थिति वाले मनुष्य के रूप में उत्पन्न होता है? इसी प्रकार ग्रैवेयक-देवों की भांति वक्तव्यता (भ. २४/३०८), केवल इतना विशेष है—अवगाहना—जघन्यतः अंगुल-का-असंख्यातवां-भाग, उत्कृष्टतः एक रत्नी। ये सम्यग्-दृष्टि होते हैं, मिथ्या-दृष्टि नहीं होते, सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि नहीं होते। ज्ञानी होते हैं, अज्ञानी नहीं होते, नियमतः तीन ज्ञान वाले होते हैं, जैसे—अभिनिबोधिक-ज्ञानी, श्रुत-ज्ञानी और अवधि-ज्ञानी। स्थिति—जघन्यतः इकतीस सागरोपम, उत्कृष्टतः तेतीस सागरोपम। शेष

पूर्ववत्। भव की अपेक्षा—जघन्यतः दो भव-ग्रहण, उत्कृष्टतः चार भव-ग्रहण करता है। काल की अपेक्षा से जघन्यतः पृथक्त्व-वर्ष-अधिक-इकतीस-सागरोपम, उत्कृष्टतः दो-कोटि-पूर्व--अधिक-छासठ-सागरोपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है। इसी प्रकार शेष आठ गमक वक्तव्य हैं, केवल इतना विशेष है—स्थिति, अनुबन्ध और कायसंवेध यथोचित ज्ञातव्य हैं। शेष पूर्ववत्।

उनहत्तरवां आलापक : मनुष्यों में सर्वार्थसिद्ध-अनुत्तरविमान के देवों का उपपात-आदि

(तीसरा गमक : औघिक और उत्कृष्ट)

३११. भन्ते! सर्वार्थसिद्ध-देव जो मनुष्यों में उत्पन्न होने योग्य है (भन्ते! वह कितने काल की स्थिति वाले मनुष्य के रूप में उत्पन्न होता है?)

वही विजयादि-देव की भांति वक्तव्यता, केवल इतना विशेष है—स्थिति—जघन्यतः और उत्कृष्टतः तेतीस सागरोपम। इसी प्रकार अनुबन्ध भी। शेष पूर्ववत्। भव की अपेक्षा दो भव-ग्रहण, काल की अपेक्षा से जघन्यतः पृथक्त्व-वर्ष-अधिक-तेतीस-सागरोपम, उत्कृष्टतः कोटि-पूर्व-अधिक-तेतीस-सागरोपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(छट्ठा गमक : जघन्य और उत्कृष्ट)

३१२. वही सर्वार्थसिद्ध-देव जघन्य काल की स्थिति वाले मनुष्य में उत्पन्न होता है, वही वक्तव्यता, केवल इतना विशेष है—काल की अपेक्षा जघन्यतः पृथक्त्व (दो से नौ)-वर्ष--अधिक-तेतीस-सागरोपम, उत्कृष्टतः भी पृथक्त्व-वर्ष-अधिक-तेतीस-सागरोपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(नवां गमक : उत्कृष्ट और उत्कृष्ट)

३१३. वही सर्वार्थसिद्ध-देव उत्कृष्ट काल की स्थिति वाले मनुष्य के रूप में उत्पन्न होता है, वही वक्तव्यता, केवल इतना विशेष है—काल की अपेक्षा जघन्यतः कोटि-पूर्व-अधिक--तेतीस-सागरोपम, उत्कृष्टतः भी कोटि-पूर्व-अधिक-तेतीस-सागरोपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है। ये तीन ही गमक होते हैं, शेष गमक वक्तव्य नहीं है।

३१४. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

बाईसवां उद्देशक

सत्तरवां आलापक : वाणमंतर-देवों में असंख्यात वर्ष की आयु वाले असंज्ञी-तिर्यञ्च--पञ्चेन्द्रिय-जीवों का उपपात-आदि

३१५. भन्ते! वाणमन्तर-देव कहां से उपपन्न होते हैं?—क्या नैरयिक से उपपन्न होते हैं? तिर्यग्योनिक से उपपन्न होते हैं?......इसी प्रकार नागकुमार-उद्देशक (भ. २४/१४३,१४४) में असंज्ञी की उत्पत्ति की भांति अविकल रूप से वक्तव्य है।

३१६. भन्ते! यदि वाणमन्तर-देव संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों से उपपन्न होते हैं तो—

क्या वे जीव संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों से उपपन्न होते हैं? असंख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों से उपपन्न होते हैं?

गौतम! संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों से उपपन्न होते हैं, असंख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों से भी यावत् उपपन्न होते हैं (**भ.** २४/१४५)।

(पहला गमक)

३१७. भन्ते! (असंख्यात वर्ष की आयु वाला यौगलिक) संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव जो वाणमन्तर-देव में उपपन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितने काल की स्थिति वाले वाणमंतर-देव के रूप में उपपन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः दस-हजार-वर्ष की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः पल्योपम की स्थिति वाले वाणमंतर-देव के रूप में उपपन्न होता है। शेष पूर्ववत्। नागकुमार-देव के उद्देशक की भांति (**भ.** २४/१४७) यावत् काल की अपेक्षा से जघन्यतः दस-हजार-वर्ष-अधिक--सातिरेक-कोटि-पूर्व, उत्कृष्टतः चार पल्योपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(दूसरा गमक)

३१८. वही (असंख्यात वर्ष की आयु वाला संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-(यौगलिक)) जीव जघन्य काल की स्थिति वाले वाणमन्तर-देवों में उपपन्न होता है। नागकुमार-देवों के द्वितीय गमक (**भ.** २४/१४८) की भांति वक्तव्यता।

(तीसरे से नवें गमक तक)

३१९. वही (असंख्यात वर्ष की आयु वाला संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-(यौगलिक)) जीव उत्कृष्ट काल की स्थिति वाले वाणमन्तर-देवों में उपपन्न होता है, जघन्यतः एक पल्योपम स्थिति वाले, उत्कृष्टतः भी एक पल्योपम स्थिति वाले वाणमन्तर-देवों में उत्पन्न होता है। वही वक्तव्यता, केवल इतना विशेष है—स्थिति जघन्यतः एक पल्योपम, उत्कृष्टतः तीन पल्योपम। कायसंवेध—जघन्यतः दो पल्योपम, उत्कृष्टतः चार पल्योपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है। मध्यवर्ती तीनों ही गमक (चौथे, पांचवें और छट्ठे) की नागकुमार (**भ.** २४/१५०) के अंतिम तीन गमक की भांति वक्तव्यता, जैसा नागकुमार-उद्देशक (**भ.** २४/१५१) में कहा गया, केवल इतना विशेष है—स्थिति और कायसंवेध यथोचित ज्ञातव्य है।

इकहत्तरवां आलापक : वाणमन्तर-देवों में संख्यात वर्ष की आयुवाले संज्ञी-तिर्यञ्च-जीवों का उपपात-आदि

संख्यात वर्ष की आयु वाला संज्ञी-तिर्यञ्च-जीव वाणमन्तर-देव में उपपन्न होता है। नागकुमार की भांति वक्तव्यता। (**भ.** २४/१५२,१५३), केवल इतना विशेष है—स्थिति और अनुबंध—जघन्यतः दस-हजार-वर्ष, उत्कृष्टतः एक पल्योपम। कायसंवेध—दोनों

भवों—संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-तिर्यञ्च-जीव के भव और वाणमन्तर के भव की स्थिति के अनुरूप जानना चाहिए।

बहत्तरवां आलापक : वाणमन्तर-देवों में मनुष्य-यौगलिकों का उपपात-आदि

३२०. यदि मनुष्यों से वाणमन्तर-देव में उपपन्न होते हैं? असंख्यात वर्ष की आयु वाले मनुष्य का वाणमन्तर-देव में उपपात जैसी नागकुमार-उद्देशक (भ. २४/१५४-१५७) की वक्तव्यता है (वैसी वक्तव्यता), केवल इतना विशेष है—तृतीय गमक में स्थिति जघन्यतः एक पल्योपम, उत्कृष्टतः तीन पल्योपम। अवगाहना—जघन्यतः एक गव्यूत, उत्कृष्टतः तीन गव्यूत। शेष पूर्ववत्। कायसंवेध—जैसा इसी उद्देशक में असंख्यात वर्ष आयुष्य वाले संज्ञी-तिर्यञ्च-पञ्चेन्द्रिय की वक्तव्यता है (वैसी वक्तव्यता)।

तहत्तरवां आलापक : वाणमन्तर-देवों में संखयात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-मनुष्यों का उपपात-आदि

संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी मनुष्य की व्यन्तर-देव के रूप में उत्पत्ति नागकुमार-उद्देशक भांति (भ. २४/१५८,१५९) वक्तव्य है। केवल इतना विशेष है—स्थिति और कायसंवेध यथोचित वक्तव्य है।

३२१. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

तेईसवां उद्देशक

चोहत्तरवां आलापक : ज्योतिष्क-देवों में असंखयात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-तिर्यंच-पंचेन्द्रिय (यौगलिक) का उपपात आदि

३२२. भन्ते! ज्योतिष्क-देव कहां से उपपन्न होते हैं—क्या नैरयिक से उपपन्न होते हैं?.......भेद यावत् (भ. २४/१-३) संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों से उपपन्न होते हैं, असंज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों से उपपन्न नहीं होते।

३२३. भन्ते! यदि ज्योतिष्क-देव संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों से उपपन्न होते हैं तो—क्या संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों से उपपन्न होते हैं? असंख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों से उपपन्न होते हैं?

गौतम! संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों से उपपन्न होते हैं, असंख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों से भी उपपन्न होते हैं।

(पहला गमक)

३२४. भन्ते! असंख्यात वर्ष की आयु वाला संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक (यौगलिक), जो ज्योतिष्क-देव में उपपन्न होने योग्य है, भन्ते! कितने काल की स्थिति वाले ज्योतिष्क-देव के रूप में उपपन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः पल्योपम-के-आठवें-भाग की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः एक-लाख-वर्ष-अधिक-एक-पल्योपम की स्थिति वाले ज्योतिष्क-देव के रूप में उपपन्न होता है। (यह चन्द्र-विमान के देव का आयुष्य बताया है) अवशेष असुरकुमार-देव के उद्देशक की भांति,

केवल इतना विशेष है—स्थिति—जघन्यतः पल्योपम-का-आठवां-भाग, उत्कृष्टतः तीन पल्योपम। इसी प्रकार अनुबन्ध भी। शेष पूर्ववत् केवल इतना विशेष है—काल की अपेक्षा—जघन्यतः दो बार पल्योपम-का-आठवां-भाग, (एक बार पल्योपम-का-आठवां--भाग तिर्यञ्च-यौगलिक के सम्बन्ध में और दूसरी बार पल्योपम-का-आठवां-भाग तारा--ज्योतिषी-देव के सम्बन्ध में), उत्कृष्टतः एक-लाख-वर्ष-अधिक-चार-पल्योपम (तीन पल्योपम तिर्यञ्च-यौगलिक के सम्बन्ध में और एक-लाख-वर्ष-अधिक-एक-पल्योपम चन्द्र-ज्योतिषी-देव के सम्बन्ध में)—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(दूसरा गमक)

३२५. वही (असंख्यात वर्ष की आयु वाला संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-) जीव जघन्य काल की स्थिति वाले ज्योतिष्क-देव में उपपन्न होता है, जघन्यतः पल्योपम-का-आठवें--भाग की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः भी पल्योपम-के-आठवें-भाग की स्थिति वाले ज्योतिष्क--देव के रूप में उपपन्न होता है। वही वक्तव्यता, केवल इतना विशेष है—काल की अपेक्षा यथोचित ज्ञातव्य है।

(तीसरा गमक)

३२६. वही (असंख्यात वर्ष की आयुवाला संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-) जीव उत्कृष्ट काल की स्थिति वाले ज्योतिष्क-देव में उपपन्न होता है, वही वक्तव्यता, केवल इतना विशेष है—स्थिति—जघन्यतः एक-लाख-वर्ष-अधिक-एक-पल्योपम, उत्कृष्टतः तीन पल्योपम। इसी प्रकार अनुबन्ध भी काल की अपेक्षा जघन्यतः दो-लाख-वर्ष-अधिक-दो--पल्योपम, उत्कृष्टतः एक-लाख-वर्ष-अधिक-चार-पल्योपम।

(चौथा गमक)

३२७. वही अपनी जघन्य काल की स्थिति में उत्पन्न यौगलिक-तिर्यञ्च जघन्यतः पल्योपम--के-आठवें-भाग की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः भी पल्योपम-के-आठवें-भाग की स्थिति वाले ज्योतिष्क-देव के रूप में उपपन्न होगा।

३२८. भन्ते! वे जीव एक समय में कितने उपपन्न होते हैं? वही वक्तव्यता (भ. २४/३२६) केवल इतना विशेष है—अवगाहना—जघन्यतः पृथक्त्व-धनुष, उत्कृष्टतः कुछ अधिक अट्ठारह-सौ-धनुष। स्थिति—जघन्यतः पल्योपम-का-आठवां-भाग, उत्कृष्टतः भी पल्योपम--का-आठवां-भाग। इसी प्रकार अनुबन्ध भी। शेष पूर्ववत्। काल की अपेक्षा से—जघन्यतः दो बार पल्योपम-का-आठवां-भाग, उत्कृष्टतः भी दो बार पल्योपम-का-आठवां-भाग—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है। जघन्य काल की स्थिति वाले जीव के यही एक ही गमक है (पांचवा, छट्ठा गमक नहीं होता)।

(सातवें से नवां गमक)

३२९. वही अपनी उत्कृष्ट काल स्थिति में उत्पन्न यौगलिक-तिर्यञ्च ज्योतिष्क-देव के रूप में उपपन्न होता है। वही औधिक गमक की भांति वक्तव्यता। (द्वितीय गमक की अष्टम

में और तृतीय गमक की नवम में), केवल इतना विशेष है—स्थिति—जघन्यतः तीन पल्योपम, उत्कृष्टतः भी तीन पल्योपम। इसी प्रकार अनुबन्ध भी। शेष पूर्ववत्। इसी प्रकार अन्तिम तीन गमक ज्ञातव्य हैं, केवल इतना विशेष है—स्थिति और कायसंवेध यथोचित ज्ञातव्य है। (पांचवां और छट्ठा गमक नहीं होने से) ये सात गमक हैं।

पिचहत्तरवां आलापक : ज्योतिष्क-देवों में संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-तिर्यञ्च--पञ्चेन्द्रिय-जीवों का उपपात-आदि

३३०. यदि संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों से ज्योतिष्क-देव के रूप में उपपन्न होते हैं? तो असुरकुमारों में उपपद्यमान संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी--पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक जीवों की भांति (भ. २४/१३१-१३३) नौ ही गमक वक्तव्य है, केवल इतना विशेष है—ज्योतिष्क-देवों की स्थिति और कायसंवेध यथोचित ज्ञातव्य है। शेष निरवशेष पूर्ववत्।

३३१. यदि मनुष्यों से उपपन्न होते हैं (पृच्छा)? भेद उसी प्रकार यावत् (भ. २४/१३४-१३५)।

छिहत्तरवां आलापक : ज्योतिष्क-देवों में असंख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-मनुष्यों (यौगलिकों) का उपपात-आदि

३३२. भन्ते! असंख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-मनुष्य जो ज्योतिष्क-देव में उपपन्न होने योग्य है, भन्ते! वह जीव कितने काल की स्थिति वाले ज्योतिष्क-देवों में उपपन्न होता है? इसी प्रकार जैसे ज्योतिष्क-देव में उपपद्यमान असंख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी--पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक जीवों के सात गमक बतलाए हैं, वैसे ही मनुष्यों के भी वक्तव्य हैं (भ. २४/३२४-३२९), केवल इतना विशेष है—अवगाहना का अन्तर—प्रथम तीन गमकों में अवगाहना जघन्यतः कुछ-अधिक-नौ-सौ-धनुष, उत्कृष्टतः तीन गव्यूत। मध्यवर्ती तीन गमकों में अवगाहना जघन्यतः कुछ-अधिक-नौ-सौ-धनुष, उत्कृष्टतः भी कुछ-अधिक-नौ--सौ-धनुष। अन्तिम तीन गमकों में अवगाहना जघन्यतः तीन गव्यूत, उत्कृष्टतः भी तीन गव्यूत। शेष निरवशेष पूर्ववत् वक्तव्य है यावत् कायसंवेध तक।

सितंत्तरवां आलापक : ज्योतिष्क-देवों में संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-मनुष्यों का उपपात-आदि

३३३. यदि संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-मनुष्यों से ज्योतिष्क-देव के रूप में उपपन्न होते हैं? संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-मनुष्यों के असुरकुमार-देव में उपपद्यमान की वक्तव्यता (भ. २४/१३९-१४२), वैसे ही नव गमक वक्तव्य हैं, केवल इतना विशेष है—ज्योतिष्क-देव की स्थिति और कायसंवेध यथोचित ज्ञातव्य हैं। शेष पूर्ववत् निरवशेष वक्तव्य है।

३३४. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

चौबीसवां उद्देशक

३३५. भन्ते! सौधर्म-देव कहां से उपपन्न होते हैं—क्या नैरयिक से उपपन्न होते हैं? भेद ज्योतिष्क-उद्देशक (भ. २४/३२२,३२३) की भांति वक्तव्य हैं।

अठहत्तरवां आलापक : सौधर्म-देवों (प्रथम देवलोक) में असंख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-तिर्यंच-पचेन्द्रिय (यौगलिकों) का उपपात-आदि

(पहला गमक)

३३६. भन्ते! असंख्यात वर्ष की आयु वाला संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक (यौगलिक) जो सौधर्म-देव में उपपन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितने काल की स्थिति वाले सौधर्म-देव के रूप में उपपन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः एक पल्योपम की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः तीन पल्योपम की स्थिति वाले सौधर्म देव के रूप में उपपन्न होता है।

३३७. भन्ते! वे जीव एक समय में कितने उपपन्न होते हैं?......शेष ज्योतिष्क-देवों में उपपद्यमान संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों (भ. २४/३२४) की भांति वक्तव्य है, केवल इतना विशेष है—सम्यग्-दृष्टि भी होते हैं, मिथ्या-दृष्टि भी होते हैं, सम्यग्-मिथ्या--दृष्टि नहीं होते। ज्ञानी भी होते हैं, अज्ञानी भी होते हैं, नियमतः दो ज्ञान अथवा दो अज्ञान होते हैं। स्थिति—जघन्यतः एक पल्योपम, उत्कृष्टतः तीन पल्योपम। इसी प्रकार अनुबन्ध भी। शेष पूर्ववत्। काल की अपेक्षा जघन्यतः दो पल्योपम, उत्कृष्टतः छह पल्योपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(दूसरा गमक)

३३८. वही (असंख्यात वर्ष की आयु वाला संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक (यौगलिक)) (औधिक आयुष्य वाला) जघन्य काल की स्थिति वाले सौधर्म-देव में उपपन्न होता है, वही वक्तव्यता (भ. २४/३३६-३३७), केवल इतना विशेष है—काल की अपेक्षा जघन्यतः दो पल्योपम, उत्कृष्टतः चार पल्योपम— इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति--आगति करता है।

(तीसरा गमक)

३३९. वही (असंख्यात वर्ष की आयु वाला संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक (यौगलिक) (औधिक आयुष्य वाला) उत्कृष्ट काल की स्थिति वाले सौधर्म-देव में उपपन्न होता है, जघन्यतः तीन पल्योपम की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः भी तीन पल्योपम की स्थिति वाले सौधर्म-देव के रूप में उपपन्न होता है, वही वक्तव्यता (भ. २४/३३८), केवल इतना विशेष है—स्थिति—जघन्यतः तीन पल्योपम, उत्कृष्टतः भी तीन पल्योपम। शेष पूर्ववत्। काल की अपेक्षा जघन्यतः छह पल्योपम, उत्कृष्टतः भी छह पल्योपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(छट्ठा गमक)

३४०. वही अपनी जघन्य काल की स्थिति में उपपन्न तिर्यंच-यौगलिक जघन्यतः एक पल्योपम की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः भी एक पल्योपम की स्थिति वाले सौधर्म-देव के रूप में उपपन्न होता है (भ. २४/३३९) वही वक्तव्यता, केवल इतना विशेष है—अवगाहना—जघन्यतः पृथक्त्व-धनुष, उत्कृष्टतः दो गव्यूत। स्थिति—जघन्यतः एक पल्योपम, उत्कृष्टतः भी एक

पल्योपम। शेष पूर्ववत्। काल की अपेक्षा जघन्यतः दो पल्योपम, उत्कृष्टतः भी दो पल्योपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है।

(सातवें से नवें गमक तक)

३४१. वही अपनी उत्कृष्ट काल की स्थिति में उत्पन्न तिर्यंच-यौगलिक सौधर्म-देव के रूप में उपपन्न होता हैं, प्रथम गमक के सदृश (सातवां, आठवां और नवां) तीन गमक वक्तव्य हैं, केवल इतना विशेष है—स्थिति और काल की अपेक्षा यथोचित ज्ञातव्य है।

उन्यासीवां आलापक : सौधर्म देवों (प्रथम देवलोक) में संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-तिर्यञ्च-पञ्चेन्द्रि-जीवों का उपपात-आदि

३४२. यदि संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक सौधर्म-देव में उपपन्न होते हैं? जिस प्रकार संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव के असुरकुमार-देव में उपपद्यमान की भांति नव गमक (**भ.** २४/१३१,१३२,१३३) वैसे ही नौ गमक हैं, केवल इतना विशेष है—स्थिति और कायसंवेध यथोचित ज्ञातव्य हैं। जब अपनी जघन्य काल की स्थिति उत्पन्न पंचेन्द्रिय-तिर्यञ्च-यौगलिक सौधर्म-देव के रूप में उपपन्न होता है तब तीनों ही गमकों (चौथे, पांचवें और छट्ठे) में जीव सम्यग्-दृष्टि भी होता है, मिथ्या-दृष्टि भी होता है, सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि नहीं होता।

३४३. यदि मनुष्यों से सौधर्म-देव में उपपन्न होते हैं? भेद ज्योतिष्क-देव में, (**भ.** २४/ ३३१) उपपद्यमान की भांति वक्तव्य हैं यावत्—

अस्सीवां आलापक : सौधर्म-देवों में असंख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-मनुष्य (यौगलिकों) का उपपात-आदि

३४४. भंते! असंख्यात वर्ष की आयु वाला संज्ञी-मनुष्य, जो सौधर्म-देव के रूप में उपपन्न होने योग्य है? इसी प्रकार जैसे असंख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक--जीव के सौधर्म-देव में उपपद्यमान बतलाये गये हैं (**भ.** २४/३३६-३४१), वही सात गमक यहां वक्तव्य है, केवल इतना विशेष है—पहले दो गमक (प्रथम और द्वितीय) में अवगाहना—जघन्यतः एक गव्यूत, उत्कृष्टतः तीन गव्यूत। तीसरे गमक में जघन्यतः तीन गव्यूत, उत्कृष्टतः भी तीन गव्यूत। चौथे गमक में जघन्यतः एक गव्यूत, उत्कृष्टतः भी एक गव्यूत। अन्तिम तीन गमकों (सातवें, आठवें और नवें) में जघन्यतः तीन गव्यूत, उत्कृष्टतः भी तीन गव्यूत। शेष निरवशेष पूर्ववत्।

इक्कासीवां आलापक : सौधर्म-देवों में संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-मनुष्यों का उपपात-आदि

३४५. यदि संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-मनुष्यों से सौधर्म-देव के रूप में उपपन्न होता है? इसी प्रकार जैसे संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-मनुष्यों का असुरकुमार-देव में उपपद्यमान (**भ.** २४/१३९-१४१) की भांति नौ गमक यहां वक्तव्य हैं। केवल इतना विशेष है—सौधर्म-देव की स्थिति और कायसंवेध यथोचित ज्ञातव्य हैं। शेष पूर्ववत्।

बयासीवां आलापक : ईशान-देवों (दूसरे देवलोक) में तिर्यंच-यौगलिकों का उपपात-आदि

३४६. भन्ते! ईशान-देव कहां से उपपन्न होते हैं? ईशान-देवों की सौधर्म-देव के सदृश वक्तव्यता (भ. २४/३३६)। केवल इतना विशेष है—असंख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी--पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक (यौगलिक) जीव की जिन स्थानों में सौधर्म-देवलोक में उपपद्यमान की पल्योपम स्थिति होती है उन स्थानों में यहां (ईशान-देवलोक में) स्थिति सातिरेक-एक-पल्योपम कथनीय है, चौथे गमक में अवगाहना—जघन्यतः पृथक्त्व (दो से नौ)-धनुष, उत्कृष्टतः सातिरेक दो गव्यूत। शेष पूर्ववत्।

तरासीवां आलापक : ईशान-देवों (दूसरे देवलोक) में मनुष्य-यौगलिकों का उपपात-आदि

३४७. असंख्यात वर्ष की आयुवाले संज्ञी-मनुष्य की (ईशान-देवलोक में) भी असंख्यात वर्ष की आयुवाले संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक (भ. २४/३३६-३४१) की भांति शेष वक्तव्यता। अवगाहना—जिन स्थानों में अवगाहना एक गव्यूत बतलाई गई, उन स्थानों में यहां (ईशान-देवलोक में) उपपन्न होने वाले मनुष्य-यौगलिक की अवगाहना कुछ अधिक एक गव्यूत वक्तव्य है। शेष पूर्ववत्।

चौरासीवां आलापक : ईशान-देवों (दूसरे देवलोक) में संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी--तिर्यंच-पंचेन्द्रिय-जीवों एवं संज्ञी-मनुष्यों का उपपात-आदि

३४८. संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक और मनुष्य के सौधर्म--देवलोक में उपपद्यमान देवों की भांति ईशान-देवलोक में भी नौ गमक अविकल रूप में वक्तव्य हैं, केवल इतना विशेष है—ईशान-देव की स्थिति और कायसंवेध यथोचित ज्ञातव्य हैं।

३४९. भन्ते! सनत्कुमार-देव कहां से उपपन्न होते हैं? उपपात शर्कराप्रभा-पृथ्वी के नैरयिकों की भांति, यावत्—

पचासीवां आलापक : सनत्कुमार-देवों (तीसरे देवलोक) में संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-तिर्यंच-पञ्चेन्द्रिय-जीवों का उपपात-आदि

३५०. भन्ते! संख्यात वर्ष की आयु वाला पर्याप्त-संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक जो सनत्कुमार-देव में उपपन्न होने योग्य है.....?

शेष परिमाण से लेकर भवादेश तक वही वक्तव्यता ज्ञातव्य है, जैसे सौधर्म-देवलोक में उपपद्यमान (भ. २४/३४२) की वक्तव्यता है, केवल इतना विशेष है—सनत्कुमार-देव की स्थिति और कायसंवेध यथोचित ज्ञातव्य है। जब (संख्यात वर्ष की आयु वाला पर्याप्त संज्ञी-पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक जीव) अपनी जघन्य काल की स्थिति वाले सनत्कुमार-देवों में उपपन्न होता है, तब तीनों गमक (चौथे, पांचवें और छट्ठे) में पहली पांच लेश्याएं वक्तव्य हैं। शेष पूर्ववत्।

छयासीवां आलापक : सनत्कुमार-देवों (तीसरे देवलोक) में संख्यात वर्ष की आयुवाले संज्ञी-मनुष्यों का उपपात-आदि

३५१. यदि मनुष्यों से उपपन्न होते हैं तो....? शर्करा-प्रभा में उपपद्यमान मनुष्यों की (भ.

२४/१०५-१०८) भांति नौ ही गमक वक्तव्य हैं, केवल इतना विशेष है—सनत्कुमार-देव की स्थिति और कायसंवेध यथोचित ज्ञातव्य हैं।

सत्तासीवां आलापक : चौथे देवलोक से आठवें देवलोक तक संज्ञी-तिर्यञ्च-पञ्चेन्द्रिय--जीवों और संज्ञी-मनुष्यों का उपपात-आदि

३५२. भन्ते! माहेन्द्रक-देव कहां से उपपन्न होते हैं? जिस प्रकार सनत्कुमार-देवों (भ. २४/३४९-३५१) की वक्तव्यता वैसी ही माहेन्द्रक-देवों की वक्तव्यता। केवल इतना विशेष है—(स्थिति)—माहेन्द्रक-देवों की स्थिति पूर्वोक्त से सातिरेक वक्तव्य है। इसी प्रकार ब्रह्मलोक (पांचवें देवलोक) के देवों की भी वक्तव्यता, केवल इतना विशेष है—ब्रह्मलोक-देव की स्थिति और कायसंवेध यथोचित ज्ञातव्य हैं। इसी प्रकार यावत् सहस्रार (आठवें देवलोक) तक, केवल इतना विशेष है—स्थिति और कायसंवेध यथोचित ज्ञातव्य हैं। जघन्य काल की स्थिति वाले संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों लांतक-आदि-देवों में उत्पन्न होते हैं, उनके तीनों ही गमकों (चौथे, पांचवें और छट्ठे) में छहों ही लेश्याएं वक्तव्य हैं। संहनन—ब्रह्मलोक- और लांतक-देवलोक में (पांचवें और छट्ठे देवलोक में) उपपद्यमान तिर्यग्योनिकों और मनुष्यों में संहनन प्रथम पांच, महाशुक्र- और सहस्रार-देवलोक में (सातवें और आठवें देवलोक में) उपपद्यमान तिर्यग्योनिकों और मनुष्यों में संहनन प्रथम चार। शेष पूर्ववत्।

अट्ठासीवां आलापक : आनत-देवों (नौवें देवलोक) में संज्ञी-मनुष्यों का उपपात-आदि

३५३. भन्ते! आनत-देव कहां से उपपन्न होते हैं......? उपपात—जैसा सहस्रार-देवों की भांति वक्तव्य है, केवल इतना विशेष है—तिर्यग्योनिक-जीवों की उपपत्ति नहीं होती यावत्—

३५४. भन्ते! संख्यात वर्ष की आयु वाला पर्याप्त-संज्ञी-मनुष्य, जो आनत-देवलोक में उपपन्न होने योग्य है.....(पृच्छा)-सहस्रार-देवलोक में उपपद्यमान मनुष्यों की भांति वक्तव्यता (भ. २४/३५२) केवल इतना विशेष है—संहनन—उपपन्न होने वाले मनुष्यों में प्रथम तीन। शेष पूर्ववत् यावत् अनुबंध तक। भव की अपेक्षा जघन्यतः तीन भव-ग्रहण, उत्कृष्टतः सात भव-ग्रहण। काल की अपेक्षा जघन्यतः दो पृथक्त्व (दो से नौ)-वर्ष-अधिक--अट्ठारह-सागरोपम, उत्कृष्टतः चार कोटि-पूर्व-अधिक-सत्तावन-सागरोपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है। इसी प्रकार शेष आठ गमक भी वक्तव्य हैं, केवल इतना विशेष है—स्थिति और कायसंवेध यथोचित ज्ञातव्य हैं। शेष पूर्ववत्। इसी प्रकार यावत् अच्युत-देवों की वक्तव्यता। केवल इतना विशेष है—स्थिति और कायसंवेध यथोचित ज्ञातव्य हैं। आनत आदि चार देवलोक में उपपन्न होने वाले मनुष्यों में संहनन—प्रथम तीन।

नवासीवां आलापक : नव ग्रैवेयक-देवों में संज्ञी-मनुष्यों का उपपात-आदि

३५५. भन्ते! ग्रैवेयक-देव कहां से उपपन्न होते हैं? वही वक्तव्यता (भ. २४/३५४) केवल इतना विशेष है—ग्रैवेयक-देव में उपपन्न होने वाले मनुष्यों में प्रथम दो संहनन होते हैं। स्थिति और कायसंवेध यथोचित ज्ञातव्य हैं।

नव्वेवां आलापक : प्रथम चार अनुत्तरविमान के देवों में संज्ञी-मनुष्यों का उपपात-आदि

३५६. भन्ते! विजय-, वैजयन्त-, जयन्त- और अपराजित-देव (अनुत्तर-देव) कहां से उपपन्न होते हैं? वही (**भ.** २४/३५५) निरवशेष वक्तव्यता यावत् अनुबंध तक। केवल इतना विशेष है—इनमें उत्पन्न होने वाले मनुष्यों में संहनन प्रथम वज्र-ऋषभ-नाराच होता है। शेष पूर्ववत्। भव की अपेक्षा जघन्यतः तीन भव-ग्रहण, उत्कृष्टतः पांच भव-ग्रहण। काल की अपेक्षा जघन्यतः दो-पृथक्त्व-वर्ष-अधिक-इक्कत्तीस-सागरोपम, उत्कृष्टतः तीन कोटि--पूर्व-अधिक-छासठ-सागरोपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है। इसी प्रकार शेष आठ गमक वक्तव्य है, केवल इतना विशेष है—स्थिति और कायसंवेध यथोचित ज्ञातव्य हैं। मनुष्यों में लब्धि नौ ही गमकों में ग्रैवेयक-देवों में उपपद्यमान की भांति वक्तव्य है, केवल इतना विशेष है—संहनन—प्रथम वज्र-ऋषभ-नाराच संहनन वाले ही उपपन्न होते हैं।

इक्यानवेंवां आलापक : सर्वार्थसिद्ध-देवों में संज्ञी-मनुष्यों का उपपात-आदि

३५७. भन्ते! सर्वार्थसिद्ध-देव कहां से उपपन्न होते हैं? उपपात जैसा विजय-आदि-देवों की भांति यावत्—

(पहला गमक)

३५८. भन्ते! वह कितने काल की स्थिति वाले देवों के रूप में उपपन्न होता है?

गौतम! जघन्यतः तेतीस सागरोपम की स्थिति वाले, उत्कृष्टतः भी तेतीस सागरोपम की स्थिति वाले देव के रूप में उपपन्न होता है। अवशेष विजय-आदि-देवों में उपपद्यमान की भांति वक्तव्य है। केवल इतना विशेष है—भव की अपेक्षा—तीन भव-ग्रहण, काल की अपेक्षा—जघन्यतः दो पृथक्त्व (दो से नौ)-वर्ष-अधिक-तेतीस-सागरोपम, उत्कृष्टतः भी दो--कोटि-पूर्व-अधिक- तेतीस-सागरोपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति--आगति करता है।

(सर्वार्थसिद्ध में दूसरा और तीसरा गमक नहीं है।)

(चौथा गमक)

३५९. वही अपनी जघन्य काल की स्थिति में उत्पन्न मनुष्य सर्वार्थसिद्ध-देवों में उपपन्न होता है, वही वक्तव्यता, केवल इतना विशेष है—अवगाहना— पृथक्त्व (दो से नौ)-रत्नी (हाथ) और स्थिति—पृथक्त्व (दो से नौ)-वर्ष। शेष पूर्ववत्। कायसंवेध यथोचित ज्ञातव्य है।

(पांचवां और छट्ठा गमक नहीं है।)

(सातवां गमक)

३६०. वही अपनी उत्कृष्ट काल की स्थिति में उत्पन्न मनुष्य सर्वार्थसिद्ध-देव के रूप में उत्पन्न होता है। वही वक्तव्यता (**भ.** २४/३५९), केवल इतना विशेष है—अवगाहना—जघन्यतः पांच सौ धनुष, उत्कृष्टतः भी पांच सौ धनुष। स्थिति—जघन्यतः कोटि-पूर्व, उत्कृष्टतः भी कोटि-पूर्व यावत् भवादेश तक। शेष पूर्ववत्। काल की

अपेक्षा—जघन्यतः दो कोटि-पूर्व-अधिक-तेतीस-सागरोपम, उत्कृष्टतः भी दो कोटि-पूर्व--अधिक-तेतीस-सागरोपम—इतने काल तक रहता है, इतने काल तक गति-आगति करता है। ये तीन गमक (प्रथम, चतुर्थ और सप्तम) सर्वार्थसिद्धक-देवों के होते हैं।

३६१. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है, इस प्रकार भगवान् गौतम यावत् (भ. १/५१) संयम और तप से अपने आपको भावित करते हुए विहरण करने लगे।

• • •

पच्चीसवां शतक

पहला उद्देशक

संग्रहणी गाथा

पच्चीसवें शतक के बारह उद्देशक—१. लेश्या २. द्रव्य ३. संस्थान ४. युग्म, ५. पर्यव, ६. निर्ग्रन्थ ७. श्रमण ८. ओघ ९. भविक १० अभविक ११. सम्यक्, १२. मिथ्या—ये १२ उद्देशक हैं।

लेश्या-पद

१. उस काल और उस समय में राजगृह में गणधर गौतम ने श्रमण भगवान् महावीर से यावत् (भ. १/४-१०) इस प्रकार कहा—भन्ते! लेश्याएं कितनी प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! छह लेश्याएं प्रज्ञप्त हैं, जैसे—कृष्ण-लेश्या, प्रथम शतक के द्वितीय उद्देशक (**भ.** १/१०२, **पण्णवणा,** १७/२) की भांति लेश्या-विभाग वक्तव्य है। अल्पबहुत्व यावत् (**पण्णवण्णा** १७/७१-८३) चार प्रकार के देवों और चार प्रकार की देवियों का अल्पबहुत्व संयुक्त रूप से वक्तव्य है।

योग का अल्पबहुत्व-पद

२. भन्ते! संसार-समापन्नक-जीव कितने प्रकार के प्रज्ञत हैं?

गौतम! संसार-समापन्न-जीव चौदह प्रकार के प्रज्ञप्त हैं जैसे—१ सूक्ष्म-(एकेन्द्रिय)-अपर्याप्तक २. सूक्ष्म-(एकेन्द्रिय)-पर्याप्तक ३. बादर-(एकेन्द्रिय)-अपर्याप्तक ४. बादर (एकेन्द्रिय)--पर्याप्तक ५. द्वीन्द्रिय-अपर्याप्तक ६. द्वीन्द्रिय-पर्याप्तक ७. त्रीन्द्रिय-पर्याप्तक ८. त्रीन्द्रिय--पर्याप्तक ९. चतुरिन्द्रिय-अपर्याप्तक १०. चतुरिन्द्रिय-पर्याप्तक ११. असंज्ञी-पञ्चेन्द्रिय--अपर्याप्तक १२. असंज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-पर्याप्तक १३. संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-अपर्याप्तक १४. संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-पर्याप्तक।

३. भन्ते! इन चौदह प्रकार के संसार-समापन्नक-जीवों के जघन्य और उत्कृष्ट योग में कौन किससे अल्प, बहुत, तुल्य या विशेषाधिक हैं?

गौतम! १. सूक्ष्म-(एकेन्द्रिय)-अपर्याप्तक-जीवों का जघन्य योग सबसे अल्प है। २. बादर--(एकेन्द्रिय)-अपर्याप्तक-जीवों का जघन्य योग उससे असंख्येय-गुणा है। ३. द्वीन्द्रिय--अपर्याप्तक-जीवों का जघन्य योग उससे असंख्येय-गुणा है। ४. इसी प्रकार त्रीन्द्रिय--(अपर्याप्तक-जीवों का जघन्य योग) ५. इसी प्रकार चतुरिन्द्रिय-(अपर्याप्तक-जीवों का जघन्य योग) ६. असंज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-अपर्याप्तक-जीवों का जघन्य योग उससे असंख्येय-गुणा है। ७. संज्ञी-पंचेन्द्रिय-अपर्याप्तक-जीवों का जघन्य योग उससे असंख्येय-गुणा है।

८. सूक्ष्म-पर्याप्तक-जीवा का जघन्य योग उससे असंख्येय गुणा है। ९. बादर-पर्याप्तक- -जीवों का जघन्य योग उससे असंख्येय-गुणा है। १०. सूक्ष्म-पर्याप्तक-जीवों का उत्कृष्ट योग उससे असंख्येय-गुणा है। ११. बादर-अपर्याप्तक-जीवों का उत्कृष्ट योग उससे असंख्येय-गुणा है। १२. सूक्ष्म-पर्याप्तक-जीवों का उत्कृष्ट योग उससे असंख्येय-गुणा है। १३. बादर-पर्याप्तक-जीवों का उत्कृष्ट योग उससे असंख्येय-गुणा है। १४. द्वीन्द्रिय- -पर्याप्तक-जीवों का जघन्य योग उससे असंख्येय-गुणा है। १५. इसी प्रकार त्रीन्द्रिय- -(पर्याप्तक-जीवों का जघन्य योग उससे असंख्येय-गुणा है) इसी प्रकार यावत् १८. संज्ञी- -पञ्चेन्द्रिय पर्याप्तक-जीवों का जघन्य योग उससे असंख्येय-गुणा है। १९. द्वीन्द्रिय- -अपार्याप्तक-जीवों का उत्कृष्ट योग उससे असंख्येय-गुणा है। २०. इसी प्रकार त्रीन्द्रिय- -(अपर्याप्तक-जीवों का भी उत्कृष्ट योग उससे असंख्येय-गुणा है) इसी प्रकार यावत् २३. संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-अपर्याप्तक-जीवों का उत्कृष्ट योग उससे असंख्येय-गुणा है। २४. द्वीन्द्रिय-पर्याप्तक-जीवों का उत्कृष्ट योग उससे असंख्येय-गुणा है। २५. इसी प्रकार त्रीन्द्रिय-पर्याप्तक-जीवों का उत्कृष्ट योग उससे असंख्येय-गुणा है) इसी प्रकार यावत् २८. संज्ञी-पंचेन्द्रिय-पर्याप्तक-जीवों का उत्कृष्ट योग उससे असंख्येय-गुणा है।

समयोगी-विषमयोगी-पद

४. भन्ते! क्या प्रथम समय में उपपन्न दो नैरयिक सम-योग वाले हैं? विषम-योग वाले हैं?

गौतम! किसी अपेक्षा सम-योग वाले हैं, किसी अपेक्षा विषम-योग वाले हैं।

५. भन्ते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—किसी अपेक्षा सम-योग वाले हैं और किसी अपेक्षा विषम-योग वाले हैं?

गौतम! आहारक-नैरयिक की अपेक्षा अनाहारक-नैरयिक अथवा अनाहारक-नैरयिक की अपेक्षा आहारक-नैरयिक स्यात् हीन, स्यात् तुल्य और स्यात् अभ्यधिक योग वाला होता है। आहारक से अनाहारक—यह हीनता का हेतु है। अनाहारक से आहारक—यह अधिकता का हेतु है। दोनों आहारक अथवा दोनों अनाहारक—यह तुल्यता का हेतु है।

यदि हीन योग वाला होता है तो असंख्येय-भाग-हीन योग वाला अथवा संख्येय-भाग- -हीन योग वाला होता है, संख्येय-गुणा-हीन योग वाला अथवा असंख्येय-गुणा-हीन योग वाला होता है।

यदि अधिक योग वाला होता है तो असंख्येय-भाग-अधिक योग वाला अथवा संख्येय- -भाग-अधिक योग वाला अथवा संख्येय-भाग-अधिक योग, संख्येय-गुणा-अधिक योग वाला अथवा असंख्येय-गुणा-अधिक योग वाला होता है।

गौतम! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—किसी अपेक्षा सम-योग वाले हैं और किसी अपेक्षा विषम-योग वाले हैं। इस प्रकार यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता।

योग-पद

६. भन्ते! योग कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! योग पन्द्रह प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—१. सत्य-मनो-योग २. मृषा-मनो-योग ३.

सत्यामृषा (मिश्र)-मनो-योग ४. असत्यामृषा (व्यवहार)-मनो-योग ५. सत्य-वचन-योग ६. मृषा-वचन-योग ७. सत्यामृषा-वचन-योग ८. असत्यामृषा-वचन-योग ९. औदारिक--शरीर-काय-योग १०. औदारिक-शरीर-मिश्र-काय-योग ११. वैक्रिय-शरीर-काय-योग १२. वैक्रिय-शरीर-मिश्र-काय-योग १३. आहारक-शरीर-काय-योग १४. अहारक-शरीर--मिश्र-काय-योग १५. कर्म-शरीर-काय-योग।

७. भन्ते! इन पन्द्रह प्रकार के जघन्य और उत्कृष्ट योग में कौन किससे अल्प, बहुत, तुल्य अथवा विशेषाधिक हैं?

गौतम! १. कर्म-शरीर का जघन्य योग सबसे अल्प है, २. औदारिक-मिश्र का जघन्य योग उससे असंख्येय-गुणा अधिक है, ३. वैक्रिय-मिश्र का जघन्य योग उससे असंख्येय-गुणा अधिक है, ४. औदारिक-शरीर का जघन्य योग उससे असंख्येय-गुणा अधिक है, ५. वैक्रिय-शरीर का जघन्य योग उससे असंख्येय-गुणा अधिक है, ६. कर्म-शरीर का उत्कृष्ट योग उससे असंख्येय-गुणा अधिक है, ७. आहारक-मिश्र का जघन्य योग उससे असंख्येय--गुणा अधिक है, ८. उस (आहारक मिश्र) का ही उत्कृष्ट योग असंख्येय-गुणा अधिक है। ९,१०. औदारिक-मिश्र और वैक्रिय-मिश्र—इन दोनों का उत्कृष्ट योग परस्पर तुल्य है और आहारक-मिश्र के उत्कृष्ट योग से असंख्येय-गुणा अधिक है, ११. असत्यमृषा-मनो-योग का जघन्य योग उससे असंख्येय-गुणा अधिक है, १२. आहारक-शरीर का जघन्य योग उससे असंख्येय-गुणा अधिक है, १३-१९. तीन प्रकार के मनो-योग के चार प्रकार के वचन -योग के—ये सातों भी परस्पर तुल्य, जघन्य योग उससे असंख्येय-गुणा अधिक है। २०. आहारक-शरीर का उत्कृष्ट योग उससे असंख्येय-गुणा अधिक है। २१-३०. औदारिक--शरीर और वैक्रिय-शरीर के, चार प्रकार के मनो-योग के और चार प्रकार के वचन-योग के—इन दसों का भी परस्पर तुल्य, उत्कृष्ट योग उससे असंख्येय-गुणा अधिक है।

८. भन्ते! वह ऐसा ही है, भन्ते! वह ऐसा ही है।

दूसरा उद्देशक

द्रव्य-पद

९. भन्ते! द्रव्य कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! द्रव्य दो प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे जीव-द्रव्य और अजीव-द्रव्य।

१०. भन्ते! अजीव-द्रव्य कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! दो प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—रूपि-अजीव-द्रव्य और अरूपि-अजीव-द्रव्य।

११. भन्ते! अरूपि-अजीव-द्रव्य कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! दस प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—धर्मास्तिकाय, धर्मास्तिकाय का देश, धर्मास्तिकाय का प्रदेश, अधर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय का देश, अधर्मास्तिकाय का प्रदेश, आकाशास्तिकाय, आकाशास्तिकाय का देश, आकाशास्तिकाय का प्रदेश, अद्धासमय।

१२. भन्ते! रूपि-अजीव-द्रव्य कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! चार प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—स्कन्ध, स्कन्ध-देश, स्कन्ध-प्रदेश, परमाणु-पुद्गल।

१३. भन्ते! वे क्या संख्येय हैं? असंख्येय हैं? अनन्त हैं?

गौतम! संख्येय नहीं हैं, असंख्येय नहीं हैं, अनन्त हैं।

१४. भन्ते! यह किसी अपेक्षा से कहा जा रहा है—संख्येय नहीं है, असंख्येय नहीं है, अनन्त हैं?

गौतम! परमाणु-पुद्गल अनन्त हैं, द्वि-प्रदेशी स्कन्ध अनन्त हैं यावत् दश-प्रदेशी-स्कन्ध अनन्त हैं, संख्येय-प्रदेशी स्कन्ध अनन्त हैं, असंख्येय-प्रदेशी स्कन्ध अनन्त हैं, अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध अनन्त हैं। गौतम! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—संख्येय नहीं है, असंख्येय नहीं है, अनन्त हैं।

१५. भन्ते! जीव-द्रव्य क्या संख्येय हैं? असंख्येय हैं? अनन्त हैं?

गौतम! संख्येय नहीं हैं, असंख्येय नहीं हैं, अनन्त हैं।

१६. भन्ते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—जीव-द्रव्य संख्येय नहीं हैं, असंख्येय नहीं हैं, अनन्त हैं?

गौतम! नैरयिक-जीव असंख्येय हैं, यावत् वायुकाय के जीव असंख्येय हैं, वनस्पतिकाय के जीव अनन्त हैं, द्वीन्द्रिय-जीव असंख्येय हैं, इसी प्रकार यावत् वैमानिक-जीव असंख्येय हैं, सिद्ध अनन्त हैं। इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—यावत् जीव-द्रव्य अनन्त हैं।

जीवों का अजीव परिभोग-पद

१७. भन्ते! क्या जीव-द्रव्य अजीव-द्रव्यों का परिभोग करते हैं? अथवा क्या अजीव-द्रव्य जीव-द्रव्यों का परिभोग करते हैं?

गौतम! जीव-द्रव्य अजीव-द्रव्यों का परिभोग करते हैं, अजीव-द्रव्य जीव-द्रव्यों का परिभोग नहीं करते।

१८. भन्ते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—जीव-द्रव्य अजीव-द्रव्यों का परिभोग करते हैं, अजीव-द्रव्य जीव-द्रव्यों का परिभोग नहीं करते?

गौतम! जीव-द्रव्यों अजीव-द्रव्यों का पर्यादान (ग्रहण) करते हैं, पर्यादान कर उन्हें औदारिक-, वैक्रिय-, आहारक-, तैजस-, और कार्मण-(शरीर), श्रोत्रेन्द्रिय यावत् स्पर्शनेन्द्रिय, मन-योग, वचन-योग, काय-योग और आनापान के रूप में निष्पन्न करते हैं। गौतम! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—जीव-द्रव्य अजीव-द्रव्यों का परिभोग करते हैं, अजीव-द्रव्य जीव-द्रव्यों का परिभोग नहीं करते।

१९. भन्ते! क्या नैरयिक अजीव-द्रव्यों का परिभोग करते हैं? क्या अजीव-द्रव्य नैरयिकों का परिभोग करते हैं?

गौतम! नैरयिक अजीव-द्रव्यों का परिभोग करते हैं, अजीव-द्रव्य नैरयिकों का परिभोग नहीं करते।

२०. यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है?

गौतम! नैरयिक अजीव-द्रव्यों का पर्यादान करते हैं, पर्यादान कर उन्हें वैक्रिय-, तैजस-, -कार्मण-(शरीर), श्रोत्रेन्द्रिय यावत् स्पर्शनेन्द्रिय, मनो-योग, वचन-योग, काय-योग और आनापान के रूप में निष्पन्न करते हैं। गौतम! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—नैरयिक अजीव-द्रव्यों का परिभोग करते हैं, अजीव-द्रव्य नैरयिकों का परिभोग नहीं करते। इसी प्रकार यावत् वैमानिक तक। केवल इतना विशेष है—शरीर, इन्द्रिय और योग जिसके जितने होते हैं, वे यथोचित वक्तव्य हैं।

अवगाह-पद

२१. भन्ते! लोक असंख्येय-प्रदेशात्मक है और द्रव्य अनन्त हैं?

क्या इस असंख्येय-प्रदेशात्मक सान्त लोक-आकाश में अनंत द्रव्यों का समावेश भक्तव्य हैं—क्या सान्त में अनंत का समावेश विकल्पनीय है?

हां, गौतम! लोक असंख्येय-प्रदेशात्मक है और द्रव्य अनन्त हैं। फिर भी इस सान्त लोक- -आकाश में अनंत द्रव्यों का समावेश भक्तव्य—सान्त में अनंत का समावेश विकल्पनीय है।

पुद्‌गलों का चयादि-पद

२२. भन्ते! लोक के एक आकाश-प्रदेश में कितनी दिशाओं से पुद्‌गलों का चय होता है?

गौतम! व्याघात न हो तो छहों दिशाओं से और व्याघात की अपेक्षा कदाचित् तीन दिशाओं, कदाचित् चार दिशाओं और कदाचित् पांच दिशाओं से पुद्गलों का चय होता है।

२३. भन्ते! लोक के एक आकाश-प्रदेश में कितनी दिशाओं से पुद्‌गल पृथक् होते हैं?

पूर्ववत्। इसी प्रकार उपचय और इसी प्रकार अपचय भी पूर्ववत् वक्तव्य है।

पुद्‌गल-ग्रहण-पद

२४. भन्ते! जीव जिन द्रव्यों—पुद्‌गलों को औदारिक-शरीर के रूप में ग्रहण करता है क्या स्थित-द्रव्यों को ग्रहण करता है? अथवा अस्थित-द्रव्यों को?

गौतम! स्थित-द्रव्यों को भी ग्रहण करता है, अस्थित-द्रव्यों को भी ग्रहण करता है।

२५. भन्ते! क्या उन्हें द्रव्यतः ग्रहण करता है? क्षेत्रतः ग्रहण करता है? कालतः ग्रहण करता है? भावतः ग्रहण करता है?

गौतम! द्रव्यतः भी ग्रहण करता है, क्षेत्रतः भी ग्रहण करता है, कालतः भी ग्रहण करता है, भावतः भी ग्रहण करता है। उन्हें द्रव्यतः अनन्त-प्रदेशी द्रव्यों के रूप में, क्षेत्रतः असंख्येय- -प्रदेशावगाढ द्रव्यों के रूप में ग्रहण करता है—इस प्रकार **पण्णवणा** के प्रथम आहार-उद्देशक (**पण्णवणा,** २८/५-१९) की भांति वक्तव्यता यावत् निर्व्याघात स्थिति में छहों दिशाओं से और व्याघात की अपेक्षा कदाचित् तीन दिशाओं, कदाचित् चार दिशाओं से और कदाचित् पांच दिशाओं से ग्रहण करता है।

२६. भन्ते! जीव जिन द्रव्यों को वैक्रिय-शरीर के रूप में ग्रहण करता है तो क्या स्थित-द्रव्यों को ग्रहण करता है? अथवा अस्थित-द्रव्यों को ग्रहण करता है? पूर्ववत्। केवल इतना विशेष है—नियमतः छहों दिशाओं से। इसी प्रकार आहारक-शरीर की वक्तव्यता।

२७. भन्ते! जीव जिन द्रव्यों का तैजस-शरीर के रूप में ग्रहण करता है....—पृच्छा।

गौतम! स्थित-द्रव्यों को ग्रहण करता है, अस्थित-द्रव्यों को ग्रहण नहीं करता। शेष औदारिक-शरीर की भांति वक्तव्यता। इसी प्रकार कार्मण-शरीर की वक्तव्यता। इसी प्रकार यावत् भाव की अपेक्षा भी ग्रहण करता है।

२८. जिन द्रव्यों को द्रव्यतः ग्रहण करता है उन्हें क्या एक-प्रदेशी द्रव्यों के रूप में ग्रहण करता है? द्वि-प्रदेशी द्रव्यों के रूप में ग्रहण करता है? इस प्रकार **'पण्णवणा'** के भाषा-पद (११/४९-६८) की भांति वक्तव्यता। यावत् स्वविषय का ग्रहण करता है, अविषय का ग्रहण नहीं करता, अनुक्रम से ग्रहण करता है, अक्रम से नहीं करता।

२९. भन्ते! उन्हें कितनी दिशाओं से ग्रहण करता है?

गौतम! निर्व्याघात स्थिति में.... औदारिक-शरीर की भांति (भ. २५/२५) वक्तव्यता।

३०. भन्ते! जीव जिन द्रव्यों को श्रोत्रेन्द्रिय के रूप में ग्रहण करता है?.... पृच्छा।

वैक्रिय-शरीर की भांति स्थित और अस्थित दोनों प्रकार के द्रव्यों को ग्रहण करता है। इसी प्रकार यावत् जिह्वेन्द्रिय की वक्तव्यता। स्पर्शेन्द्रिय की औदारिक-शरीर की भांति वक्तव्यता। निर्व्याघात की स्थिति में छहों दिशाओं से, व्याघात की स्थिति में कदाचित् तीन, कदाचित् चार, कदाचित् पांच दिशाओं से ग्रहण करता है। मनो-योग की कार्मण-शरीर की भांति वक्तव्यता, केवल इतना विशेष है—नियमतः छहों दिशाओं से ग्रहण करता है। इसी प्रकार वचन-योग की वक्तव्यता। काय-योग की औदारिक-शरीर की भांति वक्तव्यता।

३१. भन्ते! जीव जिन द्रव्यों को आनापान के रूप में ग्रहण करता है?.... पृच्छा। औदारिक--शरीर की भांति वक्तव्यता। यावत् स्यात् पांच दिशाओं से ग्रहण करता है।

३२. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

तीसरा उद्देशक

संस्थान-पद

३३. भन्ते! संस्थान कितने प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! संस्थान छह प्रज्ञप्त हैं, जैसे—परिमण्डल, वृत्त, त्रिकोण, चतुष्कोण, आयत, अनित्थंस्थ—अनियमित आकार वाला।

३४. भन्ते! परिमण्डल-संस्थान क्या द्रव्य की अपेक्षा संख्येय हैं? असंख्येय हैं? अनन्त हैं?

गौतम! संख्येय नहीं हैं, असंख्येय नहीं हैं, अनन्त हैं।

३५. भन्ते! वृत्त संस्थान....? इसी प्रकार यावत् अनित्थंस्थ-संस्थान की वक्तव्यता। इसी प्रकार प्रदेश की अपेक्षा वक्तव्यता। इसी प्रकार द्रव्य और प्रदेश की अपेक्षा वक्तव्यता।

३६. भन्ते! परिमण्डल, वृत्त, त्रिकोण, चतुष्कोण, आयत और अनित्थंस्थ—इन छह संस्थानों में द्रव्य की अपेक्षा, प्रदेश की अपेक्षा तथा द्रव्य और प्रदेश की अपेक्षा कौन किनसे अल्प, अधिक, तुल्य या विशेषाधिक हैं?

गौतम! द्रव्य की अपेक्षा—परिमण्डल-संस्थान द्रव्य की अपेक्षा सबसे अल्प हैं, वृत्त-संस्थान द्रव्य की अपेक्षा उससे संख्येय-गुणा हैं, चतुष्कोण-संस्थान द्रव्य की अपेक्षा उससे संख्येय--गुणा हैं, त्रिकोण-संस्थान द्रव्य की अपेक्षा उससे संख्येय-गुणा हैं, आयत-संस्थान द्रव्य की अपेक्षा उससे संख्येय-गुणा हैं, अनित्थंस्थ-संस्थान द्रव्य की अपेक्षा उससे असंख्येय-गुणा हैं।

प्रदेश की अपेक्षा—परिमण्डल-संस्थान प्रदेश की अपेक्षा सबसे अल्प हैं, वृत्त-संस्थान प्रदेश की अपेक्षा उससे संख्येय-गुणा हैं, जैसे द्रव्य की अपेक्षा वैसे प्रदेश की अपेक्षा भी यावत् अनित्थंस्थ-संस्थान प्रदेश की अपेक्षा असंख्येय-गुणा हैं।

द्रव्य और प्रदेश की अपेक्षा—परिमण्डल-संस्थान द्रव्य और प्रदेश की अपेक्षा सबसे अल्प हैं। इससे आगे द्रव्य की अपेक्षा निर्दिष्ट गमक वक्तव्य है यावत् अनित्थंस्थ-संस्थान द्रव्य की अपेक्षा असंख्येय-गुणा हैं। द्रव्य की अपेक्षा अनित्थंस्थ-संस्थान से प्रदेश की अपेक्षा परिमंडल-संस्थान असंख्येय-गुणा हैं। वृत्त संस्थान प्रदेश की अपेक्षा उससे संख्येय-गुणा हैं। प्रदेश की अपेक्षा वही गमक वक्तव्य है यावत् अनित्थंस्थ-संस्थान प्रदेश की अपेक्षा असंख्येय-गुणा हैं।

रत्नप्रभादि के संदर्भ में संस्थान-पद

३७. भन्ते! संस्थान कितने प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! संस्थान पांच प्रज्ञप्त हैं, जैसे—परिमण्डल- यावत् आयत-संस्थान।

३८. भन्ते! परिमण्डल-संस्थान क्या संख्येय हैं? असंख्येय हैं? अनन्त हैं?

गौतम! संख्येय नहीं हैं, असंख्येय नहीं हैं, अनन्त हैं।

३९. भन्ते! वृत्त-संस्थान क्या संख्येय हैं......? पूर्ववत्। इसी प्रकार यावत् आयत-संस्थान।

४०. भन्ते! इस रत्नप्रभा-पृथ्वी में परिमण्डल-संस्थान क्या संख्येय हैं? असंख्येय हैं? अनन्त हैं?

गौतम! संख्येय नहीं है, असंख्येय नहीं है अनन्त हैं।

४१. भन्ते! वृत्त-संस्थान क्या संख्येय हैं?

पूर्ववत्। इसी प्रकार यावत् आयत-संस्थान।

४२. भन्ते! शर्कराप्रभा-पृथ्वी में परिमण्डल-संस्थान......? पूर्ववत्। इसी प्रकार यावत् आयत-संस्थान। इसी प्रकार यावत् अधःसप्तमी।

४३. भन्ते! सौधर्म-कल्प में परिमण्डल-संस्थान.....? पूर्ववत्। यावत् अच्युत-कल्प।

४४. भन्ते! ग्रैवेयक-विमान में परिमण्डल-संस्थान....? पूर्ववत्। इसी प्रकार यावत् अनुत्तर--विमान में भी। इसी प्रकार ईषत्-प्राग्भारा में भी वक्तव्यता।

४५. भन्ते! जहां एक परिमण्डल-संस्थान यवमध्य (परिमाण वाला) है वहां क्या परिमण्डल--संस्थान संख्येय हैं? असंख्येय हैं? अथवा अनन्त हैं?

गौतम! संख्येय नहीं है, असंख्येय नहीं हैं, अनन्त हैं।

४६. भन्ते! (जहां एक परिमण्डल-संस्थान यवमध्य परिमाण वाला है, वहां क्या) वृत्त-संस्थान संख्येय हैं? .....उसी प्रकार पृच्छा।

इसी प्रकार यावत् आयत-संस्थान।

४७. भन्ते! जहां एक वृत्त-संस्थान यवमध्य परिमाण वाला है, वहां परिमण्डल-संस्थान संख्येय हैं.....?

उसी प्रकार पृच्छा।......वृत्त-संस्थान भी इसी प्रकार। इसी प्रकार यावत् आयत-संस्थान। इसी प्रकार एक-एक संस्थान के साथ पांचों संस्थानों की चारणा करणीय है यावत् आयत--संस्थान।

४८. भन्ते! जहां इस रत्नप्रभा-पृथ्वी में एक परिमण्डल-संस्थान यवमध्य परिमाण वाला है वहां परिमण्डल-संस्थान क्या संख्येय है....पृच्छा।

गौतम! संख्येय नहीं है, असंख्येय नहीं हैं, अनन्त हैं?

४९. भन्ते! (जहां इस रत्नप्रभा-पृथ्वी.....वहां) वृत्त-संस्थान क्या संख्येय हैं.....? उसी प्रकार पृच्छा। इसी प्रकार यावत् आयत-संस्थान।

५०. भन्ते! जहां इस रत्नप्रभा-पृथ्वी पर एक वृत्त-संस्थान यवमध्य परिमाण वाला है वहां परिमण्डल-संस्थान क्या संख्येय हैं....? पृच्छा।

गौतम! संख्येय नहीं है, असंख्येय नहीं हैं, अनन्त हैं। इसी प्रकार वृत्त-संस्थान अनंत हैं। इसी प्रकार यावत् आयत-संस्थान। इसी प्रकार पुनरपि एक-एक संस्थान के साथ पांचों संस्थानों की चारणा करणीय है, जैसे अधस्तन संस्थान यावत् आयत-संस्थान के साथ। इसी प्रकार यावत् अधःसप्तमी। इसी प्रकार कल्पों में भी यावत् ईषत्-प्राग्भारा-पृथ्वी।

प्रदेशावगाह की अपेक्षा संस्थान-निरूपण का पद

५१. भन्ते! वृत्त-संस्थान कितने प्रदेश वाला, कितने प्रदेश का अवगाहन करने वाला प्रज्ञप्त है?

गौतम! वृत्त-संस्थान दो प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—घन-वृत्त और प्रतर-वृत्त। उसमें जो प्रतर--वृत्त है वह दो प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—ओजस्-प्रदेशिक (विषम संख्या वाले प्रदेशों से निष्पन्न स्कन्ध) और युग्म-प्रदेशिक (सम संख्या वाले प्रदेशों से निष्पन्न स्कन्ध)। जो ओजस्-प्रदेशिक है वह जघन्यतः पांच-प्रदेशी (पांच परमाणुओं से निष्पन्न पुद्गल-स्कन्ध) है और पांच आकाश-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला है, उत्कृष्टतः अनन्त-प्रदेशी (परमाणु--स्कन्ध) है और असंख्येय-आकाश-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला है। जो युग्म-प्रदेशिक है वह जघन्यतः बारह-प्रदेशी (परमाणु-स्कन्ध) है और बारह आकाश-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला है, उत्कृष्टतः अनन्त-प्रदेशी (परमाणु-स्कन्ध) है और असंख्येय आकाश-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला है।

जो घन-वृत्त है वह दो प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—ओजस्-प्रदेशिक और युग्म-प्रदेशिक। जो ओजस्-प्रदेशिक है वह जघन्यतः सात-प्रदेशी (परमाणु-स्कन्ध) है और सात आकाश-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला तथा उत्कृष्टतः अनन्त-प्रदेशी (परमाणु-स्कन्ध) है और असंख्येय

आकाश-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला प्रज्ञप्त है। जो युग्म-प्रदेशिक (परमाणु-स्कन्ध) है वह जघन्यतः बत्तीस-प्रदेशी है, और बत्तीस आकाश-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला प्रज्ञप्त है, उत्कृष्टतः अनन्त-प्रदेशी (परमाणु-स्कन्ध) है और असंख्येय आकाश-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला प्रज्ञप्त है।

५२. भन्ते! त्रिकोण-संस्थान कितने प्रदेश वाला, कितने प्रदेश का अवगाहन करने वाला प्रज्ञप्त है?

गौतम! त्रिकोण-संस्थान दो प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—घन-त्रिकोण और प्रतर-त्रिकोण।

जो प्रतर-त्रिकोण है वह दो प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—ओजस्प्रदेशिक और युग्मप्रदेशिक। जो ओजस्प्रदेशिक है वह जघन्यतः तीन-प्रदेशी (परमाणु-स्कन्ध) और तीन आकाश-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला प्रज्ञप्त है, उत्कृष्टतः अनन्त-प्रदेशी (परमाणु-स्कन्ध) और असंख्येय आकाश-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला प्रज्ञप्त है। जो युग्मप्रदेशिक है वह जघन्यतः छह-प्रदेशी (परमाणु-स्कन्ध) और छह आकाश-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला प्रज्ञप्त है, उत्कृष्टतः अनन्त-प्रदेशी (परमाणु-स्कन्ध) और असंख्येय आकाश-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला प्रज्ञप्त है।

जो घन त्रिकोण है, वह दो प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—ओजस्प्रदेशिक और युग्मप्रदेशिक। जो ओजस्प्रदेशिक है वह जघन्यतः पैंतीस-प्रदेशी (परमाणु-स्कन्ध) और पैंतीस आकाश-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला है, उत्कृष्टतः अनन्त-प्रदेशी (परमाणु-स्कन्ध) और असंख्येय आकाश-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला है। जो युग्मप्रदेशिक है वह जघन्यतः चार-प्रदेशी (परमाणु-स्कन्ध) और चार आकाश-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला प्रज्ञप्त है, उत्कृष्टतः अनन्त-प्रदेशी (परमाणु-स्कन्ध) और असंख्येय आकाश-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला प्रज्ञप्त है।

५३. भन्ते! चतुष्कोण-संस्थान कितने प्रदेश वाला है....? पृच्छा।

गौतम! चतुष्कोण-संस्थान दो प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—घन-चतुष्कोण और प्रतर-चतुष्कोण। जो प्रतर-चतुष्कोण है वह दो प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—ओजस्प्रदेशिक और युग्मप्रदेशिक। जो ओजस्प्रदेशिक है वह जघन्यतः नव-प्रदेशी (परमाणु-स्कन्ध) और नव आकाश-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला प्रज्ञप्त है, उत्कृष्टतः अनन्त-प्रदेशी (परमाणु-स्कन्ध) और असंख्येय आकाश-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला प्रज्ञप्त है। जो युग्मप्रदेशिक है वह जघन्यतः चार-प्रदेशी (परमाणु-स्कन्ध) और चार आकाश-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला प्रज्ञप्त है, उत्कृष्टतः अनन्त-प्रदेशी (परमाणु-स्कन्ध) और असंख्येय आकाश-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला है।

जो घन-चतुष्कोण है वह दो प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—ओजस्प्रदेशिक और युग्मप्रदेशिक। जो ओजस्प्रदेशिक है वह जघन्यतः सत्ताईस-प्रदेशी (परमाणु-स्कन्ध) और सत्ताईस आकाश-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला है, उत्कृष्टतः अनन्त-प्रदेशी (परमाणु-स्कन्ध) और असंख्येय आकाश-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला है। जो युग्मप्रदेशिक है वह जघन्यतः

आठ-प्रदेशी (परमाणु-स्कन्ध) और आठ आकाश-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला प्रज्ञप्त है, उत्कृष्टतः अनन्त-प्रदेशी है (परमाणु-स्कन्ध) और असंख्येय आकाश-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला है।

५४. भन्ते! आयत-संस्थान कितने प्रदेश वाला है? कितने प्रदेश का अवगाहन करने वाला प्रज्ञप्त है?

गौतम! आयत-संस्थान तीन प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—श्रेणी-आयत, प्रतर-आयत, घन-आयत। जो श्रेणी-आयत है, वह दो प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—ओजस्प्रदेशिक और युग्मप्रदेशिक। जो ओजस्प्रदेशिक है वह जघन्यतः तीन-प्रदेशी (परमाणु-स्कन्ध) और तीन आकाश-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला है, उत्कृष्टतः अनन्त-प्रदेशी (परमाणु-स्कन्ध) और असंख्येय आकाश-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला है। जो युग्मप्रदेशिक है वह जघन्यतः दो-प्रदेशी (परमाणु-स्कन्ध) और दो आकाश-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला है, उत्कृष्टतः अनन्त-प्रदेशी (परमाणु-स्कन्ध) और असंख्येय आकाश-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला है।

जो प्रतर-आयत है, वह दो प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—ओजस्प्रदेशिक और युग्मप्रदेशिक। जो ओजस्प्रदेशिक है वह जघन्यतः पन्द्रह-प्रदेशी (परमाणु-स्कन्ध) और पंद्रह आकाश-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला है। उत्कृष्टतः अनन्त-प्रदेशी (परमाणु-स्कन्ध) और असंख्येय आकाश-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला है। जो युग्मप्रदेशिक है, वह जघन्यतः छह-प्रदेशी (परमाणु-स्कन्ध) और छह आकाश-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला है, उत्कृष्टतः अनन्त-प्रदेशी (परमाणु-स्कन्ध) और असंख्येय आकाश-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला है।

जो घन-आयत है वह दो प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—ओजस्प्रदेशिक और युग्मप्रदेशिक। जो ओजस्प्रदेशिक है वह जघन्यतः पैंतालीस-प्रदेशी (परमाणु-स्कन्ध) और पैंतालीस आकाश-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला है, उत्कृष्टतः अनन्त-प्रदेशी (परमाणु-स्कन्ध) और असंख्येय आकाश-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला है। जो युग्मप्रदेशिक है, वह जघन्यतः बारह-प्रदेशी (परमाणु-स्कन्ध) और बारह आकाश-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला है, उत्कृष्टतः अनन्त-प्रदेशी (परमाणु-स्कन्ध) और असंख्येय आकाश-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला है।

५५. भन्ते। परिमण्डल-संस्थान कितने प्रदेश वाला.....है? पृच्छा।

गौतम! परिमण्डल-संस्थान दो प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—घन-परिमण्डल और प्रतर-परिमण्डल। जो प्रतर-परिमण्डल है वह जघन्यतः बीस-प्रदेशी (परमाणु-स्कन्ध) और बीस आकाश-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला है, उत्कृष्टतः अनन्त-प्रदेशी (परमाणु-स्कन्ध) और असंख्येय आकाश-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला है। जो घन-परिमण्डल है वह जघन्यतः चालीस-प्रदेशी (परमाणु-स्कन्ध) और चालीस आकाश-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला प्रज्ञप्त है, उत्कृष्टतः अनन्त-प्रदेशी (परमाणु-स्कन्ध) और असंख्येय आकाश-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला प्रज्ञप्त है।

संस्थानों के युग्म आदि का पद

५६. भन्ते! (एक) परिमण्डल-संस्थान द्रव्य की अपेक्षा क्या कृतयुग्म है? त्र्योज है? द्वापरयुग्म है? कल्योज है?

गौतम! (एक) परिमण्डल-संस्थान द्रव्य की अपेक्षा न कृतयुग्म है, न त्र्योज है, न द्वापरयुग्म है, कल्योज है।

५७. भन्ते! वृत्त-संस्थान द्रव्य की अपेक्षा....? पूर्ववत्। इसी प्रकार यावत् आयत-संस्थान।

५८. भन्ते! (अनेक) परिमण्डल-संस्थान द्रव्य की अपेक्षा क्या कृतयुग्म हैं, त्र्योज हैं...? पृच्छा।

गौतम! (अनेक) परिमण्डल संस्थान ओघ (समुच्चय) की अपेक्षा स्यात् कृतयुग्म हैं, स्यात् त्र्योज हैं, स्यात् द्वापरयुग्म हैं, स्यात् कल्योज हैं। विधान (एक-एक द्रव्य के प्रदेश) की अपेक्षा कृतयुग्म नहीं हैं, त्र्योज नहीं हैं, द्वापरयुग्म नहीं हैं, कल्योज है। इसी प्रकार यावत् आयत--संस्थान।

५९. भन्ते! (एक) परिमण्डल-संस्थान प्रदेश की अपेक्षा क्या कृतयुग्म है....? पृच्छा।

गौतम! (एक) परिमण्डल-संस्थान प्रदेश की अपेक्षा स्यात् कृतयुग्म है, स्यात् त्र्योज है, स्यात् द्वापरयुग्म है, स्यात् कल्योज है। इसी प्रकार यावत् आयत-संस्थान।

६०. भन्ते! (अनेक) परिमण्डल-संस्थान प्रदेश की अपेक्षा क्या कृतयुग्म हैं....? पृच्छा।

गौतम! (अनेक) परिमण्डल-संस्थान ओघ की अपेक्षा स्यात् कृतयुग्म हैं यावत् स्यात् कल्योज हैं, विधान की अपेक्षा कृतयुग्म भी हैं, त्र्योज भी हैं, द्वापरयुग्म भी हैं, कल्योज भी हैं। इसी प्रकार यावत् आयत-संस्थान।

६१. भन्ते! (एक) परिमण्डल-संस्थान क्या कृतयुग्म-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला है यावत् कल्योज-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला है?

गौतम! (एक) परिमण्डल-संस्थान कृतयुग्म-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला है, त्र्योज-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला नहीं है, द्वापरयुग्म-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला नहीं हैं, कल्योज-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला नहीं है।

६२. भन्ते! (एक) वृत्त-संस्थान क्या कृतयुग्म-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला है...? पृच्छा।

गौतम! (एक) वृत्त-संस्थान स्यात् कृतयुग्म-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला है, स्यात् त्र्योज--प्रदेशों का अवगाहन करने वाला है, द्वापरयुग्म-प्रदेशों का अवगाहन नहीं करता, स्यात् कल्योज-प्रदेश का अवगाहन करने वाला है।

६३. भन्ते! (एक) त्रिकोण-संस्थान क्या कृतयुग्म-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला है....? पृच्छा।

गौतम! (एक) त्रिकोण-संस्थान स्यात् कृतयुग्म-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला है, स्यात् त्र्योज-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला है, स्यात् द्वापरयुग्म-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला है, कल्योज-प्रदेश का अवगाहन नहीं करता।

६४. भन्ते! (एक) चतुष्कोण-संस्थान क्या कृतयुग्म-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला है....?
जैसी वृत्त-संस्थान की वक्तव्यता वैसी चतुष्कोण-संस्थान की वक्तव्यता।

६५. भन्ते! (एक) आयत-संस्थान.........? पृच्छा।

गौतम! आयत-संस्थान स्यात् कृतयुग्म-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला है यावत् स्यात् कल्योज-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला है।

६६. भन्ते! (अनेक) परिमण्डल-संस्थान क्या कृतयुग्मों प्रदेशों का अवगाहन करने वाले हैं....? पृच्छा।

गौतम! (अनेक) परिण्मडल-संस्थान ओघ की अपेक्षा से भी और विधान की अपेक्षा से भी कृतयुग्म-प्रदेशों का अवगाहन करने वाले हैं, त्र्योज-प्रदेशों का अवगाहन नहीं करते, द्वापरयुग्म-प्रदेशों का अवगाहन नहीं करते, कल्योज-प्रदेशों का अवगाहन नहीं करते।

६७. भन्ते! (अनेक) वृत्त-संस्थान क्या कृतयुग्म-प्रदेशों का अवगाहन करने वाले हैं...? पृच्छा।

गौतम! (अनेक) वृत्त-संस्थान ओघ की अपेक्षा से कृतयुग्म-प्रदेशों का अवगाहन करने वाले हैं, त्र्योज-प्रदेशों का अवगाहन नहीं करते, द्वापरयुग्म-प्रदेशों का अवगाहन नहीं करते, कल्योज--प्रदेश का अवगाहन नहीं करते, विधान की अपेक्षा से कृतयुग्म-प्रदेशों का अवगाहन करने वाले हैं, त्र्योज-प्रदेशों का भी अवगाहन करने वाले भी हैं, द्वापरयुग्म-प्रदेशों का अवगाहन नहीं करते, कल्योज-प्रदेशों का भी अवगाहन करने वाले हैं।

६८. भन्ते! (अनेक) त्रिकोण-संस्थान क्या कृतयुग्म-प्रदेशों का अवगाहन करने वाले हैं....? पृच्छा।

गौतम! (अनेक) त्रिकोण-संस्थान ओघ की अपेक्षा से कृतयुग्म-प्रदेशों का अवगाहन करने वाले हैं, त्र्योज-प्रदेशों का अवगाहन नहीं करते, द्वापरयुग्म-प्रदेशों का अवगाहन नहीं करते, कल्योज-कृतयुग्म-प्रदेशों का अवगाहन नहीं करते, विधान की अपेक्षा से कृतयुग्म-प्रदेशों का अवगाहन करने वाले भी हैं, त्र्योज-प्रदेशों का अवगाहन करने वाले भी हैं, द्वापरयुग्म से प्रदेशों का अवगाहन नहीं करते, कल्योज-प्रदेशों का अवगाहन करने वाले भी हैं। चतुष्कोण-संस्थान की वृत्त-संस्थान की भांति वक्तव्यता।

६९. भन्ते! (अनेक) आयत-संस्थान......? पृच्छा।

गौतम! (अनेक) आयत-संस्थान ओघ की अपेक्षा से कृतयुग्म-प्रदेशों का अवगाहन करने वाले हैं, त्र्योज-प्रदेशों का अवगाहन नहीं करते, द्वापरयुग्म-प्रदेशों का अवगाहन नहीं करते, कल्योज-प्रदेशों का अवगाहन करते हैं, विधान की अपेक्षा से कृतयुग्म-प्रदेशों का अवगाहन करने वाले भी हैं यावत् कल्योज-प्रदेशों का अवगाहन करने वाले भी हैं।

७०. भन्ते! (एक) परिमण्डल-संस्थान क्या कृतयुग्म-समय की स्थिति वाला है? त्र्योज-समय की स्थिति वाला है? द्वापरयुग्म-समय की स्थिति वाला है? कल्योज-समय की स्थिति वाला है?

गौतम! एक परिमण्डल-संस्थान (ओघ को अपेक्षा से) स्यात् कृतयुग्म-समय की स्थिति वाला है यावत् स्यात् कल्योज-समय की स्थिति वाला है। इसी प्रकार यावत् आयत-संस्थान की वक्तव्यता।

७१. भन्ते! (अनेक) परिमण्डल-संस्थान क्या कृतयुग्म-समय की स्थिति वाले हैं?....पृच्छा।

गौतम! (अनेक) परिमण्डल-संस्थान ओघ की अपेक्षा से स्यात् कृतयुग्म-समय की स्थिति वाले हैं यावत् स्यात् कल्योज-समय की स्थिति वाले हैं, विधान की अपेक्षा से कृतयुग्म--समय की स्थिति वाले भी हैं यावत् कल्योज-समय की स्थिति वाले भी हैं। इसी प्रकार यावत् आयत-संस्थान की वक्तव्यता।

७२. भन्ते! (एक) परिमण्डल-संस्थान कृष्ण-वर्ण-पर्यवों की अपेक्षा से क्या कृतयुग्म-पर्याय वाला है यावत् कल्योज-पर्याय वाला है?

गौतम! (एक) परिमण्डल-संस्थान कृष्ण-वर्ण-पर्यवों की अपेक्षा से स्यात् कृतयुग्म-पर्याय वाला है (......)—इस प्रकार इस अभिलाप के अनुसार पूर्ववत् स्थिति की वक्तव्यता। इसी प्रकार नील-वर्ण-पर्यवों की अपेक्षा से वक्तव्यता। इसी प्रकार पांच वर्ण, दो गंध, पांच रस, आठ स्पर्श यावत् रूक्ष-स्पर्श-पर्यवों की अपेक्षा से वक्तव्यता।

श्रेणी-पद

७३. भन्ते! आकाश-प्रदेश की श्रेणियां द्रव्य की अपेक्षा क्या संख्येय हैं? असंख्येय हैं? अनन्त हैं?

गौतम! आकाश-प्रदेश की श्रेणियां द्रव्य की अपेक्षा संख्येय नहीं हैं, असंख्येय नहीं हैं, अनन्त हैं।

७४. भन्ते! पूर्व-पश्चिम की ओर लम्बी आकाश-प्रदेश की श्रेणियां द्रव्य की अपेक्षा क्या संख्येय हैं.....? पूर्ववत्। इसी प्रकार दक्षिण-उत्तर की ओर लम्बी आकाश-प्रदेश की श्रेणियां भी। इसी प्रकार ऊर्ध्व-अधः की ओर लम्बी आकाश-प्रदेश की श्रेणियां भी।

७५. भन्ते! लोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियां द्रव्य की अपेक्षा क्या संख्येय हैं? असंख्येय हैं? अनन्त हैं?

गौतम! लोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियां द्रव्य की अपेक्षा संख्येय नहीं हैं, असंख्येय हैं, अनन्त नहीं हैं।

७६. भन्ते! पूर्व-पश्चिम की ओर लोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियां द्रव्य की अपेक्षा क्या संख्येय... हैं? पूर्ववत्। इसी प्रकार दक्षिण-उत्तर की ओर लम्बी लोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियां भी। इसी प्रकार ऊर्ध्व-अधः की ओर लम्बी लोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियां भी।

७७. भन्ते! अलोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियां द्रव्य की अपेक्षा क्या संख्येय हैं? असंख्येय हैं? अनन्त हैं?

गौतम! अलोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियां द्रव्य की अपेक्षा संख्येय नहीं है, असंख्येय नहीं हैं, अनन्त हैं। इसी प्रकार पूर्व-पश्चिम की ओर लंबी अलोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियां भी। इसी

प्रकार दक्षिण-उत्तर की ओर लम्बी अलोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियां भी। इसी प्रकार ऊर्ध्व--अधः की ओर लम्बी अलोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियां भी।

७८. भन्ते! आकाश-प्रदेश की श्रेणियां प्रदेश की अपेक्षा क्या संख्येय हैं...? जैसी द्रव्य की अपेक्षा वक्तव्यता है वैसे प्रदेश की अपेक्षा भी वक्तव्य है यावत् ऊर्ध्व-अधः की ओर लम्बी श्रेणियां भी। सभी श्रेणियां अनन्त हैं।

७९. भन्ते! लोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियां प्रदेश की अपेक्षा क्या संख्येय हैं...? पृच्छा।

गौतम! लोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियां प्रदेश की अपेक्षा स्यात् संख्येय हैं, स्यात् असंख्येय हैं, अनन्त नहीं हैं। इसी प्रकार पूर्व-पश्चिम की ओर लंबी लोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियां भी। इसी प्रकार दक्षिण-उत्तर की ओर लंबी लोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियां भी। ऊर्ध्व-अधः की ओर लम्बी लोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियां संख्येय नहीं हैं, असंख्येय हैं, अनन्त नहीं हैं।

८०. भन्ते! अलोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियां प्रदेश की अपेक्षा संख्येय हैं....? पृच्छा।

गौतम! अलोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियां प्रदेश की अपेक्षा स्यात् संख्येय हैं, स्यात् असंख्येय हैं, स्यात् अनन्त हैं।

८१. भन्ते! पूर्व-पश्चिम की ओर लंबी अलोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियां....? पृच्छा।

गौतम! पूर्व-पश्चिम की ओर लंबी अलोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियां संख्येय नहीं हैं, असंख्येय नहीं हैं, अनन्त हैं। इसी प्रकार दक्षिण-उत्तर की ओर अलोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियां भी।

८२. (भन्ते!) ऊर्ध्व-अधः की ओर लम्बी अलोकाकाश-प्रदेशी की श्रेणियां...? पृच्छा।

गौतम! ऊर्ध्व-अधः की ओर लम्बी अलोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियां स्यात् संख्येय हैं, स्यात् असंख्येय हैं, स्यात् अनन्त हैं।

८३. भन्ते! आकाश-प्रदेश की श्रेणियां क्या सादि-सपर्यवसित हैं? सादि-अपर्यवसित हैं? अनादि-सपर्यवसित हैं? अनादि-अपर्यवसित हैं?

गौतम! आकाश-प्रदेश की श्रेणियां सादि-सपर्यवसित नहीं हैं, सादि-अपर्यवसित नहीं है, अनादि-सपर्यवसित नहीं हैं, अनादि-अपर्यवसित हैं। इसी प्रकार यावत् ऊर्ध्व-अधः की ओर लम्बी आकाश-प्रदेश की श्रेणियों की वक्तव्यता है।

८४. भन्ते! लोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियां क्या सादि-सपर्यवसित हैं?....पृच्छा।

गौतम! लोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियां सादि-सपर्यवसित हैं, सादि-अपर्यवसित नहीं हैं, अनादि-सपर्यवसित नहीं हैं, अनादि-अपर्यवसित नहीं हैं। इसी प्रकार यावत् ऊर्ध्व-अधः की ओर लम्बी आकाश-प्रदेश की श्रेणियों की वक्तव्यता।

८५. भन्ते! अलोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियां क्या सादि-सपर्यवसित हैं?...पृच्छा।

गौतम! अलोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियां स्यात् सादि-सपर्यवसित हैं, स्यात् सादि-अपर्यवसित हैं, स्यात् अनादि-सपर्यवसित हैं, स्यात् अनादि-अपर्यवसित हैं। इसी प्रकार पूर्व-पश्चिम की ओर तथा दक्षिण-उत्तर की ओर लंबी श्रेणियों की वक्तव्यता। केवल इतना विशेष है—वे

सादि-सपर्यवसित नहीं हैं, स्यात् सादि-अपर्यवसित हैं। शेष तीनों ही विकल्प पूर्ववत्। ऊर्ध्व--अधः की ओर लम्बी आकाश-प्रदेश की श्रेणियों के औघिक (समुच्चय) के चतुर्भंग (चार विकल्प) वक्तव्य हैं।

८६. भन्ते! आकाश-प्रदेश की श्रेणियां द्रव्य की अपेक्षा क्या कृतयुग्म हैं, त्र्योज हैं....? पृच्छा।

गौतम! आकाश-प्रदेश की श्रेणियां द्रव्य की अपेक्षा कृतयुग्म हैं, त्र्योज नहीं हैं, द्वापरयुग्म नहीं हैं, कल्योज नहीं है। इसी प्रकार यावत् ऊर्ध्व-अधः की ओर लम्बी आकाश-प्रदेश की श्रेणियों की वक्तव्यता। इसी प्रकार लोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियों की वक्तव्यता। इसी प्रकार अलोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियों की वक्तव्यता।

८७. भन्ते! आकाश-प्रदेश की श्रेणियां प्रदेश की अपेक्षा क्या कृतयुग्म-प्रदेश वाली हैं.....? पूर्ववत्। इसी प्रकार यावत् ऊर्ध्व-अधः की ओर लम्बी आकाश-प्रदेश की श्रेणियों की वक्तव्यता।

८८. भन्ते! लोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियां प्रदेश की अपेक्षा....? पृच्छा।

गौतम! लोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियां प्रदेश की अपेक्षा स्यात् कृतयुग्म-प्रदेशवाली हैं, त्र्योज--प्रदेश वाली नहीं हैं, स्यात् द्वापरयुग्म-प्रदेश वाली हैं, कल्योज-प्रदेश वाली नहीं है। इसी प्रकार पूर्व-पश्चिम आकाश-प्रदेश की ओर लम्बी श्रेणियां भी, दक्षिण-उत्तर आकाश-प्रदेश की ओर लम्बी श्रेणियां भी।

८९. भन्ते! ऊर्ध्व-अधः लोकाकाश-प्रदेश की ओर लम्बी श्रेणियां प्रदेश की अपेक्षा ....? पृच्छा।

गौतम! ऊर्ध्व-अधः लोकाकाश-प्रदेश की ओर लम्बी श्रेणियां प्रदेश की अपेक्षा कृतयुग्म--प्रदेश वाली हैं, त्र्योज-प्रदेश वाली नहीं हैं, द्वापरयुग्म-प्रदेश वाली नहीं है, कल्योज-प्रदेश वाली नहीं है।

९०. भन्ते! अलोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियां प्रदेश की अपेक्षा...? पृच्छा।

गौतम! अलोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियां प्रदेश की अपेक्षा स्यात् कृतयुग्म-प्रदेश वाली हैं, यावत् स्यात् कल्योज-प्रदेश वाली हैं। इसी प्रकार पूर्व-पश्चिम की ओर लम्बी आकाश--प्रदेश की श्रेणियां भी। इसी प्रकार दक्षिण-उत्तर की ओर लम्बी आकाश-प्रदेश की श्रेणियां भी। इसी प्रकार ऊर्ध्व-अधः की ओर लम्बी आकाश-प्रदेश की श्रेणियां भी, केवल इतना विशेष है—कल्योज-प्रदेश वाली नहीं हैं। शेष पूर्ववत्।

९१. भन्ते! श्रेणियां कितनी प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! श्रेणियां सात प्रज्ञप्त हैं जैसे—१. ऋजुआयता—सीधी और लम्बी। २. एकतोवक्रा—एक दिशा में वक्र। ३. द्वितोवक्रा—दोनों ओर वक्र। ४. एकतःखहा—एक दिशा में अंकुश की तरह मुड़ी हुई; जिसके एक ओर त्रसनाड़ी का आकाश होता है। ५. द्वितोखहा—दोनों ओर अंकुश की तरह मुड़ी हुई; जिसके दोनों ओर त्रसनाड़ी का आकाश

होता है। ६. चक्रवाला—वलय की आकृति वाली। ७. अर्द्धचक्रवाला—अर्द्धवलय की आकृति वाली।

अनुश्रेणी-विश्रेणी-गति का पद

९२. भन्ते! परमाणु-पुद्‌गलों की गति क्या अनुश्रेणी में होती है? विश्रेणी में होती है?

गौतम! परमाणु-पुद्‌गलों की गति अनुश्रेणी में होती है, विश्रेणी में नहीं होती।

९३. भन्ते! द्वि-प्रदेशी स्कन्धों की गति क्या अनुश्रेणी में होती है? विश्रेणी में होती है?

पूर्ववत्। इसी प्रकार यावत् अनन्त-प्रदेशी स्कन्धों की वक्तव्यता।

९४. भन्ते! नैरयिकों की गति क्या अनुश्रेणी में होती है? या विश्रेणी में होती है? पूर्ववत्। इसी प्रकार यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता।

निरयावास-पद

९५. भन्ते! इस रत्नप्रभा-पृथ्वी के कितने लाख नरकावास प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! रत्नप्रभा-पृथ्वी के तीस लाख नरकावास प्रज्ञप्त हैं, इसी प्रकार **भगवती** के प्रथम शतक के पांचवें उद्देशक की भांति यावत् अनुत्तरविमान की वक्तव्यता।

गणिपिटक-पद

९६. भन्ते! गणिपिटक कितने प्रकार का प्रज्ञप्त है?

गौतम! गणिपिटक द्वादशांग—बारह अंग वाला प्रज्ञप्त है, जैसे—आचार यावत् दृष्टिवाद।

९७. वह आचार क्या है?

आचार में—श्रमण निर्ग्रन्थ के आचार-गोचर-विनय-वैनयिक-शिक्षा-भाषा-अभाषा-चरण-करण-यात्रा-मात्रा-वृत्ति का आख्यान किया गया है, इसी प्रकार अंगों की प्ररूपणा **नंदी सूत्र** की भांति वक्तव्य है यावत्—अनुयोग की विधि इस प्रकार है। प्रथम बार में सूत्र और अर्थ का बोध, दूसरी बार में निर्युक्ति-सहित सूत्र और अर्थ का बोध, तीसरी बार में समग्रता का बोध।

अल्पबहुत्व-पद

९८. भन्ते! नैरयिक, यावत् देवों और सिद्धों—इन पांच गतियों के समास (वर्ग) में कौन कितने अल्प, बहुत, तुल्य या विशेषाधिक हैं?

गौतम! इन पांच गतियों के समास (वर्ग) में अल्पबहुत्व की **पण्णवणा** के तीसरे पद 'बहुवक्तव्यता' (सू. ३८) की वक्तव्यता। आठ गतियों (नरक, तिर्यञ्च, तिर्यञ्चनी, मनुष्य, मनुष्यनी, देव, देवी और सिद्धगति) के समास (वर्ग) के बहुत्व की **पण्णवणा** के तीसरे पद 'बहुवक्तव्यता' (सू. ३९) की वक्तव्यता।

९९. भन्ते! स-इन्द्रिय, एकेन्द्रिय यावत् चतुरिन्द्रिय और अनिन्द्रिय जीवों में कौन किनसे अल्प, बहुत, तुल्य या विशेषाधिक हैं? यह भी **पण्णवणा** के तीसरे पद 'बहुवक्तव्यता' (सू. ३९) की भांति तथा 'औधिकपद' भी उसी प्रकार वक्तव्य है। सकायिक जीवों का

अल्पबहुत्व उसी प्रकार (सू. ५०) औधिक वक्तव्य है।

१००. भन्ते! जीव, पुद्गल, अद्धासमय, सर्व-द्रव्य, सर्व-प्रदेश और सर्व-पर्यवों में कौन किनसे अल्प, बहुत तुल्य या विशेषाधिक हैं? **पण्णवणा** के तीसरे पद 'बहुवक्तव्यता' (सू. १२४) की भांति वक्तव्यता।

१०१. भन्ते! आयुष्य-कर्म के बन्धक और अबन्धक जीवों में (कौन किनसे अल्प, बहुत, तुल्य या विशेषाधिक है?) **पण्णवणा** के तीसरे पद 'बहुवक्तव्यता' (सू. १७४) की भांति वक्तव्यता यावत् आयुष्य-कर्म के अबन्धक विशेषाधिक होते हैं।

१०२. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

चौथा उद्देशक

युग्म-पद

१०३. भन्ते! युग्म कितने प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! युग्म चार प्रज्ञप्त हैं जैसे—कृतयुग्म यावत् कल्योज।

१०४. भन्ते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—युग्म चार प्रज्ञप्त हैं—कृतयुग्म यावत् कल्योज? इसी प्रकार जैसा **भगवती** के अठारहवें शतक के चौथे उद्देशक (सू. ९०) में बताया गया है वैसा ही यावत् गौतम! यह इस अपेक्षा से कहा जा रहा है। युग्म चार प्रज्ञप्त हैं।

१०५. भन्ते! नैरयिकों के कितने युग्म प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! नैरयिकों के चार युग्म प्रज्ञप्त हैं, जैसे—कृतयुग्म यावत् कल्योज।

१०६. भन्ते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—नैरयिकों के चार युग्म प्रज्ञप्त हैं, जैसे—कृतयुग्म...? अर्थ पूर्ववत्। इसी प्रकार यावत् वायुकायिक-जीवों के चार युग्म प्रज्ञप्त हैं।

१०७. भन्ते! वनस्पतिकायिकों के .....? पृच्छा।

गौतम! वनस्पतिकायिक-जीव स्यात् कृतयुग्म होते हैं, स्यात् त्र्योज होते हैं, स्यात् द्वापरयुग्म होते हैं, स्यात् कल्योज होते हैं।

१०८. भन्ते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—वनस्पतिकायिक-जीव स्यात् कृतयुग्म यावत् कल्योज होते हैं?

गौतम! उत्पत्ति की अपेक्षा से। इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—स्यात् कृतयुग्म यावत् कल्योज होते हैं। द्वीन्द्रियों की नैरयिकों की भांति वक्तव्यता। इसी प्रकार यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता। सिद्धों की वनस्पतिकायिक-जीवों की भांति वक्तव्यता।

१०९. भन्ते! सर्व-द्रव्य कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! सर्व-द्रव्य छः प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय यावत् अद्धासमय।

११०. भन्ते! धर्मास्तिकाय द्रव्य की अपेक्षा क्या कृतयुग्म है यावत् कल्योज है?

गौतम! धर्मास्तिकाय द्रव्य की अपेक्षा कृतयुग्म नहीं है, त्र्योज नहीं है, द्वापरयुग्म नहीं है, कल्योज है। इसी प्रकार अधर्मास्तिकाय की वक्तव्यता। इसी प्रकार आकाशास्तिकाय की वक्तव्यता।

१११. भन्ते! जीवास्तिकाय द्रव्य की अपेक्षा ....? पृच्छा।

गौतम! जीवास्तिकाय द्रव्य की अपेक्षा कृतयुग्म हैं, त्र्योज नहीं हैं, द्वापरयुग्म नहीं हैं, कल्योज नहीं हैं।

११२. भन्ते! पुद्गलस्तिकाय द्रव्य की अपेक्षा .....? पृच्छा।

गौतम! पुद्गलास्तिकाय द्रव्य की अपेक्षा स्यात् कृतयुग्म है यावत् स्यात् कल्योज है। अद्धासमय की जीवास्तिकाय की भांति वक्तव्यता।

११३. भन्ते! धर्मास्तिकाय प्रदेश की अपेक्षा क्या कृतयुग्म है.....? पृच्छा।

गौतम! धर्मास्तिकाय प्रदेश की अपेक्षा कृतयुग्म है, त्र्योज नहीं है, द्वापरयुग्म नहीं है, कल्योज नहीं है। इसी प्रकार यावत् अद्धासमय की वक्तव्यता।

११४. भन्ते! धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय यावत् अद्धासमय–इनमें द्रव्य की अपेक्षा कौन किससे अल्प, बहुत, तुल्य अथवा विशेषाधिक हैं।

इनका अल्पबहुत्व जैसा **पण्णवणा** के तीसरे पद 'बहुवक्तव्यता' (सू. ११४-१२२) में प्रज्ञप्त है वैसा ही निरवशेष वक्तव्य है।

११५. भन्ते! धर्मास्तिकाय क्या अवगाढ़ है? अनवगाढ़ है?

गौतम! धर्मास्तिकाय अवगाढ़ है, अनवगाढ़ नहीं है।

११६. (भन्ते!) धर्मास्तिकाय यदि अवगाढ़ है तो क्या संख्येय-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला है? असंख्येय-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला है? अनन्त-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला है?

गौतम! धर्मास्तिकाय संख्येय-प्रदेशों का अवगाहन नहीं करता, असंख्येय-प्रदेशों का अवगाहन करने है, अनन्त-प्रदेशों का अवगाहन नहीं करता।

११७. (भन्ते!) यदि धर्मास्तिकाय असंख्येय-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला है तो क्या कृतयुग्म-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला है....? पृच्छा।

गौतम! धर्मास्तिकाय कृतयुग्म-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला है, त्र्योज-प्रदेशों का अवगाहन नहीं करता, द्वापरयुग्म-प्रदेशों का अवगाहन नहीं करता, कल्योज-प्रदेशों का अवगाहन नहीं करता। इसी प्रकार अधर्मास्तिकाय और इसी प्रकार आकाशास्तिकाय की वक्तव्यता। जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय और अद्धासमय की भी पूर्ववत् वक्तव्यता।

११८. भन्ते! यह रत्नप्रभा-पृथ्वी क्या अवगाढ़ है? अनवगाढ़ है? जैसे धर्मास्तिकाय की वक्तव्यता वैसे ही यावत् अधःसप्तमी की। सौधर्म की भी इसी प्रकार यावत् ईषत्-प्राग्भारा-
-पृथ्वी की भी इसी प्रकार वक्तव्यता।

११९. भन्ते! द्रव्य की अपेक्षा (एक) जीव क्या कृतयुग्म है......? पृच्छा।

गौतम! द्रव्य की अपेक्षा (एक) जीव कृतयुग्म नहीं है, त्र्योज नहीं है, द्वापरयुग्म नहीं है, कल्योज है। इसी प्रकार (एक) नैरयिक भी। इसी प्रकार यावत् (एक) सिद्ध।

१२०. भन्ते! द्रव्य की अपेक्षा (अनेक) जीव क्या कृतयुग्म हैं.....? पृच्छा।

गौतम! ओघ (समुच्चय) की अपेक्षा से (अनेक) जीव कृतयुग्म हैं, त्र्योज नहीं हैं, द्वापरयुग्म नहीं हैं, कल्योज नहीं हैं; विधान (एक-एक जीव के प्रदेश) की अपेक्षा से जीव कृतयुग्म नहीं हैं, त्र्योज नहीं हैं, द्वापरयुग्म नहीं हैं, कल्योज हैं।

१२१. भन्ते! द्रव्य की अपेक्षा (अनेक) नैरयिक जीव......? पृच्छा।

गौतम! ओघ की अपेक्षा से स्यात् (अनेक) नैरयिक कृतयुग्म हैं यावत् स्यात् कल्योज हैं; विधान की अपेक्षा से (अनेक) नैरयिक कृतयुग्म नहीं हैं, त्र्योज नहीं हैं, द्वापरयुग्म नहीं हैं, कल्योज हैं। इसी प्रकार यावत् (अनेक) सिद्धों की वक्तव्यता।

१२२. भन्ते! प्रदेश की अपेक्षा (एक) जीव क्या कृतयुग्म है.....? पृच्छा।

गौतम! जीव-प्रदेशों की अपेक्षा (एक) जीव कृतयुग्म है, त्र्योज नहीं है, द्वापरयुग्म नहीं है, कल्योज नहीं है। शरीर के प्रदेशों की अपेक्षा (एक) जीव स्यात् कृतयुग्म है, यावत् स्यात् कल्योज है। इसी प्रकार यावत् वैमानिक की वक्तव्यता।

१२३. भन्ते! प्रदेश की अपेक्षा (एक) सिद्ध क्या कृतयुग्म है......? पृच्छा।

गौतम! प्रदेश की अपेक्षा (एक) सिद्ध कृतयुग्म है, त्र्योज नहीं है, द्वापरयुग्म नहीं है, कल्योज नहीं है।

१२४. भन्ते! प्रदेश की अपेक्षा (अनेक) जीव क्या कृतयुग्म हैं......? पृच्छा।

गौतम! जीव-प्रदेशों की अपेक्षा ओघादेश से भी, विधानादेश से भी (अनेक) जीव कृतयुग्म हैं, त्र्योज नहीं हैं, द्वापरयुग्म नहीं हैं, कल्योज नहीं हैं। शरीर के प्रदेशों की अपेक्षा--ओघादेश से (अनेक) जीव स्यात् कृतयुग्म हैं यावत् स्यात् कल्योज हैं। विधानादेश से (अनेक) जीव कृतयुग्म भी हैं यावत् कल्योज भी हैं। इसी प्रकार नैरयिकों की भी वक्तव्यता। इसी प्रकार यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता।

१२५. भन्ते! (अनेक) सिद्ध.......? पृच्छा।

गौतम! (अनेक) सिद्ध ओघादेश से भी, विधानादेश से भी कृतयुग्म हैं, त्र्योज नहीं हैं, द्वापरयुग्म नहीं हैं, कल्योज नहीं हैं।

१२६. भन्ते! क्या (एक) जीव कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ है.....? पृच्छा।

गौतम! (एक) जीव स्यात् कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ है, यावत् स्यात् कल्योज-प्रदेशावगाढ है। इसी प्रकार यावत् (एक) सिद्ध की वक्तव्यता।

१२७. भन्ते! क्या (अनेक) जीव कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ हैं......? पृच्छा।

गौतम! (अनेक) जीव ओघादेश से कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ हैं, त्र्योज-प्रदेशावगाढ नहीं हैं, द्वापरयुग्म-प्रदेशावगाढ नहीं हैं, कल्योज-प्रदेशावगाढ नहीं हैं; विधानादेश से कृतयुग्म--प्रदेशावगाढ भी हैं, यावत् कल्योज-प्रदशावगाढ भी हैं।

१२८. (भन्ते!) (अनेक) नैरयिक .....? पृच्छा।

गौतम! (अनेक) नैरयिक जीव ओघादेश से स्यात् कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ हैं, यावत् स्यात् कल्योज-प्रदेशावगाढ हैं, विधानादेश से कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ भी हैं, यावत् कल्योज-प्रदेशावगाढ भी हैं। इसी प्रकार (अनेक) एकेन्द्रिय और सिद्धों को छोड़ कर सभी जीवों की वक्तव्यता। (अनेक) सिद्ध और (अनेक) एकेन्द्रिय की जीव की भांति वक्तव्यता।

१२९. भन्ते! क्या (एक) जीव कृतयुग्म-समय-स्थिति वाला है.......? पृच्छा।

गौतम! (एक) जीव कृतयुग्म-समय-स्थिति वाला है, त्र्योज-समय-स्थिति वाला नहीं है, द्वापरयुग्म-समय-स्थिति वाला नहीं है, कल्योज-समय-स्थिति वाला नहीं है।

१३०. भन्ते! (एक) नैरयिक......? पृच्छा।

गौतम! (एक) नैरयिक स्यात् कृतयुग्म-समय-स्थिति वाला है, यावत् स्यात् कल्योज-समय-स्थिति वाला है। इसी प्रकार यावत् (एक) वैमानिक की वक्तव्यता। (एक) सिद्ध की (एक) जीव की भांति वक्तव्यता।

१३१. भन्ते! (अनेक) जीव .....? पृच्छा।

गौतम! (अनेक) जीव ओघादेश से भी, विधानादेश से भी कृतयुग्म-समय की स्थिति वाले हैं, त्र्योज-समय की स्थिति वाले नहीं हैं, द्वापरयुग्म-समय की स्थिति वाले नहीं हैं, कल्योज-समय की स्थिति वाले नहीं हैं।

१३२. भन्ते! (अनेक) नैरयिक.....? पृच्छा।

गौतम! (अनेक) नैरयिक ओघादेश से स्यात् कृतयुग्म-समय की स्थिति वाले हैं, यावत् स्यात् कल्योज-समय की स्थिति वाले भी हैं। विधानादेश से कृतयुग्म-समय की स्थिति वाले भी हैं, यावत् कल्योज-समय की स्थिति वाले भी हैं। इसी प्रकार यावत् (अनेक) वैमानिकों की वक्तव्यता। (अनेक) सिद्धों की (अनेक) जीवों की भांति वक्तव्यता।

१३३. भन्ते! क्या (एक) जीव कृष्ण-वर्ण-पर्यवों की अपेक्षा कृतयुग्म है...? पृच्छा।

गौतम! जीव-प्रदेशों की अपेक्षा (एक) जीव कृतयुग्म नहीं है, यावत् कल्योज नहीं है। शरीर-प्रदेशों की अपेक्षा (एक) जीव स्यात् कृतयुग्म है, यावत् स्यात् कल्योज है। इसी प्रकार यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता। (एक) सिद्ध अशरीर है, इसलिए उसकी पृच्छा अपेक्षित नहीं है।

१३४. भन्ते! क्या (अनेक) जीव कृष्ण-वर्ण-पर्यवों की अपेक्षा...? पृच्छा।

गौतम! जीव-प्रदेशों की अपेक्षा (अनेक) जीव ओघादेश से भी, विधानादेश से भी कृतयुग्म नहीं है, यावत् कल्योज नहीं है। शरीर-प्रदेशों की अपेक्षा से (अनेक) जीव ओघादेश से स्यात् कृतयुग्म है, यावत् स्यात् कल्योज है; विधानादेश से कृतयुग्म भी है, यावत् कल्योज भी है। इसी प्रकार यावत् (अनेक) वैमानिकों की वक्तव्यता। इसी प्रकार नील-वर्ण-पर्यवों की अपेक्षा से वक्तव्य है, एकवचन और बहुवचन वाले दोनों दंडक वक्तव्य हैं। इस प्रकार यावत् रूक्ष-स्पर्श-पर्यवों की वक्तव्यता।

१३५. भन्ते! आभिनिबोधिक-ज्ञान(मति-ज्ञान)-पर्यवों की अपेक्षा क्या (एक) जीव कृतयुग्म है.....? पृच्छा।

गौतम! आभिनिबोधिक-ज्ञान के पर्यवों की अपेक्षा (एक) जीव स्यात् कृतयुग्म है, यावत् स्यात् कल्योज है। इसी प्रकार (एक) एकेन्द्रिय को छोड़ कर यावत् (एक) वैमानिक की वक्तव्यता।

१३६. भन्ते! आभिनिबोधिक-ज्ञान-पर्यवों की अपेक्षा (अनेक) जीव.....? पृच्छा।

गौतम! आभिनिबोधिक-ज्ञान-पर्यवों की अपेक्षा (अनेक) जीव—ओघादेश से स्यात् कृतयुग्म हैं यावत् स्यात् कल्योज हैं, विधानादेश से कृतयुग्म भी हैं यावत् कल्योज भी हैं। इसी प्रकार (अनेक) एकेन्द्रिय को छोड़ कर यावत् (अनेक) वैमानिकों की वक्तव्यता। इसी प्रकार श्रुत--ज्ञान-पर्यवों की भी वक्तव्यता। इसी प्रकार अवधि-ज्ञान के पर्यवों की भी वक्तव्यता। केवल इतना विशेष है—विकलेन्द्रियों के अवधि-ज्ञान नहीं होता। इसी प्रकार मनःपर्यव-ज्ञान-पर्यवों की वक्तव्यता, केवल इतना विशेष है—वह जीवों में केवल मनुष्यों के होता है। शेष दण्डकों में नहीं होता।

१३७. भन्ते! केवल-ज्ञान-पर्यवों की अपेक्षा क्या (एक) जीव कृतयुग्म है...? पृच्छा।

गौतम! केवल-ज्ञान के पर्यवों की अपेक्षा (एक) जीव कृतयुग्म है, त्र्योज नहीं है, द्वापरयुग्म नहीं है, कल्योज नहीं है। इसी प्रकार (एक) मनुष्य की भी वक्तव्यता। इसी प्रकार (एक) सिद्ध की भी वक्तव्यता।

१३८. भन्ते! केवल-ज्ञान-पर्यवों की अपेक्षा क्या (अनेक) जीव कृतयृग्म हैं?....पृच्छा।

गौतम! केवल-ज्ञान-पर्यवों की अपेक्षा (अनेक) जीव—ओघादेश से भी और विधानादेश से भी कृतयुग्म हैं, त्र्योज नहीं हैं, द्वापरयुग्म नहीं हैं, कल्योज नहीं हैं। इसी प्रकार (अनेक) मनुष्यों की भी वक्तव्यता। इसी प्रकार (अनेक) सिद्धों की भी वक्तव्यता।

१३९. भन्ते! मति-अज्ञान-पर्यवों की अपेक्षा (एक) जीव क्या कृतयुग्म है....?

(गौतम!) जैसे आभिनिबोधिक-ज्ञान(मति-ज्ञान)-पर्यवों की अपेक्षा बताया गया है वैसे ही दो दण्डक (एकवचन और बहुवचन) बताने चाहिए। इसी प्रकार श्रुत-अज्ञान-पर्यवों की अपेक्षा वक्तव्यता। इसी प्रकार विभंग-ज्ञान-पर्यवों की अपेक्षा वक्तव्यता। चक्षु-दर्शन, अचक्षु-दर्शन और अवधि-दर्शन के पर्यवों की अपेक्षा भी इसी प्रकार वक्तव्यता। केवल इतना विशेष है—जिसके जो प्राप्त है वह वक्तव्य है। केवल-दर्शन-पर्यव केवल-ज्ञान-पर्यवों की भांति वक्तव्य हैं।

शरीर-पद

१४०. भन्ते! शरीर कितने प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! शरीर पांच प्रज्ञप्त हैं, जैसे औदारिक यावत् कार्मक। **पण्णवणा** का शरीर-पद (पद १२) अविकल रूप में वक्तव्य है।

सप्रकम्प-अप्रकम्प-पद

१४१. भन्ते! क्या जीव सैज (सप्रकम्पन) हैं? या निरेज (अप्रकंपन) हैं?

गौतम! जीव सैज भी हैं, निरेज भी हैं।

१४२. भन्ते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—जीव सैज भी हैं, निरेज भी हैं?

गौतम! जीव दो प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—संसार-समापन्नक और असंसार-समापन्नक। जो असंसार-समापन्नक हैं वे सिद्ध हैं। सिद्ध दो प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—अनन्तर-सिद्ध और परम्पर-सिद्ध। जो परम्पर-सिद्ध हैं वे निरेज हैं। जो अनन्तर सिद्ध हैं वे सैज हैं।

१४३. भन्ते! वे क्या देशतः सैज हैं? या सर्वतः सैज हैं?

गौतम! वे देशतः सैज नहीं हैं, सर्वतः सैज हैं। जो संसार-समापन्नक हैं, वे दो प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—शैलेशी-प्रतिपन्न और अशैलेशी-प्रतिपन्न। जो शैलेशी-प्रतिपन्न हैं वे निरेज हैं। जो अशैलेशी-प्रतिपन्न हैं वे सैज हैं।

१४४. भन्ते! वे क्या देशतः सैज (कम्पन वाले) हैं? या सर्वतः सैज हैं?

गौतम! वे देशतः भी सैज हैं, सर्वतः भी सैज हैं। गौतम! इस अपेक्षा से ऐसा कहा जा रहा है—जीव सैज भी हैं, निरेज भी हैं।

१४५. भन्ते! नैरयिक क्या देशतः सैज होते हैं? सर्वतः भी सैज होते हैं?

गौतम! नैरयिक देशतः भी सैज होते हैं, सर्वतः भी सैज होते हैं।

१४६. (भन्ते!) यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है यावत् सर्वतः सैज होते हैं?'

गौतम! नैरयिक दो प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—विग्रहगति-समापन्नक और अविग्रहगति--समापन्नक। जो विग्रहगति-समापन्नक हैं वे सर्वतः सैज हैं, जो अवग्रिहगति-समापन्नक हैं वे देशतः सैज हैं। इस अपेक्षा से ऐसा कहा जा रहा है यावत् सर्वतः भी सैज होते हैं। इसी प्रकार यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता।

पद्गल-पद

१४७. भन्ते! क्या परमाणु-पुद्गल संख्येय हैं? असंख्येय हैं? अनन्त हैं?

गौतम! परमाणु-पुद्गल संख्येय नहीं हैं, असंख्येय नहीं हैं, अनन्त हैं। इसी प्रकार यावत् अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध की वक्तव्यता।

१४८. भन्ते! क्या एक आकाश-प्रदेशावगाढ पुद्गल संख्येय हैं? असंख्येय हैं? अनन्त हैं?

पूर्ववत्। इसी प्रकार यावत् असंख्येय-प्रदेशावगाढ पुद्गलों की वक्तव्यता।

१४९. भन्ते! क्या एक-समय की स्थिति वाले पुद्गल संख्येय हैं....?

पूर्ववत्। इसी प्रकार यावत् असंख्येय-समय की स्थिति वाले पुद्गलों की वक्तव्यता।

१५०. भन्ते! क्या एक-गुण-कृष्ण पुद्गल संख्येय हैं?

पूर्ववत्। इसी प्रकार यावत् अनन्त-गुण-कृष्ण पुद्गलों की वक्तव्यता। इसी प्रकार अवशेष वर्ण, गंध, रस और स्पर्श वाले पुद्गल ज्ञातव्य हैं। यावत् अनन्त-गुण-रूक्ष पुद्गल।

१५१. भन्ते! इन परमाणु-पुद्गलों और द्वि-प्रदेशी स्कन्धों में द्रव्य की अपेक्षा से कौन किनसे बहुत हैं...........?

गौतम! द्रव्य की अपेक्षा द्वि-प्रदेशी स्कन्धों से परमाणु-पुद्‌गल बहुत हैं।

१५२. भन्ते! इन द्वि-प्रदेशी स्कंध और त्रि-प्रदेशी स्कन्धों में द्रव्य की अपेक्षा कौन किनसे बहुत हैं?

गौतम! द्रव्य की अपेक्षा त्रि-प्रदेशी स्कन्धों से द्वि-प्रदेशी स्कन्ध बहुत हैं। इसी प्रकार इस गमक के द्वारा यावत् द्रव्य की अपेक्षा दश-प्रदेशी स्कन्धों से नव-प्रदेशी स्कन्ध अधिक हैं।

१५३. भन्ते! इन दस-प्रदेशी स्कन्धों की पृच्छा........?

गौतम! द्रव्य की अपेक्षा दश-प्रदेशी स्कन्धों से संख्येय-प्रदेशी स्कन्ध बहुत हैं।

१५४. भन्ते! इन संख्येय-प्रदेशी स्कन्धों की पृच्छा...........।

गौतम! द्रव्य की अपेक्षा संख्येय-प्रदेशी स्कन्धों से असंख्येय-प्रदेशी स्कन्ध बहुत हैं।

१५५. भन्ते! असंख्येय-प्रदेशी स्कन्धों की पृच्छा........।

गौतम! द्रव्य की अपेक्षा अनन्त-प्रदेशी स्कन्धों से असंख्येय-प्रदेशी स्कन्ध बहुत हैं।

१५६. भन्ते! इन परमाणु-पुद्‌गलों और द्वि-प्रदेशी स्कन्धों में प्रदेश की अपेक्षा से कौन किनसे बहुत हैं?

गौतम! प्रदेश की अपेक्षा परमाणु-पुद्‌गलों से द्वि-प्रदेशी स्कन्ध बहुत हैं। इसी प्रकार इस गमक के द्वारा यावत् प्रदेश की अपेक्षा नव-प्रदेशी स्कन्धों से दश-प्रदेशी स्कन्ध बहुत हैं। इसी प्रकार सर्वत्र द्रष्टव्य है। प्रदेश की अपेक्षा दश-प्रदेशी स्कन्धों से संख्येय-प्रदेशी स्कन्ध बहुत हैं। प्रदेश की अपेक्षा संख्येय-प्रदेशी स्कन्धों से असंख्येय-प्रदेशी स्कन्ध बहुत हैं।

१५७. भन्ते! इन असंख्येय-प्रदेशी स्कन्धों की पृच्छा......।

गौतम! प्रदेश की अपेक्षा अनन्त-प्रदेशी स्कन्धों से असंख्येय-प्रदेशी स्कन्ध बहुत हैं।

१५८. भन्ते! इन एक-प्रदेशावगाढ और दो-प्रदेशावगाढ पुद्‌गलों में द्रव्य की अपेक्षा कौन--किनसे विशेषाधिक हैं?

गौतम! द्रव्य की अपेक्षा दो-प्रदेशावगाढ पुद्‌गलों से एक-प्रदेशावगाढ पुद्‌गल विशेषाधिक हैं। इस प्रकार इस गमक के अनुसार द्रव्य की अपेक्षा तीन-प्रदेशावगाढ पुद्‌गलों से दो--प्रदेशावगाढ पुद्‌गल विशेषाधिक हैं यावत् द्रव्य की अपेक्षा दश-प्रदेशावगाढ पुद्‌गलों से नव--प्रदेशावगाढ पुद्‌गल विशेषाधिक हैं। द्रव्य की अपेक्षा दश-प्रदेशावगाढ पुद्‌गलों से संख्येय--प्रदेशावगाढ पुद्‌गल बहुत हैं। द्रव्य की अपेक्षा संख्येय-प्रदेशावगाढ पुद्‌गलों से असंख्येय--प्रदेशावगाढ पुद्‌गल बहुत हैं। सर्वत्र पृच्छा वक्तव्य है।

१५९. भन्ते! इन एक-प्रदेशावगाढ पुद्‌गलों और दो-प्रदेशावगाढ पुद्‌गलों में प्रदेश की अपेक्षा कौन-किनसे विशेषाधिक हैं?

गौतम! प्रदेश की अपेक्षा एक-प्रदेशावगाढ पुद्‌गलों से दो-प्रदेशावगाढ पुद्‌गल विशेषाधिक हैं। इसी प्रकार यावत् प्रदेश की अपेक्षा नव-प्रदेशावगाढ पुद्‌गलों से दश-प्रदेशावगाढ पुद्‌गल विशेषाधिक हैं। प्रदेश की अपेक्षा दश-प्रदेशावगाढ पुद्‌गलों से संख्येय-प्रदेशावगाढ पुद्‌गल

बहुत हैं। प्रदेश की अपेक्षा संख्येय-प्रदेशावगाढ पुद्गलों से असंख्येय-प्रदेशावगाढ पुद्गल बहुत हैं।

१६०. भन्ते! इन एक समय की स्थिति वाले पुद्गलों और दो समय की स्थिति वाले पुद्गलों में द्रव्य की अपेक्षा (कौन किनसे बहुत हैं)? जैसे अवगाहना की वक्तव्यता वैसे स्थिति की भी वक्तव्यता।

१६१. भन्ते! इन एक-गुण-कृष्ण पुद्गलों और दो-गुण-कृष्ण पुद्गलों में द्रव्य की अपेक्षा कौन किनसे विशेषाधिक हैं? जैसे परमाणु-पुद्गल की वैसे ही इनकी निरवशेष वक्तव्यता। इसी प्रकार सभी वर्ण, गन्ध और रस वाले पुद्गलों की वक्तव्यता।

१६२. भन्ते! इन एक-गुण-कर्कश पुद्गलों और दो-गुण-कर्कश पुद्गलों में द्रव्य की अपेक्षा कौन किनसे विशेषाधिक हैं....?

गौतम! द्रव्य की अपेक्षा एक-गुण-कर्कश पुद्गलों से दो-गुण-कर्कश पुद्गल विशेषाधिक हैं। इसी प्रकार यावत् द्रव्य की अपेक्षा नव-गुण-कर्कश पुद्गलों से दस-गुण-कर्कश पुद्गल विशेषाधिक हैं। द्रव्य की अपेक्षा दस-गुण-कर्कश पुद्गलों से संख्येय-गुण-कर्कश पुद्गल बहुत हैं। द्रव्य की अपेक्षा संख्येय-गुण-कर्कश पुद्गलों से असंख्येय गुण-कर्कश पुद्गल अधिक हैं। द्रव्य की अपेक्षा असंख्येय-गुण-कर्कश-पुद्गलों से अनन्त-गुण-कर्कश पुद्गल अधिक हैं। इसी प्रकार प्रदेश की भी वक्तव्यता। सर्वत्र पृच्छा वक्तव्य है। जिस प्रकार कर्कश पुद्गलों की वक्तव्यता है उसी प्रकार मृदु, गुरु और लघु पुद्गलों की भी वक्तव्यता। शीत, उष्ण, स्निग्ध और रूक्ष पुद्गलों की वर्ण की भांति वक्तव्यता।

१६३. भन्ते! इन परमाणु-पुद्गलों, संख्येय-प्रदेशी, असंख्येय-प्रदेशी और अनन्त-प्रदेशी स्कन्धों में द्रव्य की अपेक्षा, प्रदेश की अपेक्षा, द्रव्य और प्रदेश की अपेक्षा कौन किनसे अल्प, बहुत, तुल्य या विशेषाधिक हैं?

गौतम! अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्य की अपेक्षा सबसे अल्प हैं, परमाणु-पुद्गल द्रव्य की अपेक्षा इनसे अनन्त-गुणा हैं, संख्येय-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्य की अपेक्षा इनसे संख्येय-गुणा हैं, असंख्येय-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्य की अपेक्षा इनसे असंख्येय-गुणा हैं।

प्रदेश की अपेक्षा—अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध प्रदेश की अपेक्षा सबसे अल्प हैं, परमाणु-पुद्गल प्रदेश की अपेक्षा इनसे अनन्त-गुणा हैं, संख्येय-प्रदेशी स्कन्ध प्रदेश की अपेक्षा इनसे संख्येय-गुणा हैं, असंख्येय-प्रदेशी स्कन्ध प्रदेश की अपेक्षा इनसे असंख्येय-गुणा हैं।

द्रव्य और प्रदेश की अपेक्षा—अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्य की अपेक्षा सबसे अल्प हैं, वे ही प्रदेश की अपेक्षा इनसे अनन्त-गुणा हैं, परमाणु-पुद्गल द्रव्य और प्रदेश की अपेक्षा इनसे अनन्त-गुणा हैं, संख्येय-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्य की अपेक्षा इनसे संख्येय-गुणा हैं, वे ही प्रदेश की अपेक्षा से इनसे संख्येय-गुणा हैं, असंख्येय-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्य की अपेक्षा इनसे असंख्येय-गुणा हैं, वे ही प्रदेश की अपेक्षा इनसे असंख्येय-गुणा हैं।

१६४. भन्ते! इन एक-प्रदेशावगाढ़, संख्येय-प्रदेशावगाढ़ और असंख्येय-प्रदेशावगाढ़ पुद्गलों

में द्रव्य की अपेक्षा, प्रदेश की अपेक्षा, द्रव्य और प्रदेश की अपेक्षा कौन किनसे अल्प? बहुत? तुल्य? या विशेषाधिक हैं?

गौतम! एक-प्रदेशावगाढ पुद्गल द्रव्य की अपेक्षा सबसे अल्प हैं, संख्येय-प्रदेशावगाढ़ पुद्गल द्रव्य की अपेक्षा इनसे संख्येय-गुणा हैं, असंख्येय-प्रदेशावगाढ़ पुद्गल द्रव्य की अपेक्षा इनसे असंख्येय-गुणा हैं।

प्रदेश की अपेक्षा—एक-प्रदेशावगाढ़ पुद्गल अप्रदेश (परमाणु-पुद्गल) की अपेक्षा सबसे अल्प हैं, संख्येय-प्रदेशावगाढ़ पुद्गल प्रदेश की अपेक्षा इनसे संख्येय-गुणा हैं, असंख्येय--प्रदेशावगाढ़ पुद्गल प्रदेश की अपेक्षा इनसे असंख्येय-गुणा हैं।

द्रव्य और प्रदेश की अपेक्षा—एक-प्रदेशावगाढ़ पुद्गल द्रव्य और अप्रदेश की अपेक्षा सबसे अल्प हैं, संख्येय-प्रदेशावगाढ़ पुद्गल द्रव्य की अपेक्षा इनसे संख्येय-गुणा हैं, वे ही प्रदेश की अपेक्षा इनसे संख्येय-गुणा हैं। असंख्येय-प्रदेशावगाढ़ पुद्गल द्रव्य की अपेक्षा इनसे असंख्येय-गुणा हैं, वे ही प्रदेश की अपेक्षा इनसे असंख्येय-गुणा हैं।

१६५. भन्ते! इन एक-समय की स्थिति वाले, संख्येय-समय की स्थिति वाले और असंख्येय--समय की स्थिति वाले पुद्गलों में (द्रव्य की अपेक्षा, प्रदेश की अपेक्षा, द्रव्य और प्रदेश की अपेक्षा कौन किन से अल्प? बहुत? तुल्य? या विशेषाधिक हैं?) जैसे अवगाहना की वक्तव्यता (भ. २५/१६४) वैसे ही स्थिति के अल्पबहुत्व की भी वक्तव्यता।

१६६. भन्ते! इन एक-गुण-कृष्ण, संख्येय-गुण-कृष्ण, असंख्येय-गुणा-कृष्ण और अनन्त--गुण-कृष्ण पुद्गलों में द्रव्य की अपेक्षा, प्रदेश की अपेक्षा, द्रव्य और प्रदेश की अपेक्षा कौन किनसे अल्प? बहुत ? तुल्य? या विशेषाधिक हैं?

जैसे इन परमाणु-पुद्गलों का अल्पबहुत्व (भ. २५/१६३) वैसे ही इन (एक-गुण--कृष्ण.....) पुद्गलों के अल्पबहुत्व की वक्तव्यता। इसी प्रकार शेष वर्ण, गन्ध और रस वाले पुद्गलों के अल्पबहुत्व की भी वक्तव्यता।

१६७. भन्ते! इन एक-गुण-कर्कश, संख्येय-गुण-कर्कश, असंख्येय-गुण-कर्कश और अनन्त--गुण-कर्कश पुद्गलों में द्रव्य की अपेक्षा, प्रदेश की अपेक्षा, द्रव्य और प्रदेश की अपेक्षा कौन किनसे अल्प? बहुत? तुल्य? या विशेषाधिक हैं?

गौतम! एक-गुण-कर्कश पुद्गल द्रव्य की अपेक्षा सबसे अल्प हैं, संख्येय-गुण-कर्कश पुद्गल द्रव्य की अपेक्षा इनसे संख्येय-गुणा हैं, असंख्येय-गुण-कर्कश पुद्गल द्रव्य की अपेक्षा इनसे असंख्येय-गुणा हैं, अनन्त-गुण-कर्कश पुद्गल द्रव्य की अपेक्षा इनसे अनन्त-गुणा हैं।

प्रदेश की अपेक्षा भी पूर्ववत्। केवल इतना विशेष है—संख्येय-गुण-कर्कश पुद्गल प्रदेश की अपेक्षा इनसे असंख्येय-गुणा हैं। शेष पूर्ववत्। द्रव्य और प्रदेश की अपेक्षा एक-गुण-कर्कश पुद्गल द्रव्य और प्रदेश की अपेक्षा सबसे अल्प हैं, संख्येय-गुण-कर्कश पुद्गल द्रव्य की अपेक्षा इनसे असंख्येय-गुणा हैं, वे ही प्रदेश की अपेक्षा इनसे संख्येय-गुणा हैं। असंख्येय--गुण-कर्कश पुद्गल द्रव्य की अपेक्षा इनसे असंख्येय-गुणा हैं, वे ही प्रदेश की अपेक्षा इनसे असंख्येय-गुणा हैं। अनन्त-गुण-कर्कश पुद्गल द्रव्य की अपेक्षा इनसे अनन्त-गुणा हैं, वे ही

प्रदेश की अपेक्षा इनसे अनन्त-गुणा हैं। इसी प्रकार मृदु-, गुरु- और लघु-स्पर्शों का अल्पबहुत्व वक्तव्य है। शीत-, उष्ण-, स्निग्ध- और रूक्ष-स्पर्शों का अल्पबहुत्व भी वर्णों की भांति वक्तव्य है।

१६८. भन्ते! (एक) परमाणु-पुद्‌गल द्रव्य की अपेक्षा क्या कृतयुग्म है? त्र्योज है? द्वापरयुग्म है? कल्योज है?

गौतम! कृतयुग्म नहीं है, त्र्योज नहीं है, द्वापरयुग्म नहीं है, कल्योज है। इसी प्रकार यावत् (एक) अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध वक्तव्य है।

१६९. भन्ते! (अनेक) परमाणु-पुद्‌गल द्रव्य की अपेक्षा क्या कृतयुग्म हैं?....पृच्छा।

गौतम! ओघादेश से स्यात् कृतयुग्म हैं, यावत् स्यात् कल्योज हैं; विधानादेश से कृतयुग्म नहीं हैं, त्र्योज नहीं हैं, द्वापरयुग्म नहीं हैं, कल्योज हैं। इसी प्रकार यावत् (अनेक) अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध वक्तव्य हैं।

१७०. भन्ते! (एक) परमाणु-पुद्‌गल प्रदेश की अपेक्षा क्या कृतयुग्म है—पृच्छा।

गौतम! कृतयुग्म नहीं है, त्र्योज नहीं है, द्वापरयुग्म नहीं है, कल्योज है।

१७१. (एक) द्वि-प्रदेशी स्कन्ध.....? पृच्छा।

गौतम! कृतयुग्म नहीं है, त्र्योज नहीं है, द्वापरयुग्म है, कल्योज नहीं है।

१७२. (एक) त्रि-प्रदेशी स्कन्ध......? पृच्छा।

गौतम! कृतयुग्म नहीं है, त्र्योज है, द्वापरयुग्म नहीं है, कल्योज नहीं है।

१७३. (एक) चतुः-प्रदेशी स्कन्ध.......? पृच्छा।

गौतम! कृतयुग्म है, त्र्योज नहीं है, द्वापरयुग्म नहीं है, कल्योज नहीं है। (एक) पञ्च-प्रदेशी स्कन्ध (एक) परमाणु-पुद्‌गल की भांति है (भ. २५/१७०) (एक) षट्-प्रदेशी स्कन्ध (एक) द्वि-प्रदेशी स्कन्ध की भांति है (भ. २५/१७१)। (एक) सप्त-प्रदेशी स्कन्ध (एक) त्रि--प्रदेशी स्कन्ध की भांति है (भ. २५/१७२) (एक) अष्ट-प्रदेशी स्कन्ध (एक) चतुः-प्रदेशी स्कन्ध की भांति है (भ. २५/१७३)। (एक) नव-प्रदेशी स्कन्ध (एक) परमाणु-पुद्‌गल की भांति है। (भ. २५/१७०)। (एक) दस-प्रदेशी स्कन्ध (एक) द्वि-प्रदेशी स्कन्ध की भांति है (भ. २५/१७१)।

१७४. भन्ते! प्रदेश की अपेक्षा (एक) संख्येय-प्रदेशी पुद्‌गल-स्कन्ध.....? पृच्छा।

गौतम! स्यात् कृतयुग्म है यावत् स्यात् कल्योज है। इसी प्रकार (एक) असंख्येय-प्रदेशी पुद्‌गल-स्कन्ध की भी, इसी प्रकार (एक) अनन्त-प्रदेशी पुद्‌गल स्कन्ध भी।

१७५. भन्ते! (अनेक) परमाणु-पुद्‌गल प्रदेश की अपेक्षा क्या कृतयुग्म हैं....? पृच्छा।

गौतम! ओघादेश से स्यात् कृतयुग्म हैं, यावत् स्यात् कल्योज हैं; विधानादेश से परमाणु-पुद्‌गल कृतयुग्म नहीं हैं, त्र्योज नहीं हैं, द्वापरयुग्म नहीं हैं, कल्योज हैं।

१७६. (अनेक) द्वि-प्रदेशी स्कन्ध.....? पृच्छा।

गौतम! ओघादेश से स्यात् कृतयुग्म हैं, त्र्योज नहीं हैं, स्यात् द्वापरयुग्म हैं, कल्योज नहीं हैं; विधानादेश से कृतयुग्म नहीं हैं, त्र्योज नहीं हैं, द्वापरयुग्म हैं, कल्योज नहीं हैं।

१७७. (अनेक) त्रि-प्रदेशी स्कन्ध ......? पृच्छा।

गौतम! ओघादेश से स्यात् कृतयुग्म हैं यावत् स्यात् कल्योज हैं; विधानादेश से कृतयुग्म नहीं हैं, त्र्योज हैं, द्वापरयुग्म नहीं हैं, कल्योज नहीं हैं।

१७८. (अनेक) चतुः-प्रदेशी स्कन्ध......? पृच्छा।

गौतम! ओघादेश और विधानादेश से भी कृतयुग्म हैं, त्र्योज नहीं हैं, द्वापरयुग्म नहीं हैं, कल्योज नहीं हैं। (अनेक) पञ्च-प्रदेशी स्कन्ध परमाणु-पुद्गलों की भांति हैं (भ. २५/१७५)। (अनेक) षट्-प्रदेशी स्कन्ध (अनेक) द्वि-प्रदेशी स्कन्धों की भांति हैं (भ. २५/१७६)। (अनेक) सप्त-प्रदेशी स्कन्ध (अनेक) त्रि-प्रदेशी स्कन्धों की भांति हैं (भ. २५/१७७)। (अनेक) अष्ट-प्रदेशी स्कन्ध (अनेक) चतुः-प्रदेशी स्कन्धों की भांति हैं (भ. २५/१७८)। (अनेक) नव-प्रदेशी स्कन्ध (अनेक) परमाणु-पुद्गलों की भांति (भ. २५/१७५)। (अनेक) दस-प्रदेशी स्कन्ध (अनेक) द्वि-प्रदेशी स्कन्धों की भांति हैं (भ. २५/१७६)।

१७९. (अनेक) संख्येय-प्रदेशी पुद्गल-स्कन्ध......? पृच्छा।

गौतम! ओघादेश से स्यात् कृतयुग्म हैं यावत् स्यात् कल्योज हैं; विधानादेश से कृतयुग्म भी हैं यावत् कल्योज भी हैं। इसी प्रकार (अनेक) असंख्येय-प्रदेशी पुद्गल-स्कन्ध, (अनेक) अनन्त-प्रदेशी पुद्गल स्कन्ध वक्तव्य हैं।

१८०. भन्ते! (एक) परमाणु-पुद्गल क्या कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ़ है......? पृच्छा।

गौतम! कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ़ नहीं है, त्र्योज-प्रदेशावगाढ़ नहीं है, द्वापरयुग्म-प्रदेशावगाढ़ नहीं है, कल्योज-प्रदेशावगाढ़ है।

१८१. (एक) द्वि-प्रदेशी स्कन्ध.....? पृच्छा।

गौतम! कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ़ नहीं है, त्र्योज-प्रदेशावगाढ़ नहीं है, स्यात् द्वापरयुग्म-प्रदेशावगाढ़ है, स्यात् कल्योज-प्रदेशावगाढ़ है।

१८२. (एक) त्रि-प्रदेशी स्कन्ध........? पृच्छा।

गौतम! कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ़ नहीं है, स्यात् त्र्योज-प्रदेशावगाढ़ है, स्यात् द्वापरयुग्म-प्रदेशावगाढ़ है, स्यात् कल्योज-प्रदेशावगाढ़ है।

१८३. (एक) चतुः-प्रदेशी स्कन्ध.....? पृच्छा।

गौतम! स्यात् कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ़ है यावत् स्यात् कल्योज-प्रदेशावगाढ़ है। इसी प्रकार यावत्? (एक) अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध वक्तव्य है।

१८४. भन्ते! (अनेक) परमाणु-पुद्गल क्या कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ़ हैं......? पृच्छा।

गौतम! ओघादेश से कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ़ हैं, त्र्योज-प्रदेशावगाढ़ नहीं हैं, द्वापरयुग्म-प्रदेशावगाढ़ नहीं हैं, कल्योज-प्रदेशावगाढ़ नहीं हैं; विधानादेश से कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ़ नहीं

हैं, त्र्योज-प्रदेशावगाढ़ नहीं है, द्वापरयुग्म-प्रदेशावगाढ़ नहीं है, कल्योज-प्रदेशावगाढ़ है।

१८५. द्वि-प्रदेशी स्कन्ध........? पृच्छा।

गौतम! ओघादेश से कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ़ हैं, त्र्योज-प्रदेशावगाढ़ नहीं है, द्वापरयुग्म--प्रदेशावगाढ़ नहीं है, कल्योज-प्रदेशावगाढ़ नहीं है; विधानादेश से कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ़ नहीं हैं, त्र्योज-प्रदेशावगाढ़ नहीं हैं, द्वापरयुग्म-प्रदेशावगाढ़ भी हैं, कल्योज-प्रदेशावगाढ़ भी हैं।

१८६. (अनेक) त्रि-प्रदेशी स्कन्ध.......? पृच्छा।

गौतम! ओघादेश से कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ़ हैं, त्र्योज-प्रदेशावगाढ़ नहीं हैं, द्वापरयुग्म--प्रदेशावगाढ़ नहीं हैं, कल्योज-प्रदेशावगाढ़ नहीं हैं; विधानादेश से कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ़ नहीं हैं, त्र्योज-प्रदेशावगाढ़ भी हैं, द्वापरयुग्म-प्रदेशावगाढ़ भी हैं, कल्योज-प्रदेशावगाढ़ भी हैं।

१८७. (अनेक) चतुः-प्रदेशी स्कन्ध.........? पृच्छा।

गौतम! ओघादेश से कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ़ हैं, त्र्योज-प्रदेशावगाढ़ नहीं हैं, द्वापरयुग्म--प्रदेशावगाढ़ नहीं हैं, कल्योज-प्रदेशावगाढ़ नहीं है; विधानादेश से कृतयुग्म-प्रदेशावगाढ़ भी हैं यावत् कल्योज-प्रदेशावगाढ़ भी हैं। इसी प्रकार यावत् (अनेक) अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध वक्तव्य हैं।

१८८. भन्ते! (एक) परमाणु-पुद्गल क्या कृतयुग्म-समय की स्थिति वाला है.....? पृच्छा।

गौतम! स्यात् कृतयुग्म-समय की स्थिति वाला है यावत् स्यात् कल्योज-समय की स्थिति वाला है। इसी प्रकार यावत् (एक) अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध वक्तव्य हैं।

१८९. भन्ते! (अनेक) परमाणु-पुद्गल क्या कृतयुग्म-समय की स्थिति वाले हैं......? पृच्छा।

गौतम! ओघादेश से स्यात् कृतयुग्म-समय की स्थिति वाले हैं यावत् स्यात् कल्योज--समय की स्थिति वाले हैं; विधानादेश से कृतयुग्म-समय की स्थिति वाले भी हैं यावत् कल्योज-समय की स्थिति वाले भी हैं। इसी प्रकार यावत् (अनेक) अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध वक्तव्य हैं।

१९०. भन्ते! (एक) परमाणु-पुद्गल कृष्ण-वर्ण-पर्यवों की अपेक्षा क्या कृतयुग्म है? त्र्योज है?..... पृच्छा।

जैसे स्थिति की वक्तव्यता वैसे ही सभी वर्णों के पर्यवों की वक्तव्यता। इसी प्रकार (सभी) गन्धों के पर्यवों की, रसों के पर्यवों की यावत् मधुर-रस के पर्यवों की वक्तव्यता।

१९१. भन्ते! (एक) अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध कर्कश-स्पर्श-पर्यवों की अपेक्षा क्या कृतयुग्म है......? पृच्छा।

गौतम! कर्कश-स्पर्श-पर्यवों की अपेक्षा स्यात् कृतयुग्म है यावत् स्यात् कल्योज है।

१९२. भन्ते! (अनेक) अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध कर्कश-स्पर्श-पर्यवों की अपेक्षा क्या कृतयुग्म हैं?......पृच्छा।

गौतम! अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध कर्कश-स्पर्श-पर्यवों की अपेक्षा—ओघादेश से स्यात् कृतयुग्म हैं, यावत् स्यात् कल्योज हैं; विधानादेश से कृतयुग्म भी हैं, यावत् कल्योज भी हैं। इसी प्रकार

मृदु-, गुरु- और लघु-स्पर्शों के पर्यव भी वक्तव्य हैं। शीत-, उष्ण-, स्निग्ध- और रूक्ष--स्पर्शों के पर्यव वर्ण के पर्यवों की भांति वक्तव्य हैं।

१९३. भन्ते! (एक) परमाणु-पुद्गल क्या स-अर्ध है? अनर्ध है?

गौतम! स-अर्ध नहीं है, अनर्ध है।

१९४. भन्ते! (एक) द्वि-प्रदेशी स्कन्ध .....? पृच्छा।

गौतम! स-अर्ध है, अनर्ध नहीं है। (एक) त्रि-प्रदेशी स्कन्ध (एक) परमाणु-पुद्गल (भ. २५/१९३) की भांति है। (एक) चतुः-प्रदेशी स्कन्ध (एक) द्वि-प्रदेशी स्कन्ध की भांति है। (एक) पंच-प्रदेशी स्कन्ध (एक) त्रिप्रदेशी स्कन्ध की भांति है। (एक) षट्-प्रदेशी स्कन्ध (एक) द्वि-प्रदेशी स्कन्ध की भांति है। (एक) सप्त-प्रदेशी स्कन्ध (एक) त्रि-प्रदेशी स्कन्ध की भांति है। (एक) अष्ट-प्रदेशी स्कन्ध (एक) द्वि-प्रदेशी स्कन्ध की भांति है। (एक) नव--प्रदेशी स्कन्ध (एक) त्रि-प्रदेशी स्कन्ध की भांति है। (एक) दस-प्रदेशी स्कन्ध (एक) द्वि--प्रदेशी स्कन्ध की भांति है।

१९५. भन्ते! (एक) संख्येय-प्रदेशी स्कन्ध................? पृच्छा।

गौतम! स्यात् स-अर्ध है, स्यात् अनर्ध है। इसी प्रकार (एक) असंख्येय-प्रदेशी स्कन्ध भी, इसी प्रकार (एक) अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध भी वक्तव्य है।

१९६. भन्ते! (अनेक) परमाणु-पुद्गल क्या स-अर्ध हैं? अनर्ध हैं?

गौतम! स-अर्ध हैं अथवा अनर्ध हैं। इसी प्रकार यावत् (अनेक) अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध वक्तव्य हैं।

१९७. भन्ते! (एक) परमाणु-पुद्गल क्या सैज (सप्रकम्प) है? निरेज है?

गौतम! स्यात् सैज है, स्यात् निरेज है। इसी प्रकार यावत् (अनेक) अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध वक्तव्य हैं।

१९८. भन्ते! (अनेक) परमाणु-पुद्गल क्या सैज हैं? निरेज हैं?

गौतम! सैज भी हैं, निरेज भी हैं। इसी प्रकार यावत् (अनेक) अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध वक्तव्य हैं।

१९९. भन्ते! (एक) परमाणु-पुद्गल काल की दृष्टि से सैज कितने समय तक रहता है?

गौतम! जघन्यतः एक समय, उत्कृष्टतः आवलिका का असंख्यातवां भाग।

२००. भन्ते! (एक) परमाणु-पुद्गल काल की दृष्टि से निरेज कितने समय तक रहता है?

गौतम! (एक) परमाणु-पुद्गल काल की दृष्टि से जघन्यतः एक समय, उत्कृष्टतः असंख्येय काल। इसी प्रकार यावत् (एक) अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध वक्तव्य है।

२०१. भन्ते! (अनेक) परमाणु-पुद्गल काल की दृष्टि से सैज कितने समय तक रहते हैं?

गौतम! सर्वकाल।

२०२. भन्ते! (अनेक) परमाणु-पुद्गल काल की दृष्टि से निरेज कितने समय रहते हैं?

गौतम! सर्वकाल। इसी प्रकार यावत् (अनेक) अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध वक्तव्य हैं।

२०३. भन्ते! (एक) परमाणु-पुद्गल के सैज अवस्था का कितने काल का अन्तर होता है?

गौतम! स्वस्थानान्तर की अपेक्षा से जघन्यतः एक समय, उत्कृष्टतः असंख्येय काल। परस्थानान्तर की अपेक्षा जघन्यतः एक समय, उत्कृष्टतः असंख्येय काल।

२०४. (भन्ते! एक परमाणु-पुद्गल का) निरेज अवस्था का कितने काल का अन्तर होता है?

गौतम! स्वस्थानान्तर की अपेक्षा से जघन्यतः एक समय, उत्कृष्टतः आवलिका-का--असंख्यातवां-भाग। परस्थानान्तर की अपेक्षा जघन्यतः एक समय, उत्कृष्टतः असंख्येय काल।

२०५. भन्ते! (एक) द्वि-प्रदेशी स्कन्ध के सैज अवस्था......? पृच्छा।

गौतम! स्वस्थानान्तर की अपेक्षा जघन्यतः एक समय, उत्कृष्टतः असंख्येय काल। परस्थानान्तर की अपेक्षा जघन्यतः एक समय, उत्कृष्टतः अनन्त काल।

२०६. (एक द्वि-प्रदेशी स्कन्ध का) निरेज अवस्था का कितने काल का अन्तर होता है?

गौतम! स्वस्थानान्तर की अपेक्षा से जघन्यतः एक समय, उत्कृष्टतः आवलिका-का--असंख्यातवां-भाग। परस्थानान्तर की अपेक्षा जघन्यतः एक समय, उत्कृष्टतः अनंत काल। इसी प्रकार यावत् (एक) अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध वक्तव्य है।

२०७. भन्ते! (अनेक) परमाणु-पुद्गलों का सैज अवस्था का कितने काल का अन्तर होता है?

गौतम! अन्तर नहीं होता।

२०८. (भन्ते!) (अनेक) परमाणु-पुद्गलों की निरेज अवस्था का कितने काल का अन्तर होता है?

गौतम! अन्तर नहीं होता। इसी प्रकार यावत् (अनेक) अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध वक्तव्य हैं।

२०९. भन्ते! इन सैज और निरेज परमाणु-पुद्गलों में कौन-किनसे अल्प? बहुत? तुल्य? या विशेषाधिक हैं?

गौतम! सैज परमाणु-पुद्गल सबसे अल्प हैं, निरेज परमाणु-पुद्गल इनसे असंख्येय-गुणा हैं। इसी प्रकार यावत् असंख्येय-प्रदेशी स्कन्ध वक्तव्य हैं।

२१०. भन्ते! इन सैज और निरेज अनन्त-प्रदेशी स्कन्धों में कौन-किनसे अल्प? बहुत? तुल्य? या विशेषाधिक हैं?

गौतम! निरेज अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध सबसे अल्प हैं, सैज अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध इनसे अनन्त--गुणा हैं।

२११. भन्ते! इन सैज और निरेज परमाणु-पुद्गलों, संख्येय-प्रदेशी स्कन्धों, असंख्येय-प्रदेशी

स्कन्धों और अनन्त-प्रदेशी स्कन्धों में द्रव्य की अपेक्षा, प्रदेश की अपेक्षा, द्रव्य और प्रदेश की अपेक्षा कौन-किनसे अल्प? बहुत? तुल्य? या विशेषाधिक हैं?

गौतम! १. निरेज (अप्रकम्प) अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्य की अपेक्षा सबसे अल्प हैं। २. सैज अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्य की अपेक्षा इनसे अनन्त-गुणा हैं। ३. सैज परमाणु-पुद्गल द्रव्य की अपेक्षा इनसे अनन्त-गुणा हैं। ४. सैज संख्येय-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्य की अपेक्षा इनसे असंख्येय-गुणा हैं। ५. सैज असंख्येय-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्य की अपेक्षा इनसे असंख्येय-गुणा हैं। ६. निरेज परमाणु-पुद्गल द्रव्य की अपेक्षा इनसे असंख्येय-गुणा हैं। ७. निरेज संख्येय-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्य की अपेक्षा इनसे संख्येय-गुणा हैं। ८. निरेज असंख्येय-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्य की अपेक्षा इनसे असंख्येय-गुणा हैं।

इसी प्रकार प्रदेश की अपेक्षा अल्प-बहुत्व की वक्तव्यता। केवल इतना विशेष है—परमाणु-पुद्गल प्रदेश की अपेक्षा वक्तव्य नहीं है। निरेज संख्येय-प्रदेशी स्कन्ध प्रदेश की अपेक्षा इनसे असंख्येय-गुणा हैं। शेष पूर्ववत्।

द्रव्य और प्रदेश की अपेक्षा—१. निरेज अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्य की अपेक्षा सबसे अल्प हैं। २. वे ही प्रदेश की अपेक्षा इनसे अनन्त-गुणा हैं। ३. सैज अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्य की अपेक्षा इनसे अनन्त-गुणा हैं। ४. वे ही प्रदेश की अपेक्षा इनसे अनन्त-गुणा हैं। ५. सैज परमाणु-पुद्गल द्रव्य और अप्रदेश की अपेक्षा इनसे अनन्त-गुणा हैं। ६. सैज संख्येय-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्य की अपेक्षा इनसे असंख्येय-गुणा हैं। ७. वे ही प्रदेश की अपेक्षा इनसे असंख्येय-गुणा है। ८. सैज असंख्येय प्रदेशी स्कन्ध द्रव्य की अपेक्षा इनसे असंख्येय-गुणा हैं। ९. वे ही प्रदेश की अपेक्षा इनसे असंख्येय-गुणा हैं। १०. निरेज परमाणु-पुद्गल द्रव्य और अप्रदेश की अपेक्षा इनसे असंख्येय-गुणा हैं। ११. निरेज संख्येय-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्य की अपेक्षा इनसे असंख्येय-गुणा हैं। १२. वे ही प्रदेश की अपेक्षा इनसे असंख्येय-गुणा हैं। १३. निरेज असंख्येय-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्य की अपेक्षा इनसे असंख्येय-गुणा हैं। १४. वे ही प्रदेश की अपेक्षा इनसे असंख्येय-गुणा हैं।

२१२. भन्ते! (एक) परमाणु-पुद्गल क्या देशतः सैज है? सर्वतः सैज है? या निरेज है?

गौतम! देशतः सैज नहीं है, स्यात् सर्वतः सैज है, स्यात् निरेज है।

२१३. भन्ते! (एक) द्वि-प्रदेशी स्कन्ध .....? पृच्छा।

गौतम! स्यात् देशतः सैज है, स्यात् सर्वतः सैज है, स्यात् निरेज है। इसी प्रकार यावत् (एक) अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध वक्तव्य है।

२१४. भन्ते! (अनेक) परमाणु-पुद्गल क्या देशतः सैज हैं? सर्वतः सैज हैं? या निरेज हैं?

गौतम! देशतः सैज नहीं हैं, सर्वतः सैज भी हैं, निरेज भी हैं।

२१५. भन्ते! (अनेक) द्वि-प्रदेशी स्कन्ध......? पृच्छा।

गौतम! देशतः सैज भी हैं, सर्वतः सैज भी हैं, निरेज भी हैं। इसी प्रकार यावत् (अनेक) अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध वक्तव्य हैं।

२१६. भन्ते! (एक) परमाणु-पुद्गल काल की अपेक्षा सर्वतः सैज कितने समय तक रहता है?

गौतम! काल की अपेक्षा सर्वतः सप्रकम्प जघन्यतः एक समय, उत्कृष्टतः आवलिका-का--असंख्यातवां-भाग।

२१७. (भन्ते!) (एक) परमाणु-पुद्गल काल की अपेक्षा निरेज कितने समय तक रहता है?

गौतम! जघन्यतः एक समय, उत्कृष्टतः असंख्येय काल।

२१८. भन्ते! (एक) द्वि-प्रदेशी स्कन्ध काल की अपेक्षा देशतः सैज कितने समय तक रहता है?

गौतम! जघन्यतः एक समय, उत्कृष्टतः आवलिका-का-असंख्यातवां-भाग।

२१९. (भन्ते!) (एक) द्वि-प्रदेशी स्कन्ध काल की अपेक्षा सर्वतः सैज कितने समय तक रहता है?

गौतम! जघन्यतः एक समय, उत्कृष्टतः आवलिका-का-असंख्यातवां-भाग।

२२०. (भन्ते!) (एक) द्वि-प्रदेशी स्कन्ध काल की अपेक्षा निरेज कितने समय तक रहता है?

गौतम! जघन्यतः एक समय, उत्कृष्टतः असंख्येय काल तक रहता है। इसी प्रकार यावत् (एक) अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध वक्तव्य है।

२२१. भन्ते! (अनेक) परमाणु-पुद्गल काल की अपेक्षा सर्वतः सैज कितने समय तक रहते हैं?

गौतम! सर्वदा (सर्वकाल)।

२२२. (भन्ते!) (अनेक) परमाणु-पुद्गल काल की अपेक्षा निरेज कितने समय तक रहते हैं?

गौतम! सर्वदा।

२२३. भन्ते! (अनेक) द्वि-प्रदेशी स्कन्ध काल की अपेक्षा देशतः सैज कितने समय तक रहते हैं?

गौतम! सर्वदा।

२२४. (भन्ते!) (अनेक) द्वि-प्रदेशी स्कन्ध काल की अपेक्षा सर्वतः सैज कितने समय तक रहते हैं?

गौतम! सर्वदा।

२२५. (भन्ते!) (अनेक) द्वि-प्रदेशी स्कन्ध काल की अपेक्षा निरेज कितने समय तक रहते हैं?

गौतम! सर्वदा। इसी प्रकार यावत् (अनेक) अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध वक्तव्य हैं।

२२६. भन्ते! (एक) परमाणु-पुद्गल की सर्वतः सैज अवस्था में कितने काल का अन्तर होता है?

गौतम! स्वस्थानान्तर की अपेक्षा जघन्यतः एक समय, उत्कृष्टतः असंख्येय काल। परस्थानान्तर की अपेक्षा जघन्यतः एक समय, उत्कृष्टतः असंख्येय काल।

२२७. (भन्ते!) (एक) परमाणु-पुद्गल की निरेज अवस्था में कितने काल का अन्तर होता है?

स्वस्थानान्तर की अपेक्षा जघन्यतः एक समय, उत्कृष्टतः आवलिका-का-असंख्यातवां--भाग। परस्थानान्तर की अपेक्षा जघन्यतः एक समय, उत्कृष्टतः असंख्येय काल।

२२८. भन्ते! (एक) द्वि-प्रदेशी स्कन्ध का देशतः सैज अवस्था में कितने काल का अन्तर होता है?

गौतम! स्वस्थानान्तर की अपेक्षा जघन्यतः एक समय, उत्कृष्टतः असंख्येय काल। परस्थानान्तर की अपेक्षा जघन्यतः एक समय, उत्कृष्टतः अनन्त काल।

२२९. (भन्ते!) (एक) द्वि-प्रदेशी स्कन्ध की सर्वतः सैज अवस्था में कितने काल का अन्तर होता है?

देशतः सैज की भांति वक्तव्य है।

२३०. (भंते!) द्वि-प्रदेशी स्कन्ध की निरेज अवस्था में कितने काल का अन्तर होता है?

स्वस्थानान्तर की अपेक्षा जघन्यतः एक समय, उत्कृष्टतः आवलिका-का-असंख्यातवां--भाग। परस्थानान्तर की अपेक्षा जघन्यतः एक समय, उत्कृष्टतः अनन्त-काल। इसी प्रकार यावत् (एक) अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध वक्तव्य है।

२३१. भन्ते! (अनेक) परमाणु-पुद्गलों की सर्वतः सैज अवस्था में कितने काल का अन्तर होता है?

अन्तर नहीं होता।

२३२. (भन्ते!) (अनेक) परमाणु-पुद्गलों की निरेज अवस्था में कितने काल का अन्तर होता है?

अन्तर नहीं होता।

२३३. भन्ते! (अनेक) द्वि-प्रदेशी स्कन्धों की देशतः सैज अवस्था में कितने काल का अन्तर होता है?

अन्तर नहीं होता।

२३४. (भन्ते!) (अनेक) द्वि-प्रदेशी स्कन्धों की सर्वतः सैज अवस्था में कितने काल का अन्तर होता है?

अन्तर नहीं होता।

२३५. (भन्ते!) (अनेक) द्वि-प्रदेशी स्कन्धों की निरेज अवस्था में कितने काल का अन्तर होता है?

अन्तर नहीं होता। इसी प्रकार यावत् (अनेक) अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध वक्तव्य हैं।

२३६. भन्ते! इन सर्वतः सैज और निरेज परमाणु-पुद्गलों में कौन-किनसे अल्प? बहुत? तुल्य? या विशेषाधिक हैं?

गौतम! सर्वतः सैज परमाणु-पुद्गल सबसे अल्प हैं, निरेज परमाणु-पुद्गल इनसे असंख्येय--गुणा हैं।

२३७. भन्ते! इन देशतः सैज, सर्वतः सैज और निरेज द्वि-प्रदेशी स्कन्धों में कौन-किनसे अल्प? बहुत? तुल्य? या विशेषाधिक हैं?

गौतम! सर्वतः सैज द्वि-प्रदेशी स्कन्ध सबसे अल्प हैं, देशतः सैज द्वि-प्रदेशी स्कन्ध इनसे असंख्येय-गुणा हैं, निरेज द्वि-प्रदेशी स्कन्ध इनसे असंख्येय-गुणा हैं। इसी प्रकार यावत् असंख्येय-प्रदेशी स्कन्धों का अल्प-बहुत्व वक्तव्य है।

२३८. भन्ते! इन देशतः सैज, सर्वतः सैज और निरेज अनन्त-प्रदेशी स्कन्धों में कौन-किनसे अल्प? बहुत? तुल्य? या विशेषाधिक हैं?

गौतम! सर्वतः सैज अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध सबसे अल्प हैं, निरेज अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध इनसे अनन्त-गुणा हैं, देशतः सैज अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध इनसे अनन्त-गुणा हैं।

२३९. भन्ते! देशतः सैज, सर्वतः सैज और निरेज परमाणु-पुद्गलों, संख्येय-प्रदेशी, असंख्येय-प्रदेशी और अनन्त-प्रदेशी स्कन्धों में द्रव्य की अपेक्षा, प्रदेश की अपेक्षा, द्रव्य और प्रदेश की अपेक्षा कौन-किनसे अल्प? बहुत? तुल्य? या विशेषाधिक हैं?

गौतम! १. सर्वतः सैज अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्य की अपेक्षा सबसे अल्प हैं। २. निरेज अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्य की अपेक्षा इनसे अनन्त-गुणा हैं। ३. देशतः सैज अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्य की अपेक्षा इनसे अनन्त-गुणा हैं। ४. सर्वतः सैज असंख्येय--प्रदेशी स्कन्ध द्रव्य की अपेक्षा इनसे अनन्त-गुणा हैं। ५. सर्वतः सैज संख्येय-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्य की अपेक्षा इनसे असंख्येय-गुणा हैं। ६. सर्वतः सैज परमाणु-पुद्गल द्रव्य की अपेक्षा इनसे असंख्येय-गुणा हैं। ७. देशतः सैज संख्येय-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्य की अपेक्षा इनसे असंख्येय-गुणा हैं। ८. देशतः सैज असंख्येय-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्य की अपेक्षा इनसे असंख्येय-गुणा हैं। ९. निरेज परमाणु-पुद्गल द्रव्य की अपेक्षा इनसे असंख्येय-गुणा हैं। १०. निरेज संख्येय-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्य की अपेक्षा इनसे संख्येय-गुणा हैं। ११. निरेज असंख्येय-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्य की अपेक्षा इनसे असंख्येय-गुणा हैं।

प्रदेश की अपेक्षा—अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध सबसे अल्प हैं। इसी प्रकार प्रदेश की अपेक्षा भी पूर्ववत् वक्तव्यता, केवल इतना विशेष है—परमाणु-पुद्गल प्रदेश की अपेक्षा वक्तव्य नहीं है। निरेज संख्येय-प्रदेशी स्कन्ध प्रदेश की अपेक्षा असंख्येय-गुणा हैं। शेष पूर्ववत्।

द्रव्य और प्रदेश की अपेक्षा—१. सर्वतः सैज अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्य की अपेक्षा सबसे अल्प हैं। २. वे ही प्रदेश की अपेक्षा इनसे अनन्त-गुणा हैं। ३. निरेज अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्य की अपेक्षा इनसे अनन्त-गुणा हैं। ४. वे ही प्रदेश की अपेक्षा इनसे अनन्त-गुणा हैं। ५. देशतः सैज अनन्त-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्य की अपेक्षा इनसे अनन्त-गुणा हैं। ६. वे ही प्रदेश

की अपेक्षा इनसे अनन्त-गणा हैं। ७. सर्वतः सैज असंख्येय-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्य की अपेक्षा इनसे अनन्त-गुणा हैं। ८. वे ही प्रदेश की अपेक्षा इनसे असंख्येय-गुणा हैं। ९. सर्वतः सैज संख्येय-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्य की अपेक्षा इनसे असंख्येय-गुणा हैं। १०. वे ही प्रदेश की अपेक्षा इनसे असंख्येय-गुणा हैं। ११. सर्वतः सैज परमाणु-पुद्गल द्रव्य और अप्रदेश की अपेक्षा इनसे असंख्येय-गुणा हैं। १२. देशतः सैज संख्येय-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्य की अपेक्षा इनसे असंख्येय-गुणा हैं। १३. वे ही प्रदेश की अपेक्षा इनसे असंख्येय-गुणा हैं। १४. देशतः सैज असंख्येय-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्य की अपेक्षा इनसे असंखयेय-गुणा हैं। १५. वे ही प्रदेश की अपेक्षा इनसे असंख्येय-गुणा हैं। १६. निरेज परमाणु-पुद्गल द्रव्य और अप्रदेश की अपेक्षा इनसे असंख्येय-गुणा हैं। १७. निरेज संख्येय-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्य की अपेक्षा इनसे संख्येय-गुणा हैं। १८. वे ही प्रदेश की अपेक्षा इनसे संख्येय-गुणा हैं। १९. निरेज असंख्येय-प्रदेशी स्कन्ध द्रव्य की अपेक्षा इनसे असंख्येय-गुणा हैं। २०. वे ही प्रदेश की अपेक्षा इनसे असंख्येय-गुणा हैं।

मध्य-प्रदेश-पद

२४०. भन्ते! धर्मास्तिकाय के मध्य-प्रदेश कितने प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! धर्मास्तिकाय के मध्य-प्रदेश आठ प्रज्ञप्त हैं।

२४१. भन्ते! अधर्मास्तिकाय के मध्य-प्रदेश कितने प्रज्ञप्त हैं?

अधर्मास्तिकाय के मध्य-प्रदेश आठ प्रज्ञप्त हैं।

२४२. भन्ते! आकाशास्तिकाय के मध्य-प्रदेश कितने प्रज्ञप्त हैं?

आकाशास्तिकाय के मध्य-प्रदेश आठ प्रज्ञप्त है।

२४३. भन्ते! जीवास्तिकाय के मध्य-प्रदेश कितने प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! जीवास्तिकाय के मध्य-प्रदेश आठ प्रज्ञप्त हैं।

२४४. भन्ते! जीवास्तिकाय के ये आठ मध्य-प्रदेश कितने आकाश-प्रदेशों का अवगाहन करते हैं?

गौतम! जघन्यतः एक अथवा दो अथवा तीन अथवा चार अथवा पांच अथवा छह आकाश-प्रदेशों का अवगाहन करते हैं, उत्कृष्टतः आठ आकाश-प्रदेशों का अवगाहन करते हैं, सात आकाश-प्रदेशों का अवगाहन नहीं करते।

२४५. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

पांचवां उद्देशक

पर्यव-पद

२४६. भन्ते! पर्यव कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! पर्यव दो प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—जीव-पर्यव और अजीव-पर्यव। पर्यव-पद **पण्णवणा** का (पांचवां पद) निरवशेष वक्तव्य है।

काल-पद

२४७. भन्ते! क्या (एक) आवलिका संख्येय समय वाली होती है? असंख्येय समय वाली होती है? अनन्त समय वाली होती है?

गौतम! संख्येय समय वाली नहीं होती, असंख्येय समय वाली होती है, अनन्त समय वाली नहीं होती।

२४८. भन्ते! क्या (एक) आनापान संख्येय समय वाला होता है?

पूर्ववत्।

२४९. भन्ते! क्या (एक) स्तोक संख्येय समय वाला होता है?

पूर्ववत् (भ. २५/२४७) की भांति। इसी प्रकार प्रकार (एक) लव और (एक) मुहूर्त्त भी वक्तव्य हैं। इसी प्रकार (एक) अहोरात्र—एक दिन-रात वक्तव्य है। इसी प्रकार एक पक्ष, मास, ऋतु, अयन, सम्वत्सर, युग, सौ-वर्ष, हजार-वर्ष, लाख-वर्ष, पूर्वांग, पूर्व, त्रुटितांग, त्रुटित, अटटांग, अटट, अववांग, अवव, हूहूकांग, हूहूक, उत्पलांग, उत्पल, पद्मांग, पद्म, नलिनांग, नलिन, अर्थनिकुरांग, अर्थनिकुर, अयुतांग, अयुत, नयुतांग, नयुत, प्रयुतांग, प्रयुत, चूलिकांग, चूलिका, शीर्षप्रहेलिकांग, शीर्षप्रहेलिका, पल्योपम, सागरोपम, अवसर्पिणी वक्तव्य है। इसी प्रकार (एक) उत्सर्पिणी भी वक्तव्य है।

२५०. भन्ते! क्या (एक) पुद्गल-परिवर्त संख्येय समय वाला होता हैं?.....पृच्छा।

गौतम! संख्येय समय वाला नहीं होता, असंख्येय समय वाला नहीं होता, अनन्त समय वाला होता है। इसी प्रकार अतीत-काल, अनागत-काल और सर्व-काल वक्तव्य है।

२५१. भन्ते! क्या (अनेक) आवलिकाएं संख्येय समय वाली होत्ती हैं.....? पृच्छा।

गौतम! संख्येय समय वाली नहीं होतीं, स्यात् असंख्येय समय वाली होती हैं, स्यात् अनन्त समय वाली होती हैं।

२५२. भन्ते! क्या (अनेक) आनापान संख्येय समय वाले होते हैं?

पूर्ववत् (भ. २५/२५१ की भांति)।

२५३. भन्ते! क्या (अनेक) स्तोक संख्येय समय वाले होते हैं.....?

पूर्ववत् वक्तव्यता हैं (भ. २५/२५१)। इसी प्रकार यावत् (अनेक) अवसर्पिणियां (तथा उत्सर्पिणियां) वक्तव्य हैं।

२५४. भन्ते! क्या (अनेक) पुद्गल-परिवर्त संख्येय समय वाले होते हैं?.....पृच्छा।

गौतम! संख्येय समय वाले नहीं होते, असंख्येय समय वाले नहीं होते, अनन्त समय वाले होते हैं।

२५५. भन्ते! क्या (एक) आनापान संख्येय आवलिका वाला होता है....? पृच्छा।

गौतम! संख्येय आवलिका वाला होता है, असंख्येय आवलिका वाला नहीं होता, अनन्त

आवलिका वाला नहीं होता। इसी प्रकार (एक) स्तोक भी। इसी प्रकार यावत् (एक) शीर्षप्रहेलिका वक्तव्य है।

२५६. भन्ते! क्या (एक) पल्योपम संख्येय आवलिका वाला होता है....? पृच्छा।

गौतम! संख्येय आवलिका वाला नहीं होता, असंख्येय आवलिका वाला होता है, अनन्त आवलिका वाला नहीं होता। इसी प्रकार सागरोपम की वक्तव्य है। इसी प्रकार अवसर्पिणी और उत्सर्पिणी भी वक्तव्य हैं।

२५७. (भन्ते!) क्या (एक) पुद्गल-परिवर्त......? पृच्छा।

गौतम! संख्येय आवलिका वाला नहीं होता, असंख्येय आवलिका वाला नहीं होता, अनन्त आवलिका वाला होता है। इसी प्रकार यावत् सर्वकाल वक्तव्य है।

२५८. भन्ते! क्या (अनेक) आनापान संख्येय आवलिका वाले होते हैं.....? पृच्छा।

गौतम! स्यात् संख्येय आवलिका वाले होते हैं, स्यात् असंख्येय आवलिका वाले होते हैं, स्यात् अनन्त आवलिका वाले होते हैं। इसी प्रकार यावत् शीर्षप्रहेलिका वक्तव्य है।

२५९. (अनेक) पल्योपम ....? पृच्छा

गौतम! संख्येय आवलिका वाले नहीं होते, स्यात् असंख्येय आवलिका वाले होते हैं, स्यात् अनन्त आवलिका वाले होते हैं। इसी प्रकार यावत् (अनेक) उत्सर्पिणियां वक्तव्य हैं।

२६०. (अनेक) पुद्गल-परिवर्त...................? पृच्छा।

गौतम! संख्येय आवलिका वाले नहीं होते, असंख्येय आवलिका वाले नहीं होते, अनन्त आवलिका वाले होते हैं।

२६१. भन्ते! क्या (एक) स्तोक संख्येय आनापान वाले होते हैं? असंख्येय आनापान वाले होते हैं?....जैसे आवलिका की वक्तव्यता (भ. २५/२५८) वैसे ही आनापान की भी निरवशेष वक्तव्यता। इसी प्रकार इस गमक के द्वारा यावत् शीर्षप्रहेलिका वक्तव्य है।

२६२. भन्ते! क्या (एक) सागरोपम असंख्येय पल्योपम वाला होता है?.....पृच्छा।

गौतम! संख्येय पल्योपम वाला होता है, असंख्येय पल्योपम वाला नहीं होता, अनन्त पल्योपम वाला नहीं होता। इसी प्रकार (एक) अवसर्पिणी और (एक) उत्सर्पिणी वक्तव्य हैं।

२६३. (भन्ते!) (एक) पुद्गल-परिवर्त.............। पृच्छा।

गौतम! संख्येय पल्योपम वाला नहीं होता, असंख्येय पल्योपम वाला नहीं होता, अनन्त पल्योपम वाला होता है। इसी प्रकार यावत् सर्व-काल वक्तव्य है।

२६४. भन्ते! क्या (अनेक) सागरोपम संख्येय पल्योपम वाले होते हैं?.......पृच्छा।

गौतम! स्यात् संख्येय पल्योपम वाल होते हैं, स्यात् असंख्येय पल्योपम वाले होते हैं, स्यात्

अनन्त पल्योपम वाले होते हैं। इसी प्रकार यावत् (अनेक) अवसर्पिणियां और (अनेक) उत्सर्पिणीयां भी वक्तव्य हैं।

२६५. (अनेक) पुद्गल-परिवर्त.............? पृच्छा।

गौतम! संख्येय पल्योपम वाले नहीं होते, असंख्येय पल्योपम वाले नहीं होते, अनन्त पल्योपम वाले होते हैं।

२६६. भन्ते! क्या (एक) अवसर्पिणी संख्येय सागरोपम वाली होती है? जैसी पल्योपम की वक्तव्यता है वैसी सागरोपम की वक्तव्यता।

२६७. भन्ते! क्या (एक) पुद्गल-परिवर्त (परावर्त) संख्येय अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी वाला होता है.....? पृच्छा।

गौतम! संख्येय अवसर्पिणी-उत्सर्पिणियों वाला नहीं होता, असंख्येय अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी वाला नहीं होता, अनन्त उवसर्पिणी-उत्सर्पिणियों वाला होता है। इसी प्रकार यावत् सर्व-काल वक्तव्य है।

२६८. भन्ते! क्या (अनेक) पुद्गल-परिवर्त संख्येय अवसर्पिणी-उत्सर्पिणियों वाले होते हैं.......? पृच्छा।

गौतम! संख्येय अवसर्पिणी-उत्सर्पिणियों वाले नहीं होते, असंख्येय अवसर्पिणी-उत्सर्पिणियों नहीं होते, अनन्त अवसर्पिणी-उत्सर्पिणियों वाले होते हैं।

२६९. भन्ते! क्या अतीत-काल में संख्येय पुद्गल-परिवर्त होते हैं....? पृच्छा।

गौतम! संख्येय पुद्गल-परिवर्त नहीं होते, असंख्येय पुद्गल-परिवर्त नहीं होते, अनन्त पुद्गल-परिवर्त होते हैं। इसी प्रकार अनागत-काल भी। इसी प्रकार सर्व-काल की वक्तव्य है।

२७०. भन्ते! क्या अनागत-काल में संख्येय अतीतकाल होते हैं? असंख्येय अतीतकाल होते हैं? अनन्त अतीतकाल होते हैं?

गौतम! संख्येय अतीत-काल नहीं होते, असंख्येय अतीत-काल नहीं होते, अनन्त अतीत-काल नहीं होते। अनागत-काल अतीत-काल से एक समय अधिक है, अतीत-काल अनागतकाल से एक समय कम है।

२७१. भन्ते! क्या सर्व-काल में संख्येय अतीत-काल होते हैं?........पृच्छा।

गौतम! संख्येय अतीत-काल नहीं होते, असंख्येय अतीत-काल नहीं होते, अनन्त अतीत-काल नहीं होते। सर्व-काल अतीत-काल से सातिरेक द्विगुण है, अतीत-काल सर्व-काल से कुछ कम अर्ध है।

२७२. भन्ते! क्या सर्व-काल के संख्येय अनागत-काल होते हैं?.....पृच्छा।

गौतम! संख्येय अनागत-काल नहीं होते, असंख्येय अनागत-काल नहीं होते, अनन्त अनागत-काल नहीं होते। सर्व-काल अनागत-काल से कुछ कम द्विगुण है। अनागत-काल सर्व-काल से सातिरेक अर्ध है।

२७३. भन्ते! निगोद कितन प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! निगोद दो प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—निगोदक (निगोद-शरीर) और निगोदक जीव (निगोद-जीव)।

२७४. भन्ते! निगोद कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! निगोद दो प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—सूक्ष्म-निगोद और बादर-निगोद। इसी प्रकार (**जीवाजीवाभिगम** ५/३९-६० की भांति) निगोद की निरवशेष वक्तव्यता।

नाम-पद

२७५. भन्ते! नाम (भाव) कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! नाम (भाव) छह प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—औदयिक यावत् सान्निपातिक।

२७६. वह औदयिक नाम क्या है?

औदयिक नाम दो प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—उदय और उदय-निष्पन्न। इसी प्रकार (**भगवती** के) सत्रहवें शतक के प्रथम उद्देशक (सू. १७) की भांति भाव की वक्तव्यता, केवल इतना विशेष है—यह नाम का नानात्व है, शेष पूर्ववत्। यावत् सान्निपातिक की वक्तव्यता।

२७७. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

छट्ठा उद्देशक

संग्रहणी-गाथा

छट्ठे उद्देशक में निर्ग्रन्थों के छत्तीस द्वार हैं—

१. प्रज्ञापना २. वेद ३. राग ४. कल्प ५. चारित्र ६. प्रतिषेवणा ७. ज्ञान ८. तीर्थ ९. लिंग १०. शरीर ११. क्षेत्र १२. काल १३. गति १४. संयम १५ निकास। १६. योग १७. उपयोग १८. कषाय १९. लेश्या २०. परिणाम २१. बन्ध २२. वेद २३. कर्म-उदीरणा २४. उपसम्पत्-प्रहाण २५. संज्ञा २६. आहार। २७. भव २८. आकर्ष २९. काल ३०. अन्तर ३१. समुद्घात ३२. क्षेत्र ३३. स्पर्शना ३४. भाव ३५. परिमाण ३६. अल्पबहुत्व।

प्रज्ञापना-पद

२७८. राजगृह नगर में यावत् इस प्रकार बोले—(भ. १/१०) भन्ते! निर्ग्रन्थ कितने प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! निर्ग्रन्थ पांच प्रज्ञप्त हैं, जैसे—पुलाक, बकुश, कुशील, निर्ग्रन्थ और स्नातक।

२७९. भन्ते! पुलाक कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! पुलाक पांच प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—ज्ञान-पुलाक, दर्शन-पुलाक, चारित्र-पुलाक, लिंग-पुलाक, पांचवां—यथा-सूक्ष्म-पुलाक।

२८०. भन्ते! बकुश कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! बकुश पांच प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—आभोग-बकुश, अनाभोग-बकुश, संवृत-बकुश, असंवृत-बकुश, पांचवां—यथा-सूक्ष्म-बकुश।

२८१. भन्ते! कुशील कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! कुशील दो प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—प्रतिषेवणा-कुशील और कषाय-कुशील।

२८२. भन्ते! प्रतिषेवणा-कुशील कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! प्रतिषेवणा-कुशील पांच प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—ज्ञान-प्रतिषेवणा-कुशील, दर्शन-प्रतिषेवणा-कुशील, चारित्र-प्रतिषेवणा-कुशील, लिंग-प्रतिषेवणा-कुशील, पांचवां—यथा-सूक्ष्म-प्रतिषेवणा-कुशील।

२८३. भन्ते! कषाय-कुशील कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! कषाय-कुशील पांच प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—ज्ञान-कषाय-कुशील, दर्शन-कषाय-कुशील, चरित्र-कषाय-कुशील, लिंग-कषाय-कुशील, पांचवां—यथा-सूक्ष्म-कषाय-कुशील।

२८४. भन्ते! निर्ग्रन्थ कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! पांच प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—प्रथम-समय-निर्ग्रन्थ, अप्रथम-समय-निर्ग्रन्थ, चरम-समय-निर्ग्रन्थ, अचरम-समय-निर्ग्रन्थ, पांचवां—यथा-सूक्ष्म-निर्ग्रन्थ।

२८५. भन्ते! स्नातक कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! स्नातक पांच प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—अच्छवि—अव्यथक; अशबल—एकान्त विशुद्ध चारित्र वाले; अकर्माणु—घातिकर्मों से मुक्त; संशुद्ध-ज्ञान-दर्शन-धर—केवल-ज्ञान-दर्शन के धारक अर्हत्, जिन, केवली; अपरिस्रावी—अबंधक, निरुद्ध-योग वाला।

वेद-पद

२८६. भन्ते! क्या पुलाक-निर्ग्रन्थ सवेदक होता है? अवेदक होता है?

गौतम! सवेदक होता है, अवेदक नहीं होता।

२८७. यदि सवेदक होता है तो क्या वह स्त्री-वेदक होता है? पुरुष-वेदक होता है? पुरुष-नपुंसक वेदक होता है?

गौतम! स्त्री-वेदक नहीं होता, पुरुष-वेदक होता है अथवा पुरुष-नपुंसक-वेदक भी होता है।

२८८. भन्ते! क्या बकुश-निर्ग्रन्थ सवेदक होता है? अवेदक होता है?

गौतम! सवेदक होता है, अवेदक नहीं होता।

२८९. यदि सवेदक होता है तो क्या वह स्त्री-वेदक होता है? पुरुष-वेदक होता है? पुरुष-नपुंसक-वेदक होता है?

गौतम! स्त्री-वेदक होता है, अथवा पुरुष-वेदक होता है, अथवा पुरुष-नपुंसक-वेदक होता है। इसी प्रकार प्रतिषेवणा-कुशील-निर्ग्रन्थ भी वक्तव्य है।

२९०. भन्ते! क्या कषाय-कुशील-सवेदक होता है?........पृच्छा।

गौतम! सवेदक होता है अथवा अवेदक होता है।

२९१. यदि अवेदक होता है तो क्या उपशान्त-वेदक होता है? क्षीण-वेदक होता है?

गौतम! उपशान्त-वेदक होता है अथवा क्षीण-वेदक होता है।

२९२. सवेदक होता है तो क्या स्त्री-वेदक होता है?.....पृच्छा।

गौतम! बकुश-निर्ग्रन्थ की भांति तीनों ही वेद होते हैं (भ. २५/२८९)।

२९३. भन्ते! क्या निर्ग्रन्थ-निर्ग्रन्थ सवेदक होता है?....पृच्छा।

गौतम! सवेदक नहीं होता, अवेदक होता है।

२९४. यदि होता है तो क्या उपशान्त-वेदक होता है?.....पृच्छा।

गौतम! उपशान्त-वेदक होता है अथवा क्षीण-वेदक होता है।

२९५. भन्ते! क्या स्नातक-निर्ग्रन्थ सवेदक होता है? जैसे निर्ग्रन्थ की वैसे स्नातक की भी वक्तव्यता, केवल इतना विशेष है—स्नातक उपशान्त-वेदक नहीं होता, क्षीण-वेदक होता है।

राग-पद

२९६. भन्ते! क्या पुलाक सराग होता है? वीतराग होता है?

गौतम! सराग होता है, वीतराग नहीं होता। इसी प्रकार यावत् कषाय-कुशील की वक्तव्यता।

२९७. भन्ते! क्या निर्ग्रन्थ सराग होता है?............पृच्छा।

गौतम! सराग नहीं होता, वीतराग होता है।

२९८. यदि वीतराग होता है तो क्या उपशान्त-कषाय-वीतराग होता है? क्षीण-कषाय--वीतराग होता है?

गौतम! उपशान्त-कषाय-वीतराग होता है अथवा क्षीण-कषाय-वतीराग होता है। इसी प्रकार स्नातक की भी वक्तव्यता, केवल इतना विशेष है—स्नातक उपशान्त-कषाय-वीतराग नहीं होता, क्षीण-कषाय-वीतराग होता है।

कल्प-पद

२९९. भन्ते! क्या पुलाक-निर्ग्रन्थ स्थित-कल्प होता है? अस्थित-कल्प होता है?

गौतम! स्थित-कल्प भी होता है अथवा अस्थित-कल्प भी होता है। इसी प्रकार यावत् स्नातक की वक्तव्यता।

३००. भन्ते! क्या पुलाक-निर्ग्रन्थ जिन-कल्प होता है? स्थविर-कल्प होता है? कल्पातीत होता है?

गौतम! जिन-कल्प नहीं होता, स्थविर-कल्प होता है, कल्पातीत नहीं होता।

३०१. बकुश................? पृच्छा (भ. २५/३००)।

गौतम! जिन-कल्प होता है अथवा स्थविर-कल्प होता है, कल्पातीत नहीं होता। इसी प्रकार प्रतिषेवणा-कुशील की भी वक्तव्यता।

३०२. कषाय-कुशील ....? पृच्छा (भ. २५/३००)।

गौतम! जिन-कल्प होता है अथवा स्थविर-कल्प होता है अथवा कल्पातीत होता है।

३०३. निर्ग्रन्थ.........? पृच्छा (भ. २५/३००)।

गौतम! जिन-कल्प नहीं होता, स्थविर-कल्प नहीं होता, कल्पातीत होता है। इसी प्रकार स्नातक की भी वक्तव्यता।

चारित्र-पद

३०४. भन्ते! क्या पुलाक-निर्ग्रन्थ के सामायिक-संयम होता है? छेदोपस्थापनीय-संयम होता है? परिहारविशुद्धिक-संयम होता है? सूक्ष्मसंपराय-संयम होता है? यथाख्यात-संयम होता है?

गौतम! सामायिक-संयम होता है अथवा छेदोपस्थापनीय-संयम होता है, परिहारविशुद्धिक--संयम नहीं होता, सूक्ष्मसंपराय-संयम नहीं होता, यथाख्यात-संयम नहीं होता। इसी प्रकार बकुश की भी वक्तव्यता। इस प्रकार प्रतिषेवणा-कुशील की भी वक्तव्यता।

३०५. कषाय-कुशील ....? पृच्छा (भ. २५/३०४)।

गौतम! सामायिक-संयम होता है यावत् सूक्ष्मसंपराय-संयम भी होता है (भ. २५/३०४), यथाख्यात-संयम नहीं होता।

३०६. निर्ग्रन्थ ....? पृच्छा (भ. २५/३०४)।

गौतम! सामायिक-संयम नहीं होता यावत् सूक्ष्मसंपराय-संयम नहीं होता, यथाख्यात-संयम होता है। इसी प्रकार स्नातक की भी वक्तव्यता।

प्रतिषेवणा-पद

३०७. भंते! क्या पुलाक प्रतिषेवक (दोष लगाने वाला) होता है? अप्रतिषेवक (दोष नहीं लगाने वाला) होता है?

गौतम! प्रतिषेवक होता है, अप्रतिषेवक नहीं होता।

३०८. यदि पुलाक प्रतिषेवक होता है तो क्या मूल-गुण-प्रतिषेवक होता है? उत्तर-गुण--प्रतिषेवक होता है?

गौतम! मूल-गुण-प्रतिषेवक भी होता है अथवा उत्तर-गुण-प्रतिषेवक भी होता है। मूल-गुण--प्रतिषेवक होता हुआ वह पांच आश्रवों में से किसी एक आश्रव की प्रतिषेवणा करता है, उत्तर-गुण-प्रतिषेवक होता हुआ वह दस प्रकार के प्रत्याख्यान में से किसी एक की प्रतिषेवणा करता है।

३०९. बकुश...........? पृच्छा (भ. २५/३०६)।

गौतम! बकुश प्रतिषेवक होता है, अप्रतिषेवक नहीं होता।

३१०. यदि प्रतिषेवक होता है तो क्या मूल-गुण-प्रतिषेवक होता है? उत्तर-गुण-प्रतिषेवक होता है?

गौतम! मूल-गुण-प्रतिषेवक नहीं होता, उत्तर-गुण-प्रतिषेवक होता है। उत्तर-गुण-प्रतिसेवक होता हुआ दस प्रकार के प्रत्याख्यान में से किसी एक की प्रतिषेवणा करता है। प्रतिषेवणा--पुलाक की भांति वक्तव्यता।

३११. कषाय-कुशील..........? पृच्छा (भ. २५/३०७)।

गौतम! प्रतिषेवक नहीं होता, अप्रतिषेवक होता है। इसी प्रकार निर्ग्रन्थ की भी वक्तव्यता। इसी प्रकार स्नातक की भी वक्तव्यता।

ज्ञान-पद

३१२. भन्ते! पुलाक कितने ज्ञानों में होता है?

गौतम! दो में होता है अथवा तीन में होता है। यदि दो में होता है तो आभिनिबोधिक-ज्ञान (मति-ज्ञान) और श्रुत-ज्ञान में होता है। यदि तीन ज्ञान में होता है तो आभिनिबोधिक-ज्ञान, श्रुत-ज्ञान और अवधि-ज्ञान में होता है। इसी प्रकार बकुश की भी वक्तव्यता। इसी प्रकार प्रतिषेवणा-कुशील की भी वक्तव्यता।

३१३. कषायकुशील ....? पृच्छा (भ. २५/३१२)।

गौतम! दो ज्ञान में होता है अथवा तीन ज्ञान में होता है अथवा चार ज्ञान में होता हैं। यदि दो ज्ञान में होता है तो आभिनिबोधिक-ज्ञान और श्रुत-ज्ञान में होता है। यदि तीन ज्ञान में होता है तो आभिनिबोधिक-ज्ञान, श्रुत-ज्ञान और अवधि-ज्ञान में होता है अथवा यदि तीन ज्ञान में होता है तो अभिनिबोधिक-ज्ञान, श्रुत-ज्ञान और मनःपर्यव-ज्ञान में होता है। यदि चार ज्ञान में होता है तो आभिनिबोधिक-ज्ञान, श्रुत-ज्ञान, अवधि-ज्ञान और मनःपर्यव-ज्ञान में होता है। इसी प्रकार निर्ग्रन्थ की भी वक्तव्यता।

३१४. स्नातक ....? पृच्छा (भ. २५/३१२)।

गौतम! स्नातक एक केवल-ज्ञान में होता है।

३१५. भन्ते! पुलाक कितने श्रुत का अध्येता होता है?

गौतम! जघन्यतः नवम पूर्व की तीसरी आचार-वस्तु, उत्कृष्टतः नव-पूर्वों का अध्येता होता है।

३१६. बकुश.........? पृच्छा (भ. २५/३१५)।

गौतम! जघन्यतः आठ प्रवचन-माताओं का, उत्कृष्टतः दस पूर्वों का अध्येता होता है। इसी प्रकार प्रतिषेवणा-कुशील-निर्ग्रन्थ की भी वक्तव्यता।

३१७. कषायकुशील ....? पृच्छा (भ. २५/३१५)।

गौतम! जघन्यतः आठ प्रवचन-माता, उत्कृष्टतः चौदह पूर्वों का अध्येता होता है। इसी प्रकार निर्ग्रन्थ की भी वक्तव्यता।

३१८. स्नातक..............? पृच्छा (भ. २५/३१५)।

गौतम! स्नातक श्रुतव्यतिरिक्त (श्रुतातीत) होता है।

तीर्थ-पद

३१९. भन्ते! क्या पुलाक तीर्थ में होता है? अतीर्थ में होता है?

गौतम! तीर्थ में होता है, अतीर्थ में नहीं होता। इसी प्रकार बकुश की भी वक्तव्यता। इसी

प्रकार प्रतिषेवणा-कुशील की भी वक्तव्यता।

३२०. कषायकुशील ....? पृच्छा (**भ.** २५/३१९)।

गौतम! तीर्थ में होता है अथवा अतीर्थ में होता है।

३२१. यदि अतीर्थ में होता है तो क्या वह तीर्थंकर होता है? अथवा प्रत्येक-बुद्ध होता है?

गौतम! तीर्थंकर भी होता है अथवा प्रत्येक-बुद्ध भी होता है। इसी प्रकार निर्ग्रन्थ की भी वक्तव्यता। इसी प्रकार स्नातक की भी वक्तव्यता।

लिंग-पद

३२२. भन्ते! क्या पुलाक स्वलिंग में होता है? अन्यलिंग में होता है? गृहिलिंग में होता है?

गौतम! द्रव्यलिंग की अपेक्षा स्वलिंग में होता है अथवा अन्यलिंग में होता है अथवा गृहिलिंग में होता है। भावलिंग की अपेक्षा नियमतः स्वलिंग में होता है। इसी प्रकार यावत् स्नातक की वक्तव्यता।

शरीर-पद

३२३. भन्ते! पुलाक कितने शरीरों से संपन्न होता है?

गौतम! औदारिक-तेजस-कर्मक—इन तीनों शरीरों से संपन्न होता है।

३२४. भन्ते! बकुश...........? पृच्छा (**भ.** २५/३२३)।

गौतम! तीन अथवा चार शरीरों से संपन्न होता है। यदि तीन से संपन्न होता है तो औदारिक, तेजस और कर्मक—इन तीन शरीरों से संपन्न होते हैं। यदि वह चार से संपन्न होता है तो औदारिक, वैक्रिय, तेजस् और कर्मक—इन चार शरीरों से संपन्न होता है। इसी प्रकार प्रतिषेवणा-कुशील की भी वक्तव्यता।

३२५. कषाय-कुशील ....? पृच्छा (**भ.** २५/३२३)।

गौतम! तीन अथवा चार अथवा पांच शरीरों से संपन्न होता है। यदि वह तीन से संपन्न होता है तो औदारिक, तैजस और कर्मक—इन तीन शरीरों से संपन्न होता है। यदि वह चार से संपन्न होता है तो औदारिक, वैक्रिय, तैजस और कर्मक—इन चार शरीरों से संपन्न होता है। यदि वह पांच से संपन्न होता है तो औदारिक, वैक्रिय, आहारक, तैजस, कर्मक—इन पांच शरीरों से संपन्न होता है। निर्ग्रन्थ और स्नातक की पुलाक की भांति वक्तव्यता।

३२६. भन्ते! क्या पुलाक कर्मभूमि में उत्पन्न होता है? अकर्मभूमि में उत्पन्न होता है?

गौतम! जन्म और सद्भाव (विद्यमानता) की अपेक्षा कर्मभूमि में उत्पन्न होता है, अकर्मभूमि में उत्पन्न नहीं होता।

३२७. बकुश...............? पृच्छा (**भ.** २५/३२६)।

गौतम! जन्म और सद्भाव की अपेक्षा कर्मभूमि में उत्पन्न होता है, अकर्मभूमि में उत्पन्न नहीं होता।

संहरण की अपेक्षा कर्मभूमि में उत्पन्न होता है अथवा अकर्मभूमि में भी उत्पन्न होता है। इसी प्रकार यावत् स्नातक की वक्तव्यता।

काल-पद

३२८. भन्ते! क्या पुलाक अवसर्पिणि-काल में होता है? उत्सर्पिणी-काल में होता है? नो-अवसर्पिणी-नो-उत्सर्पिणी-काल में भी होता है?

गौतम! अवसर्पिणी-काल में होता है अथवा उत्सर्पिणी-काल में होता है अथवा नो-अवसर्पिणी-नो-उत्सर्पिणी-काल में भी होता है।

३२९. यदि अवसर्पिणि-काल में होता है तो क्या सुषम-सुषमा-काल में होता है? सुषमा-काल में होता है? सुषम-दुष्षमा-काल में होता है? दुःषम-सुषमा-काल में होता है? दुष्षमा-काल में होता है? दुष्षम-दुष्षमा-काल में होता है?

गौतम! जन्म की अपेक्षा सुषम-सुषमा-काल में नहीं होता, सुषमा-काल में नहीं होता, सुषम-दुष्षमा-काल में होता है अथवा दुष्षम-सुषमा-काल में होता है, दुष्षमा-काल में नहीं होता, दुष्षम-दुष्षमा-काल में नहीं होता। सद्भाव की अपेक्षा सुषम-सुषमा-काल में नहीं होता, सुषमा-काल में नहीं होता, सुषम-दुष्षमा-काल में होता है अथवा दुष्षम-सुषमा-काल में होता है अथवा दुष्षमा-काल में होता है, दुष्षम-दुष्षमा-काल में नहीं होता।

३३०. यदि उत्सर्पिणि-काल में होता है तो क्या दुष्षम-दुष्षमा-काल में होता है? दुष्षमा-काल में होता है? दुष्षम-सुषमा-काल में होता है? सुषम-दुष्षमा-काल में होता है? सुषमा-काल में होता है? सुषम-सुषमा-काल में होता है?

गौतम! यदि उत्सर्पिणी-काल में होता है तो जन्म की अपेक्षा दुष्षम-दुष्षमा-काल में नहीं होता, दुष्षमा-काल में होता है अथवा दुष्षम-सुषमा-काल में होता है अथवा सुषम-दुष्षमा-काल में होता है, सुषमा-काल में नहीं होता और सुषम-सुषमा-काल में नहीं होता। सद्भाव की अपेक्षा दुष्षम-दुष्षमा-काल में नहीं होता, दुष्षमा-काल में नहीं होता, दुष्षम-सुषमा-काल में होता है अथवा सुषम-दुष्षमा-काल में होता है, सुषमा-काल में नहीं होता, सुषम-सुषमा-काल में नहीं होता।

३३१. यदि नो-अवसर्पिणी-नो-उत्सर्पिणी काल में होता है तो क्या सुषम-सुषमा-सदृश-काल में होता है? सुषमा-सदृश-काल में हेता है? सुषम-दुष्षमा-सदृश-काल में होता है? दुष्षम-सुषमा-सदृश-काल में होता है?

गौतम! जन्म और सद्भाव की अपेक्षा सुषम-सुषमा-सदृश-काल में नहीं होता, सुषमा-सदृश-काल में नहीं होता, सुषम-दुष्षमा-सदृश-काल में नहीं होता, दुष्षम-सुषमा-सदृश-काल में होता है।

३३२. बकुश.............? पृच्छा (भ. २५/३२८)।

गौतम! अवसर्पिणी-काल में होता है अथवा उत्सर्पिणी-काल में होता है अथवा नो-अवसर्पिणी-नो-उत्सर्पिणी-काल में होता है।

३३३. यदि अवसर्पिणी-काल में होता है तो क्या सुषम-सुषमा-काल में होता है?.....पृच्छा (भ. २५/३२९)।

गौतम! जन्म और सद्भाव की अपेक्षा सुषम-सुषमा-काल में नहीं होता, सुषमा-काल में नहीं होता, सुषम-दुष्षमा-काल में होता है अथवा दुष्षम-सुषमा-काल में होता है अथवा दुष्षमा--काल में होता है, दुष्षम-दुष्षमा-काल में नहीं होता। संहरण की अपेक्षा अवसर्पिणी के किसी एक समाकाल अर में हो सकता है।

३३४. यदि उत्सर्पिणी-काल में होता है तो क्या दुष्षम-दुष्षमा-काल में होता है.......? पृच्छा (भ. २५/३३०)।

गौतम! जन्म की अपेक्षा दुष्षम-दुष्षमा-काल में नहीं होता, पुलाक की भांति वक्तव्यता (भ. २५/३३०)। सद्भाव की अपेक्षा दुष्षम-दुष्षमा-काल में नहीं होता, दुष्षमा-काल में नहीं होता। इसी प्रकार सद्भाव की अपेक्षा भी पुलाक की भांति वक्तव्यता यावत् सुषम-सुषमा--काल में नहीं होता (भ. २५/३३०)। संहरण की अपेक्षा उत्सर्पिणी के किसी एक समाकाल अर में हो सकता है।

३३५. यदि नो-अवसर्पिणी-नो-उत्सर्पिणी-काल में होता है....? पृच्छा (भ. २५/३३१)।

गौतम! जन्म और सद्भाव की अपेक्षा सुषम-सुषमा-सदृश-काल में नहीं होता, पुलाक--निर्ग्रन्थ की भांति वक्तव्यता यावत् दुष्षम-सुषमा-सदृश-काल में हो सकता है (भ. २५/३३१)। संहरण की अपेक्षा नो-अवसर्पिणी-नो उत्सर्पिणी-काल के किसी एक समाकाल अर में हो सकता है। बकुश की भांति प्रतिषेवणा-कुशील की भी वक्तव्यता। इसी प्रकार कषाय--कुशील की भी वक्तव्यता। निर्ग्रन्थ और स्नातक की पुलाक की भांति वक्तव्यता। केवल इतना विशेष है—पुलाक की अपेक्षा अभ्यधिक वक्तव्य है—संहरण। शेष पूर्ववत्।

गति-पद

३३६. भन्ते! पुलाक मृत्यु को प्राप्त होने पर किस गति को प्राप्त होता है?

गौतम! देव-गति को प्राप्त होता है।

३३७. देव-गति को प्राप्त होता है तो क्या भवनपति-देवों में उपपन्न होता है? वानमन्तर--देवों में उपपन्न होता है? ज्योतिष-देवों में उपपन्न होता है? वैमानिक-देवों में उपपन्न होता है?

गौतम! भवनपति-देवों में उपपन्न नहीं होता, वानमन्तर-देवों में उपपन्न नहीं होता, ज्योतिष्क--देवों में उपपन्न नहीं होता, वैमानिक-देवों में उपपन्न होता है। वैमानिक में उपपन्न होता है तो वह जघन्यतः सौधर्म-कल्प में, उत्कृष्टतः सहस्रार-कल्प में उपपन्न होता है। इसी प्रकार बकुश की वक्तव्यता, केवल इतना विशेष है—बकुश उत्कृष्टतः अच्युत-कल्प में उपपन्न होता है। प्रतिषेवणा-कुशील की बकुश की भांति वक्तव्यता। कषाय-कुशील पुलाक की भांति वक्तव्यता, केवल इतना विशेष है—कषाय-कुशील उत्कृष्टतः अनुत्तरविमानों में उत्पन्न होता है। इसी प्रकार निर्ग्रन्थ की वक्तव्यता यावत् वैमानिक-देवों में उपपन्न होता है तो अजघन्य--अनुत्कृष्ट रूप अर्थात् केवल अनुत्तरविमानों म उपपन्न होता है।

३३८. भन्ते! स्नातक मृत्यु को प्राप्त होने पर किस गति को प्राप्त होता है?

गौतम! सिद्धि-गति को प्राप्त होता है।

३३९. भन्ते! पुलाक देव के रूप में उपपन्न होता है तो क्या वह इन्द्र के रूप में उपपन्न होता है? सामानिक-देव के रूप में उपपन्न होता है? तावत्रिंशक-देव के रूप में उपपन्न होता है? लोकपाल-देव के रूप में उपपन्न होता है? अहमिन्द्र-देव के रूप में उपपन्न होता है?

गौतम! अविराधना की अपेक्षा इन्द्र के रूप में उपपन्न होता है, सामानिक-देव के रूप में उपपन्न होता है, तावत्रिंशक-देव के रूप में उपपन्न होता है, लोकपाल-देव के रूप में उपपन्न होता है, अहमिन्द्र-देव के रूप में उपपन्न नहीं होता। विराधना की अपेक्षा किसी भी प्रकार के देव के रूप में उपपन्न हो सकता है—भवनपति, वानमन्तर, ज्योतिषिक अथवा वैमानिक। इसी प्रकार बकुश की भी वक्तव्यता। इसी प्रकार प्रतिषेवणा-कुशील की भी वक्तव्यता।

३४०. कषाय-कुशील..........? पृच्छा (भ. २५/३३९)।

गौतम! अविराधना की अपेक्षा इन्द्र के रूप में भी उपपन्न होता है यावत् अहमिन्द्र के रूप में भी उपपन्न होता है। विराधना की अपेक्षा भवनपति आदि किसी भी प्रकार के देव के रूप में उपपन्न होता है।

३४१. निर्ग्रन्थ ....? पृच्छा (भ. २५/३३९)।

गौतम! अविराधना की अपेक्षा इन्द्र के रूप में उपपन्न नहीं होता यावत् लोकपाल के रूप में उपपन्न नहीं होता (भ. २५/३३९)। अहमिन्द्र के रूप में उपपन्न होता है। विराधना की अपेक्षा भवनपति आदि किसी भी प्रकार के देव के रूप में उपपन्न होता है।

३४२. भन्ते! देवलोक में उपपद्यमान पुलाक की कितने काल की स्थिति प्रज्ञप्त है?

गौतम! जघन्यतः पृथक्त्व(दो से नौ)-पल्योपम और उत्कृष्टतः अट्ठारह-सागरोपम की।

३४३. बकुश............? पृच्छा (भ. २५/३४२)।

गौतम! जघन्यतः पृथक्त्व (दो से नौ)-पल्योपम और उत्कृष्टतः बाईस-सागरोपम। इसी प्रकार प्रतिषेवणा-कुशील की भी वक्तव्यता।

३४४. कषाय-कुशील ....? पृच्छा (भ. २५/३४२)।

गौतम! जघन्यतः पृथक्त्व(दो से नौ)-पल्योपम और उत्कृष्टतः तेतीस-सागरोपम।

३४५. निर्ग्रन्थ...........? पृच्छा (भ. २५/३४२)।

गौतम! अजघन्य-अनुत्कृष्ट अर्थात् केवल तैतीस सागरोपम।

संयम-स्थान-पद

३४६. भन्ते! पुलाक के कितने संयम-स्थान प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! असंख्येय संयम-स्थान प्रज्ञप्त हैं। इसी प्रकार यावत् कषाय-कुशील की वक्तव्यता।

३४७. भन्ते! निर्ग्रन्थ के कितने संयम-स्थान प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! अजघन्य-अनुत्कृष्ट—केवल एक संयम-स्थान। इसी प्रकार स्नातक की भी वक्तव्यता।

३४८. भन्ते! इन पुलाक, बकुश, प्रतिषेवणा (कुशील), कषायकुशील, निर्ग्रन्थ और स्नातक के संयम-स्थानों में कौन-किनसे अल्प? बहुत? तुल्य? या विशेषाधिक हैं?

गौतम! इन (छह प्रकार के निर्ग्रन्थों के संयम-स्थानों में) निर्ग्रन्थ और स्नातक का अजघन्य और अनुत्कृष्ट अर्थात् केवल एक संयम-स्थान सबसे अल्प है। पुलाक के संयम-स्थान इससे असंख्येय-गुणा हैं। बकुश के संयम-स्थान इनसे असंख्येय-गुणा हैं। प्रतिसेवणा-कुशील के संयम-स्थान इनसे असंख्येय-गुणा हैं। कषायकुशील-निर्ग्रन्थ के संयम-स्थान इनसे असंख्येय-गुणा हैं।

निकर्ष-पद

३४९. भन्ते! पुलाक के कितने चरित्र-पर्यव प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! अनन्त चरित्र-पर्यव प्रज्ञप्त हैं। इसी प्रकार यावत् स्नातक की वक्तव्यता।

३५०. एक पुलाक भिक्षु सजातीय संयम-स्थानों के संयोजन की अपेक्षा दूसरे पुलाक भिक्षु के चरित्र-पर्यवों से क्या हीन है? तुल्य है? अभ्यधिक है?

गौतम! स्यात् हीन है, स्यात् तुल्य है, स्यात् अभ्यधिक है।

यदि वह हीन होता है, तो उससे अनन्त-भाग-हीन होता है अथवा असंख्येय-भाग-हीन होता है अथवा संख्येय-भाग-हीन होता है अथवा संख्येय-गुणा-हीन होता है अथवा असंख्येय--गुणा-हीन होता है अथवा अनन्त-गुणा-हीन होता है। यदि वह अभ्यधिक होता है, तो उससे अनन्त-भाग-अभ्यधिक होता है अथवा असंख्येय-भाग-अभ्यधिक होता है अथवा संख्येय-भाग-अभ्यधिक होता है अथवा संख्येय-गुणा-अभ्यधिक होता है अथवा असंख्येय--गुणा-अभ्यधिक होता है अथवा अनन्त-गुणा-अभ्यधिक होता है।

३५१. भन्ते! एक पुलाक विजातीय स्थान वाले अन्य बकुश के सन्निकर्ष अर्थात् संयोजन से चारित्र-पर्यवों की दृष्टि से क्या हीन है? तुल्य है? अभ्यधिक है?

गौतम! हीन है, तुल्य नहीं है, अभ्यधिक नहीं है। वह उसका अनन्त-गुणा-हीन है। इसी प्रकार प्रतिषेवणा-कुशील की वक्तव्यता। जैसे पुलाक की पुलाक की अपेक्षा स्वस्थान में षट्स्थान-पतित की वक्तव्यता है (भ. २५/३५०), वैसे ही पुलाक की कषायकुशील के साथ षट्स्थान-पतित की वक्तव्यता है। निर्ग्रन्थ की बकुश की भांति वक्तव्यता (भ. २५/२५१)। इसी प्रकार स्नातक की भी वक्तव्यता।

३५२. भन्ते! एक बकुश भिक्षु विजातीय संयम-स्थानों के संयोजन की अपेक्षा पुलाक भिक्षु के चरित्र-पर्यवों से क्या हीन है? तुल्य है? अभ्यधिक है?

गौतम! हीन नहीं है, तुल्य नहीं है, अभ्यधिक है—अनन्त-गुणा-अभ्यधिक है।

३५३. भन्ते! एक बकुश भिक्षु सजातीय संयम-स्थानों के संयोजन की अपेक्षा दूसरे बकुश के चारित्र-पर्यवों से पृच्छा—क्या हीन है? तुल्य है? अभ्यधिक है?)

गौतम! स्यात् हीन है, स्यात् तुल्य है, स्यात् अभ्यधिक है। यदि वह हीन होता है, तो उससे षट्स्थान-पतित है (भ. २५/३५०)। (यदि वह अभ्यधिक है तो उसी प्रकार षट्स्थान-पतित होता है (भ. २५/३५०)।

३५४. भन्ते! एक बकुश भिक्षु विजातीय संयम-स्थानों के संयोजन की अपेक्षा प्रतिषेवणा--कुशील के चारित्र-पर्यवों से क्या हीन है?

(गौतम!) षट्स्थान-पतित होता है। इसी प्रकार कषाय-कुशील की भी वक्तव्यता।

३५५. भन्ते! (एक बकुश) भिक्षु विजातीय संयम-स्थानों संयोजना की अपेक्षा निर्ग्रन्थ के चारित्र-पर्यवों से पृच्छा—क्या हीन है? तुल्य है? अभ्यधिक है?

गौतम! हीन है, तुल्य नहीं है, अभ्यधिक नहीं है—वह उससे अनन्त-गुणा-हीन है। इसी प्रकार स्नातक की भी वक्तव्यता। (वह उससे अनन्त-गुणा-हीन है)। प्रतिषेवणा-कुशील-निर्ग्रन्थ का अन्य निर्ग्रन्थों के साथ सन्निकर्ष के विषय में जैसी बकुश-निर्ग्रन्थ का अन्य निर्ग्रन्थों के साथ सन्निकर्ष के विषय में वक्तव्यता है वैसी बतलानी चाहिए। कषाय-कुशील-निर्ग्रन्थ का अन्य निर्ग्रन्थों के साथ सन्निकर्ष के विषय में यही वक्तव्यता जो बकुश-निर्ग्रन्थ का अन्य निर्ग्रन्थों के साथ सन्निकर्ष के विषय में है वही बतलानी चाहिए, केवल इतना विशेष है—कषाय--कुशील-निर्ग्रन्थ का पुलाक-निर्ग्रन्थ के साथ सन्निकर्ष के विषय में षट्स्थान-पतित बतलाना चाहिए।

३५६. भन्ते! एक निर्ग्रन्थ विजातीय संयम-स्थानों के संयोजन की अपेक्षा पुलाक भिक्षु के चारित्र-पर्यवों से.....? पृच्छा (**भ.** २५/३५१)।

गौतम! हीन नहीं है, तुल्य नहीं है, अभ्यधिक है—अनन्त-गुणा-अभ्यधिक है। इसी प्रकार यावत् कषाय-कुशील की वक्तव्यता।

३५७. भन्ते! एक निर्ग्रन्थ सजातीय संयम-स्थानों के संयोजन की अपेक्षा दूसरे निर्ग्रन्थ के चारित्र-पर्यवों से.......? पृच्छा (**भ.** २५/३५१)।

गौतम! हीन नहीं है, तुल्य है, अभ्यधिक नहीं है।

३५८. भन्ते! एक निर्ग्रन्थ विजातीय संयम-स्थानों के संयोजन की अपेक्षा स्नातक के सन्निकर्ष से चारित्र-पर्यवों से......? पृच्छा।

गौतम! हीन नहीं है, तुल्य है, अभ्यधिक नहीं है।

३५९. भन्ते! एक स्नातक विजातीय संयम-स्थानों के संयोजन की अपेक्षा पुलाक भिक्षु चारित्र-पर्यवों से.......? पृच्छा।

गौतम! हीन नहीं है, तुल्य नहीं है, अभ्यधिक है—अनन्त-गुणा-अभ्यधिक है। इसी प्रकार यावत् कषायकुशील की वक्तव्यता।

३६०. भन्ते! स्नातक विजातीय संयम-स्थानों के संयोजन की अपेक्षा निर्ग्रन्थ के चारित्र-पर्यवों से.......? पृच्छा (**भ.** २५/३५१)।

गौतम! हीन नहीं है, तुल्य है, अभ्यधिक नहीं है।

३६१. भन्ते! स्नातक सजातीय संयम-स्थानों की अपेक्षा दूसरे स्नातक चारित्र-पर्यवों से......? पृच्छा (**भ.** २५/३५१)।

गौतम! हीन नहीं है, तुल्य है, अभ्यधिक नहीं है।

३६२. भन्ते! इन पुलाक, बकुश, प्रतिषेवणा-कुशाल, कषाय-कुशील, निर्ग्रन्थ और स्नातक भिक्षुओं के जघन्य और उत्कृष्ट चारित्र-पर्यवों में कौन किनसे अल्प? बहुत? तुल्य? या विशेषाधिक हैं?

गौतम! इन (छह प्रकार के निर्ग्रन्थों के जघन्य और उत्कृष्ट चारित्र-पर्यवों में) १. पुलाक और कषाय-कुशील इन दोनों के जघन्य चारित्र-पर्यव परस्पर तुल्य और सबसे अल्प होते हैं। २. पुलाक के उत्कृष्ट चारित्र-पर्यव उनसे अनन्त-गुणा होते हैं। ३. बकुश और प्रतिषेवणा--कुशील—इन दोनों के जघन्य चारित्र-पर्यव परस्पर तुल्य और पूर्व से अनन्त-गुणा होते हैं। ४. बकुश के उत्कृष्ट चारित्र-पर्यव पूर्व से अनन्त-गुणा होते हैं। ५. प्रतिषेवणा-कुशील के उत्कृष्ट चारित्र-पर्यव पूर्व से अनन्त-गुणा होते हैं। ६. कषाय-कुशील के उत्कृष्ट चारित्र पर्यव पूर्व से अनन्त-गुणा होते हैं। ७. निर्ग्रन्थ और स्नातक—इन दोनों के अजघन्य और अनुत्कृष्ट अर्थात् केवल एक चारित्र-पर्यव परस्पर तुल्य और पूर्व से अनन्त-गुणा होता है।

योग-पद

३६३. भन्ते! क्या पुलाक सयोगी होता है? अयोगी होता है?

गौतम! पुलाक सयोगी होता है, अयोगी नहीं होता।

३६४. यदि सयोगी होता है तो क्या मन-योगी होता है? वचन-योगी होता है? काय-योगी होता है?

गौतम! मन-योगी भी होता है, वचन-योगी भी होता है, काय-योगी भी होता है। इसी प्रकार यावत् निर्ग्रन्थ की वक्तव्यता।

३६५. स्नातक................? पृच्छा (**भ.** २५/३६३)।

गौतम! स्नातक सयोगी भी होता है, अयोगी भी होता है।

यदि सयोगी होता है तो क्या मन-योगी होता है......शेष पुलाक की भांति वक्तव्यता।

उपयोग-पद

३६६. भन्ते! क्या पुलाक साकारोपयोग वाला होता है? अनाकारोपयोग वाला होता है?

गौतम! साकारोपयोग वाला होता है अथवा अनाकारोपयोग वाला होता है। इसी प्रकार यावत् स्नातक की वक्तव्यता।

कषाय-पद

३६७. भन्ते! क्या पुलाक कषाय-सहित होता है? कषाय-रहित होता है?

गौतम! कषाय-सहित होता है, कषाय-रहित नहीं होता।

३६८. यदि कषाय-सहित होता है तो भन्ते! वह कितने कषायों से युक्त होता है?

गौतम! चारों कषायों—क्रोध, मान, माया और लोभ से युक्त होता है। इसी प्रकार बकुश की वक्तव्यता। इसी प्रकार प्रतिषेवणा-कुशील की भी वक्तव्यता।

३६९. कषाय-कुशील ......? पृच्छा (**भ.** २५/३६७)।

गौतम! कषाय-सहित होता ह, कषाय-रहित नहीं होता।

३७०. यदि कषाय-सहित होता है तो कितने कषायों से युक्त होता है?

गौतम! चार अथवा तीन अथवा दो अथवा एक कषाय से युक्त होता है। चार कषाय से युक्त होता है तो वह संज्वलन-क्रोध, संज्वलन-मान, संज्वलन-माया और संज्वलन-लोभ से युक्त होता है। तीन कषायों से युक्त होता है तो वह संज्वलन-मान, संज्वलन-माया और संज्वलन-लोभ से युक्त होता है। दो कषायों से युक्त होता है तो वह संज्वलन-माया और संज्वलन-लोभ से युक्त होता है। एक कषाय से युक्त होता है तो वह संज्वलन-लोभ से युक्त होता है।

३७१. निर्ग्रन्थ ....? पृच्छा (भ. २५/३६७)।

गौतम! निर्ग्रन्थ कषाय-सहित नहीं होता, कषाय-रहित होता है।

३७२. यदि कषाय-रहित होता है तो क्या वह उपशान्त-कषाय वाला होता है? क्षीण-कषाय वाला होता है?

गौतम! उपशान्त-कषाय वाला होता है अथवा क्षीण-कषाय वाला होता है। स्नातक के विषय में भी प्रश्न पूर्ववत् किन्तु इतना विशेष है—वह उपशांत-कषाय वाला नहीं होता, क्षीण-कषाय वाला होता है।

लेश्या-पद

३७३. भन्ते! क्या पुलाक लेश्या-युक्त होता है? लेश्या-मुक्त होता है?

गौतम! लेश्या-युक्त होता है, लेश्या-मुक्त नहीं होता।

३७४. यदि लेश्या-युक्त होता है तो भन्ते। वह कितनी लेश्याओं से युक्त होता है?

गौतम! तीन विशुद्ध लेश्याओं से युक्त होता है, जैसे—तैजस-लेश्या वाला, पद्म-लेश्या वाला और शुक्ल-लेश्या वाला। इसी प्रकार बकुश की भी, इसी प्रकार प्रतिषेवणा-कुशील की भी वक्तव्यता।

३७५. कषाय-कुशील...........? पृच्छा (भ. २५/३७३)।

गौतम! लेश्या-युक्त होता है, लेश्या-मुक्त नहीं होता।

३७६. यदि लेश्या-युक्त होता है तो भन्ते! वह कितनी लेश्याओं से युक्त होता है?

गौतम! छह लेश्याओं से युक्त होता है, जैसे—कृष्ण-लेश्या वाला यावत् शुक्ल-लेश्या वाला।

३७७. भन्ते! निर्ग्रन्थ ....? पृच्छा (भ. २५/३७३)।

गौतम! लेश्या युक्त होता है, लेश्या-मुक्त नहीं होता।

३७८. यदि लेश्या-युक्त होता है तो भन्ते! वह कितनी लेश्याओं से युक्त होता है?

गौतम! एक शुक्ल लेश्या वाला होता है।

३७९. स्नातक...........? पृच्छा (भ. २५/३७३)।

गौतम! स्नातक लेश्या-युक्त होता है अथवा लेश्या-मुक्त होता है।

३८०. यदि स्नातक लेश्या-युक्त होता है, तो भन्ते! वह कितनी लेश्याओं से युक्त होता है?

गौतम! एक परम-शुक्ल-लेश्या वाला होता है।

परिणाम-पद

३८१. भन्ते! क्या पुलाक वर्धमान परिणाम वाला होता है? हीयमान परिणाम वाला होता है? अवस्थित परिणाम वाला होता है?

गौतम! वर्धमान परिणाम वाला होता है अथवा हीयमान परिणाम वाला होता है अथवा अवस्थित परिणाम वाला होता है। इसी प्रकार यावत् कषाय-कुशील की वक्तव्यता।

३८२. निर्ग्रन्थ..........? पृच्छा (भ. २५/३८१)।

गौतम! वर्धमान परिणाम वाला होता है, हीयमान परिणाम वाला नहीं होता अथवा अवस्थित परिणाम वाला होता है। इसी प्रकार स्नातक की भी वक्तव्यता।

३८३. भन्ते! पुलाक कितने काल तक वर्धमान परिणाम वाला होता है?

गौतम! जघन्यतः एक समय, उत्कृष्टतः अन्तर्मुहूर्त्त।

३८४. पुलाक कितने काल तक हीयमान परिणाम वाला होता है?

गौतम! जघन्यतः एक समय, उत्कृष्टतः अन्तर्मुहूर्त्त।

३८५. पुलाक कितने काल तक अवस्थित परिणाम वाला होता है?

गौतम! जघन्यतः एक समय, उत्कृष्टतः सात समय। इसी प्रकार यावत् कषाय-कुशील की वक्तव्यता।

३८६. भन्ते! निर्ग्रन्थ कितने काल तक वर्धमान परिणाम वाला होता है?

गौतम! जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त, उत्कृष्टतः भी अन्तर्मुहूर्त्त।

३८७. निर्ग्रन्थ कितने काल तक अवस्थित परिणाम वाला होता है?

गौतम! जघन्यतः एक समय, उत्कृष्टतः अन्तर्मुहूर्त्त।

३८८. भन्ते! कितने काल तक वर्धमान परिणाम वाला होता है?

गौतम! जघन्यतः भी अन्तर्मुहूर्त्त, उत्कृष्टतः भी अन्तर्मुहूर्त्त।

३८९. स्नातक कितने काल तक अवस्थित परिणाम वाला होता है?

गौतम! जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त, उत्कृष्टतः देशोन-कोटि-पूर्व।

बन्ध-पद

३९०. भन्ते! पुलाक कितनी कर्म-प्रकृतियों का बन्ध करता है?

गौतम! आयुष्य-कर्म को छोड़कर सात कर्म-प्रकृतियों का बन्ध करता है।

३९१. बकुश.........? पृच्छा (भ. २५/३९०)।

गौतम! सात प्रकार की कर्म-प्रकृतियों का बंध करने वाला अथवा आठ प्रकार की कर्म-

-प्रकृतियों को बंध करने वाला होता है। वह सात कर्म-प्रकृतियों को बंध करता हुआ आयुष्य-कर्म को छोड़ कर सात कर्म-प्रकृतियों का बंध करता है। आठ कर्म-प्रकृतियों का बंध करता हुआ प्रतिपूर्ण आठ कर्म-प्रकृतियों का बंध करता है। इसी प्रकार प्रतिषेवणा-कुशील की भी वक्तव्यता।

३९२. कषाय-कुशील............? पृच्छा (**भ.** २५/३९०)।

गौतम! सात प्रकार की कर्म-प्रकृतियों का बंध करने वाला अथवा आठ प्रकार की कर्म--प्रकृतियों का बंध करने वाला अथवा छह प्रकार की कर्म प्रकृतियों का बंध करने वाला होता है। वह सात कर्म-प्रकृतियों का बंध करता हुआ आयुष्य-कर्म को छोड़कर सात कर्म--प्रकृतियों का बंध करता है, आठ कर्म-प्रकृतियों को बंध करता हुआ प्रतिपूर्ण आठ कर्म--प्रकृतियों को बांधता है, छह कर्म-प्रकृतियों का बंध करता हुआ आयुष्य-कर्म और मोहनीय-कर्म को छोड़कर छह कर्म-प्रकृतियों का बंध करता है।

३९३. निर्ग्रन्थ..........? पृच्छा (**भ.** २५/३९०)।

गौतम! एक वेदनीय-कर्म का बन्ध करता है।

३९४. स्नातक.........? पृच्छा (**भ.** २५/३९०)।

गौतम! स्नातक एक कर्म-प्रकृति का बंध करने वाला होता है अथवा अबन्धक—बंध नहीं करने वाला होता है। एक कर्म-प्रकृति का बंध करता हुआ केवल वेदनीय-कर्म का बंध करता है।

वेदन-पद

३९५. भन्ते! पुलाक कितनी कर्म-प्रकृतियों का वेदन करता है?

गौतम! नियमतः आठ कर्म-प्रकृतियों का वेदन करता है। इसी प्रकार यावत् कषाय-कुशील की वक्तव्यता।

३९६. निर्ग्रन्थ ....? पृच्छा (**भ.** २५/३९५)।

गौतम! मोहनीय-कर्म को छोड़कर सात कर्म-प्रकृतियों का वेदन करता है।

३९७. स्नातक ....? पृच्छा (**भ.** २५/३९५)।

गौतम! वेदनीय, आयुष्य, नाम और गोत्र—इन चार कर्म-प्रकृतियों का वेदन करता है।

उदीरणा-पद

३९८. भन्ते! पुलाक कितनी कर्म-प्रकृतियों की उदीरणा करता है?

गौतम! आयुष्य- और वेदनीय-कर्म को छोड़कर छह कर्म-प्रकृतियों की उदीरणा करता है।

३९९. बकुश.........? पृच्छा (**भ.** २५/३९८)।

गौतम! सात प्रकार की कर्म-प्रकृतियों की उदीरणा करता है अथवा आठ प्रकार की कर्म--प्रकृतियों की उदीरणा करता है अथवा छह प्रकार की कर्म-प्रकृतियों की उदीरणा करता है। सात कर्म-प्रकृतियों की उदीरणा करता हुआ आयुष्य कर्म को छोड़कर सात कर्म-प्रकृतियों

की उदीरणा करता है, आठ कर्म-प्रकृतियों की उदीरणा करता हुआ प्रतिपूर्ण आठ कर्म--प्रकृतियों की उदीरणा करता है, छह कर्म-प्रकृतियों की उदीरणा करता हुआ आयुष्य-और वेदनीय-कर्म को छोड़कर छह कर्म-प्रकृतियों की उदीरणा करता है। प्रतिषेवणा-कुशील की पूर्ववत् वक्तव्यता।

४००. कषाय-कुशील ....? पृच्छा (भ. २५/३९८)।

गौतम! निर्ग्रन्थ सात प्रकार की कर्म-प्रकृतियों की उदीरणा करता है अथवा आठ प्रकार की कर्म-प्रकृतियों की उदीरणा करता है अथवा छह प्रकार की कर्म-प्रकृतियों की उदीरणा करता है अथवा पांच प्रकार की कर्म-प्रकृतियों की उदीरणा करता है। सात कर्म-प्रकृतियों की उदीरणा करता हुआ वह आयुष्य-कर्म को छोड़कर सात कर्म-प्रकृतियों की उदीरणा करता है। आठ कर्म-प्रकृतियों की उदीरणा करता हुआ वह प्रतिपूर्ण आठ कर्म-प्रकृतियों की उदीरणा करता है, छह कर्म-प्रकृतियों की उदीरणा करता हुआ वह आयुष्य- और वेदनीय-कर्म को छोड़कर छह कर्म-प्रकृतियों की उदीरणा करता है। पांच कर्म-प्रकृतियों की उदीरणा करता हुआ वह आयुष्य-, वेदनीय- और मोहनीय-कर्म को छोड़कर पांच कर्म-प्रकृतियों की उदीरणा करता है।

४०१. निर्ग्रन्थ ....? पृच्छा (भ. २५/३९८)।

गौतम! पांच प्रकार की कर्म-प्रकृतियों की उदीरणा करता है अथवा दो प्रकार की कर्म--प्रकृतियों की उदीरणा करता है। पांच कर्म-प्रकृतियों की उदीरणा करता हुआ वह आयुष्य-, वेदनीय- और मोहनीय-कर्म को छोड़कर पांच कर्म-प्रकृतियों की उदीरणा करता है, दो कर्म-प्रकृतियों की उदीरणा करता हुआ वह नाम- और गौत्र-कर्म-प्रकृतियों की उदीरणा करता है।

४०२. स्नातक ....? पृच्छा (भ. २५/३९८)।

गौतम! दो प्रकार की कर्म-प्रकृतियों की उदीरणा करता है अथवा अनुदीरण होता है—उदीरणा नहीं करता। दो कर्म-प्रकृतियों की उदीरणा करता हुआ वह नाम- और गौत्र-कर्म-प्रकृतियों की उदीरणा करता है।

उपसंपद्-हान-पद

४०३. भन्ते! पुलाकत्व का परित्याग करता हुआ पुलाक किनका परित्याग करता है, किसे उपसंपन्न करता है?

गौतम! वह पुलाकत्व का परित्याग करता हुआ कषाय-कुशील अथवा असंयम को उपसंपन्न करता है।

४०४. भन्ते! बकुश बकुशत्व का परित्याग करता हुआ किसका परित्याग करता है? किसे उपसंपन्न करता है?

गौतम! वह बकुशत्व का परित्याग करता है। प्रतिषेवणा-कुशील अथवा कषाय-कुशील अथवा असंयम अथवा संयमासंयम को उपसंपन्न करता है।

४०५. प्रतिषेवणा-कुशील ....? पृच्छा (भ. २५/४०३)।

गौतम! प्रतिषेवणा-कुशीलत्व का परित्याग करता है। बकुश अथवा कषाय-कुशील अथवा असंयम अथवा संयमासंयम को उपसंपन्न करता है।

४०६. कषाय-कुशील ....? पृच्छा (**भ.** २५/४०३)।

गौतम! कषाय-कुशीलत्व का परित्याग करता है। पुलाक अथवा बकुश अथवा प्रतिषेवणा--कुशील अथवा निर्ग्रन्थ अथवा असयंम अथवा संयमासंयम को उपसंपन्न करता है।

४०७. निर्ग्रन्थ ....? पृच्छा (**भ.** २५/४०३)।

गौतम! निर्ग्रन्थत्व का परित्याग करता है। कषाय-कुशील अथवा स्नातक अथवा असंयम को उपसंपन्न करता है।

४०८. स्नातक ....? पृच्छा (**भ.** २५/४०३)।

गौतम! स्नातक स्नातकत्व का परित्याग करता है। सिद्धि-गति को उपसंपन्न करता है।

संज्ञा-पद

४०९. भन्ते! क्या पुलाक संज्ञोपयुक्त होता है? नोसंज्ञोपयुक्त होता है?

गौतम! नोसंज्ञोपयुक्त होता है।

४१०. भन्ते! बकुश............? पृच्छा (**भ.** २५/४०९)।

गौतम! संज्ञोपयुक्त होता है अथवा नोसंज्ञोयुक्त होता है। इसी प्रकार प्रतिषेवणा--कुशील की भी वक्तव्यता। इसी प्रकार कषाय-कुशील की भी वक्तव्यता। निर्ग्रन्थ और स्नातक निर्ग्रन्थ की पुलाक की भांति वक्तव्यता (**भ.** २५/४०९)।

आहार-पद

४११. भन्ते! क्या पुलाक आहारक होता है? अनाहारक होता है?

गौतम! आहारक होता है, अनाहारक नहीं होता। इसी प्रकार यावत् निर्ग्रन्थ की वक्तव्यता।

४१२. स्नातक ....? पृच्छा (**भ.** २५/४११)।

गौतम! स्नातक आहारक होता है अथवा अनाहारक होता है।

भव-पद

४१३. भन्ते! पुलाक कितने भव (जन्मों) में होता है?

गौतम! जघन्यतः एक, उत्कृष्टतः तीन जन्मों में होता है।

४१४. बकुश ....? पृच्छा (**भ.** २५/४१३)।

गौतम! जघन्यतः एक, उत्कृष्टतः आठ जन्मों में होता है। इसी प्रकार प्रतिषेवणा-कुशील की भी। इसी प्रकार कषाय-कुशील की भी वक्तव्यता। निर्ग्रन्थ की पुलाक की भांति वक्तव्यता।

४१५. स्नातक ....? पृच्छा (**भ.** २५/४१३)।

गौतम! एक।

आकर्ष-पद

४१६. भन्ते! पुलाक के एक भव में कितने आकर्ष—पुलाकत्व के स्पर्श प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! जघन्यतः एक, उत्कृष्टतः तीन आकर्ष।

४१७. बकुश................? पृच्छा (भ. २५/४१६)।

गौतम! जघन्यतः एक, उत्कृष्टतः पृथक्त्व-सौ (दो सौ से नौ सौ) आकर्ष। इसी प्रकार प्रतिषेवणा-कुशील की भी, इसी प्रकार कषाय-कुशील भी भी वक्तव्यता।

४१८. निर्ग्रन्थ.............? पृच्छा (भ. २५/४१६)।

गौतम! जघन्यतः एक, उत्कृष्टतः दो आकर्ष।

४१९. स्नातक...............? पृच्छा (भ. २५/४१६)।

गौतम! एक आकर्ष।

४२०. भन्ते! पुलाक के अनेक भवों में कितने आकर्ष—पुलाकत्व के स्पर्श प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! जघन्यतः दो, उत्कृष्टतः सात आकर्ष।

४२१. बकुश.........? पृच्छा (भ. २५/४२०)।

गौतम! जघन्यतः दो, उत्कृष्टतः पृथक्त्व-हजार आकर्ष (दो हजार से नौ हजार तक) होते हैं। इसी प्रकार यावत् कषाय-कुशील की वक्तव्यता।

४२२. निर्ग्रन्थ ....? पृच्छा (भ. २५/४२०)।

गौतम! जघन्यतः दो, उत्कृष्टतः पांच आकर्ष।

४२३. स्नातक................? पृच्छा (भ. २५/४२०)।

गौतम! एक भी आकर्ष नहीं होता (क्योंकि उसी भव में मुक्त हो जाता है।)।

काल-पद

४२४. भन्ते! (एक) पुलाक काल की अपेक्षा कितने काल तक होता है?

गौतम! जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त, उत्कृष्टतः भी अन्तर्मुहूर्त्त।

४२५. (एक) बकुश ....? पृच्छा (भ. २५/४२४)।

गौतम! जघन्यतः एक समय, उत्कृष्टतः देशोन कोटि-पूर्व। इसी (एक) प्रकार पतिषेवणा--कुशील और (एक) कषाय-कुशील की भी वक्तव्यता।

४२६. (एक) निर्ग्रन्थ............? पृच्छा (भ. २५/४२४)।

गौतम! जघन्यतः एक समय, उत्कृष्टतः अन्तर्मुहूर्त्त।

४२७. (एक) स्नातक...........? पृच्छा (भ. २५/४२४)।

गौतम! जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त, उत्कृष्टतः देशोन-कोटि-पूर्व।

४२८. भन्ते! (अनेक) पुलाक काल की अपेक्षा कितने काल तक रहते हैं?

गौतम! जघन्यतः एक समय, उत्कृष्टतः अन्तर्मुहूतः।

४२९. (अनेक) बकुश ....? पृच्छा (भ. २५/४२४)।

गौतम! सर्व काल तक रहते हैं। इसी प्रकार यावत् कषाय-कुशीलों की वक्तव्यता। (अनेक) निर्ग्रन्थ (अनेक) पुलाक की भांति वक्तव्यता (भ. २५/४२८)। (अनेक) स्नातक की (अनेक) बकुश की भांति वक्तव्यता।

अन्तर-पद

४३०. भन्ते! (एक) पुलाक के पुनः पुलाक होने में कितने काल का अन्तर होता है?

गौतम! जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त, उत्कृष्टतः अनन्त काल—काल की अपेक्षा अनन्त अवसर्पिणी--उत्सर्पिणी, क्षेत्र की अपेक्षा देशोन-अपार्ध-पुद्गल-परावर्तन। इसी प्रकार यावत् निर्ग्रन्थ की वक्तव्यता।

४३१. (एक) स्नातक.........? पृच्छा (भ. २५/४३०)।

गौतम! अन्तर नहीं होता।

४३२. भंते! (अनेक) पुलाक के पुलाक होने में कितने काल का अंतर होता है?—(अनेक) पुलाक-निर्ग्रन्थों की अपेक्षा से कितने काल का विरह हो सकता है?

गौतम! जघन्यतः एक समय, उत्कृष्टतः संख्येय वर्ष काल।

४३३. (अनेक जीवों की अपेक्षा से काल का अन्तर) भन्ते! (अनेक) बकुश-निर्ग्रन्थों के कितने काल का अन्तर होता है—(अनेक) बकुश-निर्ग्रन्थों की अपेक्षा से कितने काल का विरह हो सकता है (भ. २५/४३२)?

गौतम! बकुश-निर्ग्रन्थों के अन्तर नहीं होता। इसी प्रकार यावत् कषाय-कुशील की वक्तव्यता।

४३४. (अनेक जीवों की अपेक्षा से काल का अन्तर) भन्ते! (अनेक) निर्ग्रन्थ..... पृच्छा (भ. २५/४३२)।

गौतम! जघन्यतः एक समय, उत्कृष्टतः छह मास। (अनेक) स्नातक की (अनेक) बकुश की भांति वक्तव्यता।

समुद्घात-पद

४३५. भन्ते! पुलाक के कितने समुद्घात प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! तीन समुद्घात प्रज्ञप्त हैं, जैसे—वेदना-समद्घात, कषाय-समुद्घात और मारणांतिक--समद्घात।

४३६. भन्ते! बकुश ....? पृच्छा (भ. २५/४३५)।

गौतम! पांच समुद्घात प्रज्ञप्त हैं, जैसे—वेदना-समुद्घात यावत् तेजस्-समुद्घात। इसी प्रकार प्रतिषेवणा-कुशील की भी वक्तव्यता।

४३७. कषाय-कुशील ....? पृच्छा (भ. २५/४३५)।

गौतम! छह समुद्घात प्रज्ञप्त हैं, जैसे—वेदना-समुद्घात यावत् आहारक-समुद्घात।

४३८. निर्ग्रन्थ ....? पच्छा (भ. २५/४३५)।

गौतम! एक भी समुद्घात नहीं होता।

४३९. स्नातक ....? पृच्छा (भ. २५/४३५)।

गौतम! एक केवलि-समुद्घात प्रज्ञप्त है।

क्षेत्र-पद

४४०. भन्ते! क्या पुलाक-निर्ग्रन्थ लोक के संख्यातवें भाग में होता है? असंख्यातवें भाग में होता है? संख्यात भागों में होता है? असंख्यात भागों में होता है? सर्वलोक में होता है?

गौतम! लोक के संख्यातवें भाग में नहीं होता, असंख्यातवें भाग में होता है, संख्यात भागों में नहीं होता, असंख्यात भागों में नहीं होता, सर्व-लोक में नहीं होता। इसी प्रकार यावत् निर्ग्रन्थ की वक्तव्यता।

४४१. स्नातक ....? पृच्छा (भ. २५/४४०)।

गौतम! लोक के संख्यातवें भाग में नहीं होता, असंख्यातवें भाग में होता है, संख्यात भागों में नहीं होता, असंख्यात भागों में होता है, सर्व-लोक में भी होता है।

स्पर्शना-पद

४४२. भन्ते! क्या पुलाक लोक के संख्यातवें भाग का स्पर्श करता है? असंख्यातवें भाग का स्पर्श करता है? इस प्रकार अवगाहन की भांति स्पर्शना भणितव्य है यावत् स्नातक की वक्तव्यता।

भाव-पद

४४३. भन्ते! पुलाक किस भाव में होता है?

गौतम! क्षायोपशमिक-भाव में होता है। इसी प्रकार यावत् कषाय-कुशील की वक्तव्यता।

४४४. निर्ग्रन्थ के विषय में पृच्छा (भ. २५/४४३)।

गौतम! औपशमिक-भाव में होता है अथवा क्षायिक-भाव में होता है।

४४५. स्नातक ....? पृच्छा (भ. २५/४४३)।

गौतम! क्षायिक-भाव में होता है।

परिमाण-पद

४४६. भन्ते! पुलाक एक समय में कितने होते हैं?

गौतम! प्रतिपद्यमान की अपेक्षा स्यात् होते हैं, स्यात् नहीं होते। यदि होते हैं तो जघन्यतः एक अथवा दो अथवा तीन, उत्कृष्टतः पृथक्त्व-सौ (दो सौ से नौ सौ तक) होते हैं।

पुलाक पूर्व प्रतिपन्नक पर्याय की अपेक्षा स्यात् होते हैं, स्यात् नहीं होते। यदि होते हैं तो जघन्यतः एक अथवा दो अथवा तीन, उत्कृष्टतः पृथक्त्व-हजार (दो हजार से नौ हजार तक) होते हैं।

४४७. भन्ते! बकुश एक समय में कितने होते हैं?

गौतम! प्रतिपद्यमान की अपेक्षा स्यात् होते हैं, स्यात् नहीं होते। यदि होते हैं तो जघन्यतः

एक अथवा दो अथवा तीन, उत्कृष्टतः पृथक्त्व-सौ (दो सौ से नौ सो तक) होते हैं।

पूर्व प्रतिपन्नक की अपेक्षा जघन्यतः पृथक्त्व-सौ-करोड़ (दो सौ करोड़ से नौ सौ करोड़ तक), उत्कृष्टतः भी पृथक्त्व-सौ-करोड़ तक होते हैं। इसी प्रकार प्रतिषेवणा-कुशील की भी वक्तव्यता।

४४८. कषाय-कुशील ....? पृच्छा (भ. २५/४४६)।

गौतम! प्रतिपद्यमान की अपेक्षा स्यात् होते हैं, स्यात् नहीं होते। यदि होते हैं तो जघन्यतः एक अथवा दो अथवा तीन, उत्कृष्टतः पृथक्त्व-हजार (दो हजार से नौ हजार तक) होते हैं। पूर्व प्रतिपन्नक की अपेक्षा जघन्यतः पृथक्त्व-हजार-करोड़ तक, उत्कृष्टतः भी पृथक्त्व--हजार-करोड़ होते हैं।

४४९. निर्ग्रन्थ ....? पृच्छा (भ. २५/४४६)।

गौतम! निर्ग्रन्थ प्रतिपद्यमान की अपेक्षा स्यात् होते हैं, स्यात् नहीं होते। यदि होते हैं तो जघन्यतः एक अथवा दो अथवा तीन, उत्कृष्टतः एक सौ बासठ होते हैं—एक सौ आठ निर्ग्रन्थ क्षपक-श्रेणी वाले होते हैं और चौपन निर्ग्रन्थ उपशम-श्रेणी वाले होते हैं। निर्ग्रन्थ पूर्व पर्याय की अपेक्षा से स्यात् होते हैं, स्यात् नहीं होते। यदि होते हैं तो जघन्यतः एक अथवा दो अथवा तीन, उत्कर्षतः पृथक्त्व-सौ (दो सौ से नो सौ तक) होते हैं। पूर्व प्रतिपन्नक की अपेक्षा से स्यात् होते हैं, स्यात् नहीं होते। यदि होते हैं तो जघन्यतः एक अथवा दो अथवा तीन, उत्कृष्टतः पृथक्त्व-सौ होते हैं।

४५०. स्नातक ....? पृच्छा (भ. २५/४४६)।

गौतम! स्नातक प्रतिपद्यमान की अपेक्षा स्यात् होते हैं, स्यात् नहीं होते। यदि होते हैं तो जघन्यतः एक अथवा दो अथवा तीन, उत्कृष्टतः एक सौ आठ होते हैं। पूर्व-प्रतिपन्नक की अपेक्षा जधन्यतः पृथक्त्व-कोटि। उत्कृष्टतः भी पृथक्त्व-कोटि (दो करोड़ से नौ करोड़ तक) होते हैं।

अल्पबहुत्व-पद

४५१. भन्ते! इन पुलाक-, बकुश-, प्रतिषेवणा-कुशील-, कषायकुशील-, निर्ग्रन्थ- और स्नातक-निर्ग्रन्थों में कौन-किनसे अल्प? बहुत? तुल्य? या विशेषाधिक हैं?

गौतम! निर्ग्रन्थ सबसे अल्प हैं, पुलाक इनसे संख्येय-गुणा हैं, स्नातक इनसे संख्येय-गुणा हैं, बकुश इनसे संख्येय-गुणा हैं, प्रतिषेवणा-कुशील-निर्ग्रन्थ इनसे संख्येय-गुणा हैं, कषायकुशील इनसे संख्येय-गुणा हैं।

४५२. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते वह ऐसा ही है। इस प्रकार भगवान् गौतम यावत् संयम और तप से अपने आप को भावित करते हुए विहरण कर रहे हैं।

सातवां उद्देशक

प्रज्ञापना-पद

४५३. भन्ते! संयत कितने प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! संयत पांच प्रज्ञप्त हैं, जैसे—सामायिक-संयत, छेदोपस्थापनीय-संयत, परिहार-

-विशुद्धिक-संयत, सूक्ष्मसम्पराय-संयत और यथाख्यात-संयत।

४५४. भन्ते! सामायिक-संयत कितने प्रकार का प्रज्ञप्त है?

गौतम! दो प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—इत्वरिक (अल्पकालिक) और यावत्कथिक (आजीवन)।

४५५. भन्ते! छेदोपस्थापनीय-संयत ....? पृच्छा (भ. २५/४५४)।

गौतम! दो प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—सातिचार—सदोष और निरतिचार—दोषरहित।

४५६. (भन्ते!) परिहारविशुद्धिक-संयत ....? पृच्छा (भ. २५/४५४)।

गौतम! दो प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—निर्विषमानक—परिहारविशुद्ध-तप करता हुआ और निर्विष्टकायिक—परिहारविशुद्ध-तप संपन्न कर चुका।

४५७. (भन्ते!) सूक्ष्मसंपराय-संयत ....? पृच्छा (भ. २५/४५४)।

गौतम! दो प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—संक्लिश्यमानक—उपशम-श्रेणी से गिरता हुआ, और विशुद्ध्यमानक—उपशम-श्रेणी अथवा क्षपक-श्रेणी समारोहण करता हुआ।

४५८. भन्ते! यथाख्यात-संयत के विषय में पृच्छा।

गौतम! दो प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—छद्मस्थ और केवली।

संग्रहणी-गाथा

सामायिक-चारित्र स्वीकार कर जो अनुत्तर चातुर्याम धर्म का तीन करण से स्पर्श करता है वह सामायिक-संयत है।

पूर्व-पर्याय का छेदन कर जो अपनी आत्मा को पञ्च-याम-धर्म में स्थापित करता है वह छेदोपस्थापन-संयत है।

जो परिहारविशुद्धि-तप का आचरण करता है, अनुत्तर पञ्च-याम-धर्म का तीन करण से स्पर्श करता है वह पारिहारिक-संयत है।

जो (सूक्ष्म) लोभाणुओं का वेदन करता हुआ उपशामक अथवा क्षपक है वह सूक्ष्म-संपराय-
-संयत है। वह यथाख्यात-संयत से किंचित् न्यून है।

मोहनीय-कर्म के उपशान्त अथवा क्षीण होने पर जो छद्मस्थ अथवा जिन (केवली) है वह यथाख्यात-संयत है।

वेद-पद

४५९. भन्ते! क्या सामायिक-संयत सवेदक होता है? अवेदक होता है?

गौतम! सवेदक होता है अथवा अवेदक होता है। यदि सवेदक होता है तो—इसी प्रकार जैसा कषाय-कुशील (भ. २५/२९१,२९२) की भांति निरवशेष वक्तव्यता। इसी प्रकार छेदोपस्थापनीय-संयत की वक्तव्यता।

परिहारविशुद्धिक-संयत की पुलाक (भ. २५/२८६,२८७) की भांति वक्तव्यता।

सूक्ष्मसंपराय-संयत और यथाख्यात-संयत की निर्ग्रन्थ (भ. २५/२९३) की भांति वक्तव्यता।

राग-पद

४६०. भन्ते! क्या सामायिक-संयत सराग होता है? वीतराग होता है?

गौतम! सराग होता है, वीतराग नहीं होता। इसी प्रकार यावत् सूक्ष्मसम्पराय-संयत की वक्तव्यता। यथाख्यात-संयत की निर्ग्रन्थ (**भ.** २५/२९७,२९८) की भांति वक्तव्यता।

कल्प-पद

४६१. भन्ते! क्या सामायिक-संयत स्थित-कल्प होता है? अस्थित-कल्प होता है?

गौतम! स्थित-कल्प होता है अथवा अस्थित-कल्प होता है।

४६२. छेदोपस्थापनीक-संयत........? पृच्छा (**भ.** २५/४६१)।

गौतम! स्थित-कल्प होता है, अस्थित-कल्प नहीं होता। इसी प्रकार परिहारविशुद्धिक-संयत की भी वक्तव्यता। शेष दो (सूक्ष्मसम्पराय- और यथाख्यात-संयत) की सामायिक-संयत की भांति वक्तव्यता।

४६३. भन्ते! क्या सामायिक-संयत जिन-कल्प होता है? स्थविर-कल्प होता है? कल्पातीत होता है?

गौतम! जिन-कल्प होता है अथवा स्थविर-कल्प होता है अथवा कल्पातीत होता है, कषाय--कुशील की भांति निरवशेष वक्तव्यता (**भ.** २५/३०२)। छेदोपस्थापनीय-संयत और परिहार-विशुद्धिक-संयत की बकुश की भांति वक्तव्यता (**भ.** २५/३०१)। शेष दो (सूक्ष्मसम्पराय- और यथाख्यात-संयत) की निर्ग्रन्थ की भांति वक्तव्यता (**भ.** २५/३०३)।

निर्ग्रन्थ-पद

४६४. भन्ते! क्या सामायिक-संयत पुलाक होता है? बकुश यावत् स्नातक होता है (**भ.** २५/२७८)?

गौतम! पुलाक होता है अथवा बकुश यावत् अथवा कषाय-कुशील होता है, निर्ग्रन्थ नहीं होता, स्नातक नहीं होता। इसी प्रकार छेदोपस्थापनिक-संयत की भी वक्तव्यता।

४६५. परिहारविशुद्धिक-संयत .... ? पृच्छा। (**भ.** २५/४६४)

गौतम! पुलाक नहीं होता, बकुश नहीं होता, प्रतिषेवणा-कुशील नहीं होता, कषाय-कुशील होता है, निर्ग्रन्थ नहीं होता, स्नातक नहीं होता। इसी प्रकार सूक्ष्मसम्पराय-संयत की भी वक्तव्यता।

४६६. यथाख्यात-संयत ....? पृच्छा। (**भ.** २५/४६४)

गौतम! पुलाक नहीं होता यावत् कषाय-कुशील नहीं होता, निर्ग्रन्थ होता है अथवा स्नातक होता है।

प्रतिषेवणा-पद

४६७. भन्ते! क्या सामायिक-संयत प्रतिषेवक (दोष लगाने वाला) होता है? अप्रतिषेवक (दोष नहीं लगाने वाला) होता है?

गौतम! प्रतिषेवक होता है अथवा अप्रतिषेवक होता है। यदि प्रतिषेवक होता है तो क्या मूलगुण-प्रतिषेवक होता है....शेष पुलाक की भांति वक्तव्यता (**भ.** २५/३०८)। जैसे सामायिक-संयत की वक्तव्यता, उसी प्रकार छेदोपस्थापनिक-संयत की भी वक्तव्यता।

४६८. परिहारविशुद्धिक ....? पृच्छा (**भ.** २५/४६७)।

गौतम! प्रतिषेवक नहीं होता, अप्रतिषेवक होता है। इसी प्रकार यावत् यथाख्यात-संयत की वक्तव्यता।

ज्ञान-पद

४६९. भन्ते! सामायिक-संयत कितने ज्ञानों से संपन्न होता है?

गौतम! वह दो अथवा तीन अथवा चार ज्ञानों से संपन्न होता है। इसी प्रकार जैसा कषाय--कुशील की भांति भजना से चार ज्ञान होते हैं (**भ.** २५/३१३)। इसी प्रकार यावत् सूक्ष्मसम्पराय-संयत की वक्तव्यता। यथाख्यात-संयत के भजना से पांच ज्ञान होते हैं (**भ.** ८/१०५)।

४७०. भन्ते! सामायिक-संयत कितने श्रुत का अध्येता होता है?

गौतम! सामायिक-संयत जघन्यतः आठ प्रवचन-माता का अध्येता होता है, जैसे कषाय-कुशील की वक्तव्यता (**भ.** २५/३१७)। इसी प्रकार छेदोपस्थापनिक-संयत की वक्तव्यता।

४७१. परिहारविशुद्धिक-संयत........? पृच्छा (**भ.** २५/४७०)।

गौतम! जघन्यतः नवम पूर्व की तीसरी आचार-वस्तु, उत्कृष्टतः असम्पूर्ण दस पूर्वों का अध्येता होता है। सूक्ष्मसंपराय-संयत की सामायिक-संयत (भ. २५/४७०) की भांति वक्तव्यता।

४७२. यथाख्यात-संयत ....? पृच्छा (**भ.** २५/४७०)।

गौतम! जघन्यतः आठ प्रवचन-माता का, उत्कृष्टतः चौदह-पूर्वों का अध्येता होता है। अथवा वह श्रुत-व्यतिरिक्त (श्रुतातीत) होता है।

तीर्थ-पद

४७३. भन्ते! क्या सामायिक-संयत तीर्थ में होता है? अतीर्थ में होता है?

गौतम! सामायिक-संयत तीर्थ में होता है अथवा अतीर्थ में होता है, कषायकुशील की भांति वक्तव्यता (**भ.** २५/३२१)। छेदोपस्थापनिक-संयत और परिहारविशुद्धिक-संयत की पुलाक की भांति वक्तव्यता (**भ.** २५/३१९)। शेष दो (सूक्ष्मसम्पराय-संयत और यथाख्यात-संयत) की सामायिक-संयत की भांति वक्तव्यता।

लिंग-पद

४७४. भन्ते! क्या सामायिक-संयत स्वलिंग में होता है? अन्यलिंग में होता है? गृहिलिंग में होता है? पुलाक की भांति वक्तव्यता (**भ.** २५/३२२)। इसी प्रकार छेदोपस्थापनिक-संयत की भी वक्तव्यता।

४७५. भन्ते! परिहारविशुद्धिक-संयत क्या (स्वलिंग में होता है? अन्यलिंग में होता है? गृहिलिंग में होता है) पृच्छा (भ. २५/४७४)।

गौतम! द्रव्यलिंग की अपेक्षा भी और भावलिंग की अपेक्षा भी स्वलिंग में होता है, अन्यलिंग में नहीं होता, गृहिलिंग में नहीं होता। शेष दो सूक्ष्मसम्पराय-संयत और यथाख्यात की सामायिक-संयत की भांति वक्तव्यता (भ. २५/४७४)।

शरीर-पद

४७६. भन्ते! सामायिक-संयत कितने शरीरों से संपन्न होता है?

गौतम! सामायिक-संयत तीन शरीरों अथवा चार शरीरों अथवा पांच शरीरों से संपन्न होता हैं जैसे कषाय-कुशील की वक्तव्यता (भ. २५/३२५)। इसी प्रकार छेदोपस्थापनिक-संयत की भी वक्तव्यता। शेष (परिहारविशुद्धिक-संयत, सूक्ष्मसम्पराय-संयत और यथाख्यात--संयत) की पुलाक की भांति वक्तव्यता (भ. २५/३२३)।

क्षेत्र-पद

४७७. भन्ते! क्या सामायिक-संयत कर्मभूमि में उत्पन्न होता है? अकर्मभूमि में उत्पन्न होता है?

गौतम! जन्म और सद्भाव की अपेक्षा बकुश की भांति वक्तव्यता (भ. २५/३२७)। इसी प्रकार छेदोपस्थापनिक-संयत की भी वक्तव्यता। परिहारविशुद्धिक-संयत पुलाक की भांति वक्तव्यता। शेष दो (सूक्ष्मसम्पराय-संयत और यथाख्यात-संयत) की सामायिक-संयत की भांति वक्तव्यता (भ. २५/४७६)।

काल-पद

४७८. भन्ते! सामायिक-संयत क्या अवसर्पिणि-काल में होता है? उत्सर्पिणि-काल में होता है? नो-अवसर्पिणि—नो-उत्सर्पिणि-काल में होता है?

गौतम! अवसर्पिणि-काल में, बकुश भांति वक्तव्यता (भ. २५/३३२-३२५)। इसी प्रकार छेदोपस्थापनिक-(संयत) की भी वक्तव्यता, केवल इतना विशेष है—जन्म और सद्भाव की अपेक्षा चारों ही प्रतिभागों में नहीं होता, संहरण की अपेक्षा किसी भी एक भाग में हो सकता है, शेष पूर्ववत्।

४७९. परिहारविशुद्धिक-(संयत).........? पृच्छा (भ. २५/४७८)।

गौतम! अवसर्पिणि-काल में होता है अथवा उत्सर्पिणि-काल में होता है, नो--अवसर्पिणि—नो-उत्सर्पिणि-काल में नहीं होता। यदि अवसर्पिणि-काल में होता है—पुलाक की भांति वक्तव्यता (भ. २५/३२९)। उत्सर्पिणि-काल में भी पुलाक की भांति वक्तव्यता (भ. २५/३३०) सूक्ष्मसम्परायिक-(संयत) की भांति वक्तव्यता। इसी प्रकार यथाख्यात--(संयत) की भी वक्तव्यता।

गति-पद

४८०. भन्ते! सामायिक-संयत काल-गत होने पर किस गति को प्राप्त होता है?

गौतम! देव-गति को प्राप्त होता है।

४८१. सामायिक-संयत देव-गति को प्राप्त होता है तो क्या भवनवासी-देवों में उपपन्न होता है? वानमन्तर-देवों में उपपन्न होता है? ज्यौतिष्क-देवों में उपपन्न होता है? वैमानिक-देवों में उपपन्न होता है?

गौतम! सामायिक-संयत (भवनवासी में) उपपन्न नहीं होता जैसे कषायकुशील की वक्तव्यता (भ. २५/३३७)। इसी प्रकार छेदोपस्थापनिक-संयत की वक्तव्यता। परिहारविशुद्धिक-संयत की पुलाक की भांति वक्तव्यता (भ. २५/३३६,३३७)। सूक्ष्मसम्पराय-संयत की निर्ग्रन्थ की भांति वक्तव्यता (भ. २५/३३७)।

४८२. यथाख्यात ....? पृच्छा (भ. २५/४८०,४८१)।

गौतम! इसी प्रकार यथाख्यात-संयत की भी वक्तव्यता। यावत् अजघन्य—अनुत्कृष्ट रूप में केवल अनुत्तर-विमान में उपपन्न होता है, कुछेक सिद्ध होते हैं यावत् सर्व दुःखों का अन्त करते हैं।

४८३. भन्ते! सामायिक-संयत-देव रूप में उपपन्न होता है तो क्या इन्द्र के रूप में उपपन्न होता है? (सामानिक-, त्रायत्रिंश-, लोकपाल-, अहमिन्द्र-देव के रूप में उपपन्न हो सकता है)......? पृच्छा (भ. २५/३३९)।

गौतम! अविराधना की अपेक्षा (इन्द्र के रूप में उपपन्न होता है यावत् अहमिन्द्र के रूप में भी उत्पन्न होता है) कषायकुशील की वक्तव्यता (भ. २५/३४०)। इसी प्रकार छेदोपस्थापनिक-(संयत) की भी वक्तव्यता। परिहार-विशुद्धिक-(संयत) की पुलाक की भांति वक्तव्यता (भ. २५/३३९)। शेष दो (सूक्ष्मसम्पराय-संयत और यथाख्यात-संयत) के विषय में निर्ग्रन्थ की तरह बतलाना चाहिए (भ. २५/३४१)।

४८४. भन्ते! देव-लोकों में उपपद्यमान सामायिक-संयत की स्थिति कितने काल की प्रज्ञप्त है?

गौतम! जघन्यतः दो पल्योपम, उत्कृष्टतः तैंतीस सागरोपम। इसी प्रकार छेदोपस्थापनिक--(संयत) की भी वक्तव्यता।

४८५. परिहारविशुद्धिक ....? पृच्छा (भ. २५/४८४)।

गौतम! जघन्यतः दो पल्योपम, उत्कृष्टतः अट्ठारह सागरोपम। शेष दोनों (सूक्ष्मसम्पराय--संयत और यथाख्यात-संयत) की निर्ग्रन्थ की भांति वक्तव्यता (भ. २५/३४५)।

संयमस्थान-पद

४८६. भन्ते! सामायिक-संयत के कितने संयम-स्थान प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! सामायिक-संयत के असंख्येय संयम-स्थान प्रज्ञप्त हैं। इसी प्रकार यावत् परिहार--विशुद्धिक-संयत के संयम-स्थानों की वक्तव्यता।

४८७. सूक्ष्मसम्पराय-संयत........? पृच्छा (भ. २५/४८६)।

गौतम! सूक्ष्मसम्पराय-संयत के अन्तर्मुहूर्त्त स्थिति वाले असंख्येय संयम-स्थान प्रज्ञप्त हैं।

४८८. यथाख्यात-संयत........? पृच्छा (भ. २५/४८६)।

गौतम! अजघन्य-अनुत्कृष्ट रूप में केवल एक संयम-स्थान प्रज्ञप्त है।

४८९. भन्ते! इन सामायिक-, छेदोपस्थापनिक-, परिहारविशुद्धिक-, सूक्ष्मसम्पराय- और यथाख्यात-संयतों के संयम-स्थानों में कौन-किनसे अल्प? बहुत? तुल्य? या विशेषाधिक हैं?

गौतम! इनमें यथाख्यात-संयत का अजघन्य-अनुत्कृष्ट केवल एक संयम-स्थान सबसे अल्प है, सूक्ष्मसम्पराय-संयत के अन्तर्मुहूर्त्त स्थिति वाले संयम-स्थान उससे असंख्येय-गुणा हैं, परिहारविशुद्धिक-संयत के संयम-स्थान इनसे असंख्येय-गुणा हैं, सामायिक-संयत और छेदोपस्थापनिक-संयत—इन दोनों के संयम-स्थान परस्पर तुल्य तथा परिहारविशुद्धिक-संयत के संयम-स्थानों से असंख्येय-गुणा हैं।

निकर्ष-पद

४९०. भन्ते! सामायिक-संयत के कितने चारित्र-पर्यव प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! अनन्त चारित्र-पर्यव प्रज्ञप्त हैं। इसी प्रकार यावत् यथाख्यात-संयत के चारित्र-पर्यवों की वक्तव्यता।

४९१. भन्ते! एक सामायिक-संयत सजातीय संयम-स्थानों के संयोजन की अपेक्षा दूसरे सामायिक-संयत के चारित्र-पर्यवों से क्या हीन है? तुल्य है? अभ्यधिक है?

गौतम! स्यात् हीन है—षट्स्थानपतित (भ. २५/३५०) की वक्तव्यता।

४९२. भन्ते! सामायिक-संयत विजातीय संयम-स्थानों के संयोजन की अपेक्षा छेदोपस्थापनिक-संयत के चारित्र-पर्यवों से (क्या हीन है? तुल्य है? अभ्यधिक है?)......पृच्छा (भ. २५/४९१)।

गौतम! स्यात् हीन है—षट्स्थान पतित (भ. २५/३५०) की वक्तव्यता। इसी प्रकार परिहारविशुद्धिक-संयत की भी वक्तव्यता।

४९३. भन्ते! सामायिक-संयत विजातीय संयम-स्थानों के संयोजन की अपेक्षा सूक्ष्मसम्पराय--संयत के चारित्र-पर्यवों से (क्या हीन है?......) पृच्छा (भ. २५/४९१)।

गौतम! हीन है, तुल्य नहीं है, अभ्यधिक नहीं है, अनन्त-गुणा-हीन है। इसी प्रकार यथाख्यात-संयत के चारित्र-पर्यवों की वक्तव्यता।

इसी प्रकार छेदोपस्थापनिक-संयत की भी अधोवर्ती तीनों (सामायिक-संयत, छेदोपस्थापनिक-संयत, परिहारविशुद्धिक-संयत) से षट्स्थान-पतित तथा उपरिवर्ती दो (सूक्ष्मसम्पराय-संयत और यथाख्यात-संयत) से उसी प्रकार (भ. २५/४९३) की भांति अनन्त-गुणा-हीन वक्तव्य है। परिहार-विशुद्धिक-संयत की छेदोपस्थापनिक-संयत की भांति वक्तव्यता।

४९४. भन्ते! सूक्ष्मसम्पराय-संयत विजातीय संयम स्थानों के संयोजन की अपेक्षा सामायिक--संयत के चारित्र-पर्यवों से (क्या हीन है?........) पृच्छा (भ. २५/४९३)।

गौतम! हीन नहीं है, तुल्य नहीं है, अभ्यधिक है—अनन्त-गुणा अभ्यधिक है। इसी प्रकार छेदोपस्थापनिक-संयत और परिहारविशुद्धिक-संयत की तुल्य वक्तव्यता। अपने सजातीय स्थान वाले स्यात् हीन है, तुल्य नहीं होता, स्यात् अभ्यधिक है। यदि हीन है तो अनन्त--गुणा हीन है, यदि अभ्यधिक है तो अनन्त-गुणा अभ्यधिक।

४९५. सूक्ष्मसम्पराय-संयत विजातीय संयम-स्थानों के संयोजन की अपेक्षा यथाख्यात-संयत ....? पृच्छा। (भ. २५/४९४)

गौतम! हीन है, तुल्य नहीं है, अभ्यधिक नहीं है, अनन्त-गुणा-हीन है। यथाख्यात-संयत विजातीय संयम-स्थानों की अपेक्षा अधोवर्ती चारों संयतों (सामायिक-संयत, छेदोपस्थापनिक-संयत, परिहारविशुद्धिक-संयत और सूक्ष्मसम्पराय-संयत) के चारित्र-पर्यवों से हीन नहीं है, तुल्य नहीं है, अभ्यधिक है—अनन्त-गुणा-अभ्यधिक है। यथाख्यात-संयत सजातीय संयम-स्थानों के संयोजन की अपेक्षा चारित्र-पर्यवों से हीन नहीं है, तुल्य है, अभ्यधिक नहीं है।

४९६. भन्ते! इन सामायिक-, छेदोपस्थापनिक-, परिहारविशुद्धिक-, सूक्ष्मसम्पराय- और यथाख्यात-संयतों के जघन्य और उत्कृष्ट चारित्र-पर्यवों में कौन-किनसे अल्प? बहुत? तुल्य? या विशेषाधिक है?

गौतम! (१,२) सामायिक-संयत और छेदोपस्थापनिक-संयत—इन दोनों के जघन्य चारित्र--पर्यव परस्पर तुल्य और सबसे अल्प होते हैं। (३) परिहारविशुद्धिक-संयत के जघन्य चारित्र-पर्यव इनसे अनन्त-गुणा होते हैं। (४) उसके (परिहारविशुद्धिक-संयत के) ही उत्कृष्ट चारित्र-पर्यव इनसे अनन्त-गुणा होते हैं। (५,६) सामायिक-संयत और छेदोपस्थापनिक--संयत इन दोनों के उत्कृष्ट चारित्र-पर्यव परस्पर तुल्य और इनसे अनन्त-गुणा होते हैं। (७) सूक्ष्मसम्पराय-संयत के जघन्य चारित्र-पर्यव इनसे अनन्त-गुणा होते हैं। (८) उसके (सूक्ष्मसम्पराय-संयत के) ही उत्कृष्ट चारित्र-पर्यव इनसे अनन्त-गुणा होते हैं। (९) यथाख्यात-संयत के अजघन्य-अनुत्कृष्ट केवल एक चारित्र-पर्यव इनसे अनन्त-गुणा होता है।

योग-पद

४९७. भन्ते! क्या सामायिक-संयत सयोगी होता है? अयोगी होता है?

गौतम! सयोगी होता है, पुलाक की भांति वक्तव्यता (भ. २५/३६३,३६४)। इसी प्रकार यावत् सूक्ष्मसम्पराय-संयत की वक्तव्यता। यथाख्यात-संयत की स्नातक की भांति वक्तव्यता (भ. २५/३६५)।

उपयोग-पद

४९८. भन्ते! क्या सामायिक-संयत साकार-उपयोग वाला होता है? अनाकार-उपयोग वाला होता है?

गौतम! साकार-उपयोग वाला होता है, पुलाक की भांति वक्तव्यता (भ. २५/३६६)। इसी प्रकार यावत् यथाख्यात-संयत की वक्तव्यता, केवल इतना विशेष है—सूक्ष्मसम्पराय-संयत साकार-उपयोग वाला होता है, अनाकार-उपयोग वाला नहीं होता।

कषाय-पद

४९९. भन्ते! क्या सामायिक-संयत कषाय-सहित होता है? कषाय-रहित होता है?

गौतम! कषाय-सहित होता है, कषाय-रहित नहीं होता। कषाय-कुशील की भांति वक्तव्यता (भ. २५/३६९,३७०)। इसी प्रकार छेदोपस्थापनिक-संयत की भी वक्तव्यता। परिहार--विशुद्धिक-संयत की पुलाक की भांति वक्तव्यता (भ. २५/३६७,३६८)।

५००. सूक्ष्मसम्पराय-संयत ....? पृच्छा (भ. २५/४९९)।

गौतम! कषाय-सहित होता है, कषाय-रहित नहीं होता।

५०१. यदि कषाय-सहित होता है तो भन्ते! वह कितने कषायों से युक्त होता है?

गौतम! केवल एक संज्वलन-लोभ-युक्त होता है। यथाख्यात-संयत की निर्ग्रन्थ की भांति वक्तव्यता (भ. २५/३७१,३७२)।

लेश्या-पद

५०२. भन्ते! क्या सामायिक-संयत लेश्या-सहित होता है? लेश्या-रहित होता है?

गौतम! सामायिक-संयत लेश्या-सहित होता है (भ. २५/३७५,३७६) कषाय-कुशील की भांति वक्तव्यता। इसी प्रकार छेदोपस्थापनिक-संयत की भी वक्तव्यता। परिहारविशुद्धिक--संयत की पुलाक की भांति (भ. २५/३७३,३७४)। सूक्ष्मसम्पराय-संयत की निर्ग्रन्थ की भांति (भ. २५/३७७,३७८)। यथाख्यात-संयत की स्नातक की भांति वक्तव्यता (भ. २५/३७९,३८०), केवल इतना विशेष है–यदि लेश्या-युक्त होता है तो केवल एक शुक्ल--लेश्या-युक्त होता है।

परिणाम-पद

५०३. भन्ते! क्या सामायिक-संयत वर्धमान-परिणाम वाला होता है? हीयमान-परिणाम वाला होता है? अवस्थित-परिणाम वाला होता है?

गौतम! वर्धमान-परिणाम वाला होता है पुलाक की भांति वक्तव्यता (भ. २५/३८१)। इसी प्रकार यावत् परिहारविशुद्धिक-संयत की भी वक्तव्यता।

५०४. सूक्ष्मसम्पराय-संयत........पृच्छा (भ. २५/५०३)।

गौतम! वर्धमान-परिणाम वाला होता है अथवा हीयमान-परिणाम वाला होता है, अवस्थित--परिणाम वाला नहीं होता। यथाख्यात-संयत की निर्ग्रन्थ की भांति वक्तव्यता (भ. २५/३८२)।

५०५. भन्ते! सामायिक-संयत कितने काल तक वर्धमान-परिणाम वाला होता है?

गौतम! जघन्यतः एक समय... पुलाक की भांति वक्तव्यता (भ. २५/३८३)। इसी प्रकार यावत् परिहार-विशुद्धिक-संयत की वक्तव्यता।

५०६. भन्ते! सूक्ष्मसम्पराय-संयत कितने काल तक वर्धमान-परिणाम वाला होता है?

गौतम! जघन्यतः एक समय, उत्कृष्टतः अन्तर्मुहूर्त।

५०७. सूक्ष्मसम्पराय-संयत कितने काल तक हीयमान-परिणाम वाला होता है?

पूर्ववत् (भ. २५/५०६)।

५०८. भन्ते! यथाख्यात-संयत कितने काल तक वर्धमान-परिणाम वाला होता है?

गौतम! जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त्त, उत्कृष्टतः भी अन्तर्मुहूर्त्त।

५०९. (भंते!) यथाख्यात-संयत कितने काल तक अवस्थित-परिणाम वाला होता है?

गौतम! जघन्यतः एक समय, उत्कृष्टतः देशोन-कोटि-पूर्व।

बन्ध-पद

५१०. भन्ते! सामायिक-संयत कितनी कर्म-प्रकृतियों का बन्ध करता है?

गौतम! सात प्रकार की कर्म-प्रकृतियों का बंध करता है अथवा आठ प्रकार की कर्म-प्रकृतियों का बंध करता है, बकुश की भांति वक्तव्यता (भ. २५/३९१)। इसी प्रकार यावत् परिहारविशुद्धिक-संयत की वक्तव्यता।

५११. सूक्ष्मसम्पराग-संयत ....? पृच्छा (भ. २५/५१०)।

गौतम! आयुष्य- और मोहनीय-कर्म को छोड़कर छह प्रकार की कर्म-प्रकृतियों का बंध करता है। यथाख्यात-संयत की स्नातक की भांति वक्तव्यता (भ. २५/३९४)।

वेदन-पद

५१२. भन्ते! सामायिक-संयत कितनी कर्म-प्रकृतियों का वेदन करता है?

गौतम! नियमतः आठ कर्म-प्रकृतियों का वेदन करता है। इसी प्रकार यावत् सूक्ष्मसम्पराय--संयत की वक्तव्यता।

५१३. यथाख्यात संयत........? पृच्छा (भ. २५/५१२)।

गौतम! सात प्रकार की कर्म-प्रकृतियों का वेदन करता है अथवा चार प्रकार की कर्म-प्रकृतियों का वेदन करता है। वह सात कर्म-प्रकृतियों का वेदन करता है तो मोहनीय कर्म को छोड़कर सात कर्म-प्रकृतियों का वेदन करता है, चार कर्म-प्रकृतियों का वेदन करता है तो वेदनीय, आयुष्य, नाम और गोत्र—इन चार कर्म-प्रकृतियों का वेदन करता है।

उदीरणा-पद

५१४. भन्ते! सामायिक-संयत कितनी कर्म-प्रकृतियों की उदीरणा करता है?

गौतम! बकुश-निर्ग्रन्थ की तरह सात प्रकार की कर्म-प्रकृतियों की उदीरणा करता है........ (भ. २५/३९९)। इसी प्रकार यावत् परिहारविशुद्धिक-संयत की वक्तव्यता।

५१५. सूक्ष्मसम्पराय-संयत ....? पृच्छा (भ. २५/५१४)।

गौतम! छह प्रकार की कर्म-प्रकृतियों की उदीरणा करता है अथवा पांच प्रकार की कर्म--प्रकृतियों की उदीरणा करता है। छह कर्म-प्रकृतियों की उदीरणा करता है तो वह आयुष्य-- और वेदनीय-कर्म को छोड़कर छह कर्म-प्रकृतियां की उदीरणा करता है, पांच कर्म-

-प्रकृतियों की उदीरणा करता है तो वह आयुष्य-, वेदनीय- और मोहनीय-कर्म को छोड़कर पांच कर्म-प्रकृतियों की उदीरणा करता है।

५१६. यथाख्यात-संयत ....? पृच्छा (भ. २५/५१४)।

गौतम! पांच प्रकार की कर्म-प्रकृतियों की उदीरणा करता है अथवा दो प्रकार की कर्म--प्रकृतियों की उदीरणा करता है अथवा उदीरणा नहीं भी करता। पांच कर्म-प्रकृतियों की उदीरणा करता है तो आयुष्य-, वेदनीय- और मोहनीय-कर्म को छोड़कर (पांच कर्म--प्रकृतियों की उदीरणा करता है।) (यथाख्यात-संयत के विषय में) शेष निर्ग्रन्थ की भांति वक्तव्यता (भ. २५/४०१)।

उपसंपद्-हान-पद

५१७. भन्ते! सामायिक-संयतत्व का परित्याग करता हुआ सामयिक-संयत किसका परित्याग करता है, किसे उपसंपन्न करता है?

गौतम! वह सामायिक-संयतत्व का परित्याग करता है, छेदोपस्थापनिक-संयतत्व अथवा सूक्ष्मसम्पराग-संयतत्व अथवा असंयम अथवा संयमासंयम को उपसंपन्न करता है।

५१८. छेदोपस्थापनिक ....? पृच्छा (भ. २५/५१७)।

गौतम! छेदोपस्थापनिक-संयतत्व का परित्याग करता है, सामायिक-संयतत्व अथवा परिहार--विशुद्धिक-संयतत्व अथवा सूक्ष्मसम्पराय-संयतत्व अथवा असंयम अथवा संयमासंयम को उपसंपन्न करता है।

५१९. परिहारविशुद्धिक-संयत.........? पृच्छा (भ. २५/५१७)।

गौतम! परिहारविशुद्धिक-संयतत्व का परित्याग करता है, छेदोपस्थापनिक-संयतत्व अथवा असंयम को उपसंपन्न करता है।

५२०. सूक्ष्मसम्पराय-संयत ....? पृच्छा (भ. २५/५१७)।

गौतम! सूक्ष्मसम्पराय-संयतत्व का परित्याग करता है, सामायिक-संयतत्व अथवा छेदोपस्थापनिक-संयतत्व अथवा यथाख्यात-संयतत्व अथवा असंयम को उपसंपन्न करता है।

५२१. यथाख्यात-संयत ....? पृच्छा (भ. २५/५१७)।

गौतम! यथाख्यात-संयतत्व का परित्याग करता है, सूक्ष्मसम्पराय-संयतत्व अथवा असंयम अथवा सिद्धि-गति को उपसंपन्न करता है।

संज्ञा-पद

५२२. भन्ते! सामायिक-संयत क्या संज्ञोपयुक्त होता है? नो-संज्ञोपयुक्त होता है?

गौतम! संज्ञोपयुक्त होता है, बकुश की भांति वक्तव्यता (भ. २५/४१०)। इसी प्रकार यावत् परिहारविशुद्धिक-संयत की वक्तव्यता। सूक्ष्मसम्पराय-संयत और यथाख्यात-संयत की पुलाक की भांति वक्तव्यता (भ. २५/४०९)।

आहार-पद

५२३. भन्ते! सामायिक-संयत क्या आहारक होता है? अनाहारक होता है? पुलाक की भांति वक्तव्यता (**भ.** २५/४११)। इसी प्रकार यावत् सूक्ष्मसम्पराय-संयत की वक्तव्यता। यथाख्यात-संयत की स्नातक की भांति वक्तव्यता (**भ.** २५/४१२)।

भव-पद

५२४. भन्ते! सामायिक-संयत कितने जन्मों में होता है?

गौतम! जघन्यतः एक, उत्कृष्टतः आठ जन्मों में होता। इसी प्रकार छेदोपस्थानिक-संयत की वक्तव्यता।

५२५. परिहारविशुद्धिक-संयत..........? पृच्छा (**भ.** २५/५२४)।

गौतम! जघन्यतः एक, उत्कृष्टतः तीन जन्मों में होता है। इसी प्रकार यावत् यथाख्यात-संयत की वक्तव्यता।

आकर्ष-पद

५२६. भन्ते! सामायिक-संयत के एक भव में कितने आकर्ष-स्पर्श--सामायिक-संयतत्व के स्पर्श प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! जघन्यतः एक, बकुश की भांति वक्तव्यता (**भ.** २५/४१७)।

५२७. छेदोपस्थापनिक-संयत.......? पृच्छा (**भ.** २५/५२६)।

गौतम! जघन्यतः एक, उत्कृष्टतः पृथक्त्व-बीस (एक सौ बीस) आकर्ष।

५२८. परिहारविशुद्धिक-संयत ....? पृच्छा (**भ.** २५/५२६)।

गौतम! जघन्यतः एक, उत्कृष्टतः तीन आकर्ष।

५२९. सूक्ष्मसम्पराय-संयत.......? पृच्छा (**भ.** २५/५२६)।

गौतम! जघन्यतः एक, उत्कृष्टतः चार आकर्ष।

५३०. यथाख्यात-संयत ....? पृच्छा (**भ.** २५/५२६)।

गौतम! जघन्यतः एक, उत्कृष्टतः दो आकर्ष।

५३१. भन्ते! सामायिक-संयत के अनेक जन्मों में कितने आकर्ष—सामायिक-संयतत्व के स्पर्श प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! बकुश की भांति वक्तव्यता (**भ.** २५/४२१)।

५३२. छेदोपस्थापनिक-संयत ....? पृच्छा (**भ.** २५/५३१)।

गौतम! जघन्यतः दो, उत्कृष्टतः नौ सौ से अधिक और हजार से कम (नौ सौ साठ) आकर्ष। परिहारविशुद्धिक-संयत के जघन्यतः दो, उत्कृष्टतः सात आकर्ष। सूक्ष्मसम्पराय-संयत के जघन्यतः दो, उत्कृष्टतः नव आकर्ष। यथाख्यात-संयत के जघन्यतः दो, उत्कृष्टतः पांच आकर्ष होते हैं।

काल-पद

५३३. भन्ते! (एक) सामायिक-संयत काल की अपेक्षा से कितने काल तक रहता है?

गौतम! जघन्यतः एक समय, उत्कृष्टतः देशोन-नव-वर्ष कम कोटि-पूर्व। इसी प्रकार (एक) छेदोपस्थापनिक-संयत की भी वक्तव्यता। (एक) परिहारविशुद्धिक-संयत जघन्यतः एक समय, उत्कृष्टतः देशोन-ऊनतीस वर्ष कम कोटि-पूर्व। (एक) सूक्ष्मसम्पराय-संयत की निर्ग्रन्थ की भांति (भ. २५/४२६), (एक) यथाख्यात-संयत की सामायिक संयत की भांति वक्तव्यता (भ. २५/५३३)।

५३४. भन्ते! (अनेक) सामायिक-संयत काल की अपेक्षा से कितने काल तक रहते हैं?

गौतम! सर्वकाल।

५३५. (अनेक) छेदोपस्थापनिक-संयत..........? पृच्छा (भ. २५/५३४)।

गौतम! जघन्यतः अढाई-सौ-वर्ष, उत्कृष्टतः पचास-लाख-कोटि-सागरोपम।

५३६. (अनेक) परिहारविशुद्धिक-संयत ....? पृच्छा (भ. २५/५३४)।

गौतम! जघन्यतः देशोन-दो-सौ-वर्ष, उत्कृष्टतः देशोन-दो-कोटि-पूर्व।

५३७. (अनेक) सूक्ष्मसम्पराग-संयत............? पृच्छा। (भ. २५/५३४)

गौतम! जघन्यतः एक समय, उत्कृष्टतः अन्तर्मुहूर्त। (अनेक) यथाख्यात-संयतों की (अनेक) सामायिक-संयतों की भांति वक्तव्यता।

अन्तर-पद

५३८. भन्ते! (एक) सामायिक-संयत के पुनः सामायिक-संयत होने में कितने काल का अन्तर होता है?

गौतम! पुलाक की भांति जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त.....(भ. २५/४३०)। इसी प्रकार यावत् (एक) यथाख्यात-संयत की वक्तव्यता।

५३९. भन्ते! (अनेक) सामायिक-संयतों ....? पृच्छा।

गौतम! कोई अन्तर नहीं होता।

५४०. भन्ते! (अनेक) छेदापेस्थापनिक-संयत.........? पृच्छा (भ. २५/५३९)।

गौतम! जघन्यतः तिरेसठ हजार वर्ष, उत्कृष्टतः अठारह-क्रोड़ाक्रोड़-सागरोपम।

५४१. (अनेक) परिहारविशुद्धिक-संयत ....? पृच्छा।

गौतम! जघन्यतः चौरासी-हजार-वर्ष, उत्कृष्टतः अठारह-क्रोड़ाक्रोड़-सागरोपम। (अनेक) सूक्ष्मसम्पराय-संयतों की निर्ग्रन्थों की भांति वक्तव्यता। (भ. २५/४३४)। (अनेक) यथाख्यात-संयतों की सामायिक-संयतों की भांति वक्तव्यता (भ. २५/५३९)।

समुद्घात-पद

५४२. भन्ते! सामायिक-संयत के कितने समुद्घात प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! छह समुद्घात प्रज्ञप्त हैं, कषाय-कुशील की भांति वक्तव्यता (भ. २५/४३७)। इसी

प्रकार छेदोपस्थापनिक-संयत की भी वक्तव्यता। परिहारविशुद्धिक-संयत की पुलाक की भांति वक्तव्यता (भ. २५/४३५)। सूक्ष्मसम्पराय-संयत की निर्ग्रन्थ की भांति वक्तव्यता (भ. २५/४३८)। यथाख्यात-संयत की स्नातक की भांति वक्तव्यता (भ. २५/४३९)।

क्षेत्र-पद

५४३. भन्ते! सामायिक-संयत क्या लोक के संख्यातवें भाग में होता है, असंख्यातवें भाग में होता है?......पृच्छा। (भ. २५/४४०)

गौतम! संख्यातवें भाग में नहीं होता पुलाक की भांति वक्तव्यता (भ. २५/४४०)। इसी प्रकार यावत् सूक्ष्मसम्पराय-संयत की वक्तव्यता। यथाख्यात-संयत की स्नातक की भांति वक्तव्यता (भ. २५/४४१)।

स्पर्शना-पद

५४४. भन्ते! कया सामायिक-संयत लोक के संख्यातवें भाग का स्पर्श करता है?

पांचों प्रकार के संयतों की जैसे होने की वक्तव्यता (भ.२५/५४३) वैसे स्पर्श की वक्तव्यता।

भाव-पद

५४५. भन्ते! सामायिक-संयत कौन से भाव में होता है?

गौतम! क्षायोपशमिक-भाव में होता है। इसी प्रकार यावत् सूक्ष्मसंपराय-संयत की वक्तव्यता।

५४६. यथाख्यात-संयत ....? पृच्छा (भ. २५/५४५)।

गौतम! औपशमिक-भाव में होता है अथवा क्षायिक-भाव में होता है।

परिमाण-पद

५४७. भन्ते! सामायिक-संयत एक समय में कितने होते हैं?

गौतम! प्रतिपाद्यमान की अपेक्षा कषाय-कुशील की भांति निरवशेष वक्तव्यता (भ. २५/४४८)।

५४८. छेदोपस्थापनिक-संयत ....? पृच्छा (भ. २५/५४७)।

गौतम! प्रतिपद्यमान की अपेक्षा स्यात् होते हैं, स्यात् नहीं होते। यदि होते हैं तो जघन्यतः एक अथवा दो अथवा तीन, उत्कृष्टतः पृथक्त्व-सौ (दो सौ से नौ सौ तक) होते हैं। छेदोपस्थापनिक-संयत पूर्व प्रतिपद्यमान की अपेक्षा स्यात् होते हैं, स्यात् नहीं होते। यदि होते हैं तो जघन्यतः पृथक्त्व-सौ-कोटि (दो सौ से नौ सौ कोटि) होते हैं, उत्कृष्टतः भी पृथक्त्व--सौ-कोटि। परिहारविशुद्धिक-संयत पुलाक (भ. २५/४४६) की भांति वक्तव्यता। सूक्ष्मसम्पराय-संयत निर्ग्रंथ की भांति वक्तव्यता (भ. २५/४४९)।

५४९. यथाख्यात-संयत ....? पृच्छा (भ. २५/५४७)।

गौतम! प्रतिपद्यमान पर्याय की अपेक्षा स्यात् होते हैं, स्यात् नहीं होते। यदि होते हैं तो जघन्यतः एक अथवा दो अथवा तीन, उत्कृष्टतः एक-सौ-बासठ—एक-सौ-आठ यथाख्यात--संयत क्षपक-श्रेणी वाले होते हैं और चौपन यथाख्यात-संयत उपशम-श्रेणी वाले होते हैं।

यथाख्यात-संयत पूर्व प्रतिपद्यमान की अपेक्षा जघन्यतः पृथक्त्व-कोटि (दो करोड़ से नौ करोड़ तक) होते हैं, उत्कृष्टतः भी पृथक्त्व-कोटि होते हैं।

अल्पबहुत्व-पद

५५०. भन्ते! इन सामायिक-, छेदोपस्थापनिक-, परिहारविशुद्धिक-, सूक्ष्मसम्पराय- और यथाख्यात-संयतों में कौन-किनसे अल्प? बहुत? तुल्य? अथवा विशेषाधिक हैं?

गौतम! सूक्ष्मसम्पराय-संयत सबसे अल्प हैं, परिहारविशुद्धिक-संयत इनसे संख्येय-गुणा हैं, यथाख्यात-संयत इनसे संख्येय-गुणा हैं, छेदोपस्थापनिक-संयत इनसे संख्येय-गुणा हैं, सामायिक-संयत इनसे संख्येय-गुणा हैं।

संग्रहणी-गाथा

प्रतिषेवणा दोष, आलोचना, आलोचनार्ह, सामाचारी, प्रायश्चित्त और तप—अग्रिम सूत्रों में ये छह विषय प्रतिपादित है।

प्रतिषेवणा-पद

५५१. भन्ते! प्रतिषेवणा कितने प्रकार की प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! प्रतिषेवणा दस प्रकार की प्रज्ञप्त हैं, जैसे—१. दर्प-प्रतिषेवणा—दर्प (उद्धतभाव) से किया जाने वाला प्राणातिपात आदि का आसेवन। २. प्रमाद-प्रतिषेवणा—कषाय, विकथा आदि से किया जाने वाला प्राणातिपात आदि का आसेवन। ३. अनाभोग-प्रतिषेवणा—विस्मृतिवश किया जाने वाला प्राणातिपात आदि का आसेवन। ४. आतुर-प्रतिषेवणा—भूख-प्यास और रोग से अभिभूत होकर किया जाने वाला प्राणातिपात आदि का आसेवन। ५. आपत्-प्रतिषेवणा—आपदा प्राप्त होने पर किया जाने वाला प्राणातिपात आदि का आसेवन। ६. संकीर्ण-प्रतिषेवणा—एषणीय आहार आदि को भी व्याकुलता-सहित लेने से होने वाला प्राणातिपात आदि का आसेवन। ७. सहसाकरण-प्रतिषेवणा—अकस्मात् होने वाला प्राणातिपात आदि का आसेवन। ८. भय-प्रतिषेवणा—भयवश होने वाला प्राणातिपात आदि का आसेवन। ९. प्रदोष-प्रतिषेवणा—क्रोध आदि कषाय से किया जाने वाला प्राणातिपात आदि का आसेवन। १०. विमर्श-प्रतिषेवणा—शिष्यों की परीक्षा के लिए किया जाने वाला प्राणातिपात आदि का आसेवन।

आलोचना-पद

५५२. आलोचना के दस दोष प्रज्ञप्त हैं, जैसे—

१. आकम्प्य—सेवा आदि के द्वारा आलोचना देने वाले की आराधना कर आलोचना करना। २. अनुमान्य—मैं दुर्बल हूं, मुझे थोड़ा प्रायश्चित्त देना—इस प्रकार अनुनय कर आलोचना करना। ३. यद्दृष्ट—आचार्य आदि द्वारा जो दोष देखा गया है—उसी की आलोचना करना। ४. बादर—केवल बड़े दोषों की आलोचना करना। ५. सूक्ष्म—केवल छोटे दोषों की आलोचना करना। ६. छन्न—आचार्य न सुन पाए वैसे आलोचना करना। ७. शब्दाकुल—जोर-जोर से बोलकर दूसरे अगीतार्थ साधु सुने वैसे आलोचना करना। ८. बहुजन—एक के पास आलोचना कर फिर उसी दोष की दूसरे के पास आलोचना करना।

९. अव्यक्त—अगीतार्थ के पास दोषों की आलोचना करना। १०. तत्सेवी—आलोचना देने वाले जिन दोषों का स्वयं सेवन करते हैं, उनके पास उन दोषों की आलोचना करना।

५५३. दस स्थानों (गुणों) से सम्पन्न अनगार अपने दोष की आलोचना करने के योग्य होता है, जैसे—१. जाति-सम्पन्न, २. कुल-सम्पन्न, ३. विनय-सम्पन्न, ४. ज्ञान-सम्पन्न, ५. दर्शन-सम्पन्न, ६. चारित्र-सम्पन्न, ७. क्षान्त, ८. दान्त, ९. अमायावी १०. अपश्चानुतापी—अपराध की आलोचना कर पश्चात्ताप न करने वाला।

५५४. आठ स्थानों से सम्पन्न अनगार आलोचना देने के योग्य होता है जैसे—१. आचारवान्—ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप और वीर्य—इन पांच आचारों से युक्त। २. आधारवान्—आलोचना लेने वाले के द्वारा आलोच्यमान समस्त अतिचारों को जानने वाला। ३. व्यवहारवान्—आगम, श्रुत, आज्ञा, धारणा और जीत—इन पांच व्यवहारों को जानने वाला। ४. अपव्रीडक—आलोचना करने वाले व्यक्ति में, वह लाज या संकोच से मुक्त होकर सम्यक् आलोचना कर सके, वैसा साहस उत्पन्न करने वाला। ५. प्रकारी—आलोचना करने पर विशुद्धि कराने वाला। ६. अपरिश्रावी—आलोचना करने वाले के आलोचित दोषों को दूसरों के सामने प्रगट न करने वाला। ७. निर्यापक—बड़े प्रायश्चित्त को भी निभा सके—ऐसा सहयोग देने वाला। ८. अपायदर्शी—प्रायश्चित्त-भङ्ग से तथा सम्यक् आलोचना न करने से उत्पन्न दोषों को बताने वाला।

सामाचारी-पद

५५५. सामाचारी दस प्रकार की प्रज्ञप्त हैं, जैसे—

१. इच्छा—कार्य करने या कराने में इच्छाकार का प्रयोग। २. मिथ्या—भूल हो जाने पर स्वयं उसकी आलोचना करना। ३. तथाकार—आचार्य के वचनों को स्वीकार करना। ४. आवश्यकी—उपाश्रय के बाहर जाते समय 'मैं आवश्यक कार्य के लिए जाता हूं' कहना। ५. निषीधिका—कार्य से निवृत्त होकर आए तब 'मैं निवृत्त हो चुका हूं' कहना। ६. आपृच्छा—अपना कार्य करने की आचार्य से अनुमति लेना। ७. प्रतिपृच्छा—दूसरों का कार्य करने की आचार्य से अनुमति लेना। ८. छन्दना—आहार के लिए साधर्मिक साधुओं को आमंत्रित करना। ९. निमंत्रणा—'मैं आपके लिए आहार आदि लाऊं'—इस प्रकार गुरु आदि को निमंत्रित करना। १०. उपसंपदा—ज्ञान, दर्शन और चारित्र की विशेष प्राप्ति के लिए कुछ समय तक दूसरे आचार्य का शिष्यत्व स्वीकार करना। ये दस प्रकार की सामाचारी से संसार से तीर्ण होते हैं।

प्रायश्चित्त-पद

५५६. प्रायश्चित्त दस प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—

१. आलोचना-योग्य—गुरु के समक्ष अपने दोषों का निवेदन। २. प्रतिक्रमण-योग्य—'मिथ्या मे दुष्कृतम्'—मेरी दुष्कृत निष्फल हो इसका भावनापूर्वक उच्चारण। ३. तदुभय--योग्य—आलोचना और प्रतिक्रमण। ४. विवेक-योग्य—अशुद्ध आहार आदि का उत्सर्ग। ५. व्युत्सर्ग-योग्य—कायोत्सर्ग। ६. तप-योग्य—अनशन, ऊनोदरी आदि। ७. छेद-

-योग्य—दीक्षापर्याय का छेदन। ८. मूल-योग्य—पुनर्दीक्षा। ९. अनवस्थाप्य-योग्य—-तपस्यापूर्वक पुनर्दीक्षा। १०. पारांचिक-योग्य—भर्त्सना एवं अवहेलनापूर्वक पुनर्दीक्षा।

तप-पद

५५७. तप दो प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे बाह्य और आभ्यन्तरिक।

५५८. बाह्य-तप क्या है?

बाह्य-तप के छह प्रकार प्रज्ञप्त हैं, जैसे—१. अनशन, २. अवमोदरिका, ३. भिक्षाचर्या। ४. रस-परित्याग ५. कायक्लेश, ६. प्रतिसंलीनता।

५५९. अनशन क्या है?

अनशन दो प्रकार का प्रज्ञप्त है,—जैसे इत्वरिक और यावत्कथिक।

५६०. इत्वरिक क्या है?

इत्वरिक अनेक प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—चतुर्थ-भक्त, षष्ठ-भक्त, अष्टम-भक्त, दशम--भक्त, द्वादश-भक्त, चतुर्दश-भक्त, अर्धमासिक-भक्त, मासिक-भक्त, द्विमासिक-भक्त, त्रिमासिक-भक्त, यावत् षण्मासिक-भक्त। यह है इत्वरिक।

५६१. यावत्कथिक क्या है?

यावत्कथिक दो प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—प्रायोपगमन और भक्त-प्रत्याख्यान।

५६२. प्रायोपगमन क्या है?

प्रायोपगमन दो प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—निर्हारी और अनिर्हारी। यह नियमतः अप्रतिकर्म होता है। यह है प्रायोपगमन।

५६३. भक्त-प्रत्याख्यान क्या है?

भक्त-प्रत्याख्यान दो प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—निर्हारी और अनिर्हारी। यह नियमतः सप्रतिकर्म होता है। यह है भक्त-प्रत्याख्यान। यह है यावत्कथिक। यह है अनशन।

५६४. अवमोदरिका क्या है?

अवमोदरिका दो प्रकार की प्रज्ञप्त है, जैसे—१. द्रव्य-अवमोदरिका २. भाव-अवमोदरिका।

५६५. द्रव्य-अवमोदरिका क्या है?

द्रव्य-अवमोदरिका दो प्रकार की प्रज्ञप्त है, जैसे—१. उपकरण-अवमोदरिका २. भक्त-पान--अवमोदरिका।

५६६. उपकरण-अवमोदरिका क्या है?

उपकरण-अवमोदरिका तीन प्रकार की प्रज्ञप्त है, जैसे—१. एक वस्त्र रखना, २. एक पात्र रखना, ३. सम्मत उपकरण रखना। यह है उपकरण-अवमोदरिका।

५६७. भक्त-पान-द्रव्य-अवमोदरिका क्या है?

भक्त-पान-द्रव्य-अवमोदरिका—मुर्गी के अण्डे जितने आठ कवल का आहार वाला

अल्पाहारी कहलाता है, मुर्गी के अण्डे जितने बारह कवल का आहार करने वाला अपार्द्ध--अवमोदरिक कहलाता है, मुर्गी के अण्डे जितने सोलह कवल का आहार करने वाला द्विभाग-प्राप्त अवमोदरिक कहलाता है मुर्गी के अण्डे जितने चौबीस कवल का आहार करने वाला अवमोदरिक कहलाता है और मुर्गी के अण्डे जितने बत्तीस कवल का आहार करने वाला प्रमाण-प्राप्त कहलाता है। इससे एक ग्रास भी कम आहार करने वाला श्रमण-निर्ग्रन्थ प्रकाम-रस-भोजी नहीं कहलाता।

यह है भक्तपान-द्रव्य-अवमोदरिका। यह है द्रव्य-अवमोदरिका।

५६८. भाव-अवमोदरिका क्या है?

भाव-अवमोदरिका अनेक प्रकार की प्रज्ञप्त हैं, जैसे—१. अल्प-क्रोध—क्रोध की अल्पता। २. अल्प-मान—मान की अल्पता। ३. अल्प-माया—माया की अल्पता। ४. अल्प--लोभ—लोभ की अल्पता। ५. अल्प-शब्द—ऊंचे स्वर में न बोलना। ६. अल्प-झंझ—कलह का अभाव। ७. अल्प-तुमन्तुम—तुम तुम का अभाव। यह है भाव-अवमोदरिका।

यह है अवमोदरिका।

५६९. भिक्षाचर्या क्या है?

भिक्षाचर्या अनेक प्रकार की प्रज्ञप्त हैं, जैसे—१. द्रव्य-अभिग्रह-चरक—द्रव्य-विषयक अभिग्रह ग्रहण कर भिक्षाचर्या करने वाला २. क्षेत्र-अभिग्रह-चरक—क्षेत्र-विषयक अभिग्रह ग्रहण कर भिक्षाचर्या करने वाला ३. काल-अभिग्रह-चरक—काल-विषयक अभिग्रह ग्रहण कर भिक्षाचर्या करने वाला ४. भाव-अभिग्रह-चरक—भाव-विषयक अभिग्रह ग्रहण कर भिक्षाचर्या करने वाला ५. उत्क्षिप्त-चरक—दाता द्वारा अपने प्रयोजन से पाक-भाजन से निकाल कर रखी वस्तु के लेने का अभिग्रह ग्रहण कर भिक्षाचर्या करने वाला ६. निक्षिप्त-चरक—पाक भाजन से न निकाली गई वस्तु के लेने का अभिग्रह ग्रहण कर भिक्षाचर्या करने वाला। ७. उत्क्षिप्त--निक्षिप्त-चरक—पहले उत्क्षिप्त और बाद में निक्षिप्त की गई वस्तु के लेने का अभिग्रह ग्रहण कर भिक्षाचर्या करने वाला। ८. निक्षिप्त-उत्क्षिप्त-चरक—पहले निक्षिप्त और बाद में उत्क्षिप्त की गई वस्तु के लेने का अभिग्रह ग्रहण कर भिक्षाचर्या करने वाला। ९. वृत्यमान-चरक--वृत्ताकार में चक्र लगाकर देने वाले दाता के पास से वस्तु के लेने का अभिग्रह ग्रहण कर भिक्षाचर्या करने वाला। १०. संह्रियमान-चरक—ठण्डा करने के लिए पात्र से निकाली हुई तथा ठण्डा होने पर पुनः पात्र में डाली हुई वस्तु के लेने का अभिग्रह ग्रहण कर भिक्षाचर्या करने वाला। ११. उपनीत-चरक—किसी के द्वारा दाता को भेंट की गई वस्तु के लेने का अभिग्रह ग्रहण कर भिक्षाचर्या करने वाला। १२. अपनीत-चरक—दी जाने वाली वस्तु के बीच में से कुछ वस्तु को निकाल कर अन्यत्र स्थापित की गई वस्तु के लेने का अभिग्रह ग्रहण कर भिक्षाचर्या करने वाला। १३. उपनीत-अपनीत-चरक—दाता द्वारा जिस वस्तु के गुण का वर्णन कर पुनः उस गुण का निराकरण कर दिया जाये ऐसी वस्तु के लेने का अभिग्रह ग्रहण कर भिक्षाचर्या करने वाला। १४. अपनीत-उपनीत-चरक—दाता द्वारा जिस वस्तु का एक गुण वर्णित हो तथा दूसरा गुण दोष युक्त बताया गया है ऐसी वस्तु के लेने का अभिग्रह ग्रहण कर भिक्षाचर्या करने वाला। १५. संसृष्ट-चरक—लिप्त—सने हुए हाथ आदि से दाता

द्वारा दी जाने वाली वस्तु के लेने का अभिग्रह ग्रहण कर भिक्षाचर्या करने वाला। १६. असंसृष्ट-चरक—अलिप्त—न सने हुए हाथ आदि से दाता द्वारा दी जाने वाली वसतु के लेने का अभिग्रह ग्रहण कर भिक्षाचर्या करने वाला। १७. तज्जात-संसृष्ट-चरक—दी जाने वली वस्तु की अविरोधी वस्तु से लिप्त हाथ आदि के द्वारा दी जाने वाली वस्तु के लेने का अभिग्रह ग्रहण कर भिक्षाचर्या करने वाला। १८. अज्ञात-चरक—स्वयं का परिचय न देते हुवे वस्तु के लेने का अभिग्रह ग्रहण कर भिक्षाचर्या करने वाला। १९. मौन-चरक—मौन रह कर वस्तु के लेने का अभिग्रह ग्रहण कर भिक्षाचर्या करने वाला। २०. शुद्धैषणिक—शुद्ध एषणा अर्थात् शंका-आदि-दोष-रहित वस्तु के लेने का अभिग्रह ग्रहण कर भिक्षाचर्या करने वाला। (वैकल्पिक अर्थ—शुद्ध अर्थात् व्यञ्जन आदि से रहित केवल कूर आदि धान्य को लेने का अभिग्रह ग्रहण कर भिक्षाचर्या करने वाला) २१. संख्यादत्तिक—निर्धारित संख्या में दत्तियों—दी जाने वाली वस्तु के लेने का अभिग्रह ग्रहण कर भिक्षाचर्या करने वाला। यह है भिक्षाचर्या।

५७०. रस-परित्याग क्या है?

रस-परित्याग अनेक प्रकार का प्रज्ञप्त हैं, जैसे—१. निर्विकृतिक—विकृति का त्याग करने वाला। २. प्रणीतरस-त्याग—प्रणीत रस का वर्जन करने वाला। ३. आयंबिल—अम्लपानी के साथ एक धान्य का आहार करने वाला। ४. आयाम-सिक्थ-भोजी—धान्य के धोवण के साथ अन्न का आहार करने वाला ५. अरस आहार—रस-रहित भोजन करने वाला। हींग, नमक आदि मसालों से रहित भोजन करना। जैसे—चना, चावल, कुल्माष आदि। ६. विरस आहार—पुराने धान्य का आहार करने वाला। पुरानेपन के कारण रस समाप्त हो जाता है। ७. अन्त्य आहार—नीरस आहार, जघन्य धान्य का आहार करने वाला। जैसे—उड़द, मोथिया, कुल्माष आदि। ८. प्रान्त्य आहार—ठण्डा आहार करने वाला। ९. रूक्ष आहार—रूखा आहार करना। यह है रस-परित्याग।

५७१. कायक्लेश क्या है?

कायक्लेश अनेक प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—१. स्थानायतिक—ऊर्ध्व-कायोत्सर्ग करने वाला। २. उत्कटुकासनिकः—उकडू बैठने वाला ३. प्रतिमास्थायी—प्रतिमाकाल में कायोत्सर्ग की मुद्रा में अवस्थित। ४. वीरासनिक—वीरासन की मुद्रा में अवस्थित ५. नैषद्यिक—बैठ कर किए जाने वाले आसन का प्रयोक्ता। ६. आतापक—शीत आदि से देह को अभ्यस्त बनाने वाला ७. अप्रावृतक—वस्त्र-त्याग करने वाला। ८. अकण्डूयक—खाज न करने वाला ९. अनिष्ठीवक—थूकने का त्याग करने वाला १०. सर्व-गात्र-परिकर्म-विभूष-विप्रमुक्त—सर्व--गात्र-परिकर्म-विभूषा का वर्जन। यह है कायक्लेश।

५७२. प्रतिसंलीनता क्या है?

प्रतिसंलीनता चार प्रकार की प्रज्ञप्त है, जैसे—१. इन्द्रिय-प्रतिसंलीनता २. कषाय--प्रतिसंलीनता ३. योग-प्रतिसंलीनता ४. विविक्त-शयनासन-सेवना।

५७३. इन्द्रिय-प्रतिसंलीनता क्या है?

इन्द्रिय-प्रतिसंलीनता पांच प्रकार की प्रज्ञप्त है, जैसे—श्रोत्रेन्द्रिय के विषय-प्रचार का निरोध—श्रोत्रेन्द्रिय के इष्ट और अनिष्ट शब्दों के प्रति होने वाली श्रवण-प्रवृति का निरोध और श्रोत्रेन्द्रिय के विषयों में प्राप्त होने वाले अर्थों के प्रति राग और द्वेष का विनिग्रह। चक्षुरिन्द्रिय के विषय-प्रचार का निरोध—चक्षुरिन्द्रिय के इष्ट और अनिष्ट रूपों के प्रति होने वाली दर्शन-प्रवृति का निरोध और चक्षुरिन्द्रिय के विषयों में प्राप्त होने वाले अर्थों के प्रति राग और द्वेष का विनिग्रह। इसी प्रकार यावत् स्पर्शेन्द्रिय के विषय-प्रचार का निरोध—स्पर्शेन्द्रिय के इष्ट और अनिष्ट स्पर्शों के प्रति होने वाली स्पर्श-प्रवृति का निरोध और स्पर्शेन्द्रिय के विषयों में प्राप्त होने वाले अर्थों के प्रति राग और द्वेष का विनिग्रह। यह है इन्द्रिय-प्रतिसंलीनता।

५७४. कषाय-प्रतिसंलीनता क्या है?

कषाय-प्रतिसंलीनता चार प्रकार की प्रज्ञप्त है, जैसे—क्रोधोदय का निरोध और उदय-प्राप्त क्रोध का विफलीकरण। इसी प्रकार यावत् लोभोदय का निरोध और उदय-प्राप्त लोभ का विफलीकरण। यह है कषाय-प्रतिसंलीनता।

५७५. योग-प्रतिसंलीनता क्या है?

योग-प्रतिसंलीनता तीन प्रकार की प्रज्ञप्त है, जैसे—मन-योग-प्रतिसंलीनता, वचन-योग-प्रतिसंलीनता, काय-योग-प्रतिसंलीनता।

५७६. मन-योग-प्रतिसंलीनता क्या है?

मन-योग-प्रतिसंलीनता है—अकुशल मन का निरोध, कुशलमन की उदीरणा और मन का एकत्रीभाव-करण—एक आलंबन पर मन का नियोजन। यह है मन-योग-प्रतिसंलीनता।

५७७. वचन-योग-प्रतिसंलीनता क्या है?

वचन-योग-प्रतिसंलीनता है—अकुशल वचन का निरोध, कुशलवचन की उदीरणा और वचन का एकत्रीभावकरण—मौन अथवा वाक्-संयम। यह है वचन-योग-प्रतिसंलीनता।

५७८. काय-योग-प्रतिसंलीनता क्या है?

काययोग प्रतिसंलीनता उसके होती है जो व्यक्ति सुसमाहित है, प्रशान्त है, संहृत-पाणि-पाद—हाथ और पैर संहरण करने वाला, कच्छुए की भांति गुप्तेन्द्रिय, आलीन और प्रलीन होता है। यह है काय-योग-प्रतिसंलीनता है। यह है योग-प्रतिसंलीनता।

५७९. विविक्त-शयनासन-सेवन क्या है?

विविक्त-शयनासन-सेवन उसके होता है जो आरामों, उद्यानों, देवकुल, सभाओं, प्रपाओं अथवा स्त्री-पशु-नपुंसक-वर्जित वसति-योग में प्रासुक-एषणीय पीठ-फलक-शय्या-संस्तारक प्राप्त कर विहरण करता है। यह है विविक्त-शयनासन-सेवन। यह है प्रतिसंलीनता। यह है बाह्य तप।

५८०. आभ्यन्तर तप क्या है?

आभ्यन्तर तप के छह प्रकार प्रज्ञप्त है, जैसे—१. प्रायश्चित्त, २. विनय, ३. वैयावृत्य, ४. स्वाध्याय, ५. ध्यान और ६. व्युत्सर्ग।

५८१. प्रायश्चित्त क्या है?

प्रायश्चित्त दस प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—आलोचना-योग्य—गुरु के समक्ष अपने दोषों का निवेदन, यावत् पारांचिक-योग्य (भ. २५/५५६)। यह है प्रायश्चित्त।

५८२. विनय क्या है?

विनय सात प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—१. ज्ञान-विनय, २. दर्शन-विनय, ३. चारित्र-विनय, ४. मन-विनय, ५. वचन-विनय, ६. काय-विनय, ७. लोकोपचार-विनय।

५८३. ज्ञान-विनय क्या है?

ज्ञान-विनय पांच प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—१. आभिनिबोधिक-ज्ञान-विनय २. श्रुत-ज्ञान-विनय ३. अवधि-ज्ञान-विनय ४. मनःपर्यव-ज्ञान-विनय ५. केवल-ज्ञान-विनय। यह है ज्ञान-विनय।

५८४. दर्शन-विनय क्या है?

दर्शन-विनय दो प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—शुश्रुषा-विनय और अनत्याशातना-विनय—आशातना न करना।

५८५. शुश्रूषा-विनय क्या है?

शुश्रूषा-विनय अनेक प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—सत्कार-सम्मान, कृतिकर्म, अभ्युत्थान, अञ्जलिप्रग्रह, आसन-अभिग्रह, आसन-अनुप्रदान, आते हुए के सामने जाना, स्थित की पर्युपासना करना, जाते हुए को पहुंचाना—आदि। यह है शुश्रुषा-विनय।

५८६. अनत्याशातना-विनय क्या है?

अनत्याशातना-विनय पैंतालीस प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—

१. अर्हतों की अनत्याशातना। २. अर्हत्-प्रज्ञप्त-धर्म की अनत्याशातना। ३. आचार्यों की अनत्याशातना। ४. उपाध्यायों की अनत्याशातना। ५. स्थविरों की अनत्याशातना। ६. कुल की अनत्याशातना। ७. गण की अनत्याशातना। ८. संघ की अनत्याशातना। ९. क्रिया की अनत्याशातना। १०. संभोज (पारस्परिक संबंध) की अनत्याशातना। ११. आभिनिबोधिक-ज्ञान की अनत्याशातना यावत्। १२. श्रुत-ज्ञान, १३. अवधि-ज्ञान, १४. मनःपर्यव-ज्ञान, १५. केवल-ज्ञान की अनत्याशातना—इन (पन्द्रह) का भक्तिपूर्वक बहुमान करना, इन पन्द्रह का वर्ण-संज्वलन—सद्भूतगुणवर्णन के द्वारा यशोदीपन करना। यह है अनत्याशातना विनय। यह है दर्शन-विनय।

५८७. चारित्र-विनय क्या है?

चारित्र-विनय पांच प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—सामायिक-चारित्र-विनय यावत् यथाख्यात-चारित्र-विनय (भ. २५/४५३)। यह है चारित्र-विनय।

५८८. मन-विनय क्या है?

मन-विनय दो प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—१. प्रशस्त-मन-विनय २. अप्रशस्त-मन-विनय।

५८९. प्रशस्त-मन-विनय क्या है?

प्रशस्त-मन-विनय सात प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—१. अपापक—मन को शुभ चिन्तन में प्रवृत्त करना। २. असावद्य—मन को चोरी आदि गर्हित कर्मों में न लगाना। ३. अक्रिय—मन को कायिकी, आधिकरणिकी आदि क्रियाओं में प्रवृत्त न करना। ४. निरूपक्लेश—मन को शोक, चिन्ता आदि में प्रवृत्त न करना। ५. अनास्नवकर—मन को प्राणातिपात आदि पांच आश्रवों में प्रवृत्त न करना। ६. अक्षपिकर—मन को प्राणियों को व्यथित करने में न लगाना। ७. अभूताभिशङ्कन—मन को अभयंकर बनाना। यह है प्रशस्त-मन-विनय।

५९०. अप्रशस्त-मन-विनय क्या है?

अप्रशस्त-मन-विनय सात प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—

१. पापक २. सावद्य ३. सक्रिय ४. सोपक्लेश ५. आस्नवकर ६. क्षपिकर ७. भूताभिशङ्कन। यह है अप्रशस्त-मन-विनय। यह है मन-विनय।

६९१. वह वचन-विनय क्या है?

वचन-विनय दो प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—प्रशस्त-वचन-विनय और अप्रशस्त-वचन-विनय।

५९२. प्रशस्त-वचन-विनय क्या है?

प्रशस्त-वचन-विनय सात प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—१. अपापक, २. असावद्य यावत् अभूताभिशंकन (भ. २५/५८९)। यह है प्रशस्त-वचन-विनय।

५९३. अप्रशस्त-वचन-विनय क्या होता है?

अप्रशस्त-वचन-विनय सात प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—पापक, सावद्य यावत् भूताभिशङ्कन (भ. २५/५९०)। यह अप्रशस्त-वचन-विनय है। यह है वचन-विनय।

५९४. काय-विनय क्या है?

काय-विनय दो प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—प्रशस्त-काय-विनय और अप्रशस्त-काय-विनय।

५९५. प्रशस्त-काय-विनय क्या है?

प्रशस्त-काय-विनय सात प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—१. आयुक्त (संयमपूर्वक) गमन २. आयुक्त स्थान ३. आयुक्त निषीदन ४. आयुक्त त्वग्वर्तन ५. आयुक्त उल्लंघन ६. आयुक्त प्रलंघन ७. आयुक्त सर्वेन्द्रिय-योग-योजना—यह है प्रशस्त-काय-विनय।

५९६. अप्रशस्त-काय-विनय क्या है?

अप्रशस्त-काय-विनय सात प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—अनायुक्त गमन यावत् अनायुक्त सर्वेन्द्रिय-योग-योजना (भ. २५/५९५)। यह है अप्रशस्त-काय-विनय। यह है काय-विनय।

५९७. लोकोपचार-विनय क्या है?

लोकोपचार-विनय सात प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—१. अभ्यासवर्तित्व—श्रुत-ग्रहण करने के लिए आचार्य के समीप बठना। २. परच्छन्दानुवर्तित्व—दूसरों के अभिप्राय के अनुसार वर्तन

करना। ३. कार्यहेतु—'इसने मुझे ज्ञान दिया'—इसलिए उसका विनय करना। ४. कृतप्रतिकृतित्व—प्रत्युपकार की भावना से विनय करना। ५. आर्त्तगवेषण—रोगी के लिए औषध आदि की गवेषणा करना। ६. देशकालज्ञता—अवसर को जानना। ७. सर्वार्थ--अप्रतिलोमता—सब विषयों में अनुकूल आचरण करना। यह है लोकोपचार-विनय। यह है विनय।

५९८. वैयावृत्त्य क्या है?

वैयावृत्त्य दस प्रकार का प्रज्ञप्त है जैसे—१. आचार्य का वेयावृत्त्य २. उपाध्याय का वैयावृत्त्य ३. स्थविर का वैयावृत्त्य ४. तपस्वी का वैयावृत्त्य ५. ग्लान—रूग्ण का वैयावृत्त्य ६. शैक्ष—नवदीक्षित का वैयावृत्त्य ७. कुल का वैयावृत्त्य ८. गण का वैयावृत्त्य ९. संघ का वैयावृत्त्य १०. साधर्मिक का वैयावृत्त्य। यह है वैयावृत्त्य।

५९९. स्वाध्याय क्या है?

स्वाध्याय पांच प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—१. वाचना—अध्यापन २. प्रच्छना—संदिग्ध विषयों में प्रश्न करना ३. परिवर्तना—पठित ज्ञान की पुनरावृत्ति करना ४. अनुप्रेक्षा—चिन्तन ५. धर्म--कथा। यह है स्वाध्याय।

६००. ध्यान क्या है?

ध्यान चार प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—१. आर्त्त-ध्यान २. रौद्र-ध्यान, ३. धर्म्य-ध्यान ४. शुक्ल-ध्यान।

६०१. आर्त्त-ध्यान चार प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—१. अमनोज्ञ संयोग से संयुक्त होने पर उस (अमनोज्ञ विषय) के वियोग की चिन्ता में लीन हो जाना। २. मनोज्ञ संयोग से संयुक्त होने पर उस (मनोज्ञ विषय) के वियोग न होने की चिन्ता में लीन हो जाना। ३. आतंक (सद्योधाती रोग) के संयोग से संयुक्त होने पर उसके वियोग की चिन्ता में लीन हो जाना। ४. प्रीतिकर काम-भोग के संयोग से संयुक्त होने पर उसके वियोग न होने की चिन्ता में लीन हो जाना।

६०२. आर्त्त-ध्यान के चार लक्षण प्रज्ञप्त हैं, जैसे—१. आक्रन्द करना २. शोक करना ३. आंसू बहाना ४. विलाप करना।

६०३. रौद्र-ध्यान चार प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—१. हिंसानुबन्धी—जिसमें हिंसा का अनुबन्ध (सतत प्रवर्तन) हो, २. मृषानुबन्धी—जिसमें मृषा का अनुबन्ध हो, ३. स्तेयानुबन्धी—जिसमें चोरी का अनुबन्ध हो, ४. संरक्षणानुबन्धी—जिसमें विषय के साधनों के संरक्षण का अनुबन्ध हो।

६०४. रौद्र-ध्यान के चार लक्षण प्रज्ञप्त हैं, जैसे १. उत्सन्न-दोष—प्रायः हिंसा आदि में प्रवृत्त रहना, २. बहुल-दोष—हिंसादि की विविध प्रवृत्तियों में संलग्न रहना। ३. अज्ञान-दोष—अज्ञानवश हिंसा आदि में प्रवृत्त होना। ४. आमरणान्त-दोष—मरणान्त तक हिंसा आदि करने का अनुताप न होना।

६०५. धर्म्य-ध्यान चार प्रकार का और चार पदों (स्वरूप, लक्षण, आलम्बन और अनुप्रेक्षा) में अवतरित होता है, जैसे—१. आज्ञा-विचय—प्रवचन के निर्णय में संलग्न चित्त—अतीन्द्रिय विषयों में प्रवृत्त चित्त। २. अपाय-विचय—दोषों के निर्णय में संलग्न चित्त, ३. विपाक-विचय—कर्म-फलों के निर्णय में संलग्न चित्त, ४. संस्थान-विचय—विविध पदार्थों के आकृति-निर्णय में संलग्न चित्त।

६०६. धर्म्य-ध्यान के चार लक्षण प्रज्ञप्त हैं, जैसे—१. आज्ञा-रुचि—प्रवचन में श्रद्धा होना। २. निसर्ग-रुचि—सहज ही सत्य में श्रद्धा होना। ३. सूत्र-रुचि—सूत्र-पाठ से सत्य में श्रद्धा उत्पन्न होना। ४. अवगाढ़-रुचि—विस्तृत पद्धति से सत्य में श्रद्धा होना।

६०७. धर्म्य-ध्यान के चार आलम्बन प्रज्ञप्त हैं, जैसे—१. वाचना २. प्रतिप्रच्छना ३. परिवर्तना ४. धर्मकथा।

६०८. धर्म्य-ध्यान की चार अनुप्रेक्षाएं प्रज्ञप्त हैं, जैसे—१. एकत्व-अनुप्रेक्षा—अकेलेपन का चिन्तन करना २. अनित्य-अनुप्रेक्षा—पदार्थों की अनित्यता का चिन्तन करना। ३. अशरण-अनुप्रेक्षा—अशरण दशा का चिन्तन करना। ४. संसार-अनुप्रेक्षा—संसार-परिभ्रमण का चिन्तन करना।

६०९. शुक्ल-ध्यान चार प्रकार का और चार पदों (स्वरूप, लक्षण, आलम्बन और अनुप्रेक्षा) में अवतरित होता है, जैसे—१. पृथक्त्व-वितर्क-सविचार २. एकत्व-वितर्क-अविचार ३. सूक्ष्म-क्रिया-अनिवृत्ति ४. समुच्छिन्नक्रिया-अप्रतिपाति।

६१०. शुक्ल-ध्यान के चार लक्षण प्रज्ञप्त हैं, जैसे—१. क्षान्ति—क्षमा, २. मुक्ति—निर्लोभता, ३. आर्जव—सरलता, ४. मार्दव—मृदुता।

६११. शुक्ल-ध्यान के चार आलम्बन प्रज्ञप्त हैं, जैसे—१. अव्यथा—क्षोभ का अभाव, २. असम्मोह—सूक्ष्म-पदार्थ-विषयक मूढता का अभाव, ३. विवेक—शरीर और आत्मा के भेद का ज्ञान ४. व्युत्सर्ग—शरीर और उपधि में अनासक्त भाव।

६१२. शुक्ल-ध्यान की चार अनुप्रेक्षाएं प्रज्ञप्त हैं, जैसे—१. अनन्तवृत्तिता-अनुप्रेक्षा—संसार-परम्परा का चिन्तन करना। २. विपरिणाम-अनुप्रेक्षा—वस्तुओं के विविध परिणामों का चिन्तन करना। ३. अशुभ-अनुप्रेक्षा—पदार्थों की अशुभता का चिन्तन करना। ४. अपाय-अनुप्रेक्षा—दोषों का चिन्तन करना। यह है ध्यान।

६१३. व्युत्सर्ग क्या है? व्युत्सर्ग दो प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—१. द्रव्य-व्युत्सर्ग और २. भाव-व्युत्सर्ग।

६१४. द्रव्य-व्युत्सर्ग क्या है? द्रव्य-व्युत्सर्ग चार प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—१. गण-व्युत्सर्ग, २. शरीर-व्युत्सर्ग, ३. उपधि-व्युत्सर्ग और ४. भक्तपान-व्युत्सर्ग। यह है द्रव्य-व्युत्सर्ग।

६१५. भाव-व्युत्सर्ग क्या है?

भाव-व्युत्सर्ग तीन प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—कषाय-व्युत्सर्ग, संसार-व्युत्सर्ग और कर्म-व्युत्सर्ग।

६१६. कषाय-व्युत्सर्ग क्या है?

कषाय-व्युत्सर्ग चार प्रकार का प्रज्ञप्त हैं, जैसे—१. क्रोध-व्युत्सर्ग २. मान-व्युत्सर्ग ३. माया-व्युत्सर्ग ४. लोभ-व्युत्सर्ग।

६१७. संसार-व्युत्सर्ग क्या है?

संसार-व्युत्सर्ग चार प्रकार का प्रज्ञप्त हैं, जैसे—नैरयिक-संसार-व्युत्सर्ग यावत् देव-संसार--व्युत्सर्ग। यह है संसार-व्युत्सर्ग।

६१८. कर्म-व्युत्सर्ग क्या है?

कर्म-व्युत्सर्ग आठ प्रकार का प्रज्ञप्त है, जैसे—ज्ञानावरणीय-कर्म-व्युत्सर्ग यावद् अन्तराय--कर्म-व्युत्सर्ग। यह है कर्म-व्युत्सर्ग। यह है भाव-व्युत्सर्ग। यह है आभ्यन्तरिक तप।

६१९. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

आठवां उद्देशक

नैरयिक आदि का पुनर्भव-पद

६२०. राजगृह नगर यावत् इस प्रकार बोले (भ. १/१०)—भन्ते! नैरयिक जीव कैसे उपपन्न होते हैं?

गौतम! जिस प्रकार कोई प्लवक (कूदनेवाला) कूदता हुआ 'मुझे अमुक स्थान पर कूद कर जाना है' ऐसे अध्यवसाय के निर्वर्तित करण-उपाय—उत्प्लवन-क्रीड़ा-कौशल के द्वारा अवस्थित स्थान को छोड़ कर अग्रिम स्थान में चला जाता है, इसी प्रकार ये जीव भी प्लवनक की भांति कूदते हुए अध्यवसाय-निर्वर्तित-करण-उपाय के द्वारा इस भव को छोड़कर अग्रिम भव में चले जाते हैं।

६२१. भन्ते! उन जीवों की गति कैसी शीघ्र होती है? उनका गति का विषय कैसा शीघ्र प्रज्ञप्त है?

गौतम! जैसे कोई पुरुष तरुण, बलवान्, युगवान्, युवा, स्वस्थ और सधे हुये हाथों वाला है, उसके हाथ, पांव, पार्श्व, पृष्ठान्तर और ऊरु दृढ़ और विकसित हैं। समश्रेणी में स्थित दो ताल वृक्ष और परिघा के समान जिसकी भुजायें हैं, चरमेष्टक-, पाषाण, मुद्गर और मुट्ठी के प्रयोगों से जिसके शरीर के पुट्ठे आदि सुदृढ़ हैं, जो आन्तरिक उत्साह-बल से युक्त हैं, लंघन, प्लवन, धावन और व्यायाम करने में समर्थ है, छेक, दक्ष, प्राप्तार्थ, कुशल, मेधावी, निपुण और सूक्ष्म शिल्प से समन्वित है। वह पुरुष संकुचित भुजा को फैलाता है, फैलाई हुई भुजा को संकुचित करता है। खुली मुट्ठी को बन्द करता है, बन्द मुट्ठी को खोलता है। खुली आंखों को बन्द करता है, बन्द आंखों को खोलता है। क्या नैरयिकों का गति-काल इतनी शीघ्रता से होता है?

यह अर्थ संगत नहीं है। नैरयिक एक समय, दो समय अथवा तीन समय वाली विग्रह-गति से उपपन्न हो जाते हैं। इस प्रकार जैसे चौदहवें शतक के प्रथम उद्देशक (भ. १४।३) में यावत्

तीन समय वाली विग्रह-गति से उपपन्न होते हैं। उन जीवों के वैसी शीघ्र गति है, वैसा शीघ्र गति-विषय प्रज्ञप्त है।

६२२. भन्ते! जीव किस प्रकार पर-भव के आयुष्य का बन्धन करते हैं?

गौतम! अध्यवसाय-योग-निर्वर्तित-करणोपाय के द्वारा (पर-भव का आयुष्य बांधते हैं), इस प्रकार वे जीव पर-भव के आयुष्य का बंध करते हैं।

६२३. भन्ते! उन जीवों के गति का प्रवर्तन कैसे होता है?

गौतम! उन जीवों का आयु-क्षय, भव-क्षय और स्थिति-क्षय होने पर उन जीवों के गति का प्रवर्तन होता है।

६२४. भन्ते! क्या वे जीव अपनी ऋद्धि से (पर-भव में) उत्पन्न होते हैं? पर-ऋद्धि से उत्पन्न होते हैं?

गौतम! अपनी ऋद्धि से उत्पन्न होते हैं, पर-ऋद्धि से उत्पन्न नहीं होते।

६२५. भन्ते! क्या वे जीव आत्म-कर्म से उत्पन्न होते हैं? पर-कर्म से उत्पन्न होते हैं?

गौतम! आत्म-कर्म से उत्पन्न होते हैं, पर-कर्म से उत्पन्न नहीं होते।

६२६. भन्ते! क्या वे जीव आत्म-प्रयोग से उत्पन्न होते हैं? पर-प्रयोग से उत्पन्न होते हैं?

गौतम! वे जीव आत्म-प्रयोग से उत्पन्न होते हैं, पर-प्रयोग से उत्पन्न नहीं होते।

६२७. भन्ते! असुरकुमार किस प्रकार उत्पन्न होते हैं? नैरयिक जीवों की भांति अविकल रूप से वक्तव्यता यावत् पर-प्रयोग से उपपन्न नहीं होते (**भ.** २५/६२०-६२६)। इसी प्रकार एकेन्द्रिय जीवों को छोड़कर यावत् वैमानिक की वक्तव्यता। एकेन्द्रिय जीवों की इसी प्रकार वक्तव्यता, केवल इतना विशेष है—चार समय की विग्रह-गति से उत्पन्न होते हैं। शेष (शेष दण्डकों के विषय में) पूर्ववत्।

६२८. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है, इसी प्रकार यावत् भगवान् गौतम (संयम और तप से अपने आप को भावित करते हुए) विहरण कर रहे हैं।

नवां-बारहवां उद्देशक

(नवां उद्देशक)

६२९. भन्ते! भवसिद्धिक-नैरयिक-जीव किस प्रकार उपपन्न होते हैं?

गौतम! जिस प्रकार कोई प्लवक कूदता हुआ....शेष पूर्ववत्। यावत् वैमानिक (**भ.** २५/ ६२०-६२७) की वक्तव्यता।

६३०. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

(दशवां उद्देशक)

६३१. भन्ते! अभवसिद्धिक-नैरयिक-जीव किस प्रकार उपपन्न होते हैं?

गौतम! जिस प्रकार कोई प्लवक कूदता हुआ.....शेष पूर्ववत्। इसी प्रकार यावत् वैमानिक (भ. ६२०-६२७) की वक्तव्यता।

६३२. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

(ग्यारहवां उद्देशक)

६३३. भन्ते! सम्यग्-दृष्टि-नैरयिक-जीव किस प्रकार से उपपन्न होते हैं?

गौतम! जिस प्रकार कोई प्लवक कूदता हुआ.....शेष पूर्ववत्। इसी प्रकार एकेन्द्रिय को छोड़कर यावत् वैमानिक (भ. २५/६२०-६२७) की वक्तव्यता।

६३४. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

(बारहवां उद्देशक)

६३५. भन्ते! मिथ्या-दृष्टि-नैरयिक-जीव किस प्रकार उपपन्न होते हैं?

गौतम! जिस प्रकार कोई प्लवक कूदता हुआ....शेष पूर्ववत्। इसी प्रकार यावत् वैमानिक (भ. २५/६२०-६२७) की वक्तव्यता।

६३६. भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है।

• • •

छब्बीसवां शतक

पहला उद्देशक

श्रुतदेवता भगवती को नमस्कार

संग्रहणी गाथा

१. जीव २. लेश्या ३. पाक्षिक ४. दृष्टि ५. अज्ञान ६. ज्ञान ७. संज्ञा ८. वेद ९. कषाय १०. उपयोग ११. योग—कर्म-बन्ध के ये ग्यारह स्थान हैं।

जीवों और लेश्यादि से विशेषित-जीवों का बन्धाबन्ध-पद

१. उस काल और उस समय में राजगृह नगर यावत् गौतम ने इस प्रकार कहा—(भ. १/१०)

भन्ते! क्या जीवों ने पाप-कर्म का बन्ध किया था? कर रहा है? करेगा? जीवों ने क्या पाप-कर्म का बन्ध किया था, कर रहा है, नहीं करेगा? जीवों ने क्या पाप-कर्म का बन्ध किया था, नहीं कर रहा है, करेगा? जीवों ने क्या पाप-कर्म का बन्ध किया था, नहीं कर रहा है, नहीं करेगा?

गौतम! किसी जीव ने पाप-कर्म का बन्ध किया था, कर रहा है, करेगा। किसी जीव ने पाप--कर्म का बन्ध किया था, कर रहा है, नहीं करेगा। किसी जीव ने पाप-कर्म का बन्ध किया था, नहीं कर रहा है, करेगा। किसी जीव ने पाप-कर्म का बन्ध किया था, नहीं कर रहा है, नहीं करेगा।

२. भन्ते! क्या लेश्या-युक्त-जीव ने पाप-कर्म का बन्ध किया था, कर रहा है, करेगा? लेश्या-युक्त जीव ने पाप-कर्म का बन्ध किया था, कर रहा है, नहीं करेगा—पृच्छा। (भ. २६/१)

गौतम! लेश्या-युक्त किसी जीव ने पाप-कर्म का बन्ध किया था, कर रहा है, करेगा। इसी प्रकार चार भंग वक्तव्य हैं।

३. भन्ते! क्या कृष्ण-लेश्या-युक्त जीव ने पाप-कर्म का बन्ध किया था...? पृच्छा। (भ. २६/१)

गौतम! कृष्ण-लेश्या-युक्त किसी जीव ने पाप-कर्म का बन्ध किया था, कर रहा है, करेगा। कृष्ण-लेश्या-युक्त किसी जीव ने पाप-कर्म का बन्ध किया था, कर रहा है, नहीं करेगा। इसी प्रकार यावत् पद्म-लेश्या-युक्त-जीव की वक्तव्यता। सर्वत्र प्रथम और द्वितीय भंग वक्तव्य है। शुक्ल-लेश्या-युक्त जीव की लेश्या-युक्त-जीव के चार भंग (भ. २६/२) की भांति वक्तव्यता।

४. भन्ते! क्या लेश्या-रहित-जीव ने पाप-कर्म का बन्ध किया था....? पृच्छा। (भ. २६/१)

गौतम! लेश्या-रहित-जीव ने पाप-कर्म का बन्ध किया था, नहीं कर रहा है, नहीं करेगा।

५. भन्ते! कृष्णपाक्षिक-जीव ने पाप-कर्म का बन्ध किया था.....? पृच्छा। (भ. २६/१)

गौतम! किसी कृष्णपाक्षिक-जीव ने पाप-कर्म का बन्ध किया था, प्रथम और द्वितीय भंग वक्तव्य है।

६. भन्ते! शुक्लपाक्षिक-जीव.......? पृच्छा। (भ. २६/१)

गौतम! शुक्लपाक्षिक-जीव के विषय में चार भंग वक्तव्य है। (भ. २६/१)

७. सम्यग्-दृष्टि-जीव के चार भंग, मिथ्या-दृष्टि-जीव के प्रथम और द्वितीय दो भंग। सम्यग्--मिथ्या-दृष्टि-जीव के इसी प्रकार (प्रथम दो भंग) वक्तव्य हैं।

८. ज्ञानी-जीव के चार भंग वक्तव्य हैं। आभिनिबोधिक-ज्ञानी यावत् मनःपर्यव-ज्ञानी के चार भंग, केवल-ज्ञानी के लेश्या-रहित की भांति अंतिम भंग वक्तव्य है।

९. अज्ञानी जीव के प्रथम और द्वितीय दो भंग, इसी प्रकार मति-अज्ञानी, श्रुत-अज्ञानी और विभंग-ज्ञानी की वक्तव्यता।

१०. आहार-संज्ञा में उपयुक्त यावत् परिग्रह-संज्ञा में उपयुक्त-जीव के प्रथम और द्वितीय दो भंग। नो-संज्ञा-उपयुक्त के चार भंग वक्तव्य है।

११. सवेदक जीव के प्रथम और द्वितीय दो भंग। इसी प्रकार स्त्री-वेदक, पुरुष-वेदक और नपुंसक-वेदक जीव की भी वक्तव्यता। अवेदक के चार भंग की वक्तव्यता।

१२. कषाय-रहित जीव के चार भंग, क्रोध-कषाय-सहित के प्रथम और द्वितीय दो भंग। इसी प्रकार मान-कषाय-सहित और माया-कषाय-सहित के भी दो भंग वक्तव्य है, लोभ-कषाय--सहित के चार भंग वक्तव्य है।

१३. भन्ते! क्या कषाय-रहित जीव के पाप-कर्म का बन्ध किया था......? पृच्छा। (भ. २६/१)

गौतम! किसी कषाय-रहित जीव ने पाप-कर्म का बन्ध किया था, नहीं कर रहा है, करेगा। किसी अकषायी जीव ने पाप-कर्म का बन्ध किया था, नहीं कर रहा है, नहीं करेगा।

१४. सयोगी जीव के चार भंग। इसी प्रकार मन-योगी, वचन-योगी और काय-योगी जीवों के भी चार भंग वक्तव्य है। अयोगी जीव के अंतिम भंग की वक्तव्यता।

१५. साकार-उपयोग-युक्त जीव के चार भंग, अनाकार-उपयोग-युक्त जीव के भी चार भंग वक्तव्य है।

नैरयिक-आदि और लेश्यादि से विशेषित-नैरयिक-आदि जीवों का बन्धाबन्ध-पद

१६. भन्ते! क्या नैरयिक-जीव ने पाप-कर्म का बन्ध किया था, कर रहा है, करेगा?

गौतम! किसी नैरयिक-जीव ने पाप-कर्म का बन्ध किया था, प्रथम और द्वितीय भंग की वक्तव्यता।

१७. भन्ते! लेश्या-युक्त नैरयिक-जीव ने पाप कर्म का बन्ध किया था....? (भ. २६/१)

पूर्ववत्। (भ. २६/१६) इसी प्रकार कृष्ण-लेश्या, नील-लेश्या, कापोत-लेश्या वाले नैरयिक की वक्तव्यता। इसी प्रकार कृष्णपाक्षिक, शुक्लपाक्षिक, सम्यग्-दृष्टि, मिथ्या-दृष्टि और सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि, ज्ञानी—आभिनिबोधिक-ज्ञानी श्रुत-ज्ञानी और अवधि-ज्ञानी, अज्ञानी—मति-अज्ञानी श्रुत-अज्ञानी, विभंग-ज्ञानी, आहार-संज्ञोपयुक्त नैरयिक-जीव यावत् परिग्रह-संज्ञोपयुक्त, सवेदक और नपुंसक-वेदक, कषाय-सहित नैरयिक जीव यावत् लोभ-कषाय-सहित सयोगी, मन-योगी, वचन-योगी नैरयिक-जीव और काय-योगी, साकार-उपयोग-युक्त और अनाकार-उपयोग-युक्त नैरयिक की इन सभी पदों में प्रथम, द्वितीय भंग वक्तव्य है। इसी प्रकार असुरकुमार की वक्तव्यता। केवल इतना विशेष है—तेजो-लेश्य, स्त्री-वेदक वक्तव्य है, नपुंसक-वेदक वक्तव्य नहीं है, शेष पूर्ववत्। सर्वत्र प्रथम और द्वितीय भंग वक्तव्य है। इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमार की वक्तव्यता। इसी प्रकार पृथ्वीकायिक में भी, अप्कायिक में भी यावत् पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव की भी वक्तव्यता। सर्वत्र जीव के द्वितीय भंग वक्तव्य है। केवल इतना विशेष है—जिसके जो लेश्या हैं वे वक्तव्य हैं। दृष्टि, ज्ञान, अज्ञान, वेद और योग जिसमें जो प्राप्त हैं वे भणितव्य हैं, शेष पूर्ववत्। जीव-पद की वक्तव्यता है वही मनुष्य के विषय निरवशेष वक्तव्य है। वानमन्तर-देव की (भ. २६/१७) ज्योतिष्क-देव की और वैमानिक-देव की असुरकुमार की भांति वक्तव्यता। उसी प्रकार वक्तव्यता, केवल इतना विशेष है—जिसमें जो लेश्याएं हैं वे ज्ञातव्य हैं। शेष पूर्ववत्।

जीव-आदि का ज्ञानावरणीय-आदि-कर्म की अपेक्षा बंध-अबंध-पद

१८. भन्ते! क्या जीव ज्ञानावरणीय-कर्म का बन्ध करता था, कर रहा है, करेगा० ? जैसे पाप-कर्म की वक्तव्यता, वैसे ही ज्ञानावरणीय-कर्म की भी वक्तव्यता। केवल इतना विशेष है—जीव-पद और मनुष्य-पद में कषाय-सहित जीव में यावत् लोभ-कषाय-सहित जीव में प्रथम, द्वितीय भंग वक्तव्य है, अवशेष पूर्ववत्। यावत् वैमानिक। इसी प्रकार दर्शनावरणीय-कर्म का दण्डक भी अविकल रूप से वक्तव्य है।

१९. भन्ते! क्या जीव ने वेदनीय-कर्म का बन्ध किया था.....? पृच्छा। (भ. २६/१८)

गौतम! कोई जीव वेदनीय-कर्म का बन्ध करता था, कर रहा है, करेगा। कोई जीव वेदनीय-कर्म का बन्ध करता था, कर रहा है, नहीं करेगा। कोई जीव वेदनीय-कर्म का बन्ध करता था, नहीं कर रहा है और नहीं करेगा। इसी प्रकार सलेश्य जीव में भी तृतीय भंग को छोड़कर पूर्ववत् वक्तव्यता। कृष्ण-लेश्य जीव यावत् पद्म-लेश्य जीव में द्वितीय भंग की वक्तव्यता। शुक्ल-लेश्य जीव में तृतीय भंग को छोड़कर शेष तीन भंग की वक्तव्यता। अलेश्य जीव में केवल चरम भंग की वक्तव्यता। कृष्णपाक्षिक में प्रथम, द्वितीय भंग की वक्तव्यता। इसी प्रकार सम्यग्-दृष्टि जीव में (तृतीय भंग को छोड़कर) शेष तीन भंग वक्तव्य हैं। मिथ्या-दृष्टि और सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि जीव में प्रथम, द्वितीय भंग की वक्तव्यता। ज्ञानी में तृतीय भंग को छोड़कर शेष तीन भंग की वक्तव्यता। आभिनिबोधिक-ज्ञानी में प्रथम, द्वितीय भंग की वक्तव्यता। केवल-ज्ञानी में तृतीय भंग छोड़कर शेष तीन भंग की वक्तव्यता। इसी प्रकार नो-संज्ञोपयुक्त, अवेदक, कषाय-सहित, साकार-उपयोग-युक्त जीव—इनमें तृतीय भंग को छोड़कर

शेष तीन भंग वक्तव्य हैं। अयोगी जीव में चरम भंग की वक्तव्यता। शेष सब जीवों में प्रथम, द्वितीय भंग की वक्तव्यता।

२०. भन्ते! क्या नैरयिक-जीव वेदनीय-कर्म का बन्ध करता था, कर रहा है, करेगा? (भ. २६/१८)

इसी प्रकार नैरयिक यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता। जिसमें जो बोल प्राप्त होता है उसमें सर्वत्र ही प्रथम, द्वितीय भंग वक्तव्य है, केवल इतना विशेष है—मनुष्य में जीव की भांति वक्तव्यता।

२१. भन्ते! क्या जीव मोहनीय-कर्म का बन्ध करता था, कर रहा है, करेगा? (भ. २६/१८)

जैसे पाप-कर्म के बन्ध की वक्तव्यता (भ. २६/१८) वैसे ही मोहनीय कर्म की भी अविकल रूप से यावत् वक्तव्यता वैमानिक तक।

२२. भन्ते! क्या जीव आयुष्य-कर्म का बन्ध करता था, कर रहा है.....? पृच्छा। (भ. २६/१८)

गौतम! कोई जीव आयुष्य-कर्म का बन्ध करता था, (कर रहा है और करेगा) चार भंग वक्तव्य है (भ. २६/१)। सलेश्य जीव यावत् शुक्ल-लेश्य जीव में चार भंग की वक्तव्यता। अलेश्य में चरम भंग की वक्तव्यता।

२३. कृष्णपाक्षिक जीव ....? पृच्छा। (भ. २६/२२)

गौतम! कोई कृष्णपाक्षिक जीव आयुष्य-कर्म का बंध करता था, कर रहा है करेगा, कोई कृष्ण-पाक्षिक जीव आयुष्य-कर्म का बन्ध करता था, नहीं कर रहा है, करेगा। शुक्ल-पाक्षिक, सम्यग्-दृष्टि और मिथ्या-दृष्टि में चार भंग की वक्तव्यता।

२४. सम्यग्-मिथ्यादृष्टि ....? पृच्छा। (भ. २६/२२)

गौतम! कोई सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि जीव आयुष्य-कर्म का बन्ध करता था, नहीं कर रहा है, करेगा, कोई सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि जीव आयुष्य-कर्म का बन्ध करता था, नहीं कर रहा है, नहीं करेगा। ज्ञानी जीव यावत् अवधि-ज्ञानी जीव में चार भंग की वक्तव्यता।

२५. मनःपर्यव-ज्ञानी ....? पृच्छा। (भ. २६/२२)

गौतम! कोई मनःपर्यव-ज्ञानी जीव आयुष्य-कर्म का बन्ध करता था, कर रहा है, करेगा। कोई मनःपर्यव-ज्ञानी जीव आयुष्य-कर्म का बन्ध करता था, नहीं कर रहा है, करेगा। कोई मनःपर्यव-ज्ञानी जीव आयुष्य-कर्म का बन्ध करता था, नहीं कर रहा है, नहीं करेगा। केवल--ज्ञान (केवल-ज्ञानी) में चरम भंग की वक्तव्यता। इसी प्रकार इस क्रम से नो-संज्ञोपयुक्त जीव में मनःपर्यव-ज्ञानी की भांति द्वितीय भंग छोड़कर शेष तीन भंग वक्तव्य है। अवेदक और कषाय-रहित जीव में सम्यग्-मिथ्यादृष्टि की भांति तृतीय, चतुर्थ भंग की वक्तव्यता। अयोगी जीव में चरम भंग की वक्तव्यता, शेष पदों में चारों भंग यावत् अनाकार-उपयोग-युक्त में।

२६. भन्ते! क्या नैरयिक-जीव आयुष्य-कर्म का बन्ध करता था....? पृच्छा। (भ. २६/२२)

गौतम! कोई नैरयिक जीव में चारों भंग वक्तव्य है। इसी प्रकार सर्वत्र नैरयिक-जीवों में चारों भंग वक्तव्य है। केवल इतना विशेष है—कृष्ण-लेश्य और कृष्णपाक्षिक में प्रथम, तृतीय भंग,

सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि में तृतीय और चतुर्थ भंग वक्तव्य है। असुरकुमार में पूर्ववत्, केवल इतना विशेष है—कृष्ण-लेश्य-असुरकुमार में चारों भंग वक्तव्य है, शेष की नैरयिक की भांति वक्तव्यता। इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमारों की वक्तव्यता। पृथ्वीकायिक में सर्वत्र ही चारों भंग की वक्तव्यता, इतना विशेष है—कृष्णपाक्षिक पृथ्वीकायिक में प्रथम और तृतीय भंग की वक्तव्यता।

२७. तेजोलेश्य-पृथ्वीकायिक-जीव ....? पृच्छा। (भ. २६/२६)

गौतम! तेजोलेश्य-पृथ्वीकायिक-जीव ने आयुष्य-कर्म का बन्ध किया था, नहीं कर रहा है, करेगा। (यहां केवल तीसरा भंग है।) शेष सभी में सर्वत्र चारों भंग वक्तव्य है। इसी प्रकार अप्‌कायिक और वनस्पतिकायिकों की भी अविकल रूप से वक्तव्यता। तैजस्कायिक- और वायुकायिक-जीवों में सर्वत्र प्रथम और तृतीय भंग वक्तव्य है। द्वीन्द्रिय-, त्रीन्द्रिय- और चतुरिन्द्रिय-जीवों के भी सर्वत्र ही प्रथम और तृतीय भंग वक्तव्य है, इतना विशेष है—सम्यग्-दृष्टि, ज्ञानी, आभिनिबोधिक-ज्ञानी और श्रुत-ज्ञानी द्वीन्द्रिय-, त्रीन्द्रिय- और चतुरिन्द्रिय-जीव में तृतीय भंग वक्तव्य है। पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों में कृष्ण-पाक्षिक-पद में प्रथम और तृतीय भंग वक्तव्य है। पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों के सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि पद में तृतीय और चतुर्थ भंग वक्तव्य है। पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव के सम्यग्-दृष्टि, ज्ञानी, आभिनिबोधिक-ज्ञानी, श्रुत-ज्ञानी और अवधि-ज्ञानी इन पांचों पदों में द्वितीय भंग को छोड़ कर शेष तीन भंगों की वक्तव्यता। पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव के शेष पदों में चारों भंग वक्तव्य है।

मनुष्य की जीवों की भांति वक्तव्यता। (भ. २६/२२-२५), इतना विशेष है—मनुष्य के सम्यग्-दृष्टि, औधिक-ज्ञानी, आभिनिबोधिक-ज्ञानी, श्रुत-ज्ञानी और अवधि-ज्ञानी इन (पांच पदों) में द्वितीय भंग को छोड़कर शेष तीन भंग की वक्तव्यता। मनुष्य के शेष पदों की जीव की भांति वक्तव्यता। वानमन्तर-, ज्योतिषिक- और वैमानिक-देवों के आयुष्य-बन्ध के विषय में असुरकुमार की भांति वक्तव्यता। नाम-कर्म, गोत्र-कर्म और अन्तराय-कर्म—इन तीनों के बन्ध की ज्ञानावरणीय-कर्म-बन्ध की भांति वक्तव्यता।

२८. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है। इस प्रकार भगवान् गौतम यावत् संयम और तप से अपने आपको भावित करते हुए विहरण कर रहे है।

दूसरा उद्देशक

विशेषित-नैरयिक-आदि जीवों का बन्धाबन्ध-पद

२९. भन्ते! अनन्तर-उपपन्न (प्रथम समय के)-नैरयिक-जीव क्या पाप-कर्म का बन्ध करता था.......? पूर्ववत्.......पृच्छा। (भ. २६/१)

गौतम! अनन्तर-उपपन्न कोई नैरयिक पाप-कर्म का बन्ध करता था.....प्रथम, द्वितीय भंग की वक्तव्यता।

३०. भन्ते! सलेश्य-अनन्तर-उपपन्न-नैरयिक-जीव क्या पाप-कर्म का बन्ध करता था....? पृच्छा। (भ. २६/१)

गौतम! प्रथम, द्वितीय भंग की वक्तव्यता, इसी प्रकार सर्वत्र प्रथम, द्वितीय भंग की वक्तव्यता, इतना विशेष है–(अनन्तर-उपपन्न-नैरयिक में पाप-कर्म के विषय में) सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि, मन-योग और वचन-योग की पृच्छा अपेक्षित नहीं हैं। इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमारों की वक्तव्यता। द्वीन्द्रिय-, त्रीन्द्रिय- और चतुरिन्द्रिय-जीव में वचन-योग का पद विविक्षत नहीं है। पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक जीव में भी सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि, अवधि-ज्ञान, विभंग-ज्ञान, मन-योग और वचन-योग–इनकी वक्तव्यता अपेक्षित नहीं है। मनुष्यों में अलेश्य, सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि, मनःपर्यव-ज्ञान, केवल-ज्ञान, विभंग-ज्ञान, नो-संज्ञोपयुक्त, अवेदक, अकषाय, मन-योग, वचन-योग और अयोगी–ये इन ग्यारह पदों की वक्तव्यता अपेक्षित नहीं है। वानमन्तर-, ज्योतिषिक- और वैमानिक-देव में नैरयिक की भांति तीन पद (सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि, मन-योग और वचन-योग) की वक्तव्यता अपेक्षित नहीं है। सभी जीवों के जो शेष स्थान हैं, उनमें सर्वत्र प्रथम, द्वितीय भंग वक्तव्य है। एकेन्द्रिय-जीव में सर्वत्र प्रथम, द्वितीय भंग वक्तव्य है। जैसी पाप की वक्तव्यता है, वैसी ही ज्ञानावरणीय-कर्म का दण्डक भी वक्तव्य है, इसी प्रकार आयुष्य-कर्म को छोड़कर यावत् अन्तराय-कर्म का दण्डक वक्तव्य है।

३१. भन्ते! अनन्तर-उपपन्न-नैरयिक-जीव क्या आयुष्य-कर्म का बन्ध करता था....? पृच्छा। (भ. २६/२९)

गौतम! अनन्तर-उपपन्न-नैरयिक-जीव ने आयुष्य-कर्म का बन्ध किया था, नहीं कर रहा है, करेगा।

३२. भन्ते! सलेश्य-अनन्तर-उपपन्नक-नैरयिक-जीव ने क्या आयुष्य-कर्म का बन्ध किया था?

(भ. २६/२९)। इसी प्रकार तृतीय भंग वक्तव्य है। इसी प्रकार यावत् अनाकार-उपयोग--उपयुक्त-नैरयिक-जीव की वक्तव्यता। सर्वत्र तृतीय भंग वक्तव्य है। इसी प्रकार मनुष्य को छोड़कर यावत् (उपपन्न) वैमानिक-देवों की वक्तव्यता। (तृतीय भंग) मनुष्य के सर्वत्र तृतीय और चतुर्थ भंग वक्तव्यता, इतना विशेष है–कृष्णपाक्षिक मनुष्य में तृतीय भंग। सभी (अनन्तर-उत्पन्न)-जीवों में जो नानात्व है, वह पूर्ववत् वक्तव्य है।

३३. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

तीसरा-दसवां उद्देशक

तीसरा उद्देशक

(परम्पर-उपपन्नक का बन्धाबन्ध)

३४. भन्ते! परम्पर-उपपन्नक (प्रथम समय को छोड़कर दूसरे, तीसरे आदि समय के)-नैरयिक--जीव ने क्या पाप-कर्म का बन्ध किया था?.....पृच्छा। (भ. २६/१)

गौतम! परम्पर-उपपन्नक किसी नैरयिक-जीव ने पाप कर्म का बंध किया था। प्रथम, द्वितीय भंग वक्तव्य है। इसी प्रकार जैसे प्रथम उद्देशक की वक्तव्यता थी वैसे ही परम्पर-उपपन्न--नैरयिक के विषय में भी उद्देशक वक्तव्य है। यहां नैरयिक आदि–चौबीस दण्डकों के परम्पर--उपपन्न-जीवों के विषय में परम्पर-उपपन्न-नैरयिक आदि की भांति नव दण्डकों (पाप-कर्म

का बन्ध तथा आठ कर्म के आठ दण्डक) का संग्रह अपेक्षित है। आठों कर्म-प्रकृतियों में उस कर्म की जो वक्तव्यता है, वह न हीन और न अधिक ज्ञातव्य है। यावत् परम्पर-उपपन्नक वैमानिक-देव और अनाकार-उपयोग-उपयुक्त तक की वक्तव्यता।

३५. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

चौथा उद्देशक

(अनन्तरावगाढ का बन्धाबन्ध-पद)

३६. भन्ते! प्रथम समय में जिस क्षेत्र का अवगाहन जिस नैरयिक ने किया था उस अनन्तरावगाढ-नैरयिक जीव ने क्या पाप-कर्म का बन्ध किया था...? पृच्छा। (**भ.** २६/१)

गौतम! किसी अनन्तरावगाढ-नैरयिक-जीव ने पाप-कर्म का बंध किया था, इसी प्रकार जैसे अनन्तरोपपन्नक-नवदण्डक-संगृहीत-उद्देशक की वक्तव्यता, वैसे ही अनन्तरावगाढ-नैरयिक जीव की भी न हीन और न अधिक वक्तव्यता। (अनन्तरावगाढ)-नैरयिक आदिक जीव यावत् (अनन्तरावगाढ)-वैमानिक-देव तक वक्तव्यता। (भ. २६/२९-३२)

३७. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

पांचवां उद्देशक

(परम्परावगाढ का बन्धाबन्ध)

३८. भन्ते! दूसरे, तीसरे आदि समय में जिस क्षेत्र का अवगाहन जिस नैरयिक ने किया था उस परम्परावगाढ-नैरयिक जीव ने क्या पाप-कर्म का बन्ध किया था....? (**भ.** २६/१)

जिस प्रकार परम्परोपपन्नक-उद्देशक की वक्तव्यता है। (भ. २६/३४) वही निरवशेष वक्तव्य है।

३९. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

छठा उद्देशक

(अनन्तराहारक का बन्धाबन्ध)

४०. भन्ते! प्रथम समय में जिस नैरयिक ने आहार लिया था उस अनन्तराहारक-नैरयिक-जीव ने क्या पाप-कर्म का बन्ध किया था.....? पृच्छा। (**भ.** २६/१)। इसी प्रकार जैसे अनन्तरोपपन्नक -उद्देशक की वक्तव्यता है (**भ.** २६/२९-३२) वही निरवशेष वक्तव्य है।

४१. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

सातवां उद्देशक

(परम्पराहारक का बन्धाबन्ध)

४२. भंते! दूसरे, तीसरे आदि समय में जिस नैरयिक ने आहार लिया था उस परम्पराहारक-

-नैरयिक-जीव ने क्या पाप कर्म का बन्ध किया था......? पृच्छा। (भ. २६/१)

गौतम! इसी प्रकार जैसा परम्परोपपन्नक-उद्देशक की वक्तव्यता है, (भ. २६/३४) वही निरवशेष वक्तव्य है।

४३. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

आठवां उद्देशक

(अनन्तर-पर्याप्तक-बन्धाबन्ध)

४४. भन्ते! जो पर्याप्तकत्व के प्रथम समयवर्ती नैरयिक-जीव है उस अनन्तर-पर्याप्तक--नैरयिक-जीव ने क्या पाप-कर्म का बन्ध किया था.......? पृच्छा। (भ. २६/१)

गौतम! जैसे अनन्तरोपपन्नक-(नैरयिक आदि) की वक्तव्यता है, (भ. २६/२९-३२) वही निरवशेष वक्तव्य है।

४५. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

नौवां उद्देशक

(परम्पर-पर्याप्तक का बन्धाबन्ध)

४६. भन्ते! जो पर्यातकत्व के दूसरे, तीसरे आदि समयवर्ती नैरयिक-जीव है उस परम्परपर्याप्तक-नैरयिक-जीव ने क्या पाप-कर्म का बन्ध किया था.....? पृच्छा। (भ. २६/१)

गौतम! इसी प्रकार जैसा परम्परोपपन्नक-(नैरयिक आदि)-उद्देशक की वक्तव्यता है, (भ. २६/३४) वैसा निरवशेष वक्तव्य है।

४७. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है। इसी प्रकार भगवान् गौतम यावत् संयम और तप से अपने आप को भावित करते हुये विहरण कर रहे हैं।

दसवां उद्देशक

(चरम का बन्धाबन्ध)

४८. भन्ते! उस चरम-नैरयिक जो पुनः नैरयिक भव प्राप्त नहीं करेगा उस जीव ने क्या पाप--कर्म का बन्ध किया था......? पृच्छा। ((भ. २६/१)

गौतम! इसी प्रकार जैसे परम्परोपपन्नक-(नैरयिक आदि)-उद्देशक की वक्तव्यता है। (भ. २६/३४) वैसे ही चरम-(नैरयिक आदि)-उद्देशक निरवशेष वक्तव्य है।

४९. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है। इस प्रकार भगवान गौतम यावत् संयम और तप से अपने आप को भावित करते हुये विहरण कर रहे हैं।

ग्यारहवां उद्देशक

(अचरम का बन्धाबन्ध)

५०. भन्ते! अचरम-नैरयिक जो पुनः वही भव प्राप्त करेगा—उसने क्या पाप-कर्म का बन्ध किया था......? पृच्छा। (**भ.** २६/१)

गौतम! कोई अचरम-नैरयिक-जीव ने इसी प्रकार जैसे पहले उद्देशक में (**भ.** २६/१-२८) प्रथम, द्वितीय दो भंग की सर्वत्र वक्तव्यता यावत् पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक।

५१. भन्ते अचरम-मनुष्य ने पाप-कर्म का बन्ध किया था.....? पृच्छा। (भ. २६/१)

गौतम! कोई अचरम-मनुष्य ने पाप-कर्म का बन्ध किया था, कर रहा है, करेगा, कोई अचरम-मनुष्य ने पाप-कर्म का बन्ध किया था कर रहा है, नहीं करेगा, कोई अचरम-मनुष्य ने पाप-कर्म का बन्ध किया था, नहीं कर रहा है, नहीं करेगा।

५२. भन्ते! सलेश्य-अचरम-मनुष्य ने क्या पाप-कर्म का बन्ध किया था...? इसी प्रकार अन्तिम भंग छोड़ कर पहले तीन भंग की वक्तव्यता। इसी प्रकार जैसे प्रथम उद्देशक की भांति वैसे ही बतलाना चाहिए, केवल इतना विशेष है—जिन बीस पदों में वहां (**भगवती,** शतक छब्बीस, उद्देशक पहला, सूत्र संख्या २,३,६,७,८,१०,११,१२,१४,१५ में) चार भंग बतलाये गए थे, उन पदों में से यहां (अचरम-मनुष्य में) चरम भंग छोड़कर पहले तीन भंग वक्तव्य हैं। अलेश्य-, केवलज्ञानी- और अयोगी-मनुष्य—इन तीनों पदों में अचरम-मनुष्य की पृच्छा अपेक्षित नहीं है, शेष पूर्ववत् (**भ.** २६/३,५,६,९,१०,११,१२,१३)। अचरम वानमन्तर-, ज्योतिषिक-, वैमानिक-देवों की नैरयिक की भांति (**भ.** २६/५०) वक्तव्यता।

५३. भन्ते! अचरम-नैरयिक-जीव ने क्या ज्ञानावरणीय-कर्म का बन्ध किया था.....? पृच्छा। (**भ.** २६/१८)

गौतम! इसी प्रकार अचरम-नैरयिक के पाप-कर्म-बन्ध की भांति (**भ.** २६/५०) वक्तव्यता, इतना विशेष है—कषाय-सहित- और लोभ-कषाय-सहित-अचरम-मनुष्य में प्रथम और द्वितीय भंग वक्तव्य हैं। शेष अट्ठारह पदों में चरम भंग को छोड़ कर पहले तीन भंग वक्तव्य हैं, शेष पूर्ववत् यावत् वैमानिक-देवों की वक्तव्यता (**भ.** २६/५०-५२)। दर्शनावरणीय-कर्म के बन्ध के विषय में भी इसी प्रकार निरवशेष वक्तव्यता। वेदनीय-कर्म के बन्ध में सर्वत्र ही प्रथम-द्वितीय दो भंग की वक्तव्यता यावत् वैमानिक-देव, इतना विशेष है—मनुष्य में अलेश्य, केवली और अयोगी—इन तीन की वक्तव्यता अपेक्षित नहीं है।

५४. भन्ते! अचरम-नैरयिक-जीव ने क्या मोहनीय-कर्म का बन्ध किया था.....? पृच्छा। (**भ.** २६/२१)

गौतम! अचरम-नैरयिक-जीव के मोहनीय-कर्म के बन्ध के विषय में जैसे पाप-कर्म की वक्तव्यता है, (**भ.** २६/५०-५३) वैसे ही निरवशेष वक्तव्य यावत् वैमानिक।

५५. भन्ते! अचरम-नैरयिक-जीव ने क्या आयुष्य-कर्म का बन्ध किया था.....? पृच्छा। (**भ.** २६/१)

गौतम! प्रथम और तृतीय—दो भंग वक्तव्य है। (सलेश्य आदि) सर्व पदों में भी इसी प्रकार वक्तव्यता। नैरयिकों में प्रथम और तृतीय भंग की वक्तव्यता। इतना विशेष है—सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि में तृतीय भंग वक्तव्य है। इसी प्रकार यावत् स्तनितकुमारों की वक्तव्यता। अचरम पृथ्वीकायिक-, अप्कायिक- और वनस्पतिकायिक-जीव के तेजो-लेश्या में केवल तृतीय भंग की वक्तव्यता। (अचरम पृथ्वीकायिक-, अप्कायिक- और वनस्पतिकायिक-जीव के तेजो-लेश्या को छोड़ कर) शेष सभी पदों में सर्वत्र प्रथम और तृतीय भंग की वक्तव्यता। अचरम तेजस्कायिक- और वायुकायिक-जीव में सर्वत्र प्रथम और तृतीय—ये दो भंग वक्तव्य हैं। अचरम द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय में पूर्ववत् वक्तव्यता। इतना विशेष है—सम्यक्त्व, औघिक, आभिनिबोधिक-ज्ञान और श्रुत-ज्ञान—इन चारों ही पदों में तृतीय भंग की वक्तव्यता। अचरम पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक के सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि-पद में तृतीय भंग की वक्तव्यता। शेष सभी पदों में सर्वत्र प्रथम और तृतीय भंग की वक्तव्यता।

अचरम मनुष्य में सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि, अवेदक और कषाय-रहित (इन तीन पदों में) तृतीय भंग की वक्तव्यता, अलेश्य, केवल-ज्ञानी और अयोगी (इन तीन पदों की विवक्षा यथोचित नहीं है।) शेष पदों में सर्वत्र प्रथम और तृतीय भंग की वक्तव्यता। वानमन्तर-, ज्योतिषिक- और वैमानिक-देव में अचरम-नैरयिक (**भ. २६/५५**) की भांति वक्तव्यता। अचरम-नैरयिक आदि सभी सभी जीवों में नाम-, गोत्र- और अन्तराय-कर्म के बन्ध में ज्ञानावरणीय-कर्म-बन्ध की भांति निरवशेष वक्तव्यता।

५६. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है। इस प्रकार भगवान् गौतम यावत् संयम और तप से अपने आप को भावित करते हुये विहरण कर रहे हैं।

● ● ●

सत्ताईसवां शतक

पहला-ग्यारहवां उद्देशक

जीवों का पाप-कर्म-करण-अकरण-पद

१. भन्ते! जीव ने क्या पाप-कर्म किया था, करता है, करेगा? जीव ने क्या पाप-कर्म किया था, करता है, नहीं करेगा? जीव ने क्या पाप-कर्म किया था, नहीं करता, करेगा? जीव ने क्या पाप-कर्म किया था, नहीं करता है, नहीं करेगा?

गौतम! किसी जीव ने पाप-कर्म किया था, करता है, करेगा; किसी जीव ने पाप-कर्म किया था, करता है, नहीं करेगा; किसी जीव ने पाप कर्म किया था, नहीं करता, करेगा; किसी जीव ने पाप-कर्म किया था, नहीं करता, नहीं करेगा।

२. भन्ते! लेश्या-युक्त जीव ने क्या पाप-कर्म किया था, करता है और करेगा?

इसी प्रकार इस अभिलाप के द्वारा बन्धि-शतक में जो वक्तव्यता, निरवशेष वक्तव्यता। उसी प्रकार नवदण्डक (भ. २६/३४) में संगृहीत ग्यारह उद्देशक वक्तव्य हैं।

• • •

अट्ठाईसवां शतक

पहला उद्देशक

जीवों का पाप-कर्म-समर्जन-समाचरण-पद

१. भन्ते! जीवों ने पाप-कर्म का समर्जन कहां (किस गति में) किया था? पाप-कर्म का समाचरण कहां किया था?

गौतम! १. सभी जीवों ने तिर्यग्योनिकों में पाप-कर्म का समर्जन किया था, पाप कर्म का समाचरण किया था। २. अथवा सभी जीवों ने तिर्यग्योनिकों में तथा नैरयिकों में पाप-कर्म का समर्जन किया था, समाचरण किया था। ३. अथवा सभी जीवों ने तिर्यग्योनिकों में तथा मनुष्यों में पाप-कर्म का समर्जन किया था, समाचरण किया था। ४. अथवा सभी जीवों ने तिर्यग्योनिक में तथा देवों में पाप-कर्म का समर्जन किया था, समाचरण किया था। ५. अथवा सभी जीवों ने तिर्यग्योनिकों, नैरियकों तथा मनुष्यों में पाप-कर्म का समर्जन किया था, समाचरण किया था। ६. अथवा सभी जीवों ने तिर्यग्योनिकों, नैरयिकों तथा देवों में पाप-कर्म का समर्जन किया था, समाचरण किया था। ७. अथवा सभी जीवों ने तिर्यग्योनिकों, मनुष्यों तथा देवों में पाप-कर्म का समर्जन किया था, समाचरण किया था। ८. अथवा सभी जीवों ने तिर्यग्योनिकों, नैरयिकों, मनुष्यों तथा देवों में पाप-कर्म का समर्जन किया था, समाचरण किया था।

२. भन्ते! लेश्यायुक्त-जीवों ने पाप-कर्म का समर्जन कहां (किस गति में) किया था? पाप--कर्म का समाचरण कहां किया था? पूर्ववत् वक्तव्यता। इसी प्रकार कृष्ण-लेश्या-युक्त-यावत् लेश्या-रहित-जीवों की वक्तव्यता। इसी प्रकार कृष्णपाक्षिकों, शुक्लपाक्षिकों यावत् अनाकार-उपयोग-युक्त-जीव की वक्तव्यता।

३. भन्ते! नैरयिकों ने पाप-कर्म का समर्जन कहां किया था? समाचरण कहां किया था?

गौतम! सभी नैरयिकों ने तिर्यग्-योनिकों में पाप-कर्म का समर्जन किया था, समाचरण किया था। इसी प्रकार आठ भंग वक्तव्य हैं। इसी प्रकार सर्वत्र आठ भंग वक्तव्य हैं यावत् अनाकारोपयुक्त-जीवों की वक्तव्यता। इसी प्रकार यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता। इसी प्रकार ज्ञानावरणीय-कर्म के साथ भी दण्डक वक्तव्य है। इसी प्रकार यावत् अन्तराय-कर्म के साथ भी दण्डक वक्तव्य है। इसी प्रकार जीव से लेकर वैमानिक पर्यवसान ये नव दण्डक होते हैं।

४. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है। इस प्रकार भगवान् गौतम यावत् संयम और तप से अपने आप को भावित करते हुए विहरण कर रहे हैं।

दूसरा उद्देशक

५. भन्ते! अनन्तर-उपपन्न (प्रथम समय के)-नैरयिकों ने पाप-कर्म का समर्जन कहां किया था? समाचरण कहां किया था?

गौतम! सभी अनन्तर-उपपन्न-नैरयिकों-तिर्यग्योनिकों में पाप-कर्म का समर्जन किया था, समाचरण किया था, इसी प्रकार यहां भी आठ भंग वक्तव्य हैं। इसी प्रकार अनन्तर-उपपन्न--नैरयिकों के जिसमें जो है, लेश्या से लेकर अनाकार-उपयोग-उपयुक्त-पर्यवसान सभी इस भजना के द्वारा वक्तव्य हैं यावत् वैमानिक, इतना विशेष है—अनन्तर-उपपन्नक-जीवों में जो परिहरणीय है, उनका बन्धि-शतक (भ. २६वां शतक) की भांति यहां परिहार करणीय है। इसी प्रकार ज्ञानावरणीय-कर्म के साथ भी दण्डक वक्तव्य हैं। इसी प्रकार यावत् अन्तराय--कर्म के साथ निरवशेष वक्तव्यता। नव दण्डकों में संगृहीत यह उद्देशक वक्तव्य है।

६. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

तीसरा-ग्यारहवां उद्देशक

७. इसी प्रकार इस क्रम से जैसे बन्धि-शतक (भ. २६वें शतक) में उद्देशकों की परिपाटी है वैसे ही यहां भी आठ भंग ज्ञातव्य हैं, इतना विशेष है—यह ज्ञातव्य है—जो जिसमें प्राप्त है वह वक्तव्य है यावत् अचरम-उद्देशक ये सभी ग्यारह उद्देशक वक्तव्य हैं।

८. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है। इस प्रकार भगवान् गौतम यावत् विहरण कर रहे हैं।

• • •

उनतीसवां शतक

पहला उद्देशक

जीवों के पाप-कर्म के प्रारंभ और अन्त का पद

१. भन्ते! जीवों ने पाप-कर्म के वेदन का प्रारंभ एक साथ किया था, उसके वेदन का अन्त एक साथ किया था? जीवों ने पाप-कर्म के वेदन का प्रारंभ एक साथ किया था और उसके वेदन का अन्त विषम समय में किया था? जीवों ने पाप-कर्म के वेदन का प्रारंभ विषम समय में किया तथा उसका अंत एक साथ किया था? जीवों ने पाप-कर्म के वेदन का प्रारंभ विषम समय में किया तथा उसका अंत भी विषम समय में किया था?

गौतम! कुछ जीवों ने पाप-कर्म के वेदन का एक साथ प्रारम्भ किया था तथा उसका अन्त एक साथ किया यावत् कुछ जीवों ने पाप-कर्म के वेदन का प्रारंभ विषम समय में किया था और उसका अन्त विषम समय में किया था।

२. भन्ते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—कुछ जीवों ने पाप-कर्म के वेदन का प्रारम्भ एक साथ किया था और उसका अन्त एक साथ किया था? शेष पूर्ववत्।

गौतम! जीव चार प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—कुछ जीव सम-आयु और एक साथ उपपन्न हैं। कुछ जीव सम-आयु और विषम-काल में उपपन्न हैं। कुछ जीव विषम-आयु और एक साथ उपपन्न हैं। कुछ जीव विषम-आयु और विषम-काल में उपपन्न हैं। इनमें जो जीव सम-आयु और एक साथ उपपन्न हैं उन्होंने पाप-कर्म के वेदन का प्रारम्भ एक साथ किया था और उसका अंत एक साथ किया था। इनमें जो सम-आयु और विषम-काल में उपपन्न हैं, उन्होंने पाप-कर्म के वेदन का प्रारंभ एक साथ किया था और उसका अन्त विषम-काल में किया था। इनमें जो विषम-आयु और एक साथ उपपन्न हैं, उन्होंने पाप-कर्म के वेदन का प्रारंभ विषम-काल में किया था और उसका अन्त एक साथ किया था। इनमें जो विषम-आयु और विषम-काल में उपपन्न हैं उन्होंने पाप-कर्म के वेदन का प्रारंभ विषम-काल में किया था और उसका अन्त विषम-काल में किया था। गौतम! इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है यावत् पूर्ववत्।

३. भन्ते! लेश्या-युक्त-जीवों ने पाप-कर्म के वेदन का प्रारंभ एक साथ किया था, उसका अन्त एक साथ किया था? पूर्ववत् वक्तव्यता। इसी प्रकार सभी में भी यावत् अनाकारोपयुक्त-जीवों की वक्तव्यता। ये सारे ही पद इसी वक्तव्यता से कथनीय है।

४. भन्ते! नैरयिकों ने पाप-कर्म के वेदन का प्रारंभ एक साथ किया था और उसका अन्त भी

एक साथ किया था......? पृच्छा।

गौतम! कुछ नैरयिकों ने पाप-कर्म के वेदन का प्रारंभ एक साथ किया था, इसी प्रकार जैसे जीवों की वक्तव्यता, वैसे ही नैरयिकों की वक्तव्यता यावत् अनाकारोपयुक्त-जीवों की वक्तव्यता। इसी प्रकार यावत् वैमानिकों की जिसमें जो प्राप्त है वह इसी क्रम से वक्तव्य है। जिस प्रकार पाप-कर्म का दण्डक है उसी क्रम से आठों ही कर्म-प्रकृतियों के आठ दण्डक वक्तव्य हैं—जीव से लेकर वैमानिक-पर्यवसान है। नव दण्डक में संगृहीत यह प्रथम उद्देशक वक्तव्य है।

५. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

दूसरा उद्देशक

६. भंते! अनन्तर-उपपन्नक-नैरयिकों ने पाप-कर्म के वेदन का प्रारम्भ एक साथ किया था और अन्त एक साथ किया था........? पृच्छा।

गौतम! अनन्तर-उपपन्न कुछ नैरयिकों ने पाप-कर्म के वेदन का प्रारंभ एक साथ किया था और उनका अन्त एक साथ किया था, कुछ नैरयिकों ने पाप-कर्म के वेदन का प्रारंभ एक साथ किया था, उसका अन्त विषम-काल में किया था।

७. भन्ते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—कुछ नैरयिकों ने पाप-कर्म के वेदन का प्रारंभ एक साथ किया था? पूर्ववत्.........?

गौतम! अनन्तर-उपपन्न-नैरयिक दो प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—कुछ नैरयिक सम-आयु और एक साथ उपपन्न हैं, कुछ नैरयिक सम-आयु और विषम-काल में उपपन्न हैं। इनमें जो सम--आयु और एक साथ उपपन्न हैं उन्होंने पाप-कर्म के वेदन का प्रारम्भ एक साथ किया और उसका अन्त एक साथ किया था। जो सम-आयु और विषम-काल में उपपन्न हैं उन्होंने पाप-कर्म के वेदन का प्रारम्भ एक साथ किया था और अन्त विषम-काल में किया था। यह इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—पूर्ववत् वक्तव्य है।

८. भन्ते! लेश्या-युक्त-अनन्तर-उपपन्नक-नैरयिकों ने पाप-कर्म के वेदन का प्रारम्भ एक साथ किया था और उसका अन्त एक साथ किया था....?

इसी प्रकार पूर्ववत् वक्तव्यता, यावत् अनाकारोपयुक्त-जीवों की वक्तव्य हैं। इसी प्रकार असुरकुमारों की भी वक्तव्यता है। इसी प्रकार यावत् वैमानिकों की वक्तव्यता। इतना अन्तर है—जिसके जो प्राप्त हैं, उसके वह वक्तव्य है। इसी प्रकार ज्ञानावरणीय-कर्म के साथ भी। इसी प्रकार निरवशेष वक्तव्यता यावत् अंतराय-कर्म के साथ।

९. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है। इस प्रकार भगवान् गौतम यावत् संयम और तप से अपने आप को भावित करते हुवे विहरण कर रहे हैं।

तीसरा—ग्यारहवां उद्देशक

१०. इसी प्रकार इस गमक के द्वारा बन्धि-शतक में जो उद्देशकों की परिपाटी बताई गई है वही यहां भी वक्तव्य है यावत् अचरम-उद्देशक। अनन्तर-उद्देशकों के चार की वक्तव्यता एक है, शेष सात उद्देशकों की वक्तव्यता एक है। • • •

तीसवां शतक

पहला उद्देशक

समवसरण-पद

१. भन्ते! समवसरण कितने प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! समवसरण चार प्रज्ञप्त हैं, जैसे—क्रियावादी, अक्रियावादी, अज्ञानिकवादी और वैनयिकवादी।

२. भन्ते! जीव क्या क्रियावादी हैं? अक्रियावादी हैं? अज्ञानिकवादी हैं? वैनयिकवादी हैं?

गौतम! जीव क्रियावादी भी हैं, अक्रियावादी भी हैं, अज्ञानिकवादी भी हैं, वैनयिकवादी भी हैं।

३. भन्ते! लेश्या-युक्त-जीव क्या क्रियावादी हैं.....? पृच्छा।

गौतम! लेश्या-युक्त-जीव क्रियावादी भी है, अक्रियावादी भी है, अज्ञानिकवादी भी है और वैनयिकवादी भी हैं। इसी प्रकार यावत् शुक्ल-लेश्या वाले जीवों की वक्तव्यता।

४. भन्ते! लेश्या-रहित-जीवों की ....? पृच्छा।

गौतम! लेश्या-रहित-जीव क्रियावादी हैं, अक्रियावादी नहीं हैं, अज्ञानिकवादी नहीं हैं, वैनयिकवादी नहीं हैं।

५. भन्ते! कृष्णपाक्षिक-जीव क्या क्रियावादी हैं........? पृच्छा।

गौतम! कृष्णपाक्षिक-जीव क्रियावादी नहीं हैं, अक्रियावादी हैं, अज्ञानिकवादी भी हैं, वैनयिकवादी भी हैं। शुक्लपाक्षिक-जीवों की लेश्या-युक्त-जीवों की भांति वक्तव्यता। सम्यग्-दृष्टि-जीवों की लेश्या-रहित-जीवों की भांति वक्तव्यता। मिथ्या-दृष्टि जीवों की कृष्ण-पाक्षिक जीवों की भांति वक्तव्यता।

६. सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि-जीवों की ....? पृच्छा।

गौतम! सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि वाले जीव क्रियावादी नहीं हैं, अक्रियावादी नहीं हैं, अज्ञानिकवादी भी हैं, वैनयिकवादी भी हैं। ज्ञानी यावत् केवलज्ञानी की लेश्या-रहित-जीवों की भांति वक्तव्यता। अज्ञानी यावत् विभंग-ज्ञानी की कृष्णपाक्षिक-जीवों की भांति वक्तव्यता। आहार-संज्ञा-उपयुक्त-जीव यावत् परिग्रह-संज्ञा-उपयुक्त-जीव लेश्या-युक्त--जीवों की भांति वक्तव्यता। नोसंज्ञा-उपयुक्त-जीव की लेश्या-रहित-जीवों की भांति

वक्तव्यता। सवेदक- यावत् नपुंसक-वेदक-जीव की लेश्या-युक्त जीवों की भांति वक्तव्यता। अवेदक की लेश्या-रहित-जीवों की भांति वक्तव्यता। कषाय-सहित-जीव यावत् लोभ-कषाय-युक्त की लेश्या-सहित-जीवों की भांति वक्तव्यता। कषाय-रहित-जीवों की। लेश्या-रहित-जीवों की भांति वक्तव्यता। सयोग यावत् काय-योगी-जीवों की लेश्या-युक्त-जीवों की भांति वक्तव्यता। अयोगी-जीवों की लेश्या-रहित-जीवों की भांति वक्तव्यता। साकारोपयुक्त-अनाकारोपयुक्त-जीवों की लेश्या-युक्त जीवों की भांति वक्तव्यता।

७. भन्ते! नैरयिक-जीव क्या क्रियावादी हैं......? पृच्छा।

गौतम! नैरयिक जीव क्रियावादी भी हैं यावत् वैनयिकवादी भी हैं।

८. भन्ते! लेश्या-युक्त-नैरयिक जीव क्या क्रियावादी हैं? पूर्ववत् वक्तव्यता। इसी प्रकार यावत् कापोत-लेश्या वाले नैरयिक-जीवों की वक्तव्यता। कृष्णपाक्षिक-नैरयिक-जीव क्रियावादी को छोड़ कर शेष सब हैं। इसी प्रकार इस क्रम से जीवों की जो वक्तव्यता, वही नैरयिकों की वक्तव्यता है यावत् अनाकारोपयुक्त-नैरयिक, इतना विशेष है—जो है, वह वक्तव्य है, शेष वक्तव्य नहीं है। जिस प्रकार नैरयिकों की वक्तव्यता उसी प्रकार यावत् स्तनितकुमारों की वक्तव्यता।

९. भन्ते! पृथ्वीकायिक-जीव क्या क्रियावादी हैं.....? पृच्छा।

गौतम! पृथ्वीकायिक-जीव क्रियावादी नहीं हैं, अक्रियावादी भी हैं, अज्ञानिकवादी भी हैं, वैनयिकवादी नहीं हैं। इसी प्रकार पृथ्वीकायिक-जीवों में जो प्राप्ति है, उन सबमें सर्वत्र ये दो मध्यम समवसरण वक्तव्य हैं यावत् अनाकारोपयुक्त। इसी प्रकार यावत् चतुरिन्द्रिय-जीवों की वक्तव्यता। सब स्थानों में ये दो मध्यम समवसरण वक्तव्य हैं। सम्यक्त्व और ज्ञान के विषय में भी ये ही दो मध्यम समवसरण वक्तव्य हैं। तिर्यग्योनिक-पञ्चेन्द्रिय की (भ. ३०/२) जीवों की भांति वक्तव्यता, इतना विशेष है—जो जिसमें है वह उसमें वक्तव्य है। मनुष्यों की जीवों की भांति निरवशेष वक्तव्य। वानमन्तर-देवों, ज्योतिषिक-देवों तथा वैमानिक-देवों में असुरकुमारों की भांति वक्तव्यता।

१०. भन्ते! क्रियावादी जीव क्या नैरयिक-आयु का बन्ध करते हैं? तिर्यग्योनिक-आयु का बन्ध करते हैं? मनुष्य-आयु का बन्ध करते हैं? देव-आयु का बन्ध करते हैं?

गौतम! क्रियावादी जीव नैरयिक-आयु का बन्ध नहीं करते, तिर्यग्योनिक-आयु का बन्ध नहीं करते हैं, मनुष्य-आयु का बन्ध भी करते हैं, देव-आयु का बन्ध भी करते हैं।

११. यदि वे देव-आयु का बन्ध करते हैं तो क्या भवनवासी-देव-आयु का बन्ध करते हैं यावत् वैमानिक-देव-आयु का बन्ध करते हैं?

गौतम! वे भवनवासी-देव-आयु का बन्ध नहीं करते, वानमन्तर-देव-आयु का बन्ध नहीं करते, ज्योतिष्क-देव-आयु का बन्ध नहीं करते, वैमानिक-देव-आयु का बन्ध करते हैं।

१२. भन्ते! अक्रियावादी जीव क्या नैरयिक-आयु का बन्ध करते हैं, तिर्यग्योनिक-आयु का बन्ध करते हैं........? पृच्छा।

गौतम! अक्रियावादी जीव नैरयिक-आयु का बन्ध भी करते हैं, यावत् देव-आयु का भी बन्ध

करते हैं। इसी प्रकार अज्ञानिकवादी भी, वैनयिकवादी भी वक्तव्य हैं।

१३. भन्ते! लेश्या-युक्त-क्रियावादी-जीव क्या नैरयिक-आयु का बन्ध करते हैं........? पृच्छा।

गौतम! लेश्या-युक्त-क्रियावादी-जीव नैरयिक-आयु का बन्ध नहीं करते, इसी प्रकार जीव की भांति लेश्या-युक्त जीवों में चारों समवसरण वक्तव्य हैं।

१४. भन्ते! कृष्ण-लेश्या वाले क्रियावादी-जीव क्या नैरयिक-आयु का बन्ध करते हैं.........? पृच्छा।

गौतम! कृष्ण-लेश्या वाले क्रियावादी-जीव नैरयिक-आयु का बन्ध नहीं करते, तिर्यग्योनिक--आयु का बन्ध नही करते, मनुष्य-आयु का बन्ध करते हैं, देव-आयु का बन्ध नहीं करते। कृष्ण-लेश्या वाले अक्रियावादी, अज्ञानिकवादी और वैनयिकवादी जीव चारों ही प्रकार के आयुष्य का बन्ध करते हैं। इसी प्रकार नील-लेश्या वाले और कापोत-लेश्या वाले क्रियावादी, अक्रियावादी, अज्ञानिकवादी और वैनयिकवादी जीवों की वक्तव्यता।

१५. भन्ते! तेजो-लेश्या वाले क्रियावादी-जीव क्या नैरयिक-आयु का बन्ध करते हैं......? पृच्छा।

गौतम! तेजो-लेश्या वाले क्रियावादी-जीव नैरयिक-आयु का बन्ध नहीं करते, तिर्यग्योनिक--आयु का बन्ध नहीं करते, मनुष्य-आयु का भी बन्ध भी करते हैं, देव-आयु का भी बन्ध करते हैं। यदि देव-आयु का बन्ध करते हैं, तो पूर्ववत् वक्तव्यता। (भ. ३०/११)

१६. भन्ते! तेजो-लेश्या वाले अक्रियावादी-जीव क्या नैरयिक-आयु का बन्ध करते हैं.......? पृच्छा।

गौतम! तेजो-लेश्या वाले अक्रियावादी-जीव नैरयिक-आयु का बन्ध नहीं करते, मनुष्य-आयु का भी बन्ध करते, तिर्यग्योनिक-आयु का भी बन्ध करते हैं, देव-आयु का भी बन्ध करते हैं। इसी प्रकार तेजो-लेश्या वाले अज्ञानिकवादी, वैनयिकवादी-जीवों की भी वक्तव्यता। जिस प्रकार तेजो-लेश्या वाले अक्रियावादी-जीवों की वक्तव्यता। वैसे ही पद्म-लेश्या वाले भी, शुक्ललेश्या वाले जीव भी ज्ञातव्य हैं।

१७. भन्ते! लेश्या-रहित-क्रियावादी-जीव क्या नैरयिक-आयु.........? पृच्छा।

गौतम! लेश्या-रहित-क्रियावादी-जीव नैरयिक-आयु का बन्ध नहीं करते, तिर्यग्योनिक-आयु का बन्ध नहीं करते, मनुष्य-आयु का बन्ध नहीं करते, देव-आयु का बन्ध नहीं करते।

१८. भन्ते! कृष्णपाक्षिक-अक्रियावादी-जीव क्या नैरयिक-आयु........? पृच्छा।

गौतम! कृष्णपाक्षिक-अक्रियावादी-जीव नैरयिक-आयु का भी बन्ध करते हैं। इसी प्रकार चारों प्रकार के आयु का भी बन्ध करते हैं। इसी प्रकार कृष्णपाक्षिक-अज्ञानिकवादी भी और वैनयिकवादी भी वक्तव्य हैं। शुक्लपाक्षिक-जीव लेश्या-युक्त-जीवों की भांति वक्तव्य है।

१९. भन्ते! सम्यग्-दृष्टि-क्रियावादी-जीव क्या नैरयिक-आयु का बन्ध करते हैं.......? पृच्छा।

गौतम! सम्यग्-दृष्टि-क्रियावादी-जीव नैरयिक-आयु का बन्ध नहीं करते, तिर्यग्योनिक-आयु का बन्ध नहीं करते, मनुष्य-आयु का भी बन्ध करते हैं, देव-आयु का भी बन्ध करते हैं। मिथ्या-दृष्टि की कृष्णपाक्षिक-जीवों की भांति वक्तव्यता है।

२०. भन्ते! सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि-अज्ञानिकवादी-जीव क्या नैरयिक-आयु (का बन्ध करते हैं).........?

लेश्या-रहित जीवों की भांति वक्तव्यता। इसी प्रकार वैनयिकवादी की भी वक्तव्यता। ज्ञानी (समुच्चय), आभिनिबोधिक-ज्ञानी, श्रुत-ज्ञानी और अवधि-ज्ञानी सम्यग्-दृष्टि-जीवों की भांति वक्तव्यता।

२१. भन्ते! मनःपर्यव-ज्ञानी...........? पृच्छा।

गौतम! मनःपर्यव-ज्ञानी-जीव नैरयिक-आयु का बन्ध नहीं करते, तिर्यग्योनिक-आयु का बन्ध नहीं करते, मनुष्य-आयु का बन्ध नहीं करते, देव-आयु का बन्ध करते हैं।

२२. (भन्ते!) यदि वे देव-आयु का बन्ध करते हैं तो क्या भवनवासी-देव-आयु का बन्ध करते हैं.....? पृच्छा।

गौतम! वे भवनवासी-देव-आयु का बन्ध नहीं करते, वानमन्तर-देव-आयु का बन्ध नहीं करते, ज्योतिष्क-देव-आयु का बन्ध नहीं करते, वैमानिक-देव-आयु का बन्ध करते हैं। केवल-ज्ञानी की लेश्या-रहित-जीवों की भांति वक्तव्यता। अज्ञानी-जीव यावत् विभंग--अज्ञानी की कृष्णपाक्षिक-जीवों की भांति वक्तव्यता। चारों संज्ञा वाले जीव लेश्या-युक्त--जीवों की भांति वक्तव्य हैं। नोसंज्ञोपयुक्त-जीव मनःपर्यव-ज्ञानी की भांति वक्तव्य हैं। सवेदक यावत् नपुंसकवेदक की लेश्या-युक्त-जीवों की भांति वक्तव्यता। अवेदक की लेश्या-रहित-जीवों की भांति वक्तव्यता। कषाय-सहित (समुच्चय) यावत् लोभकषाय-सहित की लेश्यायुक्त-जीवों की भांति वक्तव्यता। कषाय-रहित की लेश्या-रहित-जीवों की भांति वक्तव्यता। सयोगी यावत् काय-योगी की लेश्या-युक्त जीवों की भांति वक्तव्यता। अयोगी की लेश्या-रहित-जीवों की भांति वक्तव्यता। साकारोपयुक्त और अनाकारोपयुक्त की लेश्या-युक्त-जीवों की भांति वक्तव्यता।

२३. भन्ते! क्रियावादी-नैरयिक-जीव क्या नैरयिक आयु का (बन्ध करते हैं).......? पृच्छा।

गौतम! नैरयिक-आयु का बन्ध नहीं करते, तिर्यग्योनिक-आयु का बन्ध नहीं करते हैं, मनुष्य-आयु का बन्ध करते हैं, देव-आयु का बन्ध नहीं करते।

२४. भन्ते! अक्रियावादी-नैरयिक-जीव क्या नैरयिक-आयु का बन्ध करते हैं........? पृच्छा।

गौतम! नैरयिक-आयु का बन्ध नहीं करते, तिर्यग्योनिक-आयु का भी बन्ध करते हैं, मनुष्य--आयु का भी बन्ध करते हैं, देव-आयु का बन्ध नहीं करते। इसी प्रकार अज्ञानिकवादी और वैनयिकवादी की भी वक्तव्यता।

२५. भन्ते! लेश्या-युक्त-नैरयिक-क्रियावादी-जीव क्या नैरयिक-आयु का बन्ध करते हैं? इसी प्रकार जो क्रियावादी-नैरयिक जीव हैं वे सभी एक मनुष्य-आयु का ही बन्ध करते हैं, जो अक्रियावादी-, अज्ञानिकवादी- और वैनयिकवादी-नैरयिक-जीव हैं वे सभी स्थानों में भी

नैरयिक-आयु का बन्ध नहीं करत हैं, तिर्यग्योनिक-आयु का भी बन्ध करते हैं, मनुष्य-आयु का भी बन्ध करते हैं, देव-आयु का बन्ध नहीं करते, केवल इतना अन्तर है—सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि वाले जीवों में ऊपर के दो समवसरण के जीव किसी भी आयुष्य का बन्ध नहीं करते। जैसा जीव-पद में बताया गया वैसा वक्तव्य है। इसी प्रकार यावत् 'स्तनितकुमार तक' देवों के आयुष्य-बन्ध जैसा नैरयिक-जीवों के विषय में बताया गया है वैसा ही जानना चाहिए।

२६. भन्ते! अक्रियावादी-पृथ्वीकायिक-जीवों के विषय में.....पृच्छा।

गौतम! अक्रियावादी-पृथ्वीकायिक-जीव नैरयिक-आयु का बन्ध नहीं करते, तिर्यग्योनिक-आयु का बन्ध करते हैं, मनुष्य-आयु का बन्ध करते हैं, देव-आयु का बन्ध नहीं करते। इसी प्रकार अज्ञानिकवादी-पृथ्वीकायिक-जीवों के विषय में समझना चाहिए।

२७. भन्ते! लेश्या-युक्त-पृथ्वीकायिक-जीव के विषय में (पृच्छा)। (गौतम!) इसी प्रकार जो-जो पद पृथ्वीकायिक-जीवों के विषय में बताये हैं उन-उन में दो मध्यम समवसरणों में वैसा ही वक्तव्य है। (अर्थात् केवल अक्रियावादी और अज्ञानिकवादी लेश्या-युक्त-पृथ्वीकायिक-जीव वक्व्य हैं) इसी प्रकार दो प्रकार के आयुष्य का बन्ध करते हैं, केवल इतना अन्तर है—तेजो-लेश्या वाले पृथ्वीकायिक-जीव किसी भी आयुष्य का बन्ध नहीं करते। इसी प्रकार अर्थात् पृथ्वीकायिक-जीवों की भांति अप्कायिक- और वनस्पतिकायिक-जीवों के विषय में भी वक्तव्यता है। तेजस्कायिक और वायुकायिक जीव सभी स्थानों में दो मध्यम समवसरणों में—अर्थात् अक्रियावादी और अज्ञानिकवादी होते हैं, वे नैरयिक-आयु का बन्ध नहीं करते, तिर्यग्योनिक-आयु का बन्ध करते हैं, मनुष्य-आयु का बन्ध नहीं करते, देव-आयु का बन्ध नहीं करते। द्वीन्द्रिय-, त्रीन्द्रिय- तथा चतुरिन्द्रिय-जीव पृथ्वीकायिक-जीवों की भांति वक्तव्य हैं, केवल इतना अन्तर है—सम्यकत्वी- और ज्ञानी-जीव एक (किसी) भी आयुष्य का बन्ध नहीं करते।

२८. भन्ते! क्रियावादी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव क्या नैरयिक-आयु का बन्ध करते हैं....पृच्छा।

गौतम! क्रियावादी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव जैसा मनःपर्यव-ज्ञानी के जीवों के विषय में बताया गया है वैसा जानना चाहिए। अक्रियावादी-, अज्ञानिकवादी- और वैनयिकवादी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव चारों प्रकार के आयुष्य का बन्ध करते हैं। जिस प्रकार से समुच्चय पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों की वक्तव्यता है उसी प्रकार लेश्या-युक्त-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों के विषय में वक्तव्य है।

२९. भन्ते! कृष्ण-लेश्या वाले क्रियावादी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव क्या नैरयिक-आयु का बन्ध करते हैं....पृच्छा।

गौतम! कृष्ण-लेश्या वाले क्रियावादी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव नैरयिक-आयु का बन्ध नहीं करते, तिर्यग्योनिक-आयु का बन्ध नहीं करते, मनुष्य-आयु का बन्ध नहीं करते, देव-आयु का बन्ध नहीं करते। अक्रियावादी, अज्ञानिकवादी, और वैनयिकवादी जीव चारों

प्रकार के आयुष्य का बन्ध करते हैं। जिस प्रकार कृष्ण-लेश्या वाले जीवों के विषय में बताया गया है वैसे ही नील-लेश्या वाले भी, कापोत-लेश्या वाले भी जीवों के विषय में वक्तव्य है। तेजो-लेश्या वाले पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव लेश्या-युक्त-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों की भांति वक्तव्य है, केवल इतना अन्तर है—अक्रियावादी-, अज्ञानिकवादी- और वैनयिकवादी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव नैरयिक-आयु का बन्ध नहीं करते, तिर्यग्योनिक-आयु का भी बन्ध करते हैं, मनुष्य-आयु का भी बन्ध करते हैं, देव-आयु का भी बन्ध करते हैं। इसी प्रकार पद्म-लेश्या-वाले पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव भी वक्तव्य हैं। इसी प्रकार शुक्ल-लेश्या वाले पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव भी वक्तव्य हैं। कृष्णपाक्षिक-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव तीनों समवसरणों में (अक्रियावादी, अज्ञानिकवादी और वैनयिकवादी) चारों प्रकार के आयुष्य का बन्ध करते हैं। शुक्लपाक्षिक-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव लेश्या-युक्त-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों की भांति वक्तव्य हैं। जैसे मनःपर्यव-ज्ञानी-जीव वैमानिक-देवों का आयुष्य बन्ध करते हैं वैसे ही सम्यग्-दृष्टि-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव के विषय में जानना चाहिए। मिथ्या-दृष्टि-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक जीव कृष्णपाक्षिक की भांति वक्तव्य हैं। (अज्ञानिकवादी एवं वैनयिकवादी) नैरयिक जीवों की भांति सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव एक भी आयुष्य का बन्ध नहीं करते। ज्ञानी (समुच्चय) यावत् अवधि-ज्ञानी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव तक सम्यग्-दृष्टि-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों की भांति वक्तव्य हैं। अज्ञानी (समुच्चय)- यावत् विभंग-ज्ञानी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक जीवों तक कृष्णपाक्षिक-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों की भांति वक्तव्य हैं। शेष सभी पदों के यावत् अनाकारोपयुक्त-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों तक जैसे लेश्या-युक्त पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों के विषय में बताया गया वैसे ही वक्तव्य हैं। पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों की जैसे वक्तव्यता बताई गई वैसी वक्तव्यता मनुष्यों की भी वक्तव्य है, केवल इतना अन्तर है—मनःपर्यव-ज्ञानी- तथा नो-संज्ञोपयुक्त-मनुष्यों के विषय में जैसे सम्यग्-दृष्टि-तिर्यग्योनिक-जीवों के विषय में बताया वैसे ही वक्तव्य है। लेश्या-रहित, केवल-ज्ञानी, अवेदक, अकषायी और अयोगी—ये सारे एक भी आयुष्य का बन्ध नहीं करते। जैसे औधिक (समुच्चय) जीवों के विषय में बताया गया वैसे ही शेष सब पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों की भांति वक्तव्य हैं। वानमन्तर-देवों, ज्योतिषिक-देवों तथा वैमानिक-देवों के जीव असुरकुमार-देवों के जीवों की तरह वक्तव्य हैं।

३०. भन्ते! क्रियावादी-जीव क्या भवसिद्धिक है? अभवसिद्धिक हैं?

गौतम! क्रियावादी-जीव भवसिद्धिक हैं, अभवसिद्धिक नहीं हैं।

३१. भन्ते! अक्रियावादी-जीव क्या भवसिद्धिक है....पृच्छा।

गौतम! अक्रियावादी-जीव भवसिद्धिक भी हैं, अभवसिद्धिक भी है। इसी प्रकार अज्ञानिकवादी-जीव भी और वैनयिकवादी-जीव भी समझने चाहिए।

३२. भन्ते! लेश्या-युक्त-क्रियावादी-जीव क्या भवसिद्धिक है.....? पृच्छा।

गौतम! लेश्या-युक्त-क्रियावादी-जीव भवसिद्धिक हैं, अभवसिद्धिक नहीं हैं।

३३. *भन्ते! लेश्या-युक्त-अक्रियावादी-जीव क्या भवसिद्धिक हैं....पृच्छा।*

गौतम! लेश्या-युक्त-अक्रियावादी-जीव भवसिद्धिक भी हैं, अभवसिद्धिक भी हैं। इसी प्रकार अज्ञानिकवादी भी, वैनयिकवादी भी लेश्या-सहित-जीवों की भांति वक्तव्य हैं। इसी प्रकार यावत् शुक्ल-लेश्या वाले जीवों तक समझना चाहिए।

३४. भन्ते! लेश्या-रहित-क्रियावादी-जीव क्या भवसिद्धिक हैं....पृच्छा।

गौतम! लेश्या-रहित-क्रियावादी-जीव भवसिद्धिक हैं, अभवसिद्धिक नहीं है। इसी प्रकार इस अभिलाप (पाठ-पद्धति) द्वारा कृष्णपाक्षिक-जीव तीनों ही समवसरण (अक्रियावादी, अज्ञानिकवादी और वैनयिकवादी) वाले कृष्णपाक्षिक-जीवों में भवसिद्धिक और अभवसिद्धिक दोनों की भजना (विकल्प) है। चारों ही समवसरण वाले शुक्लपाक्षिक-जीव भवसिद्धिक होते हैं, अभवसिद्धिक नहीं होते। सम्यग्-दृष्टि वाले जीव लेश्यारहित-जीवों की भांति वक्तव्य हैं। मिथ्या-दृष्टि-जीव कृष्णपाक्षिक की भांति वक्तव्य हैं। दोनों ही समवसरण वाले (अज्ञानिकवादी और वैनयिकवादी) सम्यग्-मिथ्यादृष्टि वाले जीव लेश्या-रहित-जीवों की भांति वक्तव्य हैं। ज्ञानी (समुच्चय) यावत् केवल-ज्ञानी-जीव भवसिद्धिक होते हैं, अभवसिद्धिक नहीं होते। अज्ञानी (समुच्चय) यावत् विभंग-ज्ञानी-जीवों तक कृष्णपाक्षिक की भांति वक्तव्य हैं। चारों संज्ञा वाले जीव लेश्या-सहित-जीवों की भांति वक्तव्य हैं। नो--संज्ञोपयुक्त-जीव सम्यग्-दृष्टि-जीवों की भांति वक्तव्य हैं। सवेदक-जीव (समुच्चय) यावत् नपुंसक-वेद वाले जीवों तक लेश्या-सहित जीवों की भांति वक्तव्य हैं। अवेदक (समुच्चय)--जीव सम्यग्-दृष्टि-जीवों की भांति वक्तव्य हैं। सकषायी (समुच्चय)- यावत् लोभ--कषायी-जीवों तक लेश्या-सहित-जीवों की भांति वक्तव्य हैं। अकषायी (समुच्चय)-जीव सम्यग्-दृष्टि-जीवों की भंति वक्तव्य हैं। सयोगी (समुच्चय)-यावत् काय-योगी-जीवों तक लेश्या-सहित-जीवों की भांति वक्तव्य हैं। अयोगी (समुच्चय)-जीव सम्यग्-दृष्टि-जीवों की भांति वक्तव्य हैं। साकारोपयुक्त- और अनाकारोपयुक्त-जीव लेश्या-सहित-जीवों की भांति वक्तव्य हैं। इसी प्रकार नैरयिक-जीवों की वक्तव्यता है, केवल इतना अन्तर है—जिसमें जो प्राप्त होता है वह ज्ञातव्य है। इसी प्रकार असुरकुमार-देवों के विषय में भी यावत् स्तनितकुमार—दोनों तक वक्तव्य हैं। दो मध्यम समवसरण वाले (अक्रियावादी और अज्ञानिकवादी) पृथ्वीकायिक-जीव सभी स्थानों में भवसिद्धिक भी होते हैं और अभवसिद्धिक भी होते हैं। इसी प्रकार यावत् वनस्पतिकायिक-जीवों तक वक्तव्य हैं। द्वीन्द्रिय-, त्रीन्द्रिय- और चतुरिन्द्रिय-जीवों के विषय में भी उसी प्रकार वक्तव्य हैं, केवल इतना अन्तर है—दो मध्यम समवसरण वाले इन जीवों में सम्यक्त्व, समुच्चय ज्ञान, आभिनिबोधक-ज्ञान और श्रुत-ज्ञान में भवसिद्धिक होते हैं अभवसिद्धिक नहीं होते। शेष उसी प्रकार वक्तव्य हैं। पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव नैरयिक-जीवों की भांति वक्तव्य हैं, केवल इतना अन्तर है—जिसमें जो प्राप्त होता है वह जानना चाहिए। मनुष्य औधिक जीवों की भांति वक्तव्य हैं। वानमन्तर-देवों, ज्योतिष्क-देवों तथा वैमानिक-देवों के जीवों में असुरकुमार-देवों के जीवों की भांति वक्तव्य हैं।

३५. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

दूसरा उद्देशक

३६. भन्ते! अनन्तर-उपपन्न (प्रथम समय के)-नैरयिक-जीव क्या क्रियावादी...पृच्छा।

गौतम! अनन्तर-उपपन्न (प्रथम समय के)-नैरयिक-जीव क्रियावादी भी होते हैं यावत् वैनयिकवादी भी होते हैं।

३७. भन्ते! लेश्या-युक्त-अनन्तर-उपपन्न (प्रथम समय के)-नैरयिक-जीव क्या क्रियावादी होते हैं...? इसी प्रकार जानना चाहिए। इसी प्रकार जैसे प्रथम उद्देशक में नैरयिक-जीवों की वक्तव्यता है वैसे ही यहां भी वक्तव्य है, केवल इतना अन्तर है—अनन्तर-उपपन्न-नैरयिक जीवों में जो-जो बोल प्राप्त हैं वे-वे वक्तव्य हैं। इसी प्रकार सभी जीवों के विषय में यावत् वैमानिक-देवों के विषय में वक्तव्य हैं, केवल इतना अन्तर है—अनन्तर-उपपन्न (प्रथम समय के)-जीवों के विषय में जो बोल जहां प्राप्त हैं वे बोल वहां वक्तव्य हैं।

३८. भन्ते! क्रियावादी-अनन्तर-उपपन्न (प्रथम समय के)-नैरयिक-जीव क्या नैरयिक-आयु का बन्ध करते हैं.....पृच्छा।

गौतम! क्रियावादी-अनन्तर-उपपन्न (प्रथम समय के)-नैरयिक-जीव नैरयिक-आयु का बन्ध नहीं करते, तिर्यग्योनिक-आयु का बन्ध नहीं करते, मनुष्य-आयु का बन्ध नहीं करते, देव--आयु का बन्ध नहीं करते। इसी प्रकार अक्रियावादी भी, अज्ञानिकवादी भी और वैनयिकवादी भी जानना चाहिए।

३९. भन्ते! लेश्या-युक्त-क्रियावादी-अनन्तर-उपपन्न (प्रथम समय के)-नैरयिक-जीव क्या नैरयिक-आयु का बन्ध करते हैं...पृच्छा।

गौतम! लेश्या-युक्त-क्रियावादी-अनन्तर-उपपन्न-नैरयिक-जीव नैरयिक-आयु का बन्ध नहीं करते यावत् देव-आयु का बन्ध नहीं करते। इसी प्रकार यावत् वैमानिक तक। इसी प्रकार अनन्तर-उपपन्न (प्रथम समय के)-नैरयिक-जीव सभी स्थानों में (सभी बोलों में) किसी भी आयुष्य का बन्ध नहीं करते यावत् अनाकारोपयुक्त तक व्यक्तव्य हैं। इसी प्रकार यावत् वैमानिक तक वक्तव्य हैं, केवल इतना अन्तर है—जो बोल जिसमें हैं वे उसमें वक्तव्य हैं।

४०. भन्ते! क्रियावादी-अनन्तर-उपपन्न (प्रथम समय के)-नैरयिक-जीव क्या भवसिद्धिक हैं? अभवसिद्धिक हैं?

गौतम! क्रियावादी-अनन्तर-उपपन्न-नैरयिक-जीव भवसिद्धिक हैं, अभवसिद्धिक नहीं हैं।

४१. भन्ते! अक्रियावादी के विषय में....पृच्छा।

गौतम! अक्रियावादी-अनन्तर-उपपन्न (प्रथम समय के)-नैरयिक-जीव भवसिद्धिक भी हैं, अभवसिद्धिक भी हैं। इसी प्रकार अज्ञानिकवादी भी और वैनयिकवादी भी ज्ञातव्य हैं।

४२. भन्ते! लेश्या-युक्त-क्रियावादी-अनन्तर-उपपन्न (प्रथम समय के)-नैरयिक-जीव क्या भवसिद्धिक हैं? अभवसिद्धिक हैं?

गौतम! लेश्या-युक्त-क्रियावादी-अनन्तर-उपपन्न-नैरयिक-जीव भवसिद्धिक होते हैं, अभवसिद्धिक नहीं होते। इसी प्रकार इस अभिलाप के द्वारा जैसे औघिक-उद्देशक में

नैरयिक-जीवों की वक्तव्यता बतलाई गई वैसे ही यहां पर भी बतलानी चाहिए, यावत् अनाकारोपयुक्त तक। इसी प्रकार यावत् वैमानिक-देवों तक केवल इतना अन्तर है—जो बोल जिसमें हैं उसे उसमें बतलाना चाहिए। उसका लक्षण इस प्रकार है—जो क्रियावादी-शुक्लपाक्षिक-सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि-जीव होते हैं ये सभी भवसिद्धिक होते हैं, अभवसिद्धिक नहीं होते। शेष सभी भवसिद्धिक भी होते हैं अभवसिद्धिक भी होते हैं।

४३. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

तीसरा उद्देशक

४४. भन्ते! परम्पर-उपपन्न (प्रथम समय को छोड़कर दूसरे, तीसरे आदि समय के)-नैरयिक--जीव क्या क्रियावादी हैं.....? इसी प्रकार जैसे औधिक-उद्देशक बताया गया वैसे ही परम्पर-उपपन्न-नैरयिक आदि जीवों के विषय में सम्पूर्ण रूपसे वक्तव्य हैं, उसी प्रकार दण्डक-त्रय में संग्रहीत नैरयिक आदि जीवों के विषय में क्रियावादी आदि का निरूपण वक्तव्य हैं। (प्रथम दण्डक में नैरयिक आदि पदों में क्रियावादी आदि की प्ररूपणा वक्तव्य है। दूसरे दण्डक में आयु-बन्ध की प्ररूपणा वक्तव्य है। तीसरे दण्डक में भवसिद्धिक-अभवसिद्धिक की प्ररूपणा वक्तव्य है।)

४५. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है। इस प्रकार भगवान गौतम यावत् संयम और तप से अपने आप को भावित करते हुवे विहरण कर रहे हैं।

चौथा-ग्यारहवां उद्देशक

४६. इसी प्रकार इसी क्रम से जो-जो बोल बन्धि-शतक (भ. २६वें शतक) में जो उद्देशकों की परिपाटी बताई गई है वही यहां पर भी वक्तव्य है यावत् अचरम-उद्देशक तक, केवल इतना अन्तर है—चारों ही अनन्तर-उद्देशकों का एक ही गमक है। चारों ही परम्पर-उद्देशकों का एक ही गमक है। (प्रथम उद्देशक औधिक (समुच्चय) है इस प्रकार नौ उद्देशक हुए)। इसी प्रकार चरम-उद्देशक भी, और अचरम-(उद्देशक) भी इसी प्रकार, केवल इतना अन्तर है—इनमें लेश्या-रहित, केवली और अयोगी ये तीन बोल वक्तव्य नहीं हैं (क्योंकि असंभव है), शेष उसी प्रकार वक्तव्य है।

४७. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है। ये ग्यारह उद्देशक भी (समवरण शतक के) हैं।

• • •

इक्कतीसवां शतक

पहला उद्देशक

१. राजगृह नगर में यावत् इस प्रकार बोले—भन्ते! क्षुल्लक-युग्म कितने प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! क्षुल्लक-युग्म चार प्रज्ञप्त हैं, जैसे—कृतयुग्म (चार), त्र्योज (तीन), द्वापरयुग्म (दो), कल्योज (एक)।

२. भन्ते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—क्षुल्लक-युग्म चार प्रज्ञप्त हैं, जैसे—कृतयुग्म-यावत् कल्योज?

गौतम! जो राशि चार (संख्या) द्वारा अपहृत होने पर चार शेष रहती है उसे क्षुल्लक-कृतयुग्म कहा जाता है। (जैसे—चार, आठ, बारह, आदि संख्या वाली राशि क्षुल्लक-कृतयुग्म हैं)। जो राशि चार (संख्या) द्वारा अपहृत होने पर तीन शेष रहती हैं उसे क्षुल्लक-त्र्योज कहा जाता है। (तीन, सात, ग्यारह आदि संख्या वाली राशि क्षुल्लक-त्र्योज हैं)। जो राशि चार (संख्या) द्वारा अपहृत होने पर दो शेष रहती है, उसे क्षुल्लक-द्वापरयुग्म कहा जाता है। (दो, छह, दस आदि संख्या वाली राशि क्षुल्लक-द्वापरयुग्म हैं)। जो राशि चार (संख्या) द्वारा अपहृत होने पर एक शेष रहती है उसे क्षुल्लक-कल्योज कहा जाता है। (एक, पांच, नौ आदि संख्या वाली राशि क्षुल्लक-कल्योज है)

यह इस अपेक्षा से यावत् कल्योज।

३. भन्ते! क्षुल्लक-कृतयुग्म-नैरयिक-जीव कहां से आकर उपपन्न होते हैं—क्या नैरयिक-जीवों से आकर उपपन्न होते हैं? तिर्यग्योनिक जीवों से आकर उपपन्न होते हैं....पृच्छा।

गौतम! क्षुल्लक-कृतयुग्म-नैरयिक-जीव नैरयिक-जीवों से आकर उपपन्न नहीं होते। इसी प्रकार नैरयिकों का उपपात जैसे **पण्णवणा** के छट्ठे पद 'अवक्रान्ति' (सू. १७-८०) में बतलाया गया है वैसे वक्तव्य हैं।

४. भन्ते! एक समय में वे जीव कितने उपपन्न होते हैं?

गौतम! क्षुल्लक-कृतयुग्म-नैरयिक-जीव एक समय में चार, आठ, बारह, सोलह, संख्येय अथवा असंख्येय उपपन्न होते हैं।

५. भन्ते! वे जीव कैसे उपपन्न होते हैं?

गौतम! जिस प्रकार कोई प्लवक (कूदने वाला) कूदता हुआ मुझे इस प्रकार अध्यवसाय का निर्वर्तन करके कूदने की क्रिया के उपाय से, इसी प्रकार जैसे २५वें शतक में आठवें उद्देशक

(भ. २५।६२०) में नैरयिक-जीवों की वक्तव्यता है वैसे ही यहां पर भी बतलानी चाहिए, यावत् अपने प्रयोग से उपपन्न होते हैं, पर-प्रयोग से उपपन्न नहीं होते।

६. भन्ते! रत्नप्रभा-पृथ्वी के क्षुल्लक-कृतयुग्म-नैरयिक जीव कहां से आकर उपपन्न होते हैं? इसी प्रकार जैसे समुच्चय नैरयिक-जीवों के विषय में वक्तव्यता है वैसी ही वक्तव्यता रत्नप्रभा के विषय में बतलानी चाहिए, यावत् 'पर-प्रयोग से उपपन्न नहीं होते' तक। इसी प्रकार शर्कराप्रभा के विषय में भी इसी प्रकार यावत् 'अधःसप्तमी' तक बतलानी चाहिए। इसी प्रकार उपपात जैसे **पण्णवणा** के छठे पद अवक्रान्ति (सू. ८०) में बतलाया गया है वैसे वक्तव्य है।

असंज्ञी, जीव प्रथम नरक-पृथ्वी; सरीसृप जीव (भुजसरीसृप), पक्षी तीसरी नरक-पृथ्वी; सिंह चतुर्थ नरक-पृथ्वी; उरग (उरसरीसृप) पञ्चमी नरक-पृथ्वी; स्त्रियां छट्ठी नरक-पृथ्वी; मत्स्य और मनुष्य सातवीं नरक-पृथ्वी तक उपपन्न होते हैं। यह नरक-पृथ्वियों में उपपात जान लेना चाहिए।

शेष उसी प्रकार समझना चाहिए।

७. भन्ते! क्षुल्लक-त्र्योज-नैरयिक जीव कहां से आकर उपपन्न होते हैं—क्या नैरयिक-जीवों से आकर उपपन्न होते हैं....?

उपपात जैसे **पण्णवणा** के छट्ठे पद अवक्रान्ति (सू. ७९-८०) में बताया गया है वैसे वक्तव्य हैं।

८. भन्ते! एक समय में वे जीव कितने उपपन्न होते हैं?

गौतम! क्षुल्लक-त्र्योज-नैरयिक-जीव एक समय में तीन, सात, ग्यारह, पन्द्रह, संख्येय अथवा असंख्येय उपपन्न होते हैं। शेष कृतयुग्म-नैरयिक की भांति वक्तव्य हैं। इसी प्रकार यावत् 'अधःसप्तमी' तक समझना चाहिए।

९. भन्ते! क्षुल्लक-द्वापरयुग्म-नैरयिक-जीव कहां से उपपन्न होते हैं? इसी प्रकार क्षुल्लक--कृतयुग्म की भांति वक्तव्य हैं, केवल इतना अन्तर है—उनकी संख्या दो, छह, दस, चौदह, संख्येय अथवा असंख्येय उपपन्न होते हैं। शेष उसी प्रकार समझना चाहिए यावत् 'अधःसप्तमी' तक समझना चाहिए।

१०. भन्ते! क्षुल्लक-कल्योज-नैरयिक-जीव कहां से आकर उपपन्न होते हैं? इसी प्रकार क्षुल्लक-कृतयुग्म की भांति वक्तव्य हैं, केवल इतना अन्तर है—उनकी संख्या एक, पांच, नौ, तेरह, संख्येय अथवा असंख्येय उपपन्न होते हैं, शेष उसी प्रकार समझना चाहिए। इसी प्रकार यावत् 'अधःसप्तमी' तक समझना चाहिए।

११. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है। इस प्रकार भगवान् गौतम यावत् संयम और तप से अपने आप को भावित करते हुवे विहरण कर रहे हैं।

दूसरा उद्देशक

१२. भन्ते! कृष्णलेश्य-क्षुल्लक-कृतयुग्म-नैरयिक-जीव कहां से आकर उपपन्न होते हैं? इसी

प्रकार औधिक-गमक (समुच्चय) की भांति वक्तव्य हैं। यावत् 'परप्रयोग से उपपन्न नहीं होते' तक, केवल इतना अन्तर है–उपपात जैसे **पण्णवणा** के छट्ठे पद 'अवक्रान्ति' (सू. ७७) में बतलाया गया है वैसा समझना चाहिए। धूमप्रभा-पृथ्वी के नैरयिकों के उपपात की पृच्छा। शेष वैसे ही समझना चाहिए। (जैसा अवक्रान्ति-पद में बताया गया है)

१३. भन्ते! धूमप्रभा-पृथ्वी के कृष्णलेश्य-क्षुल्लक-कृतयुग्म-नैरयिक-जीव कहां से आकर उपपन्न होते हैं? इसी प्रकार सम्पूर्ण आलापक वक्तव्य है। इसी प्रकार तमा-पृथ्वी में (छट्ठी नारकी) भी अधःसप्तमी-पृथ्वी में भी बतलाना चाहिए, केवल इतना अन्तर है–सर्वत्र उपपात जैसे **पण्णवणा** के छट्ठे पद 'अवक्रान्ति' (सू. ७७-८०) में बतलाया गया है वैसा समझना चाहिए।

१४. भन्ते! कृष्णलेश्य-क्षुल्लक-त्र्योज-नैरयिक-जीव कहां से आकर उपपन्न होते हैं? इसी प्रकार वक्तव्य है, केवल इतना अन्तर है–(उनकी संख्या) तीन, सात, ग्यारह, पन्द्रह, संख्येय अथवा असंख्येय हैं। शेष उसी प्रकार वक्तव्य है। इसी प्रकार यावत् अधःसप्तमी तक भी वक्तव्य है।

१५. भन्ते! कृष्णलेश्य-क्षुल्लक-द्वापरयुग्म-नैरयिक-जीव कहां से आकर उपपन्न होते हैं–? इसी प्रकार वक्तव्य है, केवल इतना अन्तर है–(उनकी संख्या) दो, छह, दस अथवा चौदह है। (संख्येय अथवा असंख्येय जीव उपपन्न होते हैं)। शेष उसी प्रकार वक्तव्य है। इसी प्रकार धूमप्रभा में भी यावत् 'अधःसप्तमी' तक वक्तव्य हैं।

१६. भन्ते! कृष्णलेश्य-क्षुल्लक-कल्योज-नैरयिक-जीव कहां से आकर उपपन्न होते हैं? इसी प्रकार वक्तव्य है, केवल इतना अन्तर है–(उनकी संख्या) एक, पांच, नौ, तेरह, संख्येय अथवा असंख्येय उपपन्न होते हैं, शेष उसी प्रकार वक्तव्य है। इसी प्रकार धूमप्रभा (पांचवीं नारकी) में भी, तमःप्रभा (छट्ठी नारकी) में भी, अधःसप्तमी में भी वक्तव्य है।

१७. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

तीसरा उद्देशक

१८. भन्ते! नीललेश्य-क्षुल्लक-कृतयुग्म-नैरयिक-जीव कहां से आकर उपपन्न होते हैं? इसी प्रकार कृष्णलेश्य-क्षुल्लक-कृतयुग्म की भांति वक्तव्य है, केवल इतना अन्तर है–जो उपपात जैसा बालुकाप्रभा में बतलाया गया है वह वक्तव्य है, शेष उसी प्रकार वक्तव्य है। बालुकाप्रभा-पृथ्वी में नीललेश्य-क्षुल्लक-कृतयुग्म-नैरयिक-जीवों का उपपात उसी प्रकार वक्तव्य है। पंकप्रभा में भी इसी प्रकार, धूमप्रभा में भी इसी प्रकार वक्तव्य है। चारों युग्मों में भी इसी प्रकार वक्तव्य है, केवल इतना अन्तर है–परिमाण (संख्या) जानना चाहिए। परिमाण (संख्या) कृष्णलेश्य-उद्देशक की भांति वक्तव्य है। शेष उसी तरह वक्तव्य है।

१९. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

चौथा उद्देशक

२०. भन्ते! कापोतलेश्य-क्षुल्लक-कृतयुग्म-नैरयिक-जीव कहां से आकर उपपन्न होते हैं? इसी

प्रकार कृष्णलेश्य-क्षुल्लक-कृतयुग्म-नैरयिक-जीवों की भांति वक्तव्य है, केवल इतना अन्तर है—जो उपपात जैसा रत्नप्रभा में बतलाया गया है वह वक्तव्य है, शेष उसी प्रकार वक्तव्य है।

२१. भन्ते! रत्नप्रभा-पृथ्वी के कापोतलेश्य-क्षुल्लक-कृतयुग्म-नैरयिक-जीव कहां से आकर उपपन्न होते हैं? इसी प्रकार वक्तव्य है। इसी प्रकार शर्कराप्रभा में भी, बालुकाप्रभा में भी इसी प्रकार वक्तव्य है, चारों युग्मों में भी इसी प्रकार वक्तव्य है, केवल इतना अन्तर है—परिमाण (संख्या) जानना चाहिए। (परिमाण) कृष्णलेश्य-उद्देशक की भांति वक्तव्य है। शेष उसी प्रकार वक्तव्य है।

२२. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

पांचवां उद्देशक

२३. भन्ते! भवसिद्धिक-क्षुल्लक-कृतयुग्म-नैरयिक-जीव कहां से आकर उपपन्न होते हैं—क्या नैरयिक जीवों से....? इसी प्रकार जैसा औघिक (समुच्चय) गमक वैसा ही सम्पूर्ण वक्तव्य है। यावत् 'पर-प्रयोग से उपपन्न नहीं होते' तक।

२४. भन्ते! रत्नप्रभा-पृथ्वी के भवसिद्धिक-क्षुल्लक-कृतयुग्म-नैरयिक-जीव कहां से आकर उपपन्न होते हैं...? इसी प्रकार सम्पूर्णतया वक्तव्य है। इसी प्रकार यावत् 'अधःसप्तमी' तक वक्तव्य है। इसी प्रकार भवसिद्धिक-क्षुल्लक-त्र्योज-नैरयिक-जीव भी। इसी प्रकार यावत् कल्योज तक वक्तव्य है, केवल इतना अन्तर है—परिमाण (संख्या) ज्ञातव्य है, परिमाण (संख्या) जैसे प्रथम उद्देशक में पहले बतलाया गया है।

२५. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

छट्ठा उद्देशक

२६. भन्ते! कृष्णलेश्य-भवसिद्धिक-क्षुल्लक-कृतयुग्म-नैरयिक-जीव कहां से आकर उपपन्न होते हैं? इसी प्रकार जैसा औघिक (समुच्चय)-कृष्णलेश्य-उद्देशक में बताया गया है वैसा सम्पूर्णतया चारों युग्मों में भी वक्तव्य है यावत्—

२७. भन्ते! अधःसप्तमी-पृथ्वी के कृष्णलेश्य-क्षुल्लक-कल्योज-नैरयिक-जीव कहां से आकर उपपन्न होते हैं......? उसी प्रकार वक्तव्य है।

२८. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

सातवां से अट्ठाइसवां उद्देशक

(सातवां उद्देशक)

२९. नीललेश्य-भवसिद्धिक चारों ही युग्मों में (नैरयिक-जीव) उसी प्रकार वक्तव्य है जैसा औघिक (समुच्चय)-नीललेश्य-उद्देशक में बताया गया है।

३०. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है। इसी प्रकार भगवान् गौतम यावत् संयम और तप से अपने आप को भावित करते हुए विहरण कर रहे हैं।

(आठवां उद्देशक)

३१. कापोतलेश्य-भवसिद्धिक चारों ही युग्मों में (नैरयिक-जीव) उसी प्रकार उपपन्न कराना चाहिए जैसा औधिक (समुच्चय) कापोतलेश्य-उद्देशक में बतलाया गया है।

३२. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते वह ऐसा ही है। इसी प्रकार भगवान् गौतम यावत् संयम और तप से अपने आप को भावित करते हुए विहरण कर रहे हैं।

(नवां-बारहवां उद्देशक)

३३. जैसे भवसिद्धिकों के चार उद्देशक बताये गए हैं वैसे ही अभवसिद्धिकों के भी चार उद्देशक बताने चाहिए यावत् 'कापोतलेश्य-उद्देशक' तक।

३४. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

(तेरहवां-सोलहवां उद्देशक)

३५. इसी प्रकार लेश्या-युक्त-सम्यग्-दृष्टि-(नैरयिक-जीवों) के भी चारों उद्देशक करने चाहिए, केवल इतना अन्तर है—सम्यग्-दृष्टि-(नैरयिक-जीवों का) प्रथम और द्वितीय इन दो उद्देशकों में अधःसप्तमी-पृथ्वी में उपपन्न नहीं करना चाहिए। शेष उसी प्रकार वक्तव्य है।

३६. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

(सतरहवां से बीसवां उद्देशक)

३७. मिथ्यादृष्टि-(नैरयिक-जीवों के) भी चार उद्देशक करने चाहिए जैसा भवसिद्धिक-नैरयिक--जीवों के बतलाये गये हैं।

३८. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

(इक्कीसवां-अट्ठाईसवां उद्देशक)

३९. इसी प्रकार लेश्या-संयुक्त-कृष्णपाक्षिक-(नैरयिक-जीवों के) चार उद्देशक करने चाहिए, जैसा भवसिद्धिक-नैरयिक-जीवों के बतलाये गये हैं।

४०. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

४१. शुक्लपाक्षिक-(नैरयिक-जीवों के) इसी प्रकार चार उद्देशक वक्तव्य हैं यावत्—

भन्ते! बालुकाप्रभा-पृथ्वी के कापोतलेश्य-शुक्लपाक्षिक-क्षुल्लक-कल्योज-नैरयिक-जीव कहां से आकार उपपन्न होते हैं? उसी प्रकार यावत् 'परप्रयोग से उपपन्न नहीं होते' तक वक्तव्य हैं।

४२. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

ये सारे ही अट्ठाईस उद्देशक वक्तव्य हैं।

• • •

बत्तीसवां शतक

पहला उद्देशक

क्षुल्लक-युग्म-नैरयिक-आदि का उद्वर्त्तन-पद

१. भन्ते! क्षुल्लक-कृतयुग्म-नैरयिक-जीव वहां से उद्वृत्त होने के (वहां से निकलने के) अनन्तर कहां जाते हैं, कहां उपपन्न होते हैं? क्या नैरयिक-जीवों के रूप में उपपन्न होते हैं? तिर्यग्योनिक-जीवों के रूप में उपपन्न होते हैं.... जैसे **पण्णवणा** के छट्ठे पद (सू. ९९--१००) में उद्वर्तना बतलाई गई है वैसे यहां वक्तव्य है।

२. भन्ते! एक समय में वे कितने जीव उद्वर्तन करते हैं (वहां से निकलते हैं)?

गौतम! एक समय में वे चार, आठ, बारह, सोलह, संख्येय अथवा असंख्येय जीव वहां से उद्वर्तन करते हैं।

३. भन्ते! वे जीव वहां से कैसे उद्वर्तन करते हैं?

गौतम! जिस प्रकार कोई प्लवक....(भ. २५।६२०) उसी प्रकार वक्तव्य है। इसी प्रकार वही गमक यावत् 'आत्म-प्रयोग से उद्वर्तन करते हैं, पर-प्रयोग से उद्वर्तन नहीं करते' तक (भ. २५।६२०-६२६) वक्तव्य है।

४. रत्नप्रभा-पृथ्वी के क्षुल्लक-कृतयुग्म-नैरयिक-जीव? इसी प्रकार रत्नप्रभा के विषय में भी सारे प्रश्नोत्तर समझने चाहिए। इसी प्रकार यावत् 'अधःसप्तमी-पृथ्वी' तक समझना चाहिए। इसी प्रकार क्षुल्लक-त्र्योज-, क्षुल्लक-द्वापरयुग्म-, क्षुल्लक-कल्योज-नैरयिक-जीवों के विषय में वक्तव्य है, केवल इतना अन्तर है—परिमाण (संख्या) ज्ञातव्य है, शेष उसी प्रकार समझना चाहिए।

५. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

दूसरा—अट्ठाईसवां उद्देशक

६. कृष्णलेश्य-कृतयुग्म-नैरयिक-जीव....? इसी प्रकार इस क्रम से जैसे उपपात-शतक में अट्ठाईस उद्देशक बताये गये थे वैसे ही उद्वर्तन-शतक में भी अट्ठाईस उद्देशक सम्पूर्णतया वक्तव्य हैं, केवल इतना अन्तर है—('उपपन्न होते हैं' के स्थान में) 'उद्वर्तन करते हैं' ऐसा अभिलाप वक्तव्य है, शेष उसी प्रकार वक्तव्य हैं।

७. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है। इस प्रकार भगवान गौतम यावत् संयम और तप से अपने आप को भावित करते हुए विहरण कर रहे हैं। ● ● ●

तेतीसवां शतक

प्रथम एकेन्द्रिय शतक

पहला उद्देशक

१. भन्ते! एकेन्द्रिय-जीव कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! एकेन्द्रिय-जीव पांच प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—पृथ्वीकायिक यावत् 'वनस्पतिकायिक' वक्तव्य है।

२. भन्ते! पृथ्वीकायिक-जीव कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! पृथ्वीकायिक-जीव दो प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक और बादर--पृथ्वीकायिक।

३. भन्ते! सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव दो प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—पर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक और अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक।

४. भन्ते! बादर-पृथ्वीकायिक-जीव कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं? इसी प्रकार वक्तव्य हैं। इसी प्रकार अप्कायिक-जीवों के भी चार भेद जानने चाहिए। (१. पर्याप्त-सूक्ष्म-अप्काय, २. अपर्याप्त-सूक्ष्म-अप्काय, ३. पर्याप्त-बादर-अप्काय ४. अपर्याप्त-बादर-अप्काय) इसी प्रकार यावत् वनस्पतिकायिक-जीवों तक वक्तव्य हैं।

५. भन्ते! अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीवों के कर्म-प्रकृतियां कितनी प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वी-कायिक-जीवों के आठ कर्म-प्रकृतियां प्रज्ञप्त हैं, जैसे—ज्ञानावरणीय यावत् अन्तराय।

६. भन्ते! पर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीवों के कर्म-प्रकृतियां कितनी प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! पर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीवों के कर्म-प्रकृतियां आठ प्रज्ञप्त हैं, जैसे—ज्ञानावरणीय यावत् अन्तराय।

७. भन्ते! अपर्याप्त-बादर-पृथ्वीकायिक-जीवों के कर्म-प्रकृतियां कितनी प्रज्ञप्त हैं? इसी प्रकार समझना चाहिए।

८. भन्ते! पर्याप्त-बादर-पृथ्वीकायिक-जीवों के कर्म-प्रकृतियां कितनी प्रज्ञप्त हैं? इसी प्रकार समझना चाहिए। इसी प्रकार इस क्रम से यावत् बादर-वनस्पतिकायिक-

-जीवों के पर्याप्त तक वक्तव्य हैं।

९. भन्ते! अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव कितनी कर्म-प्रकृतियों का बन्ध करते हैं?

गौतम! अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव सप्तविध-बन्धक भी होते हैं, अष्टविध-बन्धक भी होते हैं—सात कर्म-प्रकृतियों का बन्ध भी करते हैं, आठ कर्म-प्रकृतियों का बन्ध भी करते हें। सात कर्म-प्रकृतियों का बन्ध करते हुए जीव आयुष्य-कर्म को छोड़कर शेष सात कर्म-प्रकृतियों का बन्ध करते हैं, आठ कर्म-प्रकृतियों का बन्ध करते हुए जीव प्रतिपूर्ण आठों कर्म-प्रकृतियों का बन्ध करते हैं।

१०. भन्ते! पर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव कितनी कर्म-प्रकृतियों का बन्ध करते हैं?

इसी प्रकार समझना चाहिए, इसी प्रकार सभी एकेन्द्रिय-जीवों के कर्म-बन्ध वक्तव्य हैं यावत्—

११. भन्ते! पर्याप्त-बादर-वनस्पतिकायिक-जीव कितनी कर्म-प्रकृतियों का बन्ध करते हैं? इसी प्रकार समझना चाहिए।

१२. भन्ते! अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव कितनी कर्म-प्रकृतियों का वेदन करते हैं।

गौतम! अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक जीव चौदह कर्म-प्रकृतियों का वेदन करते हैं जैसे—१. ज्ञानावरणीय यावत् ८. अन्तराय ९. श्रोत्रेन्द्रियवध्य (श्रोत्रेन्द्रियावरणीय) १०. चक्षुरिन्द्रयावरणीय, ११. घ्राणेन्द्रियावरणीय, १२. जिह्वेन्द्रियावरणीय, १३. स्त्रीवेदावरणीय, १४. पुरुषवेदावरणीय। इसी प्रकार पृथ्वीकायिक-जीवों के चार भेद जानने चाहिए।

१३. भन्ते! पर्याप्त-बादर-वनस्पतिकायिक-जीव कितनी कर्म-प्रकृतियों का वेदन करते हैं?

गौतम! इसी प्रकार चौदह कर्म-प्रकृतियों का वेदन करते हैं।

१४. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

दूसरा उद्देशक

१५. भन्ते! अनन्तर-उपपन्न (प्रथम समय के)-एकेन्द्रिय-जीव कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! अनन्तर-उपपन्न (प्रथम समय के)-एकेन्द्रिय-जीव पांच प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—पृथ्वीकायिक यावत् वनस्पतिकायिक तक वक्तव्य हैं।

१६. भन्ते! अनन्तर-उपपन्न (प्रथम समय के)-पृथ्वीकायिक-जीव कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! अनन्तर-उपपन्न (प्रथम समय के)-पृथ्वीकायिक-जीव दो प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक और बादर-पृथ्वीकायिक। इसी प्रकार यावत् अनन्तर-उपपन्न--वनस्पतिकायिक तक के दो-दो भेद जानने चाहिए। (अप्काय, तेजस्काय, वायुकाय और वनस्पतिकाय के दो-दो भेद सूक्ष्म और बादर जानने चाहिए)

१७. भन्ते! अनन्तर-उपपन्न-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीवों के कितनी कर्म-प्रकृतियां प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! अनन्तर-उपपन्न-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीवों के आठ-आठ कर्म-प्रकृतियां प्रज्ञप्त हैं, जैसे—ज्ञानावरणीय यावत् अन्तरायिक।

१८. भन्ते! अनन्तर-उपपन्न-बादर-पृथ्वीकायिक-जीवों के कितनी कर्म-प्रकृतियां प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! अनन्तर-उपपन्न-बादर-पृथ्वीकायिक-जीवों के आठ कर्म-प्रकृतियां प्रज्ञप्त हैं, जैसे—ज्ञानावरणीय यावत् अन्तरायिक।

इसी प्रकार यावत् अनन्तर-उपपन्न-बादर-वनस्पतिकायिक। अनन्तर-उपपन्न- सूक्ष्म-बादर--अप्कायिक, अनन्तर-उपपन्न-सूक्ष्म-बादर-तेजस्कायिक, अनन्तर-उपपन्न-सूक्ष्म-बादर-वायुकायिक, अनन्तर-उपपन्न-सूक्ष्म-बादर-वनस्पतिकायिक जानने चाहिए।

१९. भन्ते! अनन्तर-उपपन्न-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव कितनी कर्म-प्रकृतियों का बन्ध करते हैं?

गौतम! अनन्तर-उपपन्न-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव आयुष्य-कर्म को छोड़कर शेष सात कर्म--प्रकृतियों का बन्ध करते हैं। इसी प्रकार यावत् अनन्तर-उपपन्न-बादर-वनस्पतिकायिक जीव।

२०. भन्ते! अनन्तर-उपपन्न-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव कितनी कर्म-प्रकृतियों का वेदन करते हैं?

गौतम! अनन्तर-उपपन्न-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव चौदह कर्म-प्रकृतियों का वेदन करते हैं, जैसे—ज्ञानावरणीय, उसी प्रकार यावत् पुरुष-वेदवध्य तक। (भ. ३३।१२) इसी प्रकार यावत् अनन्तर-उपपन्न-बादर-वनस्पतिकायिक जीव।

२१. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

तीसरा उद्देशक

२२. भन्ते! परम्पर-उपपन्न (प्रथम समय को छोड़कर, दूसरे, तीसरे आदि समय के)--एकेन्द्रिय-जीव कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! परम्पर-उपपन्न-एकेन्द्रिय-जीव पांच प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—पृथ्वीकायिक (आदि) इसी प्रकार चार भेद औघिक-उद्देशक की भांति वक्तव्य हैं।

२३. भन्ते! परम्पर-उपपन्न-अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीवों के कर्म-प्रकृतियां कितनी प्रज्ञप्त हैं? इसी प्रकार इस अभिलाप के द्वारा जैसे औघिक-उद्देशक में बताया गया है वैसे ही सम्पूर्णतया जानना चाहिए यावत् चौदह (कर्म-प्रकृतियों का) वेदन करते हैं।

२४. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

चौथा-ग्यारहवां उद्देशक

(चौथा उद्देशक)

२५. अनन्तर-अवगाढ-एकेन्द्रिय-जीवों के कर्म-प्रकृति के विषय में अनन्तर-उपपन्न-एकेन्द्रिय--जीवों की भांति वक्तव्य है।

(पांचवां उद्देशक)

२६. परम्पर-अवगाढ-एकेन्द्रिय-जीवों के कर्म-प्रकृति के विषय में परम्पर-उपपन्न-एकेन्द्रिय--जीवों की भांति वक्तव्य है।

(छट्ठा उद्देशक)

२७. अनन्तर-आहारक-एकेन्द्रिय-जीवों के कर्म-प्रकृति के विषय में अनन्तर-उपपन्न-एकेन्द्रिय-जीवों की भांति वक्तव्य है।

(सातवां उद्देशक)

२८. परम्पर-आहारक-एकेन्द्रिय-जीवों के कर्म-प्रकृति के विषय में परम्पर-उपपन्न-एकेन्द्रिय-जीवों की भांति वक्तव्य है।

(आठवां उद्देशक)

२९. अनन्तर-पर्याप्त-एकेन्द्रिय-जीवों के कर्म-प्रकृति के विषय में अनन्तर-उपपन्न-एकेन्द्रिय-जीवों की भांति वक्तव्य है।

(नवां उद्देशक)

३०. परम्पर-पर्याप्त-एकेन्द्रिय-जीवों के कर्म-प्रकृति के विषय में परम्पर-उपपन्न-एकेन्द्रिय-जीवों की भांति वक्तव्य है।

(दशवां उद्देशक)

३१. चरम-एकेन्द्रिय-जीवों के कर्म-प्रकृति के विषय में परम्पर-उपपन्न-एकेन्द्रिय-जीवों की भांति वक्तव्य हैं।

(ग्यारहवां उद्देशक)

३२. इसी प्रकार अचरम-एकेन्द्रिय-जीवों के कर्म-प्रकृति के विषय में (परम्पर-उपपन्न-एकेन्द्रिय-जीवों की भांति) वक्तव्य है। इसी प्रकार ये ग्यारह उद्देशक प्रथम-एकेन्द्रिय-शतक के जानने चाहिए।

३३. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है। इस प्रकार भगवान् गौतम यावत् संयम और तप से अपने आप को भावित करते हुवे विहरण कर रहे हैं।

दूसरा शतक

पहला उद्देशक

३४. भन्ते! कृष्ण-लेश्या वाले एकेन्द्रिय-जीव कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! कृष्ण-लेश्या वाले एकेन्द्रिय-जीव पांच प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—पृथ्वीकायिक यावत् वनस्पतिकायिक।

३५. भन्ते! कृष्ण-लेश्या वाले पृथ्वीकायिक-जीव कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! कृष्ण-लेश्या वाले पृथ्वीकायिक-जीव दो प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक और बादर-पृथ्वीकायिक।

३६. भन्ते! कृष्ण-लेश्या वाले सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं? इसी प्रकार इस अभिलाप के द्वारा कृष्ण-लेश्या वाले पृथ्वीकायिक-जीवों के चार भेद औधिक (समुच्चय)-उद्देशक की भांति वक्तव्य हैं।

३७. भन्ते! कृष्णलेश्य-अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीवों के कितनी कर्म-प्रकृतियां प्रज्ञप्त हैं? इसी प्रकार इस अभिलाप के द्वारा जैसा औधिक (समुच्चय)-उद्देशक में बतलाया गया है वैसा ही प्रज्ञप्त हैं, वैसा ही बन्ध होता है, वैसे ही वेदन करते हैं।

३८. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

दूसरा उद्देशक

३९. भन्ते! अनन्तर-उपपन्न(प्रथम समय के)-कृष्ण-लेश्या वाले एकेन्द्रिय-जीव कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! अनन्तर-उपपन्न-कृष्ण-लेश्या वाले एकेन्द्रिय-जीव पांच प्रकार (प्रज्ञप्त हैं)। इसी प्रकार इस अभिलाप के द्वारा अनन्तर-उपपन्न-कृष्ण-लेश्या वाले पृथ्वीकायिक-जीव के उसी प्रकार दो भेद प्रज्ञप्त हैं यावत् वनस्पतिकायिक।

४०. भन्ते! अनन्तर-उपपन्न(प्रथम समय के)-कृष्ण-लेश्या वाले सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीवों के कितनी कर्म-प्रकृतियां प्रज्ञप्त हैं? इसी प्रकार इस अभिलाप के द्वारा जैसा औधिक (समुच्चय)-अनन्तर-उपपन्न-(एकेन्द्रिय)-जीवों का उद्देशक बतलाया गया उसी प्रकार यावत् 'वेदन करते हैं' तक वक्तव्य है।

४१. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

तीसरा–ग्यारहवां उद्देशक

४२. भन्ते! परम्पर-उपपन्न(प्रथम समय को छोड़कर दूसरे, तीसरे आदि समय के)-कृष्ण-लेश्या वाले एकेन्द्रिय-जीव कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! परम्पर-उपपन्न-कृष्ण-लेश्या वाले एकेन्द्रिय-जीव पांच प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—पृथ्वीकायिक आदि, इसी प्रकार इस अभिलाप के द्वारा परम्पर-उपपन्न-कृष्ण-लेश्या वाले पृथ्वीकायिक-जीव के चार भेद उसी प्रकार वक्तव्य हैं यावत् 'वनस्पतिकाय' तक जानने चाहिए।

४३. भन्ते! परम्पर-उपपन्न-कृष्ण-लेश्या वाले अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीवों के कितनी कर्म-प्रकृतियां प्रज्ञप्त हैं? इसी प्रकार इस अभिलाप के द्वारा जिस प्रकार औधिक (समुच्चय)-परम्पर-उपपन्न-(एकेन्द्रिय)-जीवों का उद्देशक बतलाया गया उसी प्रकार 'वेदन करते हैं' तक वक्तव्य है। इसी प्रकार इस अभिलाप के द्वारा जैसे औधिक (समुच्चय)-एकेन्द्रिय-शतक के ग्यारह उद्देशक बताये गये वैसे ही कृष्णलेश्य-शतक के भी (ग्यारह उद्देशक) यावत् 'अचरम- -चरम-कृष्ण-लेश्या वाले एकेन्द्रिय-जीवों' तक बताने चाहिए।

तीसरा, चौथा शतक

(तीसरा शतक)

४४. जैसे कृष्ण-लेश्या वाले (एकेन्द्रिय)-जीवों के साथ (दूसरा) शतक बतलाया गया वैसे ही नील-लेश्या वाले (एकेन्द्रिय)-जीवों के साथ भी (तीसरा) शतक बतलाना चाहिए।

४५. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

(चौथा शतक)

४६. इसी प्रकार कापोत-लेश्या वाले (एकेन्द्रिय)-जीवों के साथ भी (चौथा) शतक बतलाना चाहिए, केवल इतना अन्तर है—('नील-लेश्या वाले' के स्थान पर) 'कापोत-लेश्या वाले' ऐसा अभिलाप बतलाना चाहिए।

पांचवां शतक

भवसिद्धिक-एकेन्द्रिय-जीवों के कर्म-प्रकृति-पद

४७. भन्ते! भवसिद्धिक-एकेन्द्रिय-जीव कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! भवसिद्धिक-एकेन्द्रिय-जीव पांच प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—पृथ्वीकायिक यावत् वनस्पतिकायिक, भवसिद्धिक-पृथ्वीकायिक के चार भेद यावत् 'भवसिद्धिक--वनस्पतिकायिक' तक वक्तव्य है।

४८. भन्ते! भवसिद्धिक-अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीवों के कितनी कर्म-प्रकृतियां प्रज्ञप्त हैं? इसी प्रकार इस अभिलाप के द्वारा जैसा प्रथम-एकेन्द्रिय-शतक बतलाया गया है वैसा ही भवसिद्धिक-शतक भी वक्तव्य है। उद्देशकों की परिपाटी वैसे ही ज्ञातव्य है यावत् 'अचरम' तक।

४९. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

छट्ठा शतक

५०. भन्ते! कृष्ण-लेश्या वाले भवसिद्धिक-एकेन्द्रिय-जीव कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! कृष्ण-लेश्या वाले भवसिद्धिक-एकेन्द्रिय-जीव पांच प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—पृथ्वीकायिक यावत् वनस्पतिकायिक।

५१. भन्ते! कृष्ण-लेश्या वाले भवसिद्धिक-पृथ्वीकायिक-जीव कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! कृष्ण-लेश्या वाले भवसिद्धिक-पृथ्वीकायिक-जीव दो प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक और बादर-पृथ्वीकायिक।

५२. भन्ते! कृष्ण-लेश्या वाले भवसिद्धिक-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! कृष्ण-लेश्या वाले भवसिद्धिक-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव दो प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—पर्याप्त और अपर्याप्त। इसी प्रकार कृष्ण-लेश्या वाले भव-सिद्धिक-बादर--पृथ्वीकायिक-जीव के भी दो प्रकार प्रज्ञप्त हैं। इस अभिलाप के द्वारा वैसे ही चार भेद वक्तव्य हैं।

५३. भन्ते! कृष्ण-लेश्या वाले भवसिद्धिक-अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीवों के कितनी कर्म-प्रकृतियां प्रज्ञप्त हैं? इसी प्रकार इस अभिलाप के द्वारा जैसे औधिक (समुच्चय)-उद्देशक में बतलाया गया है वैसे ही यावत् 'वेदन करते हैं' तक समझना चाहिए।

५४. भन्ते! अनन्तर-उपपन्न(प्रथम समय के)-कृष्ण-लेश्या वाले भवसिद्धिक-एकेन्द्रिय-जीव कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं।

गौतम! अनन्तर-उपपन्न-कृष्ण-लेश्या वाले भवसिद्धिक-एकेन्द्रिय-जीव पांच प्रकार के प्रज्ञप्त हैं यावत् वनस्पतिकायिक।

५५. भन्ते! अनन्तर-उपपन्न-कृष्ण-लेश्या वाले भवसिद्धिक-पृथ्वीकायिक-जीव कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! अनन्तर-उपपन्न-कृष्ण-लेश्या वाले भवसिद्धिक-पृथ्वीकायिक-जीव दो प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक और बादर-पृथ्वीकायिक, इसी प्रकार दो भेद समझने चाहिए।

५६. भन्ते! अनन्तर-उपपन्न-कृष्ण-लेश्या वाले भवसिद्धिक-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीवों के कितनी कर्म-प्रकृतियां प्रज्ञप्त हैं? इसी प्रकार इस अभिलाप के द्वारा जैसा औघिक (समुच्चय)-अनन्तर-उपपन्न-उद्देशक बतलाया गया वैसा ही यावत् 'वेदन करते हैं' तक समझना चाहिए। इसी प्रकार इस अभिलाप के द्वारा ग्यारह उद्देशक वैसे ही वक्तव्य हैं। जैसे औघिक-शतक में बतलाये गये हैं यावत् 'अचरम' तक समझना चाहिए।

सातवां, आठवां शतक

(सातवां शतक)

५७. जैसे कृष्ण-लेश्या वाले भवसिद्धिक-(एकेन्द्रिय)-जीवों के विषय में शतक बताया गया वैसे ही नील-लेश्या वाले भवसिद्धिक-(एकेन्द्रिय)-जीवों के विषय में भी शतक वक्तव्य है।

(आठवां शतक)

५८. इसी प्रकार कापोत-लेश्या वाले भवसिद्धिक-(एकेन्द्रिय)-जीवों के विषय में भी शतक वक्तव्य है।

नवां—बारहवां शतक

(नवां शतक)

अभवसिद्धिक-एकेन्द्रिय-जीवों के कर्म-प्रकृति-पद

५९. भन्ते! अभवसिद्धिक-एकेन्द्रिय-जीव कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! अभवसिद्धिक-एकेन्द्रिय जीव पांच प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे— पृथ्वीकायिक यावत् वनस्पतिकायिक। इसी प्रकार जैसा भवसिद्धिक-शतक बतलाया गया है वैसा ही वक्तव्य है, केवल इतना अन्तर है—चरम और अचरम इन दो उद्देशकों को छोड़ कर शेष नव उद्देशक वैसे ही जानने चाहिए।

(दसवां शतक)

६०. इस प्रकार कृष्ण-लेश्या वाले अभवसिद्धिक-एकेन्द्रिय-जीवों के विषय में भी शतक वक्तव्य है।

(ग्यारहवां शतक)

६१. नील-लेश्या वाले अभवसिद्धिक-एकेन्द्रिय-जीवों के विषय में भी शतक वक्तव्य है।

(बारहवां शतक)

६२. कापोत-लेश्या वाले अभवसिद्धिक-एकेन्द्रिय-जीवों के विषय में शतक वक्तव्य है। इस प्रकार चारों ही अभवसिद्धिक-एकेन्द्रिय-जीवों के विषय में शतकों के नव-नव उद्देशक होते हैं। इस प्रकार ये बारह शतक एकेन्द्रिय-जीवों के विषय में होते हैं। (जो तेतीसवें शतक के अन्तर-शतक के रूप में बताए हैं।)

• • •

चौतीसवां शतक

पहला एकेन्द्रिय-शतक

पहला उद्देशक

एकेन्द्रिय-जीवों के विग्रह-गति का पद

१. भन्ते! एकेन्द्रिय-जीव कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! एकेन्द्रिय-जीव पांच प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—पृथ्वीकायिक यावत् वनस्पतिकायिक। इसी प्रकार पृथ्वीकायिक के ये चार भेद वक्तव्य हैं यावत् वनस्पतिकायिक।

२. भन्ते! अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव इस रत्नप्रभा-पृथ्वी में पूर्व (दिशा) के चरमान्त में (मारणान्तिक)-समुद्घात से समवहत होता है, समवहत होकर जो भव्य (अपर्याप्त--सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव के रूप में उपपन्न होने की योग्यता प्राप्त) इस रत्नप्रभा-पृथ्वी में पश्चिम दिशा के चरमान्त में अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव के रूप में उपपन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितने समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) के द्वारा उपपन्न होता है?

गौतम! वह जीव एक समय वाली अथवा दो समय वाली अथवा तीन समय वाली विग्रह--गति (अन्तराल-गति) के द्वारा उपपन्न होता है।

३. भन्ते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—वह जीव एक समय वाली अथवा दो समय वाली अथवा यावत् उपपन्न होता है तक?

गौतम! मैंने इस प्रकार सात श्रेणियां प्रज्ञप्त की हैं, जैसे—१. ऋजुआयता—जो सीधी और लम्बी हो। २. एकतोवक्रा—जो एक दिशा में वक्र हो। ३. द्वितोवक्रा—जो दोनों ओर वक्र हो। ४. एकतः खहा—जो एक दिशा में अंकुश की तरह मुड़ी हुई हो; जिसके एक ओर त्रसनाडी का आकाश हो। ५. द्वितः खहा—जो दोनों ओर अंकुश की तरह मुडी हुई हो, जिसके दोनों ओर त्रसनाड़ी का आकाश हो। ६. चक्रवाला—जो वलय की आकृति वाली हो। ७. अर्द्ध-चक्रवाला—जो अर्द्धवलय की आकृति वाली हो। ऋजुआयता-श्रेणी के द्वारा उपपन्न होता हुआ वह जीव एक समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल गति) के द्वारा उपपन्न होता है। एकतोवक्रा-श्रेणी के द्वारा उपपन्न होता हुआ वह जीव दो समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) द्वारा उपपन्न होता है। द्वितोवक्रा-श्रेणी के द्वारा उपपन्न होता हुआ वह जीव तीन समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) के द्वारा उपपन्न होता है। गौतम! यह इस अपेक्षा से कहा जा रहा है। यावत् उपपन्न होता है।

४. भन्ते! अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव इस रत्नप्रभा-पृथ्वी में पूर्व (दिशा) के चरमान्त में (मारणान्तिक समुद्घात) से समवहत होता है, समवहत होकर जो भव्य पर्याप्त--सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव के रूप में उत्पन्न होने की योग्यता प्राप्त) इस रत्नप्रभा-पृथ्वी में पश्चिम दिशा के चरमान्त में पर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव के रूप में उपपन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितने समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) के द्वारा उपपन्न होता है?

गौतम! वह जीव एक समय वाली अथवा दो समय वाली अथवा तीन समय वाली विग्रह--गति (अन्तराल-गति) के द्वारा उत्पन्न होता है। गौतम! इस अपेक्षा से कहा जा रहा है—वह जीव एक समयवाली अथवा दो समय-वाली अथवा तीन समयवाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) के द्वारा उपपन्न होता है। **(तीसरा आलापक)** इसी प्रकार अपर्याप्त--सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव (इस रत्नप्रभा-पृथ्वी में) पूर्व (दिशा) के चरमान्त में (मारणान्तिक)-समुद्घात करके (आयुष्य पूर्व कर) (इस रत्नप्रभा-पृथ्वी में) पश्चिम दिशा के चरमान्त में बादर-पृथ्वीकायिक-जीवों के अपर्याप्तकों में (एक, दो अथवा तीन सामयिक-विग्रह-गति के द्वारा) उपपन्न करवाना चाहिए। **(चौथा आलापक)** तब (अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव (इस रत्नप्रभा-पृथ्वी में) पूर्व दिशा के चरमान्त में (मारणान्तिक)-समुद्घात करके (आयुष्य-पूर्ण करके इस रत्नप्रभा-पृथ्वी में) पश्चिम दिशा के चरमान्त में बादर-पृथ्वीकायिक-जीवों के) पर्याप्तकों में (एक, दो अथवा तीन सामयिक विग्रह-गति के द्वारा उपपन्न करवाना चाहिए। इसी प्रकार अप्कायिक-जीवों में चार आलापक बतलाने चाहिए—**(प्रथम आलापक)** १. सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-अपर्याप्तक का सूक्ष्म-अप्कायिक-अपर्याप्तक में २. सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-अपर्याप्तक का सूक्ष्म-अप्कायिक-पर्याप्तक में ३. सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-अपर्याप्तक का बादर-अप्कायिक-अपर्याप्तक में ४. सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-अपर्याप्तक का बादर-अप्कायिक-पर्याप्तक में उपपन्न करवाना चाहिए। इसी प्रकार **(दूसरा आलापक)** १. सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक--अपर्याप्तक-जीव का सूक्ष्म-तेजस्कायिक-अपर्याप्तक में २. सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-अपर्याप्तक-जीव का सूक्ष्म-तेजस्कायिक-पर्याप्तक में उपपन्न करवाना चाहिए।

५. भन्ते! **(तीसरा आलापक)** अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव इस रत्नप्रभा-पृथ्वी में पूर्व (दिशा) के चरमान्त में मारणान्तिक-समुद्घात से समवहत होता है, समवहत होकर जो भव्य मनुष्य-क्षेत्र में अपर्याप्त-बादर-तेजस्काय में उपपन्न होने की योग्य प्राप्त मनुष्य-क्षेत्र में अपर्याप्त-बादर-तेजस्कायिक रूप में उपपन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितने समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) के द्वारा उपपन्न होता है? शेष उसी प्रकार वक्तव्य है। **(चौथा आलापक)** इसी प्रकार (अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव इस रत्नप्रभा-पृथ्वी में पूर्व दिशा के चरमान्त में मारणान्तिक-समुद्घात करके आयुष्य-पूर्ण कर मनुष्य-क्षेत्र में) पर्याप्त--बादर-तेजस्कायिक-जीव के रूप में (एक, दो अथवा तीन सामयिक विग्रह-गति के द्वारा) उत्पन्न करवाना चाहिए। (अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव इस रत्नप्रभा-पृथ्वी में पूर्व दिशा के चरमान्त में मारणान्तिक-समुद्घात-समवहत होता है, समवहत होकर) जिस प्रकार (चार आलापकों के द्वारा) अप्कायिक-जीवों में उपपात बतलाया गया था उसी प्रकार सूक्ष्म- और बादर-वायुकायिक-जोवों में (चार आलापक के द्वारा) उपपात करवाना

चाहिए। इसी प्रकार उन जीवों का (चार आलापकों के द्वारा) वनस्पतिकायिक-जीवों में भी (उपपात करवाना चाहिए)।

६. भन्ते! पर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव इस रत्नप्रभा-पृथ्वी के विषय में.....पृच्छा?

इसी प्रकार पर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव भी (इस रत्नप्रभा-पृथ्वी में) पूर्व दिशा के चरमान्त में (मारणान्तिक)-समुद्घात करके (आयुष्य पूर्ण करके) इसी क्रम से इन बीस स्थानों में उपपात करवाना चाहिए। (पृथ्वीकाय, अप्काय, तेजस्काय, वायुकाय और वनस्पतिकाय—इन पांच के सूक्ष्म और बादर तथा प्रत्येक के पर्याप्तक और अपर्याप्तक—ये बीस भेद होते हैं) यावत् 'बादर-वनस्पतिकायिक के पर्याप्तक में' तक भी वक्तव्य है। इसी प्रकार अपर्याप्त-बादर-पृथ्वीकायिक-जीव का भी बीस स्थानों में उपपात करवाना चाहिए। इसी प्रकार पर्याप्त-बादर-पृथ्वीकायिक-जीव का भी बीस स्थानों में उपपात करवाना चाहिए। इसी प्रकार अप्कायिक-जीव का भी चार गमकों में (इस रत्नप्रभा-पृथ्वी में) पूर्व दिशा के चरमान्त में (मारणान्तिक)-समुद्घात से समवहत होता है, समवहत होकर...... इसी प्रकार पूर्ववत् वक्तव्यता के द्वारा इन्हीं बीस स्थानों में उपपात करवाना चाहिए। सूक्ष्म-तेजस्कायिक-जीव के भी अपर्याप्तक और पर्याप्तक ये दो भेद बतलाये हैं। इन्हीं बीस स्थानों में इनका उपपात करवाना चाहिए।

७. भन्ते! अपर्याप्त-बादर-तेजस्कायिक-जीव मनुष्य-क्षेत्र में समवहत होता है, समवहत होकर जो भव्य (अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव के रूप में उत्पन्न होने की योग्यता प्राप्त) इस रत्नप्रभा-पृथ्वी में पश्चिम दिशा के चरमान्त में अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक--जीव के रूप में उपपन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितने समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) के द्वारा उपपन्न होता है? शेष उसी प्रकार वक्तव्य है यावत् 'यह इस अपेक्षा से कहा जा रहा है' तक। इसी प्रकार चार प्रकार के पृथ्वीकायिक-जीवों का भी उपपात करवाना चाहिए, इसी प्रकार चार प्रकार के अप्कायिक-जीवों का भी (उपपात करवाना चाहिए), सूक्ष्म-तेजस्कायिक-जीवों के अपर्याप्तक और पर्याप्तक में इसी प्रकार उपपात करवाना चाहिए।

८. भन्ते! अपर्याप्त-बादर-तेजस्कायिक-जीव मनुष्य-क्षेत्र में समवहत होता है समवहत होकर जो भव (अपर्याप्त बाद तेजस्कायिक-जीव के रूप में उत्पन्न होने की योग्यता प्राप्त) (मनुष्य-क्षेत्र में अपर्याप्त-बादर-तेजस्कायिक-जीव के रूप में उत्पन्न होने योग्य है), भन्ते! वह कितने समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) के द्वारा...? शेष उसी प्रकार वक्तव्य है। इसी प्रकार पर्याप्त-बादर-तेजस्कायिक-जीव के रूप में भी उपपात करवाना चाहिए। वायुकायिक- तथा वनस्पतिकायिक-जीव के रूप में जैसा पृथ्वीकायिक जीव के रूप में उपपात करवाया गया वैसा ही चार भेद से उपपात करवाना चाहिए। इसी प्रकार पर्याप्त--बादर-तेजस्कायिक-जीव का भी समय-क्षेत्र में मारणान्तिक-समुद्घात के द्वारा समवहत होकर इन्हीं बीस स्थानों में उपपात करवाना चाहिए। जैसी अपर्याप्त-तेजस्कायिक-जीव की उपपात बतलाई गई वैसी ही सर्वत्र बादर-तेजस्कायिक-जीवों के अपर्याप्तक और पर्याप्तक में समय-क्षेत्र में उपपात करवाना चाहिए, मारणान्तिक-समुद्घात करवाना चाहिए।

वायुकायिक- और वनस्पतिकायिक-जीवों का उपपात वैसा करवाना चाहिए जैसे पृथ्वीकायिक-जीवों के चार भेद बतलाये गये थे, यावत्—

९. भन्ते! पर्याप्त-बादर-वनस्पतिकायिक-जीव इस रत्नप्रभा-पृथ्वी में पूर्व (दिशा) के चरमान्त में मारणान्तिक-समुद्घात से समवहत होता है, समवहत होकर जो भव्य (पर्याप्त-बादर--वनस्पतिकायिक-जीव के रूप में उत्पन्न होने की योग्यता प्राप्त) इस रत्नप्रभा-पृथ्वी में पश्चिम दिशा के चरमान्त में पर्याप्त-बादर-वनस्पतिकायिक जीव के रूप में उपपन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितने समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) के द्वारा उपपन्न होता है....? शेष उसी प्रकार वक्तव्य है यावत् 'यह इस अपेक्षा से कहा जा रहा है' तक।

१०. भन्ते! अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव इस रत्नप्रभा-पृथ्वी में पश्चिम दिशा के चरमान्त में मारणान्तिक-समुद्घात से समवहत होता है। समवहत होकर जो भव्य (अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक जीव के रूप में होने की योग्यता प्राप्त) इस रत्नप्रभा-पृथ्वी में पूर्व दिशा के चरमान्त में अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव के रूप में उपपन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितने समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) के द्वारा (उपपन्न होता है)? शेष उसी प्रकार सम्पूर्ण रूप से वक्तव्य है। इसी प्रकार पूर्व दिशा के चरमान्त में सभी पदों में भी मारणान्तिक-समुद्घात की भांति पश्चिम दिशा के चरमान्त में तथा समय-क्षेत्र में उपपात करवाना चाहिए और समय-क्षेत्र में जो मारणान्तिक-समुद्घात से समवहत हुए उनका पश्चिम दिशा के चरमान्त में और समय-क्षेत्र में उपपात करवाना चाहिए, इसी प्रकार इसी क्रम से पश्चिम के चरमान्त में तथा समय-क्षेत्र में मारणान्तिक-समुद्घात से समवहत होकर पूर्व दिशा के चरमान्त में और समय-क्षेत्र में उसी गमक के द्वारा उपपात करवाना चाहिए। इसी प्रकार इसी गमक के द्वारा दक्षिण दिशा के चरमान्त में मारणान्तिक-समुद्घात से समवहत होकर उत्तर दिशा के चरमान्त में और समय-क्षेत्र में उपपात बतलाना चाहिए। इसी प्रकार उत्तरदिशा के चरमान्त में और समय-क्षेत्र में मारणान्तिक-समुद्घात से समवहत होकर दक्षिण दिशा के चरमान्त में और समय-क्षेत्र में उसी गमक के द्वारा उपपात करवाना चाहिए।

११. भन्ते! अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव शर्कराप्रभा-पृथ्वी में पूर्व दिशा के चरमान्त में मारणान्तिक-समुद्घात से समवहत होता है, समवहत होकर जो भव्य (अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव के रूप में उत्पन्न होने की योग्यता प्राप्त) इस शर्कराप्रभा-पृथ्वी में पश्चिम दिशा के चरमान्त में अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव के रूप में उत्पन्न होने योग्य है....इसी प्रकार वक्तव्य है जैसा रत्नप्रभा-पृथ्वी में बताया गया है यावत् 'यह इस अपेक्षा से कहा जा रहा है' तक। इसी प्रकार इसी क्रम से यावत् 'पर्याप्त-सूक्ष्म-तेजस्कायिक-जीवों के रूप में उत्पन्न होने' तक वक्तव्य है।

१२. भन्ते! अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव शर्कराप्रभा-पृथ्वी में पूर्व दिशा के चरमान्त में मारणान्तिक-समुद्घात से समवहत होता है, समवहत होकर जो भव्य (अपर्याप्त-बादर--तेजस्कायिक-जीव के रूप में उत्पन्न होने की योग्यता प्राप्त) समय-क्षेत्र में अपर्याप्त-बादर--तेजस्कायिक-जीव के रूप में उत्पन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितने समय वाली (विग्रह--गति से उत्पन्न होता है)—पृच्छा।

गौतम! वह जीव दो समय-वाली अथवा तीन समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) के द्वारा उत्पन्न होता है।

१३. यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है?

गौतम! मैंने इस प्रकार सात श्रेणियां प्रज्ञप्त की हैं, जैसे—१. ऋजुआयता यावत् अर्धचक्रवाला। एकतो-वक्रा श्रेणी के द्वारा उत्पन्न होता हुआ वह जीव दो समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) के द्वारा उत्पन्न होता है। द्वितोवक्रा श्रेणी के द्वारा उत्पन्न होता हुआ वह जीव तीन समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) के द्वारा उत्पन्न होता है। वह इस अपेक्षा से कहा जा रहा हे। इसी प्रकार पर्याप्त-बादर-तेजस्कायिक-जीव के रूप में (उत्पन्न होने पर वक्तव्य है)। शेष जैसा रत्नप्रभा के सन्दर्भ में पृथ्वीकायिक-जीव के विषय में बतलाया गया था (भ. ३४।१०) वैसा यहां वक्तव्य है। जो भी अपर्याप्त- और पर्याप्त-बादर-तेजस्कायिक-जीव समय-क्षेत्र में मारणांतिक-समुद्घात से समवहत होकर दूसरी पृथ्वी (शर्कराप्रभा) के पश्चिम दिशा के चरमान्त में चार प्रकार के पृथ्वीकायिक (भ. ३३।२-३)-, चार प्रकार के अप्कायिक (भ. ३३।२-३)-, दो प्रकार के तेजस्कायिक (भ. ३४।५)-, चार प्रकार के वायुकायिक (भ. ३३।२-३)-, चार प्रकार के वनस्पतिकायिक (भ. ३३।२-३)-जीवों के रूप में उत्पन्न होते हैं, वे भी इसी प्रकार दो समय वाली अथवा तीन समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) के द्वारा उत्पन्न करवाना चाहिए। अपर्याप्त- और पर्याप्त-बादर-तेजस्कायिक-जीव जब उन्हीं में (अर्थात् अपर्याप्त- और पर्याप्त-बादर-तेजस्कायिक-जीवों के रूप में) उत्पन्न होते हैं, तब जिस प्रकार रत्नप्रभा के सन्दर्भ में बतलाया गया था उसी प्रकार एक समय वाली, दो समय वाली, तीन समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) के द्वारा उत्पन्न होने वाले वक्तव्य हैं, शेष जैसा रत्नप्रभा के सन्दर्भ में बतलाया गया है वैसा ही सम्पूर्ण रूप में जानना चाहिए। जैसी शर्कराप्रभा की वक्तव्यता बतलाई गई है उसी प्रकार यावत् 'अधःसप्तमी तक' बतलानी चाहिए।

१४. भन्ते! अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव अधो-लोक-क्षेत्र की (त्रस)-नाल के बाहर के क्षेत्र में मारणान्तिक-समुद्घात से समवहत होता है, समवहत होकर जो भव्य (अपर्याप्त--सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव के रूप में उत्पन्न होने की योग्यता प्राप्त) ऊर्ध्व-लोक-क्षेत्र की (त्रस)-नाल के बाहर के क्षेत्र में अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव के रूप में उपपन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितने समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) से उत्पन्न होता है?

गौतम! वह जीव तीन समय वाली अथवा चार समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) के द्वारा उत्पन्न होता है।

१५. भन्ते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—तीन समय वाली अथवा चार समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) के द्वारा उत्पन्न होता है?

गौतम! अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव अधो-लोक-क्षेत्र की (त्रस)-नाल के बाहर के क्षेत्र में मारणान्तिक-समुद्घात से समवहत होता है, समवहत होकर जो भव्य ऊर्ध्व-लोक--क्षेत्र की (त्रस)-नाल के बाहर के क्षेत्र में अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव के रूप में एक प्रतर में अनुश्रेणी के द्वारा उत्पन्न होने की योग्यता प्राप्त है वह तीन समय वाली विग्रह-गति

(अन्तराल-गति) से उत्पन्न होता है। (अधो-लोक-क्षेत्र में त्रस-नाल के बाहर पूर्व आदि दिशा में मर कर प्रथम समय में त्रस-नाल में प्रविष्ट होता है, दूसरे समय में ऊर्ध्व-गति करता है तथा उसी प्रतर में पूर्व अथवा पश्चिम में जब उत्पत्ति होती है तब अनुश्रेणी में गति कर तृतीय समय में उत्पन्न होता है।) जो भव्य विश्रेणी के द्वारा पृथ्वीकायिक-जीव के रूप में उत्पन्न होने की योग्यता प्राप्त है) वह चार समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) से उत्पन्न होता है। (जब त्रस-नाल के बाहर वायव्य आदि विदिशा में मरता है तब प्रथम समय में पश्चिम अथवा उत्तर दिशा में जाता है, दूसरे समय में त्रस-नाल में प्रविष्ट होता है, तृतीय समय में ऊर्ध्व-गति करता है, तथा चतुर्थ समय में अनुश्रेणी में जाकर पूर्व आदि दिशा में उत्पन्न होता है।) यह इस अपेक्षा से कहा जा रहा है यावत् 'उत्पन्न होता है' तक। (जो जीव अधो-लोक-क्षेत्र में त्रस-नाल के बाहर मृत्यु को प्राप्त होता है वह यदि ऊर्ध्व-लोक-क्षेत्र में त्रस-नाल के बाहर विश्रेणी में (विदिशा में) उत्पन्न हो, तो वह चार समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) के द्वारा उत्पन्न होता है।) इसी प्रकार पर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव के रूप में उत्पन्न होने के विषय में भी, इसी प्रकार यावत् 'पर्याप्त-सूक्ष्म-तेजस्कायिक-जीव के रूप में उत्पन्न होने' तक वक्तव्य है।

१६. भन्ते! अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव अधो-लोक-क्षेत्र की (त्रस)-नाल के बाहर के क्षेत्र में मारणान्तिक-समुद्घात से समवहत होता है, समवहत होकर जो भव्य (अपर्याप्त-बादर-तेजस्कायिक-जीव के रूप में उत्पन्न होने की योग्यता प्राप्त) समय-क्षेत्र में अपर्याप्त-बादर-तेजस्कायिक-जीव के रूप में उत्पन्न होता है, भन्ते! वह कितने समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) से उत्पन्न होता है?

गौतम! वह जीव दो समय वाली अथवा तीन समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) के द्वारा उत्पन्न होता है।

१७. यह किस अपेक्षा से?

गौतम! मैंने इस प्रकार सात श्रेणियां प्रज्ञप्त की हैं, जैसे—१. ऋजुआयता यावत् अर्धचक्रवाला (भ. ३४।३)। एकतोवक्रा श्रेणी के द्वारा उत्पन्न होता हुआ वह जीव दो समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) के द्वारा उत्पन्न होता है। द्वितोवक्रा श्रेणी के द्वारा उत्पन्न होता हुआ वह जीव तीन समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) के द्वारा उत्पन्न होता है। यह इस अपेक्षा से कहा जा रहा है। इसी प्रकार पर्याप्त-बादर-तेजस्कायिक-जीव के रूप में भी उत्पन्न करवाना चाहिए। वायुकायिक- और वनस्पतिकायिक-जीवों के रूप में चार भेदों के द्वारा वैसा ही उत्पन्न करवाना चाहिए जैसा अप्कायिक-जीवों के रूप में करवाया गया था। (भ. ३४।१३) इसी प्रकार जैसा अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव का गमक बतलाया गया है उसी प्रकार पर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव का भी बतलाना चाहिए, उसी प्रकार बीस स्थानों में उत्पन्न करवाना चाहिए। (भ. ३४।१३)

१८. (भन्ते! अपर्याप्त-बादर-पृथ्वीकायिक-जीवों के विषय में पृच्छा? (भ. ३४।१३))

अधो-लोक-क्षेत्र की (त्रस)-नाल के बाहर के क्षेत्र में मारणान्तिक-समुद्घात से समवहत होता है? (भ. ३४।१४) इसी प्रकार बादर-पृथ्वीकायिक-जीव के पर्याप्तक और

अपर्याप्तक के विषय में बतलाना चाहिए। इसी प्रकार अप्कायिक-जीव के चारों प्रकार के विषय में बतलाना चाहिए। सूक्ष्म-तेजस्कायिक-जीव के दो प्रकार के विषय में भी उसी प्रकार बतलाना चाहिए।

१९. भन्ते! अपर्याप्त-बादर-तेजस्कायिक-जीव समय-क्षेत्र में मारणान्तिक-समुद्घात से समवहत होता है, समवहत होकर जो भव्य (अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव के रूप में उत्पन्न होने की योग्यता प्राप्त) ऊर्ध्व-लोक-क्षेत्र की (त्रस)-नाल के बाहर के क्षेत्र में अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव के रूप में उत्पन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितने समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) से उत्पन्न होता है?

गौतम! वह जीव दो समय वाली अथवा तीन समय वाली अथवा चार समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) के द्वारा उत्पन्न होता है।

२०. यह किस अपेक्षा से? जिस अपेक्षा से रत्नप्रभा-पृथ्वी के विषय में बतलाया गया उसी अपेक्षा से सातों श्रेणियों के विषय में बतलाना चाहिए। (भ. ३४।३) इसी प्रकार यावत्।

२१. भन्ते! अपर्याप्त-बादर-तेजस्कायिक-जीव समय-क्षेत्र में मारणान्तिक-समुद्घात से समवहत होता है, समवहत होकर जो भव्य (पर्याप्त-सूक्ष्म-तेजस्कायिक-जीव के रूप में उत्पन्न होने की योग्यता प्राप्त) ऊर्ध्व-लोक-क्षेत्र की (त्रस)-नाल के बाहर के क्षेत्र में पर्याप्त-सूक्ष्म-तेजस्कायिक-जीव के रूप में उत्पन्न होने योग्य है, भन्ते! (वह कितने समय वाली विग्रह-गति से उत्पन्न होता है?) शेष उसी प्रकार वक्तव्य है (भ. ३४।१९)।

२२. भन्ते! अपर्याप्त-बादर-तेजस्कायिक-जीव समय-क्षेत्र में मारणान्तिक-समुद्घात से समवहत होता है, समवहत होकर जो भव्य (अपर्याप्त-बादर-तेजस्कायिक-जीव के रूप में उत्पन्न होने की योग्यता प्राप्त) समय-क्षेत्र में अपर्याप्त-बादर-तेजस्कायिक-जीव के रूप में उत्पन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितने समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) से उत्पन्न होता है?

गौतम! वह जीव एक समय वाली अथवा दो समय वाली अथवा तीन समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) के द्वारा उत्पन्न होता है।

२३. यह किस अपेक्षा से?

जिस अपेक्षा से रत्नप्रभा-पृथ्वी के विषय में बतलाया गया है उसी अपेक्षा से सातों श्रेणियों के विषय में बतलाना चाहिए।

इसी प्रकार (अपर्याप्त-बादर-तेजस्कायिक-जीव का उपपात) पर्याप्त-बादर तेजस्कायिक-जीव के रूप में जानना चाहिए। वायुकायिक-जीवों के रूप में और वनस्पतिकायिक-जीवों के रूप में (अपर्याप्त-बादर-तेजस्कायिक-जीव का) जैसे पृथ्वीकायिक-जीवों में उपपात करवाया गया उसी प्रकार चार भेदों के द्वारा उपपात करवाना चाहिए। इसी प्रकार पर्याप्त-बादर-तेजस्कायिक-जीव का भी इन्हीं स्थानों में उपपात करवाना चाहिए। वायुकायिक-और वनस्पतिकायिक-जीवों का जैसे पृथ्वीकायिक-जीव का उपपात बतलाया गया वैसा ही बतलाना चाहिए।

२४. भन्ते! अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक जीव ऊर्ध्व-लोक-क्षेत्र की (त्रस)- नाल के बाहर के क्षेत्र में मारणान्तिक-समुद्‌घात से समवहत होता है, समवहत होकर जो भव्य (अपर्याप्त सूक्ष्म पृथ्वीकायिक जीव के रूप में उत्पन्न होने की योग्यता प्राप्त) अधो-लोक-क्षेत्र की (त्रस)-नाल के बाहर के क्षेत्र में अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक जीव के रूप में उत्पन्न होने का योग्य है, भन्ते! वह कितने समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) से उत्पन्न होता है? इसी प्रकार ऊर्ध्व-लोक-क्षेत्र की (त्रस)-नाल के बाहर के क्षेत्र में मारणान्तिक- समुद्‌घात से समवहत होता है, (समवहत होकर) अधो-लोक-क्षेत्र की (त्रस) नाल-के बाहर के क्षेत्र में उत्पन्न होते हुए जीवों के विषय में वही गमक सम्पूर्ण रूप में बतलाना चाहिए। (भ. ३४।१४) यावत् 'बादर-वनस्पति-कायिक पर्याप्तक जीव का बादर-वनस्पतिकायिक- -पर्याप्तक जीवों में उपपात' तक बतलाना चाहिए।

२५. भन्ते! अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक जीव लोक के पूर्व दिशा के चरमान्त में मारणान्तिक-समुद्‌घात से समवहत होता है, समवहत होकर जो भव्य (अपर्याप्त-सूक्ष्म- -पृथ्वीकायिक जीव के रूप में उत्पन्न होने की योग्यता प्राप्त) लोक के पूर्व दिशा के ही चरमान्त में अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक जीव के रूप में उत्पन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितने समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) के द्वारा उत्पन्न होता है?

गौतम! वह जीव एक समय वाली अथवा दो समय वाली अथवा तीन समय वाली अथवा चार समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) के द्वारा उत्पन्न होता है।

२६. भन्ते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—एक समय वाली अथवा (चार समय वाली) यावत् 'उत्पन्न होता है'?

गौतम! मैंने इस प्रकार सात श्रेणियां प्रज्ञप्त की हैं, जैसे—ऋजुआयता यावद् 'अर्धचक्रवाला' (भ. ३४/३)। ऋजुआयताश्रेणी के द्वारा उत्पन्न होता हुआ वह जीव एक समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) के द्वारा उत्पन्न होता है। एकतोवक्रा श्रेणी के द्वारा उत्पन्न होता हुआ वह जीव दो समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) के द्वारा उत्पन्न होता है। द्वितोवक्रा श्रेणी के द्वारा उत्पन्न होता हुआ जो भव्य एक प्रतर में अनुश्रेणी के द्वारा (अपर्याप्त-सूक्ष्म- पृथ्वीकायिक जीव के रूप में उत्पन्न होने की योग्यता प्राप्त है), वह तीन समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) से उत्पन्न होता है। जो भव्य विश्रेणी के द्वारा (अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक जीव के रूप में उत्पन्न होने की योग्यता प्राप्त है) वह चार समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) से उत्पन्न होता है। यह इस अपेक्षा से कहा जा रहा है यावत् 'उत्पन्न होता है'। इसी प्रकार अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक जीव लोक के पूर्व चरमान्त में मारणान्तिक- समुद्‌घात से समवहत होता है, समवहत होकर लोक के पूर्व चरमान्त में ही १. अपर्याप्तक- और २. पर्याप्तक-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक जीवों रूप में, ३. अपर्याप्तक- और ४. पर्याप्तक-सूक्ष्म-अप्कायिक जीवों के रूप में, ५. अपर्याप्तक- और ६. पर्याप्तक-सूक्ष्म-तेजस्कायिक जीवों के रूप में, ७. अपर्याप्तक-और ८. पर्याप्तक- -सूक्ष्म-वायुकायिक जीवों के रूप में, ९. अपर्याप्तक-और १०. पर्याप्तक-बादर- वायुकायिक जीवों के रूप में, ११. अपर्याप्तक-और १२. पर्याप्तक-सूक्ष्म-वनस्पतिकायिक

जीवों के रूप में इस प्रकार अपर्याप्तक- और पर्याप्तक—बारह स्थानों में इसी क्रम से वक्तव्य हैं। सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-पर्याप्तक जीव इसी प्रकार से सम्पूर्ण रूप में बारह ही स्थानों में उत्पन्न करवाना चाहिए। इसी प्रकार इस गमक के द्वारा यावत् 'सूक्ष्म-वनस्पति-‌-कायिक-पर्याप्तक जीव का उत्पाद सूक्ष्म-वनस्पतिकायिक-पर्याप्तक जीवों' तक के रूप में बतलाना चाहिए।

२७. भन्ते! अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव लोक के पूर्व दिशा के चरमान्त में मारणान्तिक-समुद्घात से समवहत होता है, समवहत होकर जो भव्य (अपर्याप्त-सूक्ष्म-‌-पृथ्वीकायिक-जीव के रूप में उत्पन्न होने की योग्यता प्राप्त) लोक के दक्षिण दिशा के चरमान्त में अपर्यात-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव के रूप में उत्पन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितने समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) के द्वारा उत्पन्न होता है?

गौतम! वह जीव दो समय वाली अथवा तीन समय वाली अथवा चार समय वाली विग्रह-‌-गति (अन्तराल-गति) के द्वारा उत्पन्न होता है।

२८. भन्ते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है?

गौतम! मैंने इस प्रकार सात श्रेणियां प्रज्ञप्त की हैं जैसे—ऋजुआयता यावत् अर्धचक्रवाला (भ. ३४।३)। एकतोवक्रा-श्रेणी के द्वारा उत्पन्न होता हुआ वह जीव दो समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) के द्वारा उत्पन्न होता है। द्वितोवक्रा-श्रेणी के द्वारा उत्पन्न होता हुआ वह भव्य एक प्रतर में अनुश्रेणी के द्वारा अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव के रूप में उत्पन्न होने की योग्यता प्राप्त है, वह तीन समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) से उत्पन्न होता है। जो भव्य विश्रेणी के द्वारा (अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव के रूप में उत्पन्न होने की योग्यता प्राप्त है), वह चार समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) से उत्पन्न होता है। गौतम! यह इस अपेक्षा से कहा जा रहा है। इसी प्रकार इस गमक के द्वारा पूर्व दिशा के चरमान्त में मारणान्तिक-समुद्घात से समवहत होकर दक्षिण दिशा के चरमान्त में उत्पन्न करवाना चाहिए यावत् 'सूक्ष्म-वनस्पति-कायिक-पर्याप्तक-जीव का सूक्ष्म-‌-वनस्पतिकायिक-जीवों में उत्पाद करवाना चाहिए। सभी जीवों का विग्रह दो समय वाला, तीन समय वाला अथवा चार समय वाला बतलाना चाहिए।

२९. भन्ते! अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव लोक के पूर्व दिशा के चरमान्त में मारणान्तिक-समुद्घात से समवहत होता है, समवहत होकर जो भव्य (अपर्याप्त-सूक्ष्म-‌-पृथ्वीकायिक-जीव के रूप में उत्पन्न होने की योगता प्राप्त) लोक के पश्चिम दिशा के चरमान्त में अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव के रूप में उत्पन्न होने योग्य है, भन्ते! वह कितने समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) के द्वारा उत्पन्न होता है।

गौतम! वह जीव एक समय वाली अथवा दो समय वाली अथवा तीन समय वाली अथवा चार समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) के द्वारा उत्पन्न होता है।

३०. यह किस अपेक्षा से?

इसी प्रकार जैसे पूर्व दिशा के चरमान्त में मारणान्तिक-समुद्घात से समवहत होता है,

(समवहत होकर) पूर्व दिशा के ही चरमान्त में उत्पन्न हुआ था (भ. ३४।२५) वैसे ही पूर्व दिशा के चरमान्त में समवहत हुआ था, (समवहत होकर) पश्चिम दिशा के चरमान्त में सभी जीवों को उत्पन्न करवाना चाहिए।

३१. भन्ते! अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव लोक के पूर्व दिशा के चरमान्त में मारणान्तिक-समुद्घात से समवहत होता है, समवहत होकर जो भव्य (अपर्याप्त-सूक्ष्म--पृथ्वीकायिक-जीव के रूप में उत्पन्न होने की योग्यता प्राप्त) लोक के उत्तर दिशा के चरमान्त में अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव के रूप में उत्पन्न होने योग्य है, भन्ते! वह (कितने समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) के द्वारा उत्पन्न होता है) ? इसी प्रकार जैसे पूर्व दिशा के चरमान्त में मारणान्तिक-समुद्घात से समवहत होता है (सवमहत होकर) दक्षिण दिशा के चरमान्त में उत्पन्न करवाया था वैसे ही पूर्व दिशा के चरमान्त में समवहत होता है, (सवमहत होकर) उत्तर दिशा के चरमान्त में उत्पन्न करवाना चाहिए।

३२. भन्ते! अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव लोक के दक्षिण दिशा के चरमान्त में मारणान्तिक-समुद्घात से समवहत होता है, समवहत होकर जो भव्य (अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव के रूप में उत्पन्न होने की योग्यता प्राप्त) लोक के दक्षिण दिशा के ही चरमान्त में अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव के रूप में उत्पन्न होने योग्य हैं? इसी प्रकार जैसे पूर्व दिशा के चरमान्त में मारणान्तिक-समुद्घात से समवहत होता है, समवहत होकर पूर्व दिशा के ही चरमान्त में उत्पन्न करवाना चाहिए, वैसे ही दक्षिण दिशा में समवहत होकर दक्षिण दिशा में ही उत्पन्न करवाना चाहिए, वैसे ही सम्पूर्ण रूप से बतलाना चाहिए यावत् 'सूक्ष्म-वनस्पतिकायिक-पर्याप्तक-जीव का सूक्ष्म-वनस्पतिकायिक-पर्याप्तक-जीव के रूप में (लोक के) दक्षिण चरमान्त' तक में उत्पन्न करवाना चाहिए। इसी प्रकार दक्षिण में समवहत होकर पश्चिम के चरमान्त में उत्पन्न करवाना चाहिए, केवल इतना अन्तर है—दो समय वाली, तीन समय वाली अथवा चार समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) से (उत्पन्न करवाना चाहिए), शेष उसी प्रकार बतलाना चाहिए। इसी प्रकार दक्षिण में समवहत होकर उत्तर के चरमान्त में उत्पन्न करवाना चाहिए, जैसे स्वस्थान के विषय में बतलाया गया वैसे ही एक समय वाली, दो समय वाली, तीन समयवाली अथवा चार समय वाली विग्रह-गति से उत्पन्न करवाना चाहिए। (दक्षिण के चरमांत में मर कर, पूर्व चरमान्त में उत्पन्न होने वाले के लिए वैसे ही बतलाना चाहिए जैसा (दक्षिण के चरमांत में मरकर) पश्चिम के चरमान्त में उत्पन्न होने वाले के विषय में बतलाया गया था, वैसे ही दो समय वाली, तीन समय वाली अथवा चार समय वाली विग्रह-गति से उत्पन्न करवाना चाहिए। (अब) पाश्चात्य चरमान्त में मरकर चारों दिशाओं में उत्पन्न होने वाले जीवों के विषय में बताया जा रहा है—(जैसे पूर्व के चरमान्त में मरकर पूर्व के चरमान्त में उत्पन्न होने वाले जीवों के विषय में स्वस्थान में एक, दो, तीन, चार समय की विग्रह-गति (अन्तराल-गति) बतलाई गई थी वैसे ही यहां भी) पश्चिम के चरमान्त में (मारणान्तिक-समुद्घात से समवहत होते हैं), समवहत होकर पश्चिम के चरमान्त में ही उत्पन्न होने वाले जीवों के विषय में स्वस्थान में एक, दो, तीन और चार समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) बतलानी चाहिए। (पश्चिम के चरमान्त में मर कर) उत्तर के चरमान्त में उत्पन्न होने वाले जीवों की एक समय वाली विग्रह-गति

(अन्तराल-गति) नहीं होती, शेष उसी प्रकार वक्तव्य है। (जैसा पश्चिम के चरमान्त में मर कर पश्चिम के चरमान्त में उत्पन्न होने वाले जीवों के विषय में बतलाया गया है।) (पश्चिम के चरमान्त में मरकर) पूर्व के चरमान्त में उत्पन्न होने वाले जीवों के विषय में वैसे ही बतलाना चाहिए जैसा स्वस्थान में (एक, दो, तीन, चार समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) बतलानी चाहिए)। (यहां पश्चिम के चरमान्त में मर कर पूर्व के चरमान्त में समश्रेणी से उत्पन्न हो सकते हैं इसलिए एक समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) बतलानी चाहिए)। (पश्चिम के चरमान्त में मरकर) दक्षिण के चरमान्त में उत्पन्न होने वाले जीव के (पश्चिम का चरमान्त दक्षिण के चरमान्त के साथ समश्रेणी में नहीं हैं इसलिए) एक समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) नहीं होती, शेष इसी प्रकार समझना चाहिए। (अर्थात् स्वस्थान में दो, तीन और चार समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) बतलानी चाहिए।

(उत्तर के चरमान्त में मरकर चारों दिशाओं में उत्पन्न होने वाले जीवों के विषय में बताया जा रहा है–)

उत्तर के चरमान्त में (मारणान्तिक-समुद्घात से समवहत होते हैं,) समवहत होकर उत्तर में ही उत्पन्न होने वाले जीवों के विषय में वैसा ही बतलाना चाहिए जैसा स्वस्थान के विषय में बतलाया गया है। (एक, दो, तीन और चार समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) बतलानी चाहिए)। (स्वस्थान में उत्पन्न होते हैं, इसलिए एक समय वाली विग्रह-गति भी हो सकती है) उत्तर के चरमान्त में (मारणान्तिक-समुद्घात से समवहत होते हैं,) समवहत होकर पूर्व के चरमान्त में उत्पन्न होने वाले जीवों के विषय में वैसे ही बतलाना चाहिए, (जैसा उत्तर के चरमान्त में मरकर उत्तर के चरमान्त में उत्पन्न हो वाले जीवों के विषय में स्वस्थान में बतलाया गया है), केवल इतना अन्तर है–एक समय वाली विग्रह-गति नहीं होती। उत्तर के चरमान्त में (मारणान्तिक-समुद्घात से समवहत होते हैं,) समवहत होकर दक्षिण के चरमान्त में उत्पन्न हो वाले जीवों के विषय में वैसे ही बतलाना चाहिए जैसे स्वस्थान में एक, दो, तीन और चार समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) बतलाई गई थी। (यहां उत्तर के चरमान्त और दक्षिण के चरमान्त में श्रमश्रेणी है, इसलिए एक समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति भी होती है)। उत्तर के चरमान्त में (मारणान्तिक--समुद्घात से समवहत होते हैं,) समवहत होकर पश्चिम के चरमान्त में उत्पन्न होने वाले जीवों की एक समय वाली विग्रह-गति (अन्तराल-गति) नहीं होती (क्योंकि उत्तर का चरमान्त और पश्चिम का चरमान्त समश्रेणी में नहीं हैं), शेष उसी प्रकार बतलाना चाहिए जैसे (उत्तर के चरमान्त में मरकर पूर्व के चरमान्त में उत्पन्न होने वाले जीवों के विषय में बतलाया गया था) यावत् 'सूक्ष्म-वनस्पतिकायिक-पर्याप्तक-जीव की उत्पत्ति सूक्ष्म--वनस्पतिकायिक-पर्याप्तक-जीवों में' तक (पूर्व की तरह जाननी चाहिए)।

३३. भन्ते! बादर-पृथ्वीकायिक-पर्याप्तक-जीवों के स्थान कहां प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! अपने स्थान की अपेक्षा से आठ पृथ्वियों में (बादर-पृथ्वीकायिक-पर्याप्तक-जीवों के स्थान प्रज्ञप्त हैं,) जैसा (**पण्णवणा** के दूसरे स्थान-पद (सू. १-१५) में बतलाया गया है

यावत् सूक्ष्म-वनस्पतिकायिक-जीवों के जो पर्याप्तक हैं और जो अपर्याप्तक हैं वे सब एक प्रकार के हैं, अविशेष और नानात्व-रहित हैं, सम्पूर्ण-लोक में व्याप्त बतलाये गये हैं, हे श्रमणायुष्मन्!

३४. भन्ते! अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीवों के कितनी कर्म-प्रकृतियां प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीवों के आठ कर्म-प्रकृतियां प्रज्ञप्त हैं, जैसे—ज्ञानावरणीय यावत् अन्तराय। इसी प्रकार पृथ्वीकायिक-जीवों के चार भेदों में (अपर्याप्त-सूक्ष्म-एकेन्द्रिय-पृथ्वीकायिक, पर्याप्त-सूक्ष्म-एकेन्द्रिय-पृथ्वीकायिक, अपर्याप्त-बादर-एकेन्द्रिय-पृथ्वीकायिक, पर्याप्त-बादर-एकेन्द्रिय-पृथ्वीकायिक जैसे एकेन्द्रिय-शतक (**भ.** ३३।६-८) में बतलाया गया है यावत् 'बादर-वनस्पतिकायिक-जीवों के पर्याप्तक' तक।

३५. भन्ते! अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीवों के कितनी कर्म-प्रकृतियों का बन्ध होता है?

गौतम! अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव सप्तविध-बन्धक भी होते हैं, अष्टविध-बन्धक भी होते हैं, जैसे एकेन्द्रिय-शतक (**भ.** ३३।९-११) में बतलाया गया है यावत् 'बादर--वनस्पतिकायिक-जीवों' तक।

३६. भन्ते! अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव कितनी कर्म-प्रकृतियों का वेदन करते हैं?

गौतम! अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव चौदह कर्म-प्रकृतियों का वेदन करते हैं जैसे—ज्ञानावरणीय, जैसे एकेन्द्रिय-शतक (**भ.** ३३।१२-१३) में बतलाया गया है यावत् (पुरुषवेदावघ्य) तक। इसी प्रकार यावत् 'बादर-वनस्पतिकायिक-जीवों के पर्याप्तक' तक।

३७. भन्ते! एकेन्द्रिय-जीव कहां से आकर उपपन्न होते हैं—क्या नैरयिकों से आकर उत्पन्न होते हैं? जैसे **पण्णवणा** के छट्ठे पद अवक्रान्ति (सू. ८२-८५) में पृथ्वीकायिक जीवों का उत्पाद बतलाया गया है वैसा वक्तव्य है।

३८. भन्ते! एकेन्द्रिय जीवों के कितने समुद्घात प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! एकन्द्रिय जीवों के चार समुद्घात प्रज्ञप्त हैं, जैसे—वेदना-समुद्घात यावत् वैक्रिय--समुद्घात। (वेदना, मारणान्तिक, कषाय और वैक्रिय)

३९. भन्ते! तुल्य-स्थिति वाले (अर्थात् एक दूसरे की अपेक्षा से समान आयुष्य वाले) एकेन्द्रिय-जीव क्या तुल्य-विशेषाधिक कर्म का बन्ध करते हैं (अर्थात् परस्पर की अपेक्षा से तुल्य-कर्म-बन्ध वाले हैं और पूर्वकाल में बन्धे हुए कर्म की अपेक्षा से अधिकतर कर्म बन्ध करते हैं)?

तुल्य-स्थिति वाले एकेन्द्रिय-जीव क्या वेमात्र-विशेषाधिक कर्म का बन्ध करते हैं (अर्थात् परस्पर की अपेक्षा से विषम परिमाण में कर्म-बन्ध वाले हैं और पूर्वकाल में बन्धे हुए कर्म की अपेक्षा से अधिकतर कर्म बन्ध करते हैं)? वेमात्र-स्थिति वाले (अर्थात् परस्पर की अपेक्षा से विषम मात्रा में स्थिति वाले) एकेन्द्रिय-जीव क्या तुल्य-विशेषाधिक कर्म का बन्ध करते हैं (अर्थात् परस्पर की अपेक्षा से तुल्य कर्म बन्ध वाले हैं और पूर्वकाल में बन्धे हुए

कर्म की अपेक्षा से अधिकतर कर्म बन्ध करते हैं)? वेमात्र-स्थिति वाले (अर्थात् परस्पर की अपेक्षा से विषम मात्रा में स्थिति वाले) एकेन्द्रिय-जीव क्या वेमात्र-विशेषाधिक कर्म का बन्ध करते हैं (अर्थात् परस्पर की अपेक्षा से विषम परिमाण में कर्म-बन्ध वाले हैं और पूर्वकाल में बन्धे हुए कर्म की अपेक्षा से अधिकतर कर्म बन्ध करते हैं)?

गौतम! कुछेक तुल्य-स्थिति वाले एकेन्द्रिय-जीव तुल्य-विशेषाधिक कर्म का बन्ध करते हैं, कुछेक तुल्य-स्थिति वाले एकेन्द्रिय-जीव वेमात्र-विशेषाधिक कर्म का बन्ध करते हैं, कुछेक वेमात्र-स्थिति वाले एकेन्द्रिय-जीव तुल्य-विशेषाधिक कर्म का बन्ध करते हैं, कुछेक वेमात्र--स्थिति वाले एकेन्द्रिय-जीव वेमात्र-विशेषाधिक कर्म का बन्ध करते हैं।

४०. भन्ते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—कुछेक तुल्य-स्थिति वाले एकेन्द्रिय-जीव यावत् 'वेमात्र-विशेषाधिक कर्म का बन्ध करते हैं' तक?

गौतम! एकेन्द्रिय-जीव चार प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—कुछ एकेन्द्रिय-जीव समान आयु वाले और एक साथ उपपन्न हैं, कुछ एकेन्द्रिय-जीव समान आयुवाले और भिन्न काल में उपपन्न हैं, कुछ एकेन्द्रिय-जीव विषम आयु वाले और एक साथ उपपन्न हैं, कुछ एकेन्द्रिय-जीव विषम आयु वाले और भिन्न काल में उपपन्न हैं। इनमें जो एकेन्द्रिय-जीव समान आयु वाले और एक साथ उपपन्न हैं वे तुल्य-स्थिति वाले और तुल्य-विशेषाधिक कर्म का बन्ध करते हैं। इनमें जो एकेन्द्रिय-जीव समान आयु वाले और भिन्न काल में उपपन्न हैं वे तुल्य-स्थिति वाले और वेमात्र-विशेषाधिक कर्म का बन्ध करते हैं। इनमें जो एकेन्द्रिय-जीव विषम आयु वाले और एक साथ उपपन्न हैं वे वेमात्र-स्थिति वाले और तुल्य-विशेषाधिक कर्म का बन्ध करते हैं। इनमें जो एकेन्द्रिय-जीव विषम आयु वाले और भिन्न काल में उपपन्न हैं वे वेमात्र--स्थिति वाले और वेमात्र-विशेषाधिक कर्म का बन्ध करते हैं।

गौतम! यह इस अपेक्षा से कहा जा रहा है यावत् (वेमात्र-विशेषाधिक कर्म का बन्ध करते हैं) तक वक्तव्य हैं। (भ. ३४।३९)

४१. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है। इस प्रकार भगवान् गौतम यावत् संयम और तप से अपने आप को भावित करते हुए विहरण कर रहे हैं।

दूसरा उद्देशक

४२. भन्ते! अनन्तर-उपपन्न(प्रथम समय के)-एकेन्द्रिय-जीव कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! अनन्तर-उपपन्न(प्रथम समय के)-एकेन्द्रिय-जीव पांच प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—पृथ्वीकायिक, (अप्कायिक, तेजस्कायिक, वायुकायिक और वनस्पतिकायिक)। प्रत्येक के दो भेद जैसे एकेन्द्रिय-शतक में बतलाये हैं यावत् बादर-वनस्पतिकायिक' तक समझने चाहिए। (अनन्तर-उपपन्न-एकेन्द्रिय-जीव केवल अपर्याप्तक ही होते हैं, अतः पर्याप्तक के भेद यहां नहीं होंगे)

४३. भन्ते! अनन्तर-उपपन्न(प्रथम समय के)-बादर-पृथ्वीकायिक-जीवों के स्थान कहां प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! अपने स्थान की अपेक्षा से आठ पृथ्वियों में (अनन्तर-उपपन्न-बादर-पृथ्वीकायिक के

स्थान पर प्रज्ञप्त हैं), जैसे—रत्नप्रभा आदि, जिस प्रकार **पण्णवणा** के द्वितीय पद 'स्थान--पद' (सू. १,२) में प्रज्ञप्त हैं, इसी प्रकार यावत् 'द्वीपों और समुद्रों में' तक समझना चाहिए, यहां अनन्तर-उपपन्न-बादर-पृथ्वीकायिक-जीवों के स्थान प्रज्ञप्त हैं, उपपात की अपेक्षा से सर्व-लोक में अनन्तर-उपपन्न-बादर-पृथ्वीकायिक का स्थान हैं। मारणांतिक--समुद्घात की अपेक्षा से सर्व-लोक में अनन्तर-उपपन्न-बादर-पृथ्वीकायिक के स्थान हैं। अपने स्थान की अपेक्षा से लोक-के-असंख्यातवें-भाग में अनन्तर-उपपन्न-बादर--पृथ्वीकायिक के स्थान हैं। अनन्तर-उपपन्न-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव एक प्रकार के हैं, अविशेष और नानात्वरहित हैं, सम्पूर्ण लोक में व्याप्त बतलाये गये हैं, हे श्रमणायुष्मन्! इसी प्रकार इस क्रम से सभी एकेन्द्रिय-जीव के विषय में बतलाना चाहिए। अपने स्थान की अपेक्षा से सभी जीवों के स्थान जिस प्रकार **पण्णवणा** के स्थान-पद (सू. १,२) में बतलाये गये हैं वैसे समझने चाहिए। बादर-पृथ्वीकायिक आदि पर्याप्तक-जीवों के उपपात, समुद्घात और स्वस्थान की अपेक्षा से जैसे बतलाये गये वैसे ही उन बादर-जीवों के अपर्याप्तकों के बतलाने चाहिए। जैसे पृथ्वीकायिक-जीवों के बतलाये हैं वैसे ही सभी सूक्ष्म-जीवों के बतलाने चाहिए यावत् वनस्पतिकायिक-जीवों तक।

४४. भन्ते! अनन्तर-उपपन्न-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीवों के कर्म-प्रकृतियां कितनी प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! अनन्तर-उपपन्न-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीवों के आठ कर्म-प्रकृतियां प्रज्ञप्त हैं। इसी प्रकार जैसे एकेन्द्रिय-शतक में अनन्तर-उपपन्न-उद्देशक में प्रज्ञप्त हैं वैसे ही प्रज्ञप्त हैं, वैसे ही कर्म-प्रकृतियों का बन्ध करते हैं, वैसे ही कर्म-प्रकृतियों का वेदन करते हैं, यावत् (अनन्तर--उपपन्न-बादर-वनस्पतिकायिक जीव) तक।

४५. भन्ते! अनन्तर-उपपन्न-एकेन्द्रिय-जीव कहां से आकर उत्पन्न होते हैं? जैसा औधिक--उद्देशक में बतलाया गया है वैसा ही बतलाना चाहिए।

४६. भन्ते! अनन्तर-उपपन्न-एकेन्द्रिय-जीवों के कितने समुद्घात प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! अनन्तर-उपपन्न-एकेन्द्रिय-जीव के दो समुद्घात प्रज्ञप्त हैं, जैसे—वेदना-समुद्घात और कषाय-समद्घात।

४७. भन्ते! अनन्तर-उपपन्न-एकेन्द्रिय-जीव क्या तुल्य-स्थिति वाले होते हैं तुल्य-विशेषाधिक कर्म करने वाले होते हैं—उसी प्रकार पृच्छा।

गौतम! कुछेक तुल्य-स्थिति वाले अनन्तर-उपपन्न-एकेन्द्रिय-जीव तुल्य-विशेषाधिक कर्म करने वाले होते हैं, कुछेक तुल्य-स्थिति वाले अनन्तर-उपपन्न-एकेन्द्रिय जीव वेमात्र--विशेषाधिक कर्म करने वाले होते हैं।

४८. भन्ते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है यावत् वेमात्र-विशेषाधिक कर्म का बन्ध करते हैं?

गौतम! अनन्तर-उपपन्न-एकेन्द्रिय-जीव दो प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—कुछेक अनन्तर-उपपन्न--एकेन्द्रिय-जीव समान आयु वाले और एक साथ उपपन्न हैं, कुछेक अनन्तर-उपपन्न--एकेन्द्रिय-जीव समान आयु वाले और भिन्न काल में उपपन्न हैं। इनमें जो अनन्तर-उपपन्न-

-एकेन्द्रिय-जीव समान आयुवाले और एक साथ उपपन्न हैं वे तुल्य-स्थिति वाले और तुल्य-विशेषाधिक कर्म का बन्ध करते हैं। इनमें जो अनन्तर-उपपन्न-एकेन्द्रिय-जीव समान आयु वाले और भिन्न काल में उपपन्न हैं वे तुल्य-स्थिति वाले और वेमात्र-विशेषाधिक कर्म का बन्ध करते हैं। यह इस अपेक्षा से कहा जा रहा है यावत् 'वेमात्र-विशेषाधिक कर्म का बन्ध करते हैं' तक।

४९. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

तीसरा उद्देशक

५०. भन्ते! परम्पर-उपपन्न(प्रथम समय को छोड़कर दूसरे, तीसरे आदि समय के)-एकेन्द्रिय-जीव कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! परम्पर-उपपन्न-एकेन्द्रिय-जीव पांच प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—पृथ्वीकायिक आदि (अप्कायिक, तेजस्कायिक, वायुकायिक और वनस्पतिकायिक) यावत् 'प्रत्येक के चार भेद बतलाने चाहिए' यावत् 'वनस्पतिकायिक' तक।

५१. भन्ते! परम्पर-उपपन्न-अपर्याप्तक-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव इस रत्नप्रभा-पृथ्वी में पूर्व (दिशा) के चरमान्त में मारणान्तिक-समुद्घात से समवहत होता है, समवहत होकर जो भव्य (अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव के रूप में उपपन्न होने की योग्यता प्राप्त) इस रत्नप्रभा-पृथ्वी में पश्चिम दिशा के चरमान्त में अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव के रूप में उपपन्न होने योग्य हैं? (भन्ते! वह) इसी प्रकार इस अभिलाप के द्वारा जैसा प्रथम उद्देशक (भ. ३४।२-३२) में बतलाया गया था वैसा यावत् 'लोक के चरमान्त' तक बतलाना चाहिए।

५२. भन्ते! परम्पर-उपपन्न-बादर-पृथ्वीकायिक-जीवों के स्थान कहां प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! अपने स्थान की अपेक्षा से आठ पृथ्वियों में (परम्पर-उपपन्न-बादर-पृथ्वीकायिक जीवों के स्थान हैं)। इसी प्रकार इस अभिलाप के द्वारा जैसा प्रथम उद्देशक में बतलाया गया है, (वैसा) यावत् 'तुल्य-स्थिति वाले' तक बतलाना चाहिए।

५३. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

चौथा—ग्यारहवां उद्देशक

५४. इसी प्रकार शेष आठ उद्देशकों को बतलाना चाहिए यावत् 'अचरम' तक, (जैसे २६वें शतक में बतलाए गए हैं), केवल इतना अन्तर है—अनन्तरों के उद्देशक अनन्तर के सदृश बतलाने चाहिए और परम्परों के उद्देशक परम्पर के सदृश बतलाने चाहिए, चरम और अचरम भी इसी प्रकार बतलाने चाहिए। इस प्रकार ये ग्यारह उद्देशक (प्रथम एकेन्द्रिय-श्रेणी-शतक के) होते हैं।

दूसरा शतक

पहला—ग्यारहवां उद्देशक

५५. भन्ते! कृष्णलेश्य-एकेन्द्रिय-जीव कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! कृष्णलेश्य-एकेन्द्रिय-जीव पांच प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, प्रत्येक के चार भेद जैसे कृष्णलेश्य-एकेन्द्रिय-शतक (भ. ३३।२-३) में बतलाये गये हैं वैसे बतलाने चाहिए यावत् 'वनस्पतिकायिक' तक।

५६. भन्ते! कृष्णलेश्य-अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव इस रत्नप्रभा-पृथ्वी के पूर्व दिशा के चरमान्त में...? इसी प्रकार इस अभिलाप के द्वारा जैसा औघिक-उद्देशक (भ. ३४।२-३२) में बतलाया गया है। वैसा ही बतलाना चाहिए यावत् 'लोक के चरमान्त' तक। सर्वत्र कृष्णलेश्य-जीवों में उत्पाद करवाना चाहिए।

५७. भन्ते! कृष्णलेश्य-अपर्याप्तक-बादर-पृथ्वीकायिक-जीवों के स्थान कहां प्रज्ञप्त हैं?

इसी प्रकार इस अभिलाप के द्वारा जैसा औघिक-उद्देशक (भ. ३४।३३-४१) में बतलाया गया है वैसा बतलाना चाहिए यावत् 'तुल्य-स्थिति' तक।

५८. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

५९. इसी प्रकार इस अभिलाप के द्वारा जैसा प्रथम श्रेणी-शतक (भ.३४।४२-४९) में बतलाया गया वैसे ही ग्यारह उद्देशक बतलाने चाहिए।

तीसरा—पांचवां शतक

६०. इसी प्रकार नीललेश्य-(एकेन्द्रिय-जीवों) के साथ भी (तृतीय) शतक बताना चाहिए। इसी प्रकार भी कापोतलेश्य (एकेन्द्रिय-जीवों) के साथ (चतुर्थ) शतक बतलाना चाहिए। भवसिद्धिक-एकेन्द्रिय-जीवों के साथ (पांचवां) शतक बतलाना चाहिए।

छट्ठा शतक

६१. भन्ते! कृष्णलेश्य-भवसिद्धिक-एकेन्द्रिय-जीव कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

जिस प्रकार औघिक-उद्देशक (भ. ३४।१-३१) में बतलाया गया है, वैसा ही बतलाना चाहिए।

६२. भन्ते! अनन्तर-उपपन्न-कृष्णलेश्य-भवसिद्धिक-एकेन्द्रिय-जीव कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं? जैसा अनन्तर-उपपन्न-औघिक-उद्देशक (भ. ३४।४२-४९) में बतलाया गया है वैसा ही बतलाना चाहिए।

६३. भन्ते! परम्पर-उपपन्न-कृष्णलेश्य-भवसिद्धिक-एकेन्द्रिय-जीव कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! परम्पर-उपपन्न-कृष्णलेश्य-भवसिद्धिक-एकेन्द्रिय-जीव पांच प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, (पृथ्वीकायिक, अप्कायिक, तेजस्कायिक, वायुकायिक और वनस्पतिकायिक), प्रत्येक के चार-चार भेद (भ. ३४।५१-५४) की भांति वक्तव्य हैं, यावत् 'वनस्पतिकायिक' तक।

६४. भन्ते! परम्पर-उपपन्न-कृष्णलेश्य-भवसिद्धिक-अपर्याप्तक-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव इस रत्नप्रभा-पृथ्वी के (पूर्व दिशा के चरमान्त में)....? इसी प्रकार इस अभिलाप के द्वारा जैसा औघिक-उद्देशक (भ. ३४।५१) बतलाया गया है वैसा ही यावत् 'लोक के चरमान्त' तक बतलाना चाहिए। (जैसा पूर्व में बतलाया गया वैसा ही) सर्वत्र कृष्णलेश्य-भवसिद्धिक-जीवों में उत्पाद करवाना चाहिए।

६५. भन्ते! परम्पर-उपपन्न-कृष्णलेश्य-भवसिद्धिक-पर्याप्तक-बादर-पृथ्वीकायिक-जीवों के स्थान कहां प्रज्ञप्त हैं? इसी प्रकार इस अभिलाप के द्वारा जैसा औधिक-उद्देशक (भ. ३४।५२) बतलाया गया है वैसा ही यावत् 'तुल्य-स्थितिक' तक बतलाना चाहिए। इसी प्रकार इस अभिलाप के द्वारा कृष्णलेश्य-भवसिद्धिक-एकेन्द्रिय-जीवों के विषय में भी बतलाना चाहिए। उसी प्रकार ग्यारह उद्देशक-संयुक्त छट्ठा शतक कहा गया है।

सातवां–बारहवां शतक

६६. नीललेश्य-भवसिद्धिक-एकेन्द्रिय-जीवों के विषय में (सातवां) शतक जानना चाहिए। इसी प्रकार कापोतलेश्य-भवसिद्धिक-एकेन्द्रिय-जीवों के विषय में (आठवां) शतक जानना चाहिए। जैसे भवसिद्धिक-एकेन्द्रिय-जीवों के चार शतक बतलाये गये वैसे ही अभवसिद्धिक-एकेन्द्रिय-जीवों के भी चार शतक बतलाने चाहिए, केवल इतना अन्तर है—चरम, अचरम—इन दो उद्देशकों को छोड़कर नव उद्देशक बतलाने चाहिए, शेष सब उसी प्रकार है। इस प्रकार एकेन्द्रिय श्रेणी के ये बारह शतक बतलाए गये।

६७. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है। इस प्रकार भगवान् गौतम यावत् संयम और तप से अपने आप को भावित करते हुए विहरण कर रहे हैं।

• • •

पैंतीसवां शतक

पहला एकेन्द्रिय-महायुग्म-शतक

पहला उद्देशक

महायुग्म-एकेन्द्रियों का उपपात-आदि-पद

१. भन्ते! महायुग्म कितने प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! महायुग्म सोलह प्रज्ञप्त हैं, जैसे—

१. कृतयुग्म-कृतयुग्म (जघन्यतः सोलह)
२. कृतयुग्म-त्र्योज (जघन्यतः उन्नीस)
३. कृतयुग्म-द्वापरयुग्म (जघन्यतः अठारह)
४. कृतयुग्म-कल्योज (जघन्यतः सतरह)
५. त्र्योज-कृतयुग्म (जघन्यतः बारह)
६. त्र्योज-त्र्योज (जघन्यतः पन्द्रह)
७. त्र्योज-द्वापरयुग्म (जघन्यतः चौदह)
८. त्र्योज-कल्योज (जघन्यतः तेरह)
९. द्वापरयुग्म-कृतयुग्म (जघन्यतः आठ)
१०. द्वापरयुग्म-कल्योज (जघन्यतः ग्यारह)
११. द्वापरयुग्म-द्वापरयुग्म (जघन्यतः दस)
१२. द्वापरयुग्म-कल्योज (जघन्यतः नव)
१३. कल्योज-कृतयुग्म (जघन्यतः चार)
१४. कल्योज-त्र्योज (जघन्यतः सात)
१५. कल्योज—द्वापरयुग्म (जघन्यतः छह)
१६. कल्योज—कल्योज (जघन्यतः पांच)

२. भंते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—सोलह महायुग्म प्रज्ञप्त हैं, जैसे कृतयुग्म--कृतयुग्म यावत् कल्योज-कल्योज?

गौतम! जिस राशि को सामयिक-चतुष्क के द्वारा अपहार करने पर चार पर्यवसित रहते हैं तथा अपहार-समय भी चतुष्क के द्वारा अपहार किये जाने पर चार ही पर्यवसित रहते हैं वह राशि कृतयुग्म-कृतयुग्म है। (द्रव्य के अपहार की अपेक्षा से तथा समय के अपहार की

अपेक्षा से भी चार-चार रहते हैं, वह राशि द्रव्य से भी कृतयुग्म और समय से भी कृतयुग्म है, अतः कृतयुग्म-कृतयुग्म कहलाती है; यह जघन्यतः सोलह है)।।१।।

जिस राशि के सामयिक-चतुष्क के द्वारा अपहार करने पर तीन पर्यवसित रहते हैं तथा अपहार-समय-चतुष्क के द्वारा अपहार किये जाने पर चार ही पर्यवसित रहते हैं; वह राशि कृतयुग्म-त्र्योज है; (यह जघन्यतः उन्नीस है)।।२।।

जिस राशि को सामयिक-चतुष्क के द्वारा अपहार करने पर दो पर्यवसित रहते हैं तथा अपहार-समय-चतुष्क के द्वारा अपहार किये जाने पर चार ही पर्यवसित रहते हैं वह राशि कृतयुग्म-द्वापरयुग्म है; (यह जघन्यतः अठारह है)।।३।।

जिस राशि को सामयिक-चतुष्क के द्वारा अपहार करने पर एक पर्यवसित रहता है तथा अपहार-समय-चतुष्क के द्वारा अपहार किये जाने पर चार ही पर्यवसित रहते हैं, वह राशि कृतयुग्म-कल्योज है; यह जघन्यतः सत्रह है।।४।।

जिस राशि को सामयिक-चतुष्क के द्वारा अपहार करने पर चार पर्यवसित रहते हैं तथा अपहार-समय-चतुष्क के द्वारा अपहार किये जाने पर तीन ही पर्यवसित रहते हैं, वह राशि त्र्योज-कृतयुग्म है; (यह जघन्यतः बारह है)।।५।।

जिस राशि को सामयिक-चतुष्क के द्वारा अपहार करने पर तीन पर्यवसित रहते हैं तथा अपहार-समय-चतुष्क के द्वारा अपहार किये जाने पर तीन ही पर्यवसित रहते हैं, वह राशि त्र्योज-त्र्योज है; (यह जघन्यतः पन्द्रह है)।।६।।

जिस राशि को सामयिक-चतुष्क के द्वारा अपहार करने पर दो पर्यवसित रहते हैं तथा अपहार-समय-चतुष्क के द्वारा अपहार किये जने पर तीन ही पर्यवसित रहते हैं, वह राशि त्र्योज-द्वापरयुग्म है; (यह जघन्यतः चौदह है)।।७।।

जिस राशि को सामयिक-चतुष्क के द्वारा अपहार करने पर एक पर्यवसित रहता है तथा अपहार-समय-चतुष्क के द्वारा अपहार किये जाने पर तीन ही पर्यवसित रहते हैं, वह राशि त्र्योज-कल्योज है (यह जघन्यतः तेरह है)।।८।।

जिस राशि को सामयिक-चतुष्क के द्वारा अपहार करने पर चार पर्यवसित रहते हैं तथा अपहार-समय-चतुष्क के द्वारा अपहार किये जाने पर दो ही पर्यवसित रहते हैं, वह राशि द्वापरयुग्म-कृतयुग्म है; (यह जघन्यतः आठ है)।।९।।

जिस राशि को सामयिक-चतुष्क के द्वारा अपहार करने पर तीन पर्यवसित रहते हैं तथा अपहार-समय-चतुष्क के द्वारा अपहार किये जाने पर दो ही पर्यवसित रहते हैं, वह राशि द्वापरयुग्म-त्र्योज है; (यह जघन्यतः ग्यारह है)।।१०।।

जिस राशि को सामयिक-चतुष्क के द्वारा अपहार करने पर दो पर्यवसित रहते हैं तथा अपहार-समय-चतुष्क के द्वारा अपहार किये जाने पर दो ही पर्यवसित रहते हैं, वह राशि द्वापरयुग्म-द्वापरयुग्म है; (यह जघन्यतः दस है)।।११।।

जिस राशि को सामयिक-चतुष्क के द्वारा अपहार करने पर एक पर्यवसित रहता है तथा अपहार-समय-चतुष्क के द्वारा अपहार किये जाने पर दो ही पर्यवसित रहते हैं, वह राशि

द्वापरयुग्म-कल्योज है; (यह जघन्यतः नव है)।।१२।।

जिस राशि को सामयिक-चतुष्क के द्वारा अपहार करने पर चार पर्यवसित रहते हैं तथा अपहार-समय-चतुष्क के द्वारा अपहार किये जाने पर एक ही पर्यवसित रहता है, वह राशि कल्योज-कृतयुग्म है; (यह जघन्यतः चार है)।।१३।।

जिस राशि को सामयिक-चतुष्क के द्वारा अपहार करने पर तीन पर्यवसित रहते हैं तथा अपहार-समय-चतुष्क के द्वारा अपहार किये जाने पर एक ही पर्यवसित रहता है, वह राशि कल्योज-त्र्योज है; (यह जघन्यतः सात है)।।१४।।

जिस राशि को सामयिक-चतुष्क के द्वारा अपहार करने पर दो पर्यवसित रहते हैं तथा अपहार-समय-चतुष्क के द्वारा अपहार किये जाने पर एक ही पर्यवसित रहता है, वह राशि कल्योज-द्वापरयुग्म है; (यह जघन्यतः छह है)।।१५।।

जिस राशि को सामायिक-चतुष्क के द्वारा अपहार करने पर एक पर्यवसित रहता है तथा अपहार-समय-चतुष्क के द्वारा अपहार किये जाने पर एक ही पर्यवसित रहता है, वह राशि कल्योज-कल्योज है; (यह जघन्यतः पांच है)।।१६।।

यह इस अपेक्षा से कहा जा रहा है यावत् कल्योज-कल्योज तक।

३. भन्ते! कृतयुग्म-कृतयुग्म-एकेन्द्रिय-जीव कहां से आकर उत्पन्न होते हैं—क्या नैरयिक से आकर उत्पन्न होते हैं?.........

जैसे उत्पल-उद्देशक (भ. ११।२) में बतलाया गया है वैसा यहां उपपात बतलाना चाहिए।

४. भन्ते! वे (कृतयुग्म-कृतयुग्म-एकेन्द्रिय)-जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं?

गौतम! वे (कृतयुग्म-कृतयुग्म-एकेन्द्रिय)-जीव एक समय में सोलह उत्पन्न होते हैं, (अथवा बत्तीस, अडचालीस.....) संख्येय अथवा असंख्येय अथवा अनन्त उत्पन्न होते हैं।

५. भन्ते! वे जीव प्रतिसमय अपहरण किये जाने पर (निकाले जाने पर)—पृच्छा (कितने समय में अपहृत होते हैं)?

गौतम! वे अनन्त जीव प्रतिसमय अपहरण किये जाने पर (निकाले जाने पर) अनन्त अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी-काल तक (भी) अपहृत किये जाये, तो भी अपहृत नहीं होते। इन जीवों का उच्चत्व जैसा ग्यारहवें शतक के प्रथम उत्पल-उद्देशक (भ. ११।५) में बतलाया गया है वैसा बतलाना चाहिए।

६. भन्ते! वे जीव क्या ज्ञानावरणीय-कर्म के बन्धक हैं? अबन्धक हैं?

गौतम! वे जीव ज्ञानावरणीय-कर्म के बन्धक है, अबन्धक नहीं हैं। इसी प्रकार आयुष्य-कर्म को छोड़कर शेष सभी कर्म के बन्धक होते हैं, अबन्धक नहीं होते। आयुष्य-कर्म के बन्धक भी होते हैं अबन्धक भी होते हैं।

७. भन्ते! वे जीव क्या ज्ञानावरणीय-कर्म का वेदन करते हैं—पृच्छा।

गौतम! वे जीव वेदक हैं, अवेदक नहीं हैं। इसी प्रकार सभी कर्मों के विषय में जानना चाहिए।

८. भन्ते! वे जीव क्या सात-वेदक होते हैं (सात-वेदनीय का वेदन करते हैं)? अथवा असात-वेदक होते हैं? (आसाता-वेदनीय का वेदन करते हैं)?

गौतम! वे जीव सातवेदक भी होते हैं, असातवेदक भी होते हैं। इसी प्रकार उत्पल-उद्देशक (भ. ११।९-११) की परिपाटी बतलानी चाहिए। सभी कर्मों के उदय वाले हैं, अनुदय वाले नहीं हैं। वे जीव छह कर्मों की उदीरणा करने वाले हैं, अनुदीरक नहीं हैं। वेदनीय-और आयुष्य-कर्म के उदीरक भी हैं, अनुदीरीक भी हैं।

९. भन्ते! वे (कृतयुग्म-कृतयुग्म-एकेन्द्रिय)-जीव क्या कृष्णलेश्य हैं....पृच्छा।

गौतम! वे (कृतयुग्म-कृतयुग्म-एकेन्द्रिय)-जीव कृष्णलेश्य भी होते हैं, नीललेश्य भी होते हैं, कापोतलेश्य भी होते हैं, तेजोलेश्य भी होते हैं। वे जीव सम्यग्-दृष्टि नहीं होते, सम्यग्--मिथ्या-दृष्टि नहीं होते किन्तु वे मिथ्या-दृष्टि ही होते हैं। वे जीव ज्ञानी नहीं होते, अज्ञानी ही होते हैं—वे जीव नियमतः दो अज्ञान वाले होते हैं, जेसे—मति-अज्ञानी और श्रुत-अज्ञानी। वे जीव मन-योगी नहीं होते, वचन-योगी नहीं होते, काय-योगी ही होते हैं। वे जीव साकार-उपयोग वाले भी होते हैं, अनाकार-उपयोग वाले भी होते हैं।

१०. भन्ते! उन जीवों के शरीर कितने वर्ण वाले होते हैं?.....जैसा उत्पलोद्देशक (भ. ११।१७-२८) में बतलाया गया है वैसा सर्वत्र प्रष्टव्य है।

गौतम! जैसे उत्पलोद्देशक में बतलाया गया है वैसे वे जीव उच्छ्वासक भी होते हैं, निश्वासक भी होते हैं, उच्छ्वास-निश्वासक नहीं हैं। वे जीव आहारक भी हैं, अनाहारक भी हैं। जीव विरत नहीं है, अविरत हैं, विरताविरत नहीं हैं। वे जीव क्रिया-सहित हैं, क्रिया-रहित नहीं हैं। वे जीव सप्तविध-बन्धक भी हैं, अष्टविध-बन्धक भी हैं। वे जीव आहार-संज्ञा-उपयुक्त भी हैं यावत् परिग्रह-संज्ञा-उपयुक्त भी हैं। वे जीव क्रोध-कषायी भी हैं यावत् लोभ-कषायी भी हैं। वे जीव स्त्री-वेदक नहीं हैं, पुरुष-वेदक नहीं हैं, नपुंसक--वेदक हैं। वे जीव स्त्री-वेद-बन्धक भी हैं, पुरुष-वेद-बन्धक भी हैं, नपुंसक-वेद-बन्धक भी हैं। वे जीव संज्ञी नहीं हैं, असंज्ञी हैं। वे जीव इन्द्रिय-सहित है, अनिन्द्रिय नहीं है।

११. भन्ते! वे कृतयुग्म-कृतयुग्म-एकेन्द्रिय-जीव काल की अपेक्षा से कितने समय तक रहते हैं?

गौतम! वे जीव जघन्यतः एक समय की स्थिति वाले होते हैं, उत्कर्षतः अनन्त-काल की स्थिति वाले होते हैं—अनन्त-अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी तक उनकी स्थिति होती है—यह अनन्त--अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी का समय वनस्पतिकायिक काल जितना होता है। इन जीवों के संवेध नहीं बतलाना चाहिए। (उत्पल-उद्देशक (भ. ११।३०-३४) में उत्पल-जीव का संवेध बतलाया गया था वैसा यहां संभव नहीं है)। इन जीवों का आहार जैसा उत्पल--उद्देशक (भ. ११।३५) में बतलाया गया था वैसा बतलाना चाहिए, केवल इतना अन्तर है—व्याघात न हो तो ये जीव छहों दिशाओं से आहार ग्रहण करते हैं, व्याघात की अपेक्षा से कदाचित् तीन दिशाओं, कदाचित् चार दिशाओं और कदाचित् पांच दिशाओं से आहार ग्रहण करते हैं, शेष कथन उसी प्रकार समझना चाहिए। (जैसा उत्पल-उद्देशक में बतलाया

गया है)। इन जीवों की स्थिति जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त, उत्कर्षतः बाईस हजार वर्ष की होती है। ये जीव प्रथम चार प्रकार के समुद्घात करते हैं। मारणान्तिक-समुद्घात से समवहत हो कर भी मरते हैं, समवहत न होकर भी मरते हैं। इन जीवों का उद्वर्तन जैसा उत्पल-उद्देशक (भ. ११।३९) में बतलाया गया है वैसा बतलाना चाहिए।

१२. भन्ते! सभी प्राण यावत् सभी सत्त्व (सब प्राण, भूत, जीव और सत्त्व) क्या कृतयुग्म--कृतयुग्म-एकेन्द्रिय-जीवों के रूप में पहले उत्पन्न हुए हैं?

हां, गौतम! (सभी प्राण, भूत, जीव ओर सत्त्व) कृतयुग्म-कृतयुग्म-एकेन्द्रिय-जीवों के रूप में अनन्त बार उत्पन्न हुए हैं।

१३. भन्ते! कृतयुग्म-त्र्योज-एकेन्द्रिय-जीव कहां से आकर उत्पन्न होते हैं...? इन जीवों का उत्पाद वैसा ही बतलाना चाहिए (जैसा कृतयुग्म-कृतयुग्म-एकेन्द्रिय-जीवों का (भ. ३५।३) में बतलाया गया है)।

१४. भन्ते! वे (कृतयुग्म-त्र्योज-एकेन्द्रिय)-जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं?......पृच्छा।

गौतम! वे (कृतयुग्म-त्र्योज-एकेन्द्रिय)-जीव एक समय में उन्नीस उत्पन्न होते हैं अथवा संख्येय उत्पन्न होते हैं अथवा असंख्येय उत्पन्न हेते हैं अथवा अनन्त उत्पन्न होते हैं, शेष जैसा कृतयुग्म-कृतयुग्म-एकेन्द्रिय-जीवों के उत्पाद के विषय में बतलाया गया है (भ. ३५-१२) यावत् 'अनन्त बार' तक वैसा ही बतलाना चाहिए।

१५. भन्ते! कृतयुग्म-द्वापरयुग्म-एकेन्द्रिय-जीव कहां से आकर उत्पन्न होते हैं? इन जीवों का उत्पाद वैसा ही बतलाना चाहिए। (जैसा भ. ३५।३ में बतलाया गया है।)

१६. भन्ते! वे (कृतयुग्म-द्वापरयुग्म-एकेन्द्रिय)-जीव एक समय में कितने उत्पन्न होते हैं....पृच्छा।

गौतम! वे (कृतयुग्म-द्वापरयुग्म-एकेन्द्रिय)-जीव एक समय में अट्ठारह उत्पन्न होते हैं अथवा संख्येय उत्पन्न होते हैं अथवा असंख्येय उत्पन्न होते हैं अथवा अनन्त उत्पन्न होते हैं, शेष जैसा कृतयुग्म-कृतयुग्म-एकेन्द्रिय-जीवों के उत्पाद के विषय में बतलाया गया है यावत् 'अनन्त बार' तक वैसा ही बतलाना चाहिए।

१७. भन्ते! कृतयुग्म-कल्योज-एकेन्द्रिय-जीव कहां से आकर उत्पन्न होते हैं? इन जीवों का उत्पाद वैसा ही बतलाना चाहिए। इन जीवों का परिमाण सत्रह अथवा संख्येय अथवा असंख्येय अथवा अनन्त होता है, शेष उसी प्रकार बतलाना चाहिए यावत् 'अनन्त बार' तक।

१८. भन्ते! त्र्योज-कृतयुग्म-एकेन्द्रिय-जीव कहां से आकर उत्पन्न होते हैं....? इन जीवों का उत्पाद वैसा ही बतलाना चाहिए। इन जीवों का परिमाण बारह अथवा संख्येय अथवा असंख्येय अथवा अनन्त होता है, शेष उसी प्रकार बतलाना चाहिए यावत् 'अनन्त बार' तक।

१९. भन्ते! त्र्योज-त्र्योज-एकेन्द्रिय-जीव कहां से आकर उत्पन्न होते हैं....? इन जीवों का

उत्पाद वैसा ही बतलाना चाहिए। इन जीवों का परिमाण पन्द्रह अथवा संख्येय अथवा असंख्येय अथवा अनन्त होते हैं, शेष उसी प्रकार बतलाना चाहिए यावत् 'अनन्त बार' तक। इसी प्रकार इन सोलह महायुग्मों के विषय में एक ही गमक जानना चाहिए, केवल इतना अन्तर है—परिमाण में नानात्व है, जैसे—त्र्योज-द्वापरयुग्म-एकेन्द्रिय-जीवों का परिमाण—चौदह अथवा संख्येय अथवा असंख्येय अथवा अनन्त उत्पन्न होते हैं। त्र्योज-कल्योज-एकेन्द्रिय--जीवों का परिमाण—तेरह अथवा संख्येय अथवा असंख्येय अथवा अनन्त उत्पन्न होते हैं। द्वापरयुग्म-कृतयुग्म-एकेन्द्रिय-जीवों का परिमाण—आठ अथवा संख्येय अथवा असंख्येय अथवा अनन्त उत्पन्न होते हैं। द्वापरयुग्म-त्र्योज-एकेन्द्रिय-जीवों का परिमाण—ग्यारह अथवा संख्येय अथवा असंख्येय अथवा अनन्त उत्पन्न होते हैं। द्वापरयुग्म-द्वापरयुग्म-एकेन्द्रिय-जीवों का परिमाण—दस अथवा संख्येय अथवा असंख्येय अथवा अनन्त उत्पन्न होते हैं। द्वापरयुग्म--कल्योज-एकेन्द्रिय-जीवों का परिमाण—नव अथवा संख्येय अथवा असंख्येय अथवा अनन्त उत्पन्न होते हैं। कल्योज-कृतयुग्म-एकेन्द्रिय-जीवों का परिमाण—चार अथवा संख्येय अथवा असंख्येय अथवा अनन्त उत्पन्न होते हैं। कल्योज-त्र्योज-एकेन्द्रिय-जीवों का परिमाण—सात अथवा संख्येय अथवा असंख्येय अथवा अनन्त उत्पन्न होते हैं। कल्योज-द्वापरयुग्म-एकेन्द्रिय-जीवों का परिमाण छह अथवा संख्येय अथवा असंख्येय अथवा अनन्त उत्पन्न होते हैं।

२०. भन्ते! कल्योज-कल्योज-एकेन्द्रिय-जीव कहां से आकर उत्पन्न होते हैं? इन जीवों का उत्पाद वैसा ही बतलाना चाहिए। इन जीवों का परिमाण—पांच अथवा संख्येय अथवा असंख्येय अथवा अनन्त होते हैं, शेष उसी प्रकार बतलाना चाहिए यावत् 'अनन्त बार' तक।

२१. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

दूसरा उद्देशक

२२. भन्ते! प्रथम समय के कृतयुग्म-कृतयुग्म-एकेन्द्रिय जीव कहां से आकर उत्पन्न होते हैं?

गौतम! उसी प्रकार इसी प्रकार जैसा प्रथम उद्देशक (भ. ३५।३-२०) में बतलाया गया है वैसा सोलह (सोलह प्रकार के महायुग्मों के प्रथम समय के जीवों के विषय में) बार द्वितीय उद्देशक बतलाना चाहिए। उसी प्रकार सम्पूर्ण वक्तव्य है, केवल इतना अन्तर है—ये दस नानात्व हैं—१. अवगाहना—प्रथम समय के कृतयुग्म-कृतयुग्म-एकेन्द्रिय-जीवों की अवगाहना जघन्यतः अंगुल-का-असंख्यातवां-भाग, उत्कर्षतः भी अंगुल-का-असंख्यातवां-भाग होती है। २. वे आयुष्य-कर्म का बन्ध नहीं करते, अतः अबन्धक होते हैं। ३. वे आयुष्य-कर्म की उदीरणा नहीं करते, अतः अनुदीरक होते हैं। ४. वे न उच्छ्वासक होते हैं, न निःश्वासक होते हैं, न उच्छ्वासक-निःश्वासक होते हैं। ५. वे सप्तविध-बन्धक होते हैं, अष्टविध--बन्धक नहीं होते।

२३. भन्ते! वे प्रथम समय के कृतयुग्म-कृतयुग्म-एकेन्द्रिय-जीव काल की अपेक्षा से कितने समय तक रहते हैं?

गौतम! ६. वे प्रथम समय के कृतयुग्म-कृतयुग्म-एकेन्द्रिय-जीव काल की अपेक्षा से एक

समय तक रहते हैं। ७. इसी प्रकार उनकी स्थिति भी बतलानी चाहिए—एक समय की स्थिति होती है। ८. वे पहले दो प्रकार के समुद्घात करते हैं (वेदना और कषाय)। ९. (मारणान्तिक-समुद्घात से) समवहत होकर (इस विषय में) प्रश्न नहीं करना चाहिए (क्योंकि मारणान्तिक-समुद्घात नहीं होता) १०. इन जीवों के उद्वर्तना के विषय में नहीं पूछना चाहिए (क्योंकि इनकी उद्वर्तना नहीं होती), शेष सारा सम्पूर्ण रूप से सोलह ही गमकों में वैसा ही बतलाना चाहिए यावत् 'अनन्तर बार' तक।

२४. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

तीसरा–ग्यारहवां उद्देशक

(तीसरा उद्देशक)

२५. भन्ते! अप्रथम समय (पहला समय छोड़कर) के कृतयुग्म-कृतयुग्म-एकेन्द्रिय-जीव कहां से आकर उत्पन्न होते हैं..? जैसा प्रथम उद्देशक में सोलह ही युग्मों के विषय में बतलाया गया वैसा ही यह विषय बतलाना चाहिए यावत् 'कल्योज-कल्योज' तक यावत् 'अनन्त बार' तक बतलाना चाहिए।

२६. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

(चौथा उद्देशक)

२७. भन्ते! चरम समय के कृतयुग्म-कृतयुग्म-एकेन्द्रिय जीव कहां से आकर उत्पन्न होते हैं..? इसी प्रकार जैसा प्रथम समय के कृतयुग्म-कृतयुग्म-एकेन्द्रिय-जीवों के विषय में औघिक--उद्देशक में (दस नानात्व बतलाये गये) वैसा ही यहां बतलाना चाहिए, केवल इतना अन्तर है—इनमें देवता उत्पन्न नहीं होते, तेजो-लेश्या के विषय में नहीं पूछना चाहिए, शेष उसी प्रकार वक्तव्य है।

२८. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

(पांचवां उद्देशक)

२९. भन्ते! अचरम समय (अन्तिम समय छोड़कर) के कृतयुग्म-कृतयुग्म एकेन्द्रिय-जीव कहां से आकर उत्पन्न होते हैं....? जैसा अप्रथम-समय उद्देशक (तीसरा उद्देशक) बतलाया गया है वैसा सम्पूर्ण रूप से बतलाना चाहिए। (पहला, तीसरा और पांचवां उद्देशक एक समान हैं, उनमें दस प्रकार के नानात्व नहीं है)।

३०. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

(छट्ठा उद्देशक)

३१. भन्ते! प्रथम-प्रथम समय (जो एकेन्द्रिय जीव प्रथम समय में उत्पन्न हैं तथा कृतयुग्म--कृतयुग्मत्व के अनुभव के प्रथम समय में वर्तमान हैं) के कृतयुग्म-कृतयुग्म-एकेन्द्रिय-जीव कहां से आकर उत्पन्न होते हैं...? जैसा प्रथम-समय-उद्देशक में पहला उद्देशक बतलाया गया है वैसा सम्पूर्ण रूप से बतलाना चाहिए।

३२. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है—इस प्रकार भगवान गौतम यावत् संयम और तप से अपने आप को भावित करते हुवे विहरण कर रहे हैं।

(सातवां उद्देशक)

३३. भन्ते! प्रथम-अप्रथम समय (प्रथम समय में उत्पन्न होते हुए भी जिन एकेन्द्रिय-जीवों ने कृतयुग्म-कृतयुग्मत्व का अनुभव पूर्व भव में कर लिया हो वे) के कृतयुग्म-कृतयुग्म-एकेन्द्रिय जीव कहां से आकर उत्पन्न होते हैं....? जैसा प्रथम-समय-उद्देशक बतलाया गया है वैसा बतलाना चाहिए।

३४. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

(आठवां उद्देशक)

३५. भन्ते! प्रथम-चरम-समय (कृतयुग्म-कृतयुग्म के अनुभव के प्रथम-समय में वर्तमान तथा चरम समय अर्थात् मरण समय में वर्तमान जीव) के कृतयुग्म-कृतयुग्म-एकेन्द्रिय-जीव कहां से आकर उत्पन्न होते हैं....? जैसा चरमोद्देशक (चोथे उद्देशक) बतलाया गया है वैसा सम्पूर्ण रूप से बतलाना चाहिए।

३६. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

(नवां उद्देशक)

२७. भन्ते! प्रथम-अचरम समय (कृतयुग्म-कृतयुग्मत्व के अनुभव के प्रथम समय में वर्तमान तथा अचरम अर्थात् एकेन्द्रिय में उत्पत्ति के प्रथम समय में वर्तमान जीव) के कृतयुग्म--कृतयुग्म-एकेन्द्रिय-जीव कहां से आकर उत्पन्न होते हैं...? जैसा—दूसरे उद्देशक बतलाया गया है वैसा सम्पूर्ण रूप से बतलाना चाहिए।

३८. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है—इस प्रकार भगवान गौतम यावत् संयम और तप से अपने आप को भावित करते हुए विहरण कर रहे हैं।

(दसवां उद्देशक)

३९. भन्ते! चरम-चरम समय (कृतयुग्म-कृतयुग्मत्व के अनुभव के चरम समय में वर्तमान तथा चरम अर्थात् मरण-समयवर्ती जीव) के कृतयुग्म-कृतयुग्म-एकेन्द्रिय-जीव कहां से आकर उत्पन्न होते हैं....? जैसा चोथा उद्देशक बतलाया गया है वैसा सम्पूर्ण बतलाना चाहिए।

४०. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

(ग्यारहवां उद्देशक)

४१. भन्ते! चरम-अचरम समय (कृतयुग्म-कृतयुग्मत्व के अनुभव के चरम समय में वर्तमान तथा अचरम समय अर्थात् एकेन्द्रिय में उत्पत्ति के प्रथम समय में वर्तमान जीव) के कृतयुग्म--कृतयुग्म-एकेन्द्रिय-जीव कहां से आकर उत्पन होते हैं.....? जैसा प्रथम-समय-उद्देशक बतलाया गया है वैसा सम्पूर्ण बतलाना चाहिए।

४२. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है—इस प्रकार भगवान गौतम यावत् संयम और तप से अपने आप को भावित करते हुए विहरण कर रहे हैं।

४३. इस प्रकार ये ग्यारह उद्देशक—जिनमें पहला, तीसरा और पांचवां उद्देशक समान गमक वाले हैं तथा शेष आठ उद्देशक समान गमक वाले हैं, केवल इतना अन्तर है—चोथे, आठवें

और दसवें उद्देशक में देव उत्पन्न नहीं होते हैं, इसलिए तेजो-लेश्या नहीं होती, ऐसा बतलाना चाहिए।

दूसरा एकेन्द्रिय महायुग्म शतक

पहला उद्देशक

४४. भन्ते! कृष्णलेश्य-कृतयुग्म-कृतयुग्म-एकेन्द्रिय-जीव कहां से आकर उत्पन्न होते हैं....?

गौतम! कृष्णलेश्य-कृतयुग्म-कृतयुग्म-एकेन्द्रिय-जीवों की उत्पत्ति उसी प्रकार बतानी चाहिए जैसा औघिक-उद्देशक (उद्देशक ३५।३-२०) में बतलायी गई है, केवल इतना अन्तर है—यह नानात्व है।

४५. भन्ते! वे जीव कृष्णलेश्य हैं? हां, वे जीव कृष्णलेश्य हैं।

४६. भन्ते! वे कृष्णलेश्य-कृतयुग्म-कृतयुग्म-एकेन्द्रिय-जीव काल की अपेक्षा से कितने समय तक रहते हैं?

गौतम! वे कृष्णलेश्य कृतयुग्म-कृतयुग्म-एकेन्द्रिय-जीव काल की अपेक्षा से जघन्यतः एक समय, उत्कर्षतः अन्तर्मुहूर्त रहते हैं। इसी प्रकार उनकी स्थिति (कृष्ण-लेश्या वाले जीवों की स्थिति) भी बतलानी चाहिए। शेष उसी प्रकार बतलाना चाहिए यावत् 'अनन्त-बार' तक। इसी प्रकार सोलह युग्म भी बतलाने चाहिए।

४७. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

दूसरा उद्देशक

४८. भन्ते! प्रथम समय के कृष्णलेश्य-कृतयुग्म-कृतयुग्म-एकेन्द्रिय-जीव कहां से आकर उत्पन्न होते हैं....? जैसा प्रथम-समय-उद्देशक बतलाया गया है वैसा बतलाना चाहिए, केवल इतना अन्तर है—

४९. भन्ते! वे जीव कृष्णलेश्य हैं?

हां, वे जीव कृष्णलेश्य हैं। शेष उसी प्रकार वक्तव्य है। (भ. ३५।४६)

५०. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

तीसरा से ग्यारहवां उद्देशक

५१. इस प्रकार जैसे औधिक-शतक (भ. ३५।२२-४३) में ग्यारह उद्देशक बतलाए गये उसी प्रकार कृष्णलेश्य-शतक में भी ग्यारह उद्देशक बतलाने चाहिए। इनमें पहला, तीसरा और पांचवां उद्देशक समान गमक वाले हैं, शेष आठ उद्देशक भी समान गमक वाले हैं, केवल इतना अन्तर है—चोथे, आठवें और दसवें उद्देशक में देवों का उपपात नहीं है।

५२. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

तीसरा-बारहवां शतक

पहला-ग्यारहवां उद्देशक

(तीसरा शतक)

५३. भन्ते! इसी प्रकार नीललेश्य-(कृतयुग्म-कृतयुग्म-एकेन्द्रिय-जीवों के विषय में) भी शतक बतलाना चाहिए, जैसा कृष्णलेश्य-(कृतयुग्म-कृतयुग्म-एकेन्द्रिय-जीवों के विषय में) शतक बतलाया गया है, उसके ग्यारह उद्देशक उसी प्रकार बतलाने चाहिए।

५४. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

(चौथा शतक)

पहला-ग्यारहवां उद्देशक

५५. इसी प्रकार कापोतलेश्य-(कृतयुग्म-कृतयुग्म-एकेन्द्रिय-जीवों के विषय में) भी शतक बतलाना चाहिए, जैसा कृष्णलेश्य-(कृतयुग्म-कृतयुग्म एकेन्द्रिय-जीवों के विषय में) शतक बतलाया गया है।

५६. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

(पांचवां शतक)

पहला-ग्यारहवां उद्देशक

५७. भन्ते! भवसिद्धिक-कृतयुग्म-कृतयुग्म-एकेन्द्रिय-जीव कहां से आकर उत्पन्न होते हैं...? जैसा औघिक-शतक (भ. ३५।२२-४३) में बतलाया गया है वैसा ही बतलाना चाहिए, केवल इतना अन्तर है—ग्यारह ही उद्देशकों के विषय में जो प्रष्टव्य है उस विषय में बतलाना चाहिए।

५८. भन्ते! क्या सभी प्राण यावत् सभी सत्त्व (प्राण, भूत, जीव और सत्त्व) भवसिद्धिक--कृतयुग्म-कृतयुग्म-एकेन्द्रिय-जीव के रूप में पहले उत्पन्न हुए थे?

गौतम! यह अर्थ-संगत नहीं है, शेष उसी प्रकार वक्तव्य है।

५९. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

(छट्ठा शतक)

पहला-ग्यारहवां उद्देशक

६०. भन्ते! कृष्णलेश्य-भवसिद्धिक-कृतयुग्म-कृतयुग्म-एकेन्द्रिय-जीव कहां से आकर उत्पन्न होते हैं...? इसी प्रकार कृष्णलेश्य-भवसिद्धिक-कृतयुग्म-कृतयुग्म-एकेन्द्रिय-जीवों के विषय में भी (छट्ठा) शतक बतलाना चाहिए, जैसा कृष्णलेश्य-(कृतयुग्म-कृतयुग्म-एकेन्द्रिय-जीवों के विषय में) दूसरा शतक (भ. ३५।४४-५१) बतलाया गया था।

६१. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

(सातवां शतक)

पहला-ग्यारहवां उद्देशक

६२. इसी प्रकार नीललेश्य-भवसिद्धिक-(कृतयुग्म-कृतयुग्म)-एकेन्द्रिय-जीवों के विषय में भी (सातवां) शतक बतलाना चाहिए, (जैसा कृष्णलेश्य-भवसिद्धिक-कृतयुग्म-कृतयुग्म--एकेन्द्रिय-जीवों के विषय में बतलाया गया था)।

६३. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

(आठवां शतक)

पहला-ग्यारहवां उद्देशक

६४. इसी प्रकार कापोतलेश्य-भवसिद्धिक-(कृतयुग्म-कृतयुग्म)-एकेन्द्रिय-जीवों के विषय में भी उसी तरह ग्यारह उद्देशक संयुक्त (आठवां) शतक बतलाना चाहिए, (जैसा कृष्णलेश्य--भवसिद्धिक-कृतयुग्म-कृतयुग्म-एकेन्द्रिय-जीवों के विषय में बतलाया गया था)। इसी प्रकार ये चार शतक (पांच से आठ तक) भवसिद्धिक-(कृतयुग्म-कृतयुग्म-एकेन्द्रिय-जीवों के विषय में बतलाये हैं)। (भन्ते! क्या) चारों ही शतकों के विषय में सभी प्राण यावत् 'पहले उत्पन्न हुए थे' तक (पृच्छा)? (गौतम) यह अर्थ संगत नहीं हैं।

६५. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

नवां-बारहवां शतक

प्रत्येक के पहला-ग्यारहवां उद्देशक

६६. जैसे भवसिद्धिक-(कृतयुग्म-कृतयुग्म-एकेन्द्रिय-जीवों के) विषय में चार शतक (लेश्या--संयुक्त) बतलाये गये थे, वैसे ही अभवसिद्धिक-(कृतयुग्म-कृतयुग्म-एकेन्द्रिय-जीवों) के विषय में भी चार शतक लेश्या-संयुक्त बतलाने चाहिए। (भ. ३५।५६-६४) सभी प्राण....(यावत् उत्पन्न-पूर्व तक) उसी प्रकार (पृच्छा) बतलानी चाहिए (जैसा वहां बतलाया गया है) (भ. ३५।६४) (गौतम!) यह अर्थ संगत नहीं है। इस प्रकार में बारह एकेन्द्रिय--महायुग्म-शतक होते हैं।

६७. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

• • •

छत्तीसवां शतक

पहला द्वीन्द्रिय-महायुग्म-शतक

पहला उद्देशक

महायुग्म-द्वीन्द्रियों में उपपात-आदि-पद

१. भन्ते! कृतयुग्म-कृतयुग्म-द्वीन्द्रिय-जीव कहां से आकर उत्पन्न होते हैं...? कृतयुग्म-कृतयुग्म-द्वीन्द्रिय-जीवों का उपपात जैसा अवक्रान्ति-पद (**पण्णवणा,** ६।८६) में बतलाया गया है वैसा बतलाना चाहिए। इन जीवों का परिमाण—एक समय में ये जीव सोलह अथवा संख्येय अथवा असंख्येय उत्पन्न होते हैं। इन जीवों का अपहार (समय-समय पर अपहरण किये जाने पर (निकाले जाने पर))—जैसा उत्पल-उद्देशक (भ. ११।४) में बतलाया गया है वैसा बतलाना चाहिए। इन जीवों की अवगाहना जघन्यतः अंगुल-का-असंख्यातवां-भाग, उत्कर्षतः बारह योजन होती है। इसी प्रकार जैसा एकेन्द्रिय-महायुग्मों के विषय में पहले उद्देशक (भ. ३५।१०) में बतलाया गया है वैसा ही बतलाना चाहिए, केवल इतना अन्तर है—इन जीवों के तीन लेश्याएं होती हैं, इनमें देव उत्पन्न नहीं होते हैं। ये जीव सम्यग्-दृष्टि भी होते हैं, मिथ्या-दृष्टि भी होते हैं, सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि नहीं होते। ये जीव ज्ञानी भी होते हैं, अज्ञानी भी होते हैं। ये जीव मन-योगी नहीं होते, वचन-योगी भी होते हैं, काय-योगी भी होते हैं।

२. भन्ते! वे कृतयुग्म-कृतयुग्म-द्वीन्द्रिय-जीव काल की अपेक्षा से कितने समय तक रहते हैं?
गौतम! वे कृतयुग्म-कृतयुग्म-द्वीन्द्रिय-जीव काल की अपेक्षा से जघन्यतः एक समय, उत्कर्षतः संख्येय काल तक रहते हैं। उनकी स्थिति जघन्यतः एक समय, उत्कर्षतः बारह वर्ष की है। वे आहार नियमतः छहों दिशाओं से ग्रहण करते हैं। इन जीवों के तीन समुद्घात (वेदना, कषाय और मारणान्तिक) होते हैं, शेष उसी प्रकार बतलाना चाहिए यावत् 'अनन्त बार' तक। (भ. ३५।२३) इसी प्रकार सोलह ही युग्मों के विषय में बतलाना चाहिए।

३. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

दूसरा—ग्यारहवां उद्देशक

४. भन्ते! प्रथम समय के कृतयुग्म-कृतयुग्म-द्वीन्द्रिय-जीव कहां से आकर उत्पन्न होते हैं...? इसी प्रकार जैसा एकेन्द्रिय-महायुग्मों के विषय में प्रथम-समय- उद्देशक (भ. ३५।२२-२४) बतलाया गया था वैसा बतलाना चाहिए। यहां पर भी वे ही दस नानात्व बतलाने चाहिए जो

वहां बतलाय गये थे। ग्यारहवां नानात्व इस प्रकार है—प्रथम समय के कृतयुग्म-कृतयुग्म--द्वीन्द्रिय-जीव मन-योगी नहीं होते, वचन-योगी नहीं होते, केवल काय-योगी होते हैं। शेष जैसा द्वीन्द्रिय-जीवों का प्रथम उद्देशक (भ. ३६।१-३) बतलाया गया है वैसा ही इन जीवों के विषय में बतलाना चाहिए।

५. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

६. इसी प्रकार ये ग्यारह उद्देशक जिस प्रकार एकेन्द्रिय-महायुग्मों के विषय में बतलाये गये थे वैसे ही बतलाने चाहिए, केवल इतना अन्तर है—चौथे, आठवें और दसवें उद्देशक में इन जीवों में सम्यक्त्व और ज्ञान नहीं बतलाने चाहिए। जैसे एकेन्द्रिय-जीवों में प्रथम, तृतीय और पञ्चम उद्देशक में एक ही गमक है तथा शेष आठ उद्देशकों में एक ही गमक है, वैसे ही यहां बतलाने चाहिए।

दूसरा-बारहवां द्वीन्द्रिय-महायुग्म-शतक

(दूसरा शतक)

७. भन्ते! कृष्णलेश्य-कृतयुग्म-कृतयुग्म-द्वीन्द्रिय-जीव कहां से आकर उत्पन्न होते हैं....? इसी प्रकार बतलाना चाहिए। (भ. ३६।४) कृष्णलेश्य-कृतयुग्म-कृतयुग्म-द्वीन्द्रिय-जीवों के विषय में ग्यारह उद्देशक संयुक्त शतक उसी प्रकार बतलाना चाहिए, (जैसा भ. ३६।६ में बतलाया गया है), केवल इतना अन्तर है—इन जीवों में लेश्या एवं संस्थान-काल वैसा ही बतलाना चाहिए जैसा कृष्णलेश्य-एकेन्द्रिय-जीवों का बतलाया गया है। (भ. ३५।४४--४७)

(तीसरा शतक)

८. इसी प्रकार नीललेश्य-कृतयुग्म-कृतयुग्म-द्वीन्द्रिय-जीवों के विषय में भी (ग्यारह उद्देशक संयुक्त) शतक बतलाना चाहिए।

(चौथा शतक)

९. इसी प्रकार कापोतलेश्य-कृतयुग्म-कृतयुग्म-द्वीन्द्रिय-जीवों के विषय में भी (ग्यारह उद्देशक संयुक्त शतक बतलाना चाहिए)।

(पांचवां-आठवां शतक)

१०. भन्ते! भवसिद्धिक-कृतयुग्म-कृतयुग्म-द्वीन्द्रिय-जीव (कहां से आकर उत्पन्न होते हैं)....(पृच्छा)? इसी प्रकार भवसिद्धिक-कृतयुग्म-कृतयुग्म-द्वीन्द्रिय-जीवों के विषय में भी चार शतक बतलाने चाहिए जैसे पूर्वगमक में बतलाये गये हैं (भ. ३५।५७-६७), केवल इतना अन्तर है—क्या सभी प्राण (भूत, जीव और सत्त्व) (यावत् पहले उत्पन्न हुए थे तक पृच्छा?) (गौतम!) वह अर्थ संगत नहीं है। शेष उसी प्रकार चार औधिक शतक यहां बतलाने चाहिए।

११. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

(नवां-बारहवां शतक)

१२. जिस प्रकार भवसिद्धिक-कृतयुग्म-कृतयुग्म-द्वीन्द्रिय-जीवों के विषय में चार शतक बतलाये गये हैं (भ. ३५।६६), उसी प्रकार अभवसिद्धिक-कृतयुग्म-कृतयुग्म-द्वीन्द्रिय-जीवों के विषय में भी चार शतक बतलाने चाहिए, केवल इतना अन्तर है—इन सभी (अभव्य) जीवों में सम्यकत्व एवं ज्ञान नहीं है, शेष उसी प्रकार समझना चाहिए। इसी प्रकार ये बारह शतक द्वीन्द्रिय-महायुग्मों के विषय में होते हैं।

१३. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

• • •

सैंतीसवां शतक

पहला उद्देशक

महायुग्म-त्रीन्द्रियों में उपपात-आदि-पद

१. भन्ते! कृतयुग्म-कृतयुग्म-त्रीन्द्रिय-जीव कहां से आकर उत्पन्न होते हैं....? इसी प्रकार कृतयुग्म-कृतयुग्म-त्रीन्द्रिय-जीवों के विषय में भी बारह शतक द्वीन्द्रिय-शतक के समान बतलाने चाहिए, केवल इतना अन्तर है—इन जीवों की अवगाहना जघन्यतः अंगुल का असंख्यातवां भाग है, उत्कर्षतः तीन गव्यूत है। इन जीवों की स्थिति जघन्यतः एक समय, उत्कर्षतः उन्चास रात्री-दिन हैं, शेष उसी प्रकार समझना चाहिए। (भ. ३६।२)

२. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

• • •

अड़तीसवां शतक

पहला उद्देशक

महायुग्म-चतुरिन्द्रियों में उपपात-आदि-पद

१. कृतयुग्म-कृतयुग्म-चतुरिन्द्रिय-जीवों के विषय में भी बारह शतक बतलाने चाहिए, केवल इतना अन्तर है—इन जीवों की अवगाहना जघन्यतः अंगुल-का-असंख्यातवां-भाग है, उत्कर्षतः चार गव्यूत है। इन जीवों की स्थिति जघन्यतः एक समय, उत्कर्षतः छह महीने हैं। शेष जैसा कृतयुग्म-कृतयुग्म-द्वीन्द्रिय-जीवों के विषय में बतलाया गया है वैसा बतलाना चाहिए।

२. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

• • •

उनचालीसवां शतक

पहला उद्देशक

महायुग्म-असंज्ञी-पंचेन्द्रियों में उपपात-आदि-पद

१. भन्ते! कृतयुग्म-कृतयुग्म-असंज्ञी-पंचेन्द्रिय-जीव कहां से आकर उत्पन्न होते हैं....? जैसे कृतयुग्म-कृतयुग्म-द्वीन्द्रिय-जीवों के विषय में बारह शतक बतलाये गये वैसे ही कृतयुग्म--कृतयुग्म-असंज्ञी-पंचेन्द्रिय-जीवों के विषय में भी बारह शतक बतलाने चाहिए, केवल इतना अन्तर है—इन जीवों की अवगाहना जघन्यतः अंगुल-का-असंख्यातवां-भाग है, उत्कर्षतः हजार योजन। इन जीवों का संस्थान-काल जघन्यतः एक समय, उत्कर्षतः पृथक्त्व(दो से नव)-कोटि-पूर्व है। इन जीवों की स्थिति जघन्यतः एक समय, उत्कर्षतः कोटि-पूर्व है, शेष जैसा कृतयुग्म-कृतयुग्म-द्वीन्द्रिय-जीवों का बतलाया गया है वैसा जानना चाहिए।

२. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

• • •

चालीसवां शतक

पहला संज्ञी-पंचेन्द्रिय-महायुग्म-शतक

पहला उद्देशक

महायुग्म-संज्ञी-पंचेन्द्रियों में उपपात-आदि-पद

१. भन्ते! कृतयुग्म-कृतयुग्म-संज्ञी-पंचेन्द्रिय-जीव कहां से आकर उत्पन्न होते हैं....? इन जीवों में उत्पात चारों ही गतियों से होता है। इनमें उत्पन्न होने वाले जीव संख्येय-वर्ष-आयुष्य वाले होते हैं, असंख्येय-वर्ष-आयुष्य वाले होते हैं, पर्याप्तक होते है और अपर्याप्तक होते हैं, कहीं से भी उत्पन्न होने का प्रतिषेध नहीं है यावत् अनुत्तर-विमानों से भी आकर उत्पन्न होते हैं। इन जीवों का परिमाण, अपहार और अवगाहना जैसी कृतयुग्म--कृतयुग्म-असंज्ञी-पंचेन्द्रिय-जीवों की बतलाई गई थी वैसी बतलानी चाहिए। ये जीव वेदनीय-कर्म को छोड़कर सात कर्म-प्रकृतियों के बन्धक भी होते हैं, अबन्धक भी होते हैं, वेदनीय-कर्म के बन्धक होते हैं, अबन्धक नहीं होते। ये जीव मोहनीय-कर्म के वेदक भी होते हैं, अवेदक भी होते हैं, शेष सातों ही कर्मों के वेदक होते हैं, अवेदक नहीं होते। ये जीव सात-वेदक भी होते हैं असात-वेदक भी होते हैं। इन जीवों के मोहनीय-कर्म का उदय भी होता है, अनुदय भी होता है, शेष सातों ही कर्मों का उदय होता है, अनुदय नहीं होता। ये जीव नाम- और गोत्र-कर्म के उदीरक होते हैं, अनुदीरक नहीं होते, शेष छहों ही कर्मों के उदीरक भी होते हैं, अनुदीरक भी होते हैं। ये जीव कृष्णलेश्य भी होते हैं यावत् शुक्ललेश्य भी होते हैं। ये जीव सम्यग्-दृष्टि भी होते हैं, मिथ्या-दृष्टि भी होते हैं, सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि भी होते हैं। ये जीव ज्ञानी भी होते हैं, अज्ञानी भी होते हैं। ये जीव मन-योगी भी होते हैं, वचन-योगी भी होते हैं, काय-योगी भी होते हैं। इन जीवों में उपयोग, वर्ण (वर्ण, गंध, रस आदि) आदि, उच्छ्वासक-निःश्वासक और आहारक जैसा कृतयुग्म-कृतयुग्म-एकेन्द्रिय--जीवों में बतलाया गया है (भ. ३५।१०) वैसा बतलाना चाहिए। ये जीव विरत भी होते हैं, अविरत भी होते हैं, विरताविरत भी होते हैं। ये जीव क्रिया-सहित होते हैं, क्रिया-रहित नहीं होते।

२. भंते! वे कृतयुग्म-कृतयुग्म-संज्ञी-पंचेन्द्रिय-जीव क्या सप्तविध-बन्धक होते है? अष्टविध--बन्धक होते हैं? षड्विध-बन्धक होते हैं? एकविध-बन्धक होते हैं?

गौतम! वे जीव सप्तविध-बन्धक भी होते हैं यावत् एकविध-बन्धक भी होते हैं।

३. भन्ते! वे कृतयुग्म-कृतयुग्म-संज्ञी-पंचेन्द्रिय-जीव क्या आहार-संज्ञोपयुक्त होते हैं यावत्

परिग्रह-संज्ञोपयुक्त होते हैं? क्या नोसंज्ञोपयुक्त होते हैं?

गौतम! कृतयुग्म-कृतयुग्म-संज्ञी-पंचेन्द्रिय-जीव आहार-संज्ञोपयुक्त भी होते हैं यावत् नोसंज्ञोपयुक्त भी होते हैं। (इसी प्रकार) सभी बोलों के विषय में पृच्छा करनी चाहिए–(गौतम!) ये जीव क्रोध-कषायी भी होते हैं यावत् लोभ-कषायी भी होते हैं, अकषायी भी होते हैं। ये जीव स्त्री-वेदक भी होते हैं, पुरुष-वेदक भी होते हैं, नपुंसक-वेदक भी होते हैं, अवेदक भी होते हैं। ये जीव स्त्री-वेदक-बन्धक भी होते हैं, पुरुष-वेद-बन्धक भी होते हैं, नपुंसक-वेद-बन्धक भी होते हैं, अबन्धक भी होते हैं। ये जीव संज्ञी ही होते हैं, असंज्ञी नहीं होते। ये जीव स-इन्द्रिय ही होते हैं, अनिन्द्रिय नहीं होते। इन जीवों का संस्थान-काल जघन्यतः एक समय, उत्कर्षतः सातिरेक (किंचित् अधिक) पृथक्त्व-शत (दो सौ से नव सौ)-सागरोपम है। वे जीव आहार उसी प्रकार यावत् नियमतः छहों दिशाओं से ग्रहण करते हैं। (ये जीव त्रस-नाल में होते हैं)। इन जीवों की स्थिति जघन्यतः एक समय, उत्कर्षतः तेतीस सागरोपम की होती है। इन जीवों के पहले छह (सातवां छोड़कर) समुद्घात होते हैं (क्योंकि केवली नोसंज्ञी नोअसंज्ञी होते हैं) ये जीव मारणान्तिक-समुद्घात से समवहत होकर भी मरते हैं, असमवहत होकर भी मरते हैं। इन जीवों से उद्वर्तन (जीवों का बाहर निकलना) वैसा ही होता है जैसा उपपात बतलाया गया है (भ. ४०।१), कहीं भी प्रतिषेध नहीं है यावत् 'अनुत्तर- विमान' तक।

४. भन्ते! सभी प्राण यावत् (सब प्राण, भूत जीव और सत्त्व क्या कृतयुग्म-कृतयुग्म-संज्ञी--पंचेन्द्रिय-जीवों के रूप में पहले उत्पन्न हुए हैं?

हां, गौतम! सभी प्राण यावत् सत्त्व कृतयुग्म-कृतयुग्म-संज्ञी-पंचेन्द्रिय जीवों के रूप में) अनन्त बार तक (उत्पन्न हुए हैं)। इस प्रकार सोलह ही युग्मों के विषय में बतलाना चाहिए, यावत् 'अनन्त बार' तक, केवल इतना अन्तर है–इन जीवों का परिमाण जैसा (सभी युग्मों के) द्वीन्द्रिय-जीवों के विषय में बतलाया गया वैसा ही बतलाना चाहिए, शेष उसी प्रकार बतलाना चाहिए।

५. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

दूसरा–ग्यारहवां उद्देशक

(दूसरा उद्देशक)

६. भन्ते! प्रथम समय के कृतयुग्म-कृतयुग्म-संज्ञी-पंचेन्द्रिय-जीव कहां से आकर उत्पन्न होते हैं.....? इन जीवों का उपपात, परिमाण तथा आहार जैसा प्रथम उद्देशक (भ. ४०।३) में कृतयुग्म-कृतयुग्म-संज्ञी-पंचेन्द्रिय-जीवों के विषय में बतलाया गया वैसा बतलाना चाहिए। इन जीवों की अवगाहना, बन्ध, वेद तथा वेदना के विषय में और ये जीव उदयी और उदीरक होते हैं इस विषय में जैसा प्रथम समय के कृतयुग्म-कृतयुग्म-द्वीन्द्रिय-जीवों के विषय में बतलाया गया वैसा बतलाना चाहिए। उसी प्रकार ये जीव कृष्णलेश्य होते हैं यावत् 'शुक्ललेश्य होते हैं' तक बतलाना चाहिए। इन जीवों के शेष बोलों के विषय में जैसा प्रथम समय के कृतयुग्म-कृतयुग्म-द्वीन्द्रिय-जीवों के विषय में बतलाया गया यावत् 'अनन्त बार'

तक बतलाना चाहिए, केवल इतना अन्तर है—ये जीव स्त्री-वेदक भी होते हैं, पुरुष-वेदक भी होते हैं, नपुंसक-वेदक भी होते हैं, ये जीव संज्ञी होते हैं, असंज्ञी नहीं होते, शेष उसी प्रकार बतलाना चाहिए। इसी प्रकार सोलह ही युग्मों में इन जीवों का परिमाण आदि सभी बोल वैसे ही बतलाने चाहिए।

७. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

तीसरा–ग्यारहवां उद्देशक

८. इसी प्रकार यहां भी ग्यारह उद्देशक उसी प्रकार बतलाने चाहिए (जैसे प्रथम समय के कृतयुग्म-कृतयुग्म-द्वीन्द्रिय-जीवों के विषय में बतलाये गये थे (भ. ३६/६)), पहला, तीसरा और पांचवां उद्देशक समान गमक वाले तथा शेष आठ उद्देशक समान गमक वाले बतलाने चाहिए। चौथे, आठवें और दसवें उद्देशक में कोई विशेष नहीं बतलाना चाहिए।

९. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

दूसरा संज्ञी-पंचेन्द्रिय-महायुग्म-शतक

पहला उद्देशक

१०. भन्ते! कृष्णलेश्य-कृतयुग्म-कृतयुग्म-संज्ञी-पंचेन्द्रिय-जीव कहां से आकर उत्पन्न होते हैं.....? उसी प्रकार जैसा कृतयुग्म-कृतयुग्म-संज्ञी-पंचेन्द्रिय-जीवों के विषय में बतलाया गया है वैसा ही यहां बतलाना चाहिए, केवल इतना अन्तर है—इन जीवों के बन्ध और वेदना के विषय में—ये जीव उदयी एवं उदीरक होते हैं, ये जीव कौन-सी लेश्या वाले होते हैं, ये जीव कितने प्रकार के कर्मों के बन्धक होते हैं, ये जीव संज्ञी होते हैं (अथवा असंज्ञी होते हैं), ये जीव कौन से कषाय वाले होते हैं, ये जीव कौन-से वेद के बन्धक होते हैं—इन विषयों में जैसा कृतयुग्म-कृतयुग्म-द्वीन्द्रिय-जीवों के विषय में बतलाया गया वैसा बतलाना चाहिए। कृष्णलेश्य-कृतयुग्म-कृतयुग्म-संज्ञी-पंचेन्द्रिय-जीवों के तीनों प्रकार के वेद होते हैं, ये अवेदक नहीं होते। इन जीवों के संस्थान-काल जघन्यतः एक समय, उत्कर्षतः तेतीस सागरोपम में अन्तर्मुहूर्त्त अधिक होता है। इसी प्रकार स्थिति के विषय में भी वैसा ही बतलाना चाहिए, केवल इतना अन्तर है—स्थिति में अन्तर्मुहूर्त्त अधिक नहीं बतलाना चाहिए। शेष जैसा इन विषयों के संबंध में प्रथम उद्देशक (भ. ४०।१-५) में बतलाया गया वैसा बतलाना चाहिए यावत् 'अनन्त बार' तक। इसी प्रकार सोलह ही युग्मों के विषय में बतलाना चाहिए।

११. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

दूसरा उद्देशक

१२. भन्ते! प्रथम-समय के कृष्णलेश्य-कृतयुग्म-कृतयुग्म-संज्ञी-पंचेन्द्रिय-जीव कहां से आकर उत्पन्न होते हैं....? जैसा संज्ञी-पंचेन्द्रिय के प्रथम उद्देशक (भ. ४०।६-९) में बतलाया गया वैसा ही सम्पूर्ण से यहां बतलाना चाहिए, केवल इतना अन्तर है—

१३. भन्ते! वे जीव कृष्णलेश्य हैं?

हां, वे जीव कृष्णलेश्य हैं, शेष उसी प्रकार बतलाना चाहिए। इसी प्रकार सोलह युग्मों के विषय में बतलाना चाहिए।

१४. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

तीसरा-ग्यारहवां उद्देशक

१५. इसी प्रकार ये ग्यारह उद्देशक प्रथम-समय के कृष्णलेश्य-कृतयुग्म-कृतयुग्म-संज्ञी-पंचेन्द्रिय-जीवों के विषय में बतलाना चाहिए। पहला, तीसरा और पांचवां उद्देशक समान गमक वाले हैं, तथा शेष आठ उद्देशक समान गमक वाले हैं।

१६. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

तीसरा-चौदहवां संज्ञी-महायुग्म-शतक

(तीसरा शतक)

१७. इसी प्रकार नीललेश्य-कृतयुग्म-कृतयुग्म-संज्ञी-पंचेन्द्रिय-जीवों के विषय में भी शतक बतलाना चाहिए, केवल इतना अन्तर है—इन जीवों का संस्थान काल जघन्यतः एक समय, उत्कर्षतः दस सागरोपम में पल्योपम-का-असंख्यातवां-भाग-अधिक होता है। इसी प्रकार इन जीवों की स्थिति के विषय में भी बतलाना चाहिए। इसी प्रकार तीन उद्देशकों (पहला, तीसरा, पांचवां) के विषय में बतलाना चाहिए, शेष उसी प्रकार वक्तव्य है।

१८. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

(चौथा शतक)

१९. इसी प्रकार कापोतलेश्य-कृतयुग्म-कृतयुग्म-संज्ञी-पंचेन्द्रिय-जीवों के विषय में भी शतक बतलाना चाहिए, केवल इतना अन्तर है—इन जीवों का संस्थान-काल जघन्यतः एक समय, उत्कर्षतः तीन सागरोपम में पल्योपम-का-असंख्यातवां-भाग-अधिक होता है। इसी प्रकार इन जीवों की स्थिति के विषय में भी बतलाना चाहिए। इसी प्रकार तीन उद्देशकों (पहला, तीसरा, पांचवा) के विषय में भी बतलाना चाहिए, शेष उसी प्रकार वक्तव्य है।

२०. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

(पांचवां शतक)

२१. इसी प्रकार तेजोलेश्य-कृतयुग्म-कृतयुग्म-संज्ञी-पंचेन्द्रिय-जीवों के विषय में भी शतक बतलाना चाहिए, केवल इतना अन्तर है—इन जीवों का संस्थान-काल जघन्यतः एक समय, उत्कर्षतः दो सागरोपम में पल्योपम-का-असंख्यातवां-भाग-अधिक होता है। इसी प्रकार इन जीवों की स्थिति के विषय में भी बतलाना चाहिए, केवल इतना अन्तर है—ये जीव नोसंज्ञोपयुक्त भी होते हैं। इसी प्रकार तीन उद्देशकों (पहला, तीसरा, पांचवां) के विषय में भी बतलाना चाहिए, शेष उसी प्रकार वक्तव्य है।

२२. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

(छट्ठा शतक)

१७. जैसा तेजोलेश्य-कृतयुग्म-कृतयुग्म-संज्ञी-पंचेन्द्रिय-जीवों के विषय में शतक बतलाया गया वैसा ही पद्मलेश्य-कृतयुग्म-कृतयुग्म-संज्ञी-पंचेन्द्रिय-जीवों के विषय में भी शतक बतलाना चाहिए, केवल इतना अन्तर है—इन जीवों के संस्थान-काल जघन्यतः एक समय, उत्कर्षतः दस-सागरोपम-में-अन्तर्मुहूर्त्त-अधिक होता है। इसी प्रकार इन जीवों की स्थिति भी बतलानी चाहिए, केवल इतना अन्तर है—यहां अर्न्तुहूर्त्त अधिक नहीं बतलाना चाहिए, शेष उसी प्रकार वक्तव्य है। इसी प्रकार इन पांचों शतकों में जैसा कृष्णलेश्य-शतक में गमक बतलाया गया वैसा ही जानना चाहिए यावत् 'अनन्त बार' तक।

२४. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

(सातवां शतक)

२५. शुक्ललेश्य-कृतयुग्म-कृतयुग्म-संज्ञी-पंचेन्द्रिय-जीवों के विषय में शतक औधिक शतक (भ. ४०।१-५) में बतलाया गया है वैसा बतलाना चाहिए, केवल इतना अन्तर है—इन जीवों के संस्थान-काल और स्थिति जैसा कृष्णलेश्य-कृतयुग्म-कृतयुग्म-संज्ञी-पंचेन्द्रिय-
-जीव—विषयक-शतक में बतलाया गया वैसा बतलाना चाहिए, शेष उसी प्रकार वक्तव्य है, यावत् 'अनन्त बार' तक।

२६. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

(आठवां शतक)

२७. भन्ते! भवसिद्धिक-कृतयुग्म-कृतयुग्म-संज्ञी-पंचेन्द्रिय-जीव कहां से आकर उत्पन्न होते हैं.....? जैसा कृतयुग्म-कृतयुग्म-संज्ञी-पंचेन्द्रिय-जीव-विषयक-प्रथम (अन्तर)-शतक में बतलाया गया वैसा भवसिद्धिक-कृतयुग्म-कृतयुग्म-संज्ञी-पंचेन्द्रिय-जीव—विषयक-आलाप में बतलाना चाहिए, केवल इतना अन्तर है—

२८. सभी प्राण (भूत, जीव और सत्त्व क्या कृतयुग्म-कृतयुग्म-संज्ञी-पंचेन्द्रिय-जीवों के रूप में पहले उत्पन्न हुए हैं)?

गौतम! वह अर्थ संगत नहीं है, शेष उसी प्रकार वक्तव्य है।

२९. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

(नवां शतक)

३०.भन्ते! कृष्णलेश्य-भवसिद्धिक-कृतयुग्म-कृतयुग्म-संज्ञी-पंचेन्द्रिय-जीव कहां से आकर उत्पन्न होते हैं....? इसी प्रकार इस अभिलाप के द्वारा जैसा औधिक कृष्णलेश्य-कृतयुग्म-
-कृतयुग्म-संज्ञी-पंचेन्द्रिय-जीव-विषयक-शतक बतलाया गया वैसा बतलाना चाहिए।

३१. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

(दसवां शतक)

३२. भन्ते! इसी प्रकार नीललेश्य-भवसिद्धिक-कृतयुग्म-कृतयुग्म-संज्ञी-पंचेन्द्रिय-जीव-
-विषयक-शतक भी बतलाना चाहिए।

३३. भन्ते! वह ऐसा ही ह। भन्ते! वह ऐसा ही है।

(ग्यारहवां–चौदहवां शतक)

३४. इसी प्रकार जैसे कृतयुग्म-कृतयुग्म-संज्ञी-पंचेन्द्रिय-जीव-विषयक सात औधिक-शतक बतलाये गए, वैसे ही भवसिद्धिक-कृतयुग्म-कृतयुग्म-संज्ञी-पंचेन्द्रिय-जीव-विषयक सात शतक बतलाने चाहिए, केवल इतना अन्तर है—सातों ही शतकों में सभी प्राण यावत् (पूर्व उत्पन्न हुवे हैं?) 'यह अर्थ संगत नहीं है' तक बतलाना चाहिए, शेष उसी प्रकार बतलाना चाहिए।

३५. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

पन्द्रहवां–इक्कीसवां संज्ञी-महायुग्म-शतक

पन्द्रहवां शतक

पहला उद्देशक

३६. भन्ते! अभवसिद्धिक-कृतयुग्म-कृतयुग्म-संज्ञी-पंचेन्द्रिय-जीव कहां से आकर उत्पन्न होते हैं....? इन जीवों का उपपात वैसे ही बतलाना चाहिए (भ. ४०।२७) केवल अनुत्तर--विमान को छोड़कर। इन जीवों का परिमाण, अपहार, उच्चत्व, बन्ध, वेद, वेदना, उदय और उदीरणा जैसे कृष्णलेश्य-कृतयुग्म-कृतयुग्म-संज्ञी-पंचेन्द्रिय-जीव-विषयक-शतक में बतलाया गया, वैसे बतलाना चहिए। ये जीव कृष्णलेश्य भी होते हैं यावत् शुक्ललेश्य भी होते हैं। ये जीव सम्यग्-दृष्टि नहीं होते, मिथ्या-दृष्टि ही होते हैं, सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि नहीं होते हैं। ये जीव ज्ञानी नहीं होते, अज्ञानी ही होते हैं। इसी प्रकार जैसे कृष्णलेश्य-कृतयुग्म-कृतयुग्म-संज्ञी-पंचेन्द्रिय-जीव-विषयक-शतक (भ. ४०।१०) में बतलाये गये वैसे बतलाने चाहिए, केवल इतना अन्तर है—ये जीव विरत नहीं होते, अविरत होते हैं, विरताविरत नहीं होते। इन जीवों का संस्थान-काल और स्थिति जैसी औधिक उद्देशक (भ. ४०।३) में बतलाई गई है वैसी बतलानी चाहिए। इन जीवों में पहले पांच समुद्घात (आहारक- और केवलि-समुद्घात छोड़कर) होते हैं। इन जीवों की उद्वर्तना उसी प्रकार बतलानी चाहिए केवल अनुत्तर-विमान के छोड़कर (भन्ते!) क्या सभी प्राण (जीव, भूत और सत्त्व इनमें पूर्व उत्पन्न हुए हैं)? (गौतम!) यह अर्थ संगत नहीं है, शेष जैसे कृष्णलेश्य-कृतयुग्म-संज्ञी-पंचेन्द्रिय-जीव-विषयक-शतक (भ. ४०।४) में बतलाया गया है वैसा बतलाना चाहिए यावत् 'अनन्त बार' तक। इसी प्रकर सोलह ही युग्मों के विषय में बतलाना चाहिए।

३७. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

दूसरा उद्देशक

३८. भन्ते! प्रथम समय के अभवसिद्धिक-कृतयुग्म-कृतयुग्म-संज्ञी-पंचेन्द्रिय-जीव कहां से अकर उत्पन्न होते हैं...?

जैसे कृतयुग्म-कृतयुग्म-संज्ञी के प्रथम-समय-उद्देशक (भ. ४०।६) में बतलाया गया है वैसा ही बतलाना चाहिए, केवल इतना अन्तर है—इन जीवों के सर्वत्र सम्यक्त्व, सम्यग्-मिथ्यात्व

और ज्ञान नहीं होते, शेष उसी प्रकार बतलाना चाहिए।

३९. भन्ते! वे ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

तीसरा—ग्यारहवां उद्देशक

४०. इसी प्रकार यहां भी ग्यारह उद्देशक करने चाहिए, पहला, तीसरा और पांचवां उद्देशक समान गमक वाले हैं, शेष आठों ही उद्देशक समान गमक वाले हैं।

४१. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

(सोलहवां शतक)

४२. भन्ते! कृष्णलेश्य-अभवसिद्धिक-कृतयुग्म-कृतयुग्म-संज्ञी-पंचेन्द्रिय-जीव कहां से आकर उत्पन्न होते हैं....? जैसा इन जीवों का (अभवसिद्धिक-कृतयुग्म-कृतयुग्म-संज्ञी-पंचेन्द्रिय)--जीवों का औधिक-शतक (भ. ४०।३६) में बतलाया गया है वैसा कृष्णलेश्य--अभवसिद्धिक-कृतयुग्म-कृतयुग्म-संज्ञी-पंचेन्द्रिय-जीव-विषयक-शतक भी बतलाना चाहिए, केवल इतना अन्तर है—

४३. भन्ते! वे जीव क्या कृष्णलेश्य हैं?

हां, गौतम! वे जीव कृष्णलेश्य हैं। इन जीवों की स्थिति और संस्थान-काल जैसे कृष्णलेश्य-कृतयुग्म-कृतयुग्म संज्ञीपंचेन्द्रिय-जीव-विषयक-शतक में बतलाया गया है वैसे ही बतलाना चाहिए, शेष उसी प्रकार वक्तव्य है।

४४. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

(सत्रहवां—इक्कीसवां शतक)

१. इसी प्रकार छहों ही लेश्यावाले अभवसिद्धिक-कृतयुग्म-कृतयुग्म-संज्ञी-पंचेन्द्रिय-जीव--विषयक छह शतक करने चाहिए, जैसा कृष्णलेश्य-अभवसिद्धिक-कृतयुग्म-कृतयुग्म-संज्ञी-पंचेन्द्रिय-जीव-विषयक-शतक (भ. ४०।४२-४३) में बतलाया गया, केवल इतना अन्तर है—इन जीवों का संस्थान-काल और स्थिति जैसी (अभवसिद्धिक-कृतयुग्म-कृतयुग्म-संज्ञी--पंचेन्द्रिय-जीव-विषयक) औधिक शतक (भ. ४०।३६) में बतलायी गयी वैसी ही बतलानी चाहिए, केवल इतना अन्तर है—शुक्ललेश्य-अभवसिद्धिक-कृतयुग्म-कृतयुग्म--संज्ञी-पंचेन्द्रिय-जीवों का संस्थान-काल उत्कर्षतः इकतीस सागरोपम से अन्तर्मुहूर्त्त अधिक होता है। इन जीवों की स्थिति इसी प्रकार बतलानी चाहिए, केवल इतना अन्तर है—जघन्य स्थिति में अन्तर्मुहूर्त्त नहीं बतलाना चाहिए, उसी प्रकार सर्वत्र सम्यक्त्व और ज्ञान नहीं होता। इन जीवों में विरत, विरताविरत और अनुत्तर-विमान में उत्पत्ति—ये तीन नहीं होते। (भन्ते!) क्या सभी प्राण (भूत, जीव और सत्त्व इनमें पूर्व में उत्पन्न हुए थे)? (गौतम!) यह अर्थ संगत नहीं है।

४६. भन्ते! वे ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

४७. इसी प्रकार ये अभवसिद्धिक-महायुग्म-जीव-विषयक सात शतक होते हैं।

४८. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

४९. इसी प्रकार ये संज्ञी-पंचेन्द्रिय-महायुग्म-जीव-विषयक इक्कीस शतक हैं। ये सभी महायुग्म-जीव-विषयक इक्यासी शतक हैं। (एकेन्द्रिय-महायुग्म के बारह, द्वीन्द्रिय-महायुग्म के बारह, त्रीन्द्रिय-महायुग्म के बारह, चतुरिन्द्रिय-महायुग्म के बारह, असंज्ञी-पंचेन्द्रिय--महायुग्म के बारह, संज्ञी-पंचेन्द्रिय-महायुग्म के इक्कीस अन्तर-शतक होते हैं।) इस प्रकार सभी महायुग्मों के इक्यासी अन्तर-शतक हैं।

● ● ●

इकतालीसवां शतक

पहला उद्देशक

राशियुग्म-नैरयिक-आदि में उपपात-आदि-पद

१. भन्ते! राशियुग्म कितने प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?

गौतम! राशियुग्म चार प्रकार के प्रज्ञप्त हैं, जैसे—कृतयुग्म यावत् कल्योज (कृतयुग्म, त्र्योज, द्वापरयुग्म, कल्योज)। (भ. ३१।१)

२. भन्ते! यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है—राशियुग्म चार प्रज्ञप्त हैं, जैसे— कृतयुग्म यावत् कल्योज?

गौतम! जो राशि चार (संख्या) द्वारा अपहृत होने पर चार शेष रहती है उसे राशियुग्म--कृतयुग्म कहते हैं (जैसे—चार, आठ, बारह आदि संख्यावाली राशि राशियुग्म-कृतयुग्म है)। इसी प्रकार (भ. ३१।२) यावत् जो राशि चार (संख्या) द्वारा अपहृत होने पर एक शेष रहती है उसे राशियुग्म-कल्योज कहा जाता है। यह इस अपेक्षा से यावत् कल्योज।

३. भन्ते! राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीव कहां से आकर उपपन्न होते हैं....? इन जीवों का उपपात जैसे **पण्णवणा** के छट्ठे पद में अवक्रान्ति (सू. ७०-८०) में बतलाया गया है वैसे वक्तव्य है।

४. भन्ते! ये जीव एक समय में कितने उपपन्न होते हैं?

गौतम! राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीव एक समय में चार, आठ, बारह, सोलह, संख्येय अथवा असंख्येय उपपन्न होते हैं।

५. भन्ते! ये जीव क्या अन्तर-सहित उपपन्न होते हैं? या अन्तर-रहित उपपन्न होते हैं?

गौतम! राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीव अन्तर-सहित भी उपपन्न होते हैं, अन्तर-रहित भी उपपन्न होते हैं। अन्तर-सहित उपपन्न होने पर जघन्यतः एक समय के अन्तर से उपपन्न होते हैं, उत्कर्षतः असंख्येय समय के अन्तर से उपपन्न होते हैं। अन्तर-रहित उपपन्न होने पर जघन्यतः दो समय तक अन्तर-रहित उपपन्न होते हैं, उत्कर्षतः असंख्येय समय तक प्रतिसयम, अविरहित और अन्तर-रहित उपपन्न होते हैं।

६. भन्ते! ये जीव जिस समय कृतयुग्म होते हैं, क्या उस समय त्र्योज होते हैं? जिस समय त्र्योज होते हैं, क्या उस समय कृतयुग्म होते हैं?

(गौतम!) यह अर्थ संगत नहीं है।

७. (भन्ते!) वे जीव जिस समय कृतयुग्म होते हैं, क्या उस समय द्वापरयुग्म होते हैं? जिस समय द्वापरयुग्म होते हैं, क्या उस समय कृतयुग्म होते हैं?

(गौतम!) यह अर्थ संगत नहीं है।

८. (भन्ते!) वे जीव जिस समय कृतयुग्म होते हैं, क्या उस समय कल्योज होते हैं? जिस समय कल्योज होते हैं, क्या उस समय कृतयुग्म होते हैं?

(गौतम!) यह अर्थ संगत नहीं है।

९. भन्ते! वे जीव कैसे उपपन्न होते हैं?

गौतम! जिस प्रकार कोई प्लवक (कूदनेवाला) कूदता हुआ, इस प्रकार जैसा उपपात-शतक (भ. ३१।५) में बतलाया गया है यावत् (इस प्रकार अध्यवसाय का निर्वर्तन करके कूदने की क्रिया के उपाय से, इसी प्रकार जैसे २५वें शतक में आठवें उद्देशक (सू. ६२०) में नैरयिक-जीवों की वक्तव्यता है वैसे ही यहां पर भी बतलानी चाहिए, यावत् 'अपने प्रयोग से उपपन्न होते हैं) पर प्रयोग से उपपन्न नहीं होते' तक।

१०. भन्ते! ये जीव क्या आत्म-यश (आत्म-संयम) से उपपन्न होते हैं? अथवा आत्म-अयश (आत्म-असंयम) से उपपन्न होते हैं?

गौतम! वे जीव आत्म-यश से उपपन्न नहीं होते, आत्म-अयश से उपपन्न होते हैं।

११. यदि ये जीव आत्म-अयश से उपपन्न होते हैं—तो क्या आत्म-यश का जीवन जीते हैं? अथवा आत्म-अयश का जीवन जीते हैं?

गौतम! वे आत्म-यश का जीवन नहीं जीते, आत्म-अयश का जीवन जीते हैं।

१२. यदि आत्म-अयश का जीवन जीते हैं तो क्या ये जीव सलेश्य हैं? अथवा अलेश्य हैं?

गौतम! ये जीव सलेश्य हैं, अलेश्य नहीं हैं।

१३. यदि ये जीव सलेश्य हैं तो क्या क्रिया-सहित हैं? अथवा क्रिया-रहित हैं?

गौतम! वे जीव क्रिया-सहित हैं, क्रिया-रहित नहीं हैं।

१४. यदि ये जीव क्रिया-सहित हैं तो क्या उसी भव में सिद्ध होते हैं यावत् सभी दुःखों का अन्त करते हैं?

(गौतम!) यह अर्थ संगत नहीं हैं।

१५. भन्ते! राशियुग्म-कृतयुग्म-असुरकुमार-जीव कहां से आकर उपपन्न होते हैं? जैसे राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीवों के विषय में बतलाया गया वैसे ही सम्पूर्ण रूप में बतलाया चाहिए। इसी प्रकार यावत् 'राशियुग्म-कृतयुग्म-पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों' तक बतलाना चाहिए, केवल इतना अन्तर है—राशियुग्म-कृतयुग्म-वनस्पतिकायिक-जीव यावत् असंख्येय भी उत्पन्न होते हैं, अनन्त भी उत्पन्न होते हैं, शेष उसी प्रकार बतलाना चाहिए। राशियुग्म--कृतयुग्म-मनुष्यों के विषय में भी उसी प्रकार बतलाना चाहिए यावत् आत्म-यश

से उत्पन्न नहीं होत, आत्म-अयश से उत्पन्न होते हैं।

१६. यदि ये जीव आत्म-अयश से उत्पन्न होते हैं–तो क्या आत्म-यश का जीवन जीते हैं? अथवा आत्म-अयश का जीवन जीते हैं।

गौतम! वे आत्म-यश का जीवन भी जीते हैं, आत्म-अयश का जीवन भी जीते हैं।

१७. यदि ये जीव आत्म-यश का जीवन जीते हैं, तो क्या वे सलेश्य हैं? अथवा अलेश्य हैं?

गौतम! वे जीव सलेश्य भी है, अलेश्य भी हैं।

१८. यदि ये जीव हैं तो क्या क्रिया-सहित हैं? अथवा क्रिया-रहित हैं?

गौतम! वे जीव क्रिया-सहित नहीं हैं, क्रिया-रहित हैं।

१९. यदि ये जीव क्रिया-रहित है तो क्या उसी भव में सिद्ध होते हैं? यावत् सभी दुःखों का अन्त करते हैं?

हां, उसी भव में सिद्ध होते हैं यावत् सभी दुःखों का अन्त करते हैं।

२०. यदि वे जीव सलेश्य हैं तो क्या क्रिया-सहित हैं? अथवा क्रिया-रहित है।

गौतम! वे जीव क्रिया-सहित हैं, क्रिया-रहित नहीं हैं।

२१. यदि ये जीव क्रिया-सहित हैं तो क्या उसी भव में सिद्ध होते हैं? यावत् सभी दुःखों का अन्त करते हैं?

गौतम! उनमें से कुछेक जीव उसी भव में सिद्ध होते हैं यावत् सभी दुःखों का अन्त करते हैं, कुछेक जीव उसी भव में सिद्ध नहीं होते हैं यावत् सभी दुःखों का अन्त नहीं करते।

२२. यदि ये जीव आत्म-अयश का जीवन जीते हैं तो क्या सलेश्य हैं? अथवा अलेश्य हैं?

गौतम! वे जीव सलेश्य हैं, अलेश्य नहीं हैं।

२३. यदि ये जीव सलेश्य हैं तो क्या क्रिया-सहित हैं? अथवा क्रिया-रहित हैं?

गौतम! वे जीव क्रिया-सहित हैं, क्रिया-रहित नहीं हैं।

२४. यदि ये जीव क्रिया-सहित हैं तो क्या उसी भव में सिद्ध होते हैं यावत् सभी दुःखों का अन्त करते हैं?

यह अर्थ संगत नहीं है। राशियुग्म-कृतयुग्म-वानमन्तर, -ज्यौतिषिक और- वैमानिक-देवों के विषय में वैसा ही बतलाना चाहिए जैसा राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीवों के विषय में बतलाया गया था। (भ. ४१।३-१४)

२५. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

दूसरा उद्देशक

२६. भन्ते! राशियुग्म-त्र्योज-नैरयिक-जीव कहां से आकर उपपन्न होते हैं? उसी प्रकार पूरा उद्देशक बतलाना चाहिए, केवल इतना अन्तर है–इन जीवों का परिमाण तीन, सात, ग्यारह, पन्द्रह, संख्येय अथवा असंख्येय होता है। इन जीवों के अन्तर-सहित उपपन्न होने के विषय में वैसा ही बतलाना चाहिए जेसा प्रथम उद्देशक (भ. ४१।५) में बतलाया गया है।

२७. भन्ते! वे जीव जिस समय में त्र्योज होते हैं, क्या उस समय में वे कृतयुग्म होते हैं? जिस समय में वे कृतयुग्म होते हैं, क्या उस समय में वे त्र्योज होते हैं?

(गौतम!) यह अर्थ संगत नहीं है।

२८. (भन्ते! वे जीव क्या) जिस समय में त्र्योज होते हैं उस समय द्वापरयुग्म होते हैं? जिस समय द्वापरयुग्म होते हैं उस समय क्या वे त्र्योज होते हैं?

यह अर्थ संगत नहीं है। इसी प्रकार राशियुग्म-कल्योज-नैरयिक-जीवों के विषय में भी बतलाना चाहिए, शेष उसी प्रकार बतलाना चाहिए यावत् 'वैमानिक-देवों' तक, केवल इतना अन्तर है—इन जीवों का उपपात सभी के विषय में जैसे **पण्णवणा** के छट्ठे पद में अवक्रान्ति (सू. ७०-९८) में बतलाया गया है वैसे वक्तव्य हैं।

२९. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

तीसरा उद्देशक

३०. भन्ते! राशियुग्म-द्वापरयुग्म-नैरयिक-जीव कहां से आकर उपपन्न होते हैं? इसी प्रकार पूरा उद्देशक बतलाना चाहिए, केवल इतना अन्तर है—इन जीवों का परिमाण दो अथवा छह अथवा दस अथव संख्येय अथवा असंख्येय होता है, इन जीवों का संवेध वैसा ही बतलाना चाहिए। (भ. ३५।११)

३१. भन्ते! वे जीव जिस समय में द्वापरयुग्म होते हैं तो क्या उस समय में वे कृतयुग्म होते हैं? जिस समय में कृतयुग्म होते हैं तो क्या उस समय में वे द्वापरयुग्म होते हैं?

यह अर्थ संगत नहीं हैं। इसी प्रकार राशियुग्म-त्र्योज-नैरयिक-जीवों के विषय में भी बतलाना चाहिए, इसी प्रकर राशियुग्म-कल्योज-नैरयिक-जीवों के विषय में भी बतलना चाहिए, शेष जैसा प्रथम उद्देशक में बतलाया गया है वैसा यावत् वैमानिक-देवों तक बतलाना चाहिए।

३२. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वे ऐसा ही है।

चौथा उद्देशक

३३. भन्ते! राशियुग्म-कल्योज-नैरयिक-जीव कहां से आकर उपपन्न होते हैं....?

इसी प्रकार पूरा उद्देशक बतलाना चाहिए, केवल इतना अन्तर है—इन जीवों का परिमाण एक अथवा पांच अथवा नव अथवा तेरह अथवा संख्येय अथवा असंख्येय होता है, इन जीवों का संवेध वैसा ही बतलाना चाहिए। (भ. ३५।११)

३४. भन्ते! वे जीव जिस समय में कल्योज होते हैं, तो क्या उस समय वे कृतयुग्म होते हैं? जिस समय में कृतयुग्म होते हैं तो क्या उस समय में वे कल्योज होते हैं?

यह अर्थ संगत नहीं है। इसी प्रकार राशियुग्म-त्र्योज-नैरयिक-जीवों के विषय में भी बतलाना चाहिए, इसी प्रकार राशियुग्म-द्वापरयुग्म-नैरयिक-जीवों के विषय में भी बतलाना चाहिए, शेष जैसा प्रथम उद्देशक में बतलाया गया है वैसा यावत् 'वैमानिक-देवों' तक बतलाना चाहिए।

३५. भन्त! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

पांचवां–अट्ठाईसवां उद्देशक

(पांचवा उद्देशक)

३६. भन्ते! कृष्णलेश्य-राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीव कहां से आकर उपपन्न होते हैं...? इन जीवों का उपपात वैसा ही बतलाना चाहिए जैसा धूमप्रभा में उपपन्न जीवों के विषय में बतलाया गया, शेष जैसा प्रथम उद्देशक में बतलाया गया वैसा बतलाना चाहिए। कृष्णलेश्य-राशियुग्म-कृतयुग्म-असुरकुमार-जीवों के विषय में वैसा ही बतलाना चाहिए, इसी प्रकार यावत् कृष्णलेश्य-राशियुग्म-कृतयुग्म-वानमन्तर-देवों के विषय में बतलाना चाहिए। कृष्णलेश्य-राशियुग्म-कृतयुग्म-मनुष्यों के विषय में भी वैसा ही बतलाना चाहिए जैसा कृष्णलेश्य-राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीवों के विषय में बतलाया गया (भ. ४१।११)। वे जीव आत्म-अयश का जीवन जीते हैं। उन जीवों के विषय में ऐसा नहीं बतलाना चाहिए कि ये जीव लेश्या-रहित, क्रिया-रहित, उसी भव में सिद्ध होते हैं, शेष जैसा प्रथम उद्देशक में बतलाया गया है वैसा बतलाना चाहिए।

३७. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

(छठा उद्देशक)

३८. कृष्णलेश्य-राशियुग्म-त्र्योज-नैरयिक-जीवों के विषय में भी इसी प्रकार पूरा उद्देशक बतलाना चाहिए।

३९. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

(सातवां उद्देशक)

४०. भन्ते! कृष्णलेश्य-राशियुग्म-द्वापरयुग्म-नैरयिक-जीवों के विषय में इसी प्रकार पूरा उद्देशक बतलाना चाहिए।

४१. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

(आठवां उद्देशक)

४२. कृष्णलेश्य-राशियुग्म-कल्योज-नैरयिक-जीवों के विषय में भी इसी प्रकार पूरा उद्देशक बतलाना चाहिए। इन जीवों का परिमाण और संबंध जैसा औधिक-उद्देशकों में बतलाया गया है वैसा बतलाना चाहिए।

४३. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

(नवां–बारहवां उद्देशक)

४४. जैसे कृष्णलेश्य-जीवों के विषय में राशियुग्म-कृतयुग्म, राशियुग्म-त्र्योज, राशियुग्म-द्वापरयुग्म, राशियुग्म-कल्योज के चार उद्देशक बतलाये गये वैसे ही नीललेश्य-जीवों के विषय में इन्हीं चार उद्देशकों को सम्पूर्ण रूप से बतलाना चाहिए, केवल इतना अन्तर है–नीललेश्य-राशियुग्म-कृतयुग्म-, राशियुग्म-त्र्योज-, राशियुग्म-द्वापरयुग्म-, राशियुग्म-कल्योज)-नैरयिक जीवों का उपपात जैसा बालुकाप्रभा के नैरयिक जीवों का बतलाया गया है वैसा बतलाना चाहिए, शेष उसी प्रकार वक्तव्य है।

४५. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

(तेरहवां–सोलवां उद्देशक)

४६. इसी प्रकार कापोतलेश्य-जीवों के विषय में भी राशियुग्म-कृतयुग्म, राशियुग्म-त्र्योज, राशियुग्म-द्वापरयुग्म, राशियुग्म-कल्योज के चार उद्देशक बतलाने चाहिए, केवल इतना अन्तर है–(कापोतलेश्य-राशियुग्म-कृतयुग्म-, राशियुग्म-त्र्योज-, राशियुग्म-द्वापरयुग्म-, राशियुग्म--कल्योज)-नैरयिक-जीवों का उपपात जैसा रत्नप्रभा के नैरयिक-जीवों का बतलाया गया है वैसा बतलाना चाहिए, शेष उसी प्रकार वक्तव्य है।

४७. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

(सत्रहवां–बीसवां उद्देशक)

४८. भन्ते! तेजोलेश्य-राशियुग्म-कृतयुग्म-असुरकुमार-देवों के जीव कहां से आकर उपपन्न होते हैं.....? (ये सारे विषय) उसी प्रकार बतलाने चाहिए, (जैसे कापोतलेश्य-राशियुग्म--कृतयुग्म-नैरयिक-जीवों के विषय में बतलाये गये हैं) केवल इतना अन्तर है–जिन जीवों में तेजोलेश्या प्राप्त होती है उन जीवों के विषय में बतलाना चाहिए। इसी प्रकार जैसे कृष्णलेश्य-जीवों के विषय में राशियुग्म-कृतयुग्म, राशियुग्म-त्र्योज, राशियुग्म-द्वापरयुग्म, राशियुग्म-कल्योज– ये चार उद्देशक बतलाये गये वैसे ही चार उद्देशक तेजोलेश्य-जीवों के विषय में बतलाने चाहिए।

४९. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

(इक्कीसवां–चौवीसवां उद्देशक)

५०. इसी प्रकार पद्मलेश्य-जीवों के विषय में भी राशियुग्म-कृतयुग्म, राशियुग्म त्र्योज, राशियुग्म-द्वापरयुग्म, राशियुग्म-कल्योज के चार उद्देशक बतलाने चाहिए। पंचेन्द्रिय--तिर्यग्योनिक-जीवों, मनुष्यों और वैमानिक-देवों–इन तीन (दण्डक) के जीवों में पद्मलेश्या बताई गई है, शेष दण्डक के जीवों में पद्मलेश्या नहीं हैं।

५१. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

(पच्चीसवां–अट्ठाइसवां उद्देशक)

५२. जिस प्रकार पद्मलेश्य-जीवों के विषय में राशियुग्म-कृतयुग्म, राशियुग्म-त्र्योज, राशियुग्म द्वापरयुग्म, राशियुग्म-कल्योज–ये चार उद्देशक बतलाये गये वैसे ही शुक्ललेश्य-जीवों के विषय में बतलाने चाहिए, केवल इतना अन्तर है–मनुष्यों का गमक जैसा औघिक-उद्देशकों में बतलाया गया है वैसा बतलाना चाहिए, शेष उसी प्रकार वक्तव्य है। इसी प्रकार छह लेश्या वाले जीवों में ये चौबीस उद्देशक बतलाये गये तथा चार औघिक-उद्देशक बतलाये गये, वे सब अट्ठाईस उद्देशक होते हैं।

५३. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

उनतीसवां–छप्पनवां उद्देशक

(उणतीसवां–बत्तीसवां उद्देशक)

५४. भन्ते! भवसिद्धिक-राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीव कहां से आकर उपपन्न होते हैं? जैसे पहले चार औधिक-उद्देशक बतलाये गये (भ. ४१।२६-३५) वैसे ही सम्पूर्ण रूप से बतलाने चाहिए। ये चार उद्देशक होते हैं।

५५. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

(तेतीसवां–छत्तीसवां उद्देशक)

५६. भन्ते! कृष्णलेश्य-भवसिद्धिक-राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीव कहां से आकर उपपन्न होते हैं? जैसे कृष्णलेश्य-राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीवों के विषय में चार उद्देशक होते हैं वैसे इन कृष्णलेश्य-भवसिद्धिक-राशियुग्म- कृतयुग्म-नैरयिक-जीवों के विषय में भी चार उद्देशक करने चाहिए।

(सैंतीसवां–चवालीसवां उद्देशक)

५७. इसी प्रकार नीललेश्य-भवसिद्धिक-राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीवों के विषय में भी चार उद्देशक करने चाहिए।

५८. इसी प्रकार कापोतलेश्य-भवसिद्धिक-राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीवों के विषय में भी चार उद्देशक करने चाहिए।

(पैंतालीसवां–बावनवां उद्देशक)

५९. तेजोलेश्य-भवसिद्धिक-राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीवों के विषय में भी चार उद्देशक औधिक-उद्देशकों के समान बतलाने चाहिए।

६०. पद्मलेश्य-भवसिद्धिक-राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीवों के भी चार उद्देशक करने चाहिए।

(तिरेपनवां–छप्पनवां उद्देशक)

६१. शुक्ललेश्य-भवसिद्धिक-राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीवों के विषय में भी चार उद्देशक औधिक-उद्देशकों के समान बतलाने चाहिए। इसी प्रकार ये भवसिद्धिक-राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीवों के विषय में अट्ठाईस उद्देशक (भ. ४१/५४-६१) होते हैं।

६२. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

सत्तावनवां–चौरासीवां उद्देशक

(सत्तावनवां–साठवां उद्देशक)

६३. भन्ते! अभवसिद्धिक-राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीव कहां से आकर उपपन्न होते हैं.....? जैसा प्रथम उद्देशक (भ. ४१।३) में बतलाया गया है वैसा बतलाना चाहिए, केवल इतना अन्तर है—अभवसिद्धिक-राशियुग्म-कृतयुग्म-मनुष्यों और -नैरयिक-जीवों के विषय में समान रूप से बतलाना चाहिए, शेष उसी प्रकार वक्तव्य है।

६४. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

६५. इसी प्रकार चार युग्मों के विषय में चार उद्देशक बतलाने चाहिए।

(इकसठवां–चौसठवां उद्देशक)

६६. भन्ते! कृष्णलेश्य-अभवसिद्धिक-राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीव कहां से आकर उपपन्न होते हैं....? इसी प्रकार चारों ही उद्देशक बतलाने चाहिए।

(पैंसठवां–बहत्तरवां उद्देशक)

६७. इसी प्रकार नीललेश्य-अभवसिद्धिक-राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीवों के चार उद्देशक बतलाने चाहिए।

६८. कापोतलेश्य-अभवसिद्धिक-राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीवों के भी चार उद्देशक बतलाने चाहिए।

(तिहत्तरवां–अस्सीवां उद्देशक)

६९. तेजोलेश्य-अभवसिद्धिक-राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीवों के भी चार उद्देशक बतलाने चाहिए।

७०. पद्मलेश्य-अभवसिद्धिक-राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीवों के भी चार उद्देशक बतलाने चाहिए।

(इक्कासीवां–चौरासीवां उद्देशक)

७१. शुक्ललेश्य-अभवसिद्धिक-राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीवों के विषय में भी चार उद्देशक बतलाने चाहिए। इसी प्रकार ये अट्ठाईस उद्देशक अभवसिद्धिक-राशियुग्म-कृतयुग्म--मनुष्यों के विषय में अभवसिद्धिक-राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-गमक की तरह बतलाने चाहिए।

७२. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

पच्चासीवां–एकसौ बारहवां उद्देशक

७३. भन्ते! सम्यग्-दृष्टि-राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीव कहां से आकर उपपन्न होते हैं....? इसी प्रकार जैसा प्रथम उद्देशक (भ. ४१।३) बतलाया गया वैसा बतलाना चाहिए। इसी प्रकार चारों ही युग्मों के विषय में चार उद्देशक भवसिद्धिक-राशियुग्म के समान करने चाहिए।

७४. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

७५. भन्ते! कृष्णलेश्य-सम्यग्-दृष्टि-राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीव कहां से आकर उपपन्न होते हैं....? इन जीवों के विषय में भी जैसे कृष्णलेश्य- राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीवों के विषय में बतलाये गये वैसे करने चाहिए। इसी प्रकार सम्यग्-दृष्टि-राशियुग्म-कृतयुग्म--नैरयिक-जीवों के विषय में भी भवसिद्धिक-राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीवों के समान अट्ठाईस उद्देशक करने चाहिए।

७६. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

एकसौ तेरहवां–एकसौ चालीसवां उद्देशक

७७. भन्ते! मिथ्यादृष्टि-राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीव कहां से आकर उपपन्न होते हैं....? इसी प्रकार यहां भी मिथ्यादृष्टि-राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीवों के अभिलाप में अभवसिद्धिक-राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीवों के समान अट्ठाईस उद्देशक करने चाहिए।

७८. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

एकसौ इकतालीसवां–एकसौ अड़सठवां उद्देशक

७९. कृष्णपाक्षिक-राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीव कहां से आकर उपपन्न होते हैं.....? इस प्रकार यहां भी अभवसिद्धिक-राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीवों के समान अट्ठाईस उद्देशक करने चाहिए।

८०. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

एकसौ उनहत्तरवां–एकसौ छयानवेवां उद्देशक

८१. भन्ते! शुक्लपाक्षिक-राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीव कहां से आकर उपपन्न होते हैं.....? इस प्रकार यहां भी भवसिद्धिक-राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीवों के समान अट्ठाईस उद्देशक होते हैं। इस प्रकार से सभी एकसौ छयानवे उद्देशक राशियुग्म-शतक के होते हैं यावत् 'शुक्ललेश्य-शुक्लपाक्षिक-राशियुग्म-कल्योज-वैमानिक तक' यावत्–

८२. यदि ये जीव क्रिया-सहित होते हैं तो क्या उसी भव में सिद्ध होते हैं यवत् सब दुःखों का अन्त करते हैं?

गौतम! यह अर्थ संगत नहीं है।

८३. भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है।

८४. भगवान् गौतम श्रमण भगवान् महावीर को दायीं ओर से प्रारम्भ कर तीन बार प्रदक्षिणा करते हैं, वन्दन-नमस्कार करते हैं, वन्दन-नमस्कार कर वे इस प्रकार बोलते हैं—भन्ते! यह ऐसा ही है, भन्ते! यह तथा (संवादितापूर्ण) है, भन्ते! यह अवितथ है, भन्ते! यह असंदिग्ध है, भन्ते! यह इष्ट है, भन्ते! यह प्रतीप्सित (प्राप्त करने के लिए इष्ट) है और भन्ते! यह इष्ट-प्रतीप्सित है—यह अर्थ सत्य है जो आप कह रहे हैं—ऐसा कह कर, अर्हत् भगवान् अपूर्ववचन वाले होते हैं (ऐसा मानकर) श्रमण भगवान् महावीर को वन्दन-नमस्कार करते हैं, वन्दन-नमस्कार कर वे संयम और तप से अपने आपको भावित करते हुए विहरण कर रहे हैं।

• • •

भगवती सूत्र : खण्ड २–शुद्धिपत्र

सर्वत्र– भंते! वह ऐसा ही है....विहरण करने लगे। (अशुद्ध) की जगह भन्ते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है। इस प्रकार कहकर भगवान गौतम (भ. १/५१) यावत् रहते हैं। (शुद्ध) पढ़ें।

सर्वत्र– भंते! वह ऐसा ही है....विहरण कर रहे हैं। (अशुद्ध) की जगह भंते! वह ऐसा ही है। भन्ते! वह ऐसा ही है। इस प्रकार कहकर भगवान गौतम! (भ. १/५१) यावत् रहते हैं। (शुद्ध) पढ़ें।

भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है। (अशुद्ध) की जगह भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है। इस प्रकार कहकर (भ. १/५१)। (शुद्ध) पढ़ें।

भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है। इस प्रकार भगवान् गौतम (अशुद्ध) की जगह भंते! वह ऐसा ही है। भंते! वह ऐसा ही है। इस प्रकार कहकर भगवान गौतम (शुद्ध) पढ़ें।

करते हुए विहरण कर रहे हैं। या करते हुए विहार कर रहे हैं। करते हुए विहरण करने लगे। या करते हुए विहार करने लगे। (अशुद्ध) की जगह करते हुए रहते हैं। (शुद्ध) पढ़ें।

निम्नांकित शब्द सर्वत्र शुद्ध पढ़ें–

अशुद्ध	शुद्ध
-उपपत्र	-उपपन्नक
वाणमन्तर	वानमन्तर
पूर्व-कोटि	कोटि-पूर्व

अशुद्ध	शुद्ध
रायपसेणइयं	रायपसेणियं
संज्ञी-	संज्ञि-
असंज्ञी-	असंज्ञि-

अशुद्ध	शुद्ध
गुणा अधिक	-गुणा
आजीवक	आजीविक

अशुद्ध	शुद्ध
-प्रदेशी	प्रदेशिक
केवल इतना	इतना

निम्नांकित स्थानों पर इसी प्रकार (अशुद्ध) की जगह इस प्रकार (शुद्ध) पढ़ें–

शतक १२–४५९/७८/६-७,१२,२१; ४६०/७८/३०; ४६०/७९/१५; ४६१/७९/२३; ४६१/८०/१८; ४६२/८३/३; ४६२/८५/६; ४६२/८६/३,४; ४६३/८७/३,४; ४६३/८९/३; ४६३/९०/६; ४६३/९१/३,४,५; ४६३/९२/६; ४६४/९३; ४६४/९४/४; ४६४/९५/४,५; ४६५/९७/८,१०; ४६५/९८/४; ४६७/११३/३,५; ४६७/११४,११५/४; ४६७/११७/३; ४६७/१२३/१८,१९,२०; ४७२/१३०/४,५; ४७३/१३६/३; ४७३/१३९/५; ४७३/१४०/४; ४७३/१४१/४-५ (इस प्रकार यावत्) ४७४/१४२/४,५; ४७४/१४४/३-४; ४७७/१७२/३; ४७७/१७३,१७५/२; ४७८/१७७/२; ४७८/१८३/७,८; ४७९/१९१/३; ४८१/२०३/२; ४८१/२०४/३; ४८२/२०४/१; ४८२/२०७/४; ४८२/२०८/५; ४८३/२१०/३-४; ४८३/२१३/२; ४८३/२१५/६; ४८३/२१६/२। **शतक १३**–४९०/३/२८,३०,३५; ४९०/४/७,९,११,१२; ४९१/४/१४,१५; ४९१/५/१०,१२,१४,१५ (दोनों बार),१७,१९; ४९१/६/५-६; ४९३/१६/६ (दोनों बार),७; ४९३/१७/५; ४९४/२७/१०,१२; ४९५/३३/३,७,१०; ४९५/३४/४; ४९६/३४/१०; ४९६/३६/४-५; ४९६/३७/४; ४९६/३८/३; ४९७/४०/१; ४९८/४४/४; ५०१/६३/३,८; ५०१/६४/२; ५०२/६६/२; ५०४/७६/३; ५०५/७६/८; ५०५/७७/३; ५०५/७९/३; ५०५/८०/३,४; ५०८/९३/४; ५०८/९५/३; ५१७/१३८/५,६; ५१७/१४१/५,६। **शतक १४**–५२१/२/१०; ५२२/५/६; ५२२/८/२-३; ५२३/१०/५; ५२३/१४/४; ५२५/२४,२७/४; ५२६/३३/२; ५२७/४०/३; ५२८/४८/७; ५२९/५७/११; ५२९/५८/४; ५३०/६०/१३; ५३०/६२,६३,६७/२; ५३१/७३/६; ५३३/८१/४,७,१२(दोनों बार); ५३४/८१/१५,२०,२१,२५,२९-३३,३५,४२,४३; ५३६/९८/४; ५४२/१२७/२; ५४२/१२८/२; ५४५/१४९,१५०,१५१/२; ५४५/१५३/२। **शतक १६**–५९२/२४/४; ५९२/२५/३; ५९३/२६/३; ५९३/२९/४,५; ५९५/४२/११,१२; ६०३/७९/२। **शतक १७**–६१३/४/३; ६१५/१०/१; ६१५/१४/२,३; ६१६/२३/२; ६१७/२८/३; ६२०/४२/१,२; ६२०/४७/७,१२; ६२१/४७/१६; ६२२/५७/२,३; ६२२/५९/२; ६२२/६०/३; ६२२/६१/४; ६२२/६२/३; ६२२/६३/४; ६२३/६९/३; ६२४/७४/३; ६२४/७६/४; ६२५/८०/५,६। **शतक १८**–६२८/९/१; ६२८/१०/२,३,५; ६२८/११/२; ६२८/१२/२,४; ६२८/१४/२; ६२९/१९/१; ६२९/२३/२; ६३०/२६/१; ६३५/६२/१०; ६३६/६८/४; ६३७/७९/४; ६३९/९४/२,३; ६४०/९९/२; ६४१/१०३/८; ६०१/१०९/१; ६४१/१०५/२; ६४४/१२२/३; ६४४/१२६,१२७,१२८/२; ६४८/१५३/३; ६४९/१५७/१४; ६५३/१८४/४; ६५३/१८८/२; ६५३/१८९/३,५; ६५५/१९७/३; ६५५/२००/६; ६५७/२१६/१०। **शतक १९**–६६६/५५/२; ६६६/५६/२; ६६९/८४/३ **शतक २०**–६७३/३/४; ६७५/११/५; ६७७-६८६/२८-३६/सर्वत्र जहां इसी प्रकार है, वहां इस प्रकार पढ़ें; ६८८/४७/४-८,१०-१४; ६८८/४९/५; ६८९/५८/३; ६८९/५९/२। **शतक २१**–७००/४/२; ७०१/१२/१-३; ७०१/१४/१। **शतक २२**–७०४/१/१३ **शतक–२४**–७१५/४६/३; ७२४/९६/४; ७२७/१०७/४; ७२७/१०८/४,१७; ७२९/११३/४; ७३१/१२३/५; ७३४/१३६/५; ७३८/१५९/५; ७४१/१७५/३; ७४१/१७८/६,८; ७४२/१७९/७; ७४३/१८१/८; ७४४/१८८/४; ७४५/१९०/४; ७४६/१९७/८; ७४७/२०३/४-५; ७४९/२१०/१५; ७४९/२११/३,५; ७५०/२१५/७; ७५१/२१८/६; ७५१/२२४/१; ७५२/२२८/१; ७५२/३३१/५; ७५४/२४२/७; ७५४/२४३/२; ७५५/२४३/९,१०; ७५५/२४४/२; ७५६/२४८/२; ७६१/२७८/५; ७६३/२८५/५; ७६३/२८६/२-३; ७६३/२८८/१-२; ७६३/२९०/५-६; ७६४/२९३/७; ७६५/३००/२; ७६६/३०३/४,१२,४७; ७६७/३०५/१; ७६९/३०८/१६; ७६९/३१०/३-४; ७७०/३१०/११; ७७०/३१५/२; ७७३/३२४/८; ७७३/३२८/४; ७७४/३२९/४; ७७४/३३२/३; ७७६/३४४,३४५/२; ७७८/३५२/३; ७७८/३५४/७।

शतक २५–७८१-७८२/३/सर्वत्र जहां इसी प्रकार है, वहां इस प्रकार पढ़ें; ७८४/१६/४; ७८५/२०/५-६; ७८५/२३/२; ७८५/२६,२७/३; ७८६/३०/२-३; ७८६/३५/१-२,२;

निम्नांकित सूत्रों में इसी प्रकार (शुद्ध) है, इन्हें छोड़कर पृ. ७८७ से पृ. ९५४ तक सभी सूत्रों में इसी प्रकार (अशुद्ध) है, उसकी जगह इस प्रकार (शुद्ध) करना है।

शतक २५–७८८/४७/३-भी इसी प्रकार; ७८८/५०/३; ७९४/८५/३; ७९५/८६,९०/५; ७९८/११८/२; ८०१/१३६/५,६; ८०१/१३९/५; ८०८/१९०/३; ८२६/३३७/६,१०; ८६३/६२०/५; ८६४/६२७/३। **शतक २६**–८६८/११/४; ८७१/३२/३; ८७४/५२/१; ८७४/५३/७। **शतक २८**–८७७/३/३। **शतक ३०**–८८५/२७/४; ८८८/३७/२। **शतक ३१**–८९२/१४/१-२; ८९२/१५/२; ८९२/१६/१-२; ८९३/२१,२३,२४/२; ८९४/४१/१। **शतक ३२**–८९५/३/२। **शतक ३३**–८९६/४/१; ८९६/७/१; ८९६/८/२; ८९७/१०,११/२। **शतक ३४**–९०५/४/२२; ९०६/७/८; ९०७/१०/१२-१३; ९०८/१३/१३; ९१२/२६/२०; ९१८/५४/४; ९१९/६०/२। **शतक ३६**–९३३/७/१-२। **शतक ४०**–८४४/४५/८। **शतक ४१**–९४९/३०/१; ९४९/३३/२; ९५१/४६/१।

निम्नांकित स्थानों में वक्तव्यता (अशुद्ध) की जगह (वक्तव्य है) (शुद्ध) पढ़ें–

४४१/३८/२; ४६७/११५/३,४; ५०३/६९/३; ५०८/९५/४; ६०३/८०/३; ६१६/२४/३; ६१७/२९/३; ६२९/२३/३; ६३०/२७/१; ६३०/३१/२,४; ६३०/३३-३६/१; ६३६/७०/८; ६३६/७१/२; ६३९/९३/४,५ (दोनों बार); ६३९/९४/२; ६४२/१०९/७; ६६१/२२/३; ६६६/५६/३; ६६७/६१/४,५ (दोनों बार); ६७८/२८/१८; ६७९/२९/२६; ६८०/३०/३,२४,२५,२६; ६८०/३१/३,२६,२७ (दोनों बार); ६८१/३२/४; ६८२/३२/२७,२८ (दोनों बार); ६८२/३३/५,२८,२९ (दोनों बार); ६८३/३४/४,१० (दोनों बार),११; ६९४/९०/३; ६९४/९०/५; ६९४/९२/५; ७००/४/२; ७०१/७/४; ७८६/३५/२ (दोनों बार); ८०१/१३६/७, ८०१/१३९/४ (दोनों बार),५; ८२६/३३५/६; ८४२/४७३/५; ८६४/६२७/२; ८७२/३६/६; ८७४/५२/८; ८७५/५५/४,१७; ८८१/५/३,४,५; ८८१/६/४; ८८२/६/७-११; ८८२/९/७,९; ८८३/१५/५; ८८४/१९/५; ८८४/२०/३,५; ८८४/२२/५,६,८,१०-१३

निम्नांकित स्थानों में वक्तव्यता (अशुद्ध) की जगह (वक्तव्य है) (शुद्ध) पढ़ें–

४६४/९५/५; ४८३/२१६/३; ४९३/१७/५; ५०२/६४/७; ५०२/६७/५; ५३१/७१/८; ५९३/२६/३; ६२०/४२/५; ६२८/१२/६; ६२८/१५/१; ६२९/१८/३; ६२९/१९/१,१-२,३; ६२९/२४/३; ६२९/२५/२; ६३०/२६-२९/२; ६३०/२८/१; ६३०/२९/३-४; ६३०/३०/१; ६३०/३१/१,३; ६३०/३२,३४,३५/२; ६३५/६२/१०; ६४३/११६/३; ६५२/१७७/२; ६५८/२२१/३; ६५८/२२३/३; ६६०/११/३; ६६५/३६/३,४; ६७३/३/६; ६७५/१२/३; ६७७/२७/१२; ६७७/२८/१; ६७८/२९/२; ६७९/२९/२७; ६८०/३०/२; ६८०/३१/२; ६८१/३२/२; ६८२/३३/२,८; ६९८/११६/२; ६९९/१२१/२; ७२७/१०८/५; ७४०/१७१/४; ७५१/२२१,२२६/२; ७५९/२६४/२; ७८५/२५/६; ७९७/१००,१०१/३; ७९८/११२/३; ७९९/१२६/३; ८९१/२७४/३; ८२२/३१०/५; ८२६/३३४/५; ८३५/४१४/३; ८४२/४७३/३,४; ८४२/४७४/२; ८५२/५४२/४ (दोनों बार),५; ८५२/५४३/५।

निम्नांकित स्थानों में की वक्तव्यता (अशुद्ध) की जगह (वक्तव्य है) (शुद्ध) पढ़ें–

४४९/३८/२; ४६७/११७/४; ४८३/२१३/२,३; ४८३/२१५/७; ४८३/२१७/२ (दोनों बार); ४९६/३४/१०; ५००/५४/८; ५२६/३१/२; ५२९/५८/२,४; ५३३/८१/५,१३,१५-१६; ५३४/८१/१५-१६,३० (दोनों बार), ३१,३२ (दोनों बार), ३३,४२,४४,४४-४५; ५३६/९८/५; ५९१/१०/२,३; ५९१/१२,१४/३; ५९२/१६/३; ५९२/२२/३ (दोनों बार); ५९२/२४/२-३,३,४; ५९२/२५/२; ५९३/२६/३; ६१५/१०/१; ६१५/१४/३; ६१५/१५/५; ६२०/४७/८,१३; ६२१/४७/१८; ६२७/५/२; ६२७/१०/३; ६२८/११/२; ६२८/१२/२-३; ६२८/१४/२; ६२९/१६/२; ६२९/१७,१८/१; ६२९/२०/२; ६२९/२३/३; ६३०/२५/४; ६३५/६२/१, ६४३/११५/५; ६५२/१७५/४; ६५२/१७७/३; ६५२/१७९/७; ६५२/१८१/६; ६५५/१९७/३; ६६१/२०/२; ६७५/११/५; ६९५/९५/३; ६९५/९६/३; ६९५/१०३/५; ६९६/१०८/४-५; ७००/२/४; ७०१/७/५-६; ७०१/१२/१,२ (दोनों बार),३,४; ७०१/१४/१; ७३२/१२८/३; ७३९/१६७/११; ७५२/२२८/२; ७६३/२८५/६; ७९२/६४/२; ७९३/७०/५-६; ७९८/११०/३,३-४; ७९८/११३/३; ७९९/१२२/४; ७९९/१२६/३; ८००/१३०/३-४ (दोनों बार); ८००/१३३/४; ८०१/१३५/५; ८०१/१३७/३; ८११/७/३; ८१९/२७६/३,४; ८२१/२९९/३; ८२४/३२२/४; ८२४/३२५/६-७; ८२५/३२७/५; ८२६/३३७/७,७-८,८-१०; ८२७/३४६/२; ८३०/३६८/३; ८३२/३८१/४; ८३३/३८५/३; ८३३/३८५/३; ८३४/३९९/८; ८३६/४२१/३; ८३७/४२९,४३०,४३३/४; ८३८/४४०/५; ८३८/४४२/३; ८३८/४४३/२; ८४०/४५९/४,६; ८४१/४६०/३ (दोनों बार); ८४२/४६८/३; ८४२/४६९-४७१/४; ८४३/४७७,४७४/४; ८४४/४८१/५,७; ८४४/४८३/७-८; ८४५/४९१/३; ८४५/४९३/४,८-९; ८४६/४९७/३ (दोनों बार); ८४६/४९८,४९९/४; ८४७/५०१/२-३; ८४७/५०२/५; ८४७/५०४/३; ८४७/५०५/३; ८४८/५१०/४; ८४८/५११-५१४/३; ८४९/५२२/३; ८५२/४२३/२; ८५०/५२४/३; ८५०/५२५/३; ८५१/५३३/६; ८५१/५३८/४; ८५२/५४३/४; ८५२/५४५/२; ८६६/३/५,६-७; ८६७/१४/२; ८६८/१९/५,७,१३ (दोनों बार); ८६९/२५/५,८; ८७०/२७/१७; ८७१/३२/४; ८७५/५५/७,११,१२,१५,१६

निम्नांकित स्थानों में की वक्तव्यता (अशुद्ध) की जगह (वक्तव्य हैं) (शुद्ध पढ़ें–

४६२/८६/५; ४६४/९३/१०; ४६७/११३/४; ४६७/११४/५; ४६७/११५/४; ४६८/११८/७; ४७४/१४४/४; ४८८/२२५/१०; ४९०/३/३६; ४९४/२८/२; ४९५/३३/६,८; ४९८/४४/३-४; ५०२/६७/५-६; ५०५/७६/३; ५०५/८०/८; ५१७/१३८,१४१/६,७; ५२२/८/३; ५२३/१०/५; ५२३/१३/३; ५२५/२४/५; ५२५/२७/४; ५३०/६२,२-३; ५३०/६३/३; ५३०/६७/२; ५३१/७१/८; ५३१/७३/६; ५३४/८१/२२,२४-२५,३५; ६०१/११५/११; ६१५/१५/३,६ (दोनों बार); ६१७/२८/३; ६२७/१/३; ६२७/३/२; ६२७/५/३; ६२८/११/३; ६२८/१२/४; ६२९/२२/३; ६३६/६८/४; ६३९/९१. ९३/२; ६३९/९४/४,४-५; ६४०/९९/१-२,२; ६४१/१०१/२; ६४१/१०५/२,३; ६५३/१८६/७; ६६६/५४/३; ६६६/५६/२; ६६७/६१/५; ६६७/६३/३; ६६७/६८/५; ६६८/७४/२; ६७३/३/४,५; ६९४/९०/३,४; ६९४/९१,९२/४; ६९४/९३/३; ६९४/९४/३; ६९५/९५,९७/३; ६९५/९८/१; ६९५/१००/४ (दोनों बार); ६९६/१०५/१०; ६९६/१०८/५; ६९६/१०८/६; ६९७/१०९/२; ६९८/११५/२ (दोनों बार); ६९८/११६/२; ६९८/११८/११; ६९८/११८/१३ (दोनों बार); ७००/५/२-३; ७०१/७/७; ७०२/१६/४; ७८६/३५/१; ७९३/७१/५; ७९४/८३/५; ७९४/८४,८५/४; ७९५/८६/५,६; ७९५/८७/३; ७९९/१२१/४,६; ८००/१३२/५ (दोनों बार); ८००/१३४/५-६; ८०१/१३६/४; ८०२/१४६/५; ८०२/१४७/३; ८०२/१४८,१४९,१५०/२; ८२६/३३५/६; ८३५/४१०/४; ८४१/४६२/३४; ८४१/४६३/६; ८४३/४७६/५; ८४४/४८५,४८६/३; ८४९/५२२/४; ८५१/५३७/३; ४८५१/५४१/३,४; ८६४/६२७/३,४; ८६४/६२९,६३१/३; ८६५/६३३,६३५/३; ८६७/११/२; ८६७/१६/३; ८६८/१९/६,९,१०,११; ४७१/१९/१४; ८६९/२०/३; ८६९/२२/४,५; ८६९/२४/४; ८६९/२५/७; ८७०/२६/७ (दोनों बार); ८७०/२७/१६; ८७०/२९/३-४; ८७१/३०/३ (दोनों बार); ८७१/३२/५,६; ८७२/३६/५; ८७४/५२/२,८; ८७४/५३/८; ८७५/५५/४,८,१३; ८७७/२/३,४; ८७७/३/४; ८८०/४/४-५; ८८१/३/३; ८८२/८/२,४,५-६ ८८३/१४/७; ८८३/१६/६; ८८५/२८/६

निम्नांकित स्थानों में की भी वक्तव्यता (अशुद्ध) की जगह (भी वक्तव्य है) (शुद्ध) पढ़ें–

५३३/८१/७,८; ६१५/१४/३; ६३५/६२/१०; ८०१/१३७/३,४; ८२१/२९५/१-२; ८२१/२९८/४; ८२१/३०१/३; ८२२/३०३/३; ८२२/३०४/६ (दोनों बार); ८२२/३०६/३; ८२३/३११/३; ८२३/३१२/५; ८२३/३१३/७; ८२३/३१६-३१७/३; ८२३/३१९/२; ८२४/३१९/३; ८२४/३२१/३; ८२४/३२४/५; ८२६/३३५/५,६; ८२७/३३९/८ (दोनों बार); ८२७/३४७/२; ८२८/३५१/७; ८३०/३६८/३; ८३१/३७४/४; ८३२/३८२/३; ८३३/३९१/६; ८३५/४१४/३; ८३६/४१७/३; ८३७/४३६/३; ८३९/४४७/५; ८४१/४६४/४; ८४१/४६५/३-४; ८४२/४७४/३; ८४३/४७६/४; ८४३/४७७/४; ८४३/४७९/६; ८४४/४८२/२; ८४४/४८३/६; ८४४/४८४/४; ८४५/४९२/५; ८४७/४९९/३; ८४७/५०२/३; ८४७/५०३/४; ८५२/५४२/३

निम्नांकित स्थानों में की भी वक्तव्यता (अशुद्ध) की जगह भी (वक्तव्य है) (शुद्ध) पढ़ें–

४६३/८७/४; ४९६/३४/१०; ६२८/१२/६; ६२८/१५/१; ६२९/१८/३; ६२९/१९/१,१-२,३; ६३०/२६-२९/२; ६३०/२९/३-४; ६३०/३०/१; ७००/४/३; ७९९/१२४/५; ८०१/१३८/४ (दोनों बार); ८०१/१३६/५ (दोनों बार); ८०४/१६२/१; ८३५/४१४/३; ८३६/४२५/३; ८६७/११/२; ८८०/८/४; ८८३/१६/५; ८८४/२०/३; ८८४/२४/४।

निम्नांकित स्थानों में वक्तव्य है (अशुद्ध) की जगह (वक्तव्य है) (शुद्ध) पढ़ें–

५०१/६२/५; ५०५/७९/४; ७०८/६/६; ७२२/८३,८६,८९,९०/३; ७२७/१०८/५; ७२८/११३/५; ७३७/१५३/७,८; ७४७/२०३/६,९; ७५७/२५१/७; ७५८/२६०/५; ७६५/२९९/८; ७७४/३३३/५; ७७५/३३५,३३७/२; ८१३/२२९/३; ८१६/२४१/७,८; ८१७/२५५/४; ८१७/२५७/३; ८१७/२५८,२६१/४; ८१७/२६३/३; ८६७/८/२; ८६८/१८/५; ८७१/३०/१४-१५,१५; ८७१/३२/३,७; ८७५/५५/५; ८७७/३/५,६; ८८०/७/८; ८८५/२७/३; ८८९/४६/२,७; ८९१/६/६; ८९२/१४/२-४; ८९२/१५/२,३; ८९२/१६/२-४; ८९२/१८/सर्वत्र; ८९३/२०/२,३-४; ८९३/२१/सर्वत्र; ८९३/२४/२-४; ८९४/३५/३; ८९५/३/४; ८९५/४/४; ८९५/६/४; ८९८/२२/४; ८९८/२५,२६/२; ८९९/२७-३२/२; ८९९/३६/३; ९००/४०/४; ९०१/४७/४; ९०१/४८/३; ९०२/५८/२; ९०२/५९/३; ९०२/६०/२; ९०३/६१,६२/१; ९०५/५/५; ९०६/६/६; ९०६/७/५; ९०६/८/४-५; ९०७/९,१०/६; ९०७/११/५; ९१४/३२/२६; ९२७/२७/५; ९३०/५८/३; ९४१/१७,१९/५; ९४१/२१/६; ९४२/२३/६; ९४२/२५/४; ९४२/२८/३; ९४४/४३/४; ९५०/४४/६; ९५१/४६/५; ९५१/५२/४; ९५२/६३/२

निम्नांकित स्थानों में वक्तव्य हैं (अशुद्ध) की जगह (वक्तव्य हैं) (शुद्ध) पढ़ें–

४७३/१४०,१४१/४; ४९३/१७/६; ५३०/६७/३; ७०२/१८/५; ७०२/१९/८; ७०३/२०,२१/७; ७४८/२०३/११; ७७४/३३५/२; ८१७/२५६/४; ८१७/२५९/३; ८१७/२६२/४; ८१८/२६४/४; ८६६/२/५; ८६७/८/१; ८७८/५/४; ८७८/७/३; ८८६/२९/१३,१३-१४,१७,१९,२२,२४,२६,३२,३३; ८८७/३४/सर्वत्र; ८८८/३९/७ (दोनों बार); ८९२/१५/४; ८९४/४१/१; ८९४/४२/२; ८९५/६/३; ८९६/४/४; ८९७/८/३; ९००/४२/५; ९०८/१३/१८; ९१२/२६/२०; ९१६/४०/१४

निम्नांकित स्थानों में वक्तव्य है (अशुद्ध) की जगह (वक्तव्य हैं) (शुद्ध) पढ़ें–

४९२/८/३; ५३०/६४-६६/२; ६१५/१५/४; ७४२/१८०/२; ७४३/१८१/५; ७५७/२५१/२; ८१६/२५०/३-४; ८६७/५/३; ८६७/६,१२,१५/२; ८६७/१२/३; ८६८/१७/९,१२,१३; ८६८/१८/४; ८६९/२०,२२/४; ८६९/२५/६; ८६९/२६/२; ८७०/२६/४,५; ८७०/२७/३,५,६; ८७१/३०/१३,१४; ८७१/३४/४; ८७५/५५/३; ८८५/२८/७; ८८६/२९/८,९,२९

निम्नांकित स्थानों में वक्तव्य हैं (अशुद्ध) की जगह (वक्तव्य है) (शुद्ध) पढ़ें–

७१५/४३/१; ८७८/५/८; ८८१/४४/५; ८९१/७/४; ८९१/९,१०/२; ८९५/६/४; ८९६/४/१; ९४९/२८/६

निम्नांकित स्थानों में वक्तव्यता (अशुद्ध) की जगह (वक्तव्यता) (शुद्ध) पढ़ें–

५०१/६३/३,८ (दोनों बार); ५०१/६४/३; ५०२/६४/६; ५०२/६५/२; ५०२/६६,६७/३; ५०२/६६/५; ५०३/६९/३; ५०३/७०/२; ५०३/७१/४; ५०४/७३/४; ५०५/७६/१; ५०५/७७/६; ५०५/७८/३ (दोनों बार);

निम्नांकित स्थानों में– है? (अशुद्ध) की जगह है? (अथवा) (शुद्ध) पढ़ें हैं? (अशुद्ध) की जगह हैं? (अथवा) (शुद्ध) पढ़ें।

७५७/२६१/२; ७५८/२६२/३; ७६०/२७१/२; ७६१/२७३/२; ७६१/२७४/३; ७६३/२९१/२; ७६८/३०६/२; ७७१/३१६/३; ७७२/३३२/२; ८२०/२८६/१; ८२०/२८७/१ (दोनों बार); ८२०/२८८/१; ८२०/२८९/१ (दोनों बार); ८२०/२९१/१; ८२१/२९९/१; ८२१/३००/१ (दोनों बार); ८४१/४६७/१; ९२३/६/१

निम्नांकित स्थानों पर है....? (अशुद्ध) की जगह है० ? (शुद्ध) तथा हैं....? (अशुद्ध) की जगह हैं० ? (शुद्ध) पढ़ें–

७७७/३५०/२; ७८७/३९/१; ७९३/७४/२; ७९४/७८/१; ७९५/८७/१; ८०१/१३९/१; ८२१/२९५/१; ८८८/३६/२; ८९१/६/७; ८९२/२०/१; ८९३/२९/२; ९२३/३/२; ९२४/१३/१; ९२४/१५/१; ९२६/१७/१; ९२६/१९/१; ९२६/२०/१; ९२६/२२/१; ९२७/२५/२; ९२७/२७/२; ९२७/२९/२; ९२७/३१/३; ९२८/३३/३; ९२८/३५/३; ९२८/४१/३; ९२९/४४/१; ९२९/४८/२; ९३०/६०/२; ९३२/१/१; ९३२/४/१; ९३३/७/१; ९३५/१/१; ९३७/१/१; ९३७/१/१; ९३९/६/२; ९४०/१०/२; ९४०/१२/२; ९४२/२७/२; ९४२/३०/२; ९४३/३६/२; ९४४/४२/२; ९४६/३/१; ९४७/१५/१; ९४८/१९,२१,२६/१; ९४९/३०,३३/१; ९५०/३६/१; ९५१/४८/२; ९५२/६३/२; ९५३/६६/२; ९५३/७३,७५/२; ९५४/७७/१; ९५४/७९/१; ९५४/८१/२;

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
४५३	६४	२	हृष्ट-तुष्ट हो गई (भ. १/१५२-१५५) की वक्तव्यता, वैसे ही प्रव्रजित हो गई यावत्	हृष्ट-तुष्ट हो गई, शेष जैसे देवानंदा (की वक्तव्यता), वैसे ही प्रव्रजित हो गई (भ. ९/१५२-१५५) यावत्
४६२	८७	१	हैं? भविष्य	हैं? अनन्त। भविष्य
४६३	८७	३-६	वैमानिकों में परिवर्त्त की वक्तव्यता। इसी प्रकार वैक्रिय-पुद्गल-परिवर्त्त की भी वक्तव्यता। इसी प्रकार यावत् आनापान-पुद्गल-परिवर्त्त की वैमानिकों में वक्तव्यता। यह परिवर्त्त पृथक्-पृथक् अनेक जीवों की अपेक्षा चौबीस दंडकों में ही होता है।	वैमानिकों के। इस प्रकार वैक्रिय-पुद्गल-परिवर्त्त भी (वक्तव्य हैं)। इस प्रकार यावत् वैमानिकों के आनापान-पुद्गल-परिवर्त्त (वक्तव्य हैं)। ये पृथक्-पृथक् (अनेक जीवों की अपेक्षा) सात परिवर्त्त चौबीस दण्डकों में होते हैं।
४६३	९०	७	रूप में असुरकुमार की भांति वक्तव्यता	रूप में जैसे असुरकुमार के रूप में परिवर्त) (भ. १२/८९ में) (बतलाए गए), (वैसे बतलाने चाहिए)।

शतक १५

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
५६९	११४	२,३	तपः-तेज से पराभूत होकर, मेरा शरीर पित्तज्वर से व्याप्त नहीं होगा, उसमें जलन पैदा नहीं होगी, मैं छह माह के भीतर मृत्यु को प्राप्त नहीं करूंगा।	तप से, तेज से पराभूत होने पर, पित्तज्वर से व्याप्त शरीर वाला हो और जलन से आक्रान्त हो मैं छह माह के भीतर छद्मस्थ-अवस्था में ही मृत्यु को प्राप्त नहीं करूंगा,
५६९	११४	४,५	तपः-तेज से पराभूत होकर तुम्हारा शरीर पित्तज्वर से व्याप्त हो जाएगा, उसमें जलन पैदा हो जाएगी,	तप से, तेज से पराभूत होने पर पित्तज्वर से व्याप्त शरीर वाला हो और जलन से आक्रान्त हो

शतक १७

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६२३	७०	१-४	भंते! पृथ्वीकायिक जीव शर्कराप्रभा-पृथ्वी पर समवहत होता है, समवहत होकर सौधर्म-कल्प में पृथ्वीकायिक के रूप में उपपन्न होने के योग्य है? इस प्रकार जैसे रत्नप्रभा के पृथ्वीकायिक का उपपात बतलाया गया है। वैसे ही शर्कराप्रभा के पृथ्वीकायिक का उपपात भी वक्तव्य है यावत् ईषत्-प्राग्भारा में। इस प्रकार जैसे रत्नप्रभा की वक्तव्यता, इसी प्रकार यावत् अधःसप्तमी में समवहत होकर ईषत्-प्राग्भारा में उपपात की वक्तव्यता। शेष पूर्ववत्।	भंते! पृथ्वीकायिक-जीव शर्कराप्रभा-पृथ्वी पर समवहत होता है, समवहत होकर जो भव्य सौधर्म कल्प में पृथ्वीकायिक-जीव के रूप में उपपन्न होने वाला है०? इस प्रकार जैसे रत्नप्रभा (-पृथ्वी) पर (समुद्घात के पश्चात्) पृथ्वीकायिक-जीव का उपपात (सौधर्म-कल्प आदि में) करवाया गया, वैसे ही शर्कराप्रभा (-पृथ्वी) पर (समुद्घात के पश्चात्) पृथ्वीकायिक-जीव का उपपात (सौधर्म-कल्प से लेकर) यावत् ईषत्-प्राग्भारा (-पृथ्वी) में करवाना चाहिए।
६२४	७२	१-८	भंते! पृथ्वीकायिक सौधर्म-कल्प पर समवहत होता है। समवहत होकर जो भव्य इसी रत्नप्रभा-पृथ्वी में पृथ्वीकायिक के रूप में उपपन्न होने वाला है। भंते! क्या वह पहले उपपन्न होगा, पश्चात् स्थान को संप्राप्त करेगा? शेष पूर्ववत्। जैसे रत्नप्रभा के पृथ्वीकायिक का सर्व कल्पों में यावत् ईषत्-प्राग्भारा में उपपात, इसी प्रकार सौधर्म-पृथ्वीकायिक का सातों पृथ्वियों में उपपात वक्तव्य है यावत् अधःसप्तमी में। इस प्रकार जैसे सौधर्म-पृथ्वीकायिक का सब पृथ्वियों में उपपात। इसी प्रकार यावत् ईषत्-प्राग्भारा-पृथ्वीकायिक से सर्व पृथ्वियों में उपपात यावत् अधःसप्तमी में।	भंते! पृथ्वीकायिक-जीव सौधर्म-कल्प पर समवहत होता है, समवहत होकर जो भव्य इसी रत्नप्रभा-पृथ्वी में पृथ्वीकायिक-जीव के रूप में उपपन्न होने वाला है, भंते! क्या वह पहले उपपन्न होगा, पश्चात् स्थान को संप्राप्त करेगा? शेष पूर्ववत्। जैसे रत्नप्रभा (-पृथ्वी) पर (समुद्घात के पश्चात्) पृथ्वीकायिक-जीव का सर्व कल्पों में यावत् ईषत्-प्राग्भारा में उपपात करवाया गया वैसे ही सौधर्म-पृथ्वीकायिक-जीव का सातों पृथ्वियों में उपपात करवाना चाहिए यावत् अधः सप्तमी में। इस प्रकार जैसे सौधर्म-पृथ्वीकायिक-जीव का सब पृथ्वियों में उपपात करवा गया उसी प्रकार यावत् ईषत्-प्राग्भारा-पृथ्वीकायिक-जीव का सर्व पृथ्वियों में उपपात करवाना चाहिए यावत् अधःसप्तमी में।

शतक १८

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६३०	३१	शीर्षक	×	(ज्ञान-द्वार)
६३०	३१	१-५	ज्ञानी की सर्वत्र सम्यग्-दृष्टि की भांति वक्तव्यता। आभिनिबोधिक-ज्ञानी यावत् मनःपर्यव-ज्ञानी की आहारक की भांति वक्तव्यता, इतना विशेष है—जिनके जो है। केवलज्ञानी की नोसंज्ञी-नोअसंज्ञी की भांति वक्तव्यता। अज्ञानी यावत् विभंग-ज्ञानी की आहारक की भांति वक्तव्यता।	ज्ञानी (एकवचन-बहुवचन में) सर्वत्र सम्यग्-दृष्टि की भांति (वक्तव्य है)। आभिनिबोधिक-ज्ञानी (एकवचन-बहुवचन में) यावत् मनःपर्यव-ज्ञानी (एकवचन-बहुवचन में) आहारक (भ. १८/२४) की भांति (वक्तव्य है), इतना विशेष है—जिसके जो है। केवलज्ञानी (एकवचन-बहुवचन में) नोसंज्ञि-नोअसंज्ञी (भ. १८/२६) की भांति (वक्तव्य है)। अज्ञानी (एकवचन-बहुवचन में) यावत् विभंग-ज्ञानी (एकवचन-बहुवचन में) आहारक की भांति (वक्तव्य हैं)।

शतक १८

निम्नांकित स्थानों में सर्वत्र कितने गंध (अशुद्ध) की जगह कितनी गंध वाला (शुद्ध) वर्ण (अशुद्ध) की जगह वर्ण वाला (शुद्ध)
गंध (अशुद्ध) की जगह गंध वाला (शुद्ध) रस (अशुद्ध) की जगह रस वाला (शुद्ध) पढ़ें–
६४२/१०७-११४ सर्वत्र ६४३/११४-११७;६७७/२६-२८,३०-३६

सर्वत्र मल, मूत्र, श्लेष्म, नाक के मैल, शरीर के गाढ़े मैल का परिष्ठापन (अशुद्ध) की जगह उच्चार-प्रस्रवण-क्ष्वेल-सिंघाण-जल्ल-परिष्ठापन (शुद्ध) पढ़ें।

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६५३	१८६	२-८	गौतम! जो भव्य तिर्यग्योनिक, मनुष्य अथवा देव पृथ्वीकायिक-निकायों में उपपन्न होंगे। इस अपेक्षा से कहा जाता है। अप्कायिक, वनस्पतिकायिक की पूर्ववत् वक्तव्यता। तैजस, वायु, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रियों के जो भव्य तिर्यग्योनिक, मनुष्य, तैजस, वायु, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय अथवा चतुरिन्द्रियों में उपपन्न होंगे। पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक के जो भव्य नैरयिक, तिर्यक्, योनिक, मनुष्य, देव, पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक अथवा पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों में उपपन्न होंगे। इस प्रकार मनुष्यों की वक्तव्यता। वाणमंतर, ज्योतिष्क, वैमानिक की नैरयिक की भांति वक्तव्यता।	गौतम! जो भव्य (पृथ्वीकायिकों में उपपन्न होने की योग्यता-प्राप्त) तिर्यग्योनिक, मनुष्य अथवा देव है, (मृत्यु के पश्चात्) वह पृथ्वीकायिकों में उपपन्न होनेवाला है। इस (भविष्य में उसके पृथ्वीकायिकों में उपपन्न होने की) अपेक्षा से उसे (भव्य-द्रव्य-पृथ्वीकायिक भव्य-द्रव्य-पृथ्वीकायिक) कहा जाता है। (भव्य-द्रव्य-) अप्कायिकों और (भव्य-द्रव्य-) वनस्पतिकायिकों की इसी प्रकार (वक्तव्यता)। जो भव्य (तेजस्कायिकों, वायुकायिकों, द्वीन्द्रियों, त्रीन्द्रियों और चतुरिन्द्रियों में उपपन्न होने की योग्यता-प्राप्त) तिर्यग्योनिक अथवा मनुष्य है, (मृत्यु के पश्चात्) वह तेजस्कायिकों, वायुकायिकों, द्वीन्द्रियों, त्रीन्द्रियों अथवा चतुरिन्द्रियों में उपपन्न होने वाला है। (भविष्य में उसके तेजस्कायिकों, वायुकायिकों, द्वीन्द्रियों, त्रीन्द्रियों अथवा चतुरिन्द्रियों में उपपन्न होने की) अपेक्षा से उसे (क्रमशः) (भव्य-द्रव्य-तेजस्कायिक, भव्य-द्रव्य-वायुकायिक, भव्य-द्रव्य-द्वीन्द्रिय, भव्य-द्रव्य-त्रीन्द्रिय, भव्य-द्रव्य-चतुरिन्द्रिय) कहा जाता है। जो भव्य (पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों में उपपन्न होने की योग्यता-प्राप्त) नैरयिक, तिर्यग्योनिक, मनुष्य, देव अथवा पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक है, (मृत्यु के पश्चात्) वह पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों में उपपन्न होने वाला है। (भविष्य में उसके पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों में उपपन्न होने की अपेक्षा से उसे भव्य-द्रव्य-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक कहा जाता है।) इस प्रकार (भव्य-द्रव्य-) मनुष्य भी (वक्तव्य हैं)। (भव्य-द्रव्य-) वानमंतर, (भव्य-द्रव्य-) ज्योतिष्क और (भव्य--द्रव्य-) वैमानिक (भव्य-द्रव्य-) नैरयिकों की भांति (वक्तव्य हैं)।
६५३	१८९	३-६	इसी प्रकार अप्कायिक की वक्तव्यता। तैजस, वायुकायिक की नैरयिक की भांति वक्तव्यता। द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय की नैरयिक की भांति वक्तव्यता। पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक की जघन्यतः अंतर्मुहूर्त, उत्कृष्टतः तैंतीस सागरोपम। इसी प्रकार मनुष्य की वक्तव्यता। वाणमंतर, ज्योतिष्क, वैमानिक की असुरकुमार की भांति वक्तव्यता।	इसी प्रकार (भव्य-द्रव्य-) अप्कायिक की भी (वक्तव्यता)। (भव्य-द्रव्य-) तैजस (कायिक), (भव्य-द्रव्य-) वायुकायिक की (भव्य-द्रव्य-) नैरयिक की भांति (वक्तव्यता)। (भव्य-द्रव्य-) वनस्पति-कायिक की (भव्य-द्रव्य-) पृथ्वीकायिक की भांति (वक्तव्यता)। (भव्य-द्रव्य-) द्वीन्द्रिय, (भव्य-द्रव्य-) त्रीन्द्रिय और (भव्य-द्रव्य-) चतुरिन्द्रिय की (भव्य-द्रव्य-) नैरयिक की भांति (वक्तव्यता)। (भव्य-द्रव्य-) पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक की जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त, उत्कर्षतः तैंतीस सागरोपम। इस प्रकार (भव्य-द्रव्य-) मनुष्य की भी (वक्तव्यता)। (भव्य-द्रव्य-) वानमंतर, (भव्य-द्रव्य-) ज्योतिष्क, (भव्य-द्रव्य-) वैमानिक की (भव्य-द्रव्य-) असुरकुमार की भांति (वक्तव्यता)।
६५८	२२०	५	भी हूं।	भी हूं। इस अपेक्षा से यह (कहा जा रहा है) यावत् मैं भूत, वर्तमान और भावी अनेक पर्यायों से युक्त भी हूं।

शतक २०

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६८८	४७	३-१६	उपपन्न होता है? पूर्ववत्। इसी प्रकार यावत् अधःसप्तमी में उपपात होता है। इसी प्रकार सनत्कुमार-, माहेन्द्र-, ब्रह्मलोक-कल्प के बीच समवहत हुआ, समवहत होकर पुनः यावत् अधःसप्तमी में उपपात होता है। इसी प्रकार ब्रह्मलोक-, लांतक-कल्प के बीच समवहत हुआ, पुनः यावत् अधःसप्तमी में उपपात होता है। इसी प्रकार लांतक-महाशुक्र--कल्प के बीच में समवहत हुआ, पुनः यावत् अधःसप्तमी में उपपात होता है। इसी प्रकार महाशुक्र-, सहस्रार-कल्प के बीच में समवहत हुआ, पुनः यावत् अधःसप्तमी में उपपात होता है। इसी प्रकार सहस्रार-, आनत-, प्राणत-कल्पों के बीच समवहत हुआ, पुनः यावत् अधःसप्तमी में उपपात होता है। इसी प्रकार आनत-, प्राणत-, आरण-, अच्युत-कल्पों के बीच में समवहत हुआ, पुनः यावत् अधःसप्तमी में उपपात होता है। इसी प्रकार आरण, अच्युत, ग्रैवेयक-विमानों के बीच समवहत हुआ, पुनः यावत् अधःसप्तमी में उपपात होता है। इसी प्रकार ग्रैवेयक-विमानों और अनुत्तर-विमानों के बीच समवहत हुआ, पुनः यावत् अधःसप्तमी में उपपात होता है। इसी प्रकार अनुत्तर-विमानों, ईषत्-प्राग्भारा के बीच समवहत हुआ, पुनः यावत् अधःसप्तमी में उपपात होता है।	उपपन्न होता है०? इसी प्रकार। इस प्रकार यावत् अधःसप्तमी में उपपात करवाना चाहिए—उपपात वक्तव्य है। इस प्रकार सनत्कुमार-, माहेन्द्र-, ब्रह्मलोक-कल्प के बीच समवहत हुआ, समवहत होकर पुनः यावत् अधःसप्तमी में उपपात करवाना चाहिए। इस प्रकार ब्रह्मलोक- और लांतक-कल्प के बीच समवहत हुआ, पुनः यावत् अधःसप्तमी में (उपपात करवाना चाहिए)। इस प्रकार लांतक- और महाशुक्र-कल्प के बीच समवहत हुआ, पुनः यावत् अधःसप्तमी में (उपपात करवाना चाहिए)। इस प्रकार महाशुक्र- और सहस्रार-कल्प के बीच समवहत हुआ, पुनः यावत् अधःसप्तमी में (उपपात करवाना चाहिए)। इस प्रकार सहस्रार- और आनत-, प्राणत-कल्पों के बीच समवहत हुआ, पुनः यावत् अधःसप्तमी में (उपपात करवाना चाहिए)। इस प्रकार आनत-, प्राणत- और आरण-, अच्युत-कल्पों के बीच समवहत हुआ, पुनः यावत् अधःसप्तमी में (उपपात करवाना चाहिए)। इस प्रकार आरण, अच्युत और ग्रैवेयक-विमानों के बीच समवहत हुआ, पुनः यावत् अधःसप्तमी में (उपपात करवाना चाहिए)। इस प्रकार ग्रैवेयक-विमानों और अनुत्तर-विमानों के बीच समवहत हुआ, पुनः यावत् अधःसप्तमी में (उपपात करवाना चाहिए)। इस प्रकार अनुत्तर-विमानों और ईषत्-प्राग्भारा के बीच समवहत हुआ, पुनः यावत् अधःसप्तमी में उपपात करवाना चाहिए।
६९७	११३	१-९	यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है यावत् अनेक-द्वादश-नोद्वादश-समर्जित भी हैं? गौतम! जो नैरयिक द्वादश-प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे द्वादश-समर्जित हैं। जो नैरयिक जघन्यतः एक-, दो-, तीन- उत्कृष्टतः ग्यारह-प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे नोद्वादश-समर्जित हैं। जो नैरयिक द्वादश-प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं तथा अन्य जघन्यतः एक-, दो-, तीन- उत्कृष्टतः ग्यारह-प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे द्वादश-नोद्वादश-समर्जित हैं। जो नैरयिक अनेक-द्वादश-प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे अनेक-द्वादश-समर्जित हैं। जो नैरयिक अनेक-द्वादश- तथा जघन्यतः एक-, दो-, तीन- उत्कृष्टतः ग्यारह-प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे अनेक-द्वादश-नोद्वादश-समर्जित हैं। इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है—यावत् अनेक-द्वादश-नोद्वादश-समर्जित भी हैं।	यह किस अपेक्षा से ऐसा कहा जा रहा है यावत् (अनेक-द्वादश- और एक-नोद्वादश-) समर्जित भी हैं? गौतम! जो नैरयिक द्वादशक-प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे नैरयिक द्वादश-समर्जित हैं। जो नैरयिक जघन्यतः एक-, दो-, -तीन-, उत्कर्षतः ग्यारह-प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे नैरयिक नोद्वादश-समर्जित हैं। जो नैरयिक द्वादशक-प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं तथा अन्य जघन्यतः एक-, दो-, तीन-, उत्कर्षतः एकादशक-प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे नैरयिक द्वादश-नोद्वादश-समर्जित हैं। जो नैरयिक अनेक-द्वादशक-प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे नैरयिक अनेक-द्वादश-समर्जित हैं। जो नैरयिक अनेक-द्वादश- तथा जघन्यतः एक-, दो-, तीन-, उत्कर्षतः एकादशक-प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे नैरयिक अनेक-द्वादश- और एक-नोद्वादश-समर्जित हैं। इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है यावत् (अनेक-द्वादश और एक-नोद्वादश-) समर्जित भी हैं। इस प्रकार यावत् स्तनितकुमार (वक्तव्य है)।

शतक २०

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६९८	११८	१-१३	यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है–यावत् अनेक-चतुरशीति-नोचतुरशीति-समर्जित भी हैं? गौतम! जो नैरयिक चौरासी-प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे चतुरशीति-समर्जित हैं। जो नैरयिक जघन्यतः एक-, दो-, तीन-उत्कृष्टतः तिरासी-प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे नोचतुरशीति-समर्जित हैं। जो नैरयिक चौरासी- तथा अन्य जघन्यतः एक-, दो-, तीन-उत्कृष्टतः तिरासी-प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे चतुरशीति-नोचतुरशीति-समर्जित हैं। जो नैरयिक अनेक-चौरासी-प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे अनेक-चतुरशीति-समर्जित हैं। जो नैरयिक अनेक-चौरासी- तथा अन्य जघन्यतः एक-, दो-, तीन-उत्कृष्टतः तिरासी-प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे अनेक-चतुरशीति-नोचतुरशीति-समर्जित हैं। इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है–यावत् अनेक-चतुरशीति-नोचतुरशीति-समर्जित भी हैं। इस प्रकार यावत् स्तनितकुमार की वक्तव्यता। पृथ्वीकायिक की अंतिम दो विकल्पों की भांति वक्तव्यता, इतना विशेष है–चौरासी अभिलाप्य है। इस प्रकार यावत् वनस्पतिकायिक की वक्तव्यता। द्वीन्द्रिय यावत् वैमानिकों की नैरयिक की भांति वक्तव्यता।	यह किस अपेक्षा से कहा जा रहा है यावत् (अनेक-चतुरशीति- और एक-नोचतुरशीति-) समर्जित भी हैं? गौतम! जो नैरयिक चतुरशीतिक-प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे नैरयिक चतुरशीति-समर्जित हैं। जो नैरयिक जघन्यतः एक-, दो-, तीन-, उत्कर्षतः त्र्यशीतिक-प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे नैरयिक नोचतुरशीति-समर्जित हैं। जो नैरयिक चतुरशीतिक-तथा अन्य जघन्यतः एक-, दो-, तीन-, उत्कर्षतः त्र्यशीतिक--प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे नैरयिक चतुरशीति-नोचतुरशीति-समर्जित हैं। जो नैरयिक अनेक चतुरशीतिक-प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे नैरयिक अनेक-चतुरशीति-समर्जित हैं। जो नैरयिक अनेक-चतुरशीतिक- तथा अन्य जघन्यतः एक-, दो-, तीन-, उत्कर्षतः त्र्यशीतिक-प्रवेशनक से प्रवेश करते हैं, वे नैरयिक अनेक-चतुरशीति- और एक-नोचतुरशीति-समर्जित हैं। इस अपेक्षा से यह कहा जा रहा है यावत् (अनेक-चतुरशीति- और एक-नोचतुरशीति-) समर्जित भी हैं। इस प्रकार यावत् स्तनितकुमार (वक्तव्य हैं)। पृथ्वीकायिक अंतिम दो विकल्पों की भांति (वक्तव्य हैं), इतना विशेष है–चतुरशीतिक अभिलाप्य है। इस प्रकार यावत् वनस्पतिकायिक (वक्तव्य हैं)। द्वीन्द्रिय यावत् यावत् वैमानिक नैरयिकों की भांति (वक्तव्य हैं)।

शतक २४

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७६४	२९३	९	की भांति।	की भांति, लेश्या–सनत्कुमार-, माहेन्द्र- और ब्रह्मलोक-देवों में एक पद्म-लेश्या, शेष देवों में एक शुक्ल- लेश्या। वेद–वे स्त्री-वेद वाले नहीं होते, पुरुष-वेद वाले होते हैं, नपुंसक-वेद वाले नहीं होते। आयुष्य और अनुबन्ध स्थिति-पद (पण्णवणा, पद ४) की भांति (वक्तव्य हैं)। शेष ईशान-देव की भांति तथा कायसंवेध यथोचित ज्ञातव्य हैं।
७६७	३०३	२४-४८	पृथक्त्व-वर्ष-अधिक-दो-सागरोपम तथा तीसरे और छट्ठे गमक में पूर्व-कोटि-अधिक-सात-सागरोपम, सातवें और आठवें गमक में पृथक्त्व-वर्ष-अधिक सात-सागरोपम, नवें गमक में कोटि-पूर्व-अधिक-सात-सागरोपम, उत्कृष्टतः सनत्कुमार की उत्कृष्ट स्थिति को चतुर्गुणित करने पर अट्ठाईस सागरोपम होती है, तथा मनुष्य के उत्कृष्ट काल का चतुर्गुणित करने पर पहले, तीसरे, चौथे, छट्ठे, सातवें और नवमें गमक में चार कोटि-पूर्व, दूसरे, पांचवें और आठवें गमक में चार-पृथक्त्व-वर्ष-और-अधिक जोड़ना चाहिए, इतना काल लगता है इतने काल तक गति-आगति करता है।) माहेन्द्र-देवलोक (देवों की मनुष्य के रूप में उत्पत्ति का कायसंवेध) उससे (सनत्कुमार की स्थिति से) कुछ अधिक होने से कायसंवेध के काल में जघन्य काल में दो सागरोपम से कुछ अधिक और सात सागरोपम से कुछ अधिक सहित पूर्ववत् बतलाना चाहिए तथा उत्कृष्ट काल में चतुर्गुणित करने पर अट्ठाईस सागरोपम से कुछ अधिक अथवा आठ-सागरोपम-से-कुछ-अधिक-सहित पूर्ववत् बतलाना चाहिए, ब्रह्मदेव-लोक के (देवों की मनुष्य के रूप में उत्पत्ति का कायसंवेध) जघन्य काल में सात-सागरोपम-अथवा-दस-सागरोपम-सहित पूर्ववत् बतलाना चाहिए तथा उत्कृष्ट काल में चालीस-सागरोपम-(अथवा अट्ठाईस- सागरोपम)-सहित पूर्ववत् बतलाना चाहिए, लान्तक-देवलोक के (देवों की मनुष्य के रूप में उत्पत्ति का कायसंवेध) (जघन्य काल में दस-सागरोपम अथवा चौदह-सागरोपम सहित पूर्ववत् बतलाना चाहिए तथा उत्कृष्ट काल में) छप्पन सागरोपम-(अथवा-चालीस-सागरोपम-सहित पूर्ववत् बतलाना चाहिए), महाशुक्र-देवलोक के (देवों की मनुष्य के रूप में उत्पत्ति का कायसंवेध) (जघन्य काल चौदह-सागरोपम-अथवा-सत्रह-सागरोपम-सहित पूर्ववत् बतलाना चाहिए, उत्कृष्ट काल) अड़सठ-सागरोपम-(अथवा छप्पन-सागरोपम-सहित पूर्ववत् बतलाना चाहिए), सहस्रार-देवलोक के (देवों की मनुष्य के रूप में उत्पत्ति का कायसंवेध जघन्यकाल में सत्रह- अथवा अठारह-सागरोपम-सहित पूर्ववत् बतलाना चाहिए, उत्कृष्ट काल) बहत्तर-सागरोपम- -(अथवा-अड़सठ-सागरोपम-सहित पूर्ववत् बतलाना चाहिए), यह उत्कृष्टतः स्थिति बतलाई गई। जघन्य स्थिति भी चतुर्गुणित करके वक्तव्य है। इसी प्रकार यावत् ईशानदेव की वक्तव्यता।	पृथक्त्व-वर्ष-अधिक-दो-सागरोपम, तीसरे और छट्ठे गमकों में कोटि-पूर्व-अधिक-सात-सागरोपम, सातवें और आठवें गमकों में पृथक्त्व-वर्ष-अधिक-सात-सागरोपम, नवें गमक में कोटि-पूर्व-अधिक-सात-सागरोपम, उत्कर्षतः सनत्कुमार की उत्कृष्ट स्थिति को चतुर्गुणित करने पर अट्ठाईस सागरोपम होती है, (मनुष्य के उत्कृष्ट काल का चतुर्गुणित करने पर पहले, तीसरे, चौथे, छट्ठे, सातवें और नवें गमकों में चार कोटि-पूर्व, दूसरे, पांचवें और आठवें गमकों में चार-पृथक्त्व-वर्ष-और-अधिक जोड़ना चाहिए, इतना काल लगता हैं, इतने काल तक गति-आगति करता है।) माहेन्द्र-देवलोक (के देवों की मनुष्य के रूप में उत्पत्ति का कायसंवेध) उससे (सनत्कुमार की स्थिति से) कुछ अधिक होने से कायसंवेध के काल में जघन्य काल में दो-सागरोपम-से-कुछ-अधिक और सात-सागरोपम-से-कुछ-अधिक-सहित पूर्ववत् (बतलाना चाहिए) तथा उत्कृष्ट काल में चतुर्गुणित करने पर अट्ठाईस-सागरोपम-से-कुछ-अधिक- अथवा आठ-सागरोपम-से-कुछ-अधिक-सहित पूर्ववत् (बतलाना चाहिए), ब्रह्म-देवलोक के (देवों की मनुष्य के रूप में उत्पत्ति का कायसंवेध) जघन्य काल में सात-सागरोपम-अथवा दस-सागरोपम-सहित पूर्ववत् (बतलाना चाहिए) तथा उत्कृष्ट काल में चालीस-सागरोपम- (अथवा अट्ठाईस-सागरोपम)-सहित पूर्ववत् (बतलाना चाहिए), लान्तक-देवलोक के (देवों की मनुष्य के रूप में उत्पत्ति का कायसंवेध) (जघन्य काल में दस-सागरोपम- अथवा चौदह-सागरोपम-सहित पूर्ववत् (बतलाना चाहिए) तथा उत्कृष्ट काल में) छप्पन-सागरोपम- (अथवा चालीस-सागरोपम-सहित पूर्ववत् बतलाना चाहिए), महाशुक्र-देवलोक के (देवों की मनुष्य के रूप में उत्पत्ति का कायसंवेध) (जघन्य काल में चौदह-सागरोपम- अथवा सत्रह-सागरोपम-सहित पूर्ववत् बतलाना चाहिए। उत्कृष्ट काल में) अड़सठ-सागरोपम- (अथवा छप्पन-सागरोपम-सहित पूर्ववत् बतलाना चाहिए), सहस्रार-देवलोक के (देवों की मनुष्य के रूप में उत्पत्ति का कायसंवेध जघन्य काल में सत्रह- अथवा अठारह-सागरोपम-सहित पूर्ववत् बतलाना चाहिए, उत्कृष्ट काल में) बहत्तर-सागरोपम- (अथवा अड़सठ-सागरोपम-सहित पूर्ववत् बतलाना चाहिए), यह उत्कर्षतः स्थिति बतलाई गई। जघन्य स्थिति भी चतुर्गुणित करके (वक्तव्य है)।
७७६	३४२	१-७	३४२. यदि संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक सौधर्म-देव में उपपन्न होते हैं? जिस प्रकार संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव के असुरकुमार-देव में उपपद्यमान की भांति नव गमक (भ. २४/१३१,१३२,१३३) वैसे ही नौ गमक हैं. केवल इतना विशेष है–स्थिति और कायसंवेध यथोचित ज्ञातव्य हैं। जब अपनी जघन्य काल की स्थिति उत्पन्न पंचेन्द्रिय-तिर्यञ्च-यौगलिक सौधर्म-देव के रूप में उपपन्न होता है तब तीनों ही गमकों (चौथे, पांचवें और छट्ठे) में जीव सम्यग्-दृष्टि भी होता है, मिथ्या-दृष्टि भी होता है, सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि नहीं होता।	३४२. यदि संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञि-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव सौधर्म-देव में उपपन्न होते हैं०? असुरकुमारों में उपपद्यमान संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञि-तिर्यग्योनिक-जीव के नव गमक जिस प्रकार (बतलाए गए हैं), उसी प्रकार (भ. २४/१३१,१३२,१३३) नौ ही गमक (वक्तव्य हैं), इतना विशेष है–स्थिति और कायसंवेध यथोचित ज्ञातव्य हैं। जब अपनी जघन्य काल की स्थिति में उत्पन्न पंचेन्द्रिय-तिर्यञ्च-यौगलिक सौधर्म-देव के रूप में उपपन्न होता है तब तीनों ही गमकों (चौथे, पांचवें और छट्ठे) में जीव सम्यग्-दृष्टि भी होता है, मिथ्या-दृष्टि भी होता है, सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि नहीं होता। (सम्यग्-दृष्टि की अपेक्षा) दो ज्ञान नियमतः और (मिथ्या-दृष्टि की अपेक्षा) दो अज्ञान नियमतः होते हैं। शेष पूर्ववत्।
७७६	३४३	१-२	३४३. यदि मनुष्यों से सौधर्म-देव में उपपन्न होते हैं? भेद ज्योतिष्क-देव में, (भ. २४/३३१) उपपद्यमान की भांति वक्तव्य हैं यावत्–	३४३. यदि मनुष्यों से सौधर्म-देव में उपपन्न होते हैं०? भेद ज्योतिष्क-देवों में उपपद्यमान (भ. २४/३३१) की भांति (वक्तव्य है) यावत्–

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७७६	३४४	१-८	३४४. भंते! असंख्यात वर्ष की आयु वाला संज्ञी-मनुष्य, जो सौधर्म-देव के रूप में उपपन्न होने योग्य है? इसी प्रकार जैसे असंख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक- -जीव के सौधर्म-देव में उपपद्यमान बतलाये गये हैं (भ. २४/३३६-३४१), वही सात गमक यहां वक्तव्य है, केवल इतना विशेष है–पहले दो गमक (प्रथम और द्वितीय) में अवगाहना–जघन्यतः एक गव्यूत, उत्कृष्टतः तीन गव्यूत। तीसरे गमक में जघन्यतः तीन गव्यूत, उत्कृष्टतः भी तीन गव्यूत। चौथे गमक में जघन्यतः एक गव्यूत, उत्कृष्टतः भी एक गव्यूत। अन्तिम तीन गमकों (सातवें, आठवें और नवें) में जघन्यतः तीन गव्यूत, उत्कृष्टतः भी तीन गव्यूत। शेष निरवशेष पूर्ववत्।	३४४. भंते! असंख्यात वर्ष की आयु वाला संज्ञि-मनुष्य, जो सौधर्म-कल्प में देव के रूप में उपपन्न होने योग्य है०? इस प्रकार सौधर्म-कल्प में देव-रूप में उपपद्यमान (भ. २४/३३६-३४१) असंख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञि-पञ्चेन्द्रिय--तिर्यग्योनिक-जीव के जैसे सात गमक (बतलाये गये हैं), वैसे ही सात गमक यहां (वक्तव्य हैं), इतना विशेष है–पहले दो गमकों (प्रथम और द्वितीय) में अवगाहना–जघन्यतः एक गव्यूत, उत्कर्षतः तीन गव्यूत। तीसरे गमक में जघन्यतः तीन गव्यूत, उत्कर्षतः भी तीन गव्यूत। चौथे गमक में जघन्यतः एक गव्यूत, उत्कर्षतः भी एक गव्यूत। अन्तिम तीन गमकों (सातवें, आठवें और नौवें) में जघन्यतः तीन गव्यूत, उत्कर्षतः भी तीन गव्यूत। शेष निरवशेष पूर्ववत्।
७७६	३४५	१-४	३४५. यदि संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-मनुष्यों से सौधर्म-देव के रूप में उपपन्न होता है? इसी प्रकार जैसे संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-मनुष्यों का असुरकुमार-देव में उपपद्यमान (भ. २४/१३९-१४१) की भांति नौ गमक यहां वक्तव्य हैं। केवल इतना विशेष है–सौधर्म-देव की स्थिति और कायसंवेध यथोचित ज्ञातव्य हैं। शेष पूर्ववत्।	३४५. यदि संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञि-मनुष्यों से सौधर्म-देव के रूप में उपपन्न होता है०? इस प्रकार असुरकुमारों में उपपद्यमान संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञि-मनुष्यों के नौ गमक (भ. २४/१३९-१४१) जिस प्रकार (बतलाए गए हैं), उसी प्रकार नौ गमक यहां वक्तव्य हैं, इतना विशेष है–सौधर्म-देव की स्थिति और कायसंवेध यथोचित ज्ञातव्य हैं। शेष पूर्ववत्।
७७७	३४७	१-५	असंख्यात वर्ष की आयुवाले संज्ञी-मनुष्य की (ईशान-देवलोक में) भी असंख्यात वर्ष की आयुवाले संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक (भ. २४/३३६-३४१) की भांति शेष वक्तव्यता। अवगाहना–जिन स्थानों में अवगाहना एक गव्यूत बतलाई गई, उन स्थानों में यहां (ईशान-देवलोक में) उपपन्न होने वाले मनुष्य-यौगलिक की अवगाहना कुछ अधिक एक गव्यूत वक्तव्य है। शेष पूर्ववत्।	(ईशान-देवलोक में उपपद्यमान) असंख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञि-मनुष्य की भी स्थिति उसी प्रकार (वक्तव्य है) जैसी (ईशान-देवलोक में उपपद्यमान) असंख्यात वर्ष की आयुवाले संज्ञि-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक (भ. २४/३३७-३४१) की (उक्त है)। अवगाहना भी–जिन स्थानों में (वहां) अवगाहना एक गव्यूत बतलाई गई, उन स्थानों में यहां (ईशान-देवलोक में) उपपन्न होने वाले मनुष्य-यौगलिक की अवगाहना कुछ- -अधिक-एक-गव्यूत (वक्तव्य है)। शेष (परिमाण आदि लब्धि) पूर्ववत्।
७७७	३४८	१-४	संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक और मनुष्य के सौधर्म--देवलोक में उपपद्यमान देवों की भांति ईशान-देवलोक में भी नौ गमक अविकल रूप में वक्तव्य हैं, केवल इतना विशेष है–ईशान-देव की स्थिति और कायसंवेध यथोचित ज्ञातव्य हैं।	संख्यात वर्ष की आयु वाले संज्ञि-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक और मनुष्य के सौधर्म-देवलोक में उपपद्यमान (संज्ञि-पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों (भ. २४/३४२), संज्ञि-मनुष्यों (भ. २४/३४५)) की भांति ईशान-देवलोक में भी नौ गमक निरवशेष (वक्तव्य हैं), इतना विशेष है–ईशान-देव की स्थिति और कायसंवेध यथोचित ज्ञातव्य हैं।
७६४	२९३	१	की भांति।	की भांति, लेश्या–सनत्कुमार-, माहेन्द्र- और ब्रह्मलोक-देवों में एक पद्म-लेश्या, शेष देवों में एक शुक्ल-लेश्या। वेद–वे स्त्री-वेद वाले नहीं होते, पुरुष-वेद वाले होते हैं, नपुंसक-वेद वाले नहीं होते। आयुष्य और अनुबंध स्थिति-पद (पण्णवणा, पद ४) की भांति (वक्तव्य हैं)। शेष ईशान-देव की भांति तथा कायसंवेध यथोचित ज्ञातव्य हैं।

शतक २५

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७९६	९९	२-४	तीसरे पद 'बहुवक्तव्यता' (सू. ३१) की भांति तथा 'औधिकपद' भी उसी प्रकार वक्तव्य है। सकायिक जीवों का अल्पबहुत्व उसी प्रकार (सू. ५०) औधिक वक्तव्य है।	तीसरे 'बहुवक्तव्यता (-पद)' के 'औधिकपद' (सू. ४०) की भांति वक्तव्य है। सकायिक-जीवों का अल्पबहुत्व उसी प्रकार औधिक (सू. ५०) की भांति वक्तव्य है।
७९८	११८	१-२	की वक्तव्यता वैसे ही यावत् अधःसप्तमी की। सौधर्म की भी इसी प्रकार यावत् ईषत्-प्राग्भारा-पृथ्वी की भी इसी प्रकार वक्तव्यता।	(उक्त है (भ. २४/११५-११७) वैसे ही रत्नप्रभा पृथ्वी वक्तव्य है)। इस प्रकार यावत् अधःसप्तमी (वक्तव्य है)। सौधर्म इसी प्रकार (वक्तव्य है)। इस प्रकार यावत् ईषत्-प्राग्भारा-पृथ्वी (वक्तव्य है)।
८००	१३४	५-७	इसी प्रकार नील-वर्ण-पर्यवों की अपेक्षा से वक्तव्य है, एकवचन और बहुवचन वाले दोनों दंडक वक्तव्य हैं। इस प्रकार यावत् रूक्ष-स्पर्श-पर्यवों की वक्तव्यता।	इस प्रकार यावत् (अनेक) वैमानिक (वक्तव्य हैं)। इस प्रकार नील-वर्ण-पर्यवों की अपेक्षा (वैमानिकों तक) प्रत्येक दण्डक एकवचन और बहुवचन दोनों में (वक्तव्य हैं)।
८०६	१७३	४-८	द्वि-प्रदेशी स्कन्ध की भांति है (भ. २५/१७१)। (एक) सप्त-प्रदेशी स्कन्ध (एक) त्रि-प्रदेशी स्कन्ध की भांति है (भ. २५/१७२) (एक) अष्ट-प्रदेशी स्कन्ध (एक) चतुः-प्रदेशी स्कन्ध की भांति है (भ. २५/१७३)। (एक) नव-प्रदेशी स्कन्ध (एक) परमाणु-पुद्गल की भांति है। (भ. २५/१७०)। (एक) दस-प्रदेशी स्कन्ध (एक) द्वि-प्रदेशी स्कन्ध की भांति है (भ. २५/१७१)।	द्विप्रदेशिक स्कन्ध (भ. २५/१७१) की भांति है। (एक) सप्तप्रदेशिक स्कन्ध (प्रदेश की अपेक्षा) (एक) त्रिप्रदेशिक स्कन्ध (भ. २५/१७२) की भांति है। (एक) अष्टप्रदेशिक स्कन्ध (प्रदेश की अपेक्षा) (एक) चतुःप्रदेशिक स्कन्ध (भ. २५/१७३) की भांति है। (एक) नवप्रदेशिक स्कन्ध (प्रदेश की अपेक्षा) (एक) परमाणु-पुद्गल (भ. २५/१७०) की भांति है। (एक) दस-प्रदेशिक स्कन्ध (प्रदेश की अपेक्षा) (एक) द्विप्रदेशिक स्कन्ध (भ. २५/१७१) की भांति है।

शतक २६

९२२सूत्र २ सर्वत्र अंतिम अंक के पूर्व स्थित दोनों विराम हटेंगे तथा अंत में एक विराम रहेगा। जैसे ॥१॥ (अशुद्ध) की जगह १। (शुद्ध) पढ़ें

शतक ४१

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
९४८	२४	३,४	राशियुग्म-कृतयुग्म-वानमन्तर, -ज्योतिषिक और- वैमानिक-देवों के विषय में वैसा ही बतलाना चाहिए जैसा राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीवों के विषय में बतलाया गया था। (भ. ४१/३-१४)	राशियुग्म-कृतयुग्म-वानमन्तर-देव, राशियुग्म-कृतयुग्म-ज्योतिषिक-देवों और राशियुग्म-कृतयुग्म-वैमानिक-देव (राशियुग्म-कृतयुग्म-) नैरयिक-जीवों (भ. ४१/३-१४) की भांति (वक्तव्य हैं)।

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
४४३	सं.गा.	२	१०. आत्मा।	१०. आत्मा ॥१॥
,,	१	३,८	यथा-परिग्रहीत	यथा-परिगृहीत
४४३	१	४	रह रहे थे	रहते थे।
,,	,,	५	सकुमाल हाथ पैर	सुकुमार-हाथ-पैर
४४३	१	८	रह रहा था	रहता था।
,,	२	३	वक्तव्यता यावत्	वक्तव्यता (भ. ११/१७८) यावत्
,,	,,	४	धर्म कहा, यावत्	धर्म का निरूपण किया यावत्
४४३	४	४	हुए विहरण करेंगे	हुए रहेंगे।
४४४	६	१	आकारवाला	आकार वाला
४४४	६	५	हुआ विहरण करूं	हुआ रहूं।
,,	,,	५	उपवास करूं।	उपवास करूं,
,,	,,	६	ब्रह्मचारी रहूं	ब्रह्मचारी रहूं,
,,	,,	१५	सहाय्य निरपेक्ष	सहाय्य-निरपेक्ष
४४४	६	१६	करने लगा।	करता हुआ रहता है।
४४५	११	५	करता हुआ। विहार कर रहा है।	करता हुआ रहता है।
,,	१२	३	वन्दन नमस्कार कर	वन्दन-नमस्कार कर
,,	,,	५	आशन	अशन
४४५	१२	६,७	विहार करेंगे	रहेंगे।
,,	१३	१	बोला— देवानुप्रिय	बोला—देवानुप्रिय
,,	,,	४	भोजन करता हुआ पाक्षिक	भोजन करता करता, पाक्षिक
४४५	१३	४,८	विहरण करूं	रहूं।
,,	,,	१०	प्रति जागरणा	प्रतिजागरणा
४४५	१३	११	विहार करो।	रहो।
४४५	१४	४	विहरण कर रहा है।	रहता है।
४४५	१४	७	विहरण करो	रहो
४४५	१४	८	पाक्षिक	(पाक्षिक
४४५	१४	९	हुए विहरण किया।	हुए) रहते हैं।
,,	१५	१	आकारवाला	आकार वाला
४४६	,,	१०	प्रदक्षिण	प्रदक्षिणा
,,	,,	११	वन्दन नमस्कार	वन्दन-नमस्कार
,,	१६	६	आएं वहां आकर	आएं, वहां आकर
,,	१८	४	कहा था— देवानुप्रिय	कहा था—देवानुप्रिय
४४६	१८	७	विहार करेंगे।	रहेंगे।
४४६	१८	१०	विहार किया।	रहे।
,,	१९	३	प्रियधर्मा है—दृढधर्मा है	प्रियधर्मा है, दृढ़धर्मा है
,,	१९	३	सुदृढ जागरिका	सुद्रष्टा-जागरिका
,,	२०	५	सुदृढ जागरिका	सुद्रष्टा-जागरिका
४४७	२१	२,१२,१४	सुदृढ-जागरिका	सुद्रष्टा-जागरिका
,,	२२	६	मन्द-अनुभव	मन्द-अनुभाव
,,	२२	६,७	तीव्र-अनुभव	तीव्र-अनुभाव
,,	२५	२	पूर्ववत	पूर्ववत्
४४८	२६	७	-नमस्कार किया	-नमस्कार किया,

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
,,	२७	७,८	छेदन करेगा, कर	छेदन करेगा, छेदन कर,
,,	,,	९	सौधर्म कल्प	सौधर्म-कल्प
४४८	२७	९	देवरूप	देव-रूप
,,	३०	६	—सकुमाल हाथ-पैर वाली	-सुकुमार-हाथ-पैर वाली
,,	,,	७	जानने वाली, यावत्	जानने वाली (भ. २/०४)
४४८	३०	८	विहार कर रही थी	रहती थी।
४४९	,,	१०,११	सुकुमार हाथ पैर वाली	सुकुमार-हाथ-पैर वाली
४४९	३०	१२	रह रही थी	रहती थी
,,	३१	१	उस काल उस समय	उस काल और उस समय
,,	३२	४-५	जैसे कोणिक राजा की वक्तव्यता (उववाई सू. ५६-५९) वैसे ही सम्पूर्ण वर्णन यावत्	जैसे कूणिक वैसे ही सब (वक्तव्य है) (ओवाइयं, सू. ५६-५९) यावत्
,,	३३	७	अनुगामिकता	आनुगामिकता
४४९	३४	१	हृष्ट-तुष्ट चित्तवाली,	हृष्ट-तुष्ट-चित्त वाली,
,,	,,	२	प्रीतिपूर्ण मनवाली परम-सौमनस्य-युक्त,	प्रीतिपूर्ण-मन वाली, परम-सौमनस्य-युक्त
,,	,,	३	आकारवाली	आकार वाली
४४९	३५	१,२	शीघ्र गति क्रिया की दक्षता से युक्त यावत्	शीघ्र-गति-क्रिया की दक्षता से युक्त (भ. ९/१४१) यावत्
,,	,,	२	तैयार कर शीघ्र उपस्थित करो।	तैयार कर शीघ्र उपस्थित करो,
,,	३७	२	अल्पभार बहुमूल्य	अल्पभार-बहुमूल्य
,,	,,	२	कुब्जा यावत्	कुब्जा (भ. ९/१४४) यावत्
,,	,,	४	निकली। निकल कर जहां बाहरी उपस्थानशाला	निकली, निकल कर जहां बाहरी उपस्थान-शाला
,,	३८	१	होकर	होकर,
४५०	३९	२	की वक्तव्यता यावत्	(की वक्तव्यता) (भ. ९/१४६) यावत्
,,	४१	२	वंदन- नमस्कार	वंदन-नमस्कार
,,	४२	१,४	हलका	हलके
,,	४६	१	करते है?	करते हैं?
४५१	५२	३	परिमित, और	परिमित और
,,	,,	५	उत्सर्पिणि	उत्सर्पिणी
,,	५३	१	जीवों को	जीवों का
,,	,,	२	अच्छा है।	अच्छा है,
,,	५४	१	जा रहा है— कुछ	जा रहा है—कुछ
,,	,,	३	अधार्मिक, (अधर्म का अनुगमन करने वाले)	अधार्मिक (अधर्म का अनुगमन करने वाले),
,,	,,	७	परितप्त करने के लिए,	परितप्त करने के लिए
,,	,,	८	वे स्वयं को,	वे स्वयं को
,,	,,	१२,१३, १५,१७, १८	जाग्रत	जागृत
,,	,,	१६	वे जीवों का जागृत	वे जीव जागृत
४५२	५६	१	जा रहा है— कुछ	जा रहा है—कुछ

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
४५२	,,	४	अच्छा हैं।	अच्छा है।
,,	,,	६	दुर्बल होने से स्वयं को,	दुर्बल होने से वे स्वयं को,
,,	,,	९	अच्छा हैं।	अच्छा है।
,,	,,	१३	अच्छा है।	अच्छा है,
,,	५८	३	ये जीव,	ये जीव
,,	,,	८	करते हैं।	करते हैं,
,,	,,	१०	को दुःखी ने करने	को दुःखी न करने
,,	५९	१	जीव क्या कर्म-बंध करता है?	जीव क्या बंध करता है?
४५३	६०	१	जीव कर्म का बंध करता है?	जीव क्या बंध करता है?
,,	६१-६३	१	जीव क्या कर्म का बन्ध करता है?	जीव क्या बंध करता है?
४५३	६६	१	था, यावत्	था (भ. १/४-१०) यावत्
४५३	६७	३	(३) के	(३) का
४५४	७१	१	होते हैं उस	होते हैं, उस
,,	७१	५	दो द्विप्रदेशी	दो द्विप्रदेशिक
,,	७२	४,६	परमाणु-पद्गल दूसरी	परमाणु-पुद्गल, दूसरी
४५५	७३	६	तीन-तीन प्रदेशी	तीन-त्रिप्रदेशिक
४५६	७५	५	छह- प्रदेशी	षट्प्रदेशिक
४५८	७७	४	परमाणु-पुद्गल दूसरी	परमाणु-पुद्गल, दूसरी
४६१	८०	१	असंख्येय प्रदेशी स्कंध,	असंख्येयप्रदेशिक स्कंध,
४६१	८०	१७	इसी प्रकार चतुष्क-संयोग यावत् असंखेय्य संयोग।	इस प्रकार चतुष्क-संयोग यावत् असंख्येय-संयोग।
४६१	८०	१८	संयोग। जैसे असंख्येय-प्रदेशी स्कन्ध की वक्तव्यता	संयोग। ये सभी (भंग) जैसे असंख्येय-प्रदेशिक स्कन्ध के बतलाए गए,
,,	,,	१९	स्कन्ध की वक्तव्यता,	स्कन्ध के भी बतलाने चाहिए,
४६२	८६	३	की वक्तव्यता	(बतलाए गए)
,,	,,	४	की वक्तव्यता।	बतलाने चाहिए।
४६३	९०	७	ज्योतिष्क,	ज्योतिष्क
४६४	९३	४	वैक्रिय-शरीर हैं, वहां	वैक्रिय-शरीर है वहां
,,	९५	६	सात	सातों ही
४६५	९९	३	विशेषाधिक है?	विशेषाधिक हैं?
४६५	९९	१०	-गुण है।	-गुणा है।
४६७	११३	३	जैसे सातवें	सातवें
४६७	११३	,,	वक्तव्यता, वैसे ही सातवें	भांति सातवां।
,,	,,	४	इनमें आठ स्पर्श	ये आठ स्पर्श वाले
४६७	११४	५	स्तनितकुमारों।	स्तनितकुमार
४६७	११५	४	इसी प्रकार यावत् चतुरिन्द्रिय की	इस प्रकार यावत् चतुरिन्द्रियों की
४६७	११५	६	वायुकायिक की भांति	वायुकायिकों की भांति
,,	,,	,,	-देव	-देवों
४६७	११७	३	प्रज्ञप्त हैं। इसी प्रकार	प्रज्ञप्त है। इस प्रकार
४६८	११७	१०	वर्ण रहित हैं।	वर्ण-रहित हैं।
,,	११८	७	अनागत-काल और सर्व-काल	अनागत-काल भी और सर्व-काल भी
४६८	१२०	शीर्षक	×	कर्मतः विभक्ति-पद
४६९	१२३	३३	दूर जाता है तब	दूर जाता है, तब

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
४७०	१२७	३	इसी प्रकार	उसी प्रकार
४७०	१२८	५	धन प्राप्त कर कार्य	धन प्राप्त कर, कार्य
,,	,,	६	(तिलक आदि) मंगल	(तिलक आदि), मंगल
४७१	१२८	२४	और गन्ध इन	और गन्ध–इन
४७३	१३६-३८	२	रहने वाले.....?	रहने वाले० ?
४७३	१३७	२	उपपन्न-पूर्व है	उपपन्न-पूर्व० ?
४७३	१४०	४	इसी प्रकार सब जीव	इस प्रकार समस्त जीव
,,	,,	,,	है। इसी प्रकार	हैं। इस प्रकार
,,	१४१	४	इसी प्रकार सब जीव भी	इस प्रकार समस्त जीव भी
४७३	१४१	७,८	वानमंतर, ज्योतिष्क, सौधर्म	वानमंतरों, ज्योतिष्कों, सौधर्मों
४७४	१४३	१	-विमानावासो में..... ?	-विमानावासो में० ?
,,	१४४	२	रूप में..... ?	रूप में० ?
,,	,,	४	सब जीवों	सभी जीव भी
४७४	१४५,४७,४०,५१	१	यह जीव सब जीवों	यह जीव समस्त जीवों
,,	१४६-४८,५०,५२	१	क्या सब जीव	क्या समस्त जीव
४७६	१६७	३	विज्ञाता सर्वज्ञ	विज्ञाता, सर्वज्ञ
४७७	१७३	३	अधः-सप्तमी	अधःसप्तमी
४७८	१७८	शीर्षक	पंचविध-देवों की स्थिति-पद	पंचविध-देवों की स्थिति का पद
४७९	१८८	४	-अनुत्तरोपपातिक वैमानिक-देवों	-अनुत्तरोपपातिक-वैमानिक-देवों
४७९	१९१	२	अन्तर्मुहूर्त उत्कृष्टतः	अन्तर्मुहूर्त, उत्कर्षतः
,,	,,	५	एक समय उत्कृष्टतः	एक समय, उत्कर्षतः
४८०	१९७-९८	सर्वत्र	उससे	उनसे
४८०	१९८	२	अच्युत- कल्प-,	अच्युत-कल्प-,
४८१	२०३	५-१२	आत्मा है,	-आत्मा है
४८१	२०४	४,६	भजनीय है।	भजनीय हैं।
४८१	२०४	८	है।	हैं।
४८२	,,	१७	भजनीय है।	भजनीय हैं।
,,	२०५	२	विशेषाधिक है ?	विशेषाधिक हैं ?
४८२	२०५	सर्वत्र	उससे	उनसे
,,	२०७	४	स्तनितकुमार देवों	स्तनितकुमार-देवों
,,	२०८	१,३,५	जीवों	-जीवों
४८२	२०८	५-६	वैमानिक देवों	वैमानिक-देवों
४८३	२१६	२,३	की भी	भी
४८४	२१७	२	जैसे सौधर्म-कल्प	इस प्रकार जैसे सौधर्म-कल्प (भ. १२/२१४)
४८४	२१९	१५	जा रहा है। यावत्	जा रहा है यावत्
४८७	२२२	१५	नो- आत्मा	नो-आत्मा

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
४८८	२२५	९,१०	स्कंध	(स्कंध)
४८८	२२५	९	जैसे–षट्-प्रदेशी स्कन्ध की वक्तव्यता, इसी प्रकार	जैसे–षट्प्रदेशिक (स्कन्ध) वैसे
			शतक १३	
४८९	सं.गा.	३	समुद्घात।	समुद्घात ॥१॥
,,	३	१४	होते हैं ? यावत्	होते हैं यावत्
४८९	,,	१५	होते ह ? यावत्	होते हैं यावत्
४९०	,,	२३	तीन उत्कृष्टतः	तीन, उत्कर्षतः
४९१	५	१७	अनाकार- उपयोग	अनाकार-उपयोग
,,	६	२	अनाकार- उपयोग	अनाकार-उपयोग
४९१	६	६	गमक की भांति	गमकों की भांति
४९२	८	१	बालुका प्रभा	वालुका-प्रभा
४९२	१२	५	संख्येय विस्तृत और असंख्येय विस्तृत	संख्येय-विस्तृत और असंख्येय-विस्तृत
४९३	१७	५	को रत्न-प्रभा	रत्नप्रभा
४९३	२१	२	होते होते	होते-होते
४९४	२६	३,४	असंख्येय विस्तृत	असंख्येय-विस्तृत
,,	२७	२	उपपन्न होते हैं ? यावत्	उपपन्न होते हैं यावत्
४९५	३३	३	सौधर्म-कल्प के तीन गमक	सौधर्म-कल्प के देवों के तीन गमक
,,	,,	७	सौधर्म की वक्तव्यता है,	सौधर्म-देवों की वक्तव्यता बतलाई गई है,
४९५	३३	७	ईशान के	ईशान-देवों के
,,	,,	८	गमकों	गमक
,,	,,	८	सनत्कुमार की	सनत्कुमार-देवों की
,,	,,	१०	सहस्रार-कल्प को	सहस्रार-कल्प के देवों की
४९६	३४	१०	की भी	भी
४९६	३६	८	इनकी वक्तव्यता नहीं है।	ये वक्तव्य नहीं हैं,
४९६	३५	४	असंख्येय विस्तृत	असंख्येय-विस्तृत
४९६	३६	२,४	अनुत्तरोपपातिक उपपन्न	अनुत्तरोपपातिक-देव उपपन्न
,,	,,	५	ग्रैवेयक विमानों	ग्रैवेयक-विमानों
,,	३८	३	हां गौतम !	हां, गौतम !
,,	,,	७	जा रहा है–यावत्	जा रहा है यावत्
४९७	४३	१०	षष्ठी तमा-पृथ्वी के पांच कम एक लाख नौ सौ पिचानवें	छट्ठी तमा-पृथ्वी के पांच कम एक लाख निन्यानवे हजार नौ सौ पिचानवें
४९८	४३	२६	अल्प द्युतिकतर	अल्पद्युतिकतर
,,	४४	३	अनिष्ट यावत्	अनिष्ट (भ. १/३५७) यावत्
,,	,,	,,	नैरयिकों	नैरयिक
४९८	४५,४६	३	हां गौतम	हां, गौतम
४९८	४५	५	महती है ? पृच्छा।	महती है–पृच्छा।
,,	४६	१	पृथ्वीकायिक यावत् वनस्पतिकायिक	पृथ्वीकायिक- यावत् वनस्पतिकायिक-
,,	४६	२	जीव हैं,	–जीव हैं,
४९८	४६	३	पृथ्वीकायिक यावत्	पृथ्वीकायिक- यावत्

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
४९८	४६	४	वनस्पतिकायिक जीव	वनस्पतिकायिक-जीव
४९८	४९	३	ब्रह्म-लोक-कल्प अरिष्ट-विमान-प्रस्तर के नीचे	ब्रह्म-लोक-कल्प में अरिष्ट-विमान-प्रस्तर के नीचे,
४९९	५०	३	मध्य है वहां	मध्य है, वहां
,,	५२	५	वह रूचक...........	यह पैरा पिछले पैर के साथ है।
,,	,,	७	सादि-सपर्यवसित है।	सादि-सपर्यवसित है,
,,	५३	३	संस्थान क्या है ?	उसका संस्थान क्या है ?
,,	,,	४	प्रवाहित है।	प्रवाहित है,
,,	,,	५	प्रदेश है।	प्रदेश वाली हैं,
,,	,,	६	असंख्येय प्रदेश हैं।	असंख्येय प्रदेश हैं,
,,	,,	७	-सपर्यवसित है।	-सपर्यवसित है,
,,	,,	९	इन्द्रा की भांति नैर्ऋति	इन्द्रा की भांति, नैर्ऋति
,,	५४	२	कितने प्रदेश हैं ?	उसके कितने प्रदेश हैं ?
,,	५४	२	प्रदेश वाली हैं ?	प्रदेश है ?
,,	,,	३	पर्यवसित है ? संस्थान क्या है ?	वह पर्यवसित है ? उसका संस्थान क्या है ?
,,	,,	४	प्रवाहित है।	प्रवाहित है,
,,	,,	५	नहीं होती लोक की	नहीं होती। लोक की
,,	,,	६	असंख्येय प्रदेश हैं।	असंख्येय प्रदेश हैं,
५००	५४	७	-सपर्यवसित है।	-सपर्यवसित है,
५००	५५	शीर्षक	×	लोक-पद
,,	५९	६	होता है। उपयोग	होता है। उपयोग
५०१	६१	शीर्षक	धर्मास्तिकाय आदि	धर्मास्तिकाय-आदि
५०१	६३	३,८	प्रदेशों की	प्रदेशों से भी (स्पर्शना) की
५०१	६३	८	अद्धासमय की भी वक्तव्यता	अद्धा समयों से भी (स्पर्शना) (की वक्तव्यता)
,,	६४	२	प्रदेशों की	प्रदेशों से भी (स्पर्शना) की
५०२	६६	३	प्रदेशों की	प्रदेशों से भी (स्पर्शना) की
५०२	६७	२-३	प्रदेशों की	प्रदेशों से भी (स्पर्शना) की
५०२	६७	६	इतना विशेष है– जघन्य-पद	इतना विशेष है–जघन्य-पद
,,	,,	८	जघन्य पद	जघन्य-पद
,,	,,	९	जघन्य-पद मे	जघन्य-पद में
५०३	७०	२	की वक्तव्यता वैसे	वैसे
,,	,,	,,	को निरवशेष	निरवशेष
,,	७१	४	प्रदेशों की	प्रदेशों से भी (स्पर्शना) की
,,	७१	६	अद्धा-समय से	अद्धा समयों से भी (स्पर्शना) (की वक्तव्यता)
५०४	७४	१२	अद्धा-समय के कितने प्रदेश अवगाढ़ हैं।	कितने अद्धा-समय अवगाढ़ हैं ?
५०६	८२	८	अनन्त,	अनन्त।
५०६	८३	७	अद्धासमय। यावत् कितने अद्धासमय	अद्धा-समय यावत् कितने अद्धा-समय

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
५०६	८४,८५	१	एक पृथ्वीकायिक जीव	-जीव
,,	,,	सर्वत्र	जीव	कितने पृथ्वीकायिक-जीव
५०७	८५	६	पृथ्वीकायिक जीवों	पृथ्वीकायिक-जीवों
,,	,,	६	वक्तव्यता,	वक्तव्यता
,,	,,	७	वनस्पतिकायिक जीव	वनस्पतिकायिक-जीव
,,	८७	१५	जा रहा है—यावत्	जा रहा है यावत्
,,	८८	शीर्षक	×	लोक-पद
,,	,,	१	सर्वलघु प्रज्ञप्त है ?	सर्व लघु (संक्षिप्त) प्रज्ञप्त है ?
५०८	९१	२	विशेषाधिक है ?	विशेषाधिक हैं ?
५०८	,,	३	असंख्येय गुण अधिक है।	असंख्येय-गुणा है।
५०८	९५	१	राजगृह नगर यावत् गौतम स्वामी	राजगृह (नगर) (भ. १/४-१०) यावत् (गौतम स्वामी)
,,	,,	३	असुरकुमारों	असुरकुमार
५०९	९६	१०	वहां सभा नहीं है यावत्	वहां सभा नहीं है (भ. २/१२१) यावत्
५०९	९८	२	मनुष्य लोक	मनुष्य-लोक
,,	,,	,,	औपकारिक लयन,	औपकारिक लयन (पीठिका),
,,	,,	३	प्रपात लयन,	प्रपात लयन हैं,
,,	,,	५	मोहित करते हैं।	मोहित करते हैं,
,,	१००	२	जनपद विहार करने लगे	जनपद-विहार करते हैं।
५०९	१०१	५	रह रहे थे	रहते थे।
,,	१०२	५	सुकुमाल हाथ-पैर वाली	सुकुमार-हाथ-पैर वाली
,,	,,	६	वर्णक। यावत् विहरण करने लगे।	वर्णक यावत् रहते हैं।
,,	,,	८	सुकुमाल हाथ-पैर वाला	सुकुमार-हाथ-पैर वाला
५१०	,,	१३	सुकुमाल हाथ-पैर	सुकुमार-हाथ-पैर
,,	,,	१४	सिन्धु सौवीर	सिन्धु-सौवीर
५१०	१०२	१८	समर्थ और	सामर्थ्य-युक्त
,,	,,	१९	जानने वाला यावत् (भ. ३/९४)	जानने वाला (भ. ३/९४) यावत्
५१०	१०२	२०	रह रहा था	रहता था।
,,	१०३	२	यावत् (भ. १२/६)	(भ. १२/६) यावत्
,,	१०५	६	विहरण करने लगे।	रहते हैं।
५११	१०७	२	इस प्रकार कहा— देवानुप्रियो!	इस प्रकार कहा—देवानुप्रियो!
५१२	१११	३	की वक्तव्यता वैसे ही	की (वक्तव्यता) (भ. ११/६१) वैसे ही
,,	,,	४	इष्ट जनों	इष्ट-जनों
५१२	१११	७	समर्थ और	सामर्थ्य-युक्त
,,	११४	१	वक्तव्यता,	(वक्तव्यता) (भ. ९/१८०,१८१),
,,	,,	२	वक्तव्य है यावत्	(वक्तव्य है)—
,,	,,	२	अभिनिष्क्रमण—अभिषेक	निष्क्रमण-अभिषेक
,,	११६	३	वक्तव्यता,	(वक्तव्यता) (भ.९/१८४-१८९),
,,	११७	२	वक्तव्यता	(वक्तव्यता) (भ. ९/१९०-१९२)
५१३	११७	१२	उत्तर पूर्व दिशा	उत्तर-पूर्व-दिशा
,,	११८	३	बार बार	बार-बार

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
५१३	११८	५	केशीराजा	केशी राजा
,,	११९	१	वक्तव्यता	(वक्तव्यता) (भ. ९/१५०-१५१)
५१३	१२०	६	अंतःपुर परिवार	अंतःपुर-परिवार
,,	,,	७	विचरण और	विचरण करते हुए और
,,	,,	१०	जानने वाला यावत्	जानने वाला (भ. २/९४) यावत्
५१३	१२०	११	करते हुए विहार करने लगा।	करता हुआ रहता है।
५१४	१२२	३	महाविदेह वास	महाविदेह क्षेत्र
५१५	१२६	१०	मन नहीं होता	मन नहीं होता
५१६	१३३	३	क्योंकि नैरयिक	क्योंकि नैरयिकों के
,,	१३५	३	गौतम! जो नैरयिक	गौतम! क्योंकि नैरयिकों के
५१८	१४९	शीर्षक	भावितात्म-विकिया-पद	भावितात्म-विक्रिया-पद
५१८	१४९	१	राजगृह नगर यावत् गौतम ने इस प्रकार कहा—	राजगृह (नगर) (भ. १/४-१०) यावत् (गौतम ने) इस प्रकार कहा—
५१९	१६२	१	(डुबकी लगा कर) उन्मज्जन	(डुबकी लगा कर), उन्मज्जन
			शतक १४	
५२१	सं.गा.	३	केवली।	केवली ॥१॥
,,	१	१	राजगृह नगर यावत् गौतम ने	राजगृह (नगर) (भ. १/४-१०) यावत् (गौतम ने)
५२१	२	१०-११	विहरण करता है	रहता है
५२२	८	१	-अनुपत्रक	-अनुपपन्नक-नैरयिक
५२३	१२	१	बंध करते हैं? पृच्छा।	बंध करते हैं—पृच्छा।
५२४	२०	६	वाणमंतर, ज्योतिष्क, वैमानिक	वानमंतरों, ज्योतिष्कों, वैमानिकों
५२५	२४	४	वाणमंतर, ज्योतिष्क, वैमानिक	वानमंतरों, ज्योतिष्कों, वैमानिकों
,,	२७	१	असुरकुमार देव	असुरकुमार-देव
५२६	३०	३	-उपपन्नक। जो	-उपपन्न। उनमें जो
,,	,,	४	सत्कार सम्मान	सत्कार-सम्मान
,,	,,	६	जाते हैं। जो	जाते हैं। उनमें जो
,,	३३	२	स्तनितकुमार	स्तनितकुमारों
,,	३५	४	वाणमंतर, ज्योतिष्क, वैमानिक	वानमंतरों, ज्योतिष्कों, वैमानिकों
,,	३८	२	समर्थ है। प्रहार	समर्थ है, प्रहार
५२६	३९	३	जाता है। पहले	जाता है, पहले
५२७	३९	५	दसवें शतक (भ.१०/२४-३०) में आत्म-ऋद्धि उद्देशक, वैसे चारों	दसवें शतक में आत्म-ऋद्धि-उद्देशक में जैसे (उक्त है) वैसे ही चारों
,,	,,	६	वक्तव्य हैं, यावत्	वक्तव्य हैं (भ. १०/२८-३८) यावत्
,,	,,	,,	वैमानिक-देवी का	वैमानिक-देवी (के बीचोंबीच
,,	,,	७	समर्थ है।	समर्थ है, शस्त्र से बिना प्रहार कर जाने में भी समर्थ है।)
५२७	४४	६	हां गौतम!	हां, गौतम!
५२८	५४	शीर्षक	अग्नि का अतिक्रमण-पद	अग्निकाय का अतिक्रमण-पद
५२९	५७	५,७	जो	उनमें जो
५२९	५७	५	वक्तव्य है, यावत्	(वक्तव्य है) यावत्

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
५२९	५७	१२	स्तनितकुमार की वक्तव्यता।	स्तनितकुमारों की वक्तव्यता।
५२९	५७	१२	एकेन्द्रिय नैरयिक	एकेन्द्रिय नैरयिकों
५२९	५८	२	जैसे—असुरकुमार वैसे द्वीन्द्रिय की	जैसे असुरकुमार वैसे द्वीन्द्रिय
५३०	६३	१	पृथ्वीकायिक छह	पृथ्वीकायिक-जीव छह
,,	,,	२	पुरुषकार, पराक्रम	पुरुषकार-पराक्रम
,,	,,	२	वनस्पतिकायिक	वनस्पतिकायिक-जीवों
,,	६४	१	द्वीन्द्रिय सात	द्वीन्द्रिय-जीव सात
,,	,,	२	एकेन्द्रिय	एकेन्द्रियों
,,	,,	,,	है	हैं
,,	६५,६६	१	जीव	-जीव
,,	६५	२	द्वीन्द्रिय	द्वीन्द्रियों
,,	६४,६६	२	है	हैं
,,	६६	२	त्रीन्द्रिय	त्रीन्द्रियों
,,	६७	१	पंचेन्द्रिय-तिर्यक्योनिक जीव	पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव
,,	६७	३	असुरकुमार	असुरकुमारों
५३१	६८,६९	२	तिर्यक् पर्वत अथवा तिर्यक् भित्ति	तिर्यक्-पर्वत अथवा तिर्यक्-भित्ति
५३१	७१	१	राजगृह नगर यावत् गौतम ने	राजगृह (नगर) (भ. १/४-१०) यावत् (गौतम ने)
,,	,,	४	करते हैं। शरीर-पोषक	करते हैं, शरीर-पोषक
,,	,,	५	होता है। योनि पौद्गलिक है। स्थिति का	होता है, उनकी योनि पौद्गलिक है, उनकी स्थिति का
,,	,,	६	नैरयिक जीव	नैरयिक-जीव
,,	७२	१	अवीचि द्रव्यों	अवीचि-द्रव्यों
,,	७३	१-६	द्रव्यों	-द्रव्यों
,,	७४	१,२	चाहते हैं, वह यह कैसे करते हैं?	चाहता है, तब वह यह कैसे करता है?
५३१	७४	३	तब वे	तब वह
,,	,,	३	चक्र—नाभि के प्रतिरूप का निर्माण करते	नेमि (चक्र के घेरे) के प्रतिरूप की विकुर्वणा करते
५३२	,,	५	उस चक्र नाभि प्रतिरूप	उस नेमि-प्रतिरूप
,,	७४	५	बहुसम रमणीय भूमि भाग	बहुसम-रमणीय भूमि-भाग
,,	,,	६	यावत् मणि	(रायपसेणियं सूत्र २४-३१) यावत् मणियों
५३२	७४	६	चक्र प्रतिरूप के बहुमध्य-	नेमि-प्रतिरूप का बहुमध्य-
,,	,,	७	प्रासादावतंसक का निर्माण करता है—	प्रासादावतंसक की विकुर्वणा करता है—
५३२	७४	१०	हैं यावत्	हैं (रायपसेणियं सूत्र ३४) यावत्
५३२	७४	११	मणि का स्पर्श। मणिपीठिका	मणियों का स्पर्श। उसकी मणिपीठिका
५३२	७४	१२	वैमानिक की भांति	वैमानिकों की मणिपीठिका की भांति
,,	,,	१३	का निर्माण करता है,	की विकुर्वणा करता है,
,,	,,	१३	वर्णन यावत्	वर्णन (रायपसेणियं, सूत्र २४५) यावत्
५३२	७४	१४	आहत नाट्यों	आहत-नाट्यों
५३२	७४	१६	विहरण करता है।	रहता है।

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
५३२	७५	१	चाहते हैं, वह	चाहता है, वह
५३२	७५	१,२	करते हैं?	करता है?
५३२	७५	३,४	सिंहासन का निर्माण करता है,	सिंहासन की विकुर्वणा करता है,
५३२	७५	८	आहत नाट्यों यावत् विहरण करता है	आहत-नाट्यों यावत् रहता है।
५३२	७५	१३	विहरण करता है।	रहता है।
,,	७७	१	राजगृह नगर यावत्	राजगृह (नगर) (भ. १/४-८) यावत्
५३३	८१	५	दस-प्रदेशी।	दशप्रदेशिक (स्कंध)।
,,	,,	१३	-प्रदेशावगाढ	-प्रदेशावगाढ पुद्गल।
५३४	,,	१५	असंख्येय-प्रदेशावगाढ की	असंख्येय-प्रदेशावगाढ पुद्गल
,,	,,	२२	भव-तुल्य है।	भव-तुल्य है?
५३४	८१	२४	तिर्यग्योनिक की	तिर्यग्योनिक
,,	,,	,,	मनुष्य की	मनुष्य
५३४	८१	२९ दोनों बार	-कृष्ण की	-कृष्ण
,,	,,	४५	परिमंडल संस्थान	परिमंडल-संस्थान
५३५	८५	२	तरुण यावत्	तरुण (भ. १४/३) यावत्
,,	,,	४	अभी अभी	अभी-अभी
५३६	८८	४	श्रमण निर्ग्रंथ	श्रमण-निर्ग्रंथ
,,	९०	शीर्षक	अबाधा-अतर-पद	अबाधा-अंतर-पद
,,	९४	१	सौधर्म-ईशान कल्प	सौधर्म-ईशान-कल्प
,,	९५	१	सौधर्म-ईशान और	सौधर्म-ईशान- और
,,	९६	१	सनत्कुमार-माहेन्द्र और	सनत्कुमार-माहेन्द्र- और
,,	९७	१	ब्रह्मलोक और	ब्रह्मलोक- और
,,	९८	१	लांतक और	लांतक- और
,,	,,	३	आनत-प्राणत और	आनत-प्राणत- और
५३७	१०३	१	शालयष्टिक-वृक्ष	शालयष्टिका-शालवृक्ष की टहनी
,,	१०५	१	उदुम्बरयष्टिका-वृक्ष	उदुम्बरयष्टिका—उदुम्बरवृक्ष की टहनी
५३८	१०९	२२	रुद्राक्ष आभरण,	रुद्राक्ष-आभरण,
,,	,,	२८,२९	अम्मड़	अम्मड
५४०	१११	१०,१२	अम्मड़	अम्मड
५४१	११६	२	करता है।	करता है,
,,	११६	३	करता है। कूट-पीस कर	करता है, कूट-पीस कर
,,	,,	,,	करता है। उसे	करता है,
५४२	१२३	३	हां गौतम!	हां, गौतम!
५४२	१२७	३	स्तनितकुमार की	स्तनितकुमारों के (पुद्गल)
,,	१२८	१,२	पृथ्वीकायिक जीवों	पृथ्वीकायिक-जीवों
५४२	१२८	३	मनुष्यों की	मनुष्यों के (पुद्गल)
,,	,,	,,	वैमानिकों की	वैमानिकों के (पुद्गल)
,,	,,	३	असुरकुमार की	असुरकुमारों के (पुद्गल) की
,,	१२९	शीर्षक	×	इष्ट-अनिष्ट-आदि-पुद्गल-पद
५४२	१२९	२	की भणिति है,	भणित हैं,
,,	,,	३	पुद्गलों की	पुद्गल भी

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
५४३	१३६	३,५,७	देवों	-देवों
५४४	,,	२१	आनत, प्राणत, आरण और	आनत-, प्राणत-, आरण- और

शतक १५

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
५४७	१	५	'आयुष्मन्'!	'आयुष्मन्!
,,	,,	६	अनर्थ है।	अनर्थ है।'
५४८	१०	२	संभ्रम- रहित	संभ्रम-रहित
,,	१३	१	सुनकर अवधारण कर	सुनकर, अवधारण कर
५४९	१४	६	सुकुमार हाथ-पैर वाली	सुकुमार-हाथ-पैर वाली
,,	१५	३	ब्राह्मण' रहता था—वह समृद्ध यावत्	ब्राह्मण रहता था—वह समृद्ध (भ. २/१४) यावत्
,,	,,	४	ऋग्वेद यावत् अनेक ब्राह्मण और	ऋग्वेद (भ. २/२४) यावत् अनेक ब्राह्मण- और
,,	१६	२	(भिक्षुत्व वृत्ति)	(भिक्षुत्व-वृत्ति)
,,	,,	४	गोबहुल ब्राह्मण का गोशाला	गोबहुल ब्राह्मण की गोशाला
,,	१७	१	सुकुमार हाथ-पैर	सुकुमार-हाथ-पैर
५५०-५६४	सर्वत्र	सर्वत्र	उच्च, नीच तथा मध्यम कुलों	उच्च-, नीच- तथा मध्यम-कुलों
५५०-५७१	सर्वत्र	सर्वत्र	धारा निपातवृष्टि,	धारा-निपात-वृष्टि,
५५१	२६	४	बजी,	बजीं
५५१-५७१	सर्वत्र	सर्वत्र	'अहो! दानम् अहो! दानम्'	'अहो! दानम्, अहो! दानम्'
५५२	३३	१	द्रव्यशुद्ध, दाताशुद्ध	द्रव्य-शुद्ध, दाता-शुद्ध,
५५३	४०	२	परीत किया, उस	परीत किया। उस
५५३	४२	१	अवधारण कर,	अवधारण कर
५५४	४५	२	सन्निवेश वर्णक	सन्निवेश-वर्णक
,,	४९	१	प्रतिग्राहक शुद्ध, त्रिविध	प्रतिग्राहक शुद्ध—इस प्रकार त्रिविध
५५४	५०	७	रत्नों की धारा	रत्नों की धारा-
,,	५७	१	शरद् काल समय	शरद्-काल-समय
५५६	५९	१	तिल पुष्प	तिल-पुष्प
,,	६०	३	का उपवास तपःकर्म में	के उपवास) रूप तपःकर्म के साथ
,,	,,	४	जूंए उसकी जटाओं से निकल	जूंएं चारों ओर से सम्पूर्णतया निकल
,,	,,	५	गिर रही थी	गिर रही थीं
,,	,,	५	वह उन जूंओं को	वह उन गिरी हुई, गिरी हुई जूंओं को
,,	,,	६	पुनः सिर में	-पुनः वहीं-वहीं (सिर आदि में)
५५७	६८	२	देखकर मेरे	देखकर तुम मेरे
,,	७०	२	एक चुल्लु पानी	एक चुल्लु-भर पानी
५५८	७३	१४	वनस्पतिकायिक जीवों	वनस्पतिकायिक-जीवों
,,	,,	,,	वनस्पतिकायिक जीव	वनस्पतिकायिक-जीव
५५८	७५	४	हो गया।	प्रज्ञप्त है।
५५९	७६	१	कुल्माष पिण्डिका	कुल्माष-पिण्डिका
,,	,,	,,	एक चुल्लु भर पानी	एक चुल्लु-भर पानी
,,	,,	२	बेले बेले	बेले-बेले

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
५५९	७६	२	आतापन भूमि	आतापन-भूमि
,,	७९	३	जिन-प्रलापी, यावत्	जिन-प्रलापी यावत्
,,	,,	८	जिन-प्रलापी है, यावत्	जिन-प्रलापी है यावत्
५६०	७९	९	जिन-प्रलापी हैं, यावत्	जिन-प्रलापी हैं यावत्
५६१	८७	८	अवभास वाला, यावत्	अवभास वाला यावत्
,,	,,	१२	कुंभकारापण था-	कुंभकारापण था,
,,	९८	१०	अनन्त-गुण	अनन्त-गुणा
५६४	,,	१२	अनन्त-गुण	अनन्त-गुणा
,,	,,	१४	-गुण	-गुणा
,,	९९	१	श्रमण निर्ग्रन्थों	श्रमण-निर्ग्रन्थों
,,	,,	२	प्रति-प्रेरणा	प्रतिप्रेरणा
५६४	१००	६	प्रति-प्रेरणा	प्रतिप्रेरणा
,,	,,	७	प्रत्युपचार तिरस्कार	प्रत्युपचार-तिरस्कार
५६५	१०१	१६	करते हैं,	करते हैं
,,	,,	१७	प्रवृत्त हुई है,	प्रवृत्त हुई है
५६५	१०१	२१	इस प्रकार	इसी प्रकार
,,	,,	२३	१. सूक्ष्म बोन्दि कलेवर २. बादर बोन्दि कलेवर	१. सूक्ष्म-बोन्दि-कलेवर २. बादर-बोन्दि-कलेवर
,,	,,	२४	जो सूक्ष्म बोन्दि कलेवर	जो सूक्ष्म-बोन्दि-कलेवर
,,	,,	२४	जो बादर बोन्दि कलेवर	जो बादर-बोन्दि-कलेवर
,,	,,	४०	मानस में	मानुषोत्तर
५६६	,,	५२	सुकुमाल	सुकुमार
,,	,,	७५,७८	गौतम पुत्र	गौतम-पुत्र
५६७	,,	८२	'पोट्ट परिहार'! में	'पोट्ट परिहार' में
५६७	१०३	२	आगया।	आ गया,
,,	१०४	शीर्षक	×	गोशाल द्वारा सर्वानुभूति का भस्म-राशि-करण-पद
५६८	१०५	शीर्षक	गोशाल द्वारा सर्वानुभूति का भस्म-राशि-करण-पद	×
,,	१०७	११	गोशाल! तुम वही हो, वही तुम्हारी छाया है, तुम अन्य नहीं हो।	गोशाल! वही तुम्हारी छाया है, अन्य नहीं है।
५६९	११३	२	तपःतेज से अनाविष्ट होकर	तप से, तेज से पराभूत होकर
,,	११३	३	छद्मस्थ-अवस्था में	छद्मस्थ-अवस्था में ही
५७०	११५	५	है। उनमें	है? उनमें
,,	११७	१	श्रमण निर्ग्रन्थों ने	श्रमण-निर्ग्रन्थों ने
,,	११८	५	हो गया। क्रोध	हो गया, क्रोध
,,	,,	५,६	किञ्चित् आबाधा,	किञ्चित् आबाधा
,,	,,	६	में, अथवा	में अथवा
,,	११९	४	आ गया।	आ गया,
५७१	१२०	१०	विहरण कर रहा था	रहता था
५७१	१२१	८	पाप कर्म	पाप-कर्म
,,	,,	१३	आर्यो! मंखलिपुत्र	आर्यो! मंखलिपुत्र
,,	,,	१४	पाप कर्म	पाप-कर्म

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
५७२	१२३	२	स्थाल पानक २. त्वचा पानक	स्थाल-पानक २. त्वचा-पानक
,,	,,	३	४. शुद्ध पानक	शुद्ध-पानक।
५७२	१२५	३	चूसे, अथवा	चूसे अथवा
,,	,,	४	चूसे किन्तु	चूसे, किन्तु
,,	१२६	२	फली उड़द की फली, अथवा	फली, उड़द की फली अथवा
५७२	१२८	३	-आजीवक उपासक	आजीविक-उपासक
,,	,,	१५	आतञ्जल जल से	आतञ्चन-उदक से
५७३	१३२	२	करते हुए इस प्रकार	करते हुए तुम्हें इस प्रकार
५७३	,,	७	अयंपुल! का यह	अयंपुल! क्या यह
,,	,,	१४	आतञ्चन-जल	आतञ्चन-उदक
,,	,,	२५	नहीं था। यावत्	नहीं था यावत्
,,	१४२	६	नहीं था। यावत्	नहीं था यावत्
,,	,,	७	श्रमण घातक	श्रमण-घातक
,,	१४५	३	आए, यावत्	आए यावत्
५७७	१४७	२	विनीत। मालुकाकच्छ	विनीत मालुकाकच्छ
,,	१४७, १४९	३	तपः-कर्म में	तपः-कर्म के साथ
,,	१४९	२	प्रकृति भद्र	प्रकृति से भद्र
५७८	१५३	शीर्षक	×	सिंह द्वारा रेवती के घर से भैषज्य- -आनयन-पद
५७९	१५५	३	रखा हुआ, मार्जारकृत	रखा हुआ मार्जारकृत
,,	,,	४	कुक्कुटमांस अर्थात् चौपतिया	कुक्कुट-मांस—चौपतिया
,,	१५८	१	अवधारणकर	अवधारण कर
,,	,,	१०	है। गृहस्वामिनी रेवती ने	है। गृहस्वामिनी रेवती ने, गृहस्वामिनी रेवती ने
५८०	१६४	१	कहा— देवानुप्रिय	कहा—देवानुप्रिय
,,	,,	१२	महाविदेह वास	महाविदेह क्षेत्र
,,	१६५	१	अनगार-प्रकृति	अनगार प्रकृति
५८१	१६५	१३	महाविदेह वास	महाविदेह क्षेत्र
,,	१६६	४	अच्युत कल्प में देवरूप	अच्युत-कल्प में देव-रूप
,,	१६७	५	रात दिन	रात-दिन
,,	१७१	१,५	दो देव जैसे—	दो देव, जैसे—
५८३	१७६	२	समृद्ध– वर्णक।	समृद्ध-वर्णक।
५८४	१८५	१६	महाविदेह वास	महाविदेह क्षेत्र
५८५	१८६	२०	दूसरी बार भी धूमप्रभा-पृथ्वी	दूसरी बार भी पांचवीं धूमप्रभा-पृथ्वी
५८५	१८६	२२	उरपरिसर्प	उरः परिसर्प
५८६	,,	४६	संज्ञी जीव	संज्ञि-जीव
,,	,,	४७	असंज्ञी जीव	असंज्ञि-जीव
,,	,,	४९	पल्योपम के असंख्येय-भाग	पल्योपम-के-असंख्येय-भाग
,,	,,	६०	उरपरिसर्प	उरःपरिसर्प
,,	,,	६१	कछुआ यावत्	कछुआ (पण्णवणा, १/५५) यावत्
,,	,,	,,	तक पण्णवणा १/५५ हैं, उनमें	तक हैं, उनमें
,,	,,	७२,७७	जीवों	-जीवों

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
५८६	१८६	७७	उपचित यावत्	उपचित (पण्णवणा, १/५०) यावत्
५८७	,,	७८	तक (पण्णवणा, १/५१) हैं,	तक हैं,
५८७	१८६	८१, ९४-१०५	जीवों	-जीवों
,,	,,	८१	पुलाकृमिक यावत्	पुलाकृमिक (पण्णवणा,१/४९) यावत्
,,	,,	८२	तक पण्णवणा, १/४९) हैं,	तक हैं,
,,	,,	८५	गुच्छ यावत्	गुच्छ (पण्णवणा, १/३३) यावत्
,,	,,	८६	तक (पण्णवणा, १/३३) हैं,	तक हैं,
,,	,,	९०	पूर्ववात यावत्	पूर्ववात (पण्णवणा, १/२९) यावत्
,,	,,	९१	तक (पण्णवणा, १/२९) हैं,	तक हैं,
,,	,,	९४	अंगार यावत्	अंगार (पण्णवणा, १/२६) यावत्
,,	,,	९५	सूर्यकान्तमणि निश्रित	सूर्यकान्तमणि-निश्रित
,,	,,	९५	तक (पण्णवणा, १/२६) हैं,	तक हैं,
,,	,,	९८	ओस, यावत्	ओस (पण्णवणा, १/२३) यावत्
,,	,,	९९	तक (पण्णवणा, १/२३) हैं,	तक हैं,
५८७	१८६	१००	लेगा— बहुलरूप में	लेगा—बहुलरूप में
,,	,,	१०३	शर्करा यावत्	शर्करा (पण्णवणा, १/२०) यावत्
,,	,,	१०४	तक (पण्णवणा, १/२०) हैं,	तक हैं,
५८८	१८६	१२२	श्वसुर कुल	श्वसुर-कुल
,,	,,	१४३	कल्प	-कल्प
५८९	,,	१५३	महाविदेह वर्ष	महाविदेह क्षेत्र
			शतक १६	
५९०	सं.गा.	२	१४. स्तनित।	१४. स्तनित ॥१॥
,,	२-४	सर्वत्र	जीव	-जीव
,,	,,	४	तैजस और	तैजस- और
५९१	६	७	प्राणातिपात क्रिया	प्राणातिपात-क्रिया
,,	७	४	प्राणातिपात क्रिया	प्राणातिपात-क्रिया
,,	१०	२	नैरयिक की	नैरयिकों की
५९१	१२	३	वैमानिक की	वैमानिकों की
,,	१४	१	जा रहा है—यावत्	जा रहा है यावत्
५९१	१४,१६	३	वैमानिक की	वैमानिकों की
५९२	२२	३	मनुष्य की	मनुष्यों की
,,	२४	३	-शरीर की	-शरीर
,,	२५	२	जैसे—औदारिक शरीर की वक्तव्यता	जैसे औदारिक-शरीर
५९३	२६	२	की वक्तव्यता, वैसे	वैसे
,,	,,	,,	-योग की	-योग
५९३	२९	४	नैरयिक की	नैरयिकों की
५९३	२९	५	स्तनितकुमार की	स्तनितकुमारों की
,,	३१	५	चतुरिन्द्रिय की	चतुरिन्द्रियों की
५९३	३१	५	शेष जीवों की भांति वक्तव्य हैं	शेष (जीवों) की जीवों (समुच्चय) (भ. १६/२८,२९) की भांति (वक्तव्यता)

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
५९३	३१	६	वैमानिक की	वैमानिकों की
,,	३३	८	धर्म कहा यावत्	धर्म का निरूपण किया (ओवाइयं, सू. ७१,७९) यावत्
५९३	३३	९	लोट गई (उववाई, सू. ७१-७९)	लोट गई।
५९५	४२	४	होते हैं। आयुष्मन्	होते हैं, आयुष्मन्
,,	४४	२	प्रज्ञप्त हैं जैसे	प्रज्ञप्त हैं, जैसे
,,	४४	३	वैमानिक की	वैमानिकों की
५९५	४४	शीर्षक	कम-पद	कर्म-पद
५९५	४५	४	वेद-बंध पद	वेदाबंध-पद
,,	,,	५	बंध-वेद पद	बंधावेद-पद
,,	४५	५	बंधा-बंध पद	बंधाबंध-पद
,,	,,	६	है, यावत्	हैं यावत्
५९६	४९	१	सिवाय अतिरिक्त क्रिया	सिवाय क्रिया
,,	५१	१	राजगृह नगर यावत् गौतम ने	राजगृह (नगर) (भ. १/४-१०) यावत् गौतम ने
५९७	५२	४	है, यावत्	है यावत्
,,	,,	११	होते हैं, और	होते हैं और
,,	५४	३	उस काल उस समय वज्रपाणि	उस काल और उस समय में वज्रपाणि
,,	५४	१५,१६	है। इन आठ	है?—इन आठ
५९९	५५	शीर्षक	संदर्भ म	संदर्भ में
६००	६०	४	मिथ्या— दृष्टि हूं?	मिथ्या-दृष्टि हूं?
६००	६१	१	दिव्य देवद्युति, दिव्य देवानुभाव	दिव्य देव-द्युति, दिव्य देव-अनुभाव
६०१	६३	६,७	दिव्य देवानुभाव	दिव्य देव-अनुभाव
,,	,,	१	आया था, उसी	आया था उसी
,,	६४	३	दिव्य देवानुभाव	दिव्य देव-अनुभाव
,,	६५	६	दिव्य-ऋद्धि, दिव्य देवद्युति	दिव्य देव-ऋद्धि, दिव्य देव-द्युति
,,	,,	७	देवानुभाव लब्ध,	देव-अनुभाव लब्ध,
,,	६७	३	आगे आगे	आगे-आगे
६०२	,,	५	परिव्रजन, और	परिव्रजन और
,,	७१	२	क्रिया। वंदन-नमस्कार	क्रिया, वंदन-नमस्कार
६०३	७२	३	दिव्य देवानुभाव	दिव्य देव-अनुभाव
,,	७४	३	महाविदेह-वास	महाविदेह क्षेत्र
,,	७९	२	चतुरिन्द्रिय	चतुरिन्द्रियों
,,	८०	१	पंचेन्द्रिय तिर्यग्योनिक	पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक
६०३	८०	२	मनुष्य की जीव	मनुष्यों की जीवों
,,	८०	३	वाणमंतर, ज्योतिष्क	वानमंतरों, ज्योतिष्कों
,,	,,	,,	वैमानिक की नैरयिक	वैमानिक नैरयिकों
६०८	१०६	४	है? यावत्	है यावत्
६०९	११५	६	शर्करा प्रभा की	शर्कराप्रभा के भी (चारों चरमान्तों) की
६०९	११५	९	ग्रैवेयक विमानों	ग्रैवेयक-विमानों

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
			शतक १७	
६१०	१२१	५	तिगिच्छ कूट	तिगिच्छिकूट
६१०	१२१	६	है। इतना	है, इतना
६११	१२१	१०	आत्मरक्षक देव	आत्मरक्षक-देव
,,	,,	११	पूर्ववत् यावत्	पूर्ववत्
,,	,,	१२	१२१) वैरोचनेन्द्र	-१२१) यावत् वैरोचनेन्द्र
६१३	सं.गा.	३	सत्तरह	सत्रह
,,	,,	,,	उद्देशक हैं।	उद्देशक हैं ।।१।।
६१३	१	१	राजगृह नगर यावत् गौतम ने इस प्रकार	राजगृह (भ. १/४-१०) यावत् (गौतम ने) इस प्रकार
,,	३	२	महाविदेह-वास	महाविदेह क्षेत्र
,,	४	३	इसी प्रकार......	यह पैरा पिछले पैरे के साथ है।
,,	५	३	चढ़ता है।	चढ़ता है,
,,	,,	४	गिरता है	गिराता है,
६१३	५	६	कायिकी यावत्	कायिकी (भ. १६/११७) यावत्
६१४	६	२	प्राण यावत् सत्त्वों का प्राण वियोजन	प्राण (भ. ५/१३४) यावत् प्राण-वियोजन
,,	,,	४	प्राण का वियोजन	प्राण-वियोजन
,,	,,	७	वे जीव	वे जीव भी
६१४	७	५	हुआ यावत्	हुआ (भ. ७/६४) यावत्
,,	७	५	पांच क्रिया	पांच क्रियाओं
६१४	८	१	गुरुता से यावत् प्राण का वियोजन	गुरुता से (भ. ५/१३५) यावत् प्राण-वियोजन
६१४	८	३	प्राण का वियोजन	प्राण-वियोजन
,,	८	६	वे जीव	वे जीव भी
६१४	८	७	होते हैं। जो	होते हैं। उसके जो
,,	९	१	गिरता है	गिराता है,
६१४	१०	१,३	प्राण का वियोजन	प्राण-वियोजन
६१५	१०	७	होते हैं। जो	होते हैं। उसके जो
६१५	१०	९	इसी प्रकार	यह पैरा पिछले पैरे के साथ है।
,,	११	२	औदारिक यावत्	औदारिक (भ. १०/८) यावत्
,,	१२	५	श्रोत्रेन्द्रिय यावत्	श्रोत्रेन्द्रिय (भ. २/७७) यावत्
,,	१४	३	पृथ्वीकायिक की	पृथ्वीकायिक भी
,,	१५	१	औदारिक शरीर	औदारिक-शरीर
,,	१५	३	पृथ्वीकायिक जीवों की वक्तव्यता	पृथ्वीकायिक-जीव भी
,,	,,	४	वैक्रिय शरीर	वैक्रिय-शरीर
,,	१७	३	अणुओगदाराइं में छह नाम अणुओगदाराइं, २७३-२९७)	अणुओगदाराइं (सू. २७३-२९७) में छह नाम हैं
६१६	२१	८	है—यावत्	है यावत्
६१६	२४	२	तिर्यक्योनिक	तिर्यग्योनिक
,,	,,	३	मनुष्यों की जीवों	मनुष्यों जीवों
,,	,,	३	ज्योतिष्क, वैमानिक नैरयिक	ज्योतिष्क और वैमानिक नैरयिकों
६१७	२५	२,३	एकान्त बाल	एकान्त-बाल
६१७	२६	२,५	एकान्त बाल	एकान्त-बाल
६१७	२९	१	पंचेन्द्रिय तिर्यग्योनिकों	पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों
,,	२९	२	पंचेन्द्रिय तिर्यक्योनिक	पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक
,,	,,	२	बाल-पंडित भी हैं,	बाल-पंडित भी हैं।
६१७	२९	२	मनुष्यों की	मनुष्य
,,	,,	४	नैरयिक	नैरयिकों
,,	३०	२	यावत्	(भ. १/३८४) यावत्
,,	३०	३	क्रोध-विवेक यावत्	क्रोध-विवेक (भ. १/३८५) यावत्
,,	३०	८	तिर्यक्, मनुष्य	तिर्यक्त्व, मनुष्यत्व
६१८	३१	१	कैसे हैं?	कैसे है?
,,	३२	१	महर्द्धिक यावत्	महर्द्धिक (भ. १/३३९) यावत्
,,	३३	३,४	अभिसमन्वागत करता हूं।	अभिसमन्वागत करता हूं,
,,	३३	६	जो जीव इस शरीर से	जो जीव उस शरीर से
६१८	३३	७	सुरभि-गन्धत्व	सुरभिगन्धत्व
६१८	३३	७,८	दुरभि-गन्धत्व	दुरभिगन्धत्व
,,	३५	४	करता हूं।	करता हूं,
६१८	३५	७,८	सुरभि-गन्धत्व यावत् दुरभि-गंधत्व	सुरभिगंधत्व, दुरभिगन्धत्व
६१९	३७	३	नहीं है। केवल	नहीं है,
,,	३९	१	प्रज्ञप्त हैं?	प्रज्ञप्त है?
,,	४०	५	है—यावत्	है यावत्
,,	,,	९	तिर्यग्योनिक द्रव्यों	तिर्यग्योनिक-द्रव्यों
,,	४०	१०	कहा जा रहा है—	(कहा जा रहा है)
,,	,,	१५	है—यावत्	है यावत्
६२०	४२	४ (तीन बार)	-एजना	-एजना भी,
६२०	४७	६	-चलना है।	-चलना है?
६२०	४७	१०	रूप परिणत	रूप में परिणत
६२०	४७	५,१२,१६	है—यावत्	है यावत्
६२१	४७	१७,१८	योग-चलना की,	योग-चलना भी
६२१	४८	८	आयुष्मन् श्रमण!	आयुष्मन् श्रमण!
,,	५०	१	राजगृह नगर यावत् गौतम ने इस प्रकार	राजगृह नगर (भ. १/४-१०) यावत् (गौतम ने) इस प्रकार
,,	५१	२	होती। यावत्	होती (भ. १/२५९-२६६) यावत्
,,	५३	२	आत्म-कृत होती है।	आत्म-कृत होती है,
,,	,,	,,	पर-कृत नहीं होती।	पर-कृत नहीं होती,
६२२	५६	२	अदत्तादान, मैथुन	अदत्तादान की भी, मैथुन की भी,
,,	,,	३	परिग्रह की वक्तव्यता	परिग्रह की भी (वक्तव्यता)।
,,	५७	२	यावत् वक्तव्य है, यावत्	वैसे ही (भ. १७/५१-५४) यावत् वक्तव्य है यावत्
,,	५९	२	प्रकार दंडक..........	प्रकार वैसा ही दंडक
६२२	६०	१	आत्म-कृत है,	आत्म-कृत है?
,,	६०	३	आत्म-कृत है।	आत्म-कृत है.
६२२	६०	४	वैमानिक की	वैमानिकों की
,,	६१	१	आत्म-कृत दुःख का वेदन करते हैं,	आत्म-कृत दुःख का वेदन करते हैं?
६२३	६५	४	ईशानावतंसक- महाविमान	ईशानावतंसक-महाविमान
६२३	६५	६	वह ईशान की निरवशेष	वह यहां ईशान के विषय में भी निरवशेष
६२३	६५	७	पूर्ववत् यावत्	पूर्ववत् (भ. १०/१००) यावत्
,,	६८	२	पृथ्वीकायिक जीवों	पृथ्वीकायिक-जीवों
,,	,,	६	है—यावत्	है यावत्
,,	७६	१	भंते! सौधर्म कल्प में अप्कायिक	भंते! अप्कायिक-जीव सौधर्म-कल्प पर समवहत
६२४	७६	१	होता है।	होता है,
६२४	७६	२	अप्कायिक के	अप्कायिक-जीव के
६२४	७६	२,३	भंते! क्या	भंते॰? (क्या
६२४	७६	३,४	करता है?	करता है?)
,,	,,	४	पूर्ववत्।......	शेष पूर्ववत्,....यह पैरा पिछले पैरे के साथ है।
,,	७६	४	सौधर्म-अप्कायिक की भांति	सौधर्म-अप्कायिक-जीव की भांति
६२४	७६	५	ईषत्-प्राग्भारा के अप्कायिक	ईषत्-प्राग्भारा-अप्कायिक-जीव वक्तव्य है।
,,	,,	५	उपपात वक्तव्य हैं।	उपपात करवाना चाहिए—उपपात वक्तव्य है।
६२४	७८	१	भंते! इस रत्नप्रभा-पृथ्वी पर वायुकायिक जीव,	वायुकायिक-जीव इस रत्नप्रभा-पृथ्वी पर
,,	७८	२	होने वाला है। भंते! क्या	होने वाला है, भंते॰? (क्या)
,,	,,	३	करता है।	करता है?)
,,	,,	४	पृथ्वीकायिक........	यह पैरा पिछले पैरे के साथ है।
,,	,,	४	पृथ्वीकायिक की भांति वायुकायिक की वक्तव्यता। इतना	पृथ्वीकायिक-जीव की भांति वायु-कायिक-जीव की वक्तव्यता, इतना
६२४	७८	४	वायुकायिक जीवों	वायुकायिक-जीवों
६२५	७८	५	यावत्	(भ. २/७४) यावत्
६२५	७८	५	वैक्रिय-समुद्घात,	वैक्रिय-समुद्घात।
६२५	७८	७	उपपात वक्तव्य है।	उपपात करवाना चाहिए—उपपात वक्तव्य है।
६२५	८०	१	सौधर्म-कल्प पर वायुकायिक	वायुकायिक-जीव सौधर्म-कल्प पर
६२५	८०	२	वायुकायिक के	वायुकायिक-जीव के
,,	,,	३	भंते!	भंते॰?
,,	८०	४,५	करता है। पूर्ववत्।.....	करता है? शेष पूर्ववत्।)
,,	,,	५	वायुकायिक का सातों पृथ्वियों में उपपात वक्तव्य है।	वायुकायिक-जीव का सातों ही पृथ्वियों में उपपात वक्तव्य है,
,,	८०	६	वायुकायिक का	-वायुकायिक-जीव का
,,	,,	६	उपपात वक्तव्य है।	उपपात करवाना चाहिए—उपपात वक्तव्य है।
,,	८२	२	इस प्रकार.....	यह पैरा पिछले पैरे के साथ है।

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६२५	८३	३	वक्तव्यता, वहां	(जो) वक्तव्यता बतलाई गई है, वहां
,,	८४	१	तेजोलेश्या वालों	तेजो-लेश्या वाले एकेन्द्रिय-जीवों
,,	८४	२	किससे	किनसे
६२५	८४	२	विशेषाधिक है?	विशेषाधिक हैं?
,,	,,	३	एकेन्द्रिय सबसे	एकेन्द्रिय-जीव सबसे
,,	,,	३	अनन्त-गुण	अनन्त-गुणा
६२५	८५	१	ऋद्धि?	ऋद्धि०?
,,	८७	१	वाले हैं?	वाले हैं०?
,,	,,	१	दीपकुमार	द्वीपकुमार
६२६	,,	२	(भ. १६/१२५-१२१)	(भ. १६/१२५-१२८)
६२६	८९,९१ ९३,९५	१	वाले हैं?	वाले हैं०?

शतक १८

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६२७	सं.गा.	२	भव्य १०. सोमिल	भव्य तथा १०. सोमिल
,,	,,	,,	उद्देशक हैं।	उद्देशक हैं॥१॥
६२७	१	शीर्षक	×	(समुच्चय-जीव-द्वार)
,,	१	१	राजगृह नगर यावत् गौतम ने इस प्रकार	राजगृह (भ. १/४-१०) यावत् (गौतम ने) इस प्रकार
६२७	१	१	जीव	क्या जीव (एकवचन)
६२७	२	१	सिद्ध	सिद्ध (एकवचन)
६२७	३	१	जीव	क्या जीव (बहुवचन)
,,	३	२	वैमानिक की	वैमानिकों की
,,	३	२	प्रथम नहीं हैं।	प्रथम नहीं हैं,
६२७	४	१	सिद्धों की	सिद्ध (बहुवचन)
६२७	५	शीर्षक	×	(आहारक-द्वार)
,,	५,६	१	-जीव	-जीव (एकवचन)
६२७	५	२	इस प्रकार	इसी प्रकार
,,	८	१	-जीव	-जीव (बहुवचन)
,,	८	१	अनाहारक-जीव अनाहारक-भाव	अनाहारक-जीव (बहुवचन) अनाहारक-भाव
६२८	९	शीर्षक	×	(भवसिद्धिक-द्वार)
,,	९	२	-जीव	-जीव (एकवचन)
,,	९	४	-सिद्ध	-सिद्ध (एकवचन)
,,	,,	५	—पृच्छा।	—पृच्छा। (पूर्ववत्—गौतम! प्रथम है, अप्रथम नहीं है।)
,,	,,	६	दोनों की	दोनों पदों (जीव-पद और सिद्ध-पद) की
,,	,,	शीर्षक	×	(संज्ञि-द्वार)
,,	,,	१	संज्ञी जीव संज्ञी-भाव	संज्ञी जीव (एकवचन) संज्ञि-भाव
६२८	१०	१	प्रथम है	प्रथम है
,,	१०	४	वक्तव्यता, इतना विशेष है—यावत्	(वक्तव्यता), इतना विशेष है यावत्
,,	,,	,,	नोसंज्ञी-नोअसंज्ञी-जीव मनुष्य,	नोसंज्ञि-नोअसंज्ञी जीव, मनुष्य,

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६२८	१०	५	नहीं है	नहीं हैं।
६२८	११	१	सलेश्य की—पृच्छा।	सलेश्य (एकवचन)—पृच्छा।
६२८	११	४	अलेश्य-जीव मनुष्य सिद्ध	अलेश्य-जीव, मनुष्य और सिद्ध
६२८	११	४	नोसंज्ञी-नोअसंज्ञी की भांति वक्तव्यता।	नोसंज्ञि-नोअसंज्ञी की भांति (वक्तव्य हैं।)
६२८	१२	शीर्षक	×	(दृष्टि-द्वार)
,,	,,	१	सम्यग्-दृष्टि-जीव	सम्यग्-दृष्टि-जीव (एकवचन)
,,	१२	१	सम्यग्-दृष्टि भाव	सम्यग्-दृष्टि-भाव
६२८	१२	१	गौतम!	यहां नया पैरा है।
६२८	,,	२	वैमानिक	वैमानिक (एकवचन)
,,	,,	३	अप्रथम नहीं हैं।	अप्रथम नहीं है।
६२८	,,	३	सिद्ध	सिद्ध (एकवचन)
,,	,,	३	सम्यग्-दृष्टि जीव	सम्यग्-दृष्टि-जीव
,,	,,	४	सिद्ध	सिद्ध (बहुवचन)
६२८	१२	५	एकत्व-बहुत्व की	एकत्व-बहुत्व में
,,	,,	५	आहारक की भांति वक्तव्यता	आहारकों की भांति (वक्तव्य है)।
,,	१२	५,६	सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि की एकत्व -बहुत्व की सम्यग् दृष्टि	सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि एकत्व-बहुत्व में सम्यग्-दृष्टि
६२८	१२	६,७	वक्तव्यता। सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि की एकत्व-बहुत्व की सम्यग्-दृष्टि की भांति वक्तव्यता, इतना	वक्तव्य है, इतना
६२८	१३	शीर्षक	×	(संयत-द्वार)
६२८	१३	१	संयत जीव मनुष्य के एकत्व-बहुत्व को	संयत जीव (-पद) और मनुष्य (-पद) में
,,	,,	१	वक्तव्यता असंयत की	(वक्तव्य है)। असंयत (-पद) की
,,	,,	२	वक्तव्यता संयतासंयत-जीव पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक मनुष्य के	(वक्तव्य है)। संयतासंयत-जीव (-पद) की, पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक एवं मनुष्य (-पद)
६२८	१३	३	बहुत्व की	-बहुत्व में
,,	१३	३,४	नोसंयत-नोअसंयत-नोसंयतासंयत-जीव, सिद्ध	नोसंयत-नोअसंयत-नोसंयतासंयत-जीव (-पद) और सिद्ध (-पद)
६२८	१३	४	नहीं है।	नहीं हैं।
,,	१४	शीर्षक	×	(कषाय-द्वार)
६२८	१४	१	-इनके एकत्व-बहुत्व की	ये एकत्व-बहुत्व में
६२८	१४	१	सकषायी	सकषायी,
,,	,,	२	सकषायी	अकषायी
६२८	,,	२	जीव	जीव (-पद) (एकवचन)
,,	१४	२,३	मनुष्य की भी।	मनुष्य (-पद) (एकवचन) भी
,,	,,	३	सिद्ध प्रथम है,	सिद्ध (-पद) (एकवचन) प्रथम है,
,,	,,	,,	मनुष्य जीव	जीव (-पद) और मनुष्य (-पद) भी
६२८	,,	३,४	बहुवचन में मनुष्य जीव प्रथम भी है, अप्रथम भी है।	बहुवचन में जीव और मनुष्य भी प्रथम भी हैं, अप्रथम भी हैं।
,,	,,	४	सिद्ध प्रथम	सिद्ध (-पद) (बहुवचन) प्रथम

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६२८	१५	शीर्षक	×	(ज्ञान-द्वार)
,,	,,	१	ज्ञानी के एकत्व-बहुत्व की	ज्ञानी एकत्व-बहुत्व में
,,	,,	२	मनःपर्यवज्ञानी की	मनःपर्यव-ज्ञानी
,,	,,	,,	पूर्ववत्	उसी प्रकार,
६२८	१५	३	जीव, मनुष्य सिद्ध	जीव (-पद), मनुष्य (-पद) और सिद्ध जीव (-पद)
,,	१५	३	प्रथम है, अप्रथम नहीं है।	प्रथम हैं, अप्रथम नहीं हैं।
६२९	,,	४	श्रुत-अज्ञानी, विभंग-ज्ञानी की	श्रुत-अज्ञानी और विभंग-ज्ञानी
,,	१५	४,५	आहारक की भांति	आहारक (भ. १८/५) की भांति
,,	१६	शीर्षक	×	(योग-द्वार)
,,	१६	१	काय-योगी के एकत्व-बहुत्व की	काय-योगी एकत्व-बहुत्व में
६२९	१६	२,३	अयोगी-जीव सिद्ध, मनुष्य एकत्व-बहुत्व में प्रथम है, अप्रथम नहीं है।	अयोगी-जीव, मनुष्य और सिद्ध एकत्व-बहुत्व में प्रथम हैं, अप्रथम नहीं हैं।
,,	१७	शीर्षक	×	(उपयोग-द्वार)
,,	१७	१	के एकत्व-बहुत्व की अनाहारक	एकत्व-बहुत्व में अनाहारक (भ. १८/६,७)
,,	१८	शीर्षक	×	(वेद-द्वार)
,,	,,	१	के एकत्व-बहुत्व की आहारक	एकत्व-बहुत्व में आहारक (भ. १८/५)
,,	,,	२	की तीनों पदों में अकषायी की	के तीनों पद (जीव-पद, मनुष्य-पद और सिद्ध-पद) अकषायी (भ. १८/१४) की
,,	१९	शीर्षक	×	(शरीर-द्वार)
६२९	१९	१	की आहारक	(एकत्व-पृथक्त्व में) आहारक
,,	,,	२	शरीर है।	शरीर है,
६२९	१९	२	शरीरी की	-शरीरी।
६२९	१९	३	अशरीरी जीव सिद्ध	अशरीरी-जीव (-पद) और सिद्ध (-पद)
६२९	२०	शीर्षक	×	(पर्याप्ति-द्वार)
,,	,,	१	के एकत्व-बहुत्व की	एकत्व-बहुत्व में
६२९	२०	३	लक्षण गाथा है—	लक्षण-गाथा (है)—
,,	,,	४	अप्राप्त पूर्व	अप्राप्त-पूर्व
,,	,,	५	होता है।	होता है॥१॥
६२९	२१	शीर्षक	×	(समुच्चय-जीव-द्वार)
,,	२१	१	क्या जीव भाव से	क्या जीव (एकवचन) जीव-भाव से
,,	२२	१	नैरयिक	नैरयिक (एकवचन)
,,	,,	२,३	वैमानिक की वक्तव्यता। सिद्ध को जीव की भांति	वैमानिक (एकवचन) (वक्तव्य है)। सिद्ध (एकवचन) जीव (एकवचन) (भ. १८/२१) की भांति
६२९	२३	१	जीवों की—पृच्छा।	जीव (बहुवचन)-पृच्छा।
,,	,,	२	नैरयिक चरम	नैरयिक (बहुवचन) चरम

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६२९	२३	३	वैमानिकों की वक्तव्यता। सिद्धों की जीवों की भांति	वैमानिक वक्तव्य हैं। सिद्ध जीवों की भांति
६२९	२४	शीर्षक	×	(आहारक-द्वार)
,,	,,	१	एकत्व	एकवचन
,,	,,	२	-जीव, सिद्ध	जीव (-पद) और सिद्ध (-पद)
६२९	२४	३	की आहारक	में आहारक
,,	२५	शीर्षक	×	(भवसिद्धिक-द्वार)
,,	२५	१	भवसिद्धिक-जीव-पद	भवसिद्धिक जीव-पद
,,	,,	१	चरम हैं, अचरम नहीं हैं।	चरम है, अचरम नहीं है।
,,	,,	२	आहारक की भांति।	आहारक (भ. १८/२४) की भांति
,,	२५	३	-जीवों, सिद्धों के एकवचन-बहुवचन की	-जीव और सिद्ध एकवचन-बहुवचन में
६३०	२६	शीर्षक	×	(संज्ञि-द्वार)
६३०	,,	१	संज्ञी की आहारक की भांति	संज्ञी (एकवचन-बहुवचन में) आहारक (भ.१८/२४) की भांति
,,	,,	,,	असंज्ञी की आहारक	असंज्ञी आहारक
६३०	२६	२,३	नोसंज्ञी-नोअसंज्ञी-जीव-पद में, सिद्ध-पद में अचरम हैं, मनुष्य-पद में एकवचन, बहुवचन में चरम हैं।	नोसंज्ञि-नोअसंज्ञी जीव-पद में और सिद्ध-पद में अचरम है, मनुष्य-पद में एकवचन-बहुवचन में चरम है।
६३०	२७	शीर्षक	×	(लेश्या-द्वार)
,,	,,	१	वाले की	वाला (एकवचन-बहुवचन में)
,,	,,	२	अलेश्य की नोसंज्ञी-नोअसंज्ञी की	अलेश्य (एकवचन-बहुवचन में) नोसंज्ञि-नोअसंज्ञी (भ. १८/२६) की
,,	२८	शीर्षक	×	(दृष्टि-द्वार)
,,	,,	१	की अनाहारक की भांति	(एकवचन-बहुवचन में) अनाहारक (भ.१८/२४) की भांति
,,	,,	,,	मिथ्यादृष्टि की आहारक की	मिथ्यादृष्टि (एकवचन-बहुवचन में) आहारक (भ. १८/२४) की
,,	,,	२,३	स्यात् चरम हैं, स्यात् अचरम हैं।	(एकवचन में) स्यात् चरम है, स्यात् अचरम है।
६३०	२९	शीर्षक	×	(संयत-द्वार)
,,	२९	१	संयत-जीव-पद एवं मनुष्य-पद की आहारक की भांति वक्तव्यता। असंयत की भी	संयत जीव (एकवचन-बहुवचन में) एवं मनुष्य (एकवचन-बहुवचन में) आहारक (भ. १८/२४) की भांति (वक्तव्य है)। असंयत (एकवचन-बहुवचन में) भी
,,	,,	२	संयतासंयत की	संयतासंयत (एकवचन-बहुवचन में)
६३०	२९	३-४	नोसंयत, नोअसंयत, नोसंयतासंयत की नोभवसिद्धिक-नोअभवसिद्धिक की भांति	नोसंयत-नोअसंयत-नोसंयतासंयत (एकवचन-बहुवचन में) नोभव-सिद्धिक-नोअभवसिद्धिक (भ. १८/२५) की भांति
,,	३०	शीर्षक	×	(कषाय-द्वार)

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६३०	३०	१	सकषायी यावत् लोभ-कषायी की	सकषायी (एकवचन-बहुवचन में) यावत् लोभ-कषायी (एकवचन-बहुवचन में)
६३०	३०	१	आहारक की भांति	आहारक (भ. १८/२४) की भांति
,,	,,	२	अकषायी-जीव-पद, सिद्ध में	अकषायी (एकवचन-बहुवचन में) जीव-पद और सिद्ध (-पद) में
६३०	३०	२	है। मनुष्य-पद	है। (अकषायी) (एकवचन-बहुवचन में)
६३०	३१	१	ज्ञानी की	ज्ञानी
६३०	३१	२,३	ज्ञानी की	-ज्ञानी
६३०	३१	३	केवलज्ञानी की	केवलज्ञानी
६३०	३२	शीर्षक	×	(योग-द्वार)
,,	,,	१	सयोगी यावत् काययोगी की आहारक की भांति वक्तव्यता।	सयोगी (एकवचन-बहुवचन में) यावत् काययोगी (एकवचन-बहुवचन में) आहारक (भ. १८/२४) की भांति (वक्तव्य हैं),
,,	,,	२	अयोगी की नोसंज्ञी-	अयोगी (एकवचन-बहुवचन में) नोसंज्ञि-
६३०	३३	१	-अनाकोरापयुक्त की	-अनाकारोपयुक्त
६३०	३४	१	-वेदक की	-वेदक
६३०	३४	१	अवेदक की	अवेदक
६३०	३५	१	-शरीरी की	-शरीरी
६३०	३५	१	अशरीरी की	अशरीरी
६३०	३६	१	अपर्याप्त की	अपर्याप्त
६३०	३६	२	लक्षण गाथा है—	लक्षण-गाथा (है)—
६३०	३७	१	ऐसा हो होता है	ऐसा ही है
६३१	३८	२	हुए यावत्	हुए (ओवाइयं, सू. २२-२५)
,,	,,	४	उद्देशक (भ.१६/३३, ३/२७) की	उद्देशक की
६३१	३८	५	थे यावत्	थे (भ. १६/३३, ३/२७) यावत्
,,	३९	२	शतक (भ. ३/२८-३०) में	शतक में
६३१	३९	३	दृष्टांत, पूर्वभव पृच्छा	दृष्टांत, उसी प्रकार पूर्व-भव-पृच्छा
,,	,,	३	पृच्छा यावत्	पृच्छा (भ. ३/२८-३०) यावत्
६३१	३९	३	किया है।	किया है?
,,	४०	३	था—वर्णक।	था वर्णक (ओवाइयं, सू. १)
,,	४०	३	वर्णक।	उद्यान—वर्णक (भ. ११/५७)।
६३१	४०	४	रहता था आढ्य यावत्	रहता था जो आढ्य (भ. २/९४) यावत्
६३१	४०	४	अपरिभूत	अपरिभूत था।
६३१	४०	७	मेढ़ी-प्रमाण,	मेढ़ी, प्रमाण,
६३१	,,	८	चक्षुभूत	चक्षुर्भूत
६३१	,,	९,१०	समर्थ, सेनापतिपत्य करता था	सामर्थ्य-युक्त सेनापतित्व करता हुआ
६३१	४०	११	वाला यावत्	वाला (भ. २/९४) यावत्

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६३१	४१	१-२	शतक (भ. १६/६७,६८) की वक्तव्यता। यावत् समवसृत हुए	शतक की भांति (वक्तव्यता) यावत् समवसृत हुए (भ. १६/६७,६८)
६३१	४२	२	सुदर्शन (भ. ११/११६)	सुदर्शन को
६३१	४२	२	किया यावत्	किया (भ. ११/११६) यावत्
,,	४३	१	धर्म कहा यावत्	धर्म का निरूपण किया (ओवाइयं, सू. ७१-७९) यावत्
६३२	४५	१	श्रेष्ठी ने यावत्	श्रेष्ठी ने (भ. १६/७१) यावत्
६३२	४५	४	उद्विग्न यावत्	उद्विग्न (भ. २८/४६) यावत्
,,	४६	२	होओगे। देवानुप्रिय!	होओगे, देवानुप्रिय!
६३२	४५	६	तुम्हारे सामर्थ्य कैसा है?	तुम्हारा सामर्थ्य कैसा है?
६३२	४६	३	हम भी संसारभय से	संसार-भय से
,,	४६	४	उद्विग्न, जन्म	उद्विग्न और जन्म
,,	४६	४	भीत, देवानुप्रिय	भीत हम भी देवानुप्रिय
६३२	४७	२	संसारभय	संसार-भय
,,	४७	११	ऋद्धि यावत्	ऋद्धि (भ. ९/१८२) यावत्
,,	४८	७	पृच्छा-पूछ कर	पृच्छा, पूछ कर
६३२	४९	१-२	गंगदत्त (भ.१६/७१) की भांति वक्तव्यता यावत्	गंगदत्त की भांति वक्तव्यता (भ. १६/७१) यावत्
,,	४९	६	आदीप्त हो रहा है, जल रहा है।	आदीप्त हो रहा है (जल रहा है)।
,,	,,	७	प्रदीप्त हो रहा है। प्रज्वलित हो रहा है	प्रदीप्त हो रहा है (प्रज्वलित हो रहा है)।
६३३	४९	८	रहा है यावत्	रहा है (भ. ९/२१४) यावत्
,,	,,	९	हूं यावत्	हूं (भ. २/५२) यावत्
,,	५०	२	किया, यावत्	किया (भ. २/५३) यावत्
,,	,,	३	चाहिए यावत्	चाहिए (भ. २/५३) यावत्
,,	५१	३	हैं यावत्	हैं (भ. २/५५) यावत्
,,	५२	२	चलता है यावत्	चलता है यावत् (भ. २/५५) यावत्
६३३	५३	७	सौधर्म कल्प	सौधर्म-कल्प
,,	५३	८	अंगुल के असंख्यातवें भाग	अंगुल-के-असंख्यातवें-भाग
,,	५६	१	का वर्णक	था—नगर का वर्णन।
,,	५६	१	—वर्णक यावत्	—वर्णक (भ. १/२-५) यावत्
६३४	५७	१	पृथ्वीकायिक कापोत-लेश्या वाले पृथ्वीकायिक से	पृथ्वीकायिक-जीव कापोत-लेश्या वाले पृथ्वीकायिक-जीवों से
६३४	५७	३	सिद्ध यावत्	सिद्ध होता है (भ. १/४४) यावत्
,,	,,	४	पृथ्वीकायिक यावत्	पृथ्वीकायिक-जीव यावत्
,,	५८	१	अप्कायिक जीव	अप्कायिक-जीव
६३४	५८	१	अप्कायिक	अप्कायिक-जीवों
,,	५९	१-२	वनस्पतिकायिक	वनस्पतिकायिक-जीवों
,,	६०,६१	सर्वत्र	पृथ्वीकायिक	पृथ्वीकायिक-जीव
,,	६०,६१	सर्वत्र	अप्कायिक	अप्कायिक-जीव
,,	६०,६१	सर्वत्र	वनस्पतिकायिक	वनस्पतिकायिक-जीव
६३४	६२	३,४	करता है। आर्यो! कापोत-लेश्या वाला वनस्पतिकायिक यावत्	करता है। आर्यो! कापोत-लेश्या वाला अप्कायिक-जीव यावत् सब दुःखों का अन्त करता है। आर्यो! कापोत-लेश्या वाला वनस्पतिकायिक-जीव यावत्

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६३५	६२	७	पृथ्वीकायिक	पृथ्वीकायिक-जीवों
६३५	,,	८	आर्यो ! तीन	आर्यो ! नील
,,	,,	९,१०	अप्कायिक की	अप्कायिक-जीव भी
६३५	६३	१	कह कर	कहकर
,,	६३	३	अणगार	अनगार
,,	६५	६	है, आयुष्मन्	हैं, आयुष्मन्
६३५	६६	शीर्षक	निर्जरा-पुद्गल-जानना-आदि-पद	निर्जरा-पुद्गलों को जानने-आदि का पद
,,	६६	२	जानता देखता	जानता-देखता
,,	६७	२	जानता-देखता है ?	जानता-देखता ?
,,	,,	६	जानता-देखता। आयुष्मन्	जानता-देखता, आयुष्मन्
,,	,,	७	प्रज्ञप्त हैं। सर्व-लोक	प्रज्ञप्त हैं, सर्व-लोक
,,	६८	१	क्या नैरयिक	नैरयिक
,,	६८	१	को जानते-देखते	को क्या जानते-देखते
,,	,,	२	नहीं जानते, नहीं देखते हैं,	नहीं जानते नहीं देखते,
६३६	६८	३	माकंदिक पुत्र	माकंदिक-पुत्र
६३६	६८	३	नहीं जानते, नहीं देखते हैं,	नहीं जानते, नहीं देखते,
६३६	६८	४	नहीं करते	करते हैं
,,	६८	४	तिर्यग्योनिक	तिर्यग्योनिकों
,,	६९	१	को जानते-देखते हैं, उनका आहरण करते हैं।	को क्या जानते-देखते हैं ? उनका आहरण करते हैं ?
६३६	६९	२	नहीं जानते, नहीं देखते,	नहीं जानते नहीं देखते,
,,	६९	२	नहीं उनका आहरण करते है।	उनका आहरण नहीं करते हैं ?
,,	७०	२	नहीं जानते, नहीं देखते,	नहीं जानते नहीं देखते,
,,	७०	४	जो संज्ञीभूत हैं	उनमें जो संज्ञीभूत हैं
६३६	७०	६	जो उपयुक्त हैं	उनमें जो उपयुक्त हैं।
,,	,,	,,	ज्योतिष्क की	ज्योतिष्क
,,	,,	,,	वैमानिक	नैरयिकों
६३६	७१	१	को जानते-देखते हैं,	को क्या जानते-देखते हैं ?
६३६	७१	२	वैमानिक की	वैमानिक
६३६	७१	२	वैमानिक के	वैमानिकों के
,,	७१	३,४	मायी-	मायि-
,,	,,	३,५	अमायी-	अमायि-
,,	,,	३	जो	उनमें जो
,,	७१	६	-उपपन्नक। जो	उपपन्नक। उनमें जो
,,	७१	६	करते। जो	करते। उनमें जो
,,	,,	७	पर्याप्त, अपर्याप्तक। जो	पर्याप्तक, अपर्याप्तक। उनमें जो
,,	,,	८	देखते, उनका आहरण करते हैं। जो	देखते, आहरण करते हैं। उनमें जो
,,	,,	१०	करते हैं। जो	करते हैं। उनमें जो
६३७	७४	२	प्रज्ञप्त है	प्रज्ञप्त है,
,,	७५	१	कितना	कितने
,,	७८	१	प्रज्ञप्त हैं ?	प्रज्ञप्त है ?
,,	७८	२	प्रज्ञप्त है।	प्रज्ञप्त है,

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६३८	८४	१	है ? यावत्	है (भ. ७/२१९) यावत्
,,	८६	१	राजगृह नगर यावत्	राजगृह (भ. १/४-१०) यावत्
,,	,,	२	मृषावाद यावत्	मृषावाद (भ. १/३८४) यावत्
,,	,,	,,	विरमण यावत्	विरमण (भ. १/३८५) यावत्
६३८	८६	३	-विरमण	विरमण,
,,	८६	८	परिभोग में नहीं आते।	परिभोग में आते हैं, कुछ जीवों के परिभोग में नहीं आते।
,,	८७	४	अधर्मास्तिकाय,	अधर्मास्तिकाय
६३९	९३	१	द्वीन्द्रिय की पृच्छा।	द्वीन्द्रिय–पृच्छा।
६३९	९३	३	कल्योज है।	कल्योज हैं।
,,	,,	४	एकेन्द्रियों की	एकेन्द्रिय
,,	९३	४	द्वीन्द्रिय	द्वीन्द्रियों
,,	,,	,,	वैमानिकों की	वैमानिक
,,	९३	५	नैरयिक	नैरयिकों
,,	,,	,,	सिद्धों की	सिद्ध
,,	९३	५	वनस्पतिकायिक	वनस्पतिकायिकों
६३९	९४	२	में स्यात् कल्योज है।	में कृतयुग्म, अजघन्य-अनुत्कृष्ट-पद में स्यात् कृतयुग्म यावत् स्यात् कल्योज है।
,,	,,	३	-देवियां	देवियां भी
६३९	९४	३	-देवियों की	देवियां
,,	,,	,,	-स्त्रियों	-स्त्रियां
६३९	९४	४	मनुष्य-स्त्रियों की वक्तव्यता	इस प्रकार मनुष्य-स्त्रियां (वक्तव्य हैं)
,,	,,	,,	-देवियों	देवियां
६४०	९७	२,५	असुरकुमार देव	असुरकुमार-देव
,,	,,	६	वाले। जो	वाले। उनमें जो
,,	,,	६	असुरकुमार-देव हैं,	असुरकुमार-देव है,
,,	,,	७	होता है। जो	होता है। उनमें जो
६४०	९८	१	वाला है, पूर्ववत्	वाला है पूर्ववत्
६४०	,,	४,५	कौन पुरुष	कौन-सा पुरुष
,,	,,	६	नहीं होता।	नहीं होता ?
,,	,,	८	भगवन्! जो	भगवन्! उनमें जो
,,	,,	९	होता है, जो	होता है। उनमें जो
,,	९९	१	हुए पूर्ववत् यावत्	हुए० ? इसी प्रकार सू. ९७,९८ की भांति यावत्
,,	१००	५	मायी-मिथ्यादृष्टि-उपपन्नक, अमायी–	मायि-मिथ्यादृष्टि-उपपन्नक-अमायि-
६४०	१००	६	जो मायी-	उनमें जो मायि-
,,	,,	७	जो अमायी-	उनमें जो अमायि-
६४१	१०१	१	असुरकुमार ? पूर्ववत्।	असुरकुमार० ? इसी प्रकार (सू. १०० की भांति

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६४१	१०१	१	विकलेन्द्रिय को छोड़कर एकेन्द्रिय, यावत् वैमानिकों	एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय को छोड़कर यावत् वैमानिक
६४१	१०२	१	भव्य नैरयिक अनंतर	भव्य (पंचेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक में उत्पन्न होने की योग्यता-प्राप्त नैरयिक-जीव) अनंतर
६४१	१०३	१	भव्य असुरकुमार	भव्य (पृथ्वीकायिक में उपपन्न होने की योग्यता–प्राप्त) असुरकुमार
,,	१०३	५	स्थित है, उसका	स्थित है उसका
,,	,,	,,	करता है, यावत् वैमानिक।	करता है यावत् वैमानिक,
,,	,,	८	उपपात वक्तव्य है,	उपपात करवाना चाहिए–उपपात वक्तव्य है,
६४१	१०३	९	पूर्ववत्।	उसी प्रकार
,,	१०४	३	चाहता है, वह	चाहता है वह
६४१	१०४	७	मायी-मिथ्यादृष्टि-उपपन्नक, अमायी-	मायि-मिथ्यादृष्टि-उपपन्नक, अमायि-
६४१	१०४	८	उनमें जो मायी-	उनमें जो मायि-
,,	,,	९	करता है, यावत्	करता है यावत्
६४१	१०४	१०	पाता। जो अमायी	पाता। उनमें जो अमायि
,,	,,	११	करता है, यावत्	करता है यावत्
,,	,,	,,	कहता है	चाहता है
,,	१०५	१	नागकुमार ?	नागकुमार० ?
,,	१०५	२	पूर्ववत्।	इसी प्रकार।
६४२	१०७	४	है। नैश्चयिक	है, नैश्चयिक
,,	१०८	३	है। नैश्चयिक	है, नैश्चयिक
६४२	१०९	३	नीला	हरा
६४२	१०९	७-८	इनकी वक्तव्यता पूर्ववत्।	(ये पूर्ववत् वक्तव्य हैं।)
६४२	११०	१	राख की पृच्छा।	राख–पृच्छा
,,	,,	३	वर्ण यावत्	वर्ण वाली यावत्
,,	१११	शीर्षक	वर्ण का आदि-पद	वर्ण-आदि का पद
६४३	११९	१	राजगृह नगर यावत् गौतम ने इस	राजगृह (भ. १/४-१०) यावत् (गौतम ने) इस
६४३	११९	२	हैं–केवली	हैं-इस प्रकार निश्चित ही केवली
,,	,,	२	हैं। यक्षावेश	हैं। इस प्रकार निश्चित ही यक्षावेश
,,	,,	३	दो भाषाएं	केवली सदैव दो भाषाएं
,,	,,	४	इस प्रकार कहते हैं यावत्	(इस प्रकार कहते हैं) (भ. १/४२१) यावत् वे
६४३	११९	५,६	हूं–न केवली यक्षावेश	हूं–निश्चित ही केवली न यक्षावेश
,,	,,	६	हैं, न केवली यक्षावेश	हैं, निश्चित ही केवली न यक्षावेश
,,	,,	६	पर दो	पर कभी भी दो
,,	,,	७	केवली असावद्य	केवली सदैव असावद्य
६४३	१२०,	१	उपधि के कितने प्रकार प्रज्ञप्त हैं ?	उपधि कितने प्रकार की प्रज्ञप्त है ?
६४३	१२२	१	उपधि के कितने प्रकार प्रज्ञप्त हैं ?	उपधि कितने प्रकार की प्रज्ञप्त है ?
,,	१२०	२	उपधि के तीन प्रकार प्रज्ञप्त हैं।	उपधि तीन प्रकार की प्रज्ञप्त है।
,,	१२१	१	नैरयिकों की पृच्छा	नैरयिकों के–पृच्छा।

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६४३	१२१	२	गौतम! उपधि के दो प्रकार प्रज्ञप्त हैं।	गौतम! (नैरयिकों के) उपधि दो प्रकार की प्रज्ञप्त है।
,,	,,	३	तीन उपधि प्रज्ञप्त हैं।	तीन प्रकार की उपधि प्रज्ञप्त हैं।
६४४	१२२	२	उपधि के तीन प्रकार प्रज्ञप्त हैं।	उपधि तीन प्रकार की प्रज्ञप्त है।
,,	१२३	१,२	प्रकार के प्रज्ञप्त हैं?	प्रकार का प्रज्ञप्त है।
,,	१२४	१	के परिग्रह प्रज्ञप्त हैं?	का परिग्रह प्रज्ञप्त है?
,,	१२५	१	के कितने प्रकार प्रज्ञप्त हैं?	कितने प्रकार का प्रज्ञप्त है?
,,	,,	२	के तीन प्रकार प्रज्ञप्त हैं।	तीन प्रकार का प्रज्ञप्त है।
,,	१२६	१	के प्रणिधान-प्रज्ञप्त हैं?	का प्रणिधान प्रज्ञप्त है?
६४४	१२६	२	पूर्ववत्।	इसी प्रकार।
६४४	१२७	१	पृथ्वीकायिकों की पृच्छा।	पृथ्वीकायिकों के—पृच्छा।
,,	१२८	१	द्वीन्द्रियों की पृच्छा	द्वीन्द्रियों के—पृच्छा।
६४४	१२८	२	के प्रणिधान प्रज्ञप्त हैं?	का प्रणिधान प्रज्ञप्त है,
६४४	१२८	३	चतुरिन्दियों	चतुरिन्द्रियों
,,	,,	३	के प्रणिधान प्रज्ञप्त हैं। यावत्	का प्रणिधान प्रज्ञप्त है यावत्
,,	१२८	४	वैमानिक	वैमानिकों की वक्तव्यता।
,,	१२९, १३०	१	के कितने प्रकार प्रज्ञप्त हैं?	कितने प्रकार का प्रज्ञप्त है?
,,	१२९, १३०	२	के तीन प्रकार प्रज्ञप्त हैं,	तीन प्रकार का प्रज्ञप्त है,
,,	१३०	२	मनः-दुष्प्रणिधान।	मनः-दुष्प्रणिधान,
,,	१३१	१	के सुप्रणिधान प्रज्ञप्त हैं?	का सुप्रणिधान प्रज्ञप्त है?
,,	,,	२	पूर्ववत्।	इसी प्रकार।
६४५	१३३	२	यावत् विहरण करने लगे।	यह कहकर (भ. १/५१) यावत् रहते हैं।
६४५	१३५	९	बतलाते हैं,	बतलाते हैं।
६४५	१३६	१	आढ्य यावत्	आढ्य (भ. २/९४) यावत्
,,	,,	२	जानने वाला, यावत्	जानने वाला (भ. २/९४) यावत्
,,	१३७	३	समवसृत हुए, परिषद् यावत्	समवसृत हुए। परिषद् (ओवाइयं, सू. २२-५२) यावत्
,,	१३८	३	किया यावत्	किया (भ. २/९७) यावत्
६४६	१३९	९	पूर्ववत् रूपि-काय	पूर्ववत् (भ. ७/२१३) यावत् रूपि-काय
६४६	१३९	९	कैसे है?	कैसे है?'
,,	१४०	४	धर्मास्तिकाय	(धर्मास्तिकाय
,,	,,	४	नहीं देखते।	नहीं देखते।)
६४६	१४१	१,२	तुम कैसे श्रमणोपासक हो;	श्रमणोपासकों में तुम कैसे हो,
,,	१४२	११	हां है।	हां, है।
,,	१४२	१२	अरणि-सहगत रूप	अरणि-सहगत अग्निकाय के रूप
,,	,,	१५,१९	हां है।	हां, है।
६४७	,,	२३	नहीं होता, इस प्रकार	नहीं होता (अज्ञात और अदृष्ट का अस्तित्व नहीं होता), इस प्रकार
६४७	१४२	२४	नहीं होगा। अज्ञात और अदृष्ट अस्तित्व नहीं होता। यह	नहीं होगा। यह

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६४७	१४२	२६	द्वारा यावत्	द्वारा (भ. २/९७) यावत्
६४७	१४३	३	अविज्ञात,	अविज्ञात
,,	,,	५	है वह	है, वह
६४७	१४३	५,६	में वर्तन करता है, अर्हत्-प्रज्ञप्त धर्म की आशातना में वर्तन करता है,	में वर्तन करता है,
,,	,,	६	आशातना करता है वह	आशातना में वर्तन करता है, वह
६४७	१४३	७ (दोनों बार)	आशातना करता है,	आशातना में वर्तन करता है,
,,	१४५	१	धर्म कहा	धर्म का निरूपण किया (ओवाइयं, सू. ७१-७९)
,,	१४७	४	वक्तव्यता वैसे ही मद्दुक की वक्तव्यता।	वैसे ही (मद्दुक की वक्तव्यता।)
,,	,,	५	होगा यावत् सब दुःखों का अंत	होगा (भ. १२/२७,२८) यावत् (सब दुःखों का) अंत
६४७	१४८	१	ऋद्धि यावत्	ऋद्धि (भ. १/३३९) यावत्
६४८	१४८	४	क्या वे शरीर	वे शरीर क्या
६४८	१४८	४	-स्पृष्ट हैं।	-स्पृष्ट हैं?
६४८	,,	६	क्या उन शरीरों का अंतर	उन शरीरों के अंतर क्या
,,	,,	,, (दोनों बार)	है?	हैं?
,,	,,	७ (दोनों बार)	है	हैं
६४८	१४९	४	जलाता हैं?	जलाता है,
६४८	१४९	५	छविच्छेद-अंग-भंग	छविच्छेद—अंग-भंग
,,	,,	६	संक्रमण (प्रवेश) प्रवेश नहीं होता।	क्रमण (प्रवेश) नहीं होता।
,,	१५१	५	वैसे ही असुरकुमारों की	वैसे ही क्या असुरकुमारों की
,,	१५३	३	प्रकार यावत्	प्रकार (जीवा. ३/७७५) यावत्
६४९	१५४	३	हां, है।	हां, करते हैं।
,,	१५५	२	तीन-हजार-वर्ष उत्कृष्टतः	तीन-हजार-वर्ष, उत्कर्षतः
,,	१५५, १५६	४	हां, है।	हां, करते हैं।
६४९	१५६	२	-वर्ष उत्कृष्टतः	-वर्ष, उत्कर्षतः
,,	१५७	२	तीन-सौ- उत्कृष्टतः	तीन-सौ-, उत्कर्षतः
,,	,,	२,४	कौन हैं, यावत्	कौन हैं यावत्
,,	,,	५	देव	-देव
,,	,,	६	असुरेन्द्र को	असुरेन्द्र (असुरकुमार-देव) (?) को
,,	,,	१७	आनत-प्राणत-, आरण-	आनत-प्राणत-आरण-
,,	,,	१८	कर्म-पुद्गलों	-कर्म-पुद्गलों
,,	,,	२३	-वैजयन्त-, जयन्त—अपराजित-देव	-वैजयन्त-जयन्त-अपराजित-देव
६५०	१५७	२७	तीन-सौ- उत्कृष्टतः	तीन-सौ-, उत्कर्षतः पांच-सौ-वर्ष में भोगकर क्षीण कर देते हैं। ये जो देव हैं यावत् पांच-हजार-वर्ष में भोगकर क्षीण करते हैं। ये जो देव हैं यावत्

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६५०	१५९	१	राजगृह नगर यावत् गौतम ने इस प्रकार	राजगृह (भ. १/४-१०) यावत् (गौतम ने) इस प्रकार
६५०	सर्वत्र	सर्वत्र	ईर्यापथिकी-क्रिया	ऐर्यापथिकी क्रिया
६५०	सर्वत्र	सर्वत्र	साम्परायिकी-क्रिया	साम्परायिकी क्रिया
६५०	१६०	६	कहा जाता है।	कहा जा रहा है।
,,	१६२	२	जनपद विहार	जनपद-विहार
,,	१६३	३	महावीर यावत्	महावीर (भ. ८/२७१) यावत्
,,	१६४	१,२	इन्द्रभूति नाम का अनगार यावत्	इन्द्रभूति नामक अनगार (भ. १/९) यावत्
६५०	१६४	३	विहरण कर रहे थे।	रहते हैं।
६५१	१६५	४	असंवृत एकान्त-दण्ड यावत् एकान्त-बाल	असंवृत, एकान्त-दण्ड और एकान्त-बाल
६५१	१६७	२	अभिहत यावत्	अभिहत (भ. ८/२८७) यावत्
,,	१७१	१	इस प्रकार कहा—उत्तर दिया,	इस प्रकार उत्तर दिया,
६५१	१७१	३	न अति दूर न अति निकट यावत्	न अति निकट न अति दूर (भ. १/१०) यावत्
,,	१७२	४	नहीं है,	नहीं हैं,
,,	,,	,,	गौतम! अन्ययूथिकों ने	गौतम! तुमने अन्ययूथिकों को
,,	,,	५	अन्ययूथिकों ने	अन्ययूथिकों को
,,	१७४	३	देखता नहीं।	नहीं देखता;
६५२	१७५	३	देखता नहीं।	नहीं देखता;
६५२	१७५	३	है। यावत्	है। इस प्रकार यावत्
,,	,,	,,	जानता है, नहीं देखता है। यावत्	जानता, नहीं देखता। इस प्रकार यावत्
,,	१७६	,,	जानता-देखता है।	जानता-देखता है;
,,	,,	,,	नहीं देखता।	नहीं देखता;
,,	१७७	१	परमाणु-पुद्गल को जानता-देखता है अथवा नहीं जानता	नहीं देखता; परमाणु-पुद्गल को क्या जानता-देखता है? अथवा नहीं जानता;
,,	१७७	२,३	भांति आधोवधिक की वक्तव्यता, परमाणु की भांति अनन्त-प्रदेशिक स्कन्ध की वक्तव्यता।	भांति (भ. १८/१७४-१७६) आधोवधिक भी (वक्तव्य है) यावत् अनन्तप्रदेशिक स्कन्ध (वक्तव्य है)—जैसे अनन्तप्रदेशिक स्कन्ध के विषय में छद्मस्थ मनुष्य के चार भंग बतलाए हैं वहां तक वक्तव्य है।
६५२	१७९	४	गौतम! ज्ञान साकार होता है। और दर्शन	गौतम! उसका ज्ञान साकार होता है और उसका दर्शन
,,	१८०	१	मनुष्य क्या	मनुष्य (क्या)
,,	१८१	३	गौतम! ज्ञान साकार होता है और दर्शन	गौतम! उसका ज्ञान साकार होता है और उसका दर्शन
६५३	१८३	१	राजगृह नगर यावत् गौतम ने इस	राजगृह (भ. १/४-१०) यावत् (गौतम ने) इस
६५३	१८३	२	-नैरयिक है?	-नैरयिक हैं?
,,	,,	३	हां, है।	हां, हैं।
,,	१८५	१	है?	हैं?

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६५३	१८५	२	हां, है।	हां, हैं।
६५३	१८६	७	मनुष्यों	मनुष्य भी
६५४	१९१	१,२	राजगृह नगर यावत् गौतम ने इस	राजगृह (भ. १/४-१०) यावत्
			प्रकार कहा—	(गौतम ने) इस प्रकार कहा—भंते!
			भंते!	
६५४	१९२	१	बीचोंबीच	बीचोंबीच
६५४	१९३	१	पुष्कल	पुष्कर
६५४	१९४	४	नहीं है,	नहीं है।
६५५	१९७	३	पूर्ववत्।	उसी प्रकार।
६५५	१९९	१,३	स्पृष्ट होता है	स्पृष्ट होती है
६५५	२००	१	द्रव्य-पुद्गल	द्रव्य—पुद्गल
,,	,,	५	हुए हैं।	हुए हैं?
,,	,,	६	हां, है। इसी प्रकार अधःसप्तमी की	हां, है। इस प्रकार अधःसप्तमी के
				अधोवर्ती द्रव्यों की
,,	२०१	१	द्रव्य (पुद्गल)	द्रव्य—पुद्गल
६५५	२०१	२	पूर्ववत्।	उसी प्रकार।
६५५	२०१	२	पृथ्वी के	पृथ्वी के अधोवर्ती द्रव्यों की वक्तव्यता
,,	२०३	२	करने लगे।	करते हैं।
,,	२०४	१	दूति-पलाशक	दूतिपलाशक
,,	२०४	३	यावत्। बहुजन	(भ. २/९४) यावत् बहुजन
,,	,,	३	ऋग्वेद- यावत्	ऋग्वेद (भ. २/२४) यावत्
६५५	२०४	५	समर्थ तथा	सामर्थ्य-युक्त
,,	,,	६	हुए यावत्	हुए (भ. १८/१३७) यावत्
,,	२०५	३	विचरण ग्रामानुग्राम	विचरण करते हुए, ग्रामानुग्राम
६५६	२०६	६	आठ	अर्थ
,,	,,	१०	क्रिया यावत्	क्रिया (भ. २/९७) यावत्
,,	२०५	१४	कहा	वहां
६५६	२०६	२	प्रासुक विहार	प्रासुक-विहार
,,	,,	४	प्रासुक विहार	प्रासुक-विहार
,,	२०७	२	सोमिल! ज्ञान, दर्शन, चारित्र, तप	सोमिल! तप, नियम, संयम, स्वाध्याय,
			और संयम आदि	ध्यान, आवश्यक आदि
,,	२१०	३	उदीप्त	उदीरित
,,	२१२	१	प्रासुक विहार	प्रासुक-विहार
,,	,,	२	देवकुलों, स्त्री, पुरुष और नपुंसक-	देवकुलों, सभाओं, प्रपाओं, स्त्री-
			रहित व्यक्तियों	पुरुष- और नपुंसक-रहित वस्तियों
,,	,,	३	प्रासुक एषणीय पीठ-फलक	प्रासुक-एषणीय पीठ, फलक
६५६	२१२	३	विहार करता हूं	रहता हूं
,,	,,	४	प्रासुक विहार	प्रासुक-विहार
६५७	२१४	३	(सदृश	(सदृश-
,,	,,	४	धान्य-सरिसवय। जो	धान्य-सरिसवय। उनमें जो
,,	,,	६	जो धान्य-सर्षप	उनमें जो धान्य-सर्षप
,,	,,	,,	अशस्त्र-परिणत। जो	अशस्त्र-परिणत। उनमें जो
,,	,,	७	अभक्ष्य है। जो	अभक्ष्य हैं। उनमें जो

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६५७	२१४	८	अनेषणीय। जो	अनेषणीय। उनमें जो
,,	,,	९-११	अभक्ष्य हैं। जो	अभक्ष्य हैं। उनमें जो
,,	,,	१०	अयाचित हैं,	उनमें जो अयाचित हैं,
,,	,,	११	अलब्ध। जो	अलब्ध। उनमें जो
६५७	२१४	१२	श्रमण निर्ग्रंथों	श्रमण-निर्ग्रंथों
,,	२१६	२	प्रज्ञप्त है, द्रव्य-माष, काल-मास।	प्रज्ञप्त हैं, जैसे—द्रव्य-माष, काल-
			जो	मास। उनमें जो
,,	२१६	६	जो द्रव्य-माष	उनमें जो द्रव्य-माष
,,	,,	७	जो अर्थ-माष	उनमें जो अर्थ-माष
,,	,,	९	जो धान्य-माष	उनमें जो धान्य-माष
,,	,,	,,	जैसे शस्त्र-परिणत	जैसे—शस्त्र-परिणत
६५७	२१८	३	-कुलथा। जो	-कुलथा। उनमें जो
,,	,,	,,	प्रकार के	प्रकार की
६५८	,,	५	जो धान्य-कुलथा	उनमें जो धान्य-कुलथा
,,	२२१	२	ने वन्दन-नमस्कार	को वन्दन-नमस्कार
,,	,,	३	वक्तव्यता यावत्	वक्तव्य है (भ. २/९४) यावत्
,,	२२२	१	जाननेवाला यावत्	जानने वाला (भ. २/९४) यावत्
६५८	२२२	२	रहने लगा	रहता है।
,,	२२३	४	शंख की भांति वैसे ही निरवशेष	शंख की भांति वैसे ही निरवशेष
			वक्तव्यता यावत्	(वक्तव्य) है (भ. १२/२७,२८)
				यावत्
			शतक १९	
६५९	सं गा.	१	६. दीप.	६. द्वीप,
,,	सं गा.	३	हैं।	हैं ॥२॥
,,	१	१	राजगृह नगर यावत्	राजगृह (भ. १/४-१०) यावत्
			गौतम ने इस	(गौतम ने) इस
,,	,,	२	निर्वत्ति.	निर्वृत्ति,
,,	३	१	मनुष्य गर्भ	मनुष्य-गर्भ
६६०	७	१	क्या वे सम्यग्-दृष्टि हैं?	वे जीव क्या सम्यग्-दृष्टि हैं?
,,	८	१	वे जीव ज्ञानी हैं?	वे जीव क्या ज्ञानी हैं?
,,	१३,१४	३	नहीं है। किन्तु	नहीं है, किन्तु
,,	१५	१	अदत्तादान यावत्	अदत्तादान (भ. १/८४) यावत्
,,	,,	३	कहलाते हैं, यावत्	कहलाते हैं यावत्
,,	१५	५	भी ये जीव हमारे वधक हैं इस प्रकार	भी ('ये जीव हमारे वधक हैं।' इस
				प्रकार
६६१	१६	२	वक्रान्ति-पद	अवक्रान्ति-पद
,,	१९	१	वे जीव मारणान्तिक-समुद्घात	वे जीव क्या मारणान्तिक-समुद्घात
,,	२०	२	वक्रान्ति-पद	अवक्रान्ति-पद
,,	२१	१	अप्कायिक जीव	अप्कायिक-जीव
,,	,,	३	पृथ्वीकायिक का गम	पृथ्वीकायिकों का गम
६६१	२२	१	-जीव.....?	-जीव०?
,,	,,	२	पृथ्वीकायिक की भांति वक्तव्यता	इसी प्रकार (पृथ्वीकायिक-जीव (भ.
			इतना	१९/५) की भांति (वक्तव्य है)),
				इतना

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६६१	२३	४	तैजसकायिक की	तैजसकायिक (भ. २२/२३)
				की
६६१	२३	५	हैं। इतना	हैं, इतना
,,	२३	६	अन्तर्मुहूर्त। शेष पूर्ववत्	अन्तर्मुहूर्त, शेष पूर्ववत्।
,,	२४	३	कौन किससे अल्प, बहु,	कौन किससे अल्प, बहुत,
,,	,,	३	विशेषाधिक है?	विशेषाधिक हैं?
६६२	,,	२४	तीन (१८-३८) गमों	(१८-३८) तीन गमों
६६३	२७	१	सर्व सूक्ष्म	सर्वथा सूक्ष्म
,,	,,	२	काय सूक्ष्मतर है?	काय सबमें अतिशय सूक्ष्म है?
,,	३३	२	सूक्ष्म-वनस्पतिकायिक जीवों	सूक्ष्म-वनस्पतिकायिक-जीवों
,,	,,	९	बादर-तैजसकायिक जीवों	बादर-तैजसकायिक-जीवों
६६४	३४	३	युवा,	युवती,
,,	,,	८,१०	बार बार	बार-बार
,,	,,	१५	पृथ्वीकायिक जीव मरते हैं	पृथ्वीकायिक-जीव मरते हैं
,,	३५	१	पृथ्वीकायिक जीव	पृथ्वीकायिक-जीव
६६४	३५	२,११,१२,१५	विहरण करता है?	रहता है?
६६४	३६	२	विहरण करता है?	रहता है?
६६४	३६	३	की भांति वक्तव्यता	की भांति इसी प्रकार (वक्तव्य है)।
६६४	३६	३	तैजसकायिक,	तैजसकायिक भी।
,,	,,	४	वायुकायिक,	वायुकायिक भी
,,	,,	,,	वनस्पतिकायिक की	वनस्पतिकायिक भी
,,	,,	,,	विहरण करता है?	रहता है?
६६६	५६	२	हां, है	हां, है।
,,	,,	,,	मनुष्यों	मनुष्य
६६६	६१	१-२	है?	हैं? इसी प्रकार, इतना
			पूर्ववत्। इतना	
,,	६१	३	विपरीत हैं	विपरीत है
६६७	६१	४	स्तनितकुमार की	स्तनितकुमार तक
,,	,,	,,	मनुष्य की नैरयिक	मनुष्य नैरयिकों
६६७	६१	५	वैमानिक की	वैमानिक
६६७	६८	२	यावत् रमणीय (भ. २/११८)	(भ. २/११८) यावत् रमणीय
,,	६८	४	द्रव्यार्थिक की दृष्टि	द्रव्यार्थिक दृष्टि
,,	,,	४	यावत् स्पर्श पर्यव (भ. २/४९)	(भ. २/४९) यावत् स्पर्श-पर्यव
६६८	७८	४	इस प्रकार......	यह पैरा पिछले पैरे के साथ है।
६६८	७८	४	वंध यावत्	वंध (भ. ८/४१३) यावत्
,,	७८	४	यावत्।	यावत्—
६६९	८४	३	स्तनितकुमार	स्तनितकुमारों
,,	८६	४	हैं, यावत्	हैं यावत्
,,	८९	३	वक्तव्यता। गंध-निर्वृत्ति	(वक्तव्यता)। इस प्रकार गंध-निर्वृत्ति
६७०	९२	२	प्रज्ञप्त हैं।	प्रज्ञप्त है।
,,	९३	१	पृथ्वीकायिक जीवों	पृथ्वीकायिक-जीवों
,,	९६	२	सम्यक्-दृष्टि-निर्वृति	सम्यग्-दृष्टि-निर्वृत्ति

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६७१	९६	३	सम्यक्-मिथ्या-दृष्टि-निर्वृत्ति	सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि-निर्वृत्ति
,,	९९	२	मनो-योग-निर्वृत्ति	मन-योग-निर्वृत्ति
६७१	१०२	१	के प्रज्ञप्त हैं?	का प्रज्ञप्त है।
,,	,,	२	के प्रज्ञप्त हैं,	का प्रज्ञप्त है।
,,	१०३	१	कितने करण प्रज्ञप्त हैं?	करण कितने प्रकार का प्रज्ञप्त है?
,,	,,	२	पांच करण प्रज्ञप्त हैं,	(नैरयिकों के) करण पांच प्रकार का प्रज्ञप्त है,
६७१	१०४, १०५	१	के प्रज्ञप्त हैं?	का प्रज्ञप्त है?
,,	,,	२	पांच प्रकार के प्रज्ञप्त हैं,	पांच प्रकार का प्रज्ञप्त है,
६७१	१०५	२	के प्रज्ञप्त हैं,	का प्रज्ञप्त है,
६७२	१११	२	शतक में दीपकुमार उद्देशक	शतक में जैसा द्वीपकुमार-उद्देशक
६७२	१११	२-३	की वक्तव्यता यावत् अल्पर्द्धिक है।	(उक्त है) वैसा यावत् अल्पर्द्धिक हैं तक (वक्तव्य है)।
			शतक २०	
६७३	सं.गा.	१	४. परमाणु,	४. उपचय, ५. परमाणु,
,,	,,	२	सोपक्रम-जीव।	सोपक्रम जीव ॥१॥
,,	१	१	राजगृह नगर यावत्	राजगृह (भ. १/१०) यावत्
,,	,,	,,	यावत् गौतम ने इस	यावत् (गौतम ने) इस
,,	१	१	द्वीन्द्रिय	द्वीन्द्रिय-
,,	१	२	जीव	-जीव
,,	२	३	शतक (भ. १९/२२) में तेजस-कायिक जीवों की वक्तव्यता यावत्	शतक में तैजसकायिक जीवों की वक्तव्यता (भ. १९/२२) यावत्
,,	,,	५	हैं। नियमतः	हैं। नियमतः (सम्यग्-दृष्टि की अपेक्षा)
,,	,,	,,	और दो	और (मिथ्या-दृष्टि की अपेक्षा) नियमतः
६७४	३	४	त्रीन्द्रिय जीवों	त्रीन्द्रिय-जीव
,,	,,	५	जीवों	-जीव
,,	,,	,,	में, स्थिति	में और स्थिति
,,	,,	६	स्थिति की	स्थिति
,,	४	३	है, तीन दृष्टि,	है, दृष्टि तीनों ही
६७४	४	३-४	ज्ञान चार,	चार ज्ञान
६७४	५	४	रहे हैं किन्तु	रहे हैं, किन्तु
,,	६	२	इष्ट-अनिष्ट, रूप	इष्ट-अनिष्ट रूप,
,,	६	७	रहे हैं किन्तु	रहे हैं, किन्तु
,,	७	१	हैं? पृच्छा।	हैं—पृच्छा।
,,	७	५	ये जीव हमारे वधक हैं,	'ये जीव हमारे वधक हैं',
६७४	७	७,८	सर्वार्थसिद्ध तक से होता है।	सर्वार्थसिद्ध से।
,,	,,	९	केवली-	केवलि-
६७४	७	९	समुद्घात।	समुद्घात,
६७४	७	१०,११	यावत् सर्वार्थसिद्ध तक। (सर्वार्थसिद्ध में संयत ही उत्पन्न होते हैं।) (पण्णवणा	यावत् सर्वार्थसिद्ध में। (पण्णवणा
,,	,,	११	-११३) शेष द्वीन्द्रिय की भांति	-११३), शेष द्वीन्द्रियों की भांति

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६७४	७	८	९८	९२
,,	८	१	किससे	किनसे
,,	,,	२	विशेषाधिक है?	विशेषाधिक हैं?
,,	,,	३	जीव हैं। चतुरिन्द्रिय उससे	जीव हैं, चतुरिन्द्रिय-जीव उनसे
,,	,,	,,	त्रीन्द्रिय उससे	त्रीन्द्रिय-जीव उनसे
,,	,,	४	द्वीन्द्रिय उससे	द्वीन्द्रिय-जीव उनसे
६७५	११	२	वह यहां	वैसे ही यहां
,,	१२	१	अवगाढ़ है।	अवगाढ़ है?
६७५	,,	२	अवगाढ़ हैं।	अवगाढ़ है।
,,	,,	३	जैसे द्वितीय	द्वितीय
६७५	१३	१	संख्येय भाग	संख्येय-भाग
६७५	१३	१	अवगाढ़ है?	अवगाढ़ है?—पृच्छा
,,	,,	२	संख्यातवें भाग में	संख्यातवें-भाग में
,,	,,	,,	असंख्यातवें भाग में	असंख्यातवें-भाग में
६७५	१४	६	इस प्रकार (चारित्र-धर्म के वाचक) के	उस प्रकार के (चारित्र-धर्म के वाचक)
६७५	१५	५	तथा प्रकार	उस प्रकार
,,	१६	३	वीची,	वीचि,
,,	,,	,,	अंबरिस,	अंबरस,
,,	,,	,,	अर्त	अट्ट
,,	,,	,,	इस प्रकार	उस प्रकार
,,	१७	३	चेदा,	चेता,
,,	,,	,,	हिंदुक,	हिंदुक,
६७५	१७	४	इस प्रकार	उस प्रकार
६७६	१८	३	स्कन्ध, जो अन्य भी इस	स्कन्ध—जो अन्य भी उस
६७६	२१	शीर्षक	गर्भ-अवक्रममाण के वर्ण-आदि-पद	गर्भ में अवक्रममाण के वर्ण-आदि का पद
६७६	२१	१	अवक्रमण	उत्पन्न
६७६	२१	१	गंध, कितने	गंध, (इस प्रकार भ. १२/११९, १२०) कितने
६७६	२१	२	रस	स्पर्श
६७६	२१	२,३	परिणामों	परिणाम
६७६	२२	शीर्षक	×	कर्मतः विभक्ति-पद
६७६	२२	२	है, अकर्म	है? अकर्म
६७७	२६	१	परमाणु पुद्गल	परमाणु-पुद्गल
६७७	२६	७	स्यात्	१. स्यात्
,,	,,	,,	है। स्यात्	है। २. स्यात्
,,	,,	,,	स्यात् उष्ण	३. स्यात् उष्ण
६७७	२६	७ (दोनों बार), ८	स्पर्श वाला	×
,,	,,	,,	है। स्यात्	है। ४. स्यात्
,,	२७	११	यदि दो स्पर्श वाला है।	यदि दो स्पर्श वाला है?
,,	२८	२	अठारहवें शतक.....	यह पैरा पिछले पैरे के साथ है।

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६७७	२८	३	प्रज्ञप्त है। यदि	प्रज्ञप्त है। यदि
,,	,,	३	प्रज्ञप्त है। यदि	प्रज्ञप्त है। यदि
६७८	२८	४	नीले	नीले (बहुवचन)
,,	,,	५	काले	काले (बहुवचन)
,,	,,	५-६	लाल है।	लाल (बहुवचन) है।
,,	,,	६,७,८ (सर्वत्र)	साथ	साथ भी
,,	,,	८	पीला	पीले
६७८	२८	२०	चार भंग वक्तव्य हैं। यदि तीन स्पर्श वाला?	चार भंग वक्तव्य हैं। यदि तीन स्पर्श वाला है?
,,	,,	२२	यहां तीन	यहां भी तीन
,,	,,	२८	स्कन्ध-स्पर्श	स्कन्ध में स्पर्श
,,	,,	३१	देश शीत (बहुवचन)	देश शीत (बहुवचन),
,,	२९	२	अठारहवें शतक.....	यह पैरा पिछले पैरे के साथ है।
,,	,,	४	यदि एक	यह पैरा पिछले पैरे के साथ है।
,,	,,	,,	शुक्ल है। यदि दो वर्ण वाला है?	शुक्ल है। यदि दो वर्ण वाला है?
६७९	२९	२७	वक्तव्यता। यदि तीन स्पर्श वाला है?	वक्तव्य है। यदि तीन स्पर्श वाला है?
,,	३०	१,२	प्रज्ञप्त हैं? अठारहवें शतक......	प्रज्ञप्त है? अठारहवें शतक.....
६८०	३०,३१	३,४	वक्तव्यता। यदि तीन वर्ण वाला है?	वक्तव्य हैं। यदि तीन वर्ण वाला है?
,,	३१	२,३	प्रज्ञप्त हैं। यदि एक वर्ण वाला है?	प्रज्ञप्त है। यदि एक वर्ण वाला है?
६८१	३२	२	पांच-प्रदेशी स्कन्ध.....	यह पैरा पिछले पैरे के साथ है।
६८१	३२	२	पांच-प्रदेशी	पंचप्रदेशिक
,,	,,	३	यदि एक वर्ण वाला है?	यह पैरा पिछले पैरे के साथ है।
६८२	३३	२,३	स्पर्श प्रज्ञप्त हैं। यदि एक वर्ण वाला है?	स्पर्श वाला प्रज्ञप्त है। यदि एक वर्ण वाला है?
६८३	३४	२	स्पर्श प्रज्ञप्त हैं।	स्पर्श वाला प्रज्ञप्त है।
६८३	३५	२,३	चार स्पर्श प्रज्ञप्त हैं।	चार स्पर्श वाला प्रज्ञप्त है।
,,	३६	१,२	वर्ण वाला है? इस प्रकार.......	वर्ण वाला है०? इस प्रकार......
,,	३६	२,३	आठ स्पर्श प्रज्ञप्त हैं।	आठ स्पर्श वाला प्रज्ञप्त है।
६८४	३६	२४,३३ ३९	सर्व कर्कश.....	यह पैरा पिछले पैरे के साथ है।
,,	,,	२७	सर्व गुरु.......	यह पैरा पिछले पैरे के साथ है।
,,	,,	३५,३७	सर्व मृदु......	यह पैरा पिछले पैरे के साथ है।
६८५	३६	४५,४८	सर्व गुरु.......	यह पैरा पिछले पैरे के साथ है।
,,	,,	४६,५४	सर्व शीत.......	यह पैरा पिछले पैरे के साथ है।
,,	,,	५४	छह स्पर्श......	यह पैरा पिछले पैरे के साथ है।

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६८५	३६	६२,६४	सर्व कर्कश.......	यह पैरा पिछले पैरे के साथ है।
		६६		
,,	,,	६८	सर्व मृदु.......	यह पैरा पिछले पैरे के साथ है।
,,	,,	७०	सर्व गुरु.......	यह पैरा पिछले पैरे के साथ है।
,,	,,	७२	सर्व लघु.......	यह पैरा पिछले पैरे के साथ है।
६८६	,,	७६	सर्व उष्ण.......	यह पैरा पिछले पैरे के साथ है।
,,	,,	७८	सर्व स्निग्ध.......	यह पैरा पिछले पैरे के साथ है।
,,	,,	८०	सर्व रूक्ष.......	यह पैरा पिछले पैरे के साथ है।
,,	,,	९०,९२	देश कर्कश.......	यह पैरा पिछले पैरे के साथ है।
		९४		
,,	,,	९७,९८ (दोनों बार)	इसके पश्चात्.......	यह पैरा पिछले पैरे के साथ है।
६८६	३६	१०२	स्पर्श के	स्पर्श से
,,	,,	१०३	इस प्रकार.......	यह पैरा पिछले पैरे के साथ है।
६८६	३७	२	परमाणु के चार प्रकार प्रज्ञप्त हैं,	परमाणु चार प्रकार का प्रज्ञप्त है,
६८७	३९	२	अविभाजित	अविभाज्य
,,	४२	१	ऐसा ही है। यावत्	ऐसा ही है यावत्
,,	,,	७	होता है। इतना	होता है, इतना
६८७	४३	७,८	आहार की वक्तव्यता है। शेष	आहार वक्तव्य है, शेष
,,	४४	३	उपपन्न होता है।	उपपात करवाना चाहिए—उपपात
				वक्तव्य है।
६८७	४४	२,३	होता है? पूर्ववत्	होता है० ? इसी प्रकार
,,	४५	१	हुआ।	हुआ,
,,	४५	४	उपपन्न होता है।	उपपात करवाना चाहिए—उपपात
				वक्तव्य है।
,,	४६	२	हुआ।	हुआ,
,,	४६	३,४	आहार करता है?	आहार करता है० ?
			शेष पूर्ववत्	शेष पूर्ववत्
,,	,,	४	यावत् निक्षेप।	यावत् निक्षेपक (उपसंहार करना
				चाहिए)
६८८	४८	२	उपपन्न होता है, शेष.....	उपपन्न होता है० ?
,,	,,	३	इस प्रकार पृथ्वीकायिक की भांति	शेष पृथ्वीकायिक की भांति वक्तव्यता
६८८	४८	४	समवहत होता है	समवहत हुआ
,,	,,	४,५,६	उपपात होता है।	उपपात करवाना चाहिए।
,,	४९	३	हैं?	है० ? शेष पूर्ववत्
			शेष पूर्ववत्	
,,	४९	५,७	उपपात होता है।	उपपात करवाना चाहिए।
,,	५०	२,३	उपपन्न होता है?	उपपन्न होता है० ? इस प्रकार.....
			इस प्रकार.......	
६८८	५०	४	(बीच)	(मध्य भागों)
,,	,,	४,५	समवहत ज्ञातव्य है। शेष पूर्ववत्	समवघात ज्ञातव्य है, शेष पूर्ववत्
			यावत् बीच में समवहतता ज्ञातव्य है	यावत्
			शेष पूर्ववत् यावत्	

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६८९	५०	६	बीच	अन्तरों में
६८९	५०	६	तनुवातवलय	तनुवात-वलय
६८९	५०	७	है।	है,
६८९	५०	८	जा रहा है यावत् उपपन्न होता है।	जा रहा है (भ. १७/७८-८०) यावत्
				उपपन्न होता है।
,,	५२	२	बन्ध तीन प्रकार का प्रज्ञप्त है,	तीन प्रकार का बन्ध प्रज्ञप्त है,
६८९	५८	३	वक्तव्यता,	वक्तव्यता।
,,	५९	२	पूर्ववत् निरन्तर	पूर्ववत्। निरन्तर
६९०	५९	७,८	विषय का, श्रुत-अज्ञान के विषय	विषय का, श्रुत-अज्ञान के विषय का,
			का, विभंग-ज्ञान के विषय का,	विभंग-ज्ञान के विषय का—
			श्रुत-अज्ञान के विषय का, विभंग-	
			ज्ञान के विषय का	
६९०	५९	१०	है यावत्	है। यावत्
,,	६०	२	बन्ध तीन प्रकार का प्रज्ञप्त है,	तीन प्रकार का बन्ध प्रज्ञप्त है,
६९०	६५	१	भरत, पांच ऐरवत	भरतों, पांच ऐरवतों
,,	६५	३	आयुष्मान् श्रमण!	आयुष्मन् श्रमण!
,,	६६	शीर्षक	पांच-महाव्रत-चातुर्याम-	पंचमहाव्रतिक-चतुर्याम-
,,	,,	१,४	पांच-महाव्रत,	पंचमहाव्रतिक
६९०	६६	३	भरत में, पांच ऐरवत में	भरतों में, पांच ऐरवतों में
,,	,,	५ (दोनों बार)	चातुर्याम	चतुर्याम
६९१	६९	५	का विच्छेद सर्वत्र प्रज्ञप्त	सर्वत्र ही व्यवच्छिन्न
६९१	७३	२	तक रहेगा।	तक रहेगा,
,,	७४	२	चातुर्वर्ण	चतुर्वर्ण
,,	७५	२	द्वादशांग गणिपिटक हैं	बारह अंगों वाला गणिपिटक है,
६९२	७६	६	देव रूप में	देव-रूप में
,,	७७	२	वाणमन्तर ज्योतिष्क,	वानमन्तर, ज्योतिष्क,
६९२	७९	शीर्षक	चरण-पद	विद्या-जंघा-चारण-पद
६९२	८१	३	द्वीप में यावत् उसका	द्वीप में (भ. ६/७५) यावत् उसका
,,	,,	५	महर्द्धिक देव यावत् महा	महर्द्धिक देव (भ. १/३३९) यावत्
				महा
६९३	८३	७	उस स्थान की	जो उस स्थान की
,,	८४	२	जंघा चारण	जंघा चारण-
,,	,,	३	लब्धि नामक लब्धि	-लब्धि नामक लब्धि
,,	८५	५	ऐश्वर्य शाली यावत्	ऐश्वर्यशाली यावत्
६९३	८७	५	जम्बूद्वीप	जम्बूद्वीप-
६९४	८७	५	द्वीप में	-द्वीप में
,,	,,	६	प्रज्ञप्त है। उस स्थान	प्रज्ञप्त है। जो उस स्थान
,,	,,	७	नहीं होती। उस स्थान	नहीं होती। जो उस स्थान
६९४	९०	३	पृथ्वीकायिक की	पृथ्वीकायिक
,,	९१	शीर्षक	×	उपपदन-उद्वर्तन-पद
,,	,,	४	वैमानिकों	वैमानिक
,,	९४-९६	३	वैमानिकों	वैमानिक

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६९५	९६	२	परप्रयोग से	पर-प्रयोग से
६९५	९७	शीर्षक	×	कति-संचित
,,	९८	१,५	कहा जा रहा है— यावत्	कहा जा रहा है यावत्
,,	१००	१	कहा जा रहा है— यावत्	कहा जा रहा है यावत्
,,	,,	४	की नैरयिक	नैरयिकों
,,	१०२	१	अवक्तव्यक संचित	अवक्तव्यक-संचित
,,	,,	४	है— यावत्	है यावत्
,,	१०३	२	किससे अल्प,	किनसे अल्प,
,,	१०३	३	उससे संख्येय-गुण	उनसे संख्येय-गुणा
,,	,,	४	उससे असंख्येय-गुण	उनसे असंख्येय-गुणा
६९५	१०३	५	के अल्प-बहुत्व की वक्तव्यता।	का अल्पबहुत्व (वक्तव्य है)।
				(एकेन्द्रिय-जीवों के यह अल्पबहुत्व
				नहीं होता।)
६९६	१०४	१	किससे	किनसे
,,	,,	२	विशेषाधिक है?	विशेषाधिक हैं?
,,	,,	३	उससे संख्येय गुण है।	उनसे संख्येय-गुणा हैं।
,,	१०५	शीर्षक	षट्क समर्जित-आदि-पद	षट्क-समर्जित-आदि-पद
,,	१०६	२	अनेक षट्क-	अनेक-षट्क-
,,	,,	४	दो-अथवा तीन-,	दो- अथवा तीन-,
,,	,,	४,८	पांच—	पंचक—
,,	,,	७,९	कहा जा रहा है—यावत्	कहा जा रहा है पूर्ववत् यावत्
६९६	१०७	१	की पृच्छा	की—पृच्छा
६९६	१०७	२	है, नोषट्क-	हैं, नोषट्क-
६९६	१०७	२	हैं, षट्क-	हैं, षट्क-
,,	,,	३	हैं। अनेक-	हैं, अनेक-
,,	१०७	३	अनेक-षट्क-एक-नोषट्क-	अनेक-षट्क- और एक-नोषट्क-
,,	१०८	१	कहा जा रहा है—यावत् अनेक-	(ऐसा कहा जा रहा है) यावत् (अनेक
			-षट्क-एक-नोषट्क-समर्जित हैं?	-षट्क-एक-नोषट्क-) समर्जित भी
				हैं?
,,	,,	४	पांच-	पंचक—
,,	,,	४	अनेक-षट्क-एक-	अनेक-षट्क- और एक-
,,	,,	५	हैं। इस प्रकार	हैं। इस अपेक्षा से (यह कहा जा रहा है)
				यावत् (अनेक-षट्क- और एक-
				-नोषट्क-) समर्जित भी हैं। इस प्रकार
,,	,,	५	वनस्पतिकायिक की	वनस्पतिकायिकों की
,,	,,	५	द्वीन्द्रिय की	द्वीन्द्रिय
,,	,,	६	सिद्ध की	सिद्ध
,,	१०९-१११	सर्वत्र	संख्येय-गुण	संख्येय-गुणा
,,	,,	,,	असंख्येय-गुण	असंख्येय-गुणा
६९७	११०	३	हैं। अनेक-	हैं, अनेक-
,,	११०	४	संख्येय-गुण	संख्येय-गुणा

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
६९७	११०	४	वनस्पतिकायिक की	वनस्पतिकायिकों की
,,	,,	४	द्वीन्द्रिय	द्वीन्द्रियों
,,	,,	५	नैरयिक की	नैरयिकों की
,,	१११	सर्वत्र	संख्येय-गुण	संख्येय-गुणा
,,	११२	२,३	अनेक-द्वादश-नोद्वादश-समर्जित हैं?	अनेक-द्वादशक- और एक-नोद्वादशक-समर्जित हैं?
,,	११४	३	अनेक-द्वादश-नोद्वादश-समर्जित भी हैं।	अनेक-द्वादशक और एक-नोद्वादशक-समर्जित भी हैं।
,,	११५	१	कहा जा रहा है—यावत अनेक-द्वादश-नोद्वादश-समर्जित भी	(ऐसा कहा जा रहा है) यावत् (अनेक-द्वादशक- और एक-नोद्वादशक-) समर्जित भी
,,	,,	३	द्वादश	द्वादशक
,,	,,	३	वे द्वादश-समर्जित हैं।	वे पृथ्वीकायिक द्वादशक-समर्जित हैं
,,	,,	४	-द्वादश-	-द्वादशक-
,,	,,	४	ग्यारह—	एकदशक—
,,	,,	५	वे अनेक-द्वादश-नोद्वादश-समर्जित हैं।	वे पृथ्वीकायिक अनेक-द्वादशक- और एक-नोद्वादशक- समर्जित हैं।
६९८	११५	६	कहा जा रहा है—यावत् अनेक द्वादश-नोद्वादश-समर्जित भी हैं।	(कहा जा रहा है) यावत् (अनेक-द्वादशक- और एक-नोद्वादशक-) समर्जित भी हैं।
,,	,,	७	वनस्पतिकायिक की	वनस्पतिकायिक
६९८	११५	७	सिद्धों की	सिद्ध
६९८	११५	७	नैरयिक की	नैरयिकों को
६९८	११६	१	सबके अल्प-बहुत्व की	सबका अल्पबहुत्व
६९८	११६	२	भांति	भांति (पूर्ति भ.२०/१०९)
६९८	११७-१२०	सर्वत्र	-चतुरशीतिक-नोचतुरशीतिक	-चतुरशीतिक- और एक-नोचतुरशीतिक-
६९८	११९	३	अनेक-चतुरशीति-	अनेक-चतुरशीतिक- और एक-
६९८	१२०	१	कहा जा रहा है—यावत् अनेक-	कहा जा रहा है यावत् (अनेक-समर्जित
६९८	१२०	३	चौरासी-	चतुरशीतिक-
६९८	१२०	सर्वत्र	तीन-उत्कृष्टतः तिरासी-	तीन-, उत्कर्षतः त्र्यशीतिक-
६९८	,,	४,६	वे	वे सिद्ध
६९८	१२०	५	चौरासी-	चतुरशीतिक-
,,	,,	७	यावत् चतुरशीति-नोचतुरशीति-समर्जित हैं	यावत् (अनेक-चतुरशीतिक- और एक-नो-चतुरशीतिक-) समर्जित नहीं हैं।
६९९	१२१	१	सबके	सबका
६९९	१२१	२	भांति	भांति (पूर्ति भ.२०/१०९)
६९९	१२१	२	की षट्क-	षट्क-
६९९	१२१	२	चतुरशीति	चतुरशीतिक

शतक २१

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७००	१	१	नगर यावत् गौतम ने इस प्रकार कहा—	(नगर) (भ.१/४-१०) यावत् (गौतम ने) इस प्रकार कहा—
७००	१	३	होते हैं? क्या तिर्यग्-योनिकों	होते हैं? तिर्यग्योनिकों
,,	,,	५	पण्णवणा.....	यह पैरा पिछले पैरे के साथ है।
,,	,,	,,	(४२६) अवक्रांति-पद	अवक्रांति-पद (पण्णवणा ४६६)
७००	२	३	किए जाने वाले) अपहार को	किया जाने वाला अपहार
७००	४	३	की भी	भी
७००	५	२	इन्द्रियों की	इन्द्रियां
७०१	६-८	१	मूल जीव	मूल-जीव
,,	७	२	व्रीहि,	व्रीहि,
,,	,,	,,	मूल जीव	मूल-जीव
७०१	,,	४	इस प्रकार........	यह पैरा पिछले पैरे के साथ है।
७०१	७	५	आहार की	आहार
७०१	७	६	वक्तव्यता।	वक्तव्य है,
,,	७	६	पृथक्त्व वर्ष	पृथक्त्व-वर्ष
७०१	७	७	उद्वर्तना की	उद्वर्तना
,,	१०	२	आ कर	आकर
,,	१२	३	ज्ञातव्य है।	ज्ञातव्य हैं।
७०१	१२	५	चार हैं।	चार हैं,
७०१	१२	६	-अंगुल।	अंगुल,
७०१	१४	१	की पूर्ण	पूर्णतः
७०१	१५	१	निष्पाव (सेम) कुलथी,	निष्पाव (सेम), कुलथी,
७०२	१५,१६	४	इस प्रकार......	यह पैरा पिछले पैरे के साथ है।
,,	१६	२	मूलकबीज—	मूलक, बीज—
,,	१७	३,४	होते हैं, भन्ते! वे जीव कहां से (आकर) उत्पन्न होते हैं? इस प्रकार......	होते हैं० ? इस प्रकार....
७०२	१७	६	सर्वत्र	सर्वत्र ही
७०२	,,	६	उसी प्रकार।	पूर्ववत्।
७०२	१८	३,४,५	होते हैं, भन्ते! वे जीव कहां से (आकर) उत्पन्न होते हैं? इस प्रकार......	होते हैं० ? इस प्रकार....
,,	,,	६	(भ. २१/१७) में)	(भ. २१/१७ में)
,,	,,	७	चार हैं। शेष उसी प्रकार।	चार हैं, शेष पूर्ववत्।
७०२	१९	४	(तीरवुर)	(तीखुर)
,,	,,	६,७,८	होते हैं, भन्ते! वे जीव कहां से (आकर) उत्पन्न होते हैं? इस प्रकार......	होते हैं० ? इस प्रकार....
७०३	२०	४,५,६	होते हैं, भन्ते! वे जीव कहां से (आकर) उत्पन्न होते हैं? इस प्रकार......	होते हैं० ? इस प्रकार....

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७०३	२१	३,४,५	होते हैं, भन्ते! वे जीव कहां से (आकर) उत्पन्न होते हैं? इस प्रकार......	होते हैं० ? इस प्रकार....

शतक २२

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७०४	१	शीर्षक	ताल-आदि जीवों में	ताल-आदि-जीवों में
७०४	१	१	नगर यावत् गौतम ने	(नगर) (भ. १/४-१०) यावत् (गौतम ने)
७०४	१	४	उत्पन्न होते हैं?	उपपन्न होते हैं०?
,,	१	१३ (दोनों बार)	शालि	शालि
,,	२	शीर्षक	नीम-आदि एकास्थिक-वृक्षों में उपपात-आदि-पद	(नीम-आदि-एकास्थिक-वृक्षों में उपपात-आदि की पृच्छा)
७०५	२	५	सेहुंड कायफल,	सेहुंड, कायफल,
७०५	२	५,६	होते हैं, भन्ते! वे जीव कहां से (आकर) उपपन्न होते हैं?	होते हैं०?
७०५	२	७	वक्तव्य हैं	(वक्तव्य हैं)
७०५	३	शीर्षक	हडसंधारी आदि बहुबीजक-वृक्षों में उपपात-आदि-पद	(हडसंधारी-आदि-बहुबीजक-वृक्षों में उपपात-आदि की पृच्छा)
७०५	३	४	-कुड़ा,	—कुंडा,
७०५	३	५	होते हैं?	होते हैं०?
७०५	३	६	संदर्भ में मूल	संदर्भ में भी मूल
७०५	३	७	चाहिए। यावत्	चाहिए यावत्
७०५	४	शीर्षक	बैंगन-आदि गुच्छों में उपपात-आदि-पद	(बैंगन-आदि-गुच्छों में उपपात-आदि की पृच्छा)
७०५	४	१,२	ज्ञातव्य है, यावत्	ज्ञातव्य है यावत्
७०५	५	२	पाढल,	पाटल,
७०५	४	२-३	उत्पन्न होते हैं, भंते! वे जीव कहा से (आकर) उपपन्न होते हैं?	उपपन्न होते हैं०?
,,	,,	३	संदर्भ में मूल	संदर्भ में भी मूल
,,	,,	४	सदृश जानने चाहिए।	सदृश निरवशेष (जानने चाहिए)।
,,	५	शीर्षक	श्वेतपुष्प-कटसरैया-आदि गुल्मों में उपपात आदि-पद	(श्वेतपुष्प-कटसरैया-आदि-गुल्मों में उपपात-आदि की पृच्छा)
७०५	५	२	पण्णवणा (१/३८) की गाथानुसार ज्ञातव्य है, यावत्	पण्णवणा (गुल्म-वर्ग, १/३८) की गाथानुसार (पदच्छेद करणीय है) यावत्
७०५	५,६	३-४	उत्पन्न होते हैं, भंते! वे जीव कहां से (आकर) उपपन्न होते हैं?	उपपन्न होते हैं०?
,,	५,६	४	संदर्भ में मूल	संदर्भ में भी मूल
,,	,,	५	जानने चाहिए।	(जानने चाहिए।)
,,	६	शीर्षक	×	(पुष्पफली-आदि-वल्लि-वर्ग में उपपात-आदि की पृच्छा)
७०५	६	१-२	पण्णवणा (पद १, वल्लि-वर्ग के अनुसार	पण्णवणा (वल्लि-वर्ग, १/४०) की गाथानुसार ताल-वर्ग की भांति

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७०५	६	२	करणीय है, यावत्	करणीय हैं यावत्
७०६	६	७	शेष उसी प्रकार। इस प्रकार छह	शेष पूर्ववत्। इस प्रकार छहों ही
			शतक २३	
७०७	१	शीर्षक	आलुक-आदि जीवों में	आलुक-आदि-जीवों में
,,	१	१	राजगृह नगर यावत् गौतम ने	राजगृह (नगर) (भ. १/४-१०) यावत् (गौतम ने)
,,	१	२	कृष्णपुष्पवाली	कृष्णपुष्प वाली
७०७	१	४,५	होते हैं, भन्ते! वे जीव कहां से (आकर) उपपन्न होते हैं।	होते हैं०?
७०७	१	७	उत्पन्न	उपपन्न
७०७	१	८	गौतम! ये जीव	गौतम! वे जीव
७०७	१	१०	एवं उत्कर्षतः अन्तर्मुहूर्त, शेष उसी प्रकार	भी उत्कर्षतः भी, अंतर्मुहूर्त, शेष पूर्ववत्
,,	२	शीर्षक	×	(लोही-आदि में उपपात-आदि की पृच्छा)
,,	२	२,३	होते हैं, भन्ते! वे जीव कहां से (आकर) उपपन्न होते हैं।	होते हैं०?
,,	२	३	(भ. २३/१) में	(भ. २३/१ में
७०७	२	४	भांति कहने चाहिए,	भांति (वक्तव्य हैं),
७०७	२	५	भांति कहनी चाहिए, शेष उसी प्रकार	भांति (वक्तव्य है), शेष पूर्ववत्।
,,	४	शीर्षक	×	(आय-आदि में उपपात-आदि की पृच्छा)
७०७	४	१	आय कुहण (भूमि स्फोट), काय, ग्रन्थिपर्ण, कुन्दुरु	आय, काय (ग्रन्थिपर्ण), कुहण (भूमि स्फोट), कुन्दुरु
७०८	४	३	होते हैं, भन्ते! वे जीव कहां से (आकर) उत्पन्न होते हैं।	होते हैं०?
७०८	४	५	अविकल रूप में कहने चाहिए— केवल इतना	निरवशेष (वक्तव्य हैं), इतना
७०८	४	६	शेष उसी प्रकार।	(वक्तव्य है), शेष पूर्ववत्
७०८	६	शीर्षक	×	पाठा-आदि में उपपात-आदि की पृच्छा
७०८	६	२,३	होते हैं, भन्ते! वे जीव कहां से (आकर) उत्पन्न होते हैं।	होते हैं०?
७०८	६	४-५	अविकल रूप में कहने चाहिए— केवल इतना	निरवशेष (वक्तव्य हैं), इतना
७०८	६	६	शेष उसी प्रकार	वक्तव्य है, शेष पूर्ववत्
७०८	८	शीर्षक	×	(माषपर्णी-आदि में उपपात-आदि की पृच्छा)
,,	८	१	क्षीरकाकाली,	क्षीरकाकोली,
,,	,,	४,५	होते हैं, भन्ते! वे जीव कहां से (आकर) उपपन्न होते हैं?	होते हैं०?
७०८	८	६	अविकल रूप में कहने चाहिए।	निरवशेष (वक्तव्य हैं)
७०८	८	६	इन पांच	इन पांचों ही

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७०८	८	७	कहने चाहिए।	(वक्तव्य हैं)।
,,	,,	७	उत्पन्न नहीं होते हैं।	उपपन्न नहीं होते।
			शतक २४	
७०९	सं.गा.	२	१०. उपयोग ११. संज्ञा	१०. उपयोग ॥१॥ ११. संज्ञा
७०९	१	२	राजगृह में यावत् इस प्रकार कहा (भ. २/४-२०)	राजगृह में (भ. २/४-२०) यावत् इस प्रकार कहा
,,	सं.गा.	४	हैं।	हैं॥२॥
,,	,,	६	होते हैं।	होते हैं॥३॥
७०९	३	शीर्षक	पचेन्द्रिय	पंचेन्द्रिय
७११	११	२	यावत् स्पर्शनेन्द्रिय (भ. २/७७)	यावत् (भ. २/७७) स्पर्शनेन्द्रिय।
७१२	२१	शीर्षक	वेदक-द्वार	वेदना-द्वार
७१२	२४	शीर्षक	अध्यवसाय-द्वार	अध्यवसान-द्वार
७१२	२७	७	करता है।	करता है। यह कायसंवेध है—एक काय से दूसरे काय में जाकर अथवा तुल्य काय में जाकर यथासंभव उसी काय में आना।
७१३	२९	२	कथनीय है यावत् अनुबन्ध तक (भ. २४/८-२६)	कथनीय है (भ. २४/८-२६) यावत् अनुबन्ध
,,	३२	२	वक्तव्य है यावत् (भ.२४/८-२६) अनुबन्ध तक	वक्तव्य है (भ. २४/८-२६) यावत् अनुबन्ध
७१४	३७	३	अप्रशस्त-अध्यवसान	अप्रशस्त अध्यवसान
७१४	३८	२	-पृथ्वी में यावत् गति	-पृथ्वी में (भ.२४/२७) यावत्
,,	४०,४३	२	अध्यवसाय	अध्यवसान
,,	४१	२	जघन्य-काल	जघन्य काल
७१५	४३	२-३	अनुबन्ध। यावत्-(भ. २४/८-२६, ३५-३७)	अनुबन्ध (भ. २४/८-२६, ३५-३७) यावत्—
७१५	४४	२	में यावत् (भ. २४/२७) गति-	में (भ. २४/२७) यावत् गति-
७१५	४६	३,४	वक्तव्य है। शेष वक्तव्यता पूर्ववत्	(वक्तव्य है)। अवशेष पूर्ववत् (भ. २४/८-२६) (वक्तव्य है)।
,,	४७	२	पृथ्वी में यावत् गति	पृथ्वी में (भ. २४/२९) यावत् गति
७१६	५२	२	यावत् (भ. २४/४६)।	(भ. २४/४६)। यावत्—
७१७	५५	२	होते हैं.....पृच्छा	होते हैं—पृच्छा
७१७	५५	३	असंज्ञी यावत्	असंज्ञी (भ. २४/४,५)
७१७	५५	४	हैं (भ. २४/४,५)	हैं,
,,	५६	३,४	में यावत् अधःसप्तमी में। (भ. २/७६)	में (भ. २/७५,७६) यावत् अधःसप्तमी में।
७१७	५८	२	असंज्ञी की भांति वक्तव्यता। (भ. २४/८)	असंज्ञी (भ. २४/८) की भांति (वक्तव्य हैं)।
,,	६१	३	अथवा अज्ञान की भजना	अथवा तीन अज्ञान की भजना
,,	६१	६	होते हैं। शेष-अवशेष पूर्ववत्। यावत्—	होते हैं, अवशेष पूर्ववत् यावत्—

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७१८	६४	२	है यावत् (भ. २४/५८-६२) —काल	है (भ. २४/५८-६२) यावत् काल।
७१८	६५	४	है। यावत्	है यावत्
७१८	६७	६	शेष जैसा प्रथम	शेष प्रथम
७१९	६९,७१	२	यावत् (भ. २४/६७)	(भ. २४/६७) यावत्
७१९	७३	२	पर्यवसान—(भव की अपेक्षा तक) वहां	पर्यवसान (भव की अपेक्षा तक)— वहां
७२०	७५	२	वक्तव्य है यावत्	वक्तव्य है (भ. २४/७३) यावत्
७२०	७७	२	है यावत् भवादेश	है (भ. २४/७३) यावत् भवादेश
७२०	७७	२	जघयंतः	जघन्यतः
,,	,,	५	इस प्रकार..........	यह पैरा पिछले पैरे के साथ है।
७२०	,,	५	उत्क्षेप-	उत्क्षेप-
७२०	७७	५	निक्षेप-	निक्षेप—
,,	७९	२	है, यावत् भवादेश	है (भ. २४/५८-६२) यावत् भवादेश
७२१	७९	१७	संहनन........	यह पैरा पिछले पैरे के साथ है।
७२१	७९	१८	संहनन वाले यावत्	संहनन वाले (ठा. ६/३०) यावत्
७२१	७९	२१	वाले। शेष	वाले, शेष
७२१	८१	४	पूर्ववत् यावत् अनुबन्ध तक (भ. २४/७९)।	पूर्ववत् (भ. २४/५८-६२) यावत् अनुबन्ध तक (वक्तव्य है)।
७२२	८२	३,४	अपेक्षा वहीं वक्तव्य है यावत्	अपेक्षा भी वही (वक्तव्य है) (भ. २४/६३,६४) यावत्
७२२	८३	३	वक्तव्य है यावत् अनुबन्ध तक (भ. २४/८१)।	(भ. २४/६५) यावत् अनुबंध तक।
,,	८४	३	नैरयिक की (भ. २४/६७) वक्तव्यता	नैरयिक (भ. २४/६६,६७) की वक्तव्यता
,,	८५	३	गमक (भ. २४/६७)	गमक (भ. २४/८४)
,,	,,	,,	अविकल रूप से	निरवशेष
,,	८६	३	वक्तव्य है यावत् अनुबन्ध तक (भ. २४/८१)।	(भ. २४/८४) यावत् अनुबन्ध तक
७२३	८७	२	अधः-सप्तमी-पृथ्वी	अधःसप्तमी-पृथ्वी
७२३	८८	२	वक्तव्यता यावत्	वक्तव्यता (भ. २४/८१) यावत्
,,	८९	३	सदृश	सदृश (भ. २४/८७,८८)
,,	९०	३	यावत् अनुबंध तक (भ. २४/८७, ८८)।	(भ. २४/८७,८८) यावत् अनुबन्ध तक।
७२४	९४	३-४	यावत् अधः सप्तमी में (भ. २/७५)	(भ. २/७५) यावत् अधः सप्तमी में
७२४	९६	५,६	-जीवों की भांति वक्तव्य है। (भ. २४/६०,६१) भवादेश तक। केवल इतना	-जीवों (भ. २४/५९-६२) की भांति (वक्तव्य है) यावत् भवादेश तक, इतना
७२४	९७	२	(भ. २४/९५-९६),	(भ. २४/९५-९६),
७२४	९८	२	है। वही वक्तव्यता, केवल	है, वही वक्तव्यता (भ. २४/९५-९६),

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७२५	९९	२	है। वही वक्तव्यता (भ. २४/९५)	है, वही वक्तव्यता (भ. २४/९५-९६),
७२५	९९	७	है यावत्	है (भ. २४/९५-९६) यावत्
,,	१००	२-४	वक्तव्यता। (भ. २४/९९) केवल इतना विशेष है— काल की अपेक्षा......	वक्तव्यता (भ. २४/९९), इतना विशेष है—काल की अपेक्षा.....
७२६	१०३	२	गमक की भांति वक्तव्यता,	गमक (भ. २४/१०२) की भांति वक्तव्यता
७२६	१०६	४	पूर्ववत् यावत्	पूर्ववत् (भ. २४/९६) यावत्
७२६	१०६	१०	नैरयिक स्थिति और कायसंवेध ज्ञातव्य है।	नैरयिक-स्थिति और काल की अपेक्षा कायसंवेध ज्ञातव्य हैं।
७२७	१०७	५	औधिक की भांति वक्तव्य है। (भ. २४/१०५) कायसंवेध	औधिक (भ. २४/१०५,१०६) की भांति (वक्तव्य है)। कायसंवेध
७२७	१०८	३	है। केवल	है,
७२७	१०८	४	अनुबन्ध की	अनुबन्ध भी
,,	१०८	५	सदृश	सदृश (भ. २४/१०५, १०६),
७२७	१०८	५	नैरयिक स्थिति	नैरयिक-स्थिति
७२७	१०८	६	वक्तव्य है।	ज्ञातव्य है।
७२७	१०८	१०	अल्प......	यह पैरा पिछले पैरे के साथ है।
७२८	१०८	१८	होता है। (भ. २४/७९)	होता है (भ. २४/७९)।
७२८	११०	३	पूर्ववत् यावत्	पूर्ववत् (भ. २४/१०६) यावत्
७२८	११०	४	का) काल	का)। काल
७२८	१११	२	(भ. २४/११०) इतना	(भ. २४/११०), इतना
७२८	११२	२	(भ. २४/११०) इतना	(भ. २४/११०), इतना
७२८	११२	३	ज्ञातव्य है।	ज्ञातव्य हैं।
७२९	११३	१२	षष्ठगमक	षष्ठ गमक
७२८	११४	६	नैरयिक स्थिति	नैरयिक-स्थिति
७२८	११४	७	ज्ञातव्य है।	ज्ञातव्य हैं।
७२८	११४	१३	-सागरोपम।	-सागरोपम।)
७३०	११८	२	(भ. २४/८-५३) इतना विशेष	(भ. २४/८-५३), इतना विशेष
,,	११९	शीर्षक	पंचेन्द्रिय-(यौगलिकों)	पंचेन्द्रिय (यौगलिकों)
७३१	१२१	१	उपपन्न होते हैं.....पृच्छा	उपपन्न होते हैं—पृच्छा।
७३१	१२१	९	भी दो	दोनों
७३१	१२१	१०	—दो	—दोनों
७३१	१२१	१३	अपेक्षा से दो भव-ग्रहण, काल की अपेक्षा से	अपेक्षा दो भव-ग्रहण, काल की अपेक्षा
७३१	१२२	२,३	होता है, वही वक्तव्या, (भ. २४/१२१)	होता है—वही वक्तव्यता (भ. २४/१२१),
७३१	१२२	३	ज्ञातव्य है।	ज्ञातव्य हैं।
७३१	१२३	१	-तिर्यग्योनिक (यौगलिक)	तिर्यग्योनिक(यौगलिक))
७३१	१२३	४	उपपन्न होता है। वही वक्तव्यता,	उपपन्न होता है—वही वक्तव्यता,
७३१	१२३	७	करता है। शेष पूर्ववत्।	करता है, शेष पूर्ववत्।
७३२	१२४	१	जघन्य काल स्थिति	जघन्य काल की स्थिति

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७३२	१२६	२-३	वक्तव्यता केवल विशेष विशेष	वक्तव्यता, इतना विशेष
७३२	१२६	३	ज्ञातव्य है।	ज्ञातव्य हैं।
७३२	१२७	१	-तिर्यग्योनिक (यौगलिक)	-तिर्यग्योनिक(यौगलिक))
,,	१२७	३	भी कुछ- अधिक	भी कुछ-अधिक
,,	१२७	४	होता हैं,	होता है,
,,	१२७	५	सातिरेक-कोटि-पूर्व	सातिरेक-दो-कोटि-पूर्व
,,	१२८	१	तिर्यग्योनिक (यौगलिक))	तिर्यग्योनिक(यौगलिक))
,,	,,	३	की वक्तव्यता, (भ. २४/१२१)	वक्तव्य है (भ. २४/१२०,१२१),
,,	१२९	१	तिर्यग्योनिक (यौगलिक)	तिर्यग्योनिक(यौगलिक))
,,	,,	२,३	वक्तव्यता, (भ. २४/१२८)	वक्तव्यता (भ. २४/१२८),
७३२	१३०	१	जीव) (यौगलिक)	जीव(यौगलिक))
७३२	१३०	१	में होता	में उपपन्न होता
७३३	१३०	२	पल्योपम उत्कृष्टतः	पल्योपम, उत्कर्षतः
७३३	,,	३	यही वक्तव्यता, (भ. २४/१२९)	वही वक्तव्यता (भ. २४/१२९),
,,	१३१	शीर्षक	आयुष्य वाले	आयु वाले
,,	,,	१	आयु वाला	आयु वाले
७३३	१३१	३	यावत्– (भ. २४/४-५)	(भ. २४/४-५) यावत्–
,,	१३२	५	स्थिति वाले जीव असुरकुमारों	स्थिति वाले असुरकुमारों
,,	१३३	२	ज्ञातव्य है	ज्ञातव्य हैं
,,	,,	४	गमक (चौथा, पांचवां और छट्ठा)	गमकों (चौथे, पांचवें और छट्ठे) में
७३४	१३६	४	तिर्यग्योनिक	तिर्यग्योनिकों
७३४	,,	६	ज्ञातव्य है।	ज्ञातव्य हैं,
,,	,,	८	तीन गव्यूत। शेष पूर्ववत्।	तीन गव्यूत, शेष पूर्ववत्।
७३४	१३६	९	तिर्यग्योनिक	तिर्यग्योनिकों
,,	१३७	२	-मनुष्य (यौगलिक)	-मनुष्यों (यौगलिकों)
,,	,,	४	वक्तव्य है (भ. २४/१२४-१२७)	वक्तव्य हैं (भ. २४/१२४-१२७),
,,	१३८	१	काल-स्थिति	काल की स्थिति
,,	,,	२	वक्तव्य हैं, (भ.२४/१२८-१३०)	वक्तव्य हैं (भ. २४/१२८-१३०),
,,	१३९	४	है।	है
७३५	१४१	२	होते हैं, (भ. २४/९६-१०४) उसी प्रकार	होते हैं (भ. २४/९६-१०४), वैसे ही
७३५	१४१	३	वक्तव्य है,	वक्तव्य हैं,
७३५	१४३	४	तिर्यञ्चयोनिक	तिर्यग्योनिक
,,	१४४	१	होते हैं....?	होते हैं०?
,,	,,	२,३	यावत् असंज्ञी तक। (भ. २४/११६-११८)।	(भ. २४/११६-११८) यावत् असंज्ञी तक।
७३५	१४५	२-३	आयु वाले संज्ञी-	आयु वाले (भ. २४/१३५) यावत् (संज्ञि-
७३५	१४५	३	से उपपन्न	से) उपपन्न
,,	१४५	६	हैं। (भ. २४/१३५)	हैं।
७३६	१४७	२	यावत्-भवादेश	यावत् भवादेश
,,	१४८	१	(यौगलिक)	(यौगलिक))
७३६	१४८	२	१४७)).	१४७),

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७३६	१४८	४	स्थिति—	(स्थिति—
७३६	१४८	६	पल्योपम।	पल्योपम।)
,,	१४९	१	-तिर्यग्योनिक (यौगलिक))	-तिर्यग्योनिक (यौगलिक))
७३६	१४९	४	पूर्ववत् यावत्	पूर्ववत् (भ. २४/१२३) यावत्
७३६	१५०	३	तिर्यग्योनिक की	तिर्यग्योनिक (भ. २४/१३७) की
७३६	१५०	४	है (भ. २४/१३७)।	है।
,,	१५१	२	(सातवां, आठवां और नवां) गमक	(सातवें, आठवें और नवें) गमकों
,,	,,	३	है।	है,
,,	१५२	शीर्षक	पर्याप्त संज्ञी	पर्याप्त-संज्ञी
,,	,,	२	पर्याप्त-संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय	पर्याप्त-संज्ञि-पञ्चेन्द्रिय
७३७	१५३	७	प्रकार असुरकुमारों	प्रकार जैसी ही असुरकुमारों
७३७	१५३	७	वक्तव्यता,	वक्तव्यता (भ. २४/१३१-१३२)
७३७	१५३	७	ही नौ गमकों	ही यहां भी नौ ही गमकों
७३७	१५३	७,८	(भ. २४/१४०-१४१), इतना	,इतना
७३७	१५३	९	है।	है।
७३७	१५४	४	(भ. २४/१३४-१३५)	(भ. २४/१३५)
७३७	१५५	४	जैसे असंख्यात	जैसे (भ. २४/१४७-१४९) असंख्यात
७३७	१५५	५	गए, यहां	गए, वैसे ही यहां
७३७	१५५	५-६	हैं (भ. २४/१४६-१४९),	हैं,
७३८	१५६	३	भांति निरवशेष वक्तव्य हैं। (भ. २४/१३७)	भांति (भ. २४/१३७) निरवशेष (वक्तव्य) हैं।
७३८	१५७	१	-मनुष्य) (यौगलिक)	-मनुष्य (यौगलिक))
७३८	१५७	३	और नवमां)	और नवां)
,,	,,	४	वक्तव्य है (भ. २४/१३८),	(भ. २४/१३८) (वक्तव्य हैं),
,,	१५८	शीर्षक	उपपात आदि	उपपात-आदि
,,	,,	१	संख्यात	संख्यात
,,	,,	४	आयु वाला	आयु वाले
७३८	१५९	६	भांति वही प्राप्ति नौ गमकों में निरवशेष वक्तव्य है (भ. २४/१३९-१४१), केवल इतना	भांति वही प्राप्ति (भ. २४/१३९-१४१) नौ गमकों में निरवशेष (वक्तव्य है), इतना
७३९	१६४	२	(पण्णवणा, ६/८३) उपपात	(पण्णवणा, ६/८३) में निर्दिष्ट उपपात
,,	१६६	१	होने योग्य है भन्ते!	होने योग्य है, भन्ते!
,,	१६७	१	उत्पन्न होते हैं......पृच्छा।	उपपन्न होते हैं—पृच्छा।
,,	,,	३	लेश्याएं चार,	लेश्याएं चार।
,,	,,	६	होते हैं, मन-योगी	होते हैं। मन-योगी
७३९	१६७	११	अनुबन्ध की स्थिति	अनुबन्ध स्थिति
,,	१६८	२	रहता है	रहता है?
७४०	१६९	३	इस प्रकार यह	इस प्रकार यही
,,	१७०	३	शेष पूर्ववत्। यावत् अनुबन्ध तक।	शेष पूर्ववत् यावत् अनुबन्ध तक.
७४०	१७१	२	उपपन्न	उत्पन्न

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७४०	१७१	२	गमक वक्तव्य है (भ. २४/१६६-१६८), केवल	गमक (भ. २४/१७७-१६७) वक्तव्य है, केवल
७४०	१७१	४	अनुबन्ध की स्थिति	अनुबन्ध स्थिति
७४०	१७२	२-३	गमक की वक्तव्यता कथनीय है। (भ. २४/७१)	गमक (भ.२४/१७१) की वक्तव्यता कथनीय है।।
,,	१७३	४	सकते हैं। यावत्	सकते हैं यावत्
७४१	१७४	२-३	सदृश अविकल रूप से वक्तव्य	सदृश (भ. २४/१७०) निरवशेष वक्तव्य
७४१	१७५	२	की स्थिति वाले उत्कृष्टतः	की स्थिति वाले, उत्कर्षतः
७४१	१७५	३	गमक में वक्तव्यता यावत् भवादेश तक। काल	गमक (भ. २४/१७४) यावत् भवादेश (उक्त है, वैसा वक्तव्य है।) काल
७४१	१७६	३	गमक की	गमक (भ. २४/१७४) की
,,	१७७	२	से उत्पन्न होता है? बादर-अप्कायिकों से उत्पन्न होता है?	से उत्पन्न होते हैं? बादर-अप्कायिकों से उपपन्न होते हैं?
७४१	१७७	३	कथनीय है। १.	कथनीय है—१.
७४१	१७७	४-५	-अप्कायिक २. पर्याप्त-सूक्ष्म- -अप्कायिक ३. अपर्याप्त-बादर- -अप्कायिक ४. पर्याप्त-बादर- -अप्कायिक।	-अप्कायिक २. पर्याप्त-सूक्ष्म- -अप्कायिक ३. अपर्याप्त-बादर- -अप्कायिक ४. पर्याप्त-बादर- -अप्कायिक)।
७४१	१७८	१	अप्कायिक जीव	अप्कायिक-जीव
७४१	१७८	५	गमक सदृश	गमक (भ. २४/१६६-१७६) सदृश
७४२	१७८	११	(पहला, दूसरा, चौथा और पांचवां	(पहले, दूसरे, चौथे और पांचवें)
,,	१७८	१७	अन्तर्मुहूर्त- -अधिक-	अन्तर्मुहूर्त-अधिक-
,,	,,	२१	दो भव-ग्रहण करता,	दो भव-ग्रहण,
,,	,,	२२	उनतीस- हजार-वर्ष,	उनतीस-हजार-वर्ष
,,	१७९	१	होते हैं?	होते हैं०?
,,	,,	२	वक्तव्यता, (भ. २४/१७७-१७८) केवल इतना	वक्तव्या (भ. २४/१७८), इतना
,,	,,	३	तेजस्कायिक जीवों	तेजस्कायिक-जीवों
७४२	१७९	४-५	गमक (में काल-संवेध)—काल	गमक में काल
,,	१८०	१	पृथ्वीकायिक जीवों	पृथ्वीकायिक-जीवों
,,	,,	,,	होते हैं?	होते हैं०?
७४२	१८०	५	वर्ष,	वर्ष।
,,	१८१	१	हैं?	हैं०?
७४२	१८१	२	गमक सदृश	गमक (भ. २४/१७८) सदृश
,,	,,	२	वक्तव्य है,	(वक्तव्य है),
,,	,,	३	शरीरावगाहना प्रथम	शरीरावगाहना—प्रथम
,,	,,	६	ज्ञातव्य है।	ज्ञातव्य है।
७४३	१८४	४	-असंख्यातवां-भाग उत्कृष्टतः	-असंख्यातवां-भाग, उत्कर्षतः
७४३	१८४	६	ज्ञान, सम्यग्-दृष्टि की अवस्था में होते	ज्ञान (सम्यग्-दृष्टि की अवस्था में नियमतः) होते

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७४३	१८४	१०	जीवों की भांति वक्तव्य है (भ. २४/१६७),	-जीवों (भ. २४/१६७) की भांति (वक्तव्य है),
७४४	१८७	१	उपपन्न	उत्पन्न
७४४	१८७	२	वक्तव्यता, (भ. २४/१८६)	वक्तव्यता (भ. २४/१८६)
७४४	१८७	३	हैं, १.	हैं—१.
७४४	१८७	७	अनुबन्ध-स्थिति	अनुबन्ध स्थिति
७४४	१८८	१	उपपन्न	उत्पन्न
७४४	१८८	२	समान (सातवां, आठवां और नवमां)	समान (भ. २४/१८४-१८६) (सातवां, आठवां और नवां)
,,	,,	३	वक्तव्य है, केवल इतना	वक्तव्य है, इतना
,,	,,	५	वक्तव्य है। यावत्	वक्तव्य है यावत्
,,	१८९	१	होते हैं?	होते हैं०?
७४५	१९०	१	होते हैं?	होते हैं०?
,,	,,	३	ज्ञातव्य है।	ज्ञातव्य हैं।
,,	,,	५	शेष पूर्ववत्। यावत् नौवें	शेष पूर्ववत् यावत् नौवां
७४५	१९२	२	है यावत् क्या पर्याप्तक-जीवों से उत्पन्न होते हैं? (भ. २४/४,५)।	है (भ. २४/४,५) यावत् क्या पर्याप्तक-जीवों से उपपन्न होते हैं?
७४५	१९४	२	(प्राप्ति) वैसे ही वक्तव्य है (भ. २४/१८४)	(प्राप्ति) (भ. २४/१८४) वैसे ही (वक्तव्य है),
७४६	१९४	१०	वक्तव्य है।	(वक्तव्य है),
,,	,,	११	तीनों गमकों में (चौथा, पांचवां और छट्ठा)	तीनों गमकों (चौथे, पांचवें और छट्ठे) में
,,	,,	१२	वक्तव्य है,	वक्तव्यता है,
,,	,,	१३	शेष पूर्ववत्।	शेष पूर्ववत्
,,	,,	१४	नौवें गमक में	नौवें गमक में—
७४६	१९५	३	? असंख्यात	? (अथवा) असंख्यात
,,	१९६	२	होते हैं.....?	होते हैं०?
,,	,,	३	शेष असंज्ञी जीवों की भांति वक्तव्य है यावत्—(भ. २४/१९२,१९३)	शेष असंज्ञि-जीवों (भ. २४/१९२,१९३) की भांति (वक्तव्य है) यावत्—
७४६	१९७	२,३	वक्तव्यता उसी प्रकार यहां वक्तव्य है, इतना विशेष है (भ. २४/५८-६२)। अवगाहना	वक्तव्यता (भ. २४/५८-६२) है उसी प्रकार यहां भी (वक्तव्य है), इतना विशेष है—अवगाहना
७४६	१९७	८	गमकों असंज्ञी-जीवों	गमकों में असंज्ञि-जीवों
७४६	१९७	११	पूर्ववत्।	पूर्ववत्,
७४६	१९७	१६	वक्तव्यता।	(वक्तव्यता),
७४७	१९८	२	? असंज्ञी	? (अथवा) असंज्ञी
७४७	१९९	४	अविकल रूप में	निरवशेष
७४७	१९९	५	है।	हैं।
७४७	२००	२	? असंख्यात	? (अथवा) असंख्यात
,,	२०१	३	? संख्यात	? (अथवा) संख्यात
,,	२०१	५	हैं। (भ. २४/९३)	हैं।

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७४७	२०३	२	संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय- तिर्यग्योनिक-जीवों की	संज्ञि-मनुष्यों की
,,	२०३	३	लब्धि वक्तव्य है,	लब्धि (भ. २४/९६-९८) (वक्तव्य है),
,,	२०३	५	में संज्ञी	में (पृथ्वीकायिकों में उपपद्यमान) संज्ञि
,,	२०३	६	समान वक्तव्य	समान (भ. २४/१९७) वक्तव्य
७४८	२०३	८	लब्धि संज्ञी	लब्धि (पृथ्वीकायिकों में उपपद्यमान) संज्ञि-
,,	,,	९	के समान	के मध्यम तीन गमकों (भ. २४/१९७) के समान
,,	,,	९	अविकल रूप से	निरवशेष
,,	,,	११	गमकों की	गमकों (भ. २४/१९७) की
७४८	२०४	शीर्षक	तेतीसवां आलापक : पृथ्वी-कायिक-जीवों में भवनपति-देवों का उपपात-आदि	×
७४८	२०४	२	होते हैं,? वाणमन्तर	होते हैं? वानमन्तर
७४८	२०५	शीर्षक	×	तेतीसवां आलापक : पृथ्वी-कायिक-जीवों में भवनपति-देवों का उपपात-आदि
७४८	२०८	२	यावत् परिणमन करते हैं। (भ. १/२४५, २२४)	(भ. १/२४५,२२४) यावत् परिणमन करते हैं।
७४९	२१०	३,४	जो	उनमें जो
७४९	२१०	६	तीनों प्रकार के योग, दोनों प्रकार के उपयोग—(साकार-उपयोग और अनाकार-उपयोग)।	योग तीनों प्रकार के। उपयोग दोनों प्रकार के—(साकार-उपयोग और अनाकार-उपयोग)
७४९	२१०	८	स्थिति—जघन्यतः	स्थिति जघन्यतः
७४९	२१०	९	है।	है,
७४९	२१०	१०	अनुबन्ध—स्थिति	अनुबन्ध स्थिति
७४९	२१०	११	-ग्रहण। काल	-ग्रहण, काल
,,	,,	१५	ज्ञातव्य है,	ज्ञातव्य है,
,,	,,	,,	तीन गमक	तीन गमकों
७४९	२१०	१६	है। शेष	है, शेष
७४९	२१०	१७	वक्तव्य। सर्वत्र भव की अपेक्षा से	ज्ञातव्य हैं। सर्वत्र भव की अपेक्षा
,,	,,	१८	तक। काल की अपेक्षा से	में काल की अपेक्षा
,,	२११	१	होने योग्य है?	होने योग्य है०?
७४९	२११	२	यावत् (भ. २४/२०६-२१०)	(भ. २४/२०६-२१०) यावत्
७४९	२११	३	स्थिति—जघन्यतः	स्थिति जघन्यतः
,,	,,	६	अपेक्षा जानना	अपेक्षा को जानना
७४९	२१३	१	होने योग्य है?	होने योग्य है०?
७५०	२१३	२	गमक वक्तव्य हैं (भ. २४/२०६-२१०),	गमक (भ. २४/२०६-२१०) वक्तव्य हैं,
७५०	,,	३	काल की अपेक्षा जाननी चाहिए।	काल की अपेक्षा को जानना चाहिए।
७५०	२१४	२	है यावत्	है (भ. ६/८३) यावत्

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७५०	२१४	३	होते हैं?	होते हैं०?
,,	२१५	१	होने योग्य है ?	होने योग्य है०?
७५०	२१५	२	असुरकुमार	असुरकुमारों
७५०	२१५	२	है, ज्ञान	है। (सम्यग्-दृष्टि की अपेक्षा) तीन ज्ञान नियमतः अथवा (मिथ्या-दृष्टि की अपेक्षा)
७५०	२१५	३	तीन, अज्ञान नियमतः तीन। स्थिति—जघन्यतः	तीन अज्ञान नियमतः। स्थिति जघन्यतः
७५०	२१५	४	भी। (कायसंवेध) काल	भी। काल
,,	,,	७	वक्तव्य है,	वक्तव्य हैं,
,,	,,	८	ज्ञातव्य है।	ज्ञातव्य हैं।
७५०	२१६	२	? कल्पातीत	? (अथवा) कल्पातीत
,,	२१७	३	होते हैं।	होते हैं०?
७५०	२१८	शीर्षक	(औधिक और औधिक)	(पहला गमक : औधिक और औधिक)
७५१	२१८	३	देव (भ. २४/२१५)	देव के (प्रथम) गमक (भ. २४/२१५)
७५१	२१८	३	वक्तव्य है। इतना	(वक्तव्य है), इतना
७५१	२१८	६	करता है। इसी प्रकार शेष आठ गमक वक्तव्य है,	करता है। (दूसरे से नवें गमक तक) इस प्रकार शेष आठों ही गमक वक्तव्य हैं,
,,	,,	७	अपेक्षा जाननी चाहिए।	अपेक्षा को जानना चाहिए।
,,	२१९	१	होने योग्य है? (.....पृच्छा)	होने योग्य है०?
,,	२२१	१	होते हैं?	होते हैं०?
७५१	२२१	२	यावत्—(भ. २४/१६३-१६५)	(भ. २४/१६३-१६५) यावत्—
,,	२२२	४	-जीवों के समान वक्तव्य है,	-जीवों के उद्देशक (भ. २४/१६७-२११) के समान वक्तव्य है,
,,	,,	५	ज्ञातव्य है।	ज्ञातव्य हैं।
,,	२२४	१	होते हैं?	होते हैं०?
७५१	२२४	२	उद्देशक के समान	उद्देशक (भ. २४/१६७-२१९) के सदृश
७५१	२२४	३	जानना	को जानना
७५१	२२४	३	में देवता	देवों से
,,	२२६	१	होते हैं?	होते हैं०?
,,	,,	१-२	तेजस्कायिक-जीवों की भांति वक्तव्यता	तेजस्कायिक-जीवों के उद्देशक (भ. २४/२२४) की भांति वक्तव्य है
,,	,,	२	कायसंवेध जानना	कायसंवेध को जानना
७५२	२२८	१	होते हैं?	होते हैं०?
७५२	२२८	२	की भांति	(भ. २४/१६७-२१९) के सदृश प्रस्तुत उद्देशक
,,	,,	२	वनस्पतिकायिक जीव	वनस्पतिकायिक-जीव

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७५२	२२८	८	(भ. २४/१७०),	उसी प्रकार (भ. २४/१७०, १७३-१७६) (वक्तव्य है),
,,	,,	८	कायसंवेध जानना	कायसंवेध को जानना
७५२	२३०	१	होते हैं?	होते हैं०?
७५२	२३०	१	यावत् (पण्णवणा, ६/८२-८६)	(भ. २४/१६३-१६५) यावत्—
७५२	२३१	४	१६७) बतलाई	१६७ में बतलाई
,,	,,	५	है यावत्	है) यावत्
,,	,,	१२	देव	देवों से
,,	२३१	६	में (प्रथम, द्वितीय, चतुर्थ और पंचम	(प्रथम, द्वितीय, चतुर्थ और पंचम) में
,,	,,	८	भव) इसी प्रकार यावत्	भव)। इस प्रकार यावत्
,,	२३३	१	होते हैं?	होते हैं०?
७५२	२३३	१	प्रकार जैसे द्वीन्द्रिय-जीवों	प्रकार द्वीन्द्रिय-जीवों
७५२	२३३	२	जानना	को जानना
,,	,,	३	जीव	जीवों में
,,	,,	३	कायसंवेध इस प्रकार वक्तव्य है—	(कायसंवेध इस प्रकार वक्तव्य है)—
७५३	२३३	४,६	-जीव	-जीवों
,,	,,	५,७	कायसंवेध इस प्रकार—	(कायसंवेध इस प्रकार)—
७५३	२३३	७	-रात्रि-दिवस,	-रात्रि-दिवस।
,,	२३५	१	होते हैं?	होते हैं०?
७५३	२३५	१	उद्देशक	उद्देशक (भ. २४/२३३)
,,	,,	२	-जीवों के उद्देशक	-जीवों का भी उद्देशक
७५३	२३५	३	कायसंवेध	कायसंवेध को
,,	२३८	२,४,५	नैरयिक-जीवों	नैरयिकों
७५३	२४०	२	रूप में)	रूप में उपपन्न)
७५४	२४१	२	शरीर के दो प्रकार प्रज्ञप्त हैं,	शरीर दो प्रकार के प्रज्ञप्त हैं,
७५४	२४१	८	सागरोपम—इतने	सागरोपम, इतने
,,	२४२	१	स्थिति वाले में उत्पन्न	स्थिति वालों में उत्पन्न
७५४	२४२	४	पूर्ववत्	पूर्ववत्,
,,	,,	३	केवल इतना विशेष	अवशेष पूर्ववत्, इतना विशेष
,,	,,	७	इसी प्रकार शेष सात गमक वक्तव्य हैं, नैरयिक-उद्देशक की भांति	इसी प्रकार नैरयिक-उद्देशक में
७५४	२४२	८	में उत्पन्न होने वाले जीवों के।	के समान शेष सातों ही गमक वक्तव्य हैं।
,,	,,	९	के तीन मध्यम गमक	के तीन मध्यम गमकों
,,	,,	१०	तीन अन्तिम गमक	तीन अन्तिम गमकों
,,	,,	११	ज्ञातव्य है।	ज्ञातव्य हैं।
,,	२४३	१	नैरयिक, जो	नैरयिक जो
७५४	२४३	२	है?	है०?
,,	,,	२	गमक वैसे	गमक (भ. २४/२३९-२४२) वैसे
,,	,,	३	हैं (भ. २४/२३९-२४१), केवल	हैं,
७५५	२४३	७	तीन ज्ञान अथवा तीन	(सम्यग्-दृष्टि की अपेक्षा) तीन ज्ञान नियमतः अथवा (मिथ्या-दृष्टि की अपेक्षा) तीन

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७५५	२४३	८	वक्तव्य है।	वक्तव्य हैं।
,,	,,	१०	ज्ञातव्य है।	ज्ञातव्य हैं।
,,	२४४	२	योग्य है?	योग्य है०?
७५५	२४४	२	गमक वक्तव्य हैं (भ. २४/२४३)	गमक (भ. २४/२४३) (वक्तव्य हैं),
,,	,,	३	ज्ञातव्य है।	ज्ञातव्य हैं।
७५५	२४४	७	अपेक्षा से)	अपेक्षा)
७५५	२४४	९	स्थिति विशेष	स्थिति-विशेष
७५६	२४५	२	होते हैं?	होते हैं०?
७५६	२४५	३	यावत्—(भ. २४/१६४,१६५)	(भ. २४/१६४,१६५) यावत्—
,,	२४६	१	पृथ्वीकायिक-जीव, जो	पृथ्वीकायिक-जीव जो
७५६	२४७	१	लेकर	प्रारम्भ कर
७५६	२४७	२	तक	पर्यन्त
,,	२४७	८	करणीय है।	करणीय हैं।
,,	२४८	१	होते हैं.....पृच्छा?	होते हैं०?
,,	,,	६	वक्तव्य है।	वक्तव्य हैं।
७५६	२४८	८	वक्तव्य है १-९॥	ज्ञातव्य हैं।
७५६	२४९	१	पञ्चेन्द्रिय तिर्यग्योनिक-जीवों	पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों
७५६	२४९	२	हैं? असंज्ञी-	हैं? (अथवा) असंज्ञि-
,,	,,	६	गया है। यावत्—(भ. २४/१९२)	गया है (भ. २४/१९२) यावत्—
७५७	२५१	१	शेष	अवशेष
,,	,,	२	यावत्	(भ. २४/१९३-१९५) यावत्
,,	२५३	२	अविकल रूप से वक्तव्य है	निरवशेष (वक्तव्य हैं) (भ. २४/३२,३३)
७५७	२५५	२	उपपद्यमान का मध्य	उपपद्यमान के मध्य
,,	,,	३	गमकों में यावत्	गमकों में (भ. २४/१९४) यावत्
७५८	२५८	३	गमक की	गमक (भ. २४/२५०) की
,,	,,	,,	वक्तव्यता (भ. २४/२५०),	वक्तव्यता,
७५८	२५८	५	कोटि-पूर्व-पृथक्त्व (दो से नौ)-अधिक	पृथक्त्व (दो से नौ)-कोटि-पूर्व-अधिक
,,	२५९	३	जैसी सातवें गमक की भांति वक्तव्यता केवल इतना	सातवें गमक की भांति वक्तव्यता (भ. २४/२५८), इतना
७५८	२५९	३	अपेक्षा से	अपेक्षा
७५८	२६०	३	स्थिति—जघन्यतः	स्थिति जघन्यतः
,,	,,	५	अविकल रूप से	निरवशेष
,,	,,	६	यावत् कालादेश (भ. २४/५२,५३)	(भ. २४/५२,५३) यावत् कालादेश
७५८	२६०	७	की (भ. २४/२५३) भांति वक्तव्य है,	(भ. २४/२५३) की भांति (वक्तव्य है)।
,,	२६१	२,३	होते हैं?	होते हैं०?
,,	२६२	३,४	होते हैं?	होते हैं०?
,,	२६३	१	वाले	वाला
,,	२६४	२-३	गमक की भांति वक्तव्य (भ. २४/५८-६२).	गमक (भ. २४/५८-६२) की भांति (वक्तव्य है),

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७५८	२६४	५	(कायसंवेध) जघन्यतः	जघन्यतः
७५९	२६६	२	में—जघन्यतः तीन पल्योपम की स्थितिवाले,	-जघन्यतः तीन पल्योपम की स्थिति वालों,
,,	,,	३	स्थिति वाले	स्थिति वालों
७५९	२६६	४	परिमाण—जघन्यतः	परिमाण जघन्यतः
,,	,,	५	अवगाहना—जघन्यतः	अवगाहना जघन्यतः
,,	२६७	१	उपन्न	उत्पन्न
,,	,,	३	लब्धि	लब्धि (भ. २४/१९७)
,,	,,	५	कायसंवेध	कायसंवेध (भ. २४/२५५-२५७)
,,	२६८	१	उपन्न	उत्पन्न
		३	अनुबंध—जघन्यतः	अनुबंध जघन्यतः
७६०	२६९	१	-जीव में जघन्य	-जीव जघन्य
,,	२६९	२	वक्तव्यता,	वक्तव्यता (भ. २४/२६८),
,,	२७०	४	पूर्ववत्। (भ. २४/२६९)	पूर्ववत् (भ. २४/२६९),
७६०	२७०	५	गमक की	गमक (भ. २४/२६६)
,,	,,	५	है। (भ. २४/२६६)	है।
,,	२७१	१	मनुष्य	मनुष्यों
७६०	२७२	५	उपपद्यमान की भांति वक्तव्य है। (भ. २४/१९९)	उपपद्यमान (भ. २४/१९९) की भांति (वक्तव्य है)।
७६१	२७५	१	संज्ञी मनुष्य,	संज्ञि-मनुष्य
,,	२७६	२	(भ. २४/२०२,२०३)	(भ. २४/२०३)
,,	,,	४	) कोटि	)-कोटि
७६१	२७८	४,५	पृथक्त्व (दो से नौ) मास,	पृथक्त्व (दो से नौ)-मास,
७६२	२७८	६	पृथक्त्व (दो	पृथक्त्व (दो
,,	२७९	१	मनुष्य-पञ्चेन्द्रिय	मनुष्य पञ्चेन्द्रिय
,,	,,	२	है। जैसे	है, जैसी
७६२	२७९	४	तीन गमकों अविकल रूप में	तीनों गमकों में निरवशेष
७६२	२७९	५	परिमाण—उत्कृष्टतः	परिमाण उत्कर्षतः
७६२	२८०	१	मनुष्य-पञ्चेन्द्रिय	मनुष्य पञ्चेन्द्रिय
,,	,,	२	है। वहां प्रथम गमक की	है, वही प्रथम गमक (भ. २७३-२७६) की
,,	,,	३	अवगाहना—जघन्यतः	अवगाहना जघन्यतः
,,	,,	४	अनुबन्ध—जघन्यतः	अनुबन्ध जघन्यतः
,,	,,	६	पल्योपम—इतने	पल्योपम, इतने
७६२	२८१	२	है।	है,
७६२	२८२	२	है।	है,
,,	,,	३-४	गमक की भांति (भ. २४/२८०)	गमक (भ. २४/२८०) की भांति
७६२	२८२	४	काय की अपेक्षा	काल की अपेक्षा
७६२	२८३	१	होते हैं,?	होते हैं ?
७६२	,,	२	वाणमन्तर देवों	वानमन्तर-देवों
७६३	२८५	५-६	में उपपद्यमान की भांति वक्तव्य है (भ. २४/२०७-२१०)। इसी प्रकार यावत् ईशान-देव की	में उपपद्यमान (भ. २४/२०७-२१०) की भांति (वक्तव्य है)। इसी प्रकार (भ. २४/२११-२१९)

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
			लब्धि की वक्तव्यता (भ. २४/२११-२१९)। भव की अपेक्षा से सर्वत्र उत्कृष्ट	यावत् ईशान-देव की लब्धि को उसी प्रकार वक्तव्यता। भव की अपेक्षा सर्वत्र उत्कर्षतः
७६३	२८५	७	वक्तव्य है।	ज्ञातव्य हैं।
,,	२८६	१	योग्य है ?	योग्य है० ?
,,	,,	२	वक्तव्य है।	ज्ञातव्य हैं।
,,	,,	,,	पिशाच-वाणमन्तर-देवों	पिशाच वानमन्तर-देवों
,,	,,	,,	योग्य हैं ?	योग्य है० ?
,,	,,	३	वक्तव्य है।	ज्ञातव्य हैं।
७६३	२८९	२	पूर्ववत्	उपपात पूर्ववत्
,,	२९०	१	उत्पन्न होने योग्य है ?	उपपन्न होने योग्य है० ?
,,	,,	७	है।	हैं।
७६४	२९२	१	वैमानिक देवों से उत्पन्न होते हैं ? कल्पवासी—वैमानिक-देवों से	वैमानिक-देवों से उपपन्न होते हैं० ? (सौधर्म-कल्पवासि-वैमानिक-देवों से)
७६४	२९३	४	उद्देशक के (भ. २४/२१८)	उद्देशक (भ. २४/२१८) के
,,	,,	६	भव की अपेक्षा से	भव की अपेक्षा
,,	,,	७	ज्ञातव्य है।	ज्ञातव्य हैं।
७६४	२९३	८	शेष	अवशेष
७६४	२९५	१	अवगाहना—अवगाहन	अवगाहना अवगाहन
७६४	२९५	३	नरक-गति	नैरयिकों
,,	२९५	४	जैसे—	जैसे
,,	,,	४	-उद्देशक में वक्तव्य है यावत् (भ. २४/२३८)	-उद्देशक (भ. २४/२३८) में (उक्त है वैसे वक्तव्य है) यावत्
,,	२९६	४	शेष	अवशेष
,,	,,	४	उपपद्यमान की	उपपद्यमान (भ. २४/२४०-२४२) की
,,	,,	५	वक्तव्यता (भ. २४/२४०-२४२)	वक्तव्यता,
,,	,,	५	परिमाण—जघन्यतः	परिमाण जघन्यतः
,,	२९६	८	था)	था
७६५	२९७	२	-तिर्यग्योनिक जीवों	तिर्यग्योनिक-जीवों
,,	,,	३	के भेद	से भेद
,,	,,	४	तेजस्कायिक और	तेजस्कायिक- और
,,	२९८	४	उत्पन्न होगा।	उपपन्न होता है।
७६५	२९९	४	परिमाण—जघन्यतः	परिमाण जघन्यतः
७६५	२९९	५	पूर्ववत्। यावत्	पूर्ववत् (भ. २४/२४५) यावत्
७६५	२९९	७	है	है
७६५	२९९	८	अविकल रूप से	निरवशेष
,,	३००	१	होते हैं ? (पृच्छा)	होते हैं० ?
,,	३००	५	की भांति वक्तव्य है (भ. २४/२४८-२८२)	(भ. २४/२४८-२८२) की भांति वक्तव्य हैं,
७६६	,,	६	इनक	इनके
,,	,,	६	ज्ञातव्य,	ज्ञातव्य है,

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७६६	३००	७	शेष अविकल रूप से वक्तव्य है (भ. २४/२६१-२८२)।	शेष उसी प्रकार (भ. २४/२६१-२८२) निरवशेष (वक्तव्य है)।
७६६	३०३	५	वक्तव्य है। केवल इतना	वक्तव्य है, इतना
७६६	३०३	१२	यावत् ईशान-देव तक (के रूप में	यावत् (नागकुमार-देवों से लेकर) ईशान-देव की वक्तव्यता (ईशान-देव के देवों के मनुष्य के रूप में
,,	,,	२०	बतलानी चाहिए।	बतलाना चाहिए)
,,	,,	२३	पञ्चम, गमक	पञ्चम गमकों
७६७	३०४	१	आनत-देव मनुष्य	आनत-देव जो मनुष्य
७६७	३०५	१-२	प्रकार सहस्रार-देवों की भांति (भ. २४/३०३),	प्रकार जैसे सहस्रार-देवों (भ. २४/३०३) की वक्तव्यता है (वैसे ही यहां वक्तव्य है),
,,	३०५	२	भांति (भ. २४/३०२)	भांति वक्तव्यता (भ. २४/३०३),
७६७	३०५	३	वक्तव्य है	ज्ञातव्य हैं
७६८	३०५	१५	हो गमकों में वक्तव्य,	हो गमक (वक्तव्य हैं),
,,	,,	१८	(इक्कीस सागरोपम) है, तीन	(इक्कीस सागरोपम) है, उससे तीन
७६८	३०६	२	हैं? अनुत्तरोपपातिक	हैं? (अथवा) अनुत्तरोपपातिक
७६९	३०८	४	शेष (संहनन आदि वाले)	अवशेष (संहनन आदि बोल)
७६९	३०८	६	के	का
,,	,,	१४	काल की अपेक्षा से—	काल की अपेक्षा—
७६९	३०८	१७	कायसंवेध उपयोग लगाकर जानना चाहिए।	कायसंवेध यथोचित ज्ञातव्य हैं।
,,	३०९	२	वैजयन्त-अनुत्तरोपपातिक यावत्	वैजयन्त-अनुत्तरोपपातिक- यावत्
,,	,,	४	विजय-अनुत्तरोपपातिक-यावत्	विजय-अनुत्तरोपपातिक- यावत्
७६९	३१०	३	की भांति वक्तव्यता (भ. २४/३०८)	(भ. २४/३०८) की भांति वक्तव्यता,
,,	,,	४	अवगाहना—जघन्यतः	अवगाहना जघन्यतः
,,	,,	६	अभिनिबोधिक	आभिनिबोधिक
,,	,,	७	स्थिति—जघन्यतः	स्थिति जघन्यतः
७७०	३१०	८	अपेक्षा—जघन्यतः	अपेक्षा जघन्यतः
७७०	३१०	९	की अपेक्षा से जघन्यतः	की अपेक्षा जघन्यतः
७७०	३१०	११	आठ	आठों
७७०	३११	१	होने योग्य है (भन्ते !	होने योग्य है, (भन्ते !
७७०	३११	२	है ?)	है) ?
,,	,,	३	देव की	देव (भ. २४/३१०) की
,,	,,	३	स्थिति—जघन्यतः	स्थिति जघन्यतः
,,	,,	५	अपेक्षा से	अपेक्षा
,,	३१२	२	वक्तव्यता,	वक्तव्यता (भ. २४/३११),
,,	३१३	२	वक्तव्यता,	वक्तव्यता (भ. २४/३१२)
,,	,,	४	गमक	गमक (तीसरा, छट्ठा, नवां)
,,	३१३	५	नहीं है।	नहीं हैं।
,,	,,	२	हैं ?.....इसी प्रकार	हैं० ? इस प्रकार
७७०	३१५	३	अविकल रूप से वक्तव्य है।	निरवशेष (वक्तव्य है)।

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७७१	३१७	३	है?	? (अथवा)
७७१	३१७	२	वाणमन्तर-देव	वानमन्तर-देवों
,,	,,	५	शेष पूर्ववत् । नागकुमार-देव	शेष पूर्ववत् नागकुमार-देव
,,	,,	,,	पूर्ववत् । नागकुमार	पूर्ववत् नागकुमार
,,	,,	६	काल की अपेक्षा से	काल की अपेक्षा
,,	३१८	१	संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-(यौगलिक)) जीव	संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक (यौगलिक))-जीव
,,	,,	२	है, जघन्यतः	है, वह जघन्यतः
,,	३१९	१-२	संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-(यौगलिक)) जीव उत्कृष्ट काल	संज्ञी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक (यौगलिक))-जीव जो उत्कृष्ट काल
,,	,,	२	है, जघन्यतः	है, वह जघन्यतः
,,	,,	३	वाणमन्तर-देवों में उत्पन्न होता है।	वानमन्तर-देवों में उपपन्न होता है।
७७१	३१९	६,७	गमक	गमकों
७७१	३१९	९	ज्ञातव्य है।	ज्ञातव्य हैं।
,,	,,	१२	वाणमन्तर-देव में	वानमन्तर-देवों में
,,	,,	१३	वक्तव्यता।	वक्तव्यता
,,	,,	१४	अनुबंध—जघन्यतः	अनुबंध जघन्यतः
७७२	३२०	१	वाणमन्तर-देव में उपपन्न होते हैं?	वानमन्तर-देवों में उपपन्न होता है० ?
,,	,,	२	वाणमन्तर-देव में	वानमन्तर-देवों में
७७२	३२०	४	अवगाहना—जघन्यतः	अवगाहना जघन्यतः
,,	,,	५	असंख्यात वर्ष आयुष्य वाले	असंख्यात वर्ष की आयुष्य वाले
७७२	३२०	९-१०	व्यन्तर-देव के रूप में उत्पत्ति नागकुमार-उद्देशक भांति (भ. २४/१५८,१५९) वक्तव्य है।	वानमन्तर-देवों के रूप में उपपात (की वक्तव्यता) नागकुमार-उद्देशक (भ. २४/१५८,१५९) की भांति (वक्तव्य है)।
७७२	३२०	११	वक्तव्य है।	ज्ञातव्य है।
७७२	३२२	शीर्षक	उपपात आदि	उपपात-आदि
,,	,,	२	है?.... भेद यावत् (भ. २४/१-३)	हैं०? भेद (भ. २४/१-३) यावत्
,,	३२४	१	(यौगलिक), जो	(यौगलिक) जो
,,	,,	२	ज्योतिष्क-देव में	ज्योतिष्क-देवों में
७७२	३२४	२	भन्ते! कितने	भन्ते! वह कितने
,,	,,	६	बताया है)	बताया है।)
७७३	३२४	६	उद्देशक की भांति,	उद्देशक (भ. २४/१२१) की भांति (वक्तव्य है),
७७३	३२४	७	स्थिति—जघन्यतः	स्थिति जघन्यतः
७७३	३२४	८	शेष पूर्ववत् केवल इतना	शेष पूर्ववत्, इतना
७७३	३२४	१३	में)—इतने	में), इतने
,,	३२५	२	-देव	-देवों
,,	,,	२	का	के
,,	,,	४	वक्तव्यता,	वक्तव्यता (भ. २४/३२४),
,,	३२६	२	देव	देवों
,,	,,	२	वक्तव्यता,	वक्तव्यता (भ. २४/३२४),
,,	,,	३	स्थिति—जघन्यतः	स्थिति जघन्यतः

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७७३	३२६	४	अनुबन्ध भी काल की अपेक्षा ३२६) केवल	अनुबन्ध भी। काल की अपेक्षा ३२६),
,,	३२८	२	अवगाहना-जघन्यतः	अवगाहना जघन्यतः
,,	,,	५	भाग—इतने	भाग, इतने
७७३	३२९	१	उत्कृष्ट काल स्थिति में	उत्कृष्ट काल की स्थिति में
,,	३२९	२	गमक की भांति वक्तव्यता। (द्वितीय	गमक (भ. २४/३२४-३२६) की भांति वक्तव्यता (
७७४	३२९	३	स्थिति—जघन्यतः	स्थिति जघन्यतः
७७४	,,	५	ज्ञातव्य है।	ज्ञातव्य हैं।
,,	३३०	२	उपपन्न होते हैं?	उपपन्न होते हैं०?
७७४	३३०	३	जीवों की भांति (भ. २४/१३१-१३३) नों	जीवों (भ. २४/१३१-१३३) की भांति नों
,,	,,	४	है. केवल	हैं.
,,	,,	,,	ज्ञातव्य है।	ज्ञातव्य हैं।
७७४	३३०	५	पूर्ववत्।	पूर्ववत् (वक्तव्य हैं)।
,,	३३१	१	होते हैं पृच्छा?	होते हैं०?
७७४	३३१	१-२	यावत् (भ. २४/१३४-१३५)।	(भ. २४/१३४-१३५) यावत्
७७४	३३२	१	वाले	वाला
,,	३३२	१,३	ज्योतिष्क-देव में	ज्योतिष्क-देवों में
७७४	३३२	४	गमक	गमक (भ. २४/३२४-३२९)
७७४	३३२	५	हैं (भ. २४/३२४-३२९)	हैं,
७७४	३३२	९	है	है (भ. २४/३२४-३२९)
,,	३३३	२	होते हैं?	होते हैं०?
७७४	३३३	२	देव	देवों
७७४	३३३	२	उपपद्यमान की	उपपद्यमान (भ. २४/१३९-१४२)
७७४	३३३	३	वक्तव्यता (भ. २४/१३९-१४२),	वक्तव्यता,
,,	,,	४	ज्योतिष्क-देव की	ज्योतिष्क-देवों की
,,	३३५	१	होते हैं?	होते हैं०?
७७५	३३६	२	सौधर्म-देव में	सौधर्म-देवों में
,,	,,	५	सौधर्म देव के रूप में	सौधर्म-देव के रूप में
,,	३३७	१	होते हैं?......शेष	होते हैं? अवशेष
,,	,,	५	स्थिति—जघन्यतः	स्थिति जघन्यतः
,,	,,	७	पल्योपम—	पल्योपम,
,,	३३८, ३३९	१	तिर्यग्योनिक (यौगलिक))	तिर्यग्योनिक(यौगलिक))
,,	३३८	२	देव	देवों
,,	३३८	४	पल्योपम—	पल्योपम,
७७५	३३९	५	स्थिति—जघन्यतः	स्थिति जघन्यतः
,,	,,	६	पल्योपम—	पल्योपम,
,,	३४०	३	(भ. २४/३३९) वही वक्तव्यता,	(भ. २४/३३९), यही वक्तव्यता,
,,	३४०	३	अवगाहना—जघन्यतः	अवगाहना जघन्यतः
,,	,,	४	स्थिति—	स्थिति जघन्यतः

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७७६	३४०	६	पल्योपम—	पल्योपम,
७७६	३४१	२	होता हैं	होता है
७७६	३४१	२	गमक के	गमक (भ. २४/३३७) के
,,	,,	३	ज्ञातव्य है	ज्ञातव्य हैं
७७७	३४६	१	उपपन्न होते हैं?	उपपन्न होते हैं०?
,,	,,	२	वक्तव्यता (भ. २४/३३६)। केवल इतना	(भ. २४/३३६) वक्तव्यता, इतना
,,	,,	३	तिर्यग्योनिक (यौगलिक) जीव	तिर्यग्योनिक (यौगलिक)-जीव
७७७	३४६	५	अवगाहना—जघन्यतः	अवगाहना जघन्यतः
,,	,,	६	सातिरेक दो गव्यूत।	सातिरेक-दो-गव्यूत
,,	३४९	१	उपपन्न होते हैं?	उपपन्न होते हैं०?
,,	,,	१	नैरयिकों	नैरयिकों (भ. २४/७८,१०५)
७७७	३५०	३	लेकर भवादेश तक	प्रारम्भ कर भवादेश पर्यन्त
,,	,,	३	ज्ञातव्य	वक्तव्य
,,	,,	५	ज्ञातव्य है।	ज्ञातव्य हैं।
,,	,,	६	तिर्यग्योनिक जीव)	तिर्यग्योनिक-जीव)
,,	,,	७	तीनों गमक	तीनों गमकों
,,	३५१	१	होते हैं तो......?	होते हैं तो० ?
७७७	३५१	१	मनुष्यों की	मनुष्यों
७७७	३५१	२	भांति	की भांति
७७८	३५२	१	उपपन्न होते हैं?	उपपन्न होते हैं ०?
७७८	३५२	२	की वक्तव्यता।	की भी वक्तव्यता,
,,	,,	३	ब्रह्मलोक	ब्रह्म-देवलोक
,,	,,	४	ब्रह्मलोक-देव	ब्रह्म-देवलोक
,,	,,	९	संहनन-ब्रह्मलोक-	संहनन ब्रह्म-देवलोक
,,	३५३	१	उपपन्न होते हैं......?	उपपन्न होते हैं० ?
७७८	३५३	१	उपपात—जैसा	उपपात जैसा
,,	,,	१-२	देवों की भांति वक्तव्य है,	देवों (भ. २४/३५२) का (उक्त है), वैसा (वक्तव्य है),
,,	३५४	१	पर्याप्त-संज्ञी-मनुष्य, जो	पर्याप्त-संज्ञी-मनुष्य जो
,,	,,	२	होने योग्य है.....(पृच्छा)-सहस्रार--देवलोक	होने योग्य है० ? सहस्रार-देवलोक
,,	३५४	२-३	मनुष्यों की भांति (वक्तव्यता) (भ. २४/३५२) केवल इतना विशेष है—संहनन—उपपन्न	मनुष्यों (भ. २४/३५२) की भांति वक्तव्यता, इतना विशेष है—संहनन उपपन्न
,,	,,	३	तीन।	तीन,
,,	,,	५	पृथक्त्व (दो	पृथक्त्व(दो
,,	,,	९	की वक्तव्यता। केवल	तक वक्तव्य है,
,,	,,	१०	चार देवलोक में	चार देवलोकों में
,,	,,	१०	में संहनन—प्रथम	में भी संहनन प्रथम
,,	३५५	१	उपपन्न होते हैं?	उपपन्न होते हैं०?
,,	,,	,,	(भ. २४/३५४), केवल इतना	(भ. २४/३५४), इतना
,,	,,	२	ग्रैवेयक-देव में	ग्रैवेयक-देवों में

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७७१	३५६	२	होते हैं ?	होते हैं० ?
,,	,,	,,	अनुबंध तक। केवल इतना	अनुबंध तक, इतना
,,	,,	७	वक्तव्य है,	वक्तव्य हैं,
७७१	३५६	९	है—संहनन—	है—(संहनन—)
,,	३५७	१	उपपन्न होते हैं ?	उपपन्न होते हैं० ?
७७१	३५७	१	उपपात जैसा	उपपात
७७१	३५७	२	भांति	भांति,
,,	३५८	८	गमक नहीं है।	गमक नहीं हैं।
७७१	३५८	१	के रूप में	में
,,	,,	३	उपपद्यमान की	उपपद्यमान (भ. २४/३५६) की
,,	,,	४	है।	है,
,,	,,	४	अपेक्षा—तीन	अपेक्षा तीन
,,	,,	५	अपेक्षा—जघन्यतः	अपेक्षा जघन्यतः
,,	,,	६	अधिक—तेतीस	अधिक-तेतीस
७७१	३५९	१	उपपन्न	उत्पन्न
७७१	३५९	२	वक्तव्यता.	वक्तव्यता (भ. २४/३५८),
७७१	३५९	२	अवगाहना—पृथक्त्व	अवगाहना पृथक्त्व
७७१	३५९	३	स्थिति—पृथक्त्व	स्थिति पृथक्त्व
,,	३५९	४	गमक नहीं है	गमक नहीं हैं।
७७१	३६०	१	उपपन्न	उत्पन्न
,,	,,	२	वक्तव्यता.	वक्तव्यता (भ. २४/३५८),
,,	,,	२	अवगाहना—पृथक्त्व	अवगाहना पृथक्त्व
,,	,,	३	स्थिति—पृथक्त्व	स्थिति पृथक्त्व
,,	३६०	२	उत्पन्न होता है।	उपपन्न होता है,
७७१	३६०	३	अवगाहना—जघन्यतः	अवगाहना जघन्यतः
,,	,,	३	स्थिति—जघन्यतः	स्थिति जघन्यतः
,,	,,	४	कोटि-पूर्व यावत् भवादेश तक। शेष पूर्ववत्	कोटि-पूर्व शेष पूर्ववत् यावत् भवादेश तक।

शतक २५

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७८१	सं.गा.	१	पच्चीसवें शतक के बारह उद्देशक— १. लेश्या २.	१. लेश्या २.
७८१	सं.गा.	२,३	१२. मिथ्या—ये १२ उद्देशक हैं।	१२. मिथ्या —(ये बारह) उद्देशक हैं॥१॥
,,	१	१,२	राजगृह में गणधर गौतम ने श्रमण भगवान महावीर से यावत् (भ. १/४-१०) इस	राजगृह में (भ. १/४-१०) यावत् इस
,,	१	४,५	यावत् (पण्णवणा १७/७१-८३) चार	(पण्णवणा १७/७१-८३) यावत् चार
७८१	२	२	गौतम! संसार-समापन्नक जीव चौदह	गौतम! (संसार-समापन्नक-जीव) चौदह
,,	२	२	प्रज्ञप्त हैं जैसे	प्रज्ञप्त हैं, जैसे
,,	३	२,३	कौन किससे अल्प	कौन किनसे अल्प

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७८१	३	५-६	त्रीन्द्रिय-(अपर्याप्तक-जीवों का जघन्य योग)	त्रीन्द्रिय (-अपर्याप्तक-जीवों) का (जघन्य योग)
७८१	३	६-७	चतुरिन्द्रिय-(अपर्याप्तक-जीवों का जघन्य योग)	चतुरिन्द्रिय (-अपर्याप्तक-जीवों) का (जघन्य योग)
७८२	३	१४-१५	त्रीन्द्रिय-(पर्याप्तक-जीवों का जघन्य	त्रीन्द्रिय (-पर्याप्तक-जीवों) का (जघन्य
७८२	३	१५	है) इसी	है), इसी
,,	,,	१७-१८	त्रीन्द्रिय-(अपर्याप्तक-जीवों का भी उत्कृष्ट	त्रीन्द्रिय (-अपर्याप्तक-जीवों) का भी (उत्कृष्ट
,,	,,	२१	त्रीन्द्रिय-पर्याप्तक-जीवों का उत्कृष्ट	त्रीन्द्रिय (-पर्याप्तक-जीवों) का भी (उत्कृष्ट
,,	,,	२१	है) इसी	है), इसी
,,	४	१	हैं ? विषम-योग	हैं ? (अथवा) विषम-योग
७८३	६	४	९. औदारिक--	९. औदारिक-
,,	,,	५	शरीर-	-शरीर
७८३	७	१	कौन किससे अल्प	कौन किनसे अल्प
,,	१०	२	गौतम! दो	गौतम! (अजीव-द्रव्य) दो
,,	११	२	गौतम! दस	गौतम! (अरूपि-अजीव-द्रव्य) दस
७८४	१२	२	गौतम! चार	गौतम! (रूपि-अजीव-द्रव्य) चार
७८४	१३	२	गौतम! संख्येय	गौतम! (वे) संख्येय
७८४	१४	१	यह किसी अपेक्षा	यह किस अपेक्षा
७८४	१४	१,५	है—संख्येय	है—(वे) संख्येय
,,	१५	२	गौतम! संख्येय	गौतम! (जीव-द्रव्य) संख्येय
,,	१६	३	हैं. यावत्	हैं यावत्
७८४	१६	५	यह कहा जा रहा है—यावत् जीव-द्रव्य	यह (कहा जा रहा है—) यावत् (जीव-द्रव्य)
,,	१८	३	जीव-द्रव्यों अजीव-द्रव्यों	जीव-द्रव्य अजीव द्रव्यों
७८४	२०	१	से कहा जा रहा है ?	से (कहा जा रहा है) ?
७८५	२०	६	यावत् वैमानिक तक। केवल इतना	यावत् वैमानिकों की (वक्तव्यता), इतना
७८५	२१	१	भंते! लोक	भंते! (लोक
,,	२१	१,२	अनन्त है ?	अनन्त है) क्या इस
७८५	२१	२	प्रदेशात्मक सान्त	प्रदेशात्मक (सान्त)
,,	,,	३	है	है
७८५	२१	४	गौतम! लोक	गौतम! (लोक
,,	,,	,,	अनन्त हैं। फिर भी इस	अनन्त हैं। (फिर भी) इस
,,	,,	४	सान्त लोक-	असंख्येय-प्रदेशात्मक (सान्त) (लोक-
,,	,,	५	भक्तव्य—सान्त	भक्तव्य है—सान्त
,,	२२	२	गौतम! व्याघात	गौतम! (लोक के एक आकाश-प्रदेश में) व्याघात
,,	,,	३	से पुद्गलों	से (पुद्गलों
,,	,,	,,	होता है।	होता है)।
,,	२३	२	पूर्ववत्।	इसी प्रकार।

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७८५	२३	२	अपचय भी	अपचय (भी
,,	२३	२	वक्तव्य है।	वक्तव्य हैं)।
,,	२४	२	है ? अथवा	है ? (अथवा)
,,	२५	३	गौतम! द्रव्यतः	गौतम! (उन्हें) द्रव्यतः
,,	२६	२	पूर्ववत्। केवल इतना	इसी प्रकार (वक्तव्य है), इतना
७८६	२७	१	करता है....—पृच्छा।	करता है—पृच्छा।
७८५	२८	२	है ? (द्वि-	है ? (अथवा) द्वि-
,,	२८	३	वक्तव्यता। यावत् स्वविषय	वक्तव्यता यावत् (स्वविषय
,,	,,	४	करता,	करता,)
,,	२९	२	स्थिति में.....औदारिक-शरीर की भांति (भ. २५/२५) वक्तव्यता।	स्थिति में औदारिक-शरीर (भ. २५/२५) की भांति वक्तव्यता।
,,	३०	१	है ?	है० ?
,,	३१	१	है ?....पृच्छा	है० ?
७८७	३१	२	शरीर की भांति वक्तव्यता। यावत्	शरीर के रूप में (गृहीत द्रव्यों) की भांति वक्तव्यता यावत्
७८७	३४	२	संख्येय	(परिमण्डल-संस्थान द्रव्य की अपेक्षा) संख्येय
,,	३५	१	संस्थान.....?	संस्थान० ?
७८७	३६	४	द्रव्य की अपेक्षा	द्रव्य की अपेक्षा
७८७	३६	सर्वत्र	अपेक्षा उससे	अपेक्षा उनसे
७८७	३६	९	प्रदेश की अपेक्षा	प्रदेश की अपेक्षा
,,	,,	११	अपेक्षा असंख्येय	अपेक्षा (आयत-संस्थानों से) असंख्येय
७८७	३६	१२	द्रव्य और प्रदेश की अपेक्षा	द्रव्य और प्रदेश की अपेक्षा
७८७	३६	१४	अपेक्षा असंख्येय	अपेक्षा (आयत-संस्थानों से) असंख्येय
,,	,,	,,	अनित्थंस्थ-संस्थान	अनित्थंस्थ-संस्थानों
,,	,,	१५	असंख्येय-गुणा है।	असंख्येय-गुणा हैं,
,,	,,	१७	असंख्येय-गुणा	(आयत-संस्थानों से) असंख्येय-गुणा
७८७	३८	२	संख्येय	(परिमण्डल-संस्थान) संख्येय
७८७	४०	३	संख्येय	(रत्नप्रभा-पृथ्वी में परिमण्डल-संस्थान) संख्येय
,,	४०	२	है,	हैं,
,,	४०	२	है	हैं,
,,	४१	१	है ?	हैं० ?
,,	४१,४२	२	संस्थान।	संस्थान (वक्तव्य हैं)।
,,	४२	१	संस्थान.....?	संस्थान० ?
,,	,,	२	अधःसप्तमी	अधःसप्तमी (की वक्तव्यता)
,,	४३,४४	१	संस्थान.....?	संस्थान० ?
,,	,,	,,	पूर्ववत्। यावत्	पूर्ववत्। इस प्रकार यावत्
,,	,,	,,	अच्युत-कल्प।	अच्युत-कल्प (की वक्तव्यता)।
७८७	४४	२	विमान में भी।	विमान की भी (वक्तव्यता)।

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७८७	४४	२	प्राग्भारा में	प्राग्भारा की
७८७	४५	३	गौतम!	गौतम! (वहां परिमण्डल-संस्थान)
७८८	४६	२	हैं?.....उसी प्रकार पृच्छा।	हैं०? (उसी प्रकार पृच्छा)।
७८८	४६	३	इसी	यह पैरा पिछले पैरे के साथ है।
७८८	४६	३	संस्थान।	संस्थान (वक्तव्य हैं)।
,,	४७	,,	हैं.....?	हैं०? (उसी प्रकार पृच्छा) वृत्त-
,,	,,	३	उसी प्रकार पृच्छा...वृत्त-संस्थान	संस्थान
७८८	४७	३	प्रकार।	प्रकार (वक्तव्य हैं)।
,,	,,	३	संस्थान।	संस्थान (वक्तव्य हैं)।
,,	,,	५	-संस्थान।	-संस्थान के साथ।
७८८	४८	२	हैं....पृच्छा।	हैं—पृच्छा।
,,	४८	३	गौतम!	गौतम! (वहां परिमण्डल-संस्थान)
,,	,,	३	हैं?	हैं।
,,	४९	१	हैं.....? इसी	हैं०? इसी
,,	४९	२	संस्थान।	संस्थान (वक्तव्य हैं)।
,,	५०	१	पृथ्वी पर एक	पृथ्वी में एक
७८८	५०	२	संख्येय हैं.....?	संख्येय हैं—
,,	५०	३	गौतम!	गौतम! (वहां परिमण्डल-संस्थान)
,,	,,	३	संस्थान अनंत हैं।	संस्थान (वक्तव्य हैं)।
,,	,,	४	आयत-संस्थान।	आयत-संस्थान (वक्तव्य हैं)।
,,	,,	६	अधःसप्तमी।	अधःसप्तमी में
,,	,,	,,	पृथ्वी।	पृथ्वी की वक्तव्यता
,,	५१	,,	निष्पन्न पुद्गल-स्कन्ध	निष्पन्न परमाणु-स्कन्ध
७८९	,,	१६	है, और	है और
,,	५३	१	है....?	है—
,,	५४	८,९	और	है और
,,	,,	१३	करने वाला है।	करने वाला है,
,,	५५	१	वाला......है?	वाला—
७९१	५६	३	परिमंडल संस्थान द्रव्य की अपेक्षा	(परिमण्डल-संस्थान द्रव्य की अपेक्षा)
७९१	५७	१	अपेक्षा.....?	अपेक्षा०?
,,	,,	,,	संस्थान।	संस्थान (वक्तव्य है)।
,,	५८	१	हैं....?	हैं—
,,	,,	३	परिमण्डल-संस्थान ओघ	(परिमण्डल संस्थान) ओघ
,,	,,	५	कल्योज है।	कल्योज हैं।
७९१	५९	६	संस्थान।	संस्थान (वक्तव्य है)।
,,	५९	१	कृतयुग्म है......?	कृतयुग्म है—
,,	,,	२	परिमण्डल संस्थान प्रदेश की अपेक्षा	(परिमण्डल-संस्थान प्रदेश की अपेक्षा)
७९१	५८	३	संस्थान।	संस्थान (वक्तव्य है)।
,,	६०	२	परिमण्डल-संस्थान	(परिमण्डल-संस्थान)
,,	६०	४	संस्थान।	संस्थान (वक्तव्य है)।
७९१	६१	३	परिमण्डल-संस्थान	(परिमण्डल-संस्थान)
,,	६१	४	नहीं हैं,	नहीं है,
७९१	६२	१	वाला है.....? पृच्छा	वाला है—पृच्छा।

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७९१	६२	२	वृत्त-संस्थान	(वृत्त-संस्थान)
,,	६३	,,	वाला है.....? पृच्छा	वाला है—पृच्छा।
,,	,,	३	त्रिकोण-संस्थान	(त्रिकोण-संस्थान)
७९२	६४	१	क्या कृतयुग्म-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला.....?	(क्या कृतयुग्म-प्रदेशों का अवगाहन करने वाला)०?
,,	,,	२	की वक्तव्यता वैसी	की भांति
,,	६५	१	संस्थान......? पृच्छा।	संस्थान—पृच्छा।
,,	,,	२	आयत-संस्थान	(एक) (आयत-संस्थान)
७९२	६६	१	कृतयुग्म प्रदेशों	कृतयुग्म-प्रदेशों
७९२	६६	२	है....?	हैं—
,,	,,	३	परिमण्डल-संस्थान	(परिमण्डल-संस्थान)
७९२	६६	३	से भी और विधान की अपेक्षा से भी	भी और विधान की अपेक्षा भी
,,	६७	१	हैं.....?	हैं—
,,	,,	३	वृत्त-संस्थान ओघ की अपेक्षा से	(वृत्त-संस्थान) ओघ की अपेक्षा
,,	,,	५	कल्योज--प्रदेश	कल्योज-प्रदेश
,,	६८	३	त्रिकोण-संस्थान ओघ की अपेक्षा से	(त्रिकोण-संस्थान) ओघ की अपेक्षा
७९२	६८	६	द्वापरयुग्म से	द्वापरयुग्म
,,	,,	७	अवगाहन नहीं करते,	अवगाहन करने वाले भी हैं,
,,	,,	,,	करने वाले भी हैं।	नहीं करते। (यह अर्थ हेम भगवती में उपलब्ध पाठान्तर के आधार पर है।)
७९२	६८	७-८	चतुष्कोण-संस्थान की वृत्त-संस्थान की भांति वक्तव्यता।	वृत्त-संस्थान की भांति चतुष्कोण-संस्थान (वक्तव्य हैं)।
७९२	६९	२	आयत-संस्थान ओघ की अपेक्षा से	(आयत-संस्थान) ओघ की अपेक्षा
७९३	७०	४	परिमण्डल-संस्थान ओघ की अपेक्षा से	(परिमण्डल-संस्थान) (ओघ की अपेक्षा)
७९३	७१	२	परिमण्डल-संस्थान ओघ की अपेक्षा से	(परिमण्डल-संस्थान) ओघ की अपेक्षा
७९३	७१	५	आयत-संस्थान	आयत-संस्थानों
,,	७२	१	अपेक्षा से क्या	अपेक्षा क्या
,,	,,	,,	कृतयुग्म-पर्याय	कृतयुग्म-पर्यव
,,	,,	२	कल्योज-पर्याय	कल्योज-पर्यव
,,	,,	३	परिमण्डल-संस्थान कृष्ण-वर्ण-पर्यवों की अपेक्षा से स्यात्	(परिमण्डल-संस्थान कृष्ण-वर्ण-पर्यवों की अपेक्षा) स्यात्
७९३	७२	३	कृतयुग्म-पर्याय	कृतयुग्म-पर्यव
,,	७२	४	वक्तव्यता	(वक्तव्यता)
७९३	७२	५,६	अपेक्षा से वक्तव्यता	अपेक्षा (वक्तव्यता)
,,	७३	३	आकाश-प्रदेश की श्रेणियां द्रव्य की अपेक्षा	(आकाश-प्रदेश की श्रेणियां द्रव्य की अपेक्षा)
७९३	७४	२-३,३	आकाश-प्रदेश की श्रेणियां भी।	(आकाश-प्रदेश की श्रेणियां) भी (वक्तव्य हैं)।

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७९३	७५	३	लोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियां द्रव्य की अपेक्षा	(लोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियां द्रव्य की अपेक्षा)
,,	७६	२	संख्येय.......हैं?	संख्येय हैं०?
,,	७६	२	लोकाकाश-	(लोकाकाश-
७९३	७६	३	श्रेणियां भी। इसी	श्रेणियां) भी (वक्तव्य हैं)। इसी
,,	,,	३	लम्बी लोकाकाश-	लम्बी (लोकाकाश-
,,	,,	३	श्रेणियां भी।	श्रेणियां) भी (वक्तव्य हैं)।
७९३	७७	३	अलोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियां द्रव्य की अपेक्षा	(अलोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियां द्रव्य की अपेक्षा)
७९३	७७	४-६	लंबी अलोकाकाश-	लंबी (अलोकाकाश-
,,	,,	४-६	श्रेणियां भी।	श्रेणियां) भी (वक्तव्य हैं)।
,,	७८	३	श्रेणियां भी।	(श्रेणियां) भी (वक्तव्य हैं)।
,,	७९	१	हैं........?	हैं—
,,	७९	२	गौतम! लोकाकाश-	गौतम! (लोकाकाश-
,,	,,	२	अपेक्षा	अपेक्षा)
,,	,,	३-५	लंबी लोकाकाश	लंबी (लोकाकाश-
,,	,,	३,४	श्रेणियां भी	श्रेणियां) भी (वक्तव्य हैं)।
७९३	७९	५	श्रेणियां	श्रेणियां)
,,	८०	१	हैं........?	हैं—
,,	,,	२	अलोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियां प्रदेश की अपेक्षा	(अलोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियां प्रदेश की अपेक्षा)
७९४	८१	१	श्रेणियां.....? पृच्छा।	श्रेणियां—पृच्छा
,,	,,	२	पूर्व-पश्चिम की ओर लम्बी अलोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियां	(पूर्व-पश्चिम की ओर लम्बी अलोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियां)
७९४	८१	३,४	ओर अलोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियां भी।	ओर (लम्बी) (अलोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियां) भी (वक्तव्य हैं)।
,,	८२	१	श्रेणियां.....? पृच्छा।	श्रेणियां—पृच्छा।
,,	,,	२	ऊर्ध्व-अधः की ओर लम्बी अलोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियां	(ऊर्ध्व-अधः की ओर लंबी अलोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियां)
,,	८३	३	आकाश-प्रदेश की श्रेणियां	(आकाश-प्रदेश की श्रेणियां)
,,	,,	,,	नहीं है	नहीं हैं,
,,	,,	५	आकाश-प्रदेश की श्रेणियों की वक्तव्यता है।	(आकाश-प्रदेश की श्रेणियां वक्तव्य हैं)।
,,	८४	१	हैं?......पृच्छा।	हैं—पृच्छा।
,,	,,	२	लोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियां	(लोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियां)
,,	,,	४	आकाश-प्रदेश की श्रेणियों की वक्तव्यता।	(आकाश-प्रदेश की श्रेणियां वक्तव्य हैं)।
,,	८५	१	हैं?......पृच्छा।	हैं—पृच्छा।
,,	,,	२	अलोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियां	(अलोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियां)
७९४	८५	४	लंबी श्रेणियों की वक्तव्यता।	लंबी (श्रेणियां वक्तव्य हैं).
७९५	,,	६	आकाश-प्रदेश की श्रेणियां	(आकाश-प्रदेश की श्रेणियां)
,,	८६	१	त्र्योज हैं.....?	त्र्योज हैं—

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७९५	८६	३	आकाश-प्रदेश की श्रेणियां द्रव्य की अपेक्षा	(आकाश-प्रदेश की श्रेणियां द्रव्य की अपेक्षा)
,,	,,	४,५	आकाश-प्रदेश की श्रेणियों	(आकाश-प्रदेश की श्रेणियां
७९५	८६	५	लोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियों	लोकाकाश-प्रदेश की श्रेणियां
,,	,,	६	श्रेणियों	श्रेणियां
,,	,,	२,३	आकाश-प्रदेश की श्रेणियों	(आकाश-प्रदेश की श्रेणियां
,,	८८	१	अपेक्षा.....? पृच्छा।	अपेक्षा–पृच्छा।
,,	,,	२	लोकाकाश-प्रदेश	(लोकाकाश-प्रदेश
,,	,,	,,	अपेक्षा	अपेक्षा)
,,	,,	४	लम्बी श्रेणियां भी,	लम्बी (श्रेणियां) भी,
,,	,,	५	लम्बी श्रेणियां भी।	लम्बी (श्रेणियां) भी (वक्तव्य हैं)।
,,	८९	१,२	अपेक्षा.....? पृच्छा।	अपेक्षा–पृच्छा।
,,	,,	३	गौतम! ऊर्ध्व-अधः	गौतम! (ऊर्ध्व-अधः
७९५	८९	३	अपेक्षा	अपेक्षा)
,,	,,	४	वाली नहीं है,	वाली नहीं हैं,
,,	,,	५	वाली नहीं है।	वाली नहीं हैं।
,,	९०	१	अपेक्षा.....?	अपेक्षा–पृच्छा।
,,	,,	२	अलोकाकाश-प्रदेश	(अलोकाकाश-प्रदेश
७९५	९०	२	अपेक्षा	अपेक्षा)
,,	,,	३-४,४	आकाश-प्रदेश की श्रेणियां	(आकाश-प्रदेश की श्रेणियां)
,,	,,	५	आकाश-प्रदेश की श्रेणियां भी,	(आकाश-प्रदेश की श्रेणियां) भी (वक्तव्य हैं),
,,	९१	२	प्रज्ञप्त हैं जैसे	प्रज्ञप्त हैं, जैसे
७९६	९२	२	परमाणु-पुद्गलों की गति	(परमाणु-पुद्गलों की गति)
,,	९३,९४	२	की वक्तव्यता	(की वक्तव्यता)
,,	९५	२	रत्नप्रभा-पृथ्वी के	(रत्नप्रभा-पृथ्वी के)
,,	,,	३	उद्देशक की	उद्देशक (भ. १/२१२-२१५) की
,,	९६	२	आचार यावत्	आचार (भ. २०/७५) यावत्
,,	९७	१,२	वह आचार क्या है? आचार में	वह आचार क्या है? आचार में
,,	,,	४	सूत्र की	(सू. ८१-१२७) की
,,	,,	४	यावत्–अनुयोग की विधि	यावत् अनुयोग की विधि
,,	,,	६	का बोध।	का बोध ॥१॥
,,	९८	१	नैरयिक, यावत्	नैरयिक यावत्
७९६	९८	१	कितने	किनसे
,,	,,	३	इन पांच गतियों के समास (वर्ग) में	(इन पांच गतियों के समास (वर्ग) में)
७९६	९८	३	में अल्पबहुत्व की	का अल्पबहुत्व
७९६	९८	३-४	पद 'बहुवक्तव्यता'	'बहुवक्तव्यता(-पद)'
७९६	९८	४,६	की वक्तव्यता	की भांति (वक्तव्य है)।
७९६	९८	५	के बहुत्व की	का अल्पबहुत्व
७९६	९८	६	पद 'बहु वक्तव्यता'	'बहु वक्तव्यता-पद'
७९६	९९	१	यावत् चतुरिन्द्रिय और अनिन्द्रिय	यावत् अनिन्द्रिय

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७९६	१००, १०१	२	पद 'बहुवक्तव्यता'	'बहुवक्तव्यता-(पद)'
,,	१०१	२	विशेषाधिक है?)	विशेषाधिक हैं?)
,,	१०३	२	हैं जैसे–कृतयुग्म	हैं, जैसे–कृतयुग्म (भ. २५/५४)
,,	१०४	३	हो	हो (वक्तव्य है)
,,	१०४	३,४	है। युग्म चार प्रज्ञप्त हैं।	है (युग्म चार प्रज्ञप्त हैं)।
,,	१०६	२	जैसे–कृतयुग्म.....? अर्थ	जैसे–कृतयुग्म (यावत् कल्योज)? अर्थ
,,	१०७	२	चार	(चार
,,	,,	२	हैं।	हैं)।
,,	१०७	१	के.....? पृच्छा।	के–पृच्छा।
,,	१०८	१	जीव स्यात् कृतयुग्म	जीव (स्यात् कृतयुग्म)
,,	,,	३,४	स्यात् कृतयुग्म यावत् कल्योज होते हैं।	(स्यात् कृतयुग्म यावत् कल्योज होते हैं)।
७९८	१११, ११२	१	द्रव्य	(द्रव्य
,,	,,	१	अपेक्षा.....	अपेक्षा)–
७९८	१११	२	जीवास्तिकाय द्रव्य की अपेक्षा कृतयुग्म है	(जीवास्तिकाय द्रव्य की अपेक्षा) कृतयुग्म है
,,	,,	२	त्र्योज नहीं है, द्वापरयुग्म नहीं हैं	त्र्योज नहीं है, द्वापरयुग्म नहीं है,
७९८	१११	३	नहीं हैं।	नहीं है।
७९८	११२	१	अपेक्षा.....? पृच्छा	अपेक्षा)–पृच्छा।
,,	,,	२	गौतम! पुद्गलास्तिकाय	गौतम! (पुद्गलास्तिकाय
,,	,,	२	अपेक्षा स्यात्	अपेक्षा) स्यात्
,,	,,	३	अद्धासमय की	अद्धासमय
,,	११३	१	कृतयुग्म है.....? पृच्छा।	कृतयुग्म है–पृच्छा।
७९८	११३	२	गौतम! धर्मास्तिकाय	गौतम! (धर्मास्तिकाय
,,	,,	२	अपेक्षा	अपेक्षा)
,,	११४	१,२	अपेक्षा कौन किससे अल्प, बहुत, तुल्य अथवा विशेषाधिक है।	अपेक्षा० (कौन किससे अल्प, बहुत, तुल्य अथवा विशेषाधिक हैं)?
,,	११४	३	तीसरे पद 'बहुवक्तव्यता'	तीसरे 'बहुवक्तव्यता-(पद)'
,,	,,	४	प्रज्ञप्त है वैसा ही निरवशेष वक्तव्य है।	(उक्त है) वैसा ही निरवशेष (वक्तव्य है)।
,,	११६	१	धर्मास्तिकाय यदि	यदि (धर्मास्तिकाय)
,,	११६	५	करते है,	करने वाला है,
,,	११७	१,३	धर्मास्तिकाय	(धर्मास्तिकाय)
,,	११७	२	है.....? पृच्छा।	है–पृच्छा।
७९८	११७	५,६	इसी प्रकार अधर्मास्तिकाय और इसी प्रकार आकाशास्तिकाय की वक्तव्यता	इस प्रकार अधर्मास्तिकाय भी (वक्तव्य है)। इस प्रकार आकाशास्तिकाय भी (वक्तव्य है)।
७९८	११७	६	अद्धासमय की भी पूर्ववत् वक्तव्यता	अद्धासमय इसी प्रकार (वक्तव्य है)।
,,	११९	१	है.....? पृच्छा।	है–पृच्छा।
,,	११९	२	द्रव्य	(द्रव्य

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
७९८	११९	२	जीव	जीव)
,,	,,	३	भी।	भी (वक्तव्य है)।
,,	,,	३	सिद्ध।	सिद्ध (वक्तव्य है)।
७९९	१२०	१	हैं.....? पृच्छा।	हैं–पृच्छा।
,,	,,	२	अपेक्षा से अनेक जीव	अपेक्षा (अनेक) (जीव)
,,	१२०	३	अपेक्षा से जीव	(अनेक) (जीव)
,,	१२१	१	जीव.....? पृच्छा।	जीव–पृच्छा।
,,	,,	२	अपेक्षा से स्यात् (अनेक) नैरयिक	अपेक्षा स्यात् (अनेक) (नैरयिक)
,,	,,	३	अपेक्षा से (अनेक)	अपेक्षा (अनेक)
७९९	१२१	४	सिद्धों	सिद्ध
,,	१२२, १२३	१	है.....? पृच्छा।	है–पृच्छा।
,,	१२२	२,३	(एक) जीव	(एक) (जीव)
,,	१२२	३	है, यावत्	है यावत्
,,	१२२	४	यावत् वैमानिक	यावत् (एक) वैमानिक
,,	१२३	२	गौतम! प्रदेश	गौतम! (प्रदेश
,,	,,	२	सिद्ध	सिद्ध)
,,	१२४	२,४	(अनेक) जीव	(अनेक) (जीव)
७९९	१२४	५	नैरयिकों	नैरयिक
७९९	१२४	६	वैमानिकों	वैमानिक
,,	१२५	१	सिद्ध.....? पृच्छा।	सिद्ध–पृच्छा।
,,	१२५	२	सिद्ध	(सिद्ध)
,,	१२६	१	है.....? पृच्छा।	है–पृच्छा।
,,	१२६, १२७	२	जीव	(जीव)
,,	१२६	२	है, यावत्	है यावत्
,,	,,	४	हैं, यावत्	हैं यावत्
८००	१२८	१	नैरयिक.....? पृच्छा।	नैरयिक–पृच्छा।
८००	१२८	२	नैरयिक जीव	(नैरयिक जीव)
,,	,,	२,३	हैं, यावत्	हैं यावत्
,,	,,	५	एकेन्द्रिय की जीव	एकेन्द्रिय जीव
,,	१२९	१	है.....? पृच्छा।	है–पृच्छा।
,,	१२९	२	जीव	(जीव)
,,	१३०, १३२	१	नैरयिक.....? पृच्छा।	नैरयिक–पृच्छा।
,,	१३०, १३२	२	नैरयिक	(नैरयिक)
,,	१३०	२	है, यावत्	है यावत्
,,	,,	३	वैमानिक की	वैमानिक
,,	,,	,,	सिद्ध की	सिद्ध
,,	१३१	१	जीव.....? पृच्छा।	जीव–पृच्छा।
,,	१३१	२	जीव	(जीव)
,,	,,	२,४	हैं, यावत्	हैं यावत्

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८००	१३१	४	हैं। इसी प्रकार	हैं; इस प्रकार
,,	,,	,,	वैमानिकों की	वैमानिक
,,	,,	५	सिद्धों की	सिद्ध
,,	१३३	१-३	(एक) जीव	(एक) (जीव)
,,	१३३	१	है.....? पृच्छा।	है–पृच्छा।
,,	,,	२,३	है, यावत्	है यावत्
,,	,,	४	वैमानिकों की	(एक) वैमानिक
८००	१३४	१	अपेक्षा....? पृच्छा।	अपेक्षा–पृच्छा।
,,	,,	२,३	(अनेक) जीव	(अनेक) (जीव)
,,	,,	३	है यावत् कल्योज नहीं है	हैं यावत् कल्योज नहीं हैं।
,,	,,	३	अपेक्षा से (अनेक)	अपेक्षा (अनेक)
,,	,,	४	है, यावत् स्यात् कल्योज है,	हैं यावत् स्यात् कल्योज हैं,
,,	,,	४	है, यावत् कल्योज भी है।	हैं यावत् कल्योज भी हैं।
,,	,,	६	से वक्तव्य	वक्तव्य
,,	,,	७	की वक्तव्यता	की (अपेक्षा) वक्तव्यता
८०१	१३५	२	है....? पृच्छा।	है–पृच्छा।
८०१	१३५	३	आभिनिबोधिक-ज्ञान	(आभिनिबोधिक-ज्ञान
८०१	१३५	३	(एक) जीव	(एक) जीव)
,,	,,	३	है, यावत्	है यावत्
,,	,,	४	वैमानिक की	वैमानिक
,,	१३६	१	जीव......? पृच्छा।	जीव–पृच्छा।
,,	१३६	२	आभिनिबोधिक-ज्ञान	(आभिनिबोधिक-ज्ञान
८०१	१३६	२	(अनेक) जीव-	(अनेक) जीव)-
,,	,,	४	एकेन्द्रिय को	एकेन्द्रियों
,,	,,	,,	वैमानिकों की	वैमानिक
,,	,,	५	की भी	की अपेक्षा भी
८०१	१३६	दोनों बार ५,६	वक्तव्यता। केवल इतना	वक्तव्यता, इतना
,,	,,	७	की	की अपेक्षा
,,	,,	७	होता है। शेष	होता है, शेष
,,	१३७	१	है......? पृच्छा।	है–पृच्छा।
,,	१३७, १३८	२	केवल-ज्ञान	(केवल-ज्ञान
,,	,,	,,	(एक) जीव	(एक) जीव)
,,	१३८	१	है.....? पृच्छा।	है–पृच्छा।
,,	,,	२	(अनेक) जीव	(अनेक) जीव)
८०१	१३८	४	मनुष्यों	मनुष्य
८०१	१३८	४	सिद्धों	सिद्ध
८०१	१३९	२	कार्मक	कर्मक
,,	१३९	३,४	अपेक्षा	अपेक्षा भी
,,	,,	५	वक्तव्यता। केवल इतना	(वक्तव्य है), इतना
,,	१३९	६	पर्यव केवल	पर्यवों की अपेक्षा
,,	१३९	७	वक्तव्य हैं।	(वक्तव्य है)।

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८०१	१४०	३	अविकल रूप में	निरवशेष
,,	१४१	१	या	(अथवा)
८०२	१४२, १४३	सर्वत्र	जो	उनमें जो
८०२	१४४	१	सैज (कम्पन वाले) हैं? या	सैज हैं? (अथवा)
,,	१४५	१	सर्वतः भी सैज	(अथवा) सर्वतः सैज
,,	१४६	,,	है यावत्	है (—नैरयिक) यावत्
,,	,,	सर्वत्र	जो	उनमें जो
,,	,,	४	है यावत्	है (—नैरयिक) यावत्
,,	१४६	५	वैमानिकों	वैमानिक
,,	१४७	२	परमाणु-पुद्गल	(परमाणु-पुद्गल)
८०२	१४८-१५०	२	पुद्गलों	पुद्गल
,,	१५०	३	हैं। यावत्	हैं यावत्
८०२	१५१	२	बहुत हैं......?	बहुत हैं?
८०३	१५२	१	स्कंध	स्कंधों
८०३	१५३	१	की, पृच्छा.....?	की–पृच्छा
८०३	१५४, १५५, १५७	१	की, पृच्छा.....।	की–पृच्छा
,,	१५८	१	प्रदेशावगाढ़ और	प्रदेशावगाढ़ पुद्गलों और
८०४	१६२	२	हैं.......?	है?
,,	,,	८	की भी	की अपेक्षा भी
८०४	१६२	९	पुद्गलों की वक्तव्यता है	पुद्गल (उक्त हैं)
,,	१६२	९,१०	पुद्गलों	पुद्गल
८०५	१६४	१०	द्रव्य और प्रदेश की अपेक्षा	द्रव्य और प्रदेश की अपेक्षा–
,,	१६५	४	हो स्थिति के	हो विभिन्न स्थिति (वाले पुद्गलों) के
८०५	१६६	१	असंख्येय-गुणा-कृष्ण	असंख्येय-गुण-कृष्ण
,,	,,	४	-पुद्गलों का अल्पबहुत्व (भ. २५/१६३)	-पुद्गलों (संख्येय-प्रदेश स्कंधों आदि) का अल्पबहुत्व (भ. २५/१६३) प्रतिपादित किया गया,
,,	,,	५	पुद्गलों के	पुद्गलों आदि के
८०५	१६७	६-७	हैं। प्रदेश की अपेक्षा पूर्ववत्। केवल इतना	हैं। प्रदेश की अपेक्षा–इसी प्रकार (वक्तव्यता), इतना
,,	,,	८	द्रव्य और प्रदेश की अपेक्षा	द्रव्य और प्रदेश की अपेक्षा–
८०६	१६७	१३	लघु-स्पर्शों	लघु (पुद्गलों)
८०६	,,	१४	रूक्ष-स्पर्शों का अल्पबहुत्व भी वर्णो	रूक्ष पुद्गलों का अल्पबहुत्व भी वर्ण (वाले पुद्गलों)
८०६	१६८	३	गौतम! कृतयुग्म	गौतम! (एक) (परमाणु-पुद्गल द्रव्य की अपेक्षा) कृतयुग्म
८०६	१६९	१	है?.....पृच्छा।	है–पृच्छा।

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८०६	१६९	२	गौतम! ओघादेश	गौतम! (अनेक) (परमाणु-पुद्गल द्रव्य की अपेक्षा) ओघादेश
,,	,,	२	हैं, यावत्	हैं यावत्
,,	१७०	२	गौतम! कृतयुग्म	गौतम! (एक) (परमाणु-पुद्गल प्रदेश की अपेक्षा) कृतयुग्म
,,	१७१	१	स्कंध.....? पृच्छा।	स्कंध–पृच्छा।
८०६	१७१	२	गौतम! कृतयुग्म	गौतम! (द्विप्रदेशिक स्कन्ध) प्रदेश की अपेक्षा कृतयुग्म
,,	१७२	१	स्कंध.....? पृच्छा।	स्कंध–पृच्छा।
८०६	१७२	२	गौतम! कृतयुग्म	गौतम! (एक) (त्रिप्रदेशिक स्कन्ध प्रदेश की अपेक्षा कृतयुग्म)
,,	१७३	१	स्कंध.....? पृच्छा।	स्कंध–पृच्छा।
,,	,,	२	गौतम! कृतयुग्म	गौतम! (एक) (चतुःप्रदेशिक स्कन्ध प्रदेश की अपेक्षा कृतयुग्म)
८०६	१७३	३	स्कन्ध (एक)	स्कन्ध (प्रदेश की अपेक्षा) (एक)
८०६	१७३	(दोनों बार) ३	की भांति है (भ. २५/१७०)	(भ. २५/१७०) की भांति है।
,,	१७४	१	भन्ते! प्रदेश की अपेक्षा (एक)	भन्ते! (एक)
८०६	१७४	१	स्कन्ध......? पृच्छा।	स्कन्ध (प्रदेश की अपेक्षा)–पृच्छा।
,,	,,	२	गौतम! स्यात्	गौतम! (एक) (संख्यात-प्रदेशिक पुद्गल-स्कन्ध प्रदेश की अपेक्षा) स्यात्
,,	,,	३	पुद्गल-स्कन्ध की भी,	पुद्गल-स्कन्ध भी,
८०६	१७४	३	पुद्गल-स्कन्ध भी।	पुद्गल-स्कन्ध भी (वक्तव्य है)।
,,	१७५	१	हैं......? पृच्छा।	हैं–पृच्छा।
,,	१७५	२	गौतम! ओघादेश	गौतम! ((अनेक) परमाणु-पुद्गल प्रदेश की अपेक्षा) ओघादेश
,,	,,	२	हैं, यावत्	हैं यावत्।
,,	१७६	१	स्कन्ध.....? पृच्छा।	स्कन्ध–पृच्छा।
८०७	१७६	२	गौतम! ओघादेश	गौतम! ((अनेक) द्विप्रदेशिक स्कन्ध प्रदेश की अपेक्षा ओघादेश)
८०७	१७७	१	स्कन्ध.....? पृच्छा।	स्कन्ध–पृच्छा।
,,	१७७	२	गौतम! ओघादेश	गौतम! ((अनेक) त्रिप्रदेशिक स्कन्ध प्रदेश की अपेक्षा ओघादेश)
,,	१७८	१	स्कन्ध.....? पृच्छा।	स्कन्ध–पृच्छा।
८०७	१७८	२	गौतम! ओघादेश	गौतम! ((अनेक) चतुःप्रदेशिक स्कन्ध प्रदेश की अपेक्षा ओघादेश)
८०७	१७८	३-८	स्कन्ध	स्कन्ध (प्रदेश की अपेक्षा)
,,	,,	३	-पुद्गलों की	-पुद्गलों (भ. २५/१७५) की
,,	,,	४,८	(भ. २५/१७६)। (अनेक)	। (अनेक)
,,	,,	४,८	स्कन्धों की	स्कन्धों (भ. २५/१७६) की
,,	,,	५	(भ. २५/१७६)। (अनेक)	। (अनेक)
,,	,,	,,	स्कन्धों की	स्कन्धों (भ. २५/१७७) की
,,	,,	६	(भ. २५/१७७)। (अनेक)	। (अनेक)

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८०७	१७८	६	स्कन्धों की	स्कन्धों (भ. २५/१७८) की
,,	,,	७	(भ. २५/१७८)। (अनेक)	। (अनेक)
,,	,,	,,	स्कन्धों की	स्कन्धों (भ. २५/१७५) की
८०७	१७८	८	(भ. २५/१७५) (अनेक)	(अनेक)
८०७	१७८	८	स्कन्धों की	स्कन्धों (भ. २५/१७६) की
,,	,,	९	(भ. २५/१७६)	।
,,	१७९	१	स्कन्ध.....? पृच्छा।	स्कन्ध—पृच्छा।
८०७	१७९	२	गौतम! ओघादेश	गौतम! ((अनेक) संख्येयप्रदेशिक पुद्गल-स्कन्ध प्रदेश की अपेक्षा) ओघादेश
,,	,,	३	स्कन्ध, (अनेक)	स्कन्ध भी, (अनेक)
,,	,,	४	स्कन्ध वक्तव्य हैं।	स्कन्ध भी (वक्तव्य हैं)।
,,	१८०	१	है......? पृच्छा।	है—पृच्छा।
८०७	१८०	२	गौतम! कृतयुग्म-	गौतम! ((एक) परमाणु-पुद्गल) कृतयुग्म-
८०७	१८१-१८३	१	स्कन्ध.....? पृच्छा।	स्कन्ध—पृच्छा।
,,	१८१	२	गौतम! कृतयुग्म-	गौतम! ((एक) द्विप्रदेशिक स्कन्ध) कृतयुग्म-
,,	१८३	२	गौतम! कृतयुग्म	गौतम! ((एक) त्रिप्रदेशिक स्कन्ध) कृतयुग्म-
८०७	१८३	२	गौतम! स्यात्	गौतम! ((एक) चतु:प्रदेशिक स्कन्ध) स्यात्
८०७	१८३	३	यावत्? (एक)	यावत् (एक)
,,	१८४	१	हैं.....? पृच्छा।	है—पृच्छा।
,,	१८४	२	गौतम! ओघादेश	गौतम! ((अनेक) परमाणु-पुद्गल) ओघादेश
८०८	१८५	१	द्वि-प्रदेशी स्कंध.....? पृच्छा।	(अनेक) द्विप्रदेशिक स्कन्ध—पृच्छा।
,,	,,	२	गौतम! ओघादेश	गौतम! ((अनेक) द्विप्रदेशिक स्कन्ध) ओघादेश
,,	१८६	१	स्कन्ध.....? पृच्छा।	स्कन्ध—पृच्छा।
,,	,,	२	गौतम! ओघादेश	गौतम! ((अनेक) त्रिप्रदेशिक स्कन्ध) ओघादेश
,,	१८७	१	स्कन्ध.....? पृच्छा।	स्कन्ध—पृच्छा।
,,	,,	२	गौतम! ओघादेश	गौतम! ((अनेक) चतु:प्रदेशिक स्कन्ध) ओघादेश
,,	१८८	१	है......? पृच्छा।	है—पृच्छा।
,,	१८८	२	गौतम!	गौतम! ((एक) परमाणु-पुद्गल)
,,	१८९	१	हैं......? पृच्छा।	हैं—पृच्छा।
,,	,,	२	गौतम! ओघादेश	गौतम! ((अनेक) परमाणु-पुद्गल) ओघादेश
,,	१९०	२	है......? पृच्छा।	है—पृच्छा।

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८०८	१९०	३	जैसे स्थिति	जैसे ((एक) परमाणु-पुद्गल यावत् (एक) अनन्त प्रदेशिक स्कन्ध (भ. २५/१८८) तथा (अनेक) परमाणु-पुद्गल यावत् (अनेक) अनन्त प्रदेशिक स्कन्ध (भ. २५/१८९) की) स्थिति
,,	,,	३,४	की वक्तव्यता।	की अपेक्षा वक्तव्यता।
,,	१९१	२	है.......? पृच्छा।	है—पृच्छा।
८०८	१९१	३	गौतम! कर्कश-	गौतम! ((एक) अनन्तप्रदेशिक-स्कन्ध कर्कश-
८०८	१९१	३	अपेक्षा स्यात्	अपेक्षा) स्यात्
,,	१९२	,,	हैं......? पृच्छा।	हैं—पृच्छा।
,,	१९२	३	गौतम! अनन्त-प्रदेशी	गौतम! ((अनेक) अनन्तप्रदेशिक
,,	,,	३	अपेक्षा—ओघादेश	अपेक्षा—) ओघादेश
,,	,,	३,४	हैं,	हैं
८०९	,,	५	पर्यव भी वक्तव्य हैं।	पर्यवों की अपेक्षा भी (अनन्तप्रदेशिक स्कन्ध) वक्तव्य हैं।
८०९	१९२	६	पर्यव वर्ण	पर्यवों की अपेक्षा जैसे वर्ण
,,	,,	,,	पर्यवों की भांति (उक्त है), वैसे	पर्यवों की अपेक्षा (भ. २५/१९० में)
८०९	१९३	२	गौतम! स-अर्ध	गौतम! ((एक) परमाणु-पुद्गल) स-अर्ध
,,	१९४	१	स्कंध....? पृच्छा।	स्कन्ध—पृच्छा।
,,	१९४	२	गौतम! स-अर्ध	गौतम! ((एक) द्विप्रदेशिक स्कन्ध) स-अर्ध
८०९	१९५	१	स्कन्ध.....? पृच्छा।	स्कन्ध—पृच्छा।
,,	,,	२	गौतम! स्यात्	गौतम! ((एक) संख्येयप्रदेशिक स्कन्ध) स्यात्
,,	१९६	२	गौतम! स-अर्ध	गौतम! ((अनेक) परमाणु-पुद्गल) स-अर्ध
,,	१९७	२	गौतम! स्यात्	गौतम! ((एक) परमाणु-पुद्गल) स्यात्
,,	१९८	२	गौतम! सैज	गौतम! ((अनेक) परमाणु-पुद्गल) सैज
,,	१९९	२	गौतम! जघन्यतः	गौतम! ((एक) परमाणु-पुद्गल काल की दृष्टि से सैज) जघन्यतः
,,	१९९	२	आवलिका का असंख्यातवां भाग।	आवलिका-के-असंख्यातवें-भाग (तक रहता है)।
,,	२००	२	(एक)	((एक)
८०९	२००	२	से जघन्यतः	से (निरेज) जघन्यतः
,,	,,	३	काल। इसी	काल (तक रहता है)। इसी
८०९	२०१	२	गौतम! सर्वकाल।	गौतम! ((अनेक) परमाणु-पुद्गल काल की दृष्टि से सैज) सर्वकाल (रहता है)।

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८१०	२०२	२	गौतम! सर्वकाल।	गौतम! ((अनेक) परमाणु-पुद्गल काल की दृष्टि से निरेज) सर्वकाल (रहता है)।
८१०	२०३	१	के	की
,,	,,	३	गौतम! स्वस्थानान्तर	गौतम! ((एक) परमाणु-पुद्गल की सैज अवस्था के काल का अन्तर) स्वस्थानान्तर
८१०	२०३	३	अपेक्षा से जघन्यतः	अपेक्षा जघन्यतः
,,	२०४	१	एक	(एक)
,,	,,	,,	का)	की)
८१०	२०४	३	गौतम! स्वस्थानान्तर	गौतम! ((एक) परमाणु-पुद्गल की निरेज अवस्था के काल का अन्तर) स्वस्थानान्तर
,,	२०४	३	अपेक्षा से जघन्यतः	अपेक्षा जघन्यतः
,,	२०५	१	के	की
,,	२०५	१	अवस्था......? पृच्छा।	अवस्था का—पृच्छा।
,,	,,	२	गौतम! स्वस्थानान्तर	गौतम! ((एक) द्विप्रदेशिक स्कन्ध की सैज अवस्था के काल का अन्तर) स्वस्थानान्तर
८१०	२०६	१	(एक	((एक)
८१०	२०६	१	का)	की)
,,	,,	२	गौतम! स्वस्थानान्तर	गौतम! ((एक) द्विप्रदेशिक स्कन्ध की निरेज अवस्था के काल का अन्तर) स्वस्थानान्तर
,,	२०६	२	अपेक्षा से जघन्यतः	अपेक्षा जघन्यतः
८१०	२०७	१	का सैज	की सैज
,,	,,	३	गौतम! अन्तर	गौतम! ((अनेक) परमाणु-पुद्गलों की सैज अवस्था के काल का) अन्तर
८१०	२०८	१	परमाणु-पुद्गलों की	(परमाणु-पुद्गलों की)
,,	२०८	३	गौतम! अन्तर	गौतम! ((अनेक) परमाणु-पुद्गलों की निरेज अवस्था के काल का) अन्तर
८११	२११	१०,११	असंख्येय-गुणा हैं। इसी प्रकार	असंख्येय-गुणा हैं। इसी प्रकार
,,	,,	११	वक्तव्यता। केवल इतना	वक्तव्यता, इतना
,,	,,	१३,१४	शेष पूर्ववत्। द्रव्य की प्रदेश की अपेक्षा—	शेष पूर्ववत्। द्रव्य और प्रदेश की अपेक्षा
,,	,,	१९	गुणा है।	गुणा हैं।
,,	२१२	१	है? या निरेज है?	है? निरेज है?
८११	२१२	२	गौतम! देशतः	गौतम! ((एक परमाणु-पुद्गल) देशतः
,,	२१३	१	स्कन्ध.....? पृच्छा।	स्कन्ध—पृच्छा।
,,	,,	२	गौतम! स्यात्	गौतम! ((एक) द्विप्रदेशिक स्कन्ध) स्यात्
८११	२१४	१	हैं? या निरेज हैं?	हैं? निरेज हैं?

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८११	२१४	२	गौतम! देशतः	गौतम! ((अनेक) परमाणु-पुद्गल देशतः
,,	२१५	१	स्कन्ध......? पृच्छा।	स्कन्ध–पृच्छा।
,,	,,	२	गौतम! देशतः	गौतम! ((अनेक) द्विप्रदेशिक स्कन्ध) देशतः
८१२	२१६	३	गौतम! काल	गौतम! ((एक) परमाणु-पुद्गल काल
,,	,,	,,	सप्रकम्प जघन्यतः	सैज) जघन्यतः
८१२	२१७, २२२	१	परमाणु-पुद्गल	(परमाणु-पुद्गल)
८१२	२१७	२	गौतम! जघन्यतः	गौतम! ((एक) परमाणु-पुद्गल काल की अपेक्षा निरेज) जघन्यतः
,,	,,	,,	काल।	काल (तक रहता है)।
,,	२१८	३	गौतम! जघन्यतः	गौतम! ((एक) द्विप्रदेशिक स्कन्ध काल की अपेक्षा सर्वतः सैज) जघन्यतः
८१२	२१८	३	का-असंख्यातवां-भाग।	-असंख्यातवें-भाग (तक रहता है)।
८१२	२१९	३	गौतम! जघन्यतः	गौतम! ((एक) द्विप्रदेशिक स्कन्ध काल की अपेक्षा निरेज) जघन्यतः
८१२	२१९	३	का-असंख्यातवां-भाग।	के-असंख्यातवें (तक भाग रहता है)।
,,	२२०	३	गौतम! जघन्यतः	गौतम! ((एक) द्विप्रदेशिक स्कन्ध काल की अपेक्षा निरेज) जघन्यतः
,,	,,	,,	काल तक रहता है।	काल (तक रहता है)।
,,	२२१	३	गौतम! सर्वदा (सर्वकाल)।	गौतम! ((अनेक) परमाणु-पुद्गल काल की अपेक्षा सर्वतः सैज) सर्वदा (सर्वकाल) (रहते हैं)।
८१२	२२२	२	गौतम! सर्वदा।	गौतम! ((अनेक) परमाणु-पुद्गल काल की अपेक्षा निरेज) सर्वदा (रहते हैं)।
,,	२२३	३	गौतम! सर्वदा।	गौतम! ((अनेक) द्विप्रदेशिक स्कन्ध काल की अपेक्षा देशतः सैज) सर्वदा (रहते हैं)।
,,	२२४	३	गौतम! सर्वदा।	गौतम! ((अनेक) द्विप्रदेशिक स्कन्ध काल की अपेक्षा सर्वतः सैज) सर्वदा (रहते हैं)।
,,	२२५	२	गौतम! सर्वदा। इसी	गौतम! ((अनेक) द्विप्रदेशिक स्कन्ध काल की अपेक्षा निरेज) सर्वदा (रहते हैं)। इसी
८१३	२२६	३	गौतम! स्वस्थानान्तर	गौतम! ((एक परमाणु-पुद्गल की सर्वतः सैज अवस्था में काल का अन्तर) स्वस्थानान्तर
,,	,,	३,४	काल।	काल (होता है)।
८१३	२२७	१	परमाणु-पुद्गल की	(परमाणु-पुद्गल की)
,,	२२७	३	गौतम! स्वस्थानान्तर	गौतम! ((एक) परमाणु-पुद्गल की निरेज अवस्था में काल का अन्तर) स्वस्थानान्तर

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८१३	२२७	४	भाग।	-भाग (होता है)।
,,	,,	,,	काल।	काल (होता है)।
८१३	२२८	१	स्कन्ध का	स्कन्ध की
,,	,,	३	गौतम! स्वस्थानान्तर	((एक) द्विप्रदेशिक स्कन्ध की देशतः सैज अवस्था में काल का अन्तर) स्वस्थानान्तर
,,	,,	४	अनन्त काल।	अनन्त काल (होता है)।
८१३	२२९	१	द्वि-प्रदेशी स्कन्ध की	(द्विप्रदेशिक स्कन्ध की)
,,	२२९	३	देशतः	((एक) द्विप्रदेशिक स्कन्ध की सर्वतः सैज अवस्था में काल का अंतर) देशतः
,,	२३०	१	(भंते!) द्वि-प्रदेशी स्कन्ध की	(भंते!) ((एक द्विप्रदेशिक स्कन्ध की
८१३	२३०	३	स्वस्थानान्तर	((एक) द्विप्रदेशिक स्कन्ध की निरेज अवस्था में काल का अन्तर) स्वस्थानान्तर
,,	२३०	४	भाग।	-भाग (होता है)।
८१३	२३०	४	अनन्त-काल। इसी प्रकार	अनन्तकाल (होता है)। इस प्रकार
,,	२३१	३	अन्तर	((अनेक) परमाणु-पुद्गलों की सर्वतः सैज अवस्था में काल का) अन्तर
८१३	२३२	१	परमाणु-पुद्गलों की	(परमाणु-पुद्गलों की)
८१३	२३२	३	अन्तर	((अनेक) परमाणु-पुद्गलों की निरेज अवस्था में काल का) अन्तर
,,	२३३	१	भंते!	(भंते!)
,,	२३३	३	अन्तर	((अनेक) द्विप्रदेशिक स्कन्धों की देशतः सैज अवस्था में काल का) अन्तर
८१३	२३४, २३५	१	द्वि-प्रदेशी स्कन्धों की	(द्विप्रदेशिक स्कन्धों की)
,,	२३४	३	अन्तर	((अनेक) द्विप्रदेशिक स्कन्धों की सर्वतः सैज अवस्था में काल का) अन्तर
८१३	२३५	३	अन्तर	((अनेक) द्विप्रदेशिक स्कन्धों की निरेज अवस्था में काल का) अन्तर
८१४	२३६-२३८	१	कौन-किनसे	कौन किनसे
,,	२३९	१	भंते! देशतः	भन्ते! इन देशतः
,,	,,	३	कौन-किनसे	कौन किनसे
,,	,,	१३,१४	असंख्येय-गुणा हैं। प्रदेश की अपेक्षा	असंख्येय-गुणा हैं। प्रदेश की अपेक्षा
,,	,,	१६,१७	पूर्ववत्। द्रव्य और प्रदेश की अपेक्षा	पूर्ववत्। द्रव्य और प्रदेश की अपेक्षा
८१५	२४१	१,२	प्रज्ञप्त हैं? अधर्मास्तिकाय.........प्रज्ञप्त है।	प्रज्ञप्त हैं? इसी प्रकार (अधर्मास्ति-काय......प्रज्ञप्त है।)

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८१५	२४२	१,२	प्रज्ञप्त हैं? आकाशास्तिकाय.........प्रज्ञप्त है।	प्रज्ञप्त हैं? इसी प्रकार (आकाशास्ति-काय......प्रज्ञप्त है।)
८१५	२४४	३	गौतम! जघन्यतः	गौतम! (जीवास्तिकाय के ये आठ मध्य-प्रदेश) जघन्यतः
,,	२४७	३	गौतम! संख्येय	गौतम! ((एक) आवलिका) संख्येय
८१६	२४८	१	होता है?	होता है०?
,,	२४८	२	पूर्ववत्	((एक) आनापान) पूर्ववत्
,,	२४९	१	होता है?	होता है०?
८१६	२४९	२	पूर्ववत् (भ. २५/२४७) की भांति	((एक) स्तोक) पूर्ववत् (भ. २५/२४७ की भांति)।
८१६	२५०	१	है?........पृच्छा।	है–पृच्छा।
,,	२५०	२	गौतम! संख्येय	गौतम! ((एक) पुद्गल-परिवर्त) संख्येय
,,	२५१	१	है.......? पृच्छा।	है–पृच्छा।
८१६	२५१	२	गौतम! संख्येय	गौतम! ((अनेक आवलिकाएं) संख्येय
८१६	२५२	१	होते हैं?	होते हैं०?
,,	२५२	२	पूर्ववत्	((अनेक) आनापान) पूर्ववत्
,,	२५३	१	होते हैं....?	होते हैं०?
,,	२५३	२	पूर्ववत् वक्तव्यता है (भ. २५/२५१)।	पूर्ववत् (भ. २५/२५१ की भांति)।
,,	२५४	१	होते हैं?.....पृच्छा।	होते हैं०?–पृच्छा।
,,	२५४	२	गौतम! संख्येय	गौतम! ((अनेक) पुद्गल-परिवर्त) संख्येय
,,	२५५	१	है.....? पृच्छा।	है–पृच्छा।
,,	२५५	२	गौतम! संख्येय	गौतम! ((एक) आनापान) संख्येय
८१७	२५५	३	स्तोक भी।	स्तोक भी (वक्तव्य है)।
८१७	२५६	१	है.......? पृच्छा।	है–पृच्छा।
,,	,,	३	इसी प्रकार अवसर्पिणी	इस प्रकार (एक) अवसर्पिणी भी
,,	,,	३	इसी प्रकार सागरोपम की वक्तव्य है।	इस प्रकार (एक) सागरोपम भी (वक्तव्य है)।
८१७	२५६	२	गौतम! संख्येय	गौतम! ((एक) पल्योपम) संख्येय
,,	,,	४	और उत्सर्पिणी	और (एक) उत्सर्पिणी
,,	२५७-२६०	१	.....? पृच्छा	–पृच्छा।
,,	२५७	२	गौतम! संख्येय	गौतम! ((एक) पुद्गल-परिवर्त) संख्येय
,,	२५८	२	गौतम! स्यात्	गौतम! ((अनेक) आनापान) स्यात्
,,	२५९	२	गौतम! संख्येय	गौतम! ((अनेक पल्योपम) संख्येय
,,	२६०	२	गौतम! संख्येय	गौतम! ((अनेक) पुद्गल-परिवर्त) संख्येय
,,	२६१	१	वाले होते हैं?	वाला होता है? (अथवा)
,,	,,	२	वाले होते हैं?....जैसे	वाला होता है? जैसी
,,	,,	,,	वैसे	वैसी

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८१७	२६२	१	?.....पृच्छा।	—पृच्छा।
,,	२६२	२	गौतम! संख्येय	गौतम! ((एक) सागरोपम) संख्येय
,,	२६३	१	परिवर्त.......। पृच्छा।	परिवर्त–पृच्छा।
,,	,,	२	गौतम! संख्येय	गौतम! ((एक) पुद्गल-परिवर्त) संख्येय
,,	२६४, २६९, २७१, २७२	१	हैं ?......पृच्छा।	हैं—पृच्छा।
,,	२६४	२	गौतम! स्यात्	गौतम! ((अनेक) सागरोपम) स्यात्
८१८	२६५	१	.....? पृच्छा।	—पृच्छा।
,,	,,	२	गौतम! संख्येय	गौतम! ((अनेक) पुद्गल-परिवर्त) संख्येय
,,	२६६	१	होती है ? जैसी	होती है० ? जैसी
,,	२६७	२	है........? पृच्छा	है—पृच्छा।
,,	,,	३	गौतम! संख्येय	गौतम! ((एक) पुद्गल-परिवर्त (परावर्त)) संख्येय
,,	,,	३	उत्सर्पिणी	उत्सर्पिणियाँ
८१८	२६८	२	हैं......? पृच्छा।	हैं—पृच्छा।
,,	,,	३	गौतम! संख्येय	गौतम! ((अनेक) पुद्गल-परावर्त) संख्येय
,,	२६९	२	गौतम! संख्येय	गौतम! (अतीत-काल में) संख्येय
,,	,,	३	काल-भी।	काल भी (वक्तव्य है)।
,,	२७०	३	गौतम! संख्येय	गौतम! (अनागत-काल में) संख्येय
,,	२७१	२	गौतम! संख्येय	गौतम! (सर्व-काल में) संख्येय
८१८	२७२	१	के	में
८१८	२७२	२	गौतम! संख्येय	गौतम! (सर्व-काल में) संख्येय
८१९	२७३	शीर्षक	×	निगोद-पद
८१९	२७४	३	निगोद की	निगोद
,,	२७५	२	औदयिक यावत्	औदयिक (भ. १७/१६) यावत्
,,	२७६	३	(सू. १७) की भांति भाव की वक्तव्यता,	(सू. १७ में) जैसे भाव के विषय में (उक्त है) वैसे ही यहां भी
,,	२७६	४	पूर्ववत्। यावत्	पूर्ववत् यावत्
,,	सं.गा.	३	१५. निकास। १६. योग १७.	१५. निकर्ष।।१।। १६. योग १७.
,,	,,	५	आहार। २७. भव २८.	आहार।।२।। २७. भव २८.
८१९	सं.गा.	६	३६ अल्पबहुत्व।	३६. अल्पबहुत्व।।३।।
,,	२७८	१	राजगृह नगर में यावत्	राजगृह (भ. १/१०) यावत्
८१९	२७८	१	बोले—(प. १/१०) भन्ते!	बोले—भन्ते!
,,	२७९	२	गौतम! पुलाक पांच	गौतम (पुलाक) पांच
८१९	२७९	२	चारित्र-पुलाक	चरित्र-पुलाक
,,	२८०	२	बकुश	(बकुश)

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८२०	२८१	२	गौतम! कुशील	गौतम! (कुशील)
८२०	२८२	२	प्रतिषेवणा-कुशील	(प्रतिषेवणा-कुशील)
,,	२८२	३	चारित्र-प्रतिषेवणा-कुशील	चरित्र-प्रतिषेवणा-कुशील
,,	२८३	२	गौतम! कषाय-कुशील	गौतम! (कषाय-कुशील)
८२०	२८४	२	गौतम! पांच	गौतम! (निर्ग्रन्थ) पांच
८२०	२८५	२	गौतम! स्नातक	गौतम! (स्नातक)
,,	२८५	३	चारित्र वाले; अकर्मांशु	चरित्र वाले अकर्मांश
,,	,,	,,	दर्शन-घर-	दर्शन-धर-
,,	२८६	२	गौतम! सवेदक	गौतम! (पुलाक-निर्ग्रन्थ) सवेदक
८२०	२८७	१	यदि सवेदक	(पुलाक-निर्ग्रन्थ) यदि सवेदक
८२०	२८७	२	नपुंसक वेदक	नपुंसक-वेदक
८२०	२८७	३	गौतम! स्त्री-	गौतम! (पुलाक-निर्ग्रन्थ) स्त्री-
८२०	२८७	३	वेदक भी होता	वेदक होता
,,	,,	२	गौतम! सवेदक	गौतम! (बकुश-निर्ग्रन्थ) सवेदक
८२०	२८९	१	यदि सवेदक	(बकुश-निर्ग्रन्थ) यदि सवेदक
,,	,,	३	गौतम! स्त्री-	गौतम! (बकुश-निर्ग्रन्थ) स्त्री-
,,	२९०	१	है ?.....पृच्छा।	है—पृच्छा।
,,	२९०	२	गौतम! सवेदक	गौतम! (कषाय-कुशील) सवेदक
,,	२९१	१	यदि अवेदक	(कषाय-कुशील) यदि अवेदक
८२१	२९१	२	गौतम! उपशान्त-	गौतम! (कषाय-कुशील) उपशान्त-
८२१	२९२	१	सवेदक	(कषाय-कुशील) यदि सवेदक
८२१	२९२-२९४, २९७	१	है ?.....पृच्छा।	है—पृच्छा।
८२१	२९२	२	गौतम! बकुश-	गौतम! (कषाय-कुशील में) बकुश-
,,	,,	,,	की भांति	(भ. २५/२८९) की भांति
,,	,,	,,	है (भ. २५/२८९)।	है।
८२१	२९३	२	गौतम! सवेदक	गौतम! (निर्ग्रन्थ-निर्ग्रन्थ) सवेदक
,,	२९४	१	यदि होता	यदि (निर्ग्रन्थ-निर्ग्रन्थ) अवेदक होता
,,	,,	२	गौतम! उपशान्त-	गौतम! (निर्ग्रन्थ-निर्ग्रन्थ) उपशान्त-
,,	२९५	१	है ? जैसे निर्ग्रन्थ की वैसे स्नातक की भी	है०? निर्ग्रन्थ की भांति स्नातक भी
,,	२९६	२	गौतम! सराग	गौतम! (पुलाक) सराग
,,	२९७	२	गौतम! सराग	गौतम! (निर्ग्रन्थ) सराग
,,	२९८	१	यदि	(निर्ग्रन्थ) यदि
,,	२९८	३	गौतम! उपशान्त-	गौतम! (निर्ग्रन्थ) उपशान्त-
,,	,,	४	है—स्नातक	है–(स्नातक)
,,	२९९	२	गौतम! स्थित-	गौतम! (पुलाक-निर्ग्रन्थ) स्थित-
,,	२९९	२	भी होता है अथवा अस्थित कल्प भी होता	होता है अथवा अस्थित कल्प होता
,,	,,	३	गौतम! जिन-कल्प	गौतम! (पुलाक-निर्ग्रन्थ) जिन-कल्प
,,	३०१	१	बकुश.....? पृच्छा	बकुश—पृच्छा
८२१	३०१	२	गौतम! जिन-कल्प	गौतम! (बकुश) जिन-कल्प

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८२१	३०२	१	कषाय-कुशील.....? पृच्छा	कषाय-कुशील—पृच्छा।
८२१	३०२	२	गौतम! जिन-कल्प	गौतम! (कषाय-कुशील) जिन-कल्प
८२२	३०३	१	निर्ग्रन्थ......? पृच्छा	निर्ग्रन्थ-पृच्छा।
८२२	३०३	२	गौतम! जिन-कल्प	गौतम! (निर्ग्रन्थ) जिन-कल्प
८२२	३०४	४	गौतम! सामायिक-संयम	गौतम! (पुलाक-निर्ग्रन्थ के) सामायिक-संयम
,,	३०५	१	........? पृच्छा	—पृच्छा
,,	,,	२	यावत् सूक्ष्मसंपराय-संयम भी होता है (भ. २५/३०४)	अथवा यावत् सूक्ष्मसम्पराय-संयम होता है,
,,	३०६	१	निर्ग्रन्थ......? पृच्छा	निर्ग्रन्थ—पृच्छा
८२२	३०६	२	गौतम! सामायिक	गौतम! (निर्ग्रन्थ) सामायिक
,,	३०७	३	गौतम! प्रतिषेवक	गौतम! (पुलाक) प्रतिषेवक
,,	३०८	१	यदि पुलाक प्रतिषेवक	यदि (पुलाक) प्रतिषेवक
,,	३०८	३	गौतम! मूल-गुण	गौतम! (पुलाक) मूल-गुण
,,	३०८	३	प्रतिषेवक भी होता है।	प्रतिषेवक होता है।
,,	३०९	१	बकुश.....? पृच्छा (भ. २५/३०६)	बकुश-पृच्छा (भ. २५/३०७)।
,,	,,	२	गौतम! बकुश प्रतिषेवक	गौतम! (बकुश) प्रतिषेवक
,,	३१०	१	यदि	(बकुश) यदि
८२३	३११	१	कषाय-कुशील.....?	कषाय-कुशील—
८२३	३११	२	गौतम! प्रतिषेवक	गौतम! (कषाय-कुशील) प्रतिषेवक
,,	३१२	१	ज्ञानों में होता है ?	ज्ञानों से सम्पन्न होता है ?
,,	,,	२	दो में होता है	(पुलाक) दो (ज्ञानों) से सम्पन्न होता है
,,	,,	,,	तीन में होता है। यदि दो में होता	तीन (ज्ञानों) से संपन्न होता है। (पुलाक) यदि दो से सम्पन्न होता
८२३	३१२	३	में होता है। यदि तीन ज्ञान में होता	से सम्पन्न होता है। (पुलाक) यदि तीन ज्ञानों से सम्पन्न होता
,,	,,	४	अवधि-ज्ञान में होता है।	अवधि-ज्ञान से सम्पन्न होता है।
,,	३१३	१	.....? पृच्छा	—पृच्छा
,,	३१३	२	दो ज्ञान में होता है अथवा तीन ज्ञान में	(कषाय-कुशील) दो ज्ञानों से सम्पन्न होता है अथवा तीन ज्ञानों से सम्पन्न
,,	,,	२	ज्ञान में होता है।	ज्ञानों से सम्पन्न होता है।
,,	,,	३	दो ज्ञान में होता है	दो ज्ञानों से सम्पन्न होता है
,,	,,	,,	श्रुत-ज्ञान में होता है	श्रुत-ज्ञान से सम्पन्न होता है
,,	,,	३-४	तीन ज्ञान में होता है	तीन ज्ञानों से सम्पन्न होता है
,,	,,	४	अवधि-ज्ञान में होता है	अवधि-ज्ञान से सम्पन्न होता है
,,	,,	४,५	यदि तीन ज्ञान में होता है	(कषाय-कुशील) यदि तीन ज्ञानों से सम्पन्न होता है
,,	,,	५	ज्ञान में होता है	ज्ञानों से सम्पन्न होता है
,,	,,	,,	मनः-पर्यव-ज्ञान में होता है	मनः-पर्यव ज्ञान से सम्पन्न होता है।
,,	,,	६	ज्ञान में	ज्ञानों से सम्पन्न होता है।
,,	,,	,,	-ज्ञान में	-ज्ञान से सम्पन्न होता है।

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८२३	३१४, ३१६-३१८	१	.....? पृच्छा	–पृच्छा
,,	,,	२	स्नातक एक केवल-ज्ञान में होता है	(स्नातक) एक केवल-ज्ञान से सम्पन्न होता है।
८२३	३१६	२	गौतम! जघन्यतः	गौतम! (बकुश) जघन्यतः
८२३	३१७	२	गौतम! जघन्यतः	गौतम! (कषाय कुशील) जघन्यतः
८२३	३१८	२	गौतम! स्नातक	गौतम! (स्नातक)
८२३	३१९	२	गौतम! तीर्थ	गौतम! (पुलाक) तीर्थ
८२४	३२०, ३२४, ३२५, ३२७	१	......? पृच्छा	–पृच्छा
८२४	३२०	२	गौतम! तीर्थ	गौतम! (कषाय कुशील) तीर्थ
८२४	३२१	१	यदि	(कषाय कुशील) यदि
,,	३२२	२	गौतम! द्रव्यलिंग	गौतम! (पुलाक) द्रव्यलिंग
,,	३२३	२	गौतम! औदारिक	गौतम! (पुलाक) औदारिक
,,	३२४	१	......? पृच्छा	–पृच्छा
८२४	३२४	२	गौतम! तीन	गौतम! (बकुश) तीन
,,	,,	,,	यदि तीन	यदि (वह) तीन
८२४	३२४	३	सम्पन्न होते हैं।	संपन्न होता है।
,,	,,	४	तेजस्	तेजस
८२४	३२५	२	गौतम! तीन	गौतम! (कषाय-कुशील) तीन
,,	३२६	शीर्षक	×	क्षेत्र-पद
,,	३२६	२	गौतम! जन्म	गौतम! (पुलाक) जन्म
,,	,,	२	गौतम! जन्म	गौतम! (बकुश) जन्म
८२५	,,	४	में भी उत्पन्न	में उत्पन्न
,,	३२८	२,४	अवसर्पिणी-नो-उत्सर्पिण्णी	अवसर्पिणी-नोउत्सर्पिणी
८२५	३२८	३	गौतम! अवसर्पिणी	गौतम! (पुलाक) अवसर्पिणी
,,	३२९	१	यदि	(पुलाक) यदि
,,	३२९	२	दुःषम-सुषमा	दुष्षम-सुषमा
,,	,,	४	गौतम! जन्म	गौतम! (पुलाक) जन्म
,,	३३०	१	यदि	(पुलाक) यदि
,,	,,	४	गौतम! यदि	गौतम! (पुलाक) यदि
,,	३३१	१	यदि नो-अवसर्पिणी-नो-उत्सर्पिणी	(पुलाक) यदि नोअवसर्पिणी-नोउत्सर्पिणी
,,	३३१	४	गौतम! जन्म	गौतम! (पुलाक) जन्म
,,	३३२	१	.....? पृच्छा	–पृच्छा
,,	३३२	२	गौतम! अवसर्पिणी	गौतम! (बकुश) अवसर्पिणी
,,	,,	२,३	नो--अवसर्पिणी-नो-उत्सर्पिणी	नोअवसर्पिणी-नोउत्सर्पिणी
८२६	३३३	१	यदि	(बकुश) यदि
८२६	३३३-३३५	१	है ?.....पृच्छा	है–पृच्छा।

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८२६	३३३	३	गौतम! जन्म	गौतम! (बकुश) जन्म
८२६	३३४	१	यदि	(बकुश) यदि
८२६	३३४	३	गौतम! जन्म	गौतम! (बकुश) जन्म
८२६	३३४	३-४	पुलाक की भांति वक्तव्यता (भ. २५/३३०) की	पुलाक (भ. २५/३३०) की भांति (वक्तव्य है)।
८२६	३३४	५	पुलाक की	पुलाक (भ. २५/३३०)
८२६	३२४	६	होता (भ. २५/३३०)।	होता
,,	३३५	१	यदि नो-अवसर्पिणी-नो-उत्सर्पिणी	(बकुश) यदि नोअवसर्पिणी-नोउत्सर्पिणी
८२६	३३५	२	गौतम! जन्म	गौतम! (बकुश) जन्म
८२६	३३५	३	-निर्ग्रन्थ की	-निर्ग्रन्थ (भ. २५/३३१)
८२६	३३५	३-४	है (भ. २५/३३१)।	है।
,,	,,	४	नो-अवसर्पिणी-नो-उत्सर्पिणी	नोअवसर्पिणी-नोउत्सर्पिणी
८२६	३३५	६	वक्तव्यता। केवल	(वक्तव्य है),
८२६	३३६	२	गौतम! देव	गौतम! (पुलाक) देव
८२६	३३७	१	देव-गति	(पुलाक) देव-गति
,,	३३७	१	होता है तो	होता हुआ तो
८२६	३३७	४	गौतम! भवनपति	गौतम! (पुलाक) भवनपति
८२७	३३८	२	गौतम! सिद्धि	गौतम! (स्नातक) सिद्धि
८२७	३३९	१	होता है तो क्या वह इन्द्र	होता हुआ क्या इन्द्र
८२७	३३९	२,५	तावत्रिंशक-देव	तावत्त्रिंशक-देव
८२७	३३९	४	गौतम! अविराधना	गौतम! (पुलाक) अविराधना
८२७	३४०, ३४१, ३४३-३४५	१	.....? पृच्छा	पृच्छा
८२७	३४०	२	गौतम! अविराधना	गौतम! (कषाय-कुशील) अविराधना
८२७	३४१	२	गौतम! अविराधना	गौतम! (निर्ग्रन्थ) अविराधना
८२७	३४१	२	नहीं होता यावत्	नहीं होता (भ. २५/३३९) यावत्
,,	,,	३	नहीं होता (भ. २५/३३९)।	नहीं होता।
८२७	३४२	२	गौतम! जघन्यतः	गौतम! (देवलोक में उपपद्यमान पुलाक की स्थिति) जघन्यतः
,,	३४२	२	सागरोपम की।	सागरोपम होती है।
८२७	३४३	२	गौतम! जघन्यतः	गौतम! (बकुश) जघन्यतः
८२७	३४४	२	गौतम! जघन्यतः	गौतम! (कषाय-कुशील) जघन्यतः
,,	३४५	२	गौतम! अजघन्य	गौतम! (निर्ग्रन्थ) अजघन्य
,,	३४६	२	गौतम! असंख्येय	गौतम! (पुलाक के) असंख्येय
,,	३४७	२	गौतम! अजघन्य	गौतम! (निर्ग्रन्थ के) अजघन्य
८२८	३४९	२	गौतम! अनन्त	गौतम! (पुलाक के) अनन्त
८२८	३५०	१	के संयोजन	के सन्निकर्ष अर्थात् संयोजन
८२८	३५०	३	गौतम! स्यात्	गौतम! (एक पुलाक भिक्षु सजातीय संयम-स्थानों के सन्निकर्ष अर्थात् संयोजन की अपेक्षा दूसरे पुलाक भिक्षु के चरित्र-पर्यवों से) स्यात्

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८२८	३५१	२	चारित्र-पर्यवों की दृष्टि से	चरित्र-पर्यवों से
८२८	३५१	३	गौतम! हीन	गौतम! (एक पुलाक विजातीय स्थान वाले अन्य बकुश के सन्निकर्ष अर्थात् संयोजन से चरित्र-पर्यवों से) हीन
८२८	३५१	४	की वक्तव्यता	की भी (वक्तव्यता)
८२८	३५२	१	अपेक्षा पुलाक	अपेक्षा दूसरे पुलाक
८२८	३५२	३	गौतम! हीन	गौतम! (एक बकुश भिक्षु विजातीय संयम-स्थानों के संयोजन की अपेक्षा दूसरे पुलाक भिक्षु के चरित्र-पर्यवों से) हीन
८२८	३५३	१	बकुश के	बकुश भिक्षु के
८२८	,,	२	चारित्र-पर्यवों से पृच्छा क्या	चरित्र-पर्यवों से पृच्छा (क्या
८२८	३५३	३	गौतम! स्यात्	गौतम! (एक बकुश भिक्षु सजातीय संयम-स्थानों के संयोजन की अपेक्षा दूसरे बकुश भिक्षु के चरित्र-पर्यवों से) स्यात्
,,	,,	५	है (भ. २५/३५०)।	है (भ. २५/३५०)।
,,	३५४	२	चारित्र-पर्यवों से क्या हीन है?	चरित्र-पर्यवों से क्या हीन है०?
८२९	३५४	३	गौतम! षट्स्थान	गौतम! (एक बकुश भिक्षु विजातीय संयम-स्थानों के संयोजन की अपेक्षा प्रतिषेवणा कुशील के चरित्र-पर्यवों से) षट्स्थान
८२९	३५५	१	स्थानों संयोजना	स्थानों के संयोजन
,,	,,	२	चारित्र	चरित्र
,,	,,	२	पृच्छा—क्या हीन है? तुल्य है? अभ्यधिक है?	पृच्छा (क्या हीन है? तुल्य है? अभ्यधिक है?)
८२९	३५५	३	गौतम! हीन	गौतम! (एक बकुश भिक्षु विजातीय संयम-स्थानों के संयोजन की अपेक्षा निर्ग्रन्थ के चरित्र-पर्यवों से) हीन
,,	,,	७	में वही	में वही
,,	,,	८	में है वही बतलानी चाहिए,	में बतलाई गई थी (भ. २५/३५१-३५२)
,,	३५६-३५९	२	चारित्र-पर्यवों से.....?	चरित्र-पर्यवों से--
८२९	३५६	३	गौतम! हीन	गौतम! (एक निर्ग्रन्थ विजातीय संयम-स्थानों के संयोजन की अपेक्षा पुलाक-भिक्षु के चरित्र-पर्यवों से) हीन
८२९	३५७	३	गौतम! हीन	गौतम! (एक निर्ग्रन्थ सजातीय संयम-स्थानों के संयोजन की अपेक्षा पुलाक भिक्षु के चरित्र-पर्यवों से) हीन
८२९	३५८	३	गौतम! हीन	गौतम! (एक निर्ग्रन्थ विजातीय संयम-स्थानों के संयोजन की अपेक्षा स्नातक के सन्निकर्ष से) हीन

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८२९	३५९	३	गौतम! हीन	गौतम! (एक स्नातक विजातीय संयम-स्थानों के संयोजन की अपेक्षा पुलाक भिक्षु के चरित्र-पर्यवों से) हीन
८२९	३६०	१	भन्ते! स्नातक	भन्ते! एक स्नातक
,,	,,	,,	चारित्र-पर्यवों	चरित्र-पर्यवों
,,	,,	२	से.....? पृच्छा	से-पृच्छा
८२९	३६०	३	गौतम! हीन	गौतम! (एक स्नातक विजातीय संयम-स्थानों के संयोजन की अपेक्षा निर्ग्रन्थ के चरित्र-पर्यवों से) हीन
,,	३६१	१	भन्ते! स्नातक	भन्ते! एक स्नातक
,,	,,	१,२	चारित्र-पर्यवों से.....? पृच्छा	के चरित्र-पर्यवों से-पृच्छा
८२९	३६१	३	गौतम! हीन	गौतम! (एक स्नातक सजातीय संयम-स्थानों की अपेक्षा दूसरे स्नातक के चरित्र-पर्यवों से) हीन
८३०	३६२	२	चारित्र-पर्यवों	चरित्र-पर्यवों
८३०	,,	४	इन (छह	इनमें (छह
,,	,,	४	चारित्र-पर्यवों में	चरित्र-पर्यवों में
८३०	३६३	२	पुलाक	(पुलाक)
८३०	३६४	१	यदि	(पुलाक) यदि
८३०	३६४	३	गौतम! मन	गौतम! (पुलाक) मन
,,	३६५	१	स्नातक.....?	स्नातक–
८३०	३६५	२	स्नातक	(स्नातक)
८३०	३६५	३	यदि	(स्नातक) यदि
,,	,,	३	होता है.......	होता है–
८३०	३६६	२	गौतम! साकारोपयोग	गौतम! (पुलाक) साकारोपयोग
८३०	३६७	२	गौतम! कषाय	गौतम! (पुलाक) कषाय
८३०	३६८	१	यदि	(पुलाक) यदि
८३०	३६८	२	गौतम चारों	गौतम! (पुलाक) चारों
,,	३६९	१	कषाय-कुशील.....?	कषाय-कुशील–
८३०	३६९	२	गौतम! कषाय	गौतम! (कषाय-कुशील) कषाय
८३१	३७०	१	यदि	(कषाय-कुशील) यदि
,,	,,	२	गौतम! चार	गौतम! (कषाय-कुशील) चार
८३१	३७१, ३७५, ३७७, ३७९	१	....? पृच्छा	–पृच्छा
८३१	३७२	१	यदि	(निर्ग्रन्थ) यदि
,,	,,	३	गौतम! उपशान्त	गौतम! (निर्ग्रन्थ) उपशान्त
८३१	३७३	२	गौतम! लेश्या	गौतम! (पुलाक) लेश्या
८३१	३७४	१	यदि	(पुलाक) यदि
८३१	३७४	२	गौतम! तीन	गौतम! (पुलाक) तीन
,,	३७५	१	कषाय-कुशील....?	कषाय-कुशील–
,,	,,	२	गौतम! लेश्या	गौतम! (कषाय-कुशील) लेश्या

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८३१	३७६	१	यदि	(कषाय-कुशील) यदि
,,	३७७	२	गौतम! लेश्या	गौतम! (निर्ग्रन्थ) लेश्या
,,	३७८	१	यदि	(निर्ग्रन्थ) यदि
८३२	३७९	२	स्नातक	(स्नातक)
८३२	३८०, ३८१	१	स्नातक	(स्नातक)
८३२	३८१	३	गौतम! वर्धमान	गौतम! (पुलाक) वर्धमान
८३२	३८२	१	निर्ग्रन्थ....?	निर्ग्रन्थ–
८३२	३८२	२	गौतम! वर्धमान	गौतम! (निर्ग्रन्थ) वर्धमान
८३२	३८३-३८५	२	गौतम! जघन्यतः	गौतम! (पुलाक) जघन्यतः
८३२	३८६, ३८७	२	गौतम! जघन्यतः	गौतम! (निर्ग्रन्थ) जघन्यतः
८३२	३८८	१	भन्ते! कितने	भन्ते! (स्नातक) कितने
,,	,,	२	गौतम! जघन्यतः	गौतम! (स्नातक) जघन्यतः
,,	३९०	२	गौतम! आयुष्य	गौतम! (पुलाक) आयुष्य
,,	३९१	१	बकुश......?	बकुश–
८३२	३९१	२	गौतम! सात	गौतम! (बकुश) सात
८३३	सर्वत्र	१	....? पृच्छा	–पृच्छा
८३३	३९२	२	गौतम! सात	गौतम! (कषाय-कुशील) सात
,,	३९३	२	गौतम! एक	गौतम! (निर्ग्रन्थ) एक
,,	३९४	२	स्नातक	(स्नातक)
८३३	३९५	२	गौतम! नियमतः	गौतम! (पुलाक) नियमतः
,,	३९६	२	गौतम! मोहनीय	गौतम! (निर्ग्रन्थ) मोहनीय
८३३	३९७	२	गौतम! वेदनीय	गौतम! (स्नातक) वेदनीय
,,	३९८	२	गौतम! आयुष्य	गौतम! (पुलाक) आयुष्य
८३३	३९९	२	गौतम! सात	गौतम! (बकुश) सात
८३४	,,	७,८	प्रतिषेवणा-कुशील की पूर्ववत्	इसी प्रकार प्रतिषेवणा-कुशील की
८३४	सर्वत्र	१	....? पृच्छा	–पृच्छा
८३४	४००	२	गौतम! निर्ग्रन्थ	गौतम! (कषाय-कुशील) निर्ग्रन्थ
,,	४०१	२	गौतम! पांच	गौतम! (निर्ग्रन्थ) पांच
,,	४०२	२	गौतम! दो	गौतम! (स्नातक) दो
८३५	४०५	२	गौतम! प्रतिषेवणा	गौतम! (वह) प्रतिषेवणा
८३५	सर्वत्र	२	....? पृच्छा	–पृच्छा
८३५	४०६	२	गौतम! कषाय	गौतम! (वह) कषाय
८३५	४०७	२	गौतम! निर्ग्रन्थत्व	गौतम! (वह) निर्ग्रन्थत्व
८३५	४०८	२	स्नातक	(स्नातक)
८३५	४०९	२	गौतम नोसंज्ञोपयुक्त	गौतम! (पुलाक) नोसंज्ञोपयुक्त
८३५	४१०	२	गौतम संज्ञोपयुक्त	गौतम! (बकुश) संज्ञोपयुक्त
८३५	४११	२	गौतम आहारक	गौतम! (पुलाक) आहारक
८३५	४१२	२	स्नातक	(स्नातक)
८३५	४१३	२	गौतम! जघन्यतः	गौतम! (पुलाक) जघन्यतः
८३५	४१४	२	गौतम! जघन्यतः	गौतम! (बकुश) जघन्यतः

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८३५	४१५	२	गौतम! एक	गौतम! (स्नातक) एक
८३६	४१६	२	गौतम! जघन्यतः	गौतम! (पुलाक के एक भव में) जघन्यतः
८३५	४१६-४२०	२	आकर्ष।	आकर्ष (प्रज्ञप्त हैं)।
८३६	सर्वत्र	१	....? पृच्छा	–पृच्छा
८३६	४१७	२	गौतम! जघन्यतः	गौतम! (बकुश के एक भव में) जघन्यतः
८३६	४१८	२	गौतम! जघन्यतः	गौतम! (निर्ग्रन्थ के एक भव में) जघन्यतः
,,	४१९	२	गौतम! एक	गौतम! (स्नातक के एक भव में) एक
८३६	४२०	२	गौतम! जघन्यतः	गौतम! (पुलाक के अनेक भवों में) जघन्यतः
८३६	४२१	२	गौतम! जघन्यतः	गौतम! (बकुश के अनेक भवों में) जघन्यतः
८३६	४२१	२	आकर्ष (दो हजार से नौ हजार तक)	(दो हजार से नौ हजार तक) आकर्ष
८३६	४२२	२	गौतम! जघन्यतः	गौतम! (निर्ग्रन्थ के अनेक भवों में) जघन्यतः
८३६	४२२	२	आकर्ष।	आकर्ष (होते हैं)।
८३६	४२३	२	गौतम! एक	गौतम! (स्नातक के अनेक भवों में) एक
८३६	४२४	२	गौतम! जघन्यतः	गौतम! ((एक) पुलाक काल की अपेक्षा) जघन्यतः
,,	,,	२	अन्तर्मुहूर्त।	अन्तर्मुहूर्त (तक होता है)।
,,	४२५	२	गौतम! जघन्यतः	गौतम! ((एक) बकुश काल की अपेक्षा) जघन्यतः
,,	४२५	२	इसी (एक) प्रकार	इसी प्रकार (एक)
८३६	४२५	२	कोटि-पूर्व।	कोटि-पूर्व (तक होता है)।
,,	४२६	२	गौतम! जघन्यतः	गौतम! ((एक) निर्ग्रन्थ काल की अपेक्षा) जघन्यतः
,,	,,	२	अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त (तक होता है)।
,,	४२७	२	गौतम! जघन्यतः	गौतम! ((एक) स्नातक काल की अपेक्षा) जघन्यतः
,,	,,	२	कोटि-पूर्व।	कोटि-पूर्व (तक होता है)।
८३६	४२८	२	गौतम! जघन्यतः	गौतम! ((अनेक) पुलाक काल की अपेक्षा) जघन्यतः
८३६	४२८	२	अन्तर्मुहूर्तः।	अन्तर्मुहूर्त (तक रहते हैं)।
८३७	सर्वत्र	१	....? पृच्छा	–पृच्छा
८३७	४२९	२	गौतम! सर्व	गौतम! ((अनेक) बकुश) सर्व
,,	४२९	३	पुलाक की भांति	पुलाकों की भांति
,,	,,	३,४	स्नातक की (अनेक) बकुश	स्नातकों की (अनेक) बकुशों
८३७	४३०	२	गौतम! जघन्यतः	गौतम! ((एक) पुलाक के पुनः पुलाक होने में) जघन्यतः
,,	.	,,	काल–काल	काल (का अन्तर होता है)–काल

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८३७	४३१	२	गौतम! अन्तर	गौतम! (स्नातक अप्रतिपाती होता है
				इसलिए) अन्तर
..	४३२	१	भन्ते!	(अनेक जीवों की अपेक्षा से काल
				का अन्तर) भंते!
..	४३२	३	गौतम! जघन्यतः	गौतम! ((अनेक) पुलाक के पुलाक
				होने में) जघन्यतः
..	..	..	काल।	काल (का अंतर होता है)।
..	४३३	४	गौतम! बकुश-निर्ग्रन्थों के	गौतम! (बकुश-निर्ग्रन्थों के)
..	४३४	३	गौतम! जघन्यतः	गौतम! ((अनेक) निर्ग्रन्थों के काल
				का अन्तर) जघन्यतः
..	..	..	छह मास।	छह मास (होता है)।
८३७	४३५	२	गौतम! तीन	गौतम! (पुलाक के) तीन
८३७	४३६	२	गौतम! पांच	गौतम! (बकुश के) पांच
८३७	४३७	२	गौतम! छह	गौतम! (कषाय-कुशील के) छह
८३८	४३८	२	गौतम! एक	गौतम! (निर्ग्रन्थ के) एक
८३८	सर्वत्र	१	....? पृच्छा	पृच्छा—
८३८	४४५	२	गौतम! एक	गौतम! (स्नातक के) एक
८३८	४४०	३	गौतम! लोक	गौतम! (पुलाक) लोक
८३८	४४१	२	गौतम! लोक	गौतम! (स्नातक) लोक
८३८	४४२	२	अवगाहन की	अवगाहन (भ. २५/४४०,४४१)
				की
८३८	४४३	२	गौतम! क्षायोपशमिक	गौतम! (पुलाक) क्षायोपशमिक
..	४४४	२	गौतम! औपशमिक	गौतम! (निर्ग्रन्थ) औपशमिक
..	४४५	२	गौतम! क्षायिक	गौतम! (स्नातक) क्षायिक
..	४४६	२	गौतम! प्रतिपद्यमान	गौतम! (पुलाक) प्रतिपद्यमान
..	..	४	पुलाक	(पुलाक)
..	४४७	२	गौतम! प्रतिपद्यमान	गौतम! (बकुश) प्रतिपद्यमान
८३९	४४७	४	अपेक्षा जघन्यतः	अपेक्षा (बकुश) जघन्यतः
८३९	सर्वत्र	१	.... पृच्छा	—पृच्छा
८३९	४४८	२	गौतम! प्रतिपद्यमान	गौतम! (कषाय-कुशील) प्रतिपद्यमान
..	..	४	अपेक्षा जघन्यतः	अपेक्षा (कषाय-कुशील) जघन्यतः
..	४४९	२	निर्ग्रन्थ	(निर्ग्रन्थ)
..	..	७	अपेक्षा से स्यात्	अपेक्षा (निर्ग्रन्थ) स्यात्
८३९	४५०	२	स्नातक	(स्नातक)
..	..	४	अपेक्षा जघन्यतः	अपेक्षा (स्नातक) जघन्यतः
८४०	४५४	२	गौतम! दो	गौतम! (सामायिक-संयत) दो
८४०	सर्वत्र	१	....? पृच्छा	—पृच्छा
८४०	४५५	२	गौतम! दो	गौतम! (छेदोपस्थापनीय-संयत) दो
..	..	२	गौतम! दो	गौतम! (परिहारविशुद्धिक-संयत) दो
..	४५७	२	गौतम! दो	गौतम! (सूक्ष्मसंपराय-संयत) दो
..	४५८	२	गौतम! दो	गौतम! (यथाख्यात-संयत) दो
..	सं.गा.	१	अनुत्तर चातुर्याम	अनुत्तर चतुर्याम
८४०	सं. गा.	२	सामायिक-संयत है।	सामायिक-संयत है ॥१॥

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८४०	सं. गा.	४	संयत है।	संयत है ॥२॥
..	..	६	संयत है।	संयत है ॥३॥
..	..	८	न्यून है।	न्यून है ॥४॥
..	..	१०	संयत है।	संयत है ॥५॥
..	४५९	२	गौतम! सवेदक	गौतम! (सामायिक-संयत) सवेदक
८४१	४६०	२	गौतम! सराग	गौतम! (सामायिक-संयत) सराग
८४१	४६१	२	गौतम! स्थित-कल्प	गौतम! (सामायिक-संयत) स्थित-
				कल्प
८४१	सर्वत्र	१	....? पृच्छा	—पृच्छा
..	४६२	२	गौतम! स्थित-कल्प	गौतम! (छेदोपस्थापनीक-संयत)
..	४६३	३	गौतम! जिन	गौतम! (सामायिक-संयत) जिन
..	४६४	२	गौतम! पुलाक	गौतम! (सामायिक-संयत) पुलाक
..	४६५	२	गौतम! पुलाक	गौतम! (परिहारविशुद्धिक-संयत)
				पुलाक
८४१	४६६	२	गौतम! पुलाक	गौतम! (यथाख्यात-संयत) पुलाक
८४२	४६७	३	गौतम! प्रतिसेवक	गौतम! (सामायिक-संयत) प्रतिसेवक
८४२	४६७	३,४	तो क्या मूलगुण-प्रतिषेवक होता है	तो—क्या मूलगुण-प्रतिषेवक होता है?
..	सर्वत्र	१	....? पृच्छा	—पृच्छा
..	४६८	२	गौतम! प्रतिसेवक	गौतम! (परिहारविशुद्धिक) प्रतिषेवक
..	४६९	२	गौतम! दो	गौतम! (सामायिक-संयत) दो
..	४६९	४,५	हैं (भ. ८/१०५)।	हैं जैसा ज्ञानोद्देशक (भ. ८/१०५)
				में (उक्त है)।
८४२	४७०	२	सामायिक-संयत	(सामायिक-संयत)
..	४७१	२	गौतम! जघन्यतः	गौतम! (परिहारविशुद्धिक-संयत)
				जघन्यतः
..	४७२	२	गौतम! जघन्यतः	गौतम! (यथाख्यात-संयत) जघन्यतः
..	४७३	२	सामायिक-संयत	(सामायिक-संयत)
..	४७४	२	होता है? पुलाक	होता है? (सामायिक-संयत) पुलाक
८४३	४७५	३	गौतम! द्रव्यलिंग	गौतम! (परिहारविशुद्धिक-संयत)
				द्रव्यलिंग
..	४७६	२	सामायिक-संयत	(सामायिक-संयत)
..	४७७	३	गौतम! जन्म	गौतम! (सामायिक-संयत) जन्म
८४३	४७८	२	नो-अवसर्पिणि-नो-उत्सर्पिणि	नोअवसर्पिणि-नोउत्सर्पिणि
..	४७८	३	गौतम! अवसर्पिणि	गौतम! (सामायिक-संयत) अवसर्पिणि
..	४७९	१	.....? पृच्छा	—पृच्छा
..	४७९	२	गौतम! अवसर्पिणि	गौतम! (परिहारविशुद्धिक-संयत)
				अवसर्पिणि
..	..	२,३	नो-अवसर्पिणि—नो-उत्सर्पिणि	नोअवसर्पिणि-नोउत्सर्पिणि
..	..	३	यदि अवसर्पिणि	यदि (वह) अवसर्पिणि
८४४	४८०	२	गौतम! देव-	गौतम! (सामायिक-संयत) देव-
..	४८१	४	सामायिक-संयत	(सामायिक-संयत)
..	..	४	जैसे कषाय कुशील की वक्तव्यता	कषायकुशील की (भांति) (वक्तव्य
				है)

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८४४	सर्वत्र	१	......? पृच्छा	—पृच्छा
..	..	२	वक्तव्यता। यावत्	वक्तव्यता यावत्
..	४८३	१	संयत-देव रूप	संयत देव-रूप
..	..	३	.....? पृच्छा	—पृच्छा
८४४	४८३	४	गौतम! अविराधना	गौतम! (सामायिक-संयत) अविराधना
८४४	४८३	५	कषायकुशील की वक्तव्यता	इस प्रकार कषायकुशील की भांति
				(वक्तव्य है)
..	४८४	३	गौतम! जघन्यतः	गौतम! (देवलोकों में उपपद्यमान
				सामायिक-संयत की स्थिति) जघन्यतः
..	४८४	३	सागरोपम।	सागरोपम (प्रज्ञप्त है)।
..	४८५	२	गौतम! जघन्यतः	गौतम! (देवलोकों में उपपद्यमान
				परिहारविशुद्धिक की स्थिति) जघन्यतः
..	..	..	सागरोपम।	सागरोपम (प्रज्ञप्त है)।
..	४८६	२	सामायिक-संयत के	(सामायिक-संयत के)
८४४	४८७	२	सूक्ष्मसम्पराय-संयत के	(सूक्ष्मसम्पराय-संयत के)
८४५	४८८	१	....? पृच्छा	—पृच्छा
८४५	४८८	२	गौतम! अजघन्य-	गौतम! (यथाख्यात-संयत)
				अजघन्य-
..	४९०	२	गौतम! अनन्त	गौतम! (सामायिक-संयत के) अनन्त
८४५	४९१	३	गौतम! स्यात्	गौतम! ((एक) सामायिक-संयत
				सजातीय संयम-स्थानों के संयोजन
				की अपेक्षा दूसरे सामायिक-संयत के
				चरित्र-पर्यवों से) स्यात्
..	४९२	३	.....पृच्छा	—पृच्छा
८४५	४९२	४	गौतम! स्यात्	गौतम! (सामायिक-संयत विजातीय
				संयम-स्थानों के संयोजन की अपेक्षा
				छेदोपस्थापनिक-संयत के चरित्र पर्यवों
				से) स्यात्
..	..	४	षट्स्थान पतित	षट्स्थानपतित
..	४९३	२	......) पृच्छा	)—पृच्छा
८४५	४९३	३	गौतम! हीन	गौतम! (सामायिक-संयत विजातीय
				संयम-स्थानों के संयोजन की अपेक्षा
				सूक्ष्मसम्पराय संयत के चरित्र-पर्यवों
				से) हीन
..	४९४	२	......) पृच्छा	)—पृच्छा
८४६	४९४	३	गौतम! हीन	गौतम! (सूक्ष्मसम्पराय-संयत विजातीय
				संयम-स्थानों के संयोजन की अपेक्षा
				सामायिक-संयत के चरित्र-पर्यवों से)
				हीन
..	..	५	वाले, स्यात्	वाले (से) स्यात्
८४६	४९४	५	यदि हीन	यदि (वह) हीन
८४६	४९४	६	यदि अभ्यधिक	यदि (वह) अभ्यधिक
८४६	४९४	६	गुणा अभ्यधिक।	गुणा अभ्यधिक है।

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८४६	४९५	२	.....? पृच्छा।	—पृच्छा।
८४६	४९५	३	गौतम ! हीन	गौतम !(सूक्ष्मसम्पराय-संयत विजातीय संयम-स्थानों के संयोजन की अपेक्षा यथाख्यात-संयत से) हीन
८४६	४९७	२	गौतम ! सयोगी	गौतम ! (सामायिक-संयत) सयोगी
८४६	४९८	३	गौतम ! साकार	गौतम ! (सामायिक-संयत) साकार
८४७	४९९	२	गौतम ! कषाय	गौतम ! (सामायिक-संयत) कषाय
८४७	४९९	२	होता। कषाय-कुशील की	होता, कषाय-कुशील (भ. २५/ ३६९,३७०) की
,,	,,	३	(भ. २५/३६९,३७०)। इसी	। इसी
,,	,,	४	की पुलाक की भांति वक्तव्यता (भ. २५/३६७,३६८)	पुलाक (भ. २५/३६७,३६८) की भांति (वक्तव्य है)
,,	५००	१	.....? पृच्छा	—पृच्छा
,,	५००	२	गौतम ! कषाय	गौतम ! (सूक्ष्मसम्पराय-संयत) कषाय
,,	५०१	२	की निर्ग्रन्थ की	निर्ग्रन्थ (भ. २५/३७१,३७२) की
८४७	५०२	२	सामायिक संयत	(सामायिक संयत)
८४७	५०२	२	है (भ. २५/३७५, ३७६) कषाय-	है कषाय-कुशील (भ. २५/३७५,
,,	,,	३	कुशील की	३७६) की
८४७	५०२	४	की पुलाक की भांति (भ. २५/ ३७३,३७४	पुलाक (भ. २५/३७३,३७४) की भांति (वक्तव्य है)।
,,	५०२	४,५	संयत की निर्ग्रन्थ की भांति	संयत निर्ग्रन्थ
,,	,,	५	(भ. २५/३७७,३७८)।	(भ. २५/३७७,३७८) की भांति (वक्तव्य है)।
,,	,,	५-६	-संयत की स्नातक की भांति वक्तव्यता (भ.२५/३७९,३८०), केवल इतना	-संयत स्नातक (भ. २५/३७९, ३८०) की भांति (वक्तव्य है), इतना
,,	५०३	३	गौतम ! वर्धमान-	गौतम ! (सामायिक-संयत) वर्धमान-
,,	५०४	१	.......पृच्छा	—पृच्छा
,,	५०४	२	गौतम ! वर्धमान-	गौतम !(सूक्ष्मसम्पराय-संयम) वर्धमान-
,,	५०५	२	गौतम ! जघन्यतः	गौतम ! (सामायिक-संयत) जघन्यतः
,,	५०६	२	गौतम ! जघन्यतः	गौतम ! (सूक्ष्मसम्पराय-संयत) जघन्यतः
८४८	५०७	२	पूर्ववत्	इसी प्रकार
,,	५०८	२	गौतम ! जघन्यतः	गौतम ! (यथाख्यात-संयत) जघन्यतः
,,	,,	,,	अन्तर्मुहूर्त।	अन्तर्मुहूर्त (तक वर्धमान परिणाम वाला होता है)।
,,	५०९	,,	गौतम ! जघन्यतः	गौतम ! (यथाख्यात-संयत) जघन्यतः
,,	,,	,,	-कोटि-पूर्व	-कोटि-पूर्व (तक अवस्थित-परिणाम वाला होता है)।
,,	५१०	२	गौतम ! सात	गौतम ! (सामायिक-संयत) सात
,,	,,	३	बकुश की भांति वक्तव्यता (भ. २५/३९१)।	बकुश (भ. २५/३९१) की भांति (वक्तव्य है)।
८४८	सर्वत्र	१	....? पृच्छा	—पृच्छा
,,	५११	२	गौतम ! आयुष्य-	गौतम ! (सूक्ष्मसम्पराय-संयत) आयुष्य-
,,	,,	३	की स्नातक की भांति वक्तव्यता (भ. २५/३९४)	स्नातक (भ. २५/३९४) की भांति (वक्तव्य है)।
,,	५१२	२	गौतम ! नियमतः	गौतम ! (सामायिक-संयत) नियमतः
८४८	५१३	२	गौतम ! सात	गौतम ! (यथाख्यात-संयत) सात
,,	५१४	२	गौतम ! बकुश	गौतम ! (सामायिक-संयत) बकुश
८४८	५१४	२	बकुश-निर्ग्रन्थ की तरह	बकुश-निर्ग्रन्थ (भ. २५/३९९) की भांति
८४८	५१४	२-३	उदीरणा करता है...(भ. २५/३९९)	उदीरणा करता है।
,,	५१५	२	गौतम ! छह	गौतम ! (सूक्ष्मसम्पराय-संयत) छह
८४८	५१५	३	है तो	हुआ
८४९	५१५	५	है तो	हुआ
८४९	सर्वत्र	१	.....? पृच्छा	—पृच्छा
,,	५१६	२	गौतम ! पांच	गौतम ! (यथाख्यात-संयत) पांच
,,	,,	४	है तो	हुआ
,,	,,	५	निर्ग्रन्थ की	निर्ग्रन्थ (भ. २५/४०१) की
८४९	५१६	६	(भ. २५/४०१)	×
,,	५१७	३	गौतम ! वह	गौतम ! (वह)
,,	,,	,,	करता है,	करता है।
८४९	५१८	१	छेदोपस्थापनिक	छेदोपस्थापनिक-संयत
,,	,,	२	गौतम ! छेदोपस्थापनिक-	गौतम ! (छेदोपस्थापनिक-संयत) छेदोपस्थापनिक-
,,	५१९	२	गौतम ! परिहारविशुद्धिक-	गौतम ! (परिहारविशुद्धिक-संयत) परिहारविशुद्धिक-
,,	५२०	२	गौतम ! सूक्ष्मसम्पराय-	गौतम ! (सूक्ष्मसम्पराय-संयत) सूक्ष्मसम्पराय-
,,	५२१	२	गौतम ! यथाख्यात-	गौतम ! (यथाख्यात-संयत) यथाख्यात-
८४९	५२२	१	नो-संज्ञोपयुक्त	नोसंज्ञोपयुक्त
,,	५२२	२	गौतम ! संज्ञोपयुक्त	गौतम ! (सामायिक-संयत) संज्ञोपयुक्त
,,	,,	२	बकुश की भांति वक्तव्यता (भ. २५/४१०)।	बकुश (भ. २५/४१०) की भांति (वक्तव्य है)।
,,	,,	३,४	पुलाक की भांति वक्तव्यता (भ. २५/४०९)।	पुलाक (भ. २५/४०९) की भांति (वक्तव्य है)।
८५०	५२३	१-२	पुलाक की भांति वक्तव्यता (भ. २५/४११)	पुलाक (भ. २५/४११) की भांति (वक्तव्य है)।
,,	५२४	२	गौतम ! जघन्यतः	गौतम ! (सामायिक-संयत) जघन्यतः
८५०	सर्वत्र	१	.....? पृच्छा	—पृच्छा
८५०	५२५	२	गौतम ! जघन्यतः	गौतम ! (परिहारविशुद्धिक-संयत) जघन्यतः
८५०	५२६	१	आकर्ष-स्पर्श-	आकर्ष-सामायिक
८५०	५२६	३	गौतम ! जघन्यतः	गौतम ! (सामायिक-संयत के एक भव में) जघन्यतः
,,	,,	३	बकुश की भांति वक्तव्यता (भ. २५/४१७)	बकुश (भ. २५/४१७) की भांति (वक्तव्य है)।
,,	५२७	२	गौतम ! जघन्यतः	गौतम ! (छेदोपस्थापनिक-संयत के) जघन्यतः
८५०	५२७	२	पृथक्त्व-बीस	पृथक्त्व (पांच या छह)-बीस
,,	५२७-५३०	२	आकर्ष।	(आकर्ष प्रज्ञप्त हैं)।
,,	५२८	१	परिहारविशुद्धिक-संयत	परिहारविशुद्धिक-संयत के
८५०	५२८	२	गौतम ! जघन्यतः	गौतम ! (परिहारविशुद्धिक-संयत के) जघन्यतः
८५०	५२९	१	सूक्ष्मसम्पराय-संयत	(सूक्ष्मसम्पराय-संयत के)
,,	५२९	१	-संयत.....? पृच्छा	-संयत—पृच्छा
,,	,,	२	गौतम ! जघन्यतः	गौतम ! (सूक्ष्मसम्पराय-संयत के) जघन्यतः
८५०	५३०	१	यथाख्यात-संयत	(यथाख्यात-संयत के)
,,	,,	२	गौतम ! जघन्यतः	गौतम ! (यथाख्यात-संयत के) जघन्यतः
८५०	५३१	३	गौतम ! बकुश की भांति वक्तव्यता (भ. २५/४२१)	गौतम ! (सामायिक-संयत के अनेक जन्मों में) (आकर्ष-सामायिक-संयतत्व के स्पर्श) बकुश (भ. २५/४२१) की भांति (वक्तव्य है)।
,,	५३२	२	गौतम ! जघन्यतः	गौतम ! (छेदोपस्थापनिक-संयत के अनेक जन्मों में) जघन्यतः
८५१	५३२	२	कम (नौ सौ साठ) आकर्ष।	कम (नौ सौ साठ—८×१२०) आकर्ष (प्रज्ञप्त हैं)।
८५१	५३३	१	(एक)	((एक)
,,	,,	,,	अपेक्षा से	अपेक्षा)
,,	,,	२	गौतम ! जघन्यतः	गौतम ! (एक सामायिक-संयत काल की अपेक्षा) जघन्यतः
८५१	५३३	२,४	कोटि-पूर्व।	कोटि-पूर्व (तक रहता है)।
८५१	५३३	४,५	की निर्ग्रन्थ की भांति (भ. २५/४२६),	निर्ग्रन्थ (भ. २५/४२६) की भांति (वक्तव्य है),
,,	,,	५	-संयत की सामायिक संयत की भांति	-संयत सामायिक-संयत
,,	,,	६	वक्तव्यता (भ. २५/५३३)।	(भ. २५/५३३ की भांति (वक्तव्य है)।
८५१	५३४	२	गौतम ! सर्वकाल।	गौतम ! ((अनेक) सामायिक-संयत की अपेक्षा) सर्वकाल (तक रहते हैं)
,,	सर्वत्र	१	.....? पृच्छा	—पृच्छा
८५१	५३५	२	गौतम ! जघन्यतः	गौतम ! ((अनेक) छेदोपस्थापनिक-संयत) जघन्यतः

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८५१	५३५	२	सागरोपम	सागरोपम (तक रहते हैं)।
८५१	५३६	१	(अनेक) परिहारविशुद्धिक-संयत	((अनेक) परिहारविशुद्धिक-संयत)
..	..	२	गौतम! जघन्यतः	गौतम! (परिहारविशुद्धिक-संयत) जघन्यतः।
..	..	..	कोटि-पूर्व	कोटि-पूर्व (तक रहते हैं)।
८५१	५३७	२	गौतम! जघन्यतः	गौतम! (सूक्ष्मसम्पराग-संयत) जघन्यतः
..	..	२	अन्तर्मुहूर्त	अन्तर्मुहूर्त (तक रहते हैं)।
८५१	५३७	२	-संयतों की	-संयत
..	..	३	-संयतो की भांति वक्तव्यता	-संयतो (भ. २५/५३४) की भांति (वक्तव्य है)
८५१	५३८	३	पुलाक की भांति	पुलाक (भ. २५/४३०) की भांति
८५१	५३८	३	जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त......(भ. २५/४३०)	(जघन्यतः अन्तर्मुहूर्त.....)।
..	५३९	१	-संयतों.....? पृच्छा	संयतों के—पृच्छा
..	५३९	२	गौतम! कोई अन्तर नहीं होता।	गौतम! ((अनेक) सामायिक-संयतों के पुनः सामायिक-संयत होने के काल का) कोई अन्तर नहीं होता।
८५१	५४०	१	-संयत.....? पृच्छा	संयतों के—पृच्छा
८५१	५४०	२	गौतम! जघन्यतः	गौतम! ((अनेक) छेदोपस्थापनिक-संयतों के पुनः छेदोपस्थापनिक-संयत होने में काल का अन्तर) जघन्यतः
..	५४१	१	-संयत.....? पृच्छा	संयतों के—पृच्छा
..	..	२	गौतम! जघन्यतः	गौतम! (अनेक परिहारविशुद्धिक-संयतों के पुनः परिहारविशुद्धिक-संयत होने में काल का अन्तर) जघन्यतः
..	५४१	२	सागरोपम।	सागरोपम (होता है)।
..	..	३	-संयतों की निर्ग्रन्थों की भांति वक्तव्यता। (भ. २५/४३९)।	-संयत निर्ग्रन्थों (भ. २५/४३४) की भांति (वक्तव्य हैं)।
८५१	५४१	४	-संयतों की सामायिक-संयतों की की भांति वक्तव्यता (भ. २५/५३९)।	-संयत सामायिक-संयतों (भ. २५/५३९) की भांति (वक्तव्य हैं)।
..	५४२	२	गौतम! छह	गौतम! (सामायिक-संयत के) छह
..	..	..	कषाय-कुशील की भांति वक्तव्यता (भ. २५/४३७)	कषाय-कुशील (भ. २५/४३७) की भांति (वक्तव्य है)।
८५२	५४२	३	की पुलाक की	पुलाक (भ. २५/४३५) की
..	..	४	वक्तव्यता (भ. २५/४३५)।	(वक्तव्य है)।
..	..	४,५	की निर्ग्रन्थ की भांति वक्तव्यता वक्तव्यता (भ. २५/४३८)।	निर्ग्रन्थ (भ. २५/४३८) की भांति (वक्तव्य है)।
..	..	५	की स्नातक की भांति वक्तव्यता (भ. २५/४३९)	स्नातक (भ. २५/४३९) की भांति (वक्तव्य है)।
८५२	सर्वत्र	१	.....? पृच्छा	—पृच्छा।
८५२	५४३	३	गौतम! संख्यातवें	गौतम! (सामायिक-संयत लोक के) संख्यातवें

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८५२	५४३	३	पुलाक की भांति वक्तव्यता (भ. २५/४४०)।	पुलाक (भ. २५/४४०) की भांति (वक्तव्य है)।
..	..	४,५	की स्नातक की भांति वक्तव्यता (भ. २५/४४१)	स्नातक (भ. २५/४४१) की भांति (वक्तव्य है)।
..	५४४	१	है?	है०?
..	..	२	जैसे होने की वक्तव्यता (भ. २५/५४३)	जैसे होने (भ. २५/५४३) की वक्तव्यता
८५२	५४५	२	गौतम! क्षायोपशमिक-	गौतम! (सामायिक-संयत) क्षायोपशमिक-
..	५४६	२	गौतम! औपशमिक-	गौतम! (यथाख्यात-संयत) औपशमिक-
..	५४७	२,३	गौतम! प्रतिपद्यमान की अपेक्षा कषाय-कुशील की भांति निरवशेष वक्तव्यता (भ. २५/४४८)	गौतम! (सामायिक-संयत) प्रतिपद्यमान की अपेक्षा (एक समय में) कषाय-कुशील (भ. २५/४४८) की भांति निरवशेष वक्तव्य हैं।
८५२	५४८	२	गौतम! प्रतिपद्यमान की अपेक्षा स्यात्	गौतम! (छेदोपस्थापनिक-संयत) प्रतिपद्यमान की अपेक्षा (एक समय में) स्यात्
..	५४८	४	छेदोपस्थापनिक-संयत	(छेदोपस्थापनिक-संयत)
..	..	..	अपेक्षा स्यात्	अपेक्षा (एक समय में) स्यात्
..	..	७	निर्ग्रन्थ की भांति वक्तव्यता (भ. २५/४४९)।	निर्ग्रन्थ (भ. २५/४४९) की भांति (वक्तव्य हैं)।
..	५४९	१	.....? पृच्छा	—पृच्छा।
..	..	२	गौतम! प्रतिपद्यमान	गौतम! (यथाख्यात-संयत) प्रतिपद्यमान
..	..	..	अपेक्षा स्यात्	अपेक्षा (एक समय में) स्यात्
८५३	४४९	५	यथाख्यात-संयत	(यथाख्यात-संयत)
..	..	..	अपेक्षा जघन्यतः	अपेक्षा (एक समय में) जघन्यतः
..	५५०	सं.गा.१	अग्रिम सूत्रों	अग्रिम सूत्रों (भ. २५/५५१-६१९)
..	सं.गा.	२	प्रतिपादित है	प्रतिपादित है।।१।।
..	५५१	१,२	प्रज्ञप्त हैं	प्रज्ञप्त है
८५४	५५५	१	प्रज्ञप्त हैं	प्रज्ञप्त है
८५४	५५६	१	के प्रज्ञप्त हैं	का प्रज्ञप्त है
८५५	५५७	१	जैसे	जैसे—
८५५	५५८	२	के छह प्रकार प्रज्ञप्त हैं	छह प्रकार का प्रज्ञप्त है,
८५५	५५९	२	है,—जैसे इत्वरिक	है, जैसे—इत्वरिक
..	५६०	४	भक्त,	भक्त
८५६	५६८	२	प्रज्ञप्त हैं	प्रज्ञप्त है
८५६	५६८	५	तुम तुम	तुम-तुम
८५७	५७०	२	प्रज्ञप्त हैं	प्रज्ञप्त है
८५७	५७०	६	करना। जैसे	करना, जैसे
..	..	८	वाला। जैसे	वाला, जैसे
..	५७१	३	उत्कटुकासनिकः	उत्कटुकासनिक

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८५८	५७८	२	कायोग	काय-योग—
..	५८०	१	आभ्यन्तर	आभ्यन्तरिक
..	..	२	आभ्यन्तर तप के छह प्रकार	आभ्यन्तरिक तप छह प्रकार का
८५९	५८१	३	निवेदन,	निवेदन
..	५८६	७	यावत्। १२ श्रुत-ज्ञान, १३ अवधि ज्ञान, १४. मनःपर्यव-ज्ञान,	यावत् (१२. श्रुत-ज्ञान की अनत्याशातना, १३. अवधिज्ञान की अनत्याशातना, १४. मनःपर्यवज्ञान की अनत्याशातना)
८६०	५९१	१	६९१	५९१
८६१	५९८	२	का वेयावृत्त्य	का वैयावृत्य
८६२	६०५, ६०९	१	प्रकार का	प्रकार का प्रज्ञप्त है
८६२	६१२	४	करना। यह	करना। यह तप-अधिकार है, इसमें जो प्रशस्त ध्यान है उसका आसेवन और जो अप्रशस्त ध्यान है उसका वर्जन करने से तप होता है।
८६३	६१६, ६१७	२	प्रज्ञप्त हैं,	प्रज्ञप्त है,
८६३	६२०	१	राजगृह नगर यावत् इस प्रकार बोले (भ. १/१०)	राजगृह (भ. १/१०) यावत् इस प्रकार बोले
८६३	६२१	३	बलवान् युगवान	बलवान् इस प्रकार जैसे चौदहवें शतक के प्रथम उद्देशक (भ. १४/३) में (युगवान्
८६३	६२१	५	चरमेष्टक-,	चरमेष्टक,
..	..	१३	हो जाते हैं। इस प्रकार जैसे चौदहवें शतक के प्रथम उद्देशक (भ. १४/३) में यावत्	हो जाते हैं।) यावत्
८६४	६२२	१	भन्ते! जीव	भन्ते! वे (नैरयिक) जीव
..	६२४	३	गौतम! अपनी	गौतम! (वे जीव) अपनी
..	६२५	२	गौतम! आत्म-कर्म	गौतम! (वे जीव) आत्म-कर्म
..	६२६	२	वे जीव	(वे जीव)
..	६२७	१	जीवों की भांति	जीवों (भ. २५/६२०-६२६) की भांति
..	..	२	होते (भ. २५/६२०-६२६)।	होते।
८६४	६२९	२,३	......शेष पूर्ववत्। यावत् वैमानिक (भ. २५/६२०-६२७)	, शेष पूर्ववत् (भ. २५/६२०-६२७) यावत् वैमानिक
..	६३१	२,३	.....शेष पूर्ववत्। इसी प्रकार यावत् वैमानिक (भ. ६२०-६२७)	, शेष पूर्ववत्। इस प्रकार (भ. २५/६२०,६२७) यावत् वैमानिक
८६५	६३३	२	हुआ.....शेष पूर्ववत्।	हुआ, शेष पूर्ववत्
..	..	३	यावत् वैमानिक (भ. २४/६२०-६२७)	(भ. २५/६२०-६२७) यावत् वैमानिक
..	६३५	२	हुआ.....शेष पूर्ववत्। इसी प्रकार यावत् वैमानिक	हुआ, शेष पूर्ववत्। इस प्रकार

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८६५	६३५	३	(भ. २५/६२०-६२७)	(भ. २५/६२०-६२७) यावत् वैमानिक
			शतक २६	
८६६	सं.गा.	२	हैं।	हैं ॥१॥
,,	१	१	राजगृह नगर यावत् गौतम ने	राजगृह (भ. १/४-१०) यावत्
,,	,,	,,	कहा—(भ. १/१०)	कहा—
,,	,,	२	भन्ते! क्या	भन्ते! (१) क्या
,,	,,	,,	करेगा? जीवों	करेगा? (२) जीवों
,,	,,	३	करेगा? जीवों	करेगा? (३) जीवों
,,	,,	४	करेगा? जीवों	करेगा? (४) जीवों
,,	,,	६	गौतम! किसी	गौतम! (१) किसी
,,	,,	,,	करेगा। किसी	करेगा। (२) किसी
,,	,,	७	करेगा। किसी	करेगा। (३) किसी
,,	,,	८	करेगा। किसी	करेगा। (४) किसी
,,	२	४	गौतम! लेश्या-युक्त	गौतम! (लेश्या-युक्त)
८६६	२	५	चार भंग	चार-भंग
,,	३	१	था.....? पृच्छा	था—पृच्छा
,,	,,	३,४	कृष्ण-लेश्या-युक्त	(कृष्ण-लेश्या-युक्त)
,,	,,	३	करेगा।	करेगा,
,,	,,	६	है।	हैं।
,,	,,	,,	जीव की लेश्या	जीव लेश्या
,,	,,	,,	चार भंग	चार-भंग
८६७	सर्वत्र	१	था.....? पृच्छा।	था—पृच्छा।
८६७	४	२	गौतम! लेश्या-रहित-जीव ने	गौतम! (लेश्या-रहित-जीव ने)
,,	५	२	कृष्णपाक्षिक-जीव	(कृष्ण-पाक्षिक-जीव)
,,	५	६	जीव......? पृच्छा।	जीव—पृच्छा।
,,	६	२	शुक्लपाक्षिक-जीव के विषय में चार भंग	(शुक्लपाक्षिक-जीव के विषय में) चार-भंग
,,	७	१	दो भंग।	(दो) भंग,
,,	८	२	के लेश्या-रहित की भांति अंतिम भंग	का लेश्या-रहित (भ. २६/४) की भांति अंतिम भंग
,,	९	१	दो	(दो)
,,	९	२	की वक्तव्यता।	की भी वक्तव्यता।
,,	१०	२	भंग। नो-संज्ञा-उपयुक्त	भंग, नोसंज्ञा-उपयुक्त
,,	१०	२	चार भंग वक्तव्य है।	चार (भंग वक्तव्य हैं)।
,,	११	१	सवेदक जीव के	सवेदक-जीव के
८६७	११	२	अवेदक के चार भंग	अवेदकों के चार (भंग)
,,	१२	२	-कषाय-सहित और	-कषाय-सहित के भी और
८६७	१२	२	दो भंग	(दो भंग)
,,	१३	३	कषाय-रहित-जीव	(कषाय-रहित-जीव)
,,	,,	४	अकषायी जीव	(अकषायी जीव)
८६७	१४	१	चार भंग	चार-भंग

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८६७	१४	२	मन-योगी, वचन-योगी और	मन-योगी जीवों के भी, वचन-योगी जीवों के भी और
,,	१४	२	चार भंग वक्तव्य है। अयोगी	(चार भंग वक्तव्य हैं)। अयोगी
,,	१६	२	नैरयिक-जीव	(नैरयिक-जीव)
८६८	१७	१,२	किया था....? (भ. २६/१) पूर्ववत्। (भ. २६/१६) इसी प्रकार	किया था० (भ. २६/१)? पूर्ववत् (भ. २६/१६)। इसी प्रकार
,,	,,	२,३	कृष्ण-लेश्या, नील-लेश्या, कापोत-लेश्या वाले नैरयिक की वक्तव्यता।	कृष्ण-लेश्या वाला भी, नील-लेश्या वाला भी, कापोत-लेश्या वाला भी (नैरयिक) (वक्तव्य हैं)।
८६८	१७	५	मति-अज्ञानी श्रुत-अज्ञानी	मति-अज्ञानी, श्रुत-अज्ञानी
८६८	१७	७	कषाय-सहित सयोगी	कषाय-सहित, सयोगी
,,	,,	,,	वचन योगी नैरयिक जीव और काययोगी	वचन-योगी और काय-योगी नैरयिक-जीव,
८६८	१७	८	नैरयिकों की इन	नैरयिक के इन
८६८	१७	९	की वक्तव्यता। केवल	की भी वक्तव्यता बतलानी चाहिए,
,,	,,	१०	-वेदक वक्तव्य है,	-वेदक- और पुरुष-वेदक वक्तव्य हैं,
,,	,,	११	वक्तव्य है।	(वक्तव्य हैं)।
८६८	१७	११	वक्तव्यता	(वक्तव्यता)
,,	,,	१२,१३	-तिर्यग्योनिक-जीव की भी वक्तव्यता। सर्वत्र जीव के द्वितीय भंग वक्तव्य है।	-तिर्यग्योनिक जीव में भी सर्वत्र ही प्रथम और द्वितीय (ये दो) भंग (वक्तव्य हैं),
,,	,,	१५	वक्तव्यता	जो वक्तव्यता
८६८	१७	१५	विषय निरवशेष	विषय में निरवशेष
,,	,,	१५-१७	-देव की (भ. २६/१७) ज्योतिष्क-देव की और वैमानिक-देव की असुर-कुमार की भांति वक्तव्यता। उसी प्रकार वक्तव्यता, केवल इतना	-देव की असुरकुमार (भ. २६/१७) की भांति (वक्तव्यता)। ज्योतिष्क-देव की और वैमानिक-देव की उसी प्रकार (वक्तव्यता), इतना
,,	,,	,,	ज्ञातव्य हैं। शेष पूर्ववत्	ज्ञातव्य हैं, शेष पूर्ववत् वक्तव्य है।
,,	१८	२	वक्तव्यता। केवल इतना	वक्तव्यता बतलानी चाहिए, इतना
,,	,,	३	कषाय-सहित जीव	कषाय-सहित-जीव
,,	,,	,,	-कषाय-सहित जीव	-कषाय-सहित-जीव
८६८	१८	४	पूर्ववत्। यावत् वैमानिक।	पूर्ववत् यावत् वैमानिक (वक्तव्य हैं)।
,,	१९	१	था......? पृच्छा	था—पृच्छा
,,	१९	२	जीव	(जीव)
		(दोनों बार) ३		
,,	,,	८	मिथ्या-दृष्टि और	मिथ्या-दृष्टि- और
,,	,,	९	-मिथ्या दृष्टि जीव	-मिथ्या-दृष्टि-जीव
,,	,,	१२	संज्ञोपयुक्त, अवेदक, कषाय-सहित, साकार-उपयोग-युक्त जीव--इनमें	संज्ञोपयुक्त-, अवेदक-, कषाय-सहित-, साकार-उपयोग-युक्त- -जीव—इनमें
८६९	२०,२१	१	था, कर रहा है, करेगा?	था०?

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८६९	२०,२१	३	नैरयिक	नैरयिकों
८६९	२१	२	के बन्ध की वक्तव्यता (भ. २६/१८)	का बन्ध (भ. २६/१८) (उक्त है)
,,	२१	२	मोहनीय कर्म की भी	मोहनीय-कर्म भी
,,	२१	२,३	अविकल रूप से यावत् वक्तव्यता वैमानिक तक।	निरवशेष (वक्तव्य है) यावत् वैमानिक
,,	२२	१	था, कर रहा है.......? पृच्छा।	था—पृच्छा।
८६९	२२	३	जीव	(जीव)
८६९	२२	४	सलेश्य जीव	सलेश्य-जीव
,,	,,	,,	शुक्ल-लेश्य जीव	शुक्ल-लेश्य-जीव
,,	२३	१	कृष्णपाक्षिक जीव.....?	कृष्णपाक्षिक-जीव—
,,	,,	२	कृष्णपाक्षिक जीव	(कृष्णपाक्षिक-जीव)
,,	,,	,,	रहा है करेगा	रहा है, करेगा
८६९	२४-२६	१	..........? पृच्छा	—पृच्छा
८६९	२४	२,३	सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि जीव	(सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि-जीव)
,,	,,	४	ज्ञानी जीव	ज्ञानी-जीव
,,	,,	,,	अवधि-ज्ञानी जीव	अवधि-ज्ञानी-जीव
,,	२५	२,३	मनःपर्यव-ज्ञानी जीव	(मनःपर्यव-ज्ञानी-जीव)
,,	,,	५	नो-संज्ञोपयुक्त	नोसंज्ञोपयुक्त
,,	२५	६	अवेदक और	अवेदक- और
८६९	२५	७	रहित जीव	रहित-जीव
,,	,,	,,	अयोगी	अयोगी-
,,	,,	८	जीव	-जीव
,,	२६	२	नैरयिक जीव	(नैरयिक-जीव)
,,	,,	३	वक्तव्य है। केवल इतना	(वक्तव्य हैं), इतना
८७०	२६	४	में पूर्ववत्, केवल इतना	में उसी प्रकार, इतना
,,	,,	५,६	की नैरयिक की भांति वक्तव्यता।	नैरयिकों की भांति (वक्तव्य है)।
,,	,,	६	पृथ्वीकायिक में	पृथ्वीकायिकों में
,,	,,	७	कृष्णपाक्षिक पृथ्वीकायिक	कृष्णपाक्षिक-पृथ्वीकायिक
,,	२७	१	........? पृच्छा	—पृच्छा
८७०	२७	२	तेजोलेश्य-पृथ्वीकायिक-जीव ने	(तेजोलेश्य-पृथ्वीकायिक-जीव ने)
,,	,,	४	अप्कायिक और	अप्कायिकों और
,,	,,	४	भी अविकल रूप से वक्तव्यता।	भी निरवशेष (वक्तव्यता)।
,,	,,	९	सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि पद	सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि-पद
,,	,,	१३	वक्तव्य है। मनुष्य की	(वक्तव्य हैं)। मनुष्यों की
,,	,,	१४	जीवों की भांति वक्तव्यता। (भ. २६/२२-२५)	जीवों (भ. २६/२२-२५) की भांति (वक्तव्यता)।
,,	,,	१६	जीव	जीवों
,,	,,	१८	असुरकुमार	असुरकुमारों
,,	,,	१९	-बन्ध की भांति वक्तव्यता।	-बन्ध (भ. २६/१८) की भांति (वक्तव्यता)।
,,	२९	२	था......? पूर्ववत्.......पृच्छा। (भ. २६/१)	था—पृच्छा पूर्ववत् (भ. २६/१)।

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८७०	२९	३	अनन्तर-उपपन्न कोई नैरयिक	(अनन्तर-उपपन्न) कोई (नैरयिक)
,,	३०	१,२	था.....? पृच्छा। (भ. २६/१)	था (भ. २६/१)—पृच्छा।
८७१	३०	५	नहीं है।	नहीं है।
८७१	३०	७	-तिर्यग्योनिक जीव	-तिर्यग्योनिक-जीवों
,,	,,	९	नो-संज्ञोपयुक्त	नोसंज्ञोपयुक्त
८७१	३०	११	वैमानिक-देव में नैरयिक	वैमानिक-देवों में नैरयिकों
८७१	३०	१४	पाप की वक्तव्यता	पाप (भ. २६/१६) की वक्तव्यता
,,	३१	१	था......? पृच्छा	था—पृच्छा
,,	३१	३	अनन्तर-उपपन्न-नैरयिक-जीव ने	(अनन्तर-उपपन्न-नैरयिक-जीव ने)
८७१	३२	२,३	था? (भ. २६/२९)। इसी प्रकार	था? (भ. २६/२९)। इसी प्रकार
,,	,,	५	(उपपन्न) वैमानिक-देवों	(अनन्तर-उपपन्न) वैमानिक-देव
८७१	३२	६	कृष्णपाक्षिक मनुष्य में तृतीय भंग	(अनन्तर-उपपन्न-) कृष्णपाक्षिक मनुष्यों में तृतीय भंग (वक्तव्य है)।
,,	३४	२	था.....? पृच्छा	था—पृच्छा
,,	३४	३	परम्पर-उपपन्नक किसी नैरयिक-जीव ने पाप कर्म का बंध किया था। प्रथम	(परम्पर-उपपन्नक) किसी (नैरयिक-जीव) ने (पाप-कर्म का बंध किया था)......प्रथम
,,	३४	४	उद्देशक की वक्तव्यता थी वैसे	उद्देशक (भ. २६/१६-२७) (उक्त था), वैसे
८७२	,,	८	है। यावत्	है यावत्
,,	,,	९	देव और अनाकार-	देवों के अनाकार-
,,	३६	२	नैरयिक जीव	नैरयिक-जीव
,,	,,	,,	था.....? पृच्छा	था—पृच्छा
,,	,,	३	था, इसी प्रकार	था......इस प्रकार?
८७२	३६	३	अनन्तरावगाढ-नैरयिक-जीव	(अनन्तरावगाढ-नैरयिक-जीव)
८७२	३६	४-६	-उद्देशक की वक्तव्यता, वैसे ही अनन्तरावगाढ-नैरयिक जीव की भी न हीन और न अधिक वक्तव्यता। (अनन्तरावगाढ)-नैरयिक आदिक जीव यावत् (अनन्तरावगाढ)-वैमानिक-देव तक वक्तव्यता। (भ. २६/२९-३२)	-उद्देशक (भ. २६/२९-३२) उक्त है, वैसे ही अनन्तरावगाढ-नैरयिक--आदिक जीव भी यावत् वैमानिक-देव न हीन और न अधिक वक्तव्य है।
,,	३८	३	उद्देशक की वक्तव्यता है। (भ. २६/३४) वही	उद्देशक (भ. २६/३४) (उक्त है), वही
,,	४०	२	था.....? पृच्छा	था—पृच्छा
८७३	सर्वत्र	२	था.....? पृच्छा	था—पृच्छा
,,	४२	३	-उद्देशक की वक्तव्यता है। (भ. २६/३४) वही	-उद्देशक (भ. २६/३४) (उक्त है), वही
,,	,,	३	-उद्देशक की वक्तव्यता है। (भ. २६/२९-३२) वह	-उद्देशक है (भ. २६/२९-३२) (उक्त है), वही
८७३	४४-४८	३	जैसे	जैसा

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८७३	४६	४,५	-उद्देशक की वक्तव्यता है, (भ. २६/३४) वैसा	-उद्देशक है (भ. २६/३४) उक्त है, वैसा ही
८७३	४८	३,४	-उद्देशक की वक्तव्यता है। (भ. २६/३४) वैसे	-उद्देशक है (भ. २६/३४) उक्त है, वैसा ही
८७४	सर्वत्र	२	था.....? पृच्छा	था—पृच्छा
८७४	५०	३	अचरम-नैरयिक-जीव ने इसी	(अचरम-नैरयिक-जीव) ने.....इसी
८७४	५०	३	उद्देशक में (भ. २६/१-२८)	उद्देशक (भ. २६/१-२८) में
,,	,,	४	भंग की सर्वत्र	भंग बतलाए गए थे, उनकी सर्वत्र
,,	,,	,,	तिर्यग्योनिक	तिर्यग्योनिकों तक।
८७४	५१	२,३ (दोनों बार)	अचरम-मनुष्य	(अचरम-मनुष्य)
८७४	५२	१	था......?	था०?
,,	५२	२	प्रकार जैसे प्रथम	प्रकार प्रथम
,,	,,	३	वैसे ही बतलाना चाहिए,	बतलाना चाहिए,
,,	५२	७-८	अचरम वानमन्तर-, ज्योतिषिक, वैमानिक-देवों की नैरयिक की भांति (भ. २६/५०)	अचरम-वानमन्तर-, -ज्योतिषिक-, -वैमानिक-देव नैरयिकों (भ. २६/५०) की भांति
,,	५३	३	अचरम-नैरयिक के	(अचरम-नैरयिक के)
,,	,,	,,	-कर्म-बंध की भांति (भ.२६/५०) वक्तव्यता,	-कर्म-बन्ध (भ. २६/५०) की भांति वक्तव्यता
८७४	५३	६	वक्तव्यता	(वक्तव्यता)
,,	,,	८	-देव, इतना	-देवों की (वक्तव्यता), इतना
,,	,,	८	मनुष्य	मनुष्यों
,,	५४	३	अचरम-	(अचरम-
,,	,,	३	विषय में	विषय में)
८७४	५४	३-४	-कर्म की वक्तव्यता है, (भ. २६/५०-५३)	-कर्म का बन्ध (भ. २६/५०-५३) (उक्त है),
,,	,,	४	वक्तव्य यावत् वैमानिक	(वक्तव्य है) यावत् वैमानिक
८७५	५५	५	वक्तव्यता।	(वक्तव्यता)।
,,	,,	६,७	वनस्पतिकायिक-जीव	वनस्पतिकायिक-जीवों
,,	,,	९	वायुकायिक-जीव में	वायुकायिक-जीवों में
,,	,,	१०	अचरम द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय में	अचरम द्वीन्द्रियों, त्रीन्द्रियों और चतुरिन्द्रियों में
८७५	५५	१०	वक्तव्यता। इतना	(वक्तव्यता), इतना
,,	,,	१२	पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक के	पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिकों के
,,	,,	१३,१४	वक्तव्यता। अचरम मनुष्य	(वक्तव्य है)। अचरम मनुष्यों
,,	,,	१४	कषाय-रहित (इन तीन पदों में	कषाय-रहित (—इन तीन पदों में
,,	,,	१५	अयोगी (इन तीन पदों की	अयोगी (-इन तीन पदों की
८७५	५५	१७	-देव में अचरम-नैरयिक	-देवों में अचरम-नैरयिकों
,,	,,	१८	आदि सभी सभी जीवों में	आदि सभी जीवों में
,,	,,	२०	वक्तव्यता।	(वक्तव्यता)।

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
			शतक २७	
८७६	१	४ (दोनों बार)	जीव	(जीव)
,,	,,	५ (दोनों बार)	जीव	(जीव)
८७६	२	२	जो वक्तव्यता निरवशेष वक्तव्यता। उसी	जो वक्तव्यता है, वही निरवशेष वक्तव्य है। उसी
			शतक २८	
८७७	१	सर्वत्र	जीवों	(जीवों)
८७७	२	२	किया था? पूर्ववत् वक्तव्यता।	किया था? इसी प्रकार (भ. २८/१) (वक्तव्यता)।
८७७	२	३	-जीवों	जीव
,,	२	३	कृष्णपाक्षिको, शुक्लपाक्षिको	कृष्णपाक्षिक, शुक्लपाक्षिक
,,	३	२	नैरयिकों ने तिर्यक् योनिकों में	(नैरयिकों) ने तिर्यग्योनिकों में
,,	,,	३	इसी प्रकार आठ	इसी प्रकार (भ. २८/१) आठ
,,	३	४	-जीवों	-जीवों तक
८७८	३	६	जीव से लेकर वैमानिक पर्यवसान ये	जीव (समुच्चय) से प्रारम्भ कर वैमानिक-पर्यन्त—ये
८७८	५	३	अनन्तर-उपपन्न-नैरयिकों	(अनन्तर-उपपन्न-नैरयिकों) ने
८७८	५	४	आठ भंग	आठ भंग (भ. २८/१)
८७८	५	५	नैरयिकों के जिसमें	नैरयिकों के विषय में जिसमें
,,	,,	,,	पर्यवसान	पर्यन्त
,,	५	६	यावत् वैमानिक इतना	यावत् वैमानिकों के, इतना
,,	,,	७	बन्धि-शतक (भ. २६वां शतक) की	बन्धि-शतक (भ. २६वें शतक) की
,,	५	९	वक्तव्यता। नव	(वक्तव्यता)। यह भी नव
,,	,,	,,	संगृहीत यह उद्देशक वक्तव्य है।	संग्रहित उद्देशक (भ. २६/३४) वक्तव्य है।
,,	७	१	क्रम से जैसे बन्ध-शतक	क्रम से जैसे बन्धि-शतक
,,	,,	३	अचरम-उद्देशक ये	अचरम-उद्देशक।
,,	,,	,,	वक्तव्य हैं	(वक्तव्य हैं)
			शतक २९	
८७९	१	६,७	जीवों	(जीवों)
,,	२	१	जीवों	(जीवों)
,,	,,	३-५	उपपन्न हैं।	उपपन्न हैं,
,,	,,	१२	जा रहा है यावत् पूर्ववत्।	जा रहा है पूर्ववत्।
८७९	३	२	पूर्ववत् वक्तव्यता	पूर्ववत् (भ. २९/१) (वक्तव्यता),
,,	,,	३	कथनीय है	कथनीय हैं
८८०	४	२	एक साथ किया था....? पृच्छा	एक साथ किया था—पृच्छा। (भ. २९/१)
८८०	४	३	नैरयिकों	(नैरयिकों)

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८८०	४	४	वक्तव्यता, वैसे ही	(वक्तव्यता) (भ. २९/२) वैसे ही
,,	,,	४	नैरयिकों की	(नैरयिकों की)
,,	,,	४,५	-जीवों	-जीव
,,	,,	५	वैमानिकों की जिसमें	वैमानिकों की (वक्तव्यता), जिसमें
,,	,,	७	जीव से	जीव (समुच्चय) से
,,	,,	,,	वैमानिक-पर्यवसान है।	वैमानिक-पर्यन्त।
,,	६	२	किया था.....? पृच्छा।	किया था—पृच्छा। (भ. २९/१)
,,	६	३	अनन्तर-उपपन्न कुछ नैरयिकों ने	कुछ (अनन्तर-उपपन्नक-नैरयिकों) ने
,,	,,	४	कुछ नैरयिकों ने	कुछ (अनन्तर-उपपन्नक-नैरयिकों) ने
,,	७	१	कुछ नैरयिकों ने	कुछ (अनन्तर-उपपन्नक-नैरयिकों) ने
,,	,,	३,४	कुछ नैरयिक सम	कुछ (अनन्तर-उपपन्नक-नैरयिक) सम
८८०	७	६	था। जो	था। इनमें जो
,,	८	१	के वेदन	(के वेदन
,,	,,	२	किया था......?	किया था) भ. २९/१)०?
,,	,,	३	पूर्ववत् वक्तव्यता, यावत् अनाका-रोपयुक्त-जीवों की वक्तव्य हैं।	पूर्ववत् (वक्तव्य है), इस प्रकार यावत् अनाकारोपयुक्त-अनन्तर-उपपन्नक-नैरयिक-जीव (वक्तव्य हैं)।
८८०	८	४	असुरकुमारों की	असुरकुमार
,,	८	५	साथ भी।	साथ भी दण्डक (वक्तव्य है)।
,,	१०	१	में जो उद्देशकों की परिपाटी	में उद्देशकों की जो परिपाटी
,,	,,	२	उद्देशक।	उद्देशक तक।
,,	,,	,,	चार	चारों

शतक ३०

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८८१	३-६	१	....? पृच्छा।	—पृच्छा।
८८१	३	२	लेश्या-युक्त-जीव	(लेश्या-युक्त-जीव)
८८१	३	२ (तीनों बार)	भी है	भी हैं
८८१	३	३	जीवों	जीव
,,	४	२	लेश्या-रहित-जीव	(लेश्या-रहित-जीव)
,,	५	२	कृष्णपाक्षिक-जीव	(कृष्णपाक्षिक-जीव)
,,	५	३	शुक्लपाक्षिक-जीवों की	शुक्लपाक्षिक-जीव
८८१	५	४	सम्यग्-दृष्टि-जीवों की	सम्यग्-दृष्टि-जीव
,,	,,	,,	मिथ्या-दृष्टि जीवों की	मिथ्या-दृष्टि-जीव
८८१	६	२	सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि वाले जीव	(सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि वाले जीव)
८८१	६	३	केवलज्ञानी की	केवलज्ञानी
८८१	६	४	विभंग-ज्ञानी की	विभंगज्ञानी
८८१	६	६	-उपयुक्त-जीव की	उपयुक्त-जीव
८८२	६	७	-वेदक-जीव की	वेदक-जीव
८८२	६	८	अवेदक की	अवेदक
८८२	६	९	कषाय-युक्त की	कषाय-युक्त
८८२	६	९	-रहित -जीवों की। लेश्या-	-रहित-जीव लेश्या-
,,	,,	१०	सयोग यावत् काय-योगी-जीवों की	सयोगी यावत् काय-योगि-जीव
८८२	६	११	अयोगी-जीवों की	अयोगि-जीव

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८८२	६	१२	-अनाकारोपयुक्त-जीवों की	अनाकारोपयुक्त-जीव
,,	७,९	१	है.......? पृच्छा	है—पृच्छा
,,	,,	२	नैरयिक जीव	(नैरयिक-जीव)
८८२	८	२	नैरयिक-जीवों की	नैरयिक-जीव
८८२	८	५	नैरयिकों की वक्तव्यता	नैरयिक (उक्त हैं)।
८८२	८	५	स्तनितकुमारों	स्तनितकुमार
,,	९	२	पृथ्वीकायिक-जीव	(पृथ्वीकायिक-जीव)
८८२	९	४-५	-जीवों की	-जीव
,,	,,	६	पञ्चेन्द्रिय की	पञ्चेन्द्रिय
,,	,,	७-८	मनुष्यों को	मनुष्य
८८२	९	८	वक्तव्य।	(वक्तव्य हैं)।
८८२	९	९	में असुरकुमारों	असुरकुमारों
८८२	१०	३	क्रियावादी जीव	(क्रियावादी जीव)
,,	११	१	वे देव	वे क्रियावादी देव
,,	,,	३	वे भवनवासी	वे जीव भवनवासी
,,	१२	२	हैं.......? पृच्छा	हैं—पृच्छा
,,	,,	३	हैं, यावत्	हैं यावत्
,,	,,	३	अक्रियावादी जीव	(अक्रियावादी जीव)
८८३	१३-१९	१-२	....? पृच्छा।	—पृच्छा।
८८३	१३	३	लेश्या-युक्त-क्रियावादी-जीव	(लेश्या-युक्त-क्रियावादी-जीव)
,,	,,	३	करते, इसी	करते........इस
८८३	१४	३	कृष्ण-लेश्या वाले क्रियावादी-जीव	(कृष्ण-लेश्या वाले क्रियावादी जीव)
,,	,,	७	जीवों	जीव
,,	,,	३	तेजो-लेश्या वाले क्रियावादी-जीव	(तेजो-लेश्या वाले क्रियावादी जीव)
,,	,,	५	पूर्ववत् वक्तव्यता। (भ. ३०/११)	पूर्ववत् (भ. ३०/११) (वक्तव्य हैं)।
,,	१६	३	तेजो-लेश्या वाले अक्रियावादी-जीव	(तेजो-लेश्या वाले अक्रियावादी-जीव)
,,	,,	५	वैनयिकवादी-जीवों	वैनयिकवादी-जीव
८८३	१६	६	अक्रियावादी-जीवों	अक्रियावादी-जीव
,,	१७	२	लेश्या-रहित क्रियावादी-जीव	(लेश्या-रहित-क्रियावादी जीव)
,,	१८	२	कृष्णपाक्षिक-अक्रियावादी-जीव	(कृष्णपाक्षिक-अक्रियावादी जीव)
८८४	१९	३	सम्यग्-दृष्टि-क्रियावादी-जीव	(सम्यग्-दृष्टि-क्रियावादी जीव)
,,	,,	५	मिथ्या-दृष्टि की	मिथ्या-दृष्टि (-क्रियावादी जीव)
८८४	२०	२	हैं।)........?	हैं०?
,,	२१-२२	१/२	....? पृच्छा।	—पृच्छा।
,,	२१	२	मनःपर्यव-ज्ञानी-जीव	(मनःपर्यव ज्ञानि-जीव)
,,	२२	१	यदि वे देव	यदि वे (मनःपर्यव-ज्ञानि-जीव) देव
,,	,,	३	वे भवनवासी	वे (मनःपर्यव-ज्ञानि-जीव) भवनवासी-
८८४	२२	५	केवल-ज्ञानी की	केवलज्ञानी
,,	,,	६	-अज्ञानी की	-अज्ञानी
,,	,,	८	नपुंसक-वेदक की	नपुंसक-वेदक
,,	,,	,,	अवेदक की	अवेदक
,,	,,	९-१०	-सहित की	-सहित
,,	,,	१०	-रहित की	-रहित

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८८४	२२	११	-योगी की	-योगी
,,	,,	११-१२	अयोगी की	अयोगी
,,	,,	१२	अनाकारोपयुक्त की	अनाकारोपयुक्त
,,	२३	२	गौतम! नैरयिक-आयु	गौतम! (क्रियावादी नैरयिक) नैरयिक-आय
,,	२४	२	गौतम! नैरयिक-आयु	गौतम! (अक्रियावादी नैरयिक) नैरयिक-आयु
८८५	सर्वत्र	१	में.....पृच्छा	में-पृच्छा
८८५	२६	२	अक्रियावादी-पृथ्वीकायिक-जीव	(अक्रियावादी पृथ्वीकायिक-जीव)
८८७	२७	४	वक्व्य	वक्तव्य
८८५	२७	७	वक्तव्यता है। तेजस्कायिक और वायुकायिक जीव	(वक्तव्यता है।) तेजस्कायिक- और वायुकायिक-जीव
८८५	२८	३	क्रियावादी-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक--जीव	(क्रियावादी पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक--जीव)
८८५	२८	६	-जीवों	-जीव
,,	,,	७	-जीवों के विषय में	-जीव
,,	,,	३	कृष्ण-लेश्या वाले क्रियावादी पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक जीव	(कृष्ण-लेश्या वाले क्रियावादी पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव)
८८५	२९	५	अक्रियावादी, अज्ञानिकवादी, और वैनयिकवादी जीव	(कृष्ण-लेश्या वाले) अक्रियावादी, अज्ञानिकवादी और वैनयिकवादी (पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-) जीव
८८६	२९	६,७	जीवों के विषय में	(पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-) जीव
८८६	२९	७	बताया गया है	बताए गए हैं
८८६	२९	८,१२,१३	पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव	(पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव)
८८६	२९	१०,१४,१६	-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव	(-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव)
८८६	२९	१४	समवसरणों में	समवसरणों
८८६	२९	१५	वैनयिकवादी)	वैनयिकवादी) में
८८६	२९	१८	के विषय में जानना चाहिए	(वक्तव्य हैं)।
८८६	२९	१९,२०	अज्ञानिकवादी एवं वैनयिकवादी) नैरयिक जीवों की भांति सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्-योनिक-जीव	सम्यग्-मिथ्या-दृष्टि (-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव) अज्ञानिकवादी एवं वैनयिकवादी) नैरयिक जीवों की भांति
८८६	२९	२१	(समुच्चय) यावत्	(समुच्चय)- यावत्
८८६	२९	२२	तक सम्यग्-दृष्टि	सम्यग्-दृष्टि
८८६	२९	२२,२४	-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों	(-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों)
८८६	२९	२३,२५	-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों तक	(-पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव)
८८६	२९	२५-२६	पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों के विषय में बताया गया	(पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीव) बताए गए
८८६	२९	२८	नो-संज्ञोपयुक्त-मनुष्यों के विषय में	नोसंज्ञोपयुक्त-मनुष्य
८८६	२९	२९	-जीवों के विषय में बताया	-जीव बताए गए

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८८६	२९	३१-३२	जीवों के विषय में बताया गया वैसे ही शेष सब पञ्चेन्द्रिय-तिर्यग्योनिक-जीवों की भांति	जीव बताए गए वैसे ही शेष
८८६	२९	३३	जीवों की तरह	जीवों की भांति
८८६	३०	१	भवसिद्धिक है ?	भवसिद्धिक हैं ?
८८६	३०	२	क्रियावादी-जीव	(क्रियावादी जीव)
,,	३१	१	है......पृच्छा।	हैं—पृच्छा।
,,	,,	२	अक्रियावादी-जीव	(अक्रियावादी जीव)
,,	,,	,,	भी है।	भी हैं।
,,	,,	३	-जीव भी और वैनयिकवादी-जीव भी समझने चाहिए।	जीवों को भी और वैनयिकवादी जीवों को भी समझना चाहिए।
,,	३२	१	है.....? पृच्छा	हैं ?-पृच्छा।
८८६	३३	२	लेश्या-युक्त-क्रियावादी-जीव	(लेश्या-युक्त-क्रियावादी जीव)
८८७	३३,३४	१	हैं......पृच्छा।	हैं-पृच्छा।
,,	३३	२	लेश्या-युक्त-अक्रियावादी-जीव	(लेश्या-युक्त-अक्रियावादी जीव)
,,	३४	२	लेश्या-रहित-क्रियावादी-जीव	(लेश्या-रहित क्रियावादी जीव)
,,	,,	३	द्वारा कृष्णपाक्षिक-जीव तीनों	द्वारा तीनों
८८७	३४	९,१०	(समुच्चय) यावत्	(समुच्चय)-यावत्
,,	,,	१२	-संज्ञोपयुक्त	संज्ञोपयुक्त
,,	,,	१९	जीवों की	जीव
,,	,,	२१	स्तनितकुमार-दोनों तक	स्तनितकुमार-देवों तक
८८७	३४	२३	-जीवों तक	-जीव
८८७	३४	२४	-जीवों के विषय में भी	-जीव भी
,,	,,	२६	हैं अभवसिद्धिक	हैं, अभवसिद्धिक
,,	,,	२९	जीवों में	जीव
८८८	सर्वत्र	१/२	.....पृच्छा।	—पृच्छा।
८८८	३६	२	गौतम ! अनन्तर-	गौतम (अनन्तर-
८८८	३६	२	-नैरयिक-जीव	-नैरयिक-जीव)
८८८	३७	२	हैं.....? इसी प्रकार जानना चाहिए।	हैं० ? इसी प्रकार (जानना चाहिए)।
,,	३८	१	क्रियावादी-	क्रियावादी
,,	,,	३	क्रियावादी-	(क्रियावादी
,,	,,	,,	-नैरयिक-जीव	(-नैरयिक-जीव)
,,	,,	६	जानना चाहिए।	(वक्तव्य हैं)।
८८८	३९	२	लेश्या-युक्त-क्रियावादी-	(लेश्या-युक्त-क्रियावादी
,,	,,	,,	नैरयिक-जीव	नैरयिक-जीव)
,,	,,	४	वैमानिक तक।	वैमानिक (वक्तव्य हैं)।
,,	,,	६	अनाकारोपयुक्त तक वक्तव्य हैं।	अनाकारोपयुक्तों तक (वक्तव्य हैं)।
,,	,,	७	वैमानिक तक	वैमानिक
८८८	४०	१	क्रियावादी-	क्रियावादी
८८८	४०	३	क्रियावादी-	(क्रियावादी
,,	,,	,,	-नैरयिक-जीव	-नैरयिक-जीव)
,,	४१	२	अक्रियावादी-	(अक्रियावादी
,,	,,	,,	-नैरयिक-जीव	-नैरयिक-जीव)

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८८८	४१	३	ज्ञातव्य हैं।	ज्ञातव्य हैं)।
,,	४२	३	लेश्या-युक्त	(लेश्या-युक्त
,,	,,	,,	-नैरयिक-जीव	(-नैरयिक-जीव)
८८९	४२	५	चाहिए, यावत्	चाहिए यावत्
,,	,,	६	अनाकारोपयुक्त	अनाकारोपयुक्तों
,,	,,	,,	-देवों तक केवल इतना	-देव (वक्तव्य हैं), इतना
,,	,,	७	क्रियावादी-	क्रियावादी
,,	,,	९	हैं अभवसिद्धिक	हैं, अभवसिद्धिक
८८९	४४	२	हैं....?	हैं०?
८८९	४४	२	बताया गया।	(बताया गया)
८८९	४४	३	-नैरयिक आदि जीवों के विषय में सम्पूर्ण रूप से	-नैरयिक-आदि जीव निरवशेष
८८९	४४	४	संग्रहीत नैरयिक आदि जीवों	संगृहीत (नैरयिक-आदि-जीवों
,,	,,	५	है।	है)।
८८९	४४	७	अभवसिद्धिक	-अभवसिद्धिक
,,	४६	१	जो-जो बोल बन्धि	(जिन-जिन बोलों के विषय में) बन्धि-
,,	,,	२	-उद्देशक तक, केवल इतना	-उद्देशक, इतना
,,	,,	३	-उद्देशकों का एक ही गमक है। चारों	(-उद्देशकों) का भी एक ही गमक है, चारों
,,	,,	,,	ही परम्पर-उद्देशकों का एक	ही परम्पर (-उद्देशकों) का भी एक
,,	,,	५	भी, और	भी,
,,	,,	६	अयोगी ये तीन	अयोगी—ये तीन

इक्कतीसवां शतक

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८९०	१	१	राजगृह नगर में यावत्	राजगृह में (भ. १/४-१०) यावत्
,,	,,	२	कृतयुग्म (चार), त्र्योज (तीन), द्वापरयुग्म (दो), कल्योज (एक)।	कृतयुग्म, त्र्योज, द्वापरयुग्म, कल्योज।
,,	२	१	कृतयुग्म-	कृतयुग्म
,,	,,	६	(तीन,	(जैसे—तीन,
,,	,,	७	(दो,	(जैसे—दो,
,,	,,	९	(एक, पांच, नौ	(जैसे—एक, पांच, नौ
,,	,,	१०	है)	है) यह इस
			यह इस	
८९०	३	२	तिर्यग्योनिक जीवों	तिर्यग्योनिक-जीवों
,,	,,	,,	है.....पृच्छा।	हैं—पृच्छा।
८९०	३	३	क्षुल्लक-कृतयुग्म-नैरयिक-जीव	(क्षुल्लक-कृतयुग्म-नैरयिक-जीव)
,,	,,	४	के छट्ठे पद 'अवक्रान्ति' (सू. १७/८०)	के 'अवक्रान्ति-पद' (६/७०-८०)
,,	,,	५	है।	है।
,,	४	१	वे जीव	वे (क्षुल्लक-कृतयुग्म-नैरयिक)-जीव
,,	,,	२	क्षुल्लक-कृतयुग्म-नैरयिक-जीव	(क्षुल्लक-कृतयुग्म-नैरयिक-जीव)
,,	५	१	वे जीव	वे (क्षुल्लक-कृतयुग्म-नैरयिक-जीव)
,,	५	३	से, इसी	से...... इसी
८९१	५	४	(भ. २५/६२०)	(भ. २५/६२०-६२६)

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८९१	६	१	रत्नप्रभा-पृथ्वी के	रत्नप्रभा-पृथ्वी में
,,	,,	३	विषय में बतलानी	विषय में भी बतलानी
,,	६	३	चाहिए, यावत्	चाहिए यावत्
,,	,,	,,	'पर-प्रयोग	पर-प्रयोग
,,	,,	,,	होते' तक	होते।
,,	,,	४	शर्कराप्रभा के विषय में भी इसी यावत् 'अधःसप्तमी' तक बतलानी चाहिए।	शर्कराप्रभा (में उपपन्न-क्षुल्लक-कृतयुग्म नैरयिक-जीवों) के (विषय में) भी, इस प्रकार यावत् अधःसप्तमी (में उपपन्न-क्षुल्लक-कृतयुग्म-नैरयिक-जीवों) के (विषय में) (वक्तव्यता)।
,,	,,	५	इसी प्रकार	—इस प्रकार
,,	,,	,,	के छठे पद अवक्रान्ति (सू. ८०) में	के अवक्रान्ति-पद (६/७०-८०) में
८९१	६	६-७ के बीच में	×	(गाथाएं)
,,	,,	७	असंज्ञी जीव	असंज्ञि-जीव
,,	,,	,,	(भुजसरीसृप), पक्षी	(भुजपरिसृप) दूसरी नरक-पृथ्वी; पक्षी
,,	,,	८	नरक-पृथ्वी; स्त्रियां छट्ठी	नरक-पृथ्वी ॥१॥ स्त्रियां छट्ठी
,,	,,	१०	चाहिए।	चाहिए ॥२॥
,,	,,	११	समझना चाहिए।	(समझना चाहिए)।
८९१	७	२	हैं.....?	हैं०?
८९१	७	३	के छठे पद अवक्रान्ति (सू. ७९-८०)	के अवक्रान्ति-पद (६/७९-८०)
८९१	८	१	वे जीव	वे (क्षुल्लक-त्र्योज-नैरयिक-) जीव
,,	,,	२	क्षुल्लक-त्र्योज-नैरयिक-जीव	(-क्षुल्लक-त्र्योज-नैरयिक-जीव)
,,	८	४	'अधःसप्तमी' तक समझना चाहिए।	अधःसप्तमी (में उपपन्न क्षुल्लक-त्र्योज-नैरयिक-जीवों के विषय में वक्तव्यता)।
,,	९,१०	२	उनकी संख्या	परिमाण (संख्या)
,,	,,	३	हैं। शेष उसी प्रकार समझना चाहिए	हैं, शेष उसी प्रकार (समझना चाहिए)
,,	९	४	यावत् 'अधःसप्तमी' तक समझना चाहिए।	यावत् अधःसप्तमी (में उपपन्न क्षुल्लक द्वापरयुग्म -नैरयिक-जीवों के विषय में वक्तव्यता)।
,,	१०	४	'अधःसप्तमी' तक समझना चाहिए	अधःसप्तमी (में उपपन्न क्षुल्लक-कल्योज-नैरयिक जीवों के विषय में वक्तव्यता)।
८९२	१२	२	वक्तव्य हैं। यावत्	(वक्तव्य है) यावत्
,,	,,	३	छट्ठे पद 'अवक्रान्ति' (सू. ७७)	'अवक्रान्ति-पद' (६/७७)
८९२	१२	४	-पृथ्वी के	-पृथ्वी में
,,	,,	५	समझना चाहिए। (जैसा	(समझना चाहिए) (जैसा
,,	,,	५	गया है)	गया है)।

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८९१	१३	१	-पृथ्वी के	-पृथ्वी में
,,	,,	२	पृथ्वी में	पृथ्वी
,,	,,	३	नारकी) भी	नारकी) में भी,
,,	,,	,,	बतलाना चाहिए	(वक्तव्य है)
,,	१३	४	के छठे पद 'अवक्रान्ति' (सू. ७७-८०)	के 'अवक्रान्ति-पद' (६/७७-८०)
,,	,,	४,५	वैसा समझना चाहिए।	(वैसा समझना चाहिए)।
८९२	सर्वत्र	१	हैं?	हैं०?
,,	१४-१६	२	(उनकी संख्या)	(परिमाण)
८९२	१४	३-४	अधःसप्तमी तक भी	अधःसप्तमी में भी
८९२	१५	१	हैं–?	हैं०?
८९२	१५	४	यावत् अधः सप्तमी' तक	यावत् अधः सप्तमी में
,,	१८	७	-उद्देशक की भांति	-उद्देशक (भ. ३१/१२-१६) की भांति
,,	२०	३	वह वक्तव्य है	(वह वक्तव्य है)
८९३	२१,२४, २७	१	-पृथ्वी के	-पृथ्वी में
८९३	२१,२६	२	हैं?	हैं०?
,,	२१	२	इसी प्रकार	(वक्तव्य है)।
,,	२१	२	भी, बालुकाप्रभा	भी, इस प्रकार बालुकाप्रभा
८९३	२१	३	इसी प्रकार वक्तव्य है, चारों युग्मों में भी इसी प्रकार	(वक्तव्य है) इसी प्रकार चारों युग्मों में भी
८९३	२१	४	-उद्देशक की भांति	-उद्देशक (भ. ३१/१३-१६) की भांति
८९३	२३,२४, २७	२	हैं....?	हैं०?
८९३	२३	२	सम्पूर्ण	निरवशेष
८९३	२३	३	है। यावत् 'पर-प्रयोग	है यावत् पर-प्रयोग
,,	,,	३	होते' तक।	होते।
८९३	२४	२	सम्पूर्णतया	निरवशेष
,,	,,	२,३	'अधःसप्तमी तक	अधःसप्तमी में।
,,	,,	३	भी।	भी (वक्तव्य हैं)।
,,	,,	५	उद्देशक में पहले बतलाया गया है।	उद्देशक (भ. ३१/४,८,९,१०) में (उक्त है, वैसे वक्तव्य है)।
८९३	२६	२	-उद्देशक में बताया गया है	-उद्देशक (भ.३१/१२-१६) उक्त है)
८९३	२६	३	सम्पूर्णतया	निरवशेष
८९३	२९	१	वक्तव्य है	वक्तव्य हैं
८९३	२९	२	-उद्देशक में बताया गया है	-उद्देशक (भ. ३१/१८) में (बताया गया है)
८९४	३१	२	-उद्देशक में बतलाया गया है।	-उद्देशक (भ. ३१/२०,२१) में (उक्त है)।
,,	३३	१	उद्देशक बताये	-उद्देशक (भ. ३१/२३,२४,२६, २७) बताये

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८९४	३३	२	यावत् 'कापोतलेश्य-उद्देशक' तक।	यावत् कापोतलेश्य-उद्देशक तक।
,,	३५	३	करना चाहिए। शेष	करवाना चाहिए, शेष
,,	३७,३९	२	-जीवों के बतलाये गये हैं।	-जीवों (भ. ३१/२३, २४, २६, २९) के (बतलाये गये हैं)।
,,	४१	३	उसी प्रकार यावत् 'परप्रयोग	उसी प्रकार (वक्तव्य है) यावत् परप्रयोग
,,	४१	३	होते' तक	होते।
,,	४२	२	अट्ठाईस	अट्ठाईस
			शतक ३२	
८९५	१	३	है.....जैसे पण्णवणा के छट्ठे पद (सू. ९९-	है?....जैसे पण्णवणा के अवक्रान्ति-पद (६/९९-१००)
८९५	१	४	वैसे यहां वक्तव्य है।	(वैसे यहां वक्तव्य है)।
,,	२	१	वे कितने	वे (क्षुल्लक-कृतयुग्म-नैरयिक-जीव) कितने
८९५	२	२	वे चार	वे (क्षुल्लक-कृतयुग्म-नैरयिक-जीव) चार
,,	३	१	वे जीव	वे (क्षुल्लक-कृतयुग्म-नैरयिक-) जीव
,,	,,	३	गमक यावत् 'आत्म-प्रयोग	गमक (भ. २५/६३०-६२६) यावत् आत्म-प्रयोग
८९५	३	३,४	करते' तक (भ. २५/६२०-६२६	करते तक।
,,	४	१	-जीव?	-जीव०?
,,	४	२	सारे	(सारे
,,	,,	,,	चाहिए।	चाहिए)।
,,	४	२	'अधःसप्तमी-पृथ्वी' तक समझना चाहिए।	अधःसप्तमी-पृथ्वी के विषय में (ज्ञातव्य है)।
,,	६	१	-जीव....?	-जीव०?
८९५	६	१	-शतक में	-शतक (भ. ३१/१-४२) में
८९५	६	२	सम्पूर्णतया	निरवशेष
			शतक ३३	
८९६	१	शीर्षक	×	एकेन्द्रियों की कर्म-प्रकृतियों का पद
,,	,,	२,३	'वनस्पतिकायिक' वक्तव्य है।	वनस्पतिकायिक।
८९६	२	२	पृथ्वीकायिक-जीव	(पृथ्वीकायिक-जीव)
,,	३	२	सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव	(सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव)
८९६	४	४	-जीवों तक	-जीव
,,	५	२	अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वी-कायिक-जीवों के	(अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीवों के)
,,	६	,,	पर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीवों के	(पर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीवों के)
,,	७,८	,,	समझना चाहिए	(समझना चाहिए)
८९७	९	२	अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव	(अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव)
,,	१०,११	२	समझना चाहिए	(समझना चाहिए)
८९७	१०	२	एकेन्द्रिय-जीवों के कर्म-बन्ध वक्तव्य है	(एकेन्द्रिय-जीवों के कर्म-बन्ध वक्तव्य है)
८९७	१२	२	अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक जीव	(अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-जीव)

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८९७	१२	५	जानने चाहिए।	(जानने चाहिए) यावत्-
८९७	१५	३	वनस्पतिकायिक तक वक्तव्य हैं।	वनस्पतिकायिक।
,,	१६	२	अनन्तर-उपपन्न (प्रथम-समय के) -पृथ्वीकायिक-जीव	(अनन्तर-उपपन्नक (प्रथम-समय के) -पृथ्वीकायिक-जीव)
८९७	१६	४	जानने चाहिए।	(जानने चाहिए)।
८९७	१७	२	अनन्तर-	(अनन्तर-
८९७	१७	२	जीवों के	-जीवों के)
,,	१७	३	अन्तरायिक	आन्तरायिक
८९८	१८	२	अनन्तर-	(अनन्तर-
८९८	१८	२	जीवों के	-जीवों के)
८९८	१८	३	अन्तरायिक। इसी	आन्तरायिक। इसी
८९८	१८	४	वनस्पतिकायिक। अनन्तर उपपन्न-सूक्ष्म-बादर-	वनस्पतिकायिक तक (ज्ञातव्य है)। (अनन्तर-उपपन्नक-सूक्ष्म-बादर-
८९८	१८	६	वायुकायिक,	-वायुकायिक,
,,	१८	,,	चाहिए।	चाहिए।)
८९८	१९,२०	३	अनन्तर-	(अनन्तर-
,,	,,	,,	-जीव	-जीव)
,,	१९	४	वनस्पतिकायिक	वनस्पतिकायिक-
,,	,,	५	जीव।	-जीव।
,,	१९-२०	५	वनस्पतिकायिक जीव	वनस्पतिकायिक-जीव तक (वक्तव्य हैं)।
८९८	२०	४	तक। (भ. ३३/१२)	(भ. ३३/१२) (वक्तव्य है)।
८९८	२२	३	परम्पर-	(परम्पर-
,,	,,	,,	-जीव	-जीव)
,,	,,	,,	आदि)	(आदि),
,,	,,	४	-उद्देशक की भांति वक्तव्य हैं।	-उद्देशक (भ. ३३/१-४) की भांति (वक्तव्य हैं)।
८९८	२३	२	-उद्देशक में	-उद्देशक (भ. ३३/५-१३)
,,	२३	३	सम्पूर्णतया	निरवशेष
,,	,,	,,	जानना चाहिए	वक्तव्य है
,,	,,	,,	(कर्म-प्रकृतियों का)	(कर्म-प्रकृतियों) का
८९९	२७-३१	१	के कर्म-प्रकृति के विषय में	(के कर्म-प्रकृति के विषय में)
८९९	३२	२	प्रथम-	(प्रथम-
,,	,,	,,	चाहिए।	चाहिए)।
,,	३५	२	कृष्ण-	(कृष्ण-
,,	,,	,,	-जीव	-जीव)
८९९	३६	३	-उद्देशक की	-उद्देशक (भ. ३३/३-४) की
९००	३७	२	-उद्देशक में	-उद्देशक (भ. ३३/५-३३) में
९००	३९	३	प्रकार	प्रकार के
९००	३९	५	वनस्पतिकायिक।	वनस्पतिकायिक तक।
९००	४०	३	उद्देशक बतलाया	उद्देशक (भ. ३३/१५-२२) बतलाया
,,	४०	४	'वेदन करते हैं' तक वक्तव्य है	वेदन करते हैं (तक वक्तव्य है)।

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
९००	४२	४	–पृथ्वीकायिक आदि, इसी	–पृथ्वीकायिक...... इस
९००	४२	५	'वनस्पतिकाय'	वनस्पतिकाय
,,	,,	६	जानने चाहिए।	(जानने चाहिए)।
९००	४३	३	उद्देशक बतलाया	उद्देशक (भ. ३३/२३) बतलाया
,,	४३	३,४	'वेदन करते हैं' तक वक्तव्य है।	वेदन करते हैं (तक वक्तव्य है)।
९००	४३	५	उद्देशक बताये	उद्देशक (भ. ३३/१-३२) बताये
,,	४३	६	'अचरम- -चरम	अचरम-चरम
९००	४३	६	जीवों' तक बताने चाहिए।	जीवों तक (बतलाने चाहिए)
९०१	४७	शीर्षक	-जीवों के कर्म-प्रकृति-पद	-जीवों की कर्म-प्रकृतियों का पद
९०१	४७	३	के चार भेद	का भेद-चतुष्क
९०१	४७	३,४	'भवसिद्धिक-वनस्पतिकायिक'	भवसिद्धिक-वनस्पतिकायिक
९०१	४८	३	ज्ञातव्य है	(ज्ञातव्य है)
,,	,,	४	'अचरम'	अचरम
९०१	५१	२	कृष्ण-	(कृष्ण-
,,	,,	,,	-जीव	-जीव)
,,	५२	३	कृष्ण-	(कृष्ण-
,,	,,	,,	-जीव	-जीव)
९०१	५२	४	कृष्ण-लेश्या वाले भव-सिद्धिक	(कृष्ण-लेश्या वाले भव-सिद्धिक)
९०१	५२	५	-पृथ्वीकायिक-जीव	(-पृथ्वीकायिक-जीव)
९०१	५२	५	चार भेद वक्तव्य हैं।	भेद-चतुष्क वक्तव्य है।
९०१	५३	२	-उद्देशक	उद्देशक (भ. ३३/५-१३)
,,	५३	३	'वेदन करते हैं' तक समझना चाहिए	वेदन करते हैं (तक समझना चाहिए)।
९०२	५४	२	हैं।	हैं?
९०२	५४,५५	३	अनन्तर-	(अनन्तर-
९०२	,,	३	-जीव	-जीव)
९०२	५५	४-५	दो भेद समझने चाहिए	भेद-द्विक (समझना चाहिए)
९०२	५६	३	-उद्देशक बतलाया	–उद्देशक (भ. ३३/१५-२०)
,,	५६	३	'वेदन करते हैं'	वेदन करते हैं
,,	,,	३-४	तक समझना चाहिए	(तक समझना चाहिए)
,,	,,	४	ग्यारह उद्देशक	ग्यारह ही उद्देशक
९०२	५६	५	-शतक में	-शतक (भ. ३३/३९,४०) में
,,	,,	५	'अचरम' तक समझना चाहिए।	अचरम तक (समझना चाहिए)।
९०२	५७	१	शतक बताया	शतक (भ. ३३/५०-५६)
,,	५९	शीर्षक	-जीवों के कर्म-प्रकृति-पद	-जीवों की कर्म-प्रकृतियों का पद
,,	,,	२	जैसे— पृथ्वीकायिक	जैसे—पृथ्वीकायिक
९०२	५९	३	-शतक	-शतक (भ. ३३/४७-४८)
,,	,,	४	नव उद्देशक	(नव उद्देशक)
,,	,,	५	जानने चाहिए	(जानने चाहिए)
			शतक ३४	
९०४	१	शीर्षक	-जीवों के विग्रह-	-जीवों की विग्रह-
९०४	१	२	एकेन्द्रिय-जीव	(एकेन्द्रिय-जीव)
,,	२	३	योग्यता प्राप्त)	योग्यता-प्राप्त)
९०४	२	७	वह जीव	(वह जीव)

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
९०४	२	८	है।	है। (यह प्रथम आलापक है।)
,,	३	२	है तक?	है?
९०४	३	१३	है। यावत्	है यावत्
९०५	४	२	समुद्घात) से	समुद्घात से)
,,	,,	,,	भव्य पर्याप्त-	भव्य (पर्याप्त-
९०५-९१४	सर्वत्र	सर्वत्र	उत्पन्न	उपपन्न
९०५	४	३	योग्यता प्राप्त)	योग्यता-प्राप्त)
९०५	४	६	वह जीव	(वह जीव)
,,	,,	६	अथवा दो	अथवा पूर्ववत् (भ. ३४/२,३) (दो
,,	,,	७	है। गौतम!	है।) यावत् गौतम!
९०५	४	९	है।	है। (यह दूसरा आलापक है।)
,,	,,	१०	-जीव	-जीव का
९०५	४	११	पूर्व कर	पूर्ण कर
९०५	४	१३,२४	उपपन्न करवाना चाहिए	उपपात करवाना चाहिए (उपपात वक्तव्य है)
,,	,,	१४	-जीव (इस	-जीव) (इस
,,	,,	१७	द्वारा उपपन्न	द्वारा) उपपन्न
९०५	४	१८	बतलाने चाहिए—	(बतलाने चाहिए—)
९०५	४	१८-२४	सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-अपर्याप्तक का	(सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक-अपर्याप्तक का)
९०५	४	१९,२१	अपर्याप्तक में	अपर्याप्तकों में
९०५	४	२०,२१	पर्याप्तक में	पर्याप्तकों में
,,	५	३	भव्य मनुष्य	भव्य (मनुष्य
९०५	५	३	योग्य प्राप्त मनुष्य-क्षेत्र में	योग्यता-प्राप्त) मनुष्य-क्षेत्र में
९०५	५	५	उसी प्रकार	पूर्ववत्
९०५	५	६,९	-जीव	-जीव का
९०५	५	९	उत्पन्न	उपपात
९०५	५	१२	आलापक	आलापकों
९०६	६	१	में.....पृच्छा।	में०?
९०६	६	२	-जीव भी	-जीव का भी
९०६	६	४	चाहिए।	चाहिए
९०६	६	६	'बादर....	बादर
,,	,,	,,	में'	में
,,	,,	७,८	बीस स्थानों में उपपात करवाना चाहिए।	(बीस स्थानों में उपपात करवाना चाहिए)।
,,	७	२	की योग्यता	की योग्यता-
९०६	७	३	प्राप्त)	-प्राप्त)
,,	७	५,६	'यह इस अपेक्षा से कहा जा रहा है' तक।	यह इस अपेक्षा से कहा जा रहा है।
९०६	७	६,७	चार प्रकार	चारों प्रकार
९०६	७	६,७	का भी	में भी
,,	८	२	भव	भव्य
,,	,,	,,	बाद	बादर

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
९०८	८	२	योग्यता प्राप्त)	योग्यता-प्राप्त)
,,	,,	६	जैसा	जैसे
,,	,,	७	वैसा	वैसे
९०६	८	१	जैसी	जैसा
९०६	८	९	-जीव की	-जीव का
९०६	८	१०	बतलाई गई वैसी	बतलाया गया वैसा
९०६	८	१०	अपर्याप्तक और पर्याप्तक में	अपर्याप्तकों और पर्याप्तकों का
,,	,,	११	समुद्घात करवाना	समुद्घात भी करवाना
९०७	८	१३	थे, यावत्	थे यावत्-
९०७	९-१२	३	योग्यता प्राप्त)	योग्यता-प्राप्त)
९०७	९	६	है?	है०?
,,	,,	,,	'यह इस अपेक्षा से कहा जा रहा है' तक।	यह इस अपेक्षा से कहा जा रहा है।
,,	१०	६	सम्पूर्ण रूप से	निरवशेष
९०७	१०	१३	बतलाना चाहिए।	(बतलाना चाहिए)।
,,	११	५	है....इसी	है०? इसी
,,	,,	,,	'यह	यह
,,	,,	६	है' तक	है।
,,	,,	,,	'पर्याप्त	पर्याप्त
,,	,,	७	होने' तक वक्तव्य है।	होने (तक वक्तव्य है)।
९०८	१२,१४	६	वह जीव	(वह जीव)
९०८	१३	२	ऋजुआयता यावत्	ऋजुआयता (भ. ३४/३) यावत्
,,	१३	८	वैसा यहां वक्तव्य है।	(वैसा यहां वक्तव्य है)।
९०८	१३	१३	वे भी	उन्हें भी
,,	१३	१९	सम्पूर्ण रूप में जानना चाहिए।	निरवशेष (जानना चाहिए)।
९०९	१५	१०	भव्य विश्रेणी	भव्य (विश्रेणी
९०९	१५	१५	'उत्पन्न होता है' तक	उपपन्न होता है।
,,	१५	१९	'पर्याप्त	पर्याप्त
,,	,,	२०	होने' तक वक्तव्य है।	होने (तक वक्तव्य है)।
९०९	१६	६	वह जीव	(वह जीव)
,,	,,	२०	'अधः सप्तमी तक' बतलानी चाहिए।	'अधः सप्तमी' की (बतलानी चाहिए)।
,,	१७	२	१. ऋजुआयता यावत्	१. ऋजुआयता (भ. ३४/३) यावत्
,,	,,	३	(भ. ३४/३)। एकतोवक्रा	। एकतोवक्रा
,,	,,	८,९	गया था (भ. ३४/८३) इसी	गया था (भ. ३४/१३)। इसे
,,	,,	१०	चाहिए। (भ. ३४/१३)	चाहिए (भ. ३४/१३)
,,	१८	१	-जीवों के विषय में पृच्छा? (भ. ३४/१३))	-जीव० (भ. ३४/१३))?
,,	,,	३	है? (भ. ३४/१४) इसी	है० (भ. ३४/१४)? इस
९१०	१८	६	बतलाना चाहिए	(बतलाना चाहिए)
९१०	१९	३	योग्यता प्राप्त)	योग्यता-प्राप्त)
,,	१९,२२	६	वह जीव	(वह जीव)
,,	२०	२	चाहिए। (भ. ३४/३) इसी प्रकार यावत्।	चाहिए (भ. ३४/३)। इस प्रकार यावत्-

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
११०	२१	३	योग्यता प्राप्त)	योग्यता-प्राप्त)
११०	२१	५	वक्तव्य है	(वक्तव्य है)
११०	२२	३	योग्यता प्राप्त)	योग्यता-प्राप्त)
११०	२३	३	बतलाना चाहिए।	(बतलाना चाहिए)।
११०	२३	४	में जानना चाहिए।	में भी (जानना चाहिए)।
,,	२३	९	का जैसे	का उपपात जैसे
,,	,,	,,	का उपपात बतलाया	का (उपपात) बतलाया
१११	२४	५	वाली विग्रह-	वाली (विग्रह-
१११	२४	५	है?	है)०?
१११	२४,२५	३	योग्यता प्राप्त)	योग्यता-प्राप्त)
,,	,,	८-९	गमक सम्पूर्ण रूप से बतलाना चाहिए। (भ. ३४/१४) यावत्	गमक (भ. ३४/१४) निरवशेष बतलाना चाहिए यावत्
,,	२४	९	'बादर-वनस्पति-कायिक पर्याप्तक जीव	बादर-वनस्पतिकायिक के पर्याप्तक- -जीव का
१११	२४	९	वनस्पतिकायिक-	वनस्पतिकायिकों के
,,	,,	१०	-पर्याप्तक जीवों में उपपात' तक बतलाना चाहिए।	-पर्याप्तक-जीवों में उपपात (तक बतलाना चाहिए)।
१११	२५	६	वह जीव	(वह जीव)
,,	२६	२	'उत्पन्न होता है'?	उपपन्न होता है?
१११	२६	३	'अर्ध चक्रवाला'	अर्धचक्रवाला
१११	२६	४	ऋजुआयताश्रेणी	ऋजुआयता श्रेणी
१११	२६	८,१०	योग्यता प्राप्त)	योग्यता-प्राप्त)
,,	,,	१२	'उत्पन्न होता है'।	उपपन्न होता है।
,,	२६	१३	मारणान्तिक- समुद्घात	मारणान्तिक-समुद्घात
,,	,,	१४	पृथ्वीकायिक जीवों	पृथ्वीकायिक-जीवों के
,,	,,	१५	अप्कायिक जीवों	अप्कायिक-जीवों
,,	,,	१६	तेजस्कायिक जीवों	तेजस्कायिक-जीवों
,,	,,	१७,१८	वायुकायिक जीवों	वायुकायिक-जीवों
,,	,,	१८	वनस्पतिकायिक	वनस्पतिकायिक-
११२	,,	१९	जीवों	-जीवों
११२	२६	२०	पृथ्वीकायिक-पर्याप्तक जीव	पृथ्वीकायिक पर्याप्तक-जीव
,,	,,	२०	सम्पूर्ण रूप में	निरवशेष
,,	,,	२१	'सूक्ष्म	सूक्ष्म
,,	,,	२२	-कायिक-पर्याप्तक जीव	-कायिक पर्याप्तक-जीव
,,	,,	,,	वनस्पतिकायिक-पर्याप्तक जीवों' तक के	वनस्पतिकायिक पर्याप्तक-जीवों' के
,,	२७	४	अपर्याप्त	अपर्याप्त
,,	,,	६	वह जीव	(वह जीव)
११२	२८	३	एकतोवक्रा-श्रेणी	एकतोवक्रा श्रेणी
११२	२८	४	द्वितोवक्रा-श्रेणी	द्वितोवक्रा श्रेणी
११२	२८	६,८	योग्यता प्राप्त	योग्यता-प्राप्त
११२	२८	११	उत्पन्न	उपपात
,,	२८	११	'सूक्ष्म-वनस्पति-कायिक-पर्याप्तक	सूक्ष्म-वनस्पतिकायिक पर्याप्तक

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
११२	२८	१२	वनस्पतिकायिक जीवों में उत्पाद	वनस्पतिकायिकों के पर्याप्तक-जीवों' में उपपात
,,	२९	३	योगता प्राप्त)	योग्यता-प्राप्त)
,,	,,	५	है।	है?
११२	२९	६	वह जीव	(वह जीव)
११३	३०	४	समवहत हुआ था	समवहत होता है
,,	३१,३२	३	योग्यता प्राप्त	योग्यता-प्राप्त
११३	३१	५	होता है)?	होता है)०?
११३	३२	७	सम्पूर्ण रूप से बतलाना चाहिए	निरवशेष (बतलाना चाहिए)
,,	,,	८	'सूक्ष्म-वनस्पतिकायिक-पर्याप्तक	सूक्ष्म-वनस्पतिकायिक पर्याप्तक
,,	,,	,,	वनस्पतिकायिक-पर्याप्तक-जीव के रूप में	वनस्पतिकायिकों के पर्याप्तक-जीवों में
११३	३२	९	चरमान्त' तक में	चरमान्त में
११३	३२	१२	बतलाना चाहिए।	(बतलाना चाहिए)।
११४	,,	३४	इसी प्रकार समझना चाहिए	उसी प्रकार (समझना चाहिए)
,,	,,	३६,३७	चाहिए। (उत्तर	चाहिए।) (उत्तर
११४	३२	४४,४८,५४	बतलाना चाहिए	(बतलाना चाहिए)
११४	,,	५६	'सूक्ष्म वनस्पतिकायिक-पर्याप्तक	सूक्ष्म-वनस्पतिकायिक पर्याप्तक
,,	,,	५७	वनस्पतिकायिक-पर्याप्तक-जीवों में तक (पूर्व की तरह जाननी चाहिए)।	वनस्पतकायिकों के पर्याप्तक-जीवों में
,,	३३	३	(पण्णवणा के दूसरे स्थान-पद (सू. १-१५) में बतलाया गया है	(पण्णवणा के) स्थान-पद (२/१-१५) में (बतलाया गया है)
११५	३४	२	गौतम! अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वी-कायिक जीवों के	गौतम!(अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक -जीवों के)
११५	३४	३	अन्तराय	आन्तरायिक
,,	,,	५	पर्याप्त-बादर-एकेन्द्रिय-पृथ्वीकायिक जैसे एकेन्द्रिय-शतक	पर्याप्त-बादर-एकेन्द्रिय-पृथ्वीकायिक जैसे एकेन्द्रिय-शतकों
११५	३४	६	बतलाया गया है	(बतलाया गया है)
११५	३४	६	'बादर	बादर
,,	,,	६-७	के पर्याप्तक' तक	के पर्याप्तकों की वक्तव्यता।
,,	३५	२	गौतम! अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वी-कायिक जीव सप्तविध-	गौतम! (अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वी-कायिक-जीव) सप्तविध-
,,	३५,३६	३	-शतक	-शतकों
११५	३५,३६	३	बतलाया गया है	(बतलाया गया है)
,,	,,	३	यावत् 'बादर-	यावत् पर्याप्त-बादर-
११५	३५	४	जीवों' तक।	जीव।
,,	३६	२	गौतम। अपर्याप्त-सूक्ष्म-पृथ्वीकायिक जीव चौदह	गौतम! (अपर्याप्ति-सूक्ष्म-पृथ्वी-कायिक-जीव) चौदह
११५	३६	३	यावत्	वैसे यावत्
,,	,,	४	(पुरुषवेदावध्य) तक।	पुरुषवेदवध्य
,,	,,	,,	'बादर-	बादर-

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
११५	३६	४	पर्याप्तक' तक।	पर्याप्तकों की (वक्तव्यता)।
,,	३७	२	है? जैसे पण्णवणा के छट्ठे पद अवक्रान्ति (सू. ८२-८५) में	है०? जैसे (पण्णवणा के) अवक्रान्ति-पद (६/८२-८५) में
,,	३७	३	उत्पाद बतलाया गया है वैसा वक्तव्य है।	उपपात (बतलाया गया है वैसा वक्तव्य है)।
११५	३८	१	एकेन्द्रिय जीवों	एकेन्द्रिय-जीवों
,,	३८	२	गौतम! एकन्द्रिय जीवों के चार	गौतम! (एकेन्द्रिय-जीवों के) चार
११५	३८	३	-समुद्घात।	-समुद्घात
११५	३८	३	वैक्रिय)	वैक्रिय)।
,,	३९	४,५	करते हैं)? तुल्य-स्थिति वाले	करते हैं)? तुल्य-स्थितिवाले
११६	३९	१४-१५	एकेन्द्रिय-जीव	(एकेन्द्रिय-जीव)
११६	४०	१,३-६,८,९,११	एकेन्द्रिय-जीव	(एकेन्द्रिय-जीव)
११६	४०	२	'वेमात्र	वेमात्र
,,	,,	,,	हैं' तक?	है?
,,	४०	१२-१३	करते हैं। गौतम!	करते हैं। गौतम!
,,	,,	१३	'वेमात्र	वेमात्र
११६	४०	१४	हैं) तक वक्तव्य है। (भ. ३४/३९)	है (भ. ३४/३९)।
११६	४२	२	अनन्तर-	(अनन्तर-
११६	४२	२	-जीव	-जीव)
,,	४२	४	शतक में बतलाये हैं	शतकों में (बतलाये हैं)
,,	,,	४,५	'बादर-वनस्पतिकायिक' तक समझने चाहिए	बादर-वनस्पतिकायिक (तक समझने चाहिए)।
११७	४३	४	स्थान पर प्रज्ञप्त हैं), जैसे	स्थान प्रज्ञप्त हैं), जैसे
११७	४३	४,५	प्रकार पण्णवणा के द्वितीयपद 'स्थान-पद' (सू. १,२) में	प्रकार (पण्णवणा के द्वितीय पद) 'स्थान-पद' (२/१,२) में
११७	४३	५-६	तक समझना चाहिए,	(तक समझना चाहिए),
,,	,,	७	-पृथ्वीकायिक का स्थान हैं।	-पृथ्वीकायिक के स्थान हैं।
११७	४३	११	नानात्वरहित	नानात्व-रहित
,,	,,	१३	प्रकार पण्णवणा के स्थान-पद (सू. १,२) में	प्रकार (पण्णवणा के) स्थान-पद (२/१,२) में
११७	४३	१३,१४	बतलाये गये हैं वैसे समझने चाहिए।	(बतलाये गये हैं वैसे समझने चाहिए)
११७	४३	१४	आदि पर्याप्तक-जीवों के उपपात	आदि के पर्याप्तकों के उपपात,
,,	,,	१५	बतलाये गये	(बतलाये गये)
,,	,,	१६	बतलाने चाहिए।	(बतलाने चाहिए)।
११७	४४	२	अनन्तर-	(अनन्तर-
,,	,,	२	-जीवों के	-जीवों के)
,,	४४	३	-उद्देशक में प्रज्ञप्त हैं	-उद्देशक (भ. ३३/१७-२०) प्रज्ञप्त हैं

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
९१७	४४	४	करते हैं, यावत् (अनन्तर-	करते हैं (भ. ३३/१७-२०) यावत्
				(-अनन्तर-
९१७	४४	५	जीव) तक।	-जीव।
,,	४५	२	-उद्देशक में बतलाया गया है वैसा	-उद्देशक (भ. ३४/३७) में बतलाया
			ही बतलाना चाहिए।	गया है वैसा ही (बतलाना चाहिए)।
,,	४६	२	अनन्तर-	(अनन्तर-
,,	,,	२	-जीव के	-जीव के)
९१७	४७	३,४	अनन्तर-उपपन्न-एकेन्द्रिय-जीव	(अनन्तर-उपपन्नक-एकेन्द्रिय-जीव)
९१७	४८	१	-विशेषाधिक कर्म का बन्ध करते	-विशेषाधिक कर्म करने वाले होते
९१७	४८	३,४	कुछेक अनन्तर-	कुछेक (अनन्तर-
९१७	४८	४,५	-जीव समान	-जीव) समान
९१७	४८	५	जो अनन्तर-	जो (अनन्तर-
९१८	४८	६,७	-जीव समान	-जीव) समान
९१८	४८	७-९	-विशेषाधिक कर्म का बन्ध करते	-विशेषाधिक कर्म करने वाले होते
९१८	४८	७	जो अनन्तर-	जो (अनन्तर-
९१८	४८	९	'वेमात्र-	वेमात्र-
९१८	४८	१०	हैं' तक।	हैं।
९१८	५०	३-५	जैसे—पृथ्वीकायिक आदि	जैसे—पृथ्वीकायिक, भेद-चतुष्क
			(अप्कायिक, तेजस्कायिक, वायु-	(वक्तव्य है) यावत् वनस्पतिकायिक
			कायिक और वनस्पतिकायिक) यावत्	(प्रत्येक के चार भेद बतलाने चाहिए)
			'प्रत्येक के चार भेद बतलाने चाहिए'	
			यावत् 'वनस्पतिकायिक' तक।	
९१८	५१	३	योग्यता प्राप्त)	योग्यता-प्राप्त)
,,	,,	५	होने योग्य हैं ?	होने योग्य है० ?
९१८	५१	६	में बतलाया गया था	(बतलाया गया था)
,,	,,	६	'लोक के चरमान्त' तक चाहिए।	लोक के चरमान्त तक (बतलाना
				चाहिए)।
९१८	५२	३	उद्देशक में	उद्देशक (भ. ३४/३३-४०) में
,,	,,	४	'तुल्य-स्थिति वाले' तक बतलाना	तुल्य-स्थिति वाले तक (बतलाना
			चाहिए।	चाहिए)।
,,	५४	१,२	'अचरम' तक,(जैसे २६वें शतक में	अचरम तक (जैसे २६वें शतक (भ.
				२६/३६-५५) में
,,	५४	सर्वत्र	बतलाने चाहिए	(बतलाने चाहिए)
९१९	५५	३	बतलाये गये हैं	(बतलाये गये हैं)
,,	,,	,,	बतलाने चाहिए	(बतलाने चाहिए)
,,	,,	४	'वनस्पतिकायिक'	वनस्पतिकायिक
९१९	५६	२	चरमान्त में.....? इसी प्रकार	चरमान्त में०? इस प्रकार
९१९	५६	३	में बतलाया गया है। वैसा	(बतलाया गया है) वैसा
९१९	५६	४	उत्पाद	उपपात
९१९	५७	२-३	में बतलाया गया है	(बतलाया गया है)
,,	५६,५७	३	बतलाना चाहिए	(बतलाना चाहिए)
,,	,,	,,	'लोक के चरमान्त'	लोक के चरमान्त
,,	५७	३	'तुल्य-स्थिति'	तुल्य-स्थिति

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
९१९	५९	१,२	में बतलाया गया	(बतलाया गया)
,,	६०	१	बताना चाहिए।	(बतलाना चाहिए)।
,,	,,	२-३,३	बतलाना चाहिए।	(बतलाना चाहिए)।
,,	६१,६२	२	में बतलाया गया है	(बतलाया गया है)
,,	६१	२-३	बतलाना चाहिए।	(बतलाना चाहिए)।
,,	६२	३	बतलाया गया है। वैसा	(बतलाया गया है), वैसा
९१९	६३	३-४	के चार-चार भेद (भ.	का भेद-चतुष्क ((भ.
९१९	६३	४	वक्तव्य हैं, यावत्	वक्तव्य है) यावत्
,,	६३	४	'वनस्पतिकायिक'	वनस्पतिकायिक
,,	६४	२	में)....?	में)०?
९१९	६४,६५	३	बतलाया गया है	(बतलाया गया है)
,,	६४	३	'लोक के चरमान्त'	लोक के चरमान्त
,,	,,	४	बतलाना चाहिए	(बतलाना चाहिए)
९१९	६४	५	उत्पाद	उपपात
९२०	६५	३	'तुल्य-स्थितिक'	तुल्य-स्थितिक
,,	,,	३,५	बतलाना चाहिए	(बतलाना चाहिए)
,,	६५	५	कहा गया है।	(कहा गया है)।
,,	६६	१-३	जानना चाहिए	(जानना चाहिए)।
,,	,,	३	बतलाये गये	(बतलाये गये)
९२०	६६	४	बतलाने चाहिए	(बतलाने चाहिए)
,,	६६	६	एकेन्द्रिय श्रेणी	एकेन्द्रिय-श्रेणी
,,	,,	,,	बतलाये गये	(बतलाये गये)

शतक ३५

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
९२१	शीर्षक		-एकेन्द्रियों का उपपात-आदि-पद	-एकेन्द्रियों के उपपात-आदि का पद
९२३	३	१,२	उत्पन्न	उपपन्न
९२३	३	२	हैं ?....	हैं०?
९२३	३	३	जैसे	जैसा
,,	,,	,,	बतलाया गया है	(बतलाया गया है)
,,	,,	,,	यहां	(यहां)
,,	,,	,,	बतलाना चाहिए	(बतलाना चाहिए)
९२३	४	१-३	उत्पन्न	उपपन्न
९२३	४	२	वे (कृतयुग्म-कृतयुग्म-(एकेन्द्रिय)-	(वे कृतयुग्म-कृतयुग्म-एकेन्द्रिय-
			जीव	-जीव)
,,	५	५	बतलाया	(बतलाया
,,	५	६	चाहिए	चाहिए)
,,	६	४	भी होते हैं अबन्धक भी होते हैं।	होते हैं अथवा अबन्धक होते हैं।
,,	७	२	वे जीव	(वे जीव)
,,	,,	२,३	जानना चाहिए।	(जानना चाहिए)।
९२४	८	१	अथवा	(अथवा)
,,	८,११	३	वे जीव	(वे जीव)
,,	,,	४	बतलानी चाहिए	(बतलानी चाहिए)
९२४	९	१	हैं......पृच्छा।	हैं—पृच्छा।

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
९२४	९	२	वे (कृतयुग्म-कृतयुग्म-एकेन्द्रिय)-	(वे कृतयुग्म-कृतयुग्म-एकेन्द्रिय-
			जीव	जीव)
९२४	९	३-६	वे जीव	(वे जीव)
,,	१०	१	हैं ?....जैसा	हैं०? जैसा
९२४	१०	२,३	बतलाया गया है	(बतलाया गया है)
९२४	१०	सर्वत्र	वे जीव	(वे जीव)
९२४	१०	५	जीव	(वे जीव)
९२४	१०	१०	है, अनिन्द्रिय नहीं है।	हैं, अनिन्द्रिय नहीं हैं।
९२४	११	५	वनस्पतिकायिक काल	वनस्पतिकायिक-काल
९२४	११	६	चाहिए। (उत्पल-	चाहिए, (उत्पल-
९२४	११	७	है)। इन जीवों का	है), (इन जीवों का)
,,	११	८	बतलाया	(बतलाया
,,	११	८	चाहिए,	चाहिए),
,,	११	११	समझना चाहिए	(समझना चाहिए)
९२५	११	१२	इन जीवों को	(इन जीवों को)
९२५	११	१३	ये जीव	(ये जीव)
,,	११	१३	करते हैं। मारणान्तिक	(करते हैं) (वेदना, कषाय, मारणान्तिक
				वैक्रिय)। मारणान्तिक
९२५	११	१५	बतलाया	(बतलाया
,,	,,	१५	चाहिए	चाहिए)
९२५-९३०	सर्वत्र	सर्वत्र	उत्पन्न	उपपन्न
९२५	१३,१४,१९	१	हैं....? इन जीवों का	हैं०? (इन जीवों का)
९२५	१३	२	उत्पाद वैसा ही बतलाना चाहिए	उपपात वैसा ही (बतलाना चाहिए)
,,	१४	२	हैं ?....पृच्छा	हैं?—पृच्छा
९२५	१४	३	वे (कृतयुग्म-त्र्योज-एकेन्द्रिय)-जीव	(वे कृतयुग्म-त्र्योज-एकेन्द्रिय-जीव)
,,	१४,१९	५	उत्पाद के विषय में बतलाया गया है	(उपपात के विषय में (भ. ३५/१२)
			(भ. ३५/१२)	में बतलाया गया है)
,,	,,	६	'अनन्त बार' तक	अनन्त बार तक
,,	,,	,,	चाहिए।	चाहिए)।
९२५	१५,१७	१	हैं ? इन जीवों का	हैं०? (इन जीवों का)
९२५	१५	२	चाहिए। (जैसा भ. ३५/३ में	चाहिए (जैसा भ. ३५/३ में बतलाया
			बतलाया गया है।)	गया है)।
९२५	१६	२	है......पृच्छा।	हैं—पृच्छा।
९२५	१६	३	वे (कृतयुग्म-द्वापरयुग्म-एकेन्द्रिय)-	(वे कृतयुग्म-द्वापरयुग्म-एकेन्द्रिय-
			जीव	जीव)
,,	,,	५	जैसा कृतयुग्म-	वैसा ही (बतलाना चाहिए) (जैसा
				कृतयुग्म-
,,	,,	६	'अनन्त बार' तक वैसा ही बतलाना	अनन्त बार।
			चाहिए।	
,,	१७,१८	२,३	बतलाना चाहिए	(बतलाना चाहिए)
९२५	१७,१८	२	इन जीवों का	(इन जीवों का)

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१२५	१७,१८	३-४	'अनन्त बार' तक	अनन्त बार।
१२६	१९	५-९, ११-१३, १५	-एकेन्द्रिय-जीवों	(-एकेन्द्रिय-जीवों)
१२६	१९,२०	२	उत्पाद वैसा ही बतलाना चाहिए। इन जीवों का	उपपात उसी प्रकार (बतलाना चाहिए)। (इन जीवों का)
,,	१९,२०	३	बतलाना चाहिए।	(बतलाना चाहिए)।
,,	१९,२०	३	'अनन्त बार' तक।	अनन्त बार।
१२६	२०	१	हैं....? इन जीवों का	हैं०? (इन जीवों का)
,,	,,	२	परिमाण—पांच	परिमाण पांच
,,	२२	१	हैं....?	हैं०?
,,	,,	२	उसी प्रकार	उसी प्रकार (वक्तव्य है),
,,	,,	२	में बतलाया गया है	(बतलाया गया है)
१२६	२२	३	वैसा सोलह (	वैसा सोलह बार (
,,	,,	,,	में) बार द्वितीय	में द्वितीय
१२६	२२	४	चाहिए।	चाहिए,
१२६	२२	५	अवगाहना-प्रथम	अवगाहना-(प्रथम
१२६	२२	५	की अवगाहना	की) अवगाहना
१२६	२२	७-९	वे	(वे)
,,	२३	३	वे	(वे
,,	,,	,,	जीव	जीव)
१२७	२३	४	उनकी स्थिति भी बतलानी	(उनकी) स्थिति भी (बतलानी
१२७	२३	५	होती है। ८. वे	होती है)। ८. (वे)
१२७	२३	५	करते हैं वेदना	(करते हैं—वेदना
१२७	२३	७	इन जीवों के	(इन जीवों के)
१२७	,,	८	सम्पूर्ण रूप से	निरवशेष
,,	,,	९	वैसा ही बतलाना चाहिए	(उसी प्रकार बतलाना चाहिए)
,,	,,	९	'अनन्तर बार' तक।	अनन्त बार तक।
१२७	२५	२	हैं....?	हैं०?
१२७	२५	२	उद्देशक में सोलह	उद्देशक सोलह
१२७	२५	२-३	बतलाया गया	(बतलाया गया
१२७	२५	३	यह विषय	यह उद्देशक
१२७	२७	१	हैं....?	हैं०?
,,	,,	३	'कल्योज-कल्योज' तक यावत् 'अनन्त बार' तक बतलाना चाहिए।	कल्योज-कल्योज-(एकेन्द्रिय-जीव) यावत् अनन्त बार।
१२७	२७	३	-उद्देशक में	-उद्देशक (भ. ३५/२२-२३) में
,,	२७	३	गये)	गये
,,	,,	,,	बतलाना चाहिए,	बतलाने चाहिए),
,,	,,	५	वक्तव्य है।	(वक्तव्य है)।
,,	२९	२	हैं....?	हैं०?
,,	,,	२	उद्देशक) बतलाया गया है	उद्देशक) (भ. ३५/२५) (बतलाया गया है)
,,	,,	३	सम्पूर्ण रूप से	निरवशेष

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१२७	३१	३	हैं....?	हैं०?
,,	,,	३-४	में पहला उद्देशक बतलाया गया है वैसा सम्पूर्ण रूप से बतलाना चाहिए	(पहला उद्देशक) (भ. २५/२२-२३) (बतलाया गया है) वैसा ही निरवशेष (बतलाना चाहिए)
१२८	३३,३५	३	हैं....?	हैं०?
१२८	३३	,,	उद्देशक बतलाया गया है वैसा	उद्देशक (पहला उद्देशक) (भ. ३५/२२,२३) (बतलाया गया है) वैसा ही
१२८	३५	३	(चोथे उद्देशक) बतलाया गया है वैसा	(चोथा उद्देशक) (भ. ३५/२७) (बतलाया गया है) वैसा ही
१२८	३५	३-४	सम्पूर्ण रूप से बतलाना चाहिए।	निरवशेष (बतलाना चाहिए)।
,,	३७	१	३७. भन्ते! प्रथम-	३७. भन्ते! प्रथम-
,,	३७,३९	३	हैं....?	है०?
,,	३७	३-४	दूसरे उद्देशक बतलाया गया है वैसा सम्पूर्ण रूप से बतलाना चाहिए।	दूसरा उद्देशक (भ. ३५/२२-२३) (बतलाया गया है) वैसा ही निरवशेष (बतलाना चाहिए)।
,,	३९	३	उद्देशक बतलाया गया है वैसा सम्पूर्ण बतलाना चाहिए	उद्देशक (भ. ३५/२७) (बतलाया गया है) वैसा ही निरवशेष (बतलाना चाहिए)।
,,	४१	३	हैं....?	हैं०?
१२८	४१	३-४	-उद्देशक बतलाया गया है वैसा सम्पूर्ण बतलाना चाहिए।	-उद्देशक (भ. ३५/२२-२३) (बतलाया गया है) वैसा ही निरवशेष (बतलाना चाहिए)
१२८	४३	१	उद्देशक—जिनमें	उद्देशक हैं इनमें
१२९	४३	३-४	ऐसा बतलाना चाहिए।	(ऐसा बतलाना चाहिए)।
१२९	४४	१	हैं....?	है०?
,,	,,	२	कृष्णलेश्य-	(कृष्णलेश्य-
,,	,,	,,	-जीवों की उत्पत्ति	-जीवों का) उपपात
,,,	,,	२-३	बतानी चाहिए जैसा	(बतलाना चाहिए) (जैसा
,,	,,	३	(उद्देशक ३५/३-२०) में बतलायी गई है	(भ. ३५/३-२०) में (बतलाया गया है),
,,	४५	१	हैं? हां, वे जीव	है? हां, (वे जीव)
,,	४६	३	वे कृष्णलेश्य	(वे कृष्णलेश्य-
,,	,,	,,	-जीव	-जीव)
,,	,,	,,	अपेक्षा से जघन्यतः	अपेक्षा जघन्यतः
१२९	४६	४	रहते हैं।	(रहते हैं)।
१२९	४६	५	बतलानी चाहिए।	(बतलानी चाहिए)।
,,	,,	,,	बतलाना चाहिए	(बतलाना चाहिए)।
			'अनन्त-बार' तक।	अनन्त-बार।
१२९	४६	६	सोलह युग्म भी बतलाने	सोलह ही युग्म बतलाने
,,	४८	२	हैं....?	हैं०?
,,	,,	२	उद्देशक बतलाया गया है वैसा बतलाना चाहिए।	उद्देशक (भ. ३५/२२-२३) (बतलाया गया है वैसा बतलाना चाहिए),

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१२९	४९	२	वे जीव	(वे जीव)
,,	४९	२	उसी प्रकार वक्तव्य है। (भ. ३५/४६)	उसी प्रकार (भ. ३५/४६) (वक्तव्य है)
,,	५१	१	(भ. ३५/२२-४३)	(भ. ३५/२२-४३)
१२९	५१	२	इनमें	(इनमें)
,,	५१	४	देवों	देव
१३०	५३	शीर्षक	पहला-ग्यारहवां उद्देशक (तीसरा शतक)	(तीसरा शतक) पहला-ग्यारहवां उद्देशक
१३०	५३,५५	१	-जीवों के विषय में) भी	-जीवों के) विषय में भी वैसा
१३०	५३,५५	२	बतलाना चाहिए,	(बतलाना चाहिए),
,,	५३	२	कृष्णलेश्य	कृष्णलेश्य
,,	५३,५५	,,	शतक	शतक (भ. ३५/४४-५१)
,,	५३	३	बतलाया गया है, उसके	(बतलाया गया है) (उसके)
,,	,,	,,	बतलाने चाहिए।	(बतलाने चाहिए)।
,,	५५	३	बतलाया गया है।	(बतलाया गया है)।
,,	५७	१	हैं....?	हैं०?
,,	,,	२	(भ.	(भ.
,,	,,	,,	में बतलाया गया है	(बतलाया गया है)
,,	,,	,,	बतलाना चाहिए	(बतलाना चाहिए)
,,	,,	३	जो प्रष्टव्य	(जो प्रष्टव्य
१३०	५७	४	चाहिए	चाहिए)
,,	६०	२	हैं....?	हैं०?
१३०	६०	३	बतलाना चाहिए जैसा कृष्णलेश्य- (कृतयुग्म-	(बतलाना चाहिए) जैसा कृष्णलेश्य (कृतयुग्म-
१३०	६०	३	-जीवों	-जीवों)
१३०	६०	४	विषय में)	विषय में
१३०	६०	४	शतक (भ.	शतक (भ.
,,	,,	४	बतलाया गया था।	(बतलाया गया था)।
१३१	६२	२	शतक बतलाना चाहिए,	शतक वैसा (बतलाना चाहिए),
१३१	६२,६४	३	में बतलाया	में (दूसरा शतक) (भ. ३५/४४-५१) बतलाया
१३१	६४	२	बतलाना चाहिए,	(बतलाना चाहिए),
,,	,,	५	क्या) चारों	क्या (भवसिद्धिक के) चारों
,,	,,	५,६	'पहले उत्पन्न हुए थे' तक (पृच्छा)	पहले उत्पन्न हुए थे (तक पृच्छा)
,,	६६	१	शतक (लेश्या-	शतक (भ. ३५/६०-६५) लेश्या-
,,	६६	३	चाहिए। (भ. ३५/५६-६४) सभी	चाहिए। सभी
,,	,,	४	पूर्व तक)	पूर्व)
,,	,,	,,	पृच्छा बतलानी चाहिए	(प्रष्टव्य है)
,,	,,	,,	वहां बतलाया	वहां (भ. ३५/६४ में) बतलाया
१३१	६६	५	गया है) (भ. ३५/६४)	गया है) (गौतम!)
,,	,,	५	प्रकार में बारह	प्रकार ये बारह

शतक ३६

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१३२	१	शीर्षक	आदि-पद	आदि का पद

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
९३२	१	१	कृतयुग्म-	(कृतयुग्म-
९३२	१	२	-जीवों का	-जीवों का)
९३२	१	३	बतलाया	(बतलाया
,,	,,	,,	चाहिए।	चाहिए)।
९३२	१	३,४	इन जीवों का	(इन जीवों का)
,,	,,	३	एक	(एक
,,	,,	,,	जीव	जीव)
,,	,,	६	बतलाया	(बतलाया
,,	,,	,,	चाहिए। इन जीवों की	(चाहिए)। (इन जीवों की)
,,	,,	८	बतलाया गया है	(बतलाया गया है)
,,	,,	,,	बतलाना चाहिए,	बतलाना चाहिए),
९३२	१	९	इन जीवों के	(इन जीवों के)
,,	,,	,,	इनमें	(इनमें)
,,	,,	९-११	ये जीव	(ये जीव)
,,	२	१	अपेक्षा से कितने	अपेक्षा कितने
,,	२	२	वे कृतयुग्म	(वे कृतयुग्म
,,	,,	,,	अपेक्षा से जघन्यतः	अपेक्षा) जघन्यतः
,,	,,	३	तक रहते हैं। उनकी	(तक रहते हैं)। (उनकी)
,,	२	४	की है। वे	है। (वे)
९३२	२	४	इन जीवों के	(इन जीवों के)
,,	२	५,६	बतलाना चाहिए	(बतलाना चाहिए)
,,	,,	६	'अनन्त बार' तक। (भ. ३५/२३) इसी	अनन्त बार (भ. ३५/२३)। इसी
,,	४	२	समय- उद्देशक	समय-उद्देशक
९३२	४	३	बतलाया	(बतलाया
,,	,,	,,	चाहिए	चाहिए)
,,	,,	,,	बतलाने चाहिए, जो	(बतलाने चाहिए) जो दशनानात्व
९३३	४	४	वहां बतलाये गये थे।	(वहां बतलाये गये थे)।
९३३	४	४	प्रथम	(प्रथम
९३३	४	५	-जीव	-जीव)
९३३	४	६	-जीवों का	-जीवों के
,,	,,	६	बतलाया गया है	में (बतलाया गया है
,,	४	७	चाहिए	चाहिए)
,,	६	१	बतलाये गये थे	(बतलाये गये थे)
९३३	६	२	वैसे ही	वैसे ही कृतयुग्म-कृतयुग्म-द्वीन्द्रिय-जीवों के विषय में)
९३३	६	२-३	इन जीवों में	(इन जीवों में)
,,	६	५	यहां बतलाने चाहिए	(यहां बतलाने चाहिए)
९३३	७	२	बतलाना चाहिए। (भ. ३६/४)	(भ. ३६/४) बतलाना चाहिए।
९३३	७	२	कृष्णलेश्य-कृतयुग्म-	कृष्णलेश्य (-कृतयुग्म-
९३३	७	२	विषय	विषय)
९३३	७	३	ग्यारह उद्देशक संयुक्त	ग्यारह-उद्देशक-संयुक्त
९३३	७	३	उसी	(उसी

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
९३३	७	३	चाहिए, (जैसा भ.	चाहिए जैसा भ.
९३३	७	४	इन जीवों में	(इन जीवों में)
९३३	७	४	वैसा	(वैसा
९३३	७	५	चाहिए	चाहिए)
९३३	७	५,६	-जीवों का बतलाया गया है। (भ. ३५/४४-४७)	-जीवों का (भ. ३५/४४-४७) (बतलाया गया है)।
९३३	८,९	१	कृतयुग्म-कृतयुग्म-	(-कृतयुग्म-कृतयुग्म-
९३३	८,९	१	-जीवों	-जीवों)
,,	८	१,२	(ग्यारह उद्देशक संयुक्त)	(ग्यारह-उद्देशक-संयुक्त)
९३३	८	२	बतलाना चाहिए	(बतलाना चाहिए)
,,	९	१,२	(ग्यारह उद्देशक संयुक्त)	(ग्यारह-उद्देशक-संयुक्त)
,,	१०	१	जीव (कहां से	जीव० (कहां से
,,	,,	२	हैं........(पृच्छा)?	हैं)?
९३३	१०	२	-कृतयुग्म-कृतयुग्म-	(-कृतयुग्म-कृतयुग्म-
९३३	१०	२	-जीवों के विषय में	-जीवों) के (विषय में)
,,	,,	३	पूर्वगमक में बतलाये गये हैं (भ. ३५/५७-६७)	पूर्वगमक (भ. ३५/५९-६७) में बतलाये गये हैं,
९३३	१०	४	सत्त्व)	सत्त्व)०?
९३३	१०	५	पृच्छा?)	पृच्छा)
,,	१०	५-६	यहां बतलाने चाहिए	(यहां) (बतलाने चाहिए)
९३४	१२	१,२	-कृतयुग्म-कृतयुग्म-	(-कृतयुग्म-कृतयुग्म-
९३४	१२	१,२	-जीवों	-जीवों)
९३४	१२	२	बतलाये गये हैं (भ. ३५/६६),	(भ. ३५/६६) (बतलाये गये हैं),
९३४	१२	३	विषय में	(विषय में)
९३४	१२	३-४	इन सभी (अभव्य) जीवों में	(इन) सभी (अभव्य जीवों) में
९३४	१२	४	समझना चाहिए	(समझना चाहिए)
९३४	१२	५	शतक द्वीन्द्रिय-महायुग्मों के विषय में	द्वीन्द्रिय-महायुग्म-शतक
			शतक ३७	
९३५	१	शीर्षक	आदि-पद	आदि का पद
९३५	१	२	कृतयुग्म-कृतयुग्म-त्रीन्द्रिय-जीवों के विषय में	(कृतयुग्म-कृतयुग्म-) त्रीन्द्रिय-जीवों (के विषय) में
९३५	१	३	बतलाने चाहिए,	करने चाहिए,
,,	,,	३,४	इन जीवों की	(इन जीवों की)
,,	,,	३-४	अंगुल का असंख्यातवां भाग	अंगुल-का-असंख्यातवां-भाग
,,	,,	५	समझना चाहिए। (भ. ३६/२)	(भ. ३६/२) (समझना चाहिए)।
			शतक ३८	
९३६	१	शीर्षक	आदि-पद	आदि का पद
९३६	१	१	बतलाने चाहिए,	करने चाहिए,
९३६	१	२,३	इन जीवों की	(इन जीवों की)
,,	,,	४	कृतयुग्म-कृतयुग्म	(कृतयुग्म-कृतयुग्म)
,,	,,	,,	विषय में	(विषय में
,,	,,	५	चाहिए)।	चाहिए)।

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
			शतक ३९	
९३७	१	शीर्षक	आदि-पद	आदि का पद
९३७	१	१,२-३,७	कृतयुग्म-कृतयुग्म-	(कृतयुग्म-कृतयुग्म-)
९३७	१	२,३	विषय में	(विषय में)
,,	,,	२	शतक बतलाये गये	शतक (३६/१-१०) (बतलाये गये)
,,	,,	४,६	इन जीवों की	(इन जीवों की)
,,	१	५	इन जीवों का	(इन जीवों का)
,,	,,	७	बतलाया	(बतलाया
,,	,,	७	है वैसा	है (भ. ३६/२-१०) वैसा
,,	,,	८	चाहिए।	चाहिए)।
			शतक ४०	
९३८	१	शीर्षक	आदि-पद	आदि का पद
९३८	१	१	हैं....? इन जीवों में उत्पात	हैं०? (इन जीवों का) उपपात
,,	१	२	होता है। इनमें	(होता है)। (इनमें
९३८	१	२	जीव	जीव)
,,	,,	३	है और	हैं और
९३८	१	४	विमानों से	विमानों तक (से
,,	,,	५	होते हैं। इन जीवों का	होते हैं)। (इन जीवों का)
,,	,,	५,६	कृतयुग्म-कृतयुग्म-	(कृतयुग्म-कृतयुग्म-)
,,	,,	६	की बतलाई	की (भ. ३९/१ में) (बतलाई
,,	१	६	चाहिए।	चाहिए)।
९३८	१	६-१९	ये जीव	(ये जीव)
,,	,,	१७	हैं असात	हैं, असात
,,	,,	१०	इन जीवों के	(इन जीवों के)
९३८	२	१	होते हैं?	होते हैं?
,,	२	३	वे जीव	(वे जीव)
९३८	३	१	कृतयुग्म-कृतयुग्म-संज्ञी-पंचेन्द्रिय-जीव	(-कृतयुग्म-कृतयुग्म-संज्ञि-पंचेन्द्रिय-) जीव
९३९	३	२	क्या	(अथवा)
९३९	३	३	कृतयुग्म-	(कृतयुग्म-
,,	,,	,,	-जीव	-जीव)
९३९	३	५-१४	ये जीव।	(ये जीव)
,,	,,	११	है। वे जीव	है। ये जीव
९३९	३	१२	ग्रहण करते हैं।	(ग्रहण करते हैं)।
९३९	३	१२	इन जीवों की	(इन जीवों की)
९३९	३	१३	इन जीवों के	(इन जीवों के)
९३९	३	१४	नोसंज्ञी नोसंज्ञी	नोसंज्ञि-नोअसंज्ञी
९३९	३	१५	इन जीवों से	(इन जीवों से)
९३९	३	१६	उपपात बतलाया गया है (भ. ४०/१)	उपपात (भ. ४०/१ में) (बतलाया गया है)
९३९	३	१७	'अनुत्तर-विमान'	अनुत्तर-विमान
९३९	४	१	प्राण यावत्	प्राण (भ. ३५/१२) यावत्

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
९३९	४	४	बार तक (उत्पन्न	बार (उत्पन्न
,,	४	५	'अनन्त बार' तक,	अनन्त बार,
९३९	४	५	इन जीवों का	(इन जीवों का)
९३९	४	६	बतलाया गया वैसा ही बतलाना चाहिए	(भ. ३६/१) बतलाया गया वैसा ही) बतलाना चाहिए)
९३९	४	७	बतलाना चाहिए।	(बतलाना चाहिए)।
९३९	६	२	इन जीवों का	(इन जीवों का)
९३९	६	२	जैसा प्रथम	जैसा इन्हीं (कृतयुग्म-कृतयुग्म-संज्ञि--पंचेन्द्रिय-जीवों के विषय में) प्रथम
९३९	६	२	(भ. ४०/३)	(भ. ४०/१,३)
,,	,,	३	कृतयुग्म-कृतयुग्म-संज्ञी पंचेन्द्रिय--जीवों के विषय में बतलाया	(बतलाना
,,	,,	,,	चाहिए।	(चाहिए)।
,,	,,	४	इन जीवों की	(इन जीवों की)
९३९	६	५,८	कृतयुग्म-कृतयुग्म-	(कृतयुग्म-कृतयुग्म-)
,,	,,	६	बतलाया गया वैसा बतलाना चाहिए।	(बतलाया गया (भ. ३६/४) वैसा ही बतलाना चाहिए)।
९३९	६	७	'शुक्लेश्य होते हैं' तक बतलाना चाहिए। इन जीवों के	शुक्ललेश्य होते हैं (तक बतलाना चाहिए)। (इन जीवों के)
,,	,,	८	बतलाया गया यावत्	(बतलाया गया) (भ. ३६/४) यावत्
,,	,,	८	'अनन्त बार'	अनन्त बार
९४०	,,	९	तक बतलाना चाहिए	(तक बतलाना चाहिए)
९४०	६	९,१०	ये जीव	(ये जीव)
,,	,,	११	बतलाना चाहिए	(बतलाना चाहिए)
९४०	६	११	आदि सभी बोल	(आदि) सभी (बोल)
,,	,,	१२	बतलाने चाहिए	(बतलाने चाहिए)
,,	८	१,३-४	बतलाने चाहिए	(बतलाने चाहिए)
९४०	८	२	में बतलाये गये थे (भ. ३६/६),	में (भ. ३६/६ में) बतलाये गये थे),
,,	,,	३	आठ	आठों ही
९४०	१०	२,८	कृतयुग्म-कृतयुग्म-संज्ञी-पंचेन्द्रिय-जीवों	(कृतयुग्म-कृतयुग्म-) संज्ञि (-पंचेन्द्रिय-जीवों)
९४०	१०	२	में बतलाया	में प्रथम उद्देशक (भ. ४०/१-४) में (बतलाया
,,	,,	३,८, १,१३, १४	चाहिए	चाहिए)
,,	,,	३-४	है—इन जीवों के बन्ध और वेदना के विषय में—ये जीव उदयी	है—(ये जीव) क्या बन्धक और वेदक होते हैं, क्या उदयी
,,	,,	४-६	ये जीव	(ये जीव)
९४०	१०	७	कृतयुग्म-कृतयुग्म-	(कृतयुग्म-कृतयुग्म-)
,,	,,	७	में बतलाया गया वैसा	(भ. ३६/१-२) में (बतलाया गया वैसा
,,	,,	९	इन जीवों के	(इन जीवों के)

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
९४०	१०	१०	वैसा	(वैसा
९४०	१०	१२	(भ. ४०/१-५) में बतलाया गया	(भ. ४०/१-४) में (बतलाया गया
,,	,,	,,	'अनन्त बार' तक।	अनन्त बार।
,,	,,	१३	बतलाना	(बतलाना
९४०	१२	२	बतलाया गया	(बतलाया गया)
९४०	१२	३	सम्पूर्ण से यहां बतलाना चाहिए	निरवशेष (यहां बतलाना चाहिए)
९४१	१३	२	वे जीव	(वे जीव)
९४१	१३	२,३	बतलाना चाहिए	(बतलाना चाहिए)।
९४१	१३	२	सोलह युग्मों	सोलह ही युग्मों
९४१	१५	१	प्रथम समय के	(प्रथम-समय के)
९४१	१५,१७, १९,२१	१	-कृतयुग्म-कृतयुग्म-	(कृतयुग्म-कृतयुग्म-
९४१	,,	२	-पंचेन्द्रिय-जीवों के विषय में	-पंचेन्द्रिय-जीवों) के शतक में
९४१	१५,१७, १९,२१	२	बतलाना चाहिए	(बतलाना चाहिए)
,,	,,	३	गमक वाले हैं, तथा शेष आठ	गमक वाले (वक्तव्य हैं), शेष आठों ही
९४१	१५	३	वाले हैं।	वाले (वक्तव्य हैं)।
९४१	१७,१९, २१	१	-जीवों	-जीवों)
९४१	१७,१९, २१	२	इन जीवों का	(इन जीवों का)
९४१	१७	२	संस्थान काल	संस्थान-काल
९४१	१७,१९, २१	३	होता है	(होता है)
९४१	१७,१९	४	इन जीवों की	(इन जीवों की)
९४१	१७,१९	४,५	बतलाना चाहिए	(बतलाना चाहिए)
९४१	२१	३-४	इन जीवों की	(इन जीवों की)
९४१	२१	४,६	बतलाना चाहिए	(बतलाना चाहिए)
९४२	२३	१	१७. जैसा	२३. जैसा
९४२	२३	१,२	-कृतयुग्म-कृतयुग्म-	(-कृतयुग्म-कृतयुग्म-
,,	,,	१,२	-जीवों	-जीवों)
,,	,,	१-२	बतलाया गया वैसा	(बतलाया गया (भ. ४०/२१) वैसा
,,	,,	३	बतलाना चाहिए	(बतलाना चाहिए)
,,	,,	,,	इन जीवों के	(इन जीवों का)
९४२	२३	४	होता है।	(होता है)।
,,	,,	४	इन जीवों की	(इन जीवों की)
,,	,,	५	बतलानी चाहिए	(बतलानी चाहिए)
९४२	२३	६	पांचों शतकों	पांच शतकों
,,	,,	७	बतलाया गया वैसा	(बतलाया गया (भ. ४०/१०) वैसा
९४२	२३	७	'अनन्त बार तक।	अनन्त बार।
९४२	२५	१	शतक औधिक	शतक जैसा औधिक
९४२	२५	३	जैसा	जैसे

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
९४२	२५	१,३	-कृतयुग्म-कृतयुग्म-	(-कृतयुग्म-कृतयुग्म-
,,	,,	१	-जीवों	-जीवों)
,,	२५	२	(भ. ४०/१-५) में बतलाया	(भ. ४०/१-४) (बतलाया
९४२	२५	२	चाहिए,	(चाहिए),
,,	,,	,,	इन	(इन
,,	,,	३	जीवों के	जीवों का
,,	,,	४	विषयक-शतक में बतलाया गया वैसा बतलाना चाहिए,	विषयक-) शतक (भ. ४०/१०) में (बतलाई गई वैसी बतलानी चाहिए),
,,	,,	५	-अनन्त बार' तक।	अनन्त बार।
९४२	२७	२	कृतयुग्म-कृतयुग्म--पंचेन्द्रिय	(कृतयुग्म-कृतयुग्म-)(-पंचेन्द्रिय
९४२	२७	२	(अन्तर)-शतक में बतलाया गया वैसा	(अन्तर)-)शतक (भ. ४०/१-४) बतलाया गया वैसा
९४२	२७	३	भवसिद्धिक-कृतयुग्म--विषयक-	भवसिद्धिक (-कृतयुग्म--विषयक-)
,,	२८	१	प्राण (भूत,	प्राण० (भ. ४०/४) (भूत,
,,	,,	३	गौतम! वह	(गौतम!) वह
,,	३०	२	-कृतयुग्म-	(-कृतयुग्म-
,,	,,	३	-विषयक-	-विषयक-)
९४२	३०	३	बतलाया	(भ. ४०/१-४) (बतलाया
९४२	३०	३	चाहिए।	चाहिए)।
९४२	३२	१	भवसिद्धिक-कृतयुग्म-	भवसिद्धिक (-कृतयुग्म-
,,	३२	२	-विषयक-शतक भी बतलाना चाहिए	-विषयक-(शतक (भ. ४०/१७) भी (बतलाना चाहिए)
९४३	३४	१	कृतयुग्म-कृतयुग्म-	(कृतयुग्म-कृतयुग्म-)
९४३	३४	१	औधिक-शतक	(औधिक-) शतक (भ. ४०/१९-३२)
९४३	३४	२	भवसिद्धिक-कृतयुग्म-	भवसिद्धिक (-कृतयुग्म-
९४३	३४	२-३	विषयक सात शतक बतलाने चाहिए	विषयक) भी सात शतक (बतलाने चाहिए),
९४३	३४	३	प्राण यावत्	प्राण (भ. ३५/१२) यावत्
,,	,,	४	हुवे	हुए
,,	,,	४	'यह अर्थ संगत नहीं है' तक	वह अर्थ संगत नहीं है (तक
,,	,,	,,	चाहिए,	चाहिए),
,,	,,	४,५	बतलाना चाहिए।	(बतलाना चाहिए)।
९४३	३६	२	इन जीवों का उपपात वैसे ही बतलाना चाहिए। (भ. ४०/२७) केवल	(इन जीवों का) उपपात उसी प्रकार (बतलाना चाहिए) (जैसा भ. ४०/२७) में बतलाया गया). (केवल)
९४३	३६	३,१०	इन जीवों का	(इन जीवों का)
,,	,,	४,७	कृतयुग्म-कृष्णलेश्य-विषयक-शतक में बतलाया	कृष्णलेश्य (कृतयुग्म-विषयक) शतक (भ. ४०/१०,१२,१३,१५) में बतलाया)
९४३	३६	५,९, ११,१५	चाहिए	चाहिए)

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
९४३	३६	५-७,९	ये जीव	(वे जीव)
९४३	३६	८	कृतयुग्म-संज्ञी-	-कृतयुग्म-संज्ञि
९४३	३६	८	विषयक-शतक	विषयक-) शतक
,,	,,	,,	बतलाये	(बतलाये
९४३	३६	११	बतलाई	(बतलाई
९४३	३६	११	इन जीवों में	(इन जीवों में)
९४३	३६	१२	इन जीवों को	(इन जीवों को)
,,	,,	,,	बतलानी चाहिए	(बतलानी चाहिए),
९४३	३६	१३	के	को
,,	,,	,,	क्या सभी प्राण जीव	(क्या) सभी प्राण० (जीव
९४३	३६	१४	यह	वह
९४३	३६	१४	कृष्णलेश्य-कृतयुग्म-संज्ञी	कृष्णलेश्य (-कृतयुग्म-कृतयुग्म-संज्ञि-
,,	,,	१५	विषयक	विषयक-)
,,	,,	,,	बतलाया	(बतलाया
,,	,,	१६	अनन्त बार तक। इसी प्रकर सोलह	अनन्त बार। इस प्रकार सोलह
९४३	३६	१६	बतलाना चाहिए।	(बतलाना चाहिए)।
९४३	३८	२	अकर उत्पन्न होते हैं.....?	आकर उत्पन्न होते हैं०?
९४३	३८	३	कृतयुग्म-कृतयुग्म-संज्ञी	(कृतयुग्म-कृतयुग्म-) संज्ञी
९४३	३८	३	बतलाया	(बतलाया
,,	,,	४	चाहिए	चाहिए)
,,	,,	,,	इन जीवों के	(इन जीवों के)
९४४	३८	५	बतलाना चाहिए।	(बतलाना चाहिए)।
९४४	४२	२	इन जीवों का	इन
,,	,,	३	में बतलाया गया है।	(बतलाया गया है)
,,	,,	४	अभवसिद्धिक	(अभवसिद्धिक
,,	,,	,,	-विषयक	-विषयक)
,,	४२	४,५	बतलाना चाहिए	(बतलाना चाहिए)
,,	४३	२	वे जीव	(वे जीव)
,,	,,	,,	इन जीवों की	(इन जीवों की)
९४४	४३	३	कृतयुग्म-कृतयुग्म संज्ञी पंचेन्द्रिय-	(कृतयुग्म-कृतयुग्म-संज्ञि-पंचेन्द्रिय
९४४	४३	३	-जीव-विषयक-शतक में बतलाया	-जीव-विषयक-शतक (भ. ४०/१०) में (बतलाए गए
९४४	४३	४	बतलाना चाहिए	बतलाने चाहिए),
९४४	४५	१	१. इसी	४५. इसी
,,	४५	१,४	अभवसिद्धिक-	(अभवसिद्धिक-
,,	,,	२	-विषयक	-विषयक)
,,	,,	२,६	-अभवसिद्धिक-	(-अभवसिद्धिक-
,,	,,	३	विषयक-शतक	विषयक-) शतक
,,	,,	३	में बतलाया गया,	(बतलाया गया),
,,	,,	५	इन जीवों का	(इन जीवों का)
९४४	४५	५	बतलायी गयी	(बतलायी गयी)
९४४	४५	७	-काल	-काल)
९४४	४५	८	इन जीवों की	(इन जीवों की)
,,	,,	८	बतलानी चाहिए	(बतलानी चाहिए)
,,	,,	१०	इन जीवों में	(इन जीवों में)
,,	,,	११	क्या सभी प्राण (भूत	(क्या) सभी प्राण० (भूत
९४४	४५	११	यह	वह
९४४	४७	१	ये अभवसिद्धिक	ये सात अभवसिद्धिक
९४४	४७	१	विषयक सात शतक	विषयक-शतक
९४५	४९	१	ये संज्ञी-	ये इक्कीस संज्ञि-
९४५	४९	१	विषयक इक्कीस शतक	विषयक-शतक
९४५	४९	२	महायुग्म-जीव-विषयक इक्यासी शतक	इक्यासी
९४५	४९	४	हैं।)	हैं।
९४५	४९	५	शतक हैं।	शतक हैं)
			शतक ४१	
९४६	१	शीर्षक	आदि-पद	आदि का पद
,,	,,	१	कितने प्रकार के प्रज्ञप्त	कितने प्रज्ञप्त
,,	,,	२	चार प्रकार के प्रज्ञप्त	चार प्रज्ञप्त
९४६	१	२	कृतयुग्म यावत्	कृतयुग्म (भ. ३१/१) यावत्
९४६	१	३	कल्योज)। (भ. ३१/१)	कल्योज)।
,,	२	२,३	जैसे— कृतयुग्म	जैसे—कृतयुग्म
,,	३	१	इन जीवों का	(इन जीवों का)
९४६	३	२	पण्णवणा के छट्ठे पद में अवक्रान्ति (सू. ७०-८०) में बतलाया	(पण्णवणा के छट्ठे पद में) अवक्रान्ति-पद (६/७०-८०) में (बतलाया
९४६	३	३	वक्तव्य है	वक्तव्य है)
,,	४-६	१	ये	वे
,,	,,	२	राशियुग्म	(राशियुग्म
,,	,,	,,	समय में	समय में)
,,	५	१	है? या अन्तर	है? (अथवा) अन्तर
९४६	५	२	राशियुग्म-	(राशियुग्म-
,,	,,	,,	-जीव	-जीव)
९४६	५	६	प्रतिसयम	प्रतिसमय
९४६	६	१	क्या	(क्या)
९४७	६-८, १४	३	यह	वह
९४७	७,८	१	वे जीव	(वे जीव)
९४७	,,	१,२	क्या	क्या)
,,	९	३	बतलाया गया है	(बतलाया गया है)
९४७	९	४	उद्देशक (सू. ६२०) में	उद्देशक (भ. २५/६२०) में
,,	,,	६	पर प्रयोग से	पर-प्रयोग से
९४७	९	५	'अपने	अपने
९४७	९	६	होते' तक।	होते।
९४७	१०	१	यें	वे
९४७	१०,१२	१	अथवा	(अथवा)
९४७	१०	३	ये जीव	(वे जीव)
,,	११	१	ये जीव	(वे जीव)
९४७	११	२	अथवा	(अथवा)
,,	,,	३	वे	(वे)
९४७	१२	१	तो क्या	—तो क्या
,,	१२,१३	२	वे जीव	(वे जीव)
,,	१३,१४	१	ये जीव	(वे जीव)
,,	,,	,,	हैं तो	हैं—तो
,,	१५	२-४	राशियुग्म-कृतयुग्म	(राशियुग्म-कृतयुग्म-)
,,	,,	२	-जीवों के विषय में बतलाया गया	-जीव (भ. ४१/३-१४ में) (बतलाए गए)
,,	१५	२	सम्पूर्ण रूप में	निरवशेष
,,	१५	३	बतलाया चाहिये।	(बतलाने चाहिये)।
,,	,,	३-४	जीवों' तक बतलाना चाहिए	(-जीव बतलाने चाहिए),
,,	,,	५	बतलाना चाहिए	(बतलाना चाहिए)
,,	,,	६	राशियुग्म-कृतयुग्म मनुष्यों के विषय में भी	(राशियुग्म-कृतयुग्म) मनुष्य भी
९४७	१५	६	बतलाना चाहिए	(वक्तव्य हैं)
९४७	१५	७	राशियुग्म-कृतयुग्म मनुष्यों के विषय में भी	(राशियुग्म-कृतयुग्म मनुष्य भी
,,	,,	७	बतलाना चाहिए	(वक्तव्य हैं)
९४८	१६-२४	१	ये जीव	(वे जीव)
,,	,,	२	अथवा	(अथवा)
,,	,,	३	वे	(वे)
९४८	१७-२४	१	हैं तो	हैं—तो
९४८	१७,१८, २०,२२, २३	१	अथवा	(अथवा)
९४८	१८	१	यदि ये जीव हैं तो क्या	यदि (वे जीव) अलेश्य हैं—तो क्या
,,	१९	३	हां, उसी	हां (वे जीव)
९४८	२०,२२	२	वे जीव	(वे जीव)
९४८	२१	३	उनमें से	(उनमें से)
९४८	२६	१-२	प्रकार पूरा उद्देशक	प्रकार उद्देशक (भ. ४१/३-५)
९४८	२६	२	इन जीवों का	(इन जीवों का)
,,	,,	३	इन जीवों के	(इन जीवों के)
,,	,,	४	बतलाना	(बतलाना
,,	,,	४	गया है।	गया है)।
९४९	२७	१,२	क्या	(क्या)
९४९	२८	१	वे जीव क्या)	वे जीव)
९४९	२८	१,२	होते हैं उस	होते हैं क्या उस
९४९	२८	३	राशियुग्म-कल्योज नैरयिक जीवों	(राशियुग्म-) कल्योज-(नैरयिक-जीवों)
,,	२८	४	बतलाना चाहिए, शेष	(बतलाना चाहिए), शेष

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
९४९	२८	४	प्रकार बतलाना चाहिए	प्रकार (भ. ४१/९-२४ की भांति) (बतलाना चाहिए)
९४९	२८	४	वैमानिक देवों तक,	वैमानिक,
९४९	२८	५,६	है—इन जीवों का उपपात सभी के विषय में जैसे पण्णवणा के छट्ठे पद में अवक्रान्ति (सू. ७०-९८) में बतलाया गया है वैसे	है—उपपात सभी का जैसे (पण्णवणा के छट्ठे पद में) अवक्रान्ति-पद (६/७०-९८) में (बतलाया गया है वैसा)
९४९	३०	१-२	पूरा उद्देशक बतलाना चाहिए	उद्देशक (भ. ४१/३-५) (बतलाना चाहिए)
९४९	३०	२	इन जीवों का परिमाण दो	(इन जीवों का) परिमाण—दो
९४९	३०	३	अथव	अथवा
९४९	३०	३	होता है इन जीवों का संवेध वैसा	उपपन्न होते हैं, (इन जीवों का) संवेध (वैसा
९४९	३०	४	चाहिए। (भ. ३५/११)	चाहिए)।
९४९	३१	३	इसी प्रकार राशियुग्म-त्र्योज-नैरयिक के विषय में भी बतलाना	इस प्रकार त्र्योज के साथ भी (बतलाना
,,	,,	४	चाहिए, इसी प्रकार राशियुग्म कल्योज नैरयिक-जीवों के विषय में भी बतलाना चाहिये,	चाहिए), इस प्रकार कल्योज के साथ भी (बतलाना चाहिये),
,,	,,	५	उद्देशक में	उद्देशक (भ. ४१/९-२४) में
९४९	३१	५	बतलाया गया है वैसा	(बतलाया गया है वैसा)
,,	,,	,,	वैमानिक देवों तक बतलाना चाहिए।	वैमानिक (तक बतलाना चाहिए)।
,,	३३	२	प्रकार पूरा	(पूरा
९४९	३३	२	उद्देशक बतलाना चाहिए,	(उद्देशक (भ. ४१/३-५) बतलाना चाहिए
९४९	३३	२	इन जीवों का परिमाण एक	(इन जीवों का) परिमाण—एक
,,	,,	३	होता है, इन	उपपन्न होते हैं, (इन
,,	,,	४	का संवेध वैसा	का) संवेध (वैसा
,,	,,	४	बतलाना चाहिए। (भ. ३५/११)	बतलाना चाहिए)।
,,	३४	३-५	इसी प्रकार राशियुग्म-त्र्योज-नैरयिक-जीवों के विषय में बतलाना इसी प्रकार राशियुग्म-द्वापरयुग्म नैरयिक जीवों के विषय में भी बतलाना चाहिये, शेष	इस प्रकार त्र्योज के साथ भी (बतलाना चाहिए), शेष
९४९	३४	५	प्रथम उद्देशक में बतलाया गया है वैसा	प्रथम उद्देशक (भ. ४१/९-२४) में (बतलाया गया है वैसा)
९४९	३४	५,६	'वैमानिक देवों तक बतलाना चाहिए।	वैमानिक (तक बतलाना चाहिए)।
५५०	३६	२	वैसा	(वैसा
,,	,,	२	चाहिए	चाहिए)
,,	,,	२	उपपन्न	(उपपन्न
,,	,,	३	बतलाया गया शेष	(पण्णवणा, ६/७७ में) बतलाया गया) शेष

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
९५०	३६	३	उद्देशक में बतलाया गया वैसा बतलाना चाहिए।	उद्देशक (भ. ४१/३-३४) में (बतलाया गया वैसा बतलाना चाहिए)।
९५०	३६	३	कृष्णलेश्य-	(कृष्णलेश्य-
,,	,,	४	-कृतयुग्म-	-कृतयुग्म-)
,,	,,	,,	विषय में वैसा ही बतलाना चाहिए,	(विषय में) वैसा ही (भ. ४१/१५ की भांति) (बतलाना चाहिए),
,,	,,	,,	यावत् कृष्णलेश्य-राशियुग्म-कृतयुग्म-	(भ. ४१/१५) यावत् (कृष्णलेश्य-राशियुग्म-कृतयुग्म-
९५०	३६	५	बतलाना चाहिए।	(बतलाना चाहिए)।
९५०	३६	६,७	कृष्णलेश्य-राशियुग्म-कृतयुग्म-	(कृष्णलेश्य-राशियुग्म-कृतयुग्म-)
,,	,,	६	विषय में भी वैसा ही बतलाना चाहिए	(विषय में) भी (वैसा ही (भ. ४१/१५ की भांति) बतलाना चाहिए)
९५०	३६	७	-नैरयिक-जीवों के विषय में बतलाया गया (भ. ४१/११)।	-नैरयिक-जीवों के (विषय में) (बतलाया गया)
९५०	३६	८	उन जीवों के विषय में	(उन जीवों के विषय में)
,,	,,	९	ये जीव	(ये जीव)
,,	,,	१०	में बतलाया	(भ. ४१/२२-२४) में (बतलाया
,,	,,	,,	चाहिए।	चाहिए)।
९५०	३८,४०,४२	१	नैरयिक-जीवों	(नैरयिक-जीवों)
९५०	३८	१-२	पूरा उद्देशक बतलाना चाहिए	उद्देशक (भ. ४१/३६) (बतलाना चाहिए)
९५०	४०	१	भन्ते! कृष्णलेश्य-	कृष्णलेश्य-
९५०	४०,४२	१-२	प्रकार पूरा उद्देशक बतलाना चाहिए	प्रकार उद्देशक (भ. ४१/३६) (बतलाना चाहिए)।
९५०	४२	२	इन जीवों	इन (कृष्णलेश्य-राशियुग्म-कृतयुग्म-, कृष्णलेश्य-राशियुग्म-त्र्योज-, कृष्णलेश्य-राशियुग्म-द्वापरयुग्म- और कृष्णलेश्य-राशियुग्म-कल्योज-) जीवों
,,	४२	२	संबंध जैसा	संवेध जैसा
९५०	४२	२	-उद्देशकों में बतलाया	-उद्देशकों (क्रमशः प्रथम उद्देशक (भ. ४१/४-२४), दूसरे उद्देशक (भ. ४१/२६-२८), तीसरे उद्देशक (भ. ४१/३०-३१), चौथे उद्देशक (भ. ४१/३३-३४) में (बतलाया
९५०	४२	३	बतलाना चाहिए।	बतलाना चाहिए)।
,,	४४	१	-जीवों	(-जीवों)
,,	,,	,,	में राशियुग्म-	में (भ.४१/३६-४१ में) (राशियुग्म-
,,	,,	२	बतलाये गये	बतलाये गये)
,,	,,	३	सम्पूर्ण रूप से	निरवशेष

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
९५०	४४	४-५	है—नीललेश्य-राशियुग्म-कृतयुग्म-, राशियुग्म-त्र्योज-, राशियुग्म-द्वापरयुग्म-, राशियुग्म-कल्योज)-नैरयिक जीवों	है—इन तीनों नैरयिक-जीवों
९५०	४४	५	के नैरयिक जीवों का बतलाया	के नैरयिक-जीवों का (पण्णवणा, ६/७५ में) बतलाया
,,	४४	६	है वैसा बतलाना चाहिए, शेष उसी प्रकार	है वैसा बतलाना चाहिए), शेष पूर्ववत् (भ. ३६-४१)
९५१	४६	१	इसी प्रकार कापोतलेश्य-जीवों	कापोतलेश्य (-जीवों)
,,	,,	,,	भी राशियुग्म-	भी इसी प्रकार (भ. ४१/४४ की भांति) (राशियुग्म-
,,	,,	२	-कल्योज के	-कल्योज के)
५५१	४६	३-४	है—(कापोतलेश्य-राशियुग्म-कृतयुग्म, राशियुग्म-त्र्योज-, राशियुग्म-द्वापरयुग्म-, राशियुग्म-कल्योज) नैरयिक	है—इन नैरयिक
९५१	४६	४	के नैरयिक-जीवों का बतलाया	के (नैरयिक-जीवों का) (पण्णवणा, ६/७३ में बतलाया)
९५१	४६	५	चाहिए,	चाहिए),
९५१	४६	५	शेष उसी प्रकार	शेष पूर्ववत् (भ. ४१/४४ की भांति)
९५१	४८	२-३	प्रकार बतलाने चाहिए, जैसे कापोत-लेश्य-राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीवों के विषय में बतलाये गये हैं) केवल इतना	प्रकार (भ. ४१/३६ की भांति) (बतलाने चाहिए), इतना
९५१	४८	५	राशियुग्म-	(राशियुग्म-
,,	,,	६	कल्योज ये चार	कल्योज के चार
,,	,,	६	उद्देशक बतलाये गये वैसे ही चार उद्देशक तेजोलेश्य-	उद्देशक (भ. ४१/३६-४१ में), बतलाये गये) वैसे ही ये चार उद्देशक (तेजोलेश्य-
,,	,,	७	विषय में बतलाने	विषय में) करने
९५१	५०	१	प्रकार पद्मलेश्य-	प्रकार (भ. ४१/४८ की भांति) पद्मलेश्य-
,,	५०	१	भी राशियुग्म-	भी (राशियुग्म-
९५१	५०	१	राशियुग्म त्र्योज	राशियुग्म-त्र्योज
,,	५०	२	-कल्योज के चार	-कल्योज—ये चार
,,	५०	२	बतलाने	करने
९५१	५०	३,४	(दण्डक)	(दण्डकों)
९५१	५२	१	राशियुग्म-	(राशियुग्म-
९५१	५२	२	उद्देशक बतलाये गये वैसे ही	उद्देशक (भ. ४१/५०) किए गए वैसे ही)
९५१	५२	३	में बतलाने	में भी करने
९५१	५२	३	-उद्देशकों	-उद्देशकों (भ. ४१/१५-२४)
९५१	५२	४	बतलाया	(बतलाया

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
९५१	५३	४	चाहिए, शेष उसी प्रकार	चाहिए), शेष पूर्ववत् (भ. ४१/५० की भांति)
९५१	५२	५	बतलाये गये तथा	तथा
,,	,,	५,६	बतलाये गये, वे	—वे
९५२	५४	१	हैं?	हैं०?
,,	,,	२	सम्पूर्ण रूप से	निरवशेष
९५२	५४	२	-उद्देशक बतलाये गये (भ. ४१/२६-३५)	-उद्देशक (भ. ४१/३-३५) (बतलाए गए)
,,	,,	३	बतलाने चाहिए।	(बतलाने चाहिए),—
,,	,,	,,	होते हैं।	(होते हैं)।
,,	५६	२	होते हैं?'	हैं०?
९५२	५६	२	-राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीवों के विषय में	-राशियुग्म-कृतयुग्म-जीवों के (विषय में)
९५२	५६	२	उद्देशक होते हैं	उद्देशक (भ. ४१/३६-४३) होते हैं,
,,	,,	३	कृष्णलेश्य-भवसिद्धिक-राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीवों के विषय में	(कृष्णलेश्य-भवसिद्धिक-राशियुग्म-जीवों) के (विषय में)
९५२	५७	१	प्रकार नीललेश्य-भवसिद्धिक-राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीवों के विषय में	प्रकार (भ. ४१/५६) नीललेश्य-भवसिद्धिक-राशियुग्म-जीवों) के (विषय में)
९५२	५८	१	प्रकार कापोतलेश्य-भवसिद्धिक-राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीवों के विषय में	प्रकार (भ. ४१/५६) कापोतलेश्य-भवसिद्धिक-राशियुग्म-जीवों) के (विषय में)
९५२	५९	१	भवसिद्धिक-राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीवों के विषय में	भवसिद्धिक-राशियुग्म-जीवों) के (विषय में)
९५२	५९	२	के समान बतलाने चाहिए।	(भ. ४१/४८) के समान (बतलाने चाहिए)।
९५२	६०	१	भवसिद्धिक-राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीवों	(भवसिद्धिक-राशियुग्म-जीवों)
९५२	६०	१-२	उद्देशक करने चाहिए।	उद्देशक (औधिक-उद्देशकों (भ. ४१/५०) के समान करने चाहिए)।
९५२	६१	१	भवसिद्धिक-राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीवों के विषय में	(भवसिद्धिक-राशियुग्म-जीवों) के (विषय में)
९५२	६१	२	उद्देशकों के समान बतलाने चाहिए।	उद्देशकों (भ. ४१/५२) के समान (बतलाने चाहिए)।
९५२	६१	२-३	-राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीवों के विषय में	-राशियुग्म-जीवों) के (विषय में)
९५२	६१	३	(भ. ४१/५४-६१)	(भ. ४१/५४-६२)
९५२	६३	२	(भ. ४१/३) में बतलाया	(भ. ४१/३-२४) (बतलाया
,,	,,	,,	चाहिए,	चाहिए),
,,	,,	३	अभवसिद्धिक-	(अभवसिद्धिक-
,,	,,	,,	कृतयुग्म-मनुष्यों	कृतयुग्म-) मनुष्य
,,	,,	३,४	नैरयिक जीव के विषय में समान	नैरयिक (-जीव) समान
,,	,,	४	बतलाने चाहिए	(बतलाने चाहिए)

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
९५२	६३	४	प्रकार	प्रकार (भ. ४१/१५,२४)
९५३	६५	१	प्रकार चार युग्मों के	प्रकार (भ. ४१/६३,२६-३५ की भांति) चार युग्मों (अभवसिद्धिक-राशियुग्म-कृतयुग्म-जीवों, अभवसिद्धिक-राशियुग्म-त्र्योज-जीवों, अभवसिद्धिक-राशियुग्म-द्वापरयुग्म-जीवों, अभवसिद्धिक-राशियुग्म-कल्योज-जीवों) के
९५३	६५	१	बतलाने चाहिए	(बतलाने चाहिए)
९५३	६६	२	प्रकार चारों	प्रकार (भ. ४१/३६,६३-६५ की भांति) चारों
९५३	६६-६८, ७१	२	बतलाने चाहिए	(बतलाने चाहिए)
९५३	६७	१	प्रकार नीललेश्य-अभवसिद्धिक-राशियुग्म-	प्रकार (भ. ४१/३६,६३-६५ की भांति) नीललेश्य-अभवसिद्धिक (-राशियुग्म-
९५३	६७-७१	१	-कृतयुग्म-नैरयिक-जीवों के	-जीवों) के
९५३	६८-७१	१	-अभवसिद्धिक-	(-अभवसिद्धिक-
९५३	६८	१	उद्देशक	उद्देशक (भ. ४१/३६,६३-६५ की भांति)
९५३	६९-७१	१,२	बतलाने चाहिए	(बतलाने चाहिए)
९५३	६९	१	उद्देशक	उद्देशक (भ. ४१/४८,६३-६५ की भांति)
९५३	७०	१	उद्देशक	उद्देशक (भ. ४१/५०,६३-६५ की भांति)
९५३	७१	१	-राशियुग्म	(-राशियुग्म-
९५३	७१	१	विषय में	साथ
९५३	७१	१	भी	भी (भ. ४/५२,६३-६५) की भांति
९५३	७१	२	ये अट्ठाईस उद्देशक	इन अट्ठाईसों (सत्तावनवां-चौरासीवां) ही अभवसिद्धिक-उद्देशकों में
९५३	७१	२-३	अभवसिद्धिक-राशियुग्म-कृतयुग्म-मनुष्यों के विषय में अभवसिद्धिक-राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-गमक की तरह	मनुष्य नैरयिक-गमक की भांति
९५३	७३	२	(भ. ४१/३) बतलाया	(भ. ४१/३-२४) (बतलाया
९५३	७३	२	चाहिए।	चाहिए)।
९५३	७५	२	जीवों के विषय में	(जीवों) के (विषय में)
९५३	७५	२	कृष्णलेश्य-राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीवों	कृष्णलेश्य-(राशियुग्म-जीवों)
९५३	७५	३	विषय में बतलाये गये वैसे करने	(विषय में चार उद्देशक(भ. ४१/३६-४३) किए गए, वैसे चारों ही उद्देशक करने

पृष्ठ	सूत्र	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
९५३	७५	३-४	-राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीवों के विषय में	(-राशियुग्म-जीवों) के (विषय में)
९५३	७५	४	-राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीवों	(-राशियुग्म-जीवों)
९५३	७५	४	समान	समान (भ. ४१/५४-६१ की भांति)
९५३	७५	५	अट्ठाईस उद्देशक	अट्ठाईस (उनतीसवां-छप्पनवां) उद्देशक
९५४	७७	२,३	-राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीवों	(-राशियुग्म-जीवों)
९५४	७७	३	अभिलाप	अभिलाप के द्वारा
९५४	७७	३	समान अट्ठाईस उद्देशक करने	समान (भ. ४१/६३-७२) अट्ठाईस (सत्तावन से चौरासी) उद्देशक करने
९५४	७९	२	-राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीवों	(-राशियुग्म-जीवों)
९५४	७९	२	समान अट्ठाईस उद्देशक	समान (भ. ४१/६३-७२) अट्ठाईस (सत्तावन से चौरासी) उद्देशक
९५४	८१	२	-राशियुग्म-कृतयुग्म-नैरयिक-जीवों	(-राशियुग्म-जीवों)
९५४	८१	३	समान अट्ठाईस उद्देशक होते	समान (भ. ४१/५४-६२) अट्ठाईस (उनतीस से चौपन) उद्देशक होते
९५४	८१	४	'शुक्ललेश्य-	शुक्ललेश्य-
९५४	८१	४	वैमानिक तक यावत्—	वैमानिक यावत्
,,	८२	१	ये जीव	(ये जीव)
,,	,,	,,	यवत्	यावत्
,,	८४	७,८	विहरण कर रहे हैं।	रहते हैं।

आपकी औदार्यपूर्ण वृत्ति एवं असाम्प्रदायिक चिंतन-शैली ने धर्म के सम्प्रदाय से पृथक् अस्तित्व को प्रकट किया। नैतिक क्रांति, मानसिक शांति और शिक्षा-पद्धति में परिष्कार और जीवन-विज्ञान का त्रि-आयामी कार्यक्रम प्रस्तुत किया। युगप्रधान आचार्य, भारत-ज्योति, वाक्पति जैसे गरिमापूर्ण अलंकरण, इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय एकता पुरस्कार (१९९३) जैसे सम्मान आपको प्राप्त हुए। साधु और श्रावक के बीच की कड़ी के रूप में आपने सन् १९८० में समणश्रेणी का प्रारंभ किया, जिसके माध्यम से देश-विदेश में अनाबाधरुपेण धर्मप्रसार किया जा रहा है। आपने ६० हजार किमी. की भारत की पदयात्रा कर जन-जन में नैतिकता का भाव जगाने का प्रयास किया था।

हिन्दी, संस्कृत एवं राजस्थानी भाषा में अनेक विषयों पर ६० से अधिक ग्रंथ प्रकाशित हो चुके हैं। १८ फरवरी १९९४ को अपने आचार्यपद का विसर्जन कर उसे अपने उत्तराधिकारी युवाचार्यश्री महाप्रज्ञ में प्रतिष्ठित कर दिया। २३ जून सन् १९९७ को आपका महाप्रयाण हुआ। सन् १९९८ में भारत सरकार ने आपकी स्मृति में डाक-टिकट जारी किया।

दशमाचार्य श्री महाप्रज्ञ दस वर्ष की अवस्था में मुनि बने, सूक्ष्म चिंतन, मौलिक लेखन एवं प्रखर वक्तृत्व आपके व्यक्तित्व के आकर्षक आयाम हैं। जैन दर्शन, योग, ध्यान, काव्य आदि विषयों पर आपके २०० से अधिक ग्रंथ प्रकाशित हो चुके हैं। प्रस्तुत आगम-वाचना के आप कुशल संपादक एवं भाष्यकार हैं।

जैन विश्व भारती द्वारा प्रकाशित आगम साहित्य

वाचना प्रमुख : आचार्य तुलसी ● संपादक विवचक : आचार्य महाप्रज्ञ

(मूल पाठ पाठान्तर शब्द सूची सहित)

ग्रंथ का नाम	मूल्य
● अंगसुत्ताणि भाग-1 (दूसरा संस्करण) (आयारो, सूयगडो, ठाणं, समवाओ)	700
● अंगसुत्ताणि भाग-2 (दूसरा संस्करण) (भगवई-विआहपण्णत्ती)	700
● अंगसुत्ताणि भाग-3 (दूसरा संस्करण) (नायाध्मकहाओ, उवासगदसाओ, अंतगड-दसाओ, अणुत्तरोववाइयदसाओ, पण्णावागरणाइं, विवागसुयं)	500
● उवंगसुत्ताणि खंड-1 (ओवाइयं, रायपसेणइयं, जीवाजीवाभिगम)	500
● उवंगसुत्ताणि खंड-2 (पण्णावण, जंबूद्दीवपण्णत्ती, चंद्रपण्णत्ती, कप्पवडिंसियाओ, निरयावलियाओ, पुप्फियाओ, पुप्फचूलियाओ, वण्हिदसाओ)	600
● नवसुत्ताणि (द्वितीय संस्करण) (आवस्सयं, दसवेआलियं, उत्तरज्झयणाणि नंदी, अणुओगदाराइं)	695

कोश

● आगम शब्दकोष (अंगसुत्ताणि तीनों भागों की समग्र शब्द सूची)	300
● श्री भिक्षु आगम विषय कोश, भाग-1	500
● श्री भिक्षु आगम विषय कोश, भाग-2	700
● देशी शब्दकोश	100
● निरुक्त कोश	60
● एकार्थक कोश	100
● जैनागम वनस्पति कोश (सचित्र)	300
● जैनागम प्राणी कोश (सचित्र)	250
● जैनागम वाद्य कोश (सचित्र)	100

अन्य भाषा में आगम साहित्य

● भगवती जोड़ खंड-1 से 7 श्रीमज्जयाचार्य सेट का मूल्य	2900
● आयारो (अंग्रेजी)	250
● आचारांगभाष्यम् (अंग्रेजी)	400
● भगवई खंड-1 (अंग्रेजी)	595
● उत्तरज्झयणाणि भाग-1,2 (गुजराती)	1000
● सूयगड़ो (गुजराती)	1500

(मूल, छाया, अनुवाद, टिप्पण, परिशिष्ट-सहित)

ग्रंथ का नाम	मूल्य
● आयारो	200
● आचारांगभाष्यम्	600
● सूयगडो भाग-1 (दूसरा संस्करण)	300
● सूयगडो भाग-2 (दूसरा संस्करण)	350
● ठाणं	700
● समवाओ (दूसरा संस्करण)	प्रेस में
● भगवई (खंड-1)	595
● भगवई (खंड-2)	695
● भगवई (खंड-3)	500
● भगवई (खंड-4)	500
● नंदी	400
● अणुओगदाराइं	400
● दसवेआलियं (दूसरा संस्करण)	600
● उत्तरज्झयणाणि (तीसरा संस्करण)	600
● नायाधम्मकहाओ	500
● दसवेंआलियं (गुटका)	7
● उत्तरज्झयणाणि (गुटका)	25
●	

अन्य आगम साहित्य

● निर्युक्तिपंचक (मूल, पाठान्तर)	500
● सानुवाद व्यवहार भाष्य(हिन्दी अनुवाद)	500
● व्यवहार भाष्य (मूल, पाठान्तर, भूमिका, परिशिष्ट)	700
● गाथा (आगमों के आधार पर भगवान महावीर का जीवन दर्शन रोचक शैली में)	350
● आत्मा का दर्शन (जैन धर्म : तत्त्व और आचार)	600
● इसिभासियाइं	350

प्राप्ति स्थान :
जैन विश्व भारती प्रकाशन
लाडनूं - 341306 (राज.)

ISBN 81-7195-239-9

₹ 500.00